सुलभ साहित्य सीरीज़ — संख्या ३

यंग इण्डिया

(तृतीय भाग)

लेखक—महात्मा गांधी

अनुवादक—छविनाथ पाण्डेय बी० ए० एल० एल० बी०

प्रकाशक

बड़ाबाजार कुमार सभा

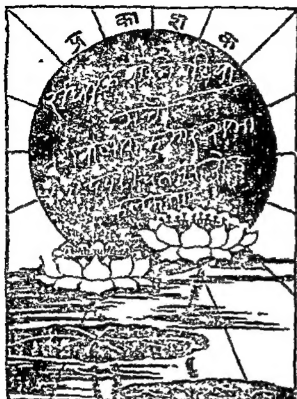
नं० ४०२, अपर चितपूर रोड, कलकत्ता।

मिलनेका पता—

हिन्दी पुस्तक भवन

१८१, हरिसन रोड, कलकत्ता।

अधिक ज्येष्ठ १९८०



प्रथम बार ३०००, निछावर दो रुपया मात्र ।

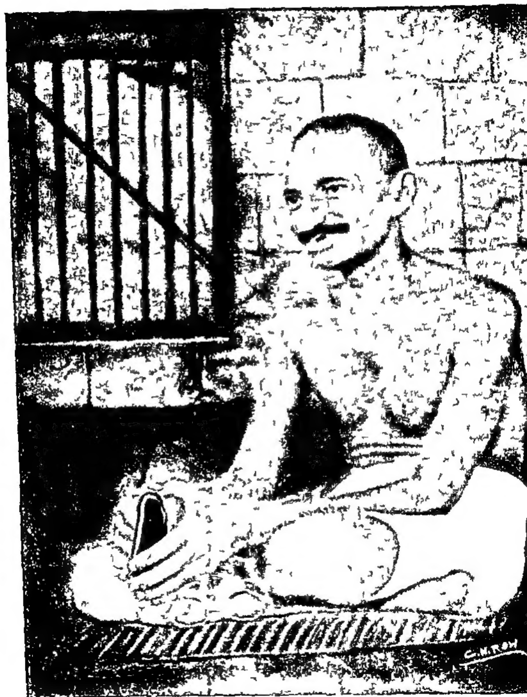
मुद्रक —
रामदयाल अग्रवाल
२।१।१, टेमर लेन,
कलकत्ता ।

विषय सूची ।

प्रकाशकका निवेदन

"सुलभ साहित्य सीरीज" की तीसरी संख्या आज पाठकोंके सामने लेकर मैं उपस्थित हुआ हूं। 'यङ्ग इण्डिया' के लेखोंके संग्रहके प्रथम तथा द्वितीय भागको, हिन्दी प्रेमियोंने जिस तरह अपना कर मेरा उत्साह बढ़ाया उससे मुझे साहस हुआ कि मैं इसका तीसरा भाग भी प्रकाशित करू। इस भागमें 'यङ्ग इण्डिया'के तबतकके लेखोंका संग्रह है जबतक महात्माजीके द्वारा इसका सम्पादन होता रहा। इसी भागसे यङ्गइण्डियाके लेखोंका संग्रह समाप्त होता है। परिशिष्ट में महात्माजीके ऊपर चलाये गये राजविद्रोहके अभियोग का विस्तृत विवरण भी दे दिया गया है। आशा है हिन्दी प्रेमी इसे पसन्द करेंगे। काम इतनी जल्दीमें हुआ है और बीच बीचमें कठिनाइयां भी अपना पैर अडाती गई हैं कि त्रुटियां अधिक हो सकती हैं, पर इनका होना इस अवस्थामें अनिवार्य था। अगले संस्करणमें इनके परिमार्जनका पूरा प्रबन्ध किया जायगा।

सुलभ साहित्य सीरीजका उद्देश्य तो किसीसे छिपा न होगा। पुस्तकका मूल्य ही उद्देश्यको घोषित करता है। जितना पुस्तकमें व्यय पडता है उतना ही मूल्य रखा जाता है। हां



जेलमें महात्मा

"हमें जेल जानेसे नहीं घबराना चाहिये। यदि हमें भारतको स्वतन्त्र करना है

तलवारका सिद्धान्त

(अगस्त ११, १९२०)

यह युग पशुबलका युग है। इस युगमें सहसा किसीको इस बातका विश्वास नहीं होता कि कोई भी पशुबलकी प्रधानताको किसी भी उपायसे जीत सकता है। इसलिये मेरे पास बराबर गुप्त पत्र आ रहे हैं जिनमें लिखा रहता है कि आप असहयोगकी प्रगतिमें बाधा न डालिये चाहे इससे हिंसा ही क्यों न उत्पन्न हो जाय। इसी तरहके और भी पत्र आये हैं जिनके लेखकोंने इस बातको स्वीकार कर लिया है कि मैं गुप्तरूपसे हिंसाकी योजना कर रहा हूं और पूछते हैं कि वह शुभ घड़ी कब उपस्थित होगी जब हमलोगोंको खुली तौरसे हिंसामें प्रवृत्त होनेका अवसर उपस्थित होगा। वे लोग मुझे विश्वास दिलाते हुए लिखते हैं कि प्रगट या गुप्त हिंसाके सिवा अंग्रेज जाति और किसी उपायसे परास्त नहीं की जा सकती। एक तीसरे लोग भी हैं जो मुझे गालियां देते हैं कि मैं अपनी कूटनीति किसीपर प्रगट नहीं होने देता, क्योंकि उन्हें इस बातमें जरा भी सन्देह नहीं है कि मैं सर्वसाधारणके साथ हिंसा पूर्ण विश्वास रखता हूं।

इस तरहसे स्पष्ट है कि तलवारके सिद्धान्तने अधिकाश जनताके ऊपर प्रबल प्रभाव जमा रखा है और दूसरी ओर असहयोगका विजय एकमात्र हिंसाके अभावपर ही निर्भर करती है। इस सम्बन्धमें मेरे मत पर ही अधिकाश जनताका मत निर्भर करता है इसलिये इस सम्बन्धमें अपना मत मैं स्पष्ट शब्दोंमें कह देना चाहता हू।

मेरा यह स्थिर मत है कि जहा कायरता और हिंसाका सवाल है वहा मैं हिंसाकी ही योजना करूंगा और इसीकी राय दूंगा। जिस समय मेरे जेष्ठ पुत्रने मुझसे पूछा कि जिस समय उत्तेजित जनताने आपको दक्षिण अफ्रिकामें बुरी तरह पीटा था उस समय यदि घटनास्थलपर मैं उपस्थित होता तो मेरा क्या कर्तव्य होता, मैं डरके मारे वहासे भाग गया होता या बल प्रयोगसे भीडके साथ लड़ाई करता और आपकी रक्षा करता, मैंने उससे कहा कि उस समय तुम्हारा यही कर्तव्य था कि तुम बलप्रयोगसे मेरी रक्षा करो। इसी भावनासे प्रेरित होकर मैंने युद्धमें भाग लिया था। जूलू विद्रोह तथा विगत यूरोपीय युद्धमें भी मेरे भाग लेनेका यही कारण था। और इसी सिद्धान्तके अनुसार मैं शस्त्र शिक्षाका परामर्श उन लोगोंको देता हू जो हिंसामें विश्वास करते हैं। इसलिये दूसरी युक्ति न होती तो मैं भारतके लिये भी यही सलाह देता कि इस तरह कायरोंकी भाति पडे पड़े अपने अपमान और अप्रतिष्ठाके दृश्य देखनेसे अच्छा तो शस्त्र ग्रहण करके मर मिटना ही अच्छा है।

पर मेरा विश्वास है "कि हिंसासे अहिंसाकी मर्यादा बलवती है, दण्ड देनेसे क्षमादान कहीं वीरत्वका लक्षण है। क्षमादान सच्ची वीरताका प्रमाण है। यदि दण्ड देनेकी मुझमें क्षमता है और मैं दण्ड देना स्वीकार नहीं करता तो वही क्षमा सच्ची क्षमा है। यदि लाचारीके कारण क्षमता न होनेपर हमने क्षमादान किया तो उस क्षमादानका कोई महत्व नहीं। एक बिल्ली एक चूहेको पकडकर काटकाटकर खा रही है और चूहा लाचार चुपचाप अपने प्राणोंको खो रहा है। यदि वह चूहा यह कहे कि हमने बिल्लीको क्षमादान दे दिया है तो उसका क्या महत्व होगा। इसलिये जो लोग जेनरल डायर तथा उसके क्रूर अत्याचारोंके कारण उसे दण्ड देनेकी योजना करना चाहते हैं और उसके लिये शोरगुल मचाते हैं उनकी प्रशंसा करनी चाहिये। यदि वे सकते तो उसे टुकडे टुकडे कर डालते। पर मैं भारतको एकदमसे लाचार नहीं समझता। मैं अपनेको एकदमसे गयागुजरा जीव नहीं समझता। केवल मैं अपनी तथा भारतकी शक्तिका प्रयोग दूसरे तरहके और उपयोगी काममें लाना चाहता हूं।

पर मैं चाहता हूं कि मुझे कोई गलत न समझ ले। शक्तिकी उत्पत्ति शारीरिक बलसे ही नहीं होती। इसके लिये दृढ़ साहस होना चाहिये। जूलू जाति शारीरिक बलमें किसी भी अंग्रेजसे घटकर नहीं है। पर वह साधारण अंग्रेजके बच्चेको भी देखकर डर जाती है क्योंकि वह उसके रिवाल्वरसे डरती

है। इतनी भयानक मूर्ति धारण करनेपर भी वह मृत्युके भयसे सहम जाती है। भारतकी आबादी ३० करोड़ है। अंग्रेजोंकी संख्या एक लाख है। क्या इतने ही अंग्रेज समस्त भारतवासियोंमें आतंक उपस्थित कर सकते हैं? इसलिये यदि हमने क्षमादानका वास्तविक रूप उपस्थित कर दिया तो हमारा बल और भी व्यक्त हो जाता है। क्षमादानको व्यक्त करनेसे हमलोगोंमें साहसका प्रबल जोर आ जायगा। उस साहसके सामने कोई भी डायर या जानसन भारतके उन्नत ललाटपर कोई बोझा नहीं डाल सकेगा। इसका मुझे विशेष ख्याल नहीं है कि इस समयमें भारतवासियोंके हृदयोंमें अपने विचारोंका समावेश नहीं कर सकता। हमलोग इस समय इतने गिर गये हैं, अपनेको इतने पददलित समझते हैं कि हममें क्रोध प्रगट करने या बदला लेनेकी भी शक्ति नहीं रह गई। पर मैं यह बात दृढ़तासे कह सकता हूं कि दण्ड देनेके इस अधिकारके परित्यागसे ही भारतवर्ष अधिक लाभ उठा सकता है। हमारे सामने इससे भी अधिक महत्वपूर्ण काम है। हमें संसारको इससे भी उत्तम सन्देश देना है।

मैं स्वप्नदर्शी या आदर्शवादी नहीं हूं। मैं पक्का व्यवहारी हूं। अहिंसा धर्म केवल ऋषि मुनि और तपस्वियोंके लिये नहीं है। जन साधारणके लिये भी वह उतना ही उपयोगी और स्वीकार करने योग्य है। जिस तरह पशुओंका धर्म हिंसा है उसी तरह हमारा धर्म अहिन्सा है। पशुमें वही

प्रधान रहती है और वह हिन्साके अतिरिक्त और कोई नियम या कानून नहीं जानता। पर मनुष्य धर्मको उससे उन्नत नियमको अंगीकार करना चाहिये अर्थात् आत्मबलको उसे स्वीकार करना चाहिये।

इसीलिये मैंने भारतके समक्ष आत्मत्यागके प्राचीन नियमको रखनेका साहस किया है, क्योंकि उसो तपस्या या आत्मत्यागका दूसरा नाम सत्याग्रह, असहयोग या निष्क्रिय प्रतिरोध है। जिन ऋषियोंने हिन्साके बीचमें से अहिन्साका मन्त्र निकाला उनमें न्यूटनसे कहीं अधिक क्षमता थी। उनकी वीरता और साहसिक शक्ति वेलिंगटनसे कम नहीं थी। शस्त्र शक्तिके प्रयोगको भलीभांति समझकर उन्होंने उसकी निःसारता देख ली और इसीलिये उन्होंने उस खिन्न और श्रान्त संसारको सिखलाया कि मोक्ष या उद्धार अहिन्साके द्वारा जिस तरह हो सकता है, हिन्साके द्वारा उस तरह नहीं हो सकता।

अहिन्साका अभिप्राय है तपस्या या आत्मोत्पीडन। इससे यह भाव नहीं निकलता कि हमने दुराचारीके दुराचारके सामने भय और दुर्बलताके कारण सिर झुका दिया है, बल्कि इससे यह ज्ञात होता है कि हमने अहिंसाके द्वारा ही उसके पशुबलका सामना करनेका निश्चय किया है। इसके अनुसार काम करनेसे एक व्यक्ति भी अत्याचारीके अत्याचारका सामना करके अपनी मर्यादाकी रक्षा कर सकता है अपना धर्म

बचा सकता है, अपनी आत्माकी रक्षा कर सकता है और उस साम्राज्यके उत्थान या पतनकी योजना कर सकता है।

इसलिये मैं भारतको अहिंसाका मन्त्र दे रहा हूं, क्योंकि मैं जानता हूं कि वह दुर्बल है। उसे अपनी शक्तिका अनुमान करके अहिंसाके पथपर चलना चाहिये। उसे अपनी शक्तिका पता लगानेके लिये शस्त्र शिक्षाकी कोई आवश्यकता नहीं है। हम बल शक्तिकी आवश्यकता इसलिये समझते हैं कि हम अपनेको हाड़मासका एक पुतला समझते हैं। मैं चाहता हूं कि भारतवासी इस बातको समझ लें कि उनमें एक आत्मा है जो अमर है, जिसका नाश नहीं हो सकता, जो शारीरिक दुर्बलताके ऊपर उठ सकती है और संसारकी सभी बल शक्तिका सामना कर सकती है। भगवान रामचन्द्रने अपने बानरोंके एक दलको लेकर अगाध समुद्रसे घिरी लङ्कापर चढ़ाई करके दश शिरवाले रावणके साथ युद्ध ठाना। इसका क्या अभिप्राय है। क्या यही पशुबलके ऊपर आत्मबलके विजयका ज्वलन्त उदाहरण नहीं है। मैं ऊपर कह चुका हूं कि मैं व्यवहारिक आदमी हूं। इसलिये मैं उस समयकी प्रतीक्षा नहीं कर सकता जब भारत इस आत्मबलकी उपयोगिताको समझ सकेगा। भारत जानता है कि मशीनगनों और सुरङ्गोंके सामने उसकी शक्ति बेकार है, वह उनसे डरकर कायर बन गया है। इसी दुर्बलताके कारण वह असहयोगको स्वीकार कर रहा है। यदि इस विश्वाससे अधिक लोगोंने इसे अपनाया

तो अभीष्टकी सिद्धि अवश्य होगी अर्थात् ब्रिटिश अन्याय परायणताका नाश अवश्य हो जायगा।

सिनफिन तथा असहयोगसे कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि एकका ध्येय हिसा है और दूसरेका अहिंसा। पर मैं हिसाके पक्षपातियोंसे भी इस बातकी प्रार्थना करूंगा कि कमसे कम एक बार तो इसे आजमाकर देख लें कि इससे क्या फल होता है। इसकी यदि असफलता हुई तो इसका कारण यह नहीं होगा कि इसमें किसी तरहकी आन्तरिक दुर्बलता है बल्कि इसका कारण यह होगा कि इसमें लोगोंने विश्वास नहीं किया और इसे अपनाया नही। वही समय सच्चे भय और आतकका है। उच्च आत्मायें, जो राष्ट्रीय अपमानको नहीं सह सकतीं, अपने क्रोधको प्रगट करेंगी और हिसाका सहारा लेंगी। पर इसका परिणाम जहातक मैं समझता हू यह होगा कि वे अपना, अपनी जाति तथा अपने देशका उद्धार किये विना ही नष्ट हो जायगी। यदि आज भारत तलवारका सहारा लेता है तो सम्भव है कि क्षणिक विजय उसे प्राप्त हो जाय। पर यह भारत मेरे अभिमानका कारण नही रह जायगा। मैं भारतमें तनमनसे लगा हू क्योंकि मेरा अपना कुछ नहीं है, मेरा सर्वस्व उसी भारतका है। मेरी दृढ धारणा है कि वह विश्वको नया सन्देश देगा। वह अन्धोंकी तरह यूरोपका अनुकरण नहीं करेगा। जिस समय भारत तल-वारके सिद्धान्तको स्वीकार कर लेगा उसी समय मेरी परी-

क्षाका समय भी उपस्थित हो जायगा। मुझे पूरी आशा है कि उस समय मैं किसी भी तरह अपनेको अयोग्य नहीं साबित करूंगा। मेरा धर्म किसी सीमाके अन्तर्गत नहीं है। यदि मेरे आदर्शमें मेरा अटल विश्वास है तो वह भारतके प्रति हमारा जो प्रेम है उसे वह अवश्य लाघ जायगा। मैं जानता हूं कि हिन्दू धर्मकी जड अहिंसा है और अहिंसाके द्वारा ही मैंने भारतकी सेवा करना निश्चय किया है।

इसलिये मेरी उन लोगोंसे प्रार्थना है, जो मुझपर विश्वास नहीं करते, कि आप कृपापूर्वक इस विश्वासपर कि मैं अन्तमें हिंसाकी योजना अवश्य करूंगा, इस आन्दोलनमें हिंसाका समावेश करके इसे कलुषित न कीजिये और इस सग्राममें विघ्न न उपस्थित कीजिये। मैं रहस्यकी नीतिको पाप समझता हू। मैं उन लोगोंसे प्रार्थना करूंगा कि वे अहिंसात्मक असहयोगको आरम्भ कर दें। उन्हें आपसे आप ही विदित हो जायगा कि मेरे हृदयमें कोई अन्य भाव गुप्त या छिपे नहीं हैं।



तलवार त्यागकी जीत



तलवार त्याग कहो, दयाधर्म कहो, शान्ति कहो, अमन चाहे अहिंसा कहो—इन सबका एक ही अर्थ है। इस गुणकी जीत हुई है ऐसा सरकारके अन्तिम निश्चयसे सिद्ध हुआ है। सरकारने अब (असहयोगको दबानेको ?) शीघ्रताके साथ अली भाइयोंको और मुझे कैदमें भेजना स्थिर करके इस शान्तिमय असहयोगको बुद्धि-बलसे—नरम दलकी सहायतासे—जीत लेनेका निश्चय किया है। इस निश्चयके वास्ते राजा-प्रजा दोनों एक दूसरेको धन्यवाद दे सकते हैं। मैं इस निश्चयको शान्तिमय युद्धकी अर्थात् अहिंसाकी जीत समझता हूं। यदि हमने गुप्त अथवा प्रगट हत्यासे अथवा मकानोंको जलाकर या पटरियोंको उखाडकर विरोध करनेका विचार किया होता,तो हम प्रजामतको कदापि न सुधार या सिपा सकने हममें साहस-पूर्वक सत्य बोलनेकी शक्ति न आई होती अथवा यों कहिये कि हम स्वराज्य लेनेके लिये तैयार या योग्य न बने होते। आज हम जितनी स्वतन्त्रतासे अपने विचारोंको प्रगट करते हैं, एक वर्ष पहले ही उतनी स्वतन्त्रतासे उन्हें नहीं कर सकते थे। हमने सरकारको अभय दान देकर स्वयं अपनेमें हिम्मत पैदा कर ली है। यदि हमारे मनमें मलि-

नता—दुष्टभाव—नहीं है तो हमारा कोई क्या करेगा, ऐसा विश्वास हम लोगोंके मनमें स्वय उत्पन्न हो गया है। यदि हम किसीको मारनेकी इच्छा नहीं रखते तो हमें कोई क्यों मारेगा, ऐसी धारणा भी इसके साथ साथ हम लोगोंमें होने लगी है।

यह समय अच्छा आया है। हम हृदय-वलसे, बुद्धि-वलसे लोकमत फेरकर स्वराज्य लिया चाहते हैं, इसलिये सरकारकी जवाबदेही भी बुद्धि-बलका प्रयोग करने लगी है। मनुष्यको देखतेही—उसका सामना होते ही दहलकर हम उसपर दमन-नीतिका प्रयोग करने लग गये हैं। इससे दोनों पक्ष कमजोर होते हैं। यदि मलिनताकी अपेक्षा हम स्वच्छताका प्रयोग करने लग जायं तो अन्तमें उससे जितनी मलिनता बढ़ेगी उतना ही प्रजावर्ग सुखी होगा। इस प्रकार शांतिका—अमन-अहिंसाका सदा बोल-बाला ही है। सरकारका निश्चय उक्त जीतका एक ज्वलन्त उदाहरण है।

अभी तो हमलोगोंमें पूरी शांति नहीं आई है, हमारी जबान साफ नहीं हुई है—हृदय पवित्र नहीं हुए। हममें रोष है, गुस्सा है, इस लिये हम लोगोंपर शान्तिकी पूरी छाया पडने नहीं पाती। जब हमारे युद्ध-आन्दोलनमेंसे कटुता मात्रका नाश हो जायगा, जब नौकर लोग बिलकुल साफ शुद्ध हो जायगे बस, उसी दिन स्वराज्य है। सर्व-साधारण हमारा अनुकरण करते हैं। श्रेष्ठके अनुगामी ही दूसरे लोग हुआ करते हैं।

सरकारके निश्चयमें द्वेष वर्तमान है, क्योंकि हम लोगोंने भी अपने मनमें उसे रख छोड़ा है। आप लोगोंमें मुझ सरीखे शांति धर्मके अनुयायी कितने हैं? मेरे भाई शौकतअली भी सर्वदा शान्तिको धर्म नहीं मानते, किन्तु अन्तमें उन्हें भी उपस्थित समयानुसार उसे आपद्धर्म स्वरूप मानना ही पड़ता है। अथवा यों कहिये कि वे शांतिको पालिसी—कौशल स्वरूप—स्वीकार करते हैं। यदि हम लोग शांतिको ही सर्वोत्तम स्थान दे दें—उसके चरम साधनको शोधकर स्वीकार कर लें तो आज ही हमको स्वराज्य मिला हुआ है—इसमें सन्देह नहीं। हम ऐसा शीघ्र ही करेंगे, इसी आधार पर मैं कहता हूं कि स्वराज्य एक वर्षमें होगा। शान्ति विना स्वराज्य विडम्बना मात्र—निरर्थक—है। धर्मकी स्थापना ही अधर्मका नाश है। वर्तमान राज्य अधर्मी है इस प्रतिज्ञाके साथ ही हमें धर्म्मात्मा बनना पड़ा है। अधर्म्मी भी भला किसी अधर्म्मी पर अधर्म्म—अन्याय—का दोष आरोपित कर सकता है? नकटा भला नकटेपर क्या हसेगा। अधर्म्मका नाश धर्म्मसे ही होता है। यदि दमनको सहन करनेवाले हों तो जुल्म-ज्यादतियोंके झगड़े होनेही न पावें।

हम लोग अभी बिलकुल सच्चे नहीं बने, इसलिये सरकारका निश्चय भी असत्य तथा दम्भसे भरा हुआ है। सरकार कहती है कि हम शांतिमय युद्ध कर रहे हैं; इसलिये उसने समाचार-पत्रों परका अङ्कुश हटा लिया है। ये वाक्य बिलकुल सच्चे नहीं हैं। कितने ही समाचार-पत्र अब भी जमानत देने या बन्द होते

हैं। जिन्हें कैद किया है उन्हें कैद करनेका कारण यह बताया जाता है कि वे शांतिके विरुद्ध उपदेश देते थे। यह बात भी ठीक नहीं है। जिन्हे कैदमें ठूंसा है, उनकी भाषा भले ही मधुर या अच्छी न हो, पर उनमेंसे किसीने भी अशांतिकी शिक्षा कदापि नहीं दी। यदि दी भी हो तो सरकार उसे सिद्ध नहीं कर सकी। पाप सिद्ध किये बिना पापीको भी दण्ड न देना चाहिए—ऐसा नियम है। सरकारने असहयोगकी निन्दा करनेमें दम्भका बहुत कुछ उपयोग किया है। सरकार कहती है कि असहयोगसे अन्ध विश्वास बढ़ जायगा। किन्तु सरकार यह जानती है कि असहयोगके साथ ही व्यवस्था आरम्भ हुई है। सरकारी शिक्षाका त्याग अर्थात् शिक्षणकी व्यवस्था नही, बल्कि गुलामीकी तालीमको मिटाकर स्वतन्त्रताकी शिक्षाका स्थापना, सरकारी कचहरियोंका त्याग, अर्थात् झगडे फसादोंकी वृद्धि नहीं किन्तु पञ्चों द्वारा उनका निपटारा, व्यवस्थाक सभाओंका त्याग अर्थात् नियमों या संयमोका त्याग नहीं किन्तु अत्याचारपूर्ण नियमोंको नष्ट कर उनके स्थानपर सर्वमान्य और पूर्ण नियमोंका स्वच्छन्द पालन, विदेशी कपड़ोंका त्याग अर्थात् नग्नावस्था नहीं, किन्तु प्रजाके निज हस्त-कौशलसे उत्पन्न किये हुए पवित्र कपडोंका शरीर-रक्षाके लिये पवित्र उपयोग, सरकारी फौजोंमें भर्तीका त्याग अर्थात् प्रजामें अपनी रक्षा करनेकी शक्ति इस प्रकार असहयोगका अर्थ सरकारके पक्षमें प्रजाका आन्तरिक सहयोग ही है।

जिस प्रकार सरकारके दम्भका पार नहीं है उसी प्रकार उसकी उद्धताकी भी सीमा नहीं है। जो मनुष्य व्यर्थ डर दिखाता है, वह उद्धत है अशक्तताका जो दावा करे वह भी उद्धत है। सरकारका दावा है कि हिन्दुस्तानको धावोंके भयसे वही बचाती है और वह कहती है कि यदि असहयोगकी जीत होगी अर्थात् सरकार विदा माग लेगी तो भारतकी स्थिति दुधमुहें शक्तिहीन बालकके समान सर्वथा अरक्षित हो जायगी और फिर हिन्दुस्तान पर जो चाहे सो हमला कर सकेगा। बात यह है कि जबतक हम दोनोंमें सहयोग रहेगा, जबतक हम हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी सब एक सी प्रजा हैं, ऐसा मानकर निर्भयतासे स्वावलम्बी बने रहेंगे, जबतक प्रजा अपनी अन्न-वस्त्रादिकी जरूरतोंको हिन्दुस्थानमें ही पूरा करेगी, तबतक उस (भारत) पर कटाक्ष करनेवाला भला कौन है? आख उठाकर कौन देख सकता है?

अहिंसा—शांतिका अर्थ नामर्दी नहीं है। उसका शुद्ध अर्थ पुरुषत्व—मर्दानगी—ही है। भारतपर जब ऐसा धावा होगा तब वह या तो परम शान्तिसे शत्रु को पराजित करेगा, अथवा उससे उक्त प्रकारका उद्धतपन सहन न हुआ तो उसकी क्षत्रिय जातिया—सिक्ख, मुसलमान, इत्यादि धावा करनेवालेको दण्ड देंगी। अहिंसा, अमनका अर्थ पराधीनता—दुर्बलता—नहीं है। जहा शूरता है, वहींपर क्षमा धर्म्मका यथोचित पालन हो सकता है। जब सरकारको अन्तिम विदा देने—आखिरी

सलाम करने—का समय आवेगा, तब भारत आज-कलके सदृश निस्तेज नहीं होगा, वरन् उसका तेज चारों ओर प्रकाशित रहेगा। यदि कोई यह पूछे कि उक्त दिवस (स्वराज्य प्रातिका निर्द्धारित समय) क्या एक वर्षमें आवेगा? हा, ऐसी शङ्का करनेवालेको इतना ही जवाब दिया जा सकता है कि जबतक ऐसा दिन नहीं आवेगा, तब तक हिन्दुस्थान स्वराज्य भोगने योग्य कदापि नहीं बन सकता। और जब वैसा शुभ दिन आनेको होगा तब वह केवल शान्तिमय असहयोग द्वारा ही आवेगा। उस दिनको तो मैं समीप ही पहुंचा हुआ देखता हूं।

नरमदलवाले बडे बडे लोग सरकारके सब्ज बागसे मोह कर उसके बिछाये हुए जालमें न फस जाय, दीनता-पूर्वक उनके प्रति मेरी यही विनती है।

शिक्षा-सम्बन्धी सरकारी आक्षेपोंमें मैं अभी नहीं पडता। यदि मा बापकी सहायता न होती तो यह कार्य जहातक चला है, कदापि उतना अग्रसर न हो सकता। जहा मा-बाप श्रद्धा रहित हैं, जहा पुत्रों-बालकोंमें आत्मबल वर्तमान है, वही पर उन्हें विनय पूर्वक पिताकी आज्ञा उलङ्घन करनेकी मेरी सम्मति है। इस सम्मतिमें—सलाहमें—न तो अनीति है और न अविचार अथवा अविवेक ही है। युवकोंको स्वय स्वतन्त्र विचार करनेका अधिकार सब शास्त्रोंने दिया है।

सरकारके निश्चयोंसे सीखने—ध्यान देने—योग्य बात यह है कि उसके शस्त्रबल और हथियारका त्याग करके हमने

जिस प्रकार विजय करनेका प्रण किया है, उसी प्रकार उसके दम्भ, छल, कपट, इत्यादि जालको भी हम निर्भय होकर सत्यता रूपी सुवर्ण शस्त्रसे छिन्न भिन्न कर डालें, भुलावेमें आकर उसमें फँस न जायँ।

सबसे बड़ी बात

(फरवरी ६, १६२१)

असहयोगियोंको यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि राष्ट्रकी प्रगतिको, उसके आगे बढ़नेकी अकाक्षाको कोई भी वस्तु उतनी नहीं रोक सकती जितना कि हिंसाका भाव। आयर्लैण्ड इस तरह हिंसासे अपनी स्वतन्त्रता भले ही प्राप्त कर ले, तुर्किस्तान इस तरह शस्त्रके बलसे शीघ्र या देरमें अपनी स्वतन्त्रता भले ही स्थापित कर ले पर भारत शताब्दियोंके प्रयाससे भी हिंसाके द्वारा स्वतन्त्र नहीं हो सकता, क्योंकि उसकी प्रजाका सङ्गठन उस तरह नहीं हुआ है जिस तरह अन्य देशोंकी प्रजाका। वे आत्म यातनाके ही बीचमें फले फूले तथा बढ़े हैं। गलत समझिये या सही इस्लाम भी भारतमें उसी शान्तमय वायुमें फलाफूला तथा बढ़ा है। मैं यह भी दृढतापूर्वक कह सकता हू कि यदि इस्लाम धर्मके संरक्षक

उसकी मर्यादाकी रक्षा करना चाहते हैं तो उन्हें शान्तमय उपायोंका ही अवलम्बन करना होगा। इस्लाम धर्मका जितना अधिक मैं अध्ययन करता हूं, मेरा विश्वास उतना ही अधिक बढ़ता जाता है कि इस्लाम धर्मकी महत्ताका कारण तलवारका बल नहीं है बल्कि पूर्व समयके खलीफाओंकी यातना सहनेकी योग्यता, उनका त्याग तथा उनकी नम्रता। जिस दिनसे उसके अनुयायी बुराईको ही भलाई समझकर हाथमें तलवार लेकर मैदानमें उतर पड़े और ईश्वरीय नियमको भङ्ग करके लोगोंको तलवारके बलसे अपनेमें मिलाने लगे उसी दिन उसके संस्थापकोंकी अच्छाई, नम्रता तथा पवित्रताको कुचल डाला। इस समय मैं कलम लेकर इसलिये नहीं बैठा हूं कि आप लोगोंको यह बतलाऊं कि अन्य धर्मोंकी भांति इस्लाम धर्मकी श्रेष्ठता हिंसामें नहीं बल्कि अहिंसा और आत्मोत्सर्गमें है, प्राण लेनेमें नहीं बल्कि प्राण देनेमें है।

मैं यह बात दिखला और समझा देना चाहता हूं कि यदि असहयोगी एक वर्षके भीतर स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं तो उन्हें अपने व्रतको पूर्णतया मनसा, वाचा और कर्मणा निबाहना चाहिये। वे असहयोगको भले ही भूल जाय पर वे अहिंसाको नहीं भूल सकते। असहयोगके माने ही अहिंसा है। हम लोग हिंसात्मक तभी रहते हैं जब हम हिंसात्मक सरकारकी बातें मानते हैं, क्योंकि सच्चाईके भावको हटा कर वह बल प्रयोगको चरितार्थ करती है। उसका बल

एकमात्र तलवारमें रहता है। हम लोग इससे घबरा गये हैं और इससे विद्रोह करनेपर उतारू हुए हैं। इसलिये हमें उचित है कि हिंसाका भाव प्रगट करके हम अपने उद्देश्यको अन्धकारमें न डाल दें। अंग्रेजोंकी संख्या परिमित है सही पर वे हिंसाके लिये तैयार हैं। हम लोगोंकी संख्या अपरिमित है तोभी हम भविष्यमें बहुत दिनोंतक हिंसाकी प्रवृत्ति नहीं दिखला सकते। यदि हम लोगोंको हिंसामें रुचि दिखलानी है तो हमें अभीसे हताश हो जाना चाहिये।

मैंने एक धर्मभीरु अंग्रेज रमणीका पत्र पढ़ा है। उसने जेनरल डायरके पक्षका समर्थन किया है। उसने लिखा है कि यदि जेनरल डायरने इस तरहकी वीरता न दिखलाई होती तो इन भारतीयोंके हाथों न जाने कितने पुरुषों और रमणियोंके प्राण गये होते। यदि हम लोगोंका पशुता इतनी बढ़ गई है कि हम लोग नरहत्यासे ही सन्तुष्ट हो सकते हैं तो हम संसारसे जितना शीघ्र उठा दिये जाय उतनाही हो अच्छा है। हमारा अन्त जितना ही शीघ्र हो जाय उतना अच्छा है। इसका दूसरा पहलू भा है। इस रमणीको यह बात नहीं सूझी कि यदि हमलोग मित्र थे तो जलियावालाबागमें जो मूल्य हम लोगोंने अंग्रेजोंका जान मालकी रक्षाके लिये दिया वह कहीं अधिक था। उन्होंने अपनी रक्षा हमारे अपमान और अनादरसे की। जेनरल डायरकी करनीकी दबी जबानमें निन्दा की गयी है और उसके पीठ ठोकनेवाले सर

माइकल ओडायरकी तो प्रशंसा ही की गयी है क्योंकि अंग्रेज जाति यह कभी भी नहीं चाहती कि इस देशसे बदमाशोंका अभाव हो जाय यद्यपि इसके लिये प्रत्येक भारतवासीको प्राण गँवाने पड़े। यदि हमलोगोंने यही प्रमाद दिखाया, उसी तरह उन्मत हो गये जैसा कि हम अमृतसरमें हो गये थे तो निश्चय जानिये कि जलियावालावागसे भी भीषण दुर्घटना उपस्थित हो सकती है।

जब हमलोगोंने जनरल डायर और सर माइकल ओडायरकी निन्दा करनेके लिये ही यह आन्दोलन उठाया है तो क्या हमें उचित है कि हम भी स्वयं इसी शस्त्रको ग्रहण करे। जिस चट्टानपर हम खड़े हैं उसे हिन्सा तथा शैतानीके भावसे न भरें। हमें उसमें अहिंसा और अच्छाईका भाव भरना चाहिये। हम लोगोंको अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि हमारा उद्देश्य क्या है। हमलोगोंमें हिन्साके जो भाव आ गये हैं अथवा हिन्साकी जो प्रवृत्ति दिखलायी जायगी उसपर अधिकार करनेमें हम जितने अग्रसर और सफल होंगे उतनाही सरल हमारा स्वराज्यका मार्ग हो जायगा। इसलिये यदि लोगोंने हिन्साका भाव दिखलाया तो स्वराज्य इस साल नही मिल सकता।

इसलिये हमें धरना भी नहीं बैठना चाहिये। हमें किसीको धिक्कारना भी नहीं चाहिये और न अपने मतको स्वीकार करनेके लिये किसीके साथ जोर जुलम करना चाहिये। हमें उन्हें भी उतनाही स्वतन्त्र मनका रहने देना चाहिये जितना

हम खुद चाहते हैं। हमें जन साधारणको फुसलाना या धोखा देना नहीं चाहिये। किसानों और कारखानेके कुलियो और मजूरोंका प्रयोग हमें इस राजनैतिक क्षेत्रमें नहीं करना चाहिये। इसका कारण यह नहीं है कि यह उचित नहीं है बल्कि इसका कारण यह है कि हमलोग तैयार नहीं हैं। इतने दिनो तक हम उन्हें राजनैतिक शिक्षासे सदा वञ्चित करते आये हैं। इससे इस समय हमारे पास काफी इमानदार, होशियार, विश्वास पात्र तथा साहसी कार्यकर्त्ता नही हैं जिनके प्रयोगसे हम अपने देशवासियोंको शिक्षित कर सकते।

अहिंसा

(जुलाई २८, १९२१)

जब कोई मनुष्य कहता है कि मैं अहिंसा परायण हूं तब उससे यह आशा की जाती है कि जब उसे कोई हानि पहुंचायेगा तब वह उस पर क्रोध न करेगा, वह उसका नुकसान न चाहेगा बल्कि उसकी भलाई ही चाहेगा। वह न तो उसे गाली गलोज देगा और न उसके बदनको किसी तरहकी चोट ही पहुंचावेगा। वह तो अन्याय कर्त्ताके द्वारा किये गये हर तरहके नुकसानको सहन ही करेगा। इस

तरह अहिंसा मानों पूर्ण निर्दोषिता ही है और पूर्ण अहिंसाका अर्थ है प्राणिमात्रके प्रति दुर्भावका पूर्ण अभाव। वह तो मनुष्यके नीची श्रेणीके जीवों, यहातक कि विषैले सर्पों और हिंस्र पशुओंको गले लगाता है। उसकी सृष्टि इसलिये नहीं हुई है कि उनके द्वारा हमारी विनाशक प्रवृत्तियोंका पोषण हुआ करे। यदि हम सिर्फ उस जगत्कर्त्ताके हेतुको ही जान लें तो हमें इस बातका पता लग जाना चाहिये कि उसकी सृष्टिमें उन जीवोंका कौनसा उचित स्थान है। अतएव अहिंसाका क्रियात्मक रूप क्या है? प्राणिमात्रके प्रति सद्भाव। यही शुद्ध प्रेम है। क्या हिन्दू शास्त्रों, क्या बाइबल और क्या कुरान, सब जगह मुझे तो यही दिखाई देता है।

अहिंसा एक पूर्ण स्थिति है। सारी मनुष्य जाति इसी एक लक्ष्यकी ओर, सम्भवतः, परन्तु अनजानमें जा रही है। मनुष्य जब अपनी तईं साक्षात् निर्दोषिताकी मूर्त्ति बन जाता है तब वह दैवी पुरुष नहीं हो जाता। वह तो कुछ अंशोंमें मनुष्य और कुछ अंशोंमें पशु है। हम घूसेके बदले घूसा जमाते हैं और हमारे क्रोधका पारा भी उतना ही चढ़ जाता है। और इसे हम कहते हैं कि हमने मनुष्य जातिके उद्देशको पूर्ति की है अपने कर्त्तव्यका पालन किया है। यह तो अज्ञान, नहीं अहङ्कार है। हम देखते हैं कि प्रतिहिंसा तो मनुष्यकी स्वाभाविक प्रवृत्ति है। हम तो उसके कायल हैं। परन्तु

इसके विपरीत धर्मशास्त्रोंमें तो हम देखते हैं कि प्रतिहिंसा कहीं भी आवश्यक कर्त्तव्य नहीं मानी गयी है बल्कि सिर्फ वह जायज बताई गई है। आवश्यक कर्त्तव्य तो है संयम। प्रतिहिंसाके लिये तो बहुतसे नियमों और शर्तोंके पालन करनेकी जरूरत है। संयम तो हमारे जीवनका नियम ही है, क्योंकि बिना पूर्ण संयमके मनुष्य पूरी पूर्णावस्थाको पहुंच ही नहीं सकता। इस प्रकार कष्ट सहन मनुष्य जातिका विशेष लक्षण है।

ध्येय तो हमेशा आगे ही आगे बढ़ता जाता है। ज्यों ज्यों अधिक प्रगति होती जाती है त्यों त्यों मनुष्य अपनेको अधिकाधिक अयोग्य मानता है। सन्तोष तो प्रयत्नमें है, औरउस सिद्धिमें नहीं। पूर्ण प्रयत्न ही पूर्ण विजय है। अतएव यद्यपि मैं पहलेहीसे अधिक इस बातको जानता हूं कि मैं अपने ध्येयसे कितना दूर हूं तथापि मेरे लिये पूर्ण प्रेमका नियम ही अपने जीवनका नियम है। जब जब मुझे असफलता प्राप्त होगी तभी तब मैं अधिक निश्चयके साथ प्रयत्न करूंगा।

लेकिन मैं इस अन्तिम सिद्धान्तकी बात तो महासभा और खिलाफत कमेटी द्वारा कर ही नहीं रहा हूं। मैं अपनी त्रुटियोंको खूब अच्छी तरह जानता हूं। मैं जानता हूं कि ऐसा उद्योग असफल हुए बिना नहीं रह सकता। सारे मनुष्य समाजसे यह आशा करना कि वे सब एक बारगी इस सिद्धान्तके अनुसार चलने लगेंगे, इस बातको न जानना है कि

मनुष्य समाजका काम किस प्रकार चलता है। लेकिन हां, महासभाके मञ्चसे तो मैं उस सिद्धान्तका प्रचार अवश्य करता हूं महासभा तथा खिलाफत समितिने तो उस सिद्धान्तके तात्पर्यका एक भाग-मात्र स्वीकार किया है। यदि कार्यकर्त्ता लोग योग देंतो थोडे ही समयमें यह बात जानी जा सकती है कि विशाल जनसमूहका थोडे परिणाममें किस तरह प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन थोडे परिणाममें तभी यथार्थ हो सकता है जब कि वह पूरे सिद्धान्तकी कसौटी पर चढ चुके।

१ एक बूंद पानीमें वे सब गुण धर्म होने चाहिये जो एक तालाब भर पानीमें हैं। अपने भाईके साथ मैं जिस अहिंसाका व्यवहार करूंगा वह सारे विश्वके प्रति मेरा अहिंसाका मित्र नहीं हो सकता। जब मैं अपने भ्रातृ प्रेमको सारे विश्वका व्यापक करूं तो उस अवस्थामें भी वह सत्य ही सिद्ध होना चाहिये।

२ जब किसी नियमका व्यवहार देश और कालको मर्यादासे बाध दिया जाय तब उसे व्यवहार नियम या व्यवहार धर्म कहते हैं। अतएव उच्चसे उच्च व्यवहार नियमका पालन ही इस सिद्धान्तका पूर्ण रूपसे पालन करना है। लेकिन हम प्रामाणिकताका व्यवहार चाहे व्यवहार धर्म समझकर करें चाहे सिद्धान्त समझकर करे जब तक वह हमारा व्यवहार नियम है एक ही बात है। ईमानदारीको व्यवहार नियमके तौरपर माननेवाला दूकानदार भी वैसा और उतने गज कपडा देगा जितना कि

ईमानदारीको धर्म समझनेवाला दूकानदार देगा। दोनोंमें फर्क केवल इतना ही है कि राजनैतिक दूकानदार अपनी ईमानदारीको उस समय छोड़ देगा जब उससे इसे लाभ न दिखाई देगा और इससे श्रद्धा रखनेवाला दूकानदार अपना सर्वस्व गवा देनेपर भी उससे मुह न मोड़ेगा। पर असहयोगियोंकी राजनैतिक अहिंसा बहुतांशमें इस कसौटीपर सही नहीं निकलती। इसीसे इस शुद्धिकी उम्र बढ़ती जा रही है। अंग्रेजोंका यह स्वभाव है कि वे झुकते नहीं। इसपर उन्हें कोसनेकी आवश्यकता नहीं। हमारे प्रेमकी आगसे उनके 'कठोरसे कठोर बाहुदण्ड' पिघले बिना नहीं रह सकते। मैं इस बातको जानता हूं। अतएव अपनी इस स्थितिसे हट नहीं सकता। यदि अंग्रेजोंकी अथवा दूसरोंका तबीयतपर इसका यथेष्ट असर नहीं होता है तो इसका अर्थ यही है कि या तो यह आग ही हमारे अन्दर नहीं है या उस तेजीके साथ नहीं धधक रही है।

अच्छा, हमारी अहिंसा चाहे बलवानकी अहिंसा न हो, पर सच्चे लोगोंकी अहिंसा जरूर होनी चाहिये। यदि हम अहिन्सा परायण होनेका दावा करते हैं तो जब तक ऐसा दावा करें तब तक अंग्रेज अथवा सहयोगी भाइयोंको हानि पहुचानेका इरादा तक हमें न करना चाहिये। परन्तु हमारे तो अधिकांश लोगोंने उनका नुकसान जरूर चाहा है और हम ऐसा करनेसे इसलिये रुक रहे हैं कि हम कमजोर हैं या इस गलत ख्यालसे कि केवल शारीरिक हानि न पहुचानेसे

ही हमारे अहिंसाव्रतका पालन हो जाता है। हमारी अहिंसाकी प्रतिज्ञामें तो भविष्यमें प्रतिहिंसा करनेकी सम्भावना रही नहीं जाती। दुर्भाग्यवश हमारे कुछ लोगोंने तो बदला चुकानेकी तिथि सिर्फ आगे बढ़ा भर दी है।

हां, कहीं मेरे आशयका गलत अर्थ न लगा बैठियेगा। मैं यह नहीं कहता कि व्यवहार नियमके तौरपर अहिंसाको माननेमें इस नीतिका त्याग कर चुकनेपर भी प्रतिहिंसाकी सम्भावना नहीं रह जाती। पर हां यदि संग्राममें हमारी विजय हुई तो इसमें हमें आगेकी सम्भावना अवश्य हो नहीं है। इसलिये जबतक हम अहिंसाको व्यवहार नियमके तौरपर मानते हैं तब तक हम असली तौरपर अपने अंग्रेज हाकिमों तथा सहयोगियोंके साथ मित्रताका बर्ताव करनेपर बाध्य हैं। जब मैंने यह सुना कि भारतके कुछ स्थानोंमें अंग्रेजों अथवा प्रख्यात सहयोगियोंका जानोमाल महफूज नहीं है, उनके लिये घूमना फिरना भी मुश्किल हो रहा है, तो मुझे बड़ी शर्म मालूम हुई। उस दिन मदरासकी एक सभामें जो लज्जाजनक दृश्य दिखाई दिया वह अहिंसाके पूर्ण अभावका सूचक था। जिन लोगोंने यह समझकर कि उस सभाके सभापतिने मेरा अपमान किया, उनकी छीछालेदर की उन्होंने न केवल खुद अपनेको ही बल्कि जातिको भी नीचा दिखाया। उन्होंने अपने मित्र और सहायक श्री एण्डरूजके हृदयको चोट पहुंचायी। उन्होंने खुद अपने ही कामको धक्का पहुंचाया। यदि उन सभापति महाशय-

का यह मत था कि मैं एक दुरात्मा हूं तो उनका ऐसा कहना बहुत ठीक ही था।" अज्ञान उत्तेजना नहीं है। असहयोगी तो गहरीसे गहरी उत्तेजनाको भी सहन करनेकी प्रतिज्ञासे बधे हुए हैं। यदि मैं किसी दुरात्माकी तरह काम करूंगा तो उत्तेजना तो अवश्य ही होगी पर यदि कोई असहयोगी यह मानता हो कि मैं उसे गलत रास्ते पर ले जा रहा हू तो वह इस प्रतिज्ञासे मुक्त हो सकता है तथा मेरे प्राण तक ले सकता है।

हा, यह भी हो सकता है कि जीवनको इतने मर्यादित रूपमें अहिंसामय बनाना भी अधिकाश रूपमें असम्भव हो। यह भी हो सकता है कि हम लोगोंसे महज उनके स्वार्थके ख्यालसे भी यह आशा न करे कि वे जहा अपने प्रतिपक्षीको हानि नही पहुंचा रहे है तहा हानि पहुंचानेका इरादा तक न करें। तब हमें उचित है कि हम अपने इस युद्धके सम्बन्धमें 'अहिन्सा' शब्दका उच्चारण तक न करे तभी हम प्रामाणिक बने रह सकते हैं। इसका उपाय यह नहीं है कि तुरन्त ही हिंसाकाड मचा बैठें। पर इस अवस्थामें लोगोंसे अहिंसा सम्बन्धी नियमोंके पालनकी बात कोई न कहेगा। तब मुझ जैसे मनुष्यको यह मालूम होगा कि चौरीचौराकी जिम्मेवारी मेरे सिरपर है। इस मर्यादित अहिन्साका सम्प्रदाय तो उस एकान्त अवस्थामें भी फलता फूलता ही रहेगा और भला यह होगा कि उसके सिरसे जवाबदेहीका वह भीषण भार उठ जायगा जिसे वह आज वहन कर रहा है।

। परन्तु यदि अहिन्सा ही इस राष्ट्रका व्यवहार धर्म निश्चित रहा तो हम उसका अक्षरश तथा ठीक पालन करनेके लिये बाध्य हैं। तभी उसका तथा मनुष्य जातिका शुभ नाम कायम रह सकता है।

और यदि इस व्यवहार नियमके अनुसार चलनेका इरादा हम करते हों, यदि हम उसके कायल हों तो हमें तुरन्त ही अंग्रेज सहयोगी भाइयोंसे मेल मिलाप कर लेना चाहिये। हमें इस बातमें कि वे लोग हमारे बीचमें अपने जानमालको पूरा पूरा सुरक्षित समझते हैं और उनके हमारे बीचमें तथा राजनीतिमें ज़मीन आसमानका फर्क होते हुए भी वे हमें अपना मित्र समझते हैं खुद उन्हींका प्रमाण पत्र हासिल करना चाहिये। हमें अपने मान्यवर अतिथिके तौरपर अपनी राजनैतिक सभाओंमें उनका स्वागत करना चाहिये। जिन सभाओंका सम्बन्ध किसी दल या मतसे न हो उनमें हम वे साथ साथ काम करें हमें ऐसी सभाओंकी आयोजना तभी करनी चाहिये। हमारी अहिंसाका फल हिंसा द्वेष और दुर्भाव न होना चाहिये। दूसरे मर्त्य मनुष्योंकी तरह हमारी पहचान भी अपने कार्योंसे ही होगी। स्वराज्य प्राप्तिके लिये अहिंसात्मक कार्यक्रम बनानेका मतलब है अहिंसात्मक रीतिसे चलानेकी योग्यता। इसका अर्थ है आज्ञा पालनके भावको हृदयपर अङ्कित करना। श्रीयुक्त चर्चिलका, जो कि केवल पशु-बलके ही मन्त्रको पहिचानते हैं, यह कहना बहुत ठीक है

कि आयर्लैण्डका प्रश्न भारतके प्रश्नसे भिन्न प्रकारका है। उनके कहनेका आशय यह है कि आयलैण्डवालेने हिंसाकाडके बलपर लड लड कर स्वराज्य प्राप्त किया है, अतएव यदि आवश्यकता पडी तो वे हिंसाबलके द्वारा उसकी रक्षा भी कर सकेंगे। पर इसके खिलाफ, यदि भारत वास्तवमें अहिंसा द्वारा स्वराज्य प्राप्त कर ले तो उसे प्रधानतः अहिंसात्मक उपायोंके द्वारा उसकी रक्षा भी करनी होगी। और उसे श्रीचर्चिल तभी सम्भवनीय मानेंगे जब भारत इस सिद्धान्तको अपने उदाहरण द्वारा प्रत्यक्ष करके दिखा दे और यह बात तबतक अशक्य है जबतक समाजमें अहिंसाका इतना प्रवेश नहीं हो गया है कि जिससे लोग अपने सामुदायिक अर्थात् राजनीतिक जीवनमें अहिंसाको अपना लें, दूसरे शब्दोंमें फौजी हुकूमतके बजाय देशमें मुल्की हुकूमतकी प्रधानता हो जाय।

अतएव अहिंसात्मक साधनोंसे स्वराज्य प्राप्त करते हुए गोलमाल और अराजकताको स्थान मिल ही नहीं सकता। अहिंसाके बलपर स्वराज्य तो उत्तरोत्तर शान्तिमय क्रान्ति होगी, यथा एक सकुचित संस्थाके हाथसे सत्ता का जनताके प्रतिनिधियोंके हाथोंमें जाना उतना ही स्वाभाविक कार्य्य है जितना कि अच्छे परवरिश किये हुए पेडसे पूरे पके फलका गिर पडना। मैं फिर कहता हूं कि ऐसी बातका पाना शायद बिलकुल असंभव हो। लेकिन मैं जानता हूं कि अहिंसाका तात्पर्य तो इससे कम नहीं है। और यदि वर्त्तमान कार्यकर्त्ता गण इससे

अधिक शान्तिमय वायुमण्डल तैयार हो जानेकी सम्भावनाको न मानते हों तो उन्हें चाहिये कि वे अहिंसात्मक कार्य-क्रमको तिलाजलि दे दें और दूसरा इससे बिलकुल भिन्न कार्य्यक्रम तैयार करें। यदि हम इस ख्यालको मनमें रखते हुए कि अन्तको तो हम शस्त्रके बल अंग्रेजोंसे अधिकार छीन ही लेंगे इस कार्य्यक्रमको उठावेंगे तो हम अपने अहिंसाके दावेके प्रति झूठे ठहरेंगे। यदि हमें अपने कार्यक्रम पर विश्वास है तो हम यह माननेके लिये भी बाध्य हैं कि अंग्रेज लोग जैसे शस्त्र बलसे अधीन हो जाते हैं उसी प्रकार प्रेम बलके अधीन न होनेवाले भी नहीं हैं। जो लोग इसके कायल नहीं हैं उनके लिये दो रास्ते हैं। एक तो कौंसिलें जो कि उनकी दृष्टिमें विद्या और अनुभवके मन्दिर हैं और उनका वह भारी कार्यक्रम जिससे पद पदपर उनका तेजो बध होता है और जो आगे कुछ पुश्तोंतक पुराना हो सके अथवा तेजीके साथ होनेवाली परन्तु खून क्रान्ति ऐसी क्रान्ति जो पृथ्वी पटलपर शायद अबतक न देखी गई हो। ऐसी क्रान्तिमें शरीक होनेकी मुझे जरा भी इच्छा नहीं। मैं उसकी तैयारीमें साधनरूप भी होना नहीं चाहता। अतएव मेरी रायमें सवाल यह है कि या तो हम असहयोगके साथ प्रमाणिक अहिन्साका—जो असहयोगका सहजफल है—अवलम्बन करें या प्रतियोगी सहयोगको अर्थात् विरोधके साथ सहयोगको अपनावें।

नम्रताकी आवश्यकता

(जनवरी १२, १९२१)

शान्तियोगका भाव नम्रता धारण करना है। शान्तियोगका अर्थ 'ईश्वरका भरोसा' है। यदि हम लोग उससे सहारा लेना चाहें तो हमें उसके समीप नम्र और निरभिमान होकर जाना चाहिये। असहयोगवादी यह न समझें कि कांग्रेसमें हमें अद्भुत सफलता प्राप्त हुई, बस अब काम हो गया। हमें उस आम्रवृक्षके समान काम करना होगा जो जितना ही अधिक फलता है उतना ही अधिक झुकता है। उसका गौरव उसकी सुशोभित नम्रतामें है। पर ऐसा भी सुननेमें आता है कि असहयोगवादी अपने विरुद्ध दलवालोंके साथ असहिष्णुता और अभिमानका व्यवहार करते हैं। मैं जानता हू कि यदि वे गर्वोद्धत होंगे तो उनका गौरव और शोभा नष्ट हो जायगी। अबतक हम लोगोंने जो प्रगति की उससे असन्तुष्ट होनेका चाहे कोई कारण न हो तथापि गर्व करने योग्य तो एक भी काम हमसे नहीं हुआ है। गर्वसे फूलना तो दूर रहा; गर्व करनेका अधिकार पानेके लिये ही अभी हमें और बहुत अधिक स्वार्थत्याग करना होगा। जो हजारों आदमी कांग्रेसके मण्डपमें एकत्र हुए थे उन्होंने असहयोगको अपनी

मानसिक सम्मति तो निस्सन्देह दी, पर उस सम्मतिको बहुत थोडे आदमियोंने कार्यमें परिणत किया है। वकीलोंकी बात छोड दीजिये। कितने माता-पिताओंने लडकोंको स्कूलोंसे हटाया है ? जिन लोगोने असहयोगके पक्षमें वोट दिया था उनमेसे कितने आदमियोंने हाथसे सूत कातना आरम्भ किया है और विदेशी कपडेका व्यवहार छोड दिया है ?

असहयोग आत्म श्लाघा, दम्भ, या असभ्यताका आन्दोलन नहीं है। यह हमारी सहृदयताकी कसौटी है। इसके लिये सात्विक स्वार्थत्याग चाहिये। यह हमारी सच्चाई और राष्ट्र कार्य करनेकी क्षमताको ललकारती है। यह वह आन्दोलन है जिसका लक्ष्य भावनाओंको कृतिमें परिणत करना है। और जितना हम करेंगे, उतनाही हमे यह दिखाई देगा कि अभी बहुत काम करना बाकी है। और हमारा अपूर्णताका, यह विचार हमें नम्र बनाता है।

असहयोगवादी जबर्दस्ती नहीं, बल्कि अपनी स्वाभाविक नम्रतासे दूसरोंका ध्यान अपनी तरफ खीचने और अपना उदाहरण सामने उपस्थित करनेका यत्न करता है। वह अपना उद्देश्य अपने कार्यसे प्रगट करता है। अपनी स्थितिकी सत्यतापर ही वह भरोसा रखता है, और यही उसका बल है। और विरोधीके हृदयमें उसका विश्वास तभी बैठता है जब वह अपने कार्य और उस विरोधीके बीच अपनी वक्तृता नहीं ले आता। वक्तृता, विशेषकर जब वह उद्धत होती है, विश्वासके अभावका

परिचय देती है और उससे विरोधीके मनमें सन्देह उत्पन्न होता है। नम्रता इसलिये शीघ्र सफलताकी कुञ्जी है। मुझे आशा है कि प्रत्येक असहयोगवादी इस बातको समझ लेगा कि नम्र और आत्म संयमी होनेकी कितनी बडी आवश्यकता है। इसमें कुछ बहुत नहीं करना है और जो कुछ करना है वह हमींको करना है। इसलिये मैंने विश्वास करनेका साहस किया है कि स्वराज्य एक वर्षसे भी कम समयमें प्राप्त हो सकता है।

शान्तिकी विजय

(नवम्बर १७, १९२०)

भारत सरकारने असहयोगपर जो कम्यूनिक निकाला है उसीसे असहयोगकी बडे मार्केकी पहली विजय मालूम होती है। उस असहयोगके लिये, जिसे सरकार अवैध समझती है, उसने निश्चय किया है कि यदि इस आन्दोलनमें जोर जुल्मका आश्रय नहीं लिया जायगा तो इसके सम्बन्धमें दमननीतिका प्रयोग भी नहीं होगा। इस निर्णयके लिये सरकार तथा जनता दोनोंको बधाई देनी चाहिये। इसमें मुझे तनिक भी सन्देह नहीं कि यदि लोग इस आन्दोलनमें किसी प्रकारका भी जोर-जुल्म—चाहे काममें, चाहे शब्दमें न करें तो सरकारको अपनी दमननीतिका प्रयोग करना केवल असम्भव ही नहीं

होगा, बल्कि वह बढ़ते हुए लोकमतको रोक भी नहीं सकेगी सिर्फ यही चाहिये कि अच्छे राष्ट्रीय ढङ्गसे सरकारी संरक्षण या सहायताका परित्याग कर इस लोकमतकी पुष्टि की जाय।

पर यदि माडरेट लोग असहयोग आन्दोलनकी बाढ़ न रोक सकेंगे तो सरकार बख्तरदार घूसा उठावेगी। इसलिये सरकारकी कड़ी कार्रवाईका करना माडरेटोंकी सफलता पर ही निर्भर है।

इस प्रकार यदि असहयोग इतना प्रबल हो जाय कि भारत पर अन्याय अपराध करनेवाली सरकारका अस्तित्व असम्भव कर दे तो विवेक-बुद्धि और वादानुवादके स्थानमें दमन नीतिकी तूती बोलने लगेगी, क्योंकि यह देखना चाहिये कि सरकार को असहयोगके जोर-जुल्मका भय नहीं हुआ है, बल्कि अपना अस्तित्व खोनेका। यदि मेरा कथन ठीक है तो सरकार माडरेटों और भारतको धोखा दे रही है। यदि सरकारकी नियत सच्ची है तो वह स्पष्ट शब्दोंमें साफ साफ घोषणा कर दे कि जबतक असहयोग आन्दोलन जोर-जुल्मोंसे बचा रहेगा तब तक सरकार इसमें हस्तक्षेप नहीं करेगी, चाहे यह पूर्ण स्वाधीनता ही क्यों न मांगे या ऐसी स्वाधीनता ही उसे क्यों न प्राप्त हो जाय। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यदि हम इस आन्दोलनमें जोर-जुल्म न पहुंचने दें तो सरकारको एक न एक दिन ऐसी घोषणा अवश्य करनी पड़ेगी। किन्तु जब जनताको

अखण्ड लोकमतसे विवश होकर सरकार यह घोषणा करेगी तब उसमें वह खूबी नहीं रहेगी।

कम्यूनिकके शेषान्तमें वे बातें कही गयी हैं जो सरकारकी परम्पराकी नीतिके अनुकूल रहती हैं। इसमें आत्म-श्लाघायें तथा असहयोगके विषयमें भ्रम उत्पन्न करनेवाली बातें भरी हैं। यह कहना बिलकुल गलत है कि जिनका दमन किया गया है वे जोर-जुलमसे बचे रहनेके सिद्धान्तसे विमुख हो गये थे। मैं सरकारको ललकारता हूं कि जो लोग कैद किये गये हैं उनके व्याख्यानोंसे वह कोई बात सिद्ध करे जिसमें जोर जुल्म पाया जाता हो। अभियुक्तोंके भाषण कभी बहुत कड़े, अत्युक्ति-पूर्ण और उद्दण्ड भी हुए हैं, पर उनमें जोर-जुल्मके प्रचारकी कभी गन्ध भी नहीं पायी गयी। उनकी वक्तृताओंमें कोई ऐसी बात नहीं आई है जो स्वयं मैं नहीं कह सकता। नये रंगरूटोंसे अपील की गयी थी कि दूसरे देशोंकी स्वतन्त्रता हरनेके लिये तुम अपने आपको मत बेचो। यदि यह जोर-जुल्मका प्रचार न समझा जाय तो सरकारी सेनाको उभारनेका कोई प्रमाण नहीं मिलता।

पलटनोंको भड़कानेके कारण अभियुक्तोंको दण्ड मिला, यह बात सरासर झूठ है। सरकारका कहना है कि हमने "ऐसे समय जबकि हिन्दुस्तान स्वराज्यके सिद्धान्तकी सिद्धिकी ओर आगे बढ़नेको है यह अच्छा नहीं समझा कि बोलने या लिखनेकी स्वाधीनतामें बाधा डालें" पर पञ्जाबमें "राजद्रोही"

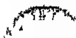
सभाओंकी जो घोषणा हुई है और कुछ असहयोगवादी समाचार पत्रोंके साथ जो व्यवहार किया गया है वह साफ बतला रहा है कि यह वात बिलकुल झूठ है।

"इस आन्दोलनके नेताओंके सम्बन्धमें जो भ्रामक वातें लिखी गई हैं और यह कह कर उसका जो उपहास किया गया है कि ये शहीद कहलानेके लिये यह सब उद्योग कर रहे हैं उसका अब विचार करना है। सरकारको यह जानना चाहिये कि अलीबन्धुओंको और मुझे भी यह जानकर कि कमसे कम अभी तो सरकार लोगोंको कैद करना नहीं चाहती, बहुत दिलासा हुआ है। सबको यह मालूम है कि यदि हमलोग पकडे गये तो अशान्तिका स्फोट होनेका बडा भय है। यह वात सिर नीचा करनेवाली है। यदि लोग वास्तवमें शक्तिशाली और आत्म-विश्वास रखनेवाले हों तो वे हमारे या किसी भी नेताके पकडे जानेसे अशान्त न हों। जबतक सरकारके भयका कुसंस्कार दूर नहीं होता तब तक इस दुखी देशके लोगों द्वारा ऊधम उत्पात होनेका डर भी बना रहेगा और जिन लोगोंपर ये विश्वास करते हैं उनके परामर्श और देशकार्यसे वे वञ्चित होंगे तब यह डर रहेगा।

सरकारके हाथ रोके रहनेका तीसरा कारण बिलकुल बनावटी है और उन लोगोंको अपने जालमें फसानेका प्रयत्न है जो साव धान नहीं हैं। सरकार कहती है कि असहयोग "केवल कल्पन या भावना" है और "वह यदि कृतकार्य हुआ तो उसका यह परिणाम होगा कि चारों ओर अन्धेर मचेगा, अराजकता फैलेगी

और उन लोगोंका नाश होगा जिनकी इस देशमें कुछ हैसियत है।" इस एक वाक्यमें सरकारका असली चरित्र अङ्कित हो गया है। सरकारको यह जानना होगा कि असहयोगकी सफलताका यह अर्थ है कि सरकारकी वर्तमान पद्धतिका विनाश निर्भय तथा शांति पूर्वक कर दिया जाय और उसके स्थानमें अशान्ति तथा अराजकता नहीं, बल्कि उच्च कोटिकी राजनीतिक व्यवस्था की जाय जिसमें देशके प्रत्येक न्याय्य स्वार्थकी रक्षा की जाय। जो यूरोपियन व्यापारी भारतमें ईमान्दारीसे उपार्जन करना चाहते हैं वे भी इस रक्षासे वञ्चित नही हो सकते। "वास्तविक हैसियतोंका वर्णन कर जान-बूझकर जनताका अपमान किया गया है, इससे धनी लोगोंको भी जनताके विरुद्ध उभारना है। क्या भारतमें जनताकी कोई हैसियत नहीं है? क्या देशमें उनका वास्तविक उद्देश्य नही है? यदि कोई अनिष्ट हुआ तो धनी लोग तो इस देशसे चले भी जा सकेंगे, पर जनताको इस दुःखकी भूमिमें ही दिन काटने पड़ेगे।

सरकारी प्रस्तावके कर्ताके मुखमें यह बात कभी शोभा नहीं देती कि असहयोग ईर्ष्या और मूर्खतासे काम लेता है, जब वे जानते हैं कि प्रत्येक असहयोगमञ्चपरसे आत्मत्याग, आत्म परिष्कार तथा संयम-नियमकी शिक्षा दी जाती है। इसी प्रकार सत्याग्रहका भी बहुत अनर्थ किया गया है। अप्रेल महीनेमें इसका बहुत बुरा अनुभव हुआ था, उन दिनोंके सरकारी कर्मचारियोंके खोटे काम लोगोंके हृदयमें ताजे बने रहेंगे। पञ्जाबमें एक दुष्ट



और घृणित है। फिर भी कितने मुसलमान इस कार्यवाहीको प्रशंसा करेंगे और कहेंगे कि यह काम सच्ची धार्मिकताके अनुसार हुआ है। मैंने अपने कानों कितने मुसलमानोंको कहते सुना है कि इस तरहकी कार्रवाई उचित ही नहीं बल्कि प्रशंसा और पुरस्कारके योग्य है। कितने हिन्दुओंका आज तक यही विचार है कि वङ्गभङ्गको रद्द करनेका एकमात्र कारण बम आदिका प्रयोग था। मैं जानता हूं कि कितने लोग धींगरोंको धर्मोन्मत्त समझते हैं। अंग्रेजोंके हाथसे अपने देशको स्वतन्त्र या अलग करनेके लिये आयर्लैंडके सिन-फिनर स्वेच्छापूर्वक तलवार या अन्य तरहके हिंसात्मक अस्त्र शस्त्रों और साधनोंका प्रयोग कर रहे हैं। प्रत्येक हत्यारेको वे बहादुर समझते हैं। मुझे पहलेसे ही इस बातकी आशङ्का थी कि हम लोगोंके बीचमें भी ऐसी बातें हो सकती हैं। इसके लिये मैंने शान्तिमय अहिंसात्मक असहयोगकी सलाह दी और खिलाफतके उद्धारका यही सर्वोत्तम मार्ग बतलाया। मेरी समझमें अहिंसात्मक असहयोगकी खुली शिक्षाका ही प्रभाव है कि हत्या और दुराचारसे यह देश कलंकित नहीं हो सका है। पर मिस्टर विलोबीकी हत्याने यह बात प्रमाणित कर दी है कि इस देशके प्रत्येक व्यक्तिके दुराचार और हिंसाके भाव रोकनेमें अहिंसात्मक असहयोगका प्रचार पूर्णरूपसे उपयोगी नहीं हुआ है और यह होना भी कठिनसा प्रतीत होता है। इससे एक बात और विदित होती है। वह यह है कि खिला-

आगे बढ रहा है। हम लोगोंको इस बातको अपने हृदयमें दृढ़ कर लेना चाहिये कि इस तरहकी प्रत्येक हत्या, हिंसाका प्रत्येक आचरण इस आन्दोलनकी प्रगतिको रोक देगा।

इस अवसर पर मैं सिनफिनिस्म, तुर्किस्तानका असहयोग आन्दोलन और हमारे देशके इस असहयोग आन्दोलनमें क्या अन्तर है इसे स्पष्टतया प्रगट कर देना चाहता हूं। पहला अहिन्सात्मक नहीं है, अपनी सफलताके लिये वह अहिन्सापर इतना जोर नहीं देता। सिनफिनिस्म तो हर तरहसे हिंसात्मक ही होते हैं और उनकी प्रत्येक कार्रवाई हत्याके बलपर चलती है। उनके कार्यों में उसी तरहकी भीषणता भरी है जिस तरहकी जेनरल डायरके कामोंमें। जो लोग उनकी कार्यवाहीसे सहानुभूति रखते हैं वे उस तरहकी कार्यवाहीको भले ही पसन्द करें। पर केवल इसके कारण इसमें और जेनरल डायरकी कार्यवाहीमें किसी तरहका भेद नहीं आसकता। सेण्ट्रल खिलाफत कमेटीने तबतकके लिये अहिंसात्मक रहनेका वचन दिया है जबतक असहयोग आन्दोलन जारी है। इसलिये हमे अंग्रेजोंको जान व मालकी उसी तरह रक्षा करनी चाहिये जिस तरह हम अपने जान व मालकी रक्षा करते हैं। हमें अपनेको स्वय रक्षक समझकर हिसा करनेवालोंके हाथसे अंग्रेजोंकी रक्षा करनी चाहिये। हमलोगोंकी सफलता अहिन्सा आदि कुप्रवृत्तियोंके रोकनेकी हमारी चेष्टा और योग्यतापर निर्भर करती है।

लखनऊके भाषण

(नवम्बर ३, १६२०)

अली बन्धुओंके साथ मेरी इस बारकी यात्रामें एक
घटना यह हुई कि मिस्टर डोगलस (एक हिन्दुस्तानी ई
ने असहयोग आन्दोलनसे अपना सम्बन्ध तोड दिया ।
डोगलसका यह निर्णय मौलाना अब्दुल बारीका वह भाष
जिसमें उन्होंने ईसाईयोंको काफर कहकर सम्बोधित
है और स्वर्गीय मिस्टर विलोबीकी हत्यारोंके साथ सहा
दिखायी है ।

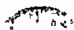
मैं भी उस सभामें उपस्थित था । मौलाना अब्दुल
प्रत्येक शब्दको मैंने गौरसे सुना था । मैं इस बातको
साथ कह सकता हूं कि उस भाषणमें मौलाना अब्दुल
कोई भी इस तरहके शब्दका प्रयोग नहीं किया था जि
मिस्टर डोगलसके हृदयमें इस तरहके भाव उठ सकते
मैं यह बात भी दावेके साथ कह सकता हू कि मौ
अब्दुलबारीने अपने भाषणमें ऐसा एक भी शब्द नहीं
था जिससे यह ध्वनि निकलती हो कि मिस्टर विलो
हत्यारोंसे उन्हें सहानुभूति है या मिस्टर विलोबोको
कहकर उन्होंने ईसाईयोंका किसी तरहसे अपमान करना

शरीफके मुकाबिलेमें मेरी बातोंको अधिक आदरकी दृष्टिसे देखी है। आजतक जितने कार्यकर्ता मुझे मिले उनमेंसे मिस्टर महादेव देशाईका स्थान प्रशंसाके योग्य है। पर कभी कभी लाख चेष्टा करनेपर और हर तरहसे सतर्क रहने पर भी हम लोगोंमें से अनेक भूल कर बैठते हैं।

जहातक मुझे स्मरण है मौलाना अब्दुलवारीने अपने भाषणमें यही कहा था कि मैं मिस्टर विलोबीकी हत्याको नापसन्द करता हू। वे इस बातको भली भांति समझते थे कि इस हत्यासे खिलाफत आन्दोलन पर आघात पहुंचा है। उन्होंने यह दृढ निश्चय किया था कि यदि उन्हें इस हत्याकी कुछ भी खबर होती तो वे स्वयं इसके रोकनेके लिये तत्पर हुए होते। इस कामको वे स्वय करनेके लिये तैयार थे और यदि दूसरे भी इसे किये होते तो वे उसके कृतज्ञ होते। पर जब उनसे उन हत्यारोंकी निन्दा करनेके लिये कहा गया तो उन्होंने जो कुछ कहा वह स्वाभाविक बात थी। धार्मिक दृष्टिसे वे इस तरहकी कार्रवाईके लिये तैयार नहीं थे। वे इस बातको नहीं जानते थे कि मिस्टर विलोबीकी हत्या किस तरह की गई औरउस हत्याके क्या कारण थे। इसलिये जब हत्यारेने हत्या कर डाली तो वह अपने कर्ताके पास स्वयं जवाबदेह है। इसलिये किसीको ईश्वरके पदको अखतियार कर लेना और इस तरह उसकी निन्दाकी योजना करना उचित नहीं प्रतीत होता। मिस्टर विलोबी मुसलमानोंकी दृष्टिमें काफर थे और यदि मुसलमानोंने

"जहाद" की घोषणा की होती तो शत्रु पक्षका कोई भी व्यक्ति मुसलमानोंकी तलवारका शिकार हुआ होता। पर मुसलमानोंने इस बातकी दृढ़ प्रतिज्ञा की है कि वे तलवार नहीं छूयेंगे ऐसी अवस्थामें किसी भी मुसलमानके लिये यह उचित नहीं है कि वह शत्रु दलके किसी भी व्यक्तिकी जानपर आक्रमण करे। उन्होंने मेरी बात मानकर असहयोग आन्दोलनको स्वीकार किया है, क्योंकि कोरान शरीफ तथा पैगम्बरके जीवनमें इस तरहके (असहयोगके) अनेक उदाहरण भरे पड़े हैं और जबतक वे असहयोग आन्दोलन स्वीकार करके कार्य करते हैं, तबतक उन्हें मेरी बातोंको पूरी तरहसे स्वीकार करके ही चलना होगा। मौलाना अब्दुलबारीकी इसलिये घोर निन्दा की गई है कि उन्होंने मूर्त्तिपूजक हिन्दुओंका साथ दिया है और उनसे मैत्री स्थापित की है पर मौलाना साहबका यह पक्का विश्वास है कि हिन्दुओंके साथ मैत्री स्थापित करना और उस मैत्रीको निबाहनेके लिये गोवधका त्याग करना कहीं अच्छा है और उन काफरोंके साथ मैत्री रखनेसे तो कहीं अच्छा है जिन्होंने इस्लाम धर्मके नेस्तनाबूद (नाश) कर डालनेके हेतु कोई भी प्रयत्न उठा नहीं रखा।

मौलाना साहबके भाषणका यही सारांश है। उनका भाषण कड़ा अवश्य था। भाषा तीखी थी। मौलाना अब्दुल बारी कट्टर धार्मिक जीव हैं। जब वे देख रहे हैं कि इस्लाम धर्म घोर विपत्तिमें पड़ा है और उसपर भीषण आघात



होनेवाला है तो यदि उनके हृदयसे इस तरहकी कड़ी और तीखी बातें निकलें तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं। जिस तरहसे हिन्दुओंके म्लेच्छ या अनार्य शब्दोंसे मैं घृणा करता हूं उसी तरह मुसलमानोंके काफर शब्दको भी मैं नहीं पसन्द करता। मैं नहीं चाहता कि किसी भी अवस्थामें कोई भी व्यक्ति इन शब्दोंका प्रयोग करे। पर जिन शब्दोंका प्रयोग हिन्दू और मुसलमान बाल्यावस्थासे ही करते आये हैं और जिससे वे अभ्यस्त हो गये हैं उसके लिये मैं उनसे लड़ाई उठाना नहीं चाहता। ज्यों ज्यों भिन्न भिन्न फिरकों और मतोंके लोगोंमें मैत्री दृढ़ होती जायगी त्यों त्यों इस तरहके शब्दोंका प्रयोग आप ही आप कम होता जायगा और धीरे धीरे वह एकदमसे उठ जायगा। बड़े बड़े रईस विद्वान—विशप हेलर—तक हिन्दुओंको नारकी कहते हैं और उनकी अवस्थापर खेद प्रगट करते हैं। पर क्या इसके लिये मैं उनकी विद्वत्ता और अच्छाईको स्वीकार करना छोड़ दूं। मानव जीवनके लिये कहा गया था कि वह प्रकृतिसे भी कपटी और कुटिल होता है। इस बातको आजतक अनेक ईसाई गिरजोंमें दोहराया जाता है। इसलिये उस भाषणमें ऐसी कोई बात नहीं दिखलाई देती जिसके कारण मिस्टर डोगलस अपने सम्बन्ध त्यागको उपयुक्त ठहरा सकें।

मौलाना शौकत अलीके शब्द और भी स्पष्ट थे। उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा था कि मिस्टर विलोबीकी हत्याके लिये

जितना अधिक दुःख मेरे हृदयमें है उतना किसीको नहीं हो सकता। यदि खिलाफत कमेटीने अहिंसाके भावको स्वीकार करके हिंसात्मक भावको रोकनेकी सलाह न दी होती तो इस तरहकी अनेक हत्यायें हो गई होतीं। पर जबतक हम लोगोंने असहयोग आन्दोलनको स्वीकार किया है तबतक हम लोगोंका यह परम कर्तव्य होना चाहिये कि अपने धर्मकी रक्षाके लिये इस तरहकी हत्याओंको रोकें। पर मैं इस हत्याकी निन्दाके प्रस्तावका समर्थन करनेका कोई कारण नहीं देखता।

मैं यह भी देखता हूं कि लोग मेरे सम्बन्धमें अनेक तरहकी भ्रमात्मक बातें कह रहे हैं। मैंने कभी भी नहीं कहा था कि जब कि हम लोग तलवार उठानेकी आवश्यकता देखेंगे तो हम लोग सूचना दे देंगे। मैंने इस हत्याकी निन्दा करनेमें कोई बात उठा नहीं रखी थी। मैंने यह भी कहा था कि यदि इस तरहके निर्दोषोंकी हत्याका यदि समर्थन किया गया तो इसलाम धर्मका धवल यश कलङ्कित हो जायगा। विशेष कर उस अवस्थामें जब कि धार्मिक मुसल्मानोंने इसके विरुद्ध घोषणा की है। मैंने कहा था कि मेरा धर्म तो शत्रु तकके प्राण लेनेकी मनाही करता है। साथ ही मैंने यह भी कहा था कि मुसलमान लोग तथा उनके साथ ही लाखों हिन्दू इस बातको मानते हैं कि अवस्था विशेषमें हत्या करना और प्राण लेना जायज है। इस संबंधमें

मैंने कहा था कि यदि भारतके मुसलमान असहयोगकी अहिंसात्मक प्रवृत्तिको छोड़कर तलवार खींचना चाहें तो उन्हें उचित है, कि वे इसकी सूचना दे दें।

मैं इस बातको बराबर कहता आया हूं और आज भी उसे दोहराता हूं कि समस्त सुविचारवान मुसलमान—जिनमें मौलाना अब्दुलबारी साहब तथा अली बन्धु भी शामिल हैं—इस बातकी कड़ी चेष्टा कर रहे हैं कि किसी भी प्रकार हिंसाकी प्रवृत्ति न जागृत हो। मैं यह भी भली भांति समझता हूं कि यदि ये लोग इस तरहसे सचेष्ट न रहते तो अवश्य खून खराबी आरम्भ हो गई होती। मैं इस बातको भी स्वीकार करता हूं कि इस तरहके खून खराबीसे न तो इस्लाम धर्मको कोई लाभ पहुंच सकता है और न भारतका ही किसी तरहका उपकार हो सकता है। इससे निर्दयतापूर्ण दमन अवश्य जारी हो गया होता, जिसके कारण भारत और इस्लाम धर्मकी रही सही मर्यादा भी लुप्त हो गई होती।

सिक्ख लोग

(नवम्बर १७, १९२०)

किसी सिक्ख संवाददाताने ट्रिब्यूनके सुयोग्य सम्पादक बाबू कालीनाथ रायके पास एक पत्र भेजा है। उन्होंने उस पत्रके एक अंशको मेरे पास इसलिये भेज दिया है कि मैं उसपर अपना मत प्रगट करूं। उसमें लिखा है —२१ अक्तूबरको सिक्ख समुदायके कुछ लोग महात्मा गाँधीसे मिलने गये और उनसे कहा कि आपके असहयोग आन्दोलनका सिक्ख जनतापर बहुत ही बुरा प्रभाव पड रहा है। इसपर महात्माजीने उनसे कहा कि असहयोग आन्दोलन अहिंसात्मक है। इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि ऐसे लक्षण दिखलाई दे रहे हैं कि इस आन्दोलनके कारण सिक्खोंमें हिंसाके भाव उदय हो सकते हैं पर मैं सिक्खोंको यही सलाह दिया करूंगा कि वे मनसा और कर्मणा हर तरहसे अहिंसात्मक रहनेकी चेष्टा करें। पर यदि उनकी चेतावनीकी परवा न करके सिक्खोंने हिंसाके भाव दिखलाये और यदि इसके लिये सरकारने दमनद्वारा उन्हें दबाना शुरू किया तो उन्हें इसके लिये जरा भी खेद या पश्चात्ताप नहीं होगा। उस अवस्थामें हिन्दू या मुसलमान कोई भी

उनकी सहायताके लिये तैयार नहीं होगा और उनका अन्त सभी चुपचाप देखेंगे, क्योंकि इस प्रकार उस तत्वकी आहुति देकर—जिसके द्वारा हिंसा होनेकी संभावना है—ही असहयोग आन्दोलन सफल होगा।" इस अवतरणको देकर बाबू कालीनाथ रायने अपनी ओरसे लिखा है —"इस पत्रके लेखकने लिखा है कि सिक्ख लीगकी एक बैठकमें ये शब्द आपके नामपर दोहराये गये थे और यद्यपि आप उस बैठकमें उपस्थित थे तथापि आपने इन शब्दोंका विरोध नहीं किया था।" इसके बाद मुझे यह भी सूचना मिली है कि सिविल और मिलिटरी गजटने इसको प्रकाशित भी किया है।"

मेरी समझमें मेरे अनादरके लिये ही इस तरहकी बातें मेरे सम्बन्धमें कही जाती हैं। जिस बातचीतकी इस पत्रमें चर्चा की गई है वह प्राय एक घण्टेमें समाप्त हुई थी। मैंने जो कुछ कहा था उसे उलट पुलटकर तथा खींच तानकर इस तरहसे रख दिया गया है मानों मैंने उसे उसी ढङ्गसे कहा था जिस ढङ्गसे ये उद्धृत किये गये। बात-चीतकी भाषा अंग्रेजी और हिन्दुस्तानकी खिचड़ी थी। कहीं अंग्रेजीका प्रयोग होता रहा और कहीं हिन्दुस्तानीका। जो कुछ मैंने कहा था उस डेपुटेशनके अनेक सदस्योंके प्रति कहा था। जो मेरे पास इस बातकी प्रार्थना करने आये थे कि मैं सिक्ख समुदायके सामने असहयोग आन्दोलनके कार्यक्रमको न रखूं क्योंकि उनमें हिंसात्मक भाव आ जानेकी सम्भावना है। जैसा सिक्ख लोगके

अनेक सदस्योंमें मैंने अपनी आंखों देखा था। उन लोगोंने मुझसे अनेक तरहके प्रश्न किये। उसके उत्तरमें मैंने उनसे कहा था कि उस सभामें उपस्थित अनेक सिक्ख सदस्योंके व्यवहार मुझे पसन्द नहीं आये और उससे मैं बड़ा ही दुःखी हुआ। मैंने उनसे यह भी कहा कि यदि उस सभामें मुझे बोलने दिया गया होता तो मैं हिंसाके कारण जो उत्पात उठ सकता था उसके लिये उन्हें कड़ी चेतावनी दी होती कि सहयोगियोंके साथ ज्यादती करना तथा बल पूर्वक उन्हें अपनी ओर खींचनेकी चेष्टा करना आत्म हत्या करनेके बराबर होगी। मैंने उनसे यह भी कहा था कि यदि असहयोगियोंने हिंसाकी प्रवृत्ति दिखलाई या हिंसा की तो वे अपना विनाश आपसे आप ही कर डालेंगे, क्योंकि उस अवस्थामें ब्रिटिश सरकारको पूरा अवसर मिल जायगा कि वह सम्पूर्ण जातिका नाश कर दे। मैंने उनसे यह भी कहा था कि जहांतक मेरा वश चलेगा मैं प्रत्येक हिन्दू तथा मुसलमानको हिंसा करनेवालोंसे दूर रहनेका ही सलाह दूंगा। और सरकारके साथ मैंने जो संग्राम छेड़ा है उससे मैं इस तरहके किसी भी भय या आशाकी सभावनासे अपना कदम पीछे नहीं हटा सकता।

इस लिये हमारी बातोंका जो सक्षेप पत्रके लेखकने किया है उसमें उसने मेरे साथ न्याय नहीं किया है। मैं इतना और लिख देना चाहता हूं कि न तो मैं उस लेखकको ही जानता हूं और न मैंने उस पत्रको ही देखा है जिसमेंसे बा० कालीनाथ

रायने उपरोक्त अवतरण भेजा है। मुझे यह भी स्मरण नहीं है कि किसी सिक्ख सदस्यने उस सभामें मेरे विषयमें इन शब्दोंका प्रयोग किया था। उसका भाषण गुरुमुखी भाषामें हुआ था। जहातक मुझे स्मरण है उसने मेरे भावको स्पष्टतया व्यक्त किया था।

तालीमकी जरूरत

(अक्टूबर २०, १९२०)

मद्रास प्रदेशके अपने अनुभवका वर्णन करते हुए मैंने पहले वहुत कुछ लिखा है कि हमलोगोंमें तालीमकी मात्रा कितनी है। पर रोहिलाखण्डमें सफर करते समय इस तालीमका अभाव देखता हूं।

प्रत्येक स्थानमें लोगोंकी बुराईसे नहीं बल्कि स्वयसेवकोंमे तालीमके अभावके कारण मैं अंधाधुंधी और अव्यवस्था देखता हूं। हर एक स्थानमें स्वयसेवकोंपर पहले कभी ऐसी सभाओ-के वन्दोवस्तका भार नहीं पडा जैसा अब आपडता है। काम करते समय हर जगह हुल्लडही वहुत होता है।

भाई शौकतअली प्रत्येक स्थानमें अविश्रान्त परिश्रम कर जाते हैं। जहा जाते हैं वहा वहुतोंका मन रखनेकी इनमे उत्कण्ठा रहती है। इससे इनके कार्यक्रममें यह कहावत चरि-

तार्थ होती है कि गत थोड़ी और शेष घने (बहुत)।" इन्होंने एक ही दिनमें मोटर द्वारा अलीगढ़से हाथरस, हाथरससे एटा और एटासे कासगञ्ज इन तीनों स्थानोंको जाकर कार्यक्रम बता शामको रेल द्वारा कानपुर जानेका भार लिया। मोटरका सफर ६० मीलका था। सवेरेके पहर अलीगढ़में एक सभा पूरी कर दस बजे आप चले और ११ बजे हाथरस पहुंचे। गर्मी बड़ी तेज थी। हाथरसमें हजारों आदमीकी टोलियां तथा भीड़ उनकी राह देख रही थी। उसके बाद इतनी भारी सभा हुई जिसमें सबसे बलवान् मनुष्यकी भी आवाज काम न दे। हमारी मिहनतके बदलेमें आनरेरी मैजिस्ट्रेटने मैजिस्ट्रेटी छोड़ी। इसके बाद वे एटा पहुंचे। यहां हाथरससे कुछ अधिक व्यवस्था थी। यहांसे मेरी मोटरें कासगज पहुचीं। मौलाना शौकतअली तथा उनके साथी समयपर न पहुच सकनेके कारण टेम नहीं पा सके। एटामें बहुतसे लोगोंने पट-त्याग किया। कासगञ्जकी सभा बड़ी विराट थी। लोगोंके पैर पड़ते, चरण छूते बड़ी देर लगी। किसी प्रकार भी प्रबन्धकर्ता प्रधानोंको इससे निकाल नहीं सकते थे। इससे समयकी बरबादी होती है और बड़ी भारी भीड़ वन्दना करनेको पिल पड़ती है जिससे बड़ा उपाश्रयका और बड़ी जोखिम होती है।

सबसे डरावना अनुभव तो रातके समय एटासे कानपुरको रेल द्वारा मुसाफिरी करते समय हुआ। प्रत्येक स्टेशनपर लोग दल बांधकर ठेलकर पास पहुंचते और जरा भी झपकी

न लेने देते थे। प्रत्येक स्टेशनपर लोग मुझे जगाकर दर्शन करनेके लिये शोर-गुल मचा देते। मेरा सिर खूब दर्द कर रहा था और विश्रामकी बडी जरूरत थी। मेरी स्त्री तथा दूसरे लोग उनको रोककर चुप रहनेके लिये बहुत कुछ विनती करते थे, पर इससे कुछ भी फल नहीं होता था। जैसे जैसे वे अधिक प्रार्थना करते जाते थे वैसे लोग शोर-गुल मचाकर दलीलें पेश करते थे। ऐसा गोलमाल चलता ही रहा। मेरी स्त्री डब्बेकी बत्तीको जितनी बार बुझा देती थी उतनी ही बार उसे वे फिर जला देते थे। खिडकियां बन्द करते थे तो लोग उन्हें भी खोल डालते थे। दिन भरकी तकलीफके बाद थोडा विश्राम करने देना भी क्या तुम नहीं चाहते? क्या तुम इन्हें असमय ही मार डालना चाहते हो? उसके उत्तरमें लोग कहते थे कि हम कोसों चलकर दर्शन करने आये हैं, हमें दर्शन कराओ। इस रातको मेरी आंख पलभर न लगी। तालीम न पाये हुए लोगोंके प्रेमका यह एक विलक्षण उदाहरण था। दुःख, दरिद्रता और अपमानसे छुटकारा पानेके लिये उत्सुक और श्रद्धालु लोग जानते हैं कि मेरे पास इनके लिये आशाका संदेशा है।

मैं जानता हूं कि मेरे पास उनके लिये आशा और निश्चित छुटकारेका सन्देशा है, पर . हा यही बडा भारी पहाड इसके बीचमें है। तालीम बिना, संयम बिना छुटकारा नहीं है, आशा नहीं है। नश नशमें व्यापी हुई इस

दुर्व्यवस्थाकी आदतसे तालीम कैसे सिखाई जाय ? इस प्रेमका प्रदर्शन पशु बलसे न दिखाते तो उन्हें देश-कार्यके लिये, तालीम बिना हिन्दुस्तानके लिये, स्वराज्य पानेकी योग्यता थोडी आ सकती ? लोग यदि देश सेवकोंको अपना अशिक्षित प्रेम दिखलाकर यदि उचित विश्राम भी न लेने दें और उन्हे मार डाले तो ये कैसे अपना कार्य सिद्ध करेंगे ? इससे हमें ऐसे सतके प्रदर्शन बन्द करने चाहिये। छोटे छोटे मनुष्यके लिये मनमें विचार होना चाहिये। इस एक गाडीके मुसाफिरीके विश्राम नष्टकर देनेकी बातसे आपको विचार करना चाहिये। नेताओं-पर जो प्रेम है उसे देशके उपयोगी कार्य करनेकी शक्तिमें लगा देना सीखना चाहिये। नेताओंके चरण छूके और उनका 'जयघोष' करनेसे सन्तोष हो जानेपर प्रेम कम हो जाना सम्भव है। ऐसा प्रेम आगे दुर्गुणका रूप धारण कर सकता है, ऐसी भी सम्भावना रहती है। देशके जन समाजके सामने इस समय सबसे प्रधान कार्य यह है कि लोगोंको तालीम दे उसकी उपयोगिता सिखाई जाय। असहयोगके लिये लोगोंको द्वेष न सिखा उनके अन्दरके या बाहरके किसी प्रकारके शत्रुके सामने रक्षा करना सिखाना चाहिये। असहयोगको सफल करनेके लिये आज इस प्राचीन जन समाजके एक एक अङ्गमें पूरे आदर्श, सहयोग और एकताकी जरूरत है।

तक पहुचनेकी सभी कोशिश कर रहे थे और धक्कामुक्की कर रहे थे। इस बातको किसीने भी नहीं सोचा कि यह काम असम्भवसा है। अन्तमें मैंने कहा कि जबतक जनता पूर्ण शान्त न हो जायगी मैं इस स्थानसे नहीं हिलूंगा। चन्द मिनिटके बाद जनताने होश सम्भाला और हमलोगोंको आगे बढ़नेके लिये रास्ता मिला। सवारी निकाली गई। सवारी इतनी लम्बी चौडी और दीर्घकालव्यापी थी कि तबियत घबरा गई। हमलोग सब कोई मौलाना अब्दुलबारीके घरपर ठहरे। उन्होंने हिन्दुओंके भोजनादिका अलग खास प्रबन्ध किया था। एक महाराज रसोइया भी उन्होंने रख लिया था। जनताको स्मरण होगा कि यहीं पर मौलाना जाफर उलमुल्क, गिरफ्तार किये गये थे। आप सच्चे, पवित्र और निर्मल चरित्रके मुसलमान थे। जहापर मिस्टर विलोबीकी हत्याकी गई थी वह स्थान भी यहासे बहुत दूर नहीं है। रातको महती सभा हुई। जनताने पूर्ण शान्तिके साथ ध्यानसे हमलोगोंके व्याख्यान सुने। स्थानाभावके कारण मैं यहापर उन भाषणोंका उल्लेख नही कर सकता पर यदि मैं यह कर सकता तो बड़ा अच्छा होता। हम सबने एक स्वरसे खेरीके इस हत्याकाण्डकी निन्दा की और कहा कि दुर्भाग्यवश खिलाफत कमेटीकी पूरी देखरेखपर भी यह दुःख जनक घटना उपस्थित हो गई जिससे खिलाफतपर बहुत धक्का पहुचा है क्योंकि इससे लोग डर गये हैं और स्थानीय कमेटीके ऊपर

सन्देह हो गया है। मुझे इस बातका बड़ा खेद हुआ कि उस समय प्राय एक भी नेता उपस्थित न थे। उनकी समझमें असहयोग आन्दोलन हानिकर है। यह कैसा है इसका पता तो समय ही देगा। पर हमें उनके साथ भी शान्ति और धैर्य्यसे काम लेना चाहिये। वे भी राष्ट्रके ही अङ्ग हैं और जिस दिन उनका अविश्वास उठ गया उसी दिन वे उसका साथ देनेके लिये तैयार हो जायगे।

अमृतसर और लाहोरके जोश खरोशका वर्णन छोडकर हम भिवानीका वर्णन करते हैं। अमृतसरमें भी स्टेशनपर बेशुमार भीड थी पर सगठन या तालीमका उनमें भी एकदम अभाव था। निदान हमलोग दूसरे प्लेट फार्मपर उतरे और इस तरह उस भीडसे अपनी रक्षा की। उसी तरह मोटरपर सवार होकर भागकर हमलोगोंने लाहोरकी भीडसे अपनी रक्षा की।

भिवानीमें हम लोग रातको पहुचे। इस यात्रामें बडा कष्ट हुआ जनता दर्शनोंके लिये उत्सुक हो रही थी। कितने तो क्रुध हो गये क्योंकि हम लोगोंने बिस्तरा छोडनेसे साफ इन्कार कर दिया। कितनोंने तो यहातक कहना शुरू कर दिया कि हम लोगोंको बडा अभिमान हो गया है कि हम लोग जनताकी परवा न करके उन्हें दर्शनतक देने नहीं आ रहे हैं। अन्तमें थके मादे और ऊघते हम लोग भिवानी पहुंचे। आसपासके गावोंसे प्राय ५० हजारकी भीड इकट्ठी हो गई

थी। इस भीड़को देखकर मुझे भय पैदा हो गया कि हम लोग इसमें पिस जायंगे और हम लोगोंकी हड्डी पसलीका कहीं पता नहीं चलेगा। पर मेरे अनुमानके विरुद्ध मैंने वहां पूर्ण शान्ति पाई। स्टेशनपर न तो दौड़ धूप थी, न धक्कामुक्की था, और न शोरगुल था। प्रत्येक आदमी अपनी अपनी जगह पर खड़ा था। जनताकी भीड़ भारी थी फिर भी सवारी समारोहके साथ निकाली गई। पण्डालमें जनताने जो धैर्य और शान्तिका प्रदर्शन किया वह और भी आश्चर्यजनक था। पण्डालकी सजावट विचित्र थी। कुर्सियोंका सर्वथा अभाव था। यहांतक कि सभापतिके लिये भी कुर्सी नहीं रखी गई थी। पण्डालके बीचमें एक ऊंचा चबूतरा था। प्रधान प्रधान व्यक्ति उसी चबूतरेपर बैठाये जाते थे। पण्डालमें प्रायः १२,००० आदमी समा सकते थे। फिर भी वह जिस तरहसे बनाया गया था उससे वह और भी लम्बा चौड़ा प्रतीत होता था। और चबूतरेकी ओर वह इस तरह ढालवां बना दिया था कि सब कोई आरामसे और मजेमें सब कुछ देख और सुन सकते थे। मेरी समझमें अर्धचन्द्राकार बनाना, इससे भी अच्छा होता है। चबूतरेके पीछे बैठनेका स्थान नहीं होना चाहिये।"

आगामी कांग्रेसके कार्यकर्ताओंको भिवानी और हैदराबाद (सिन्ध) से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। यदि स्वागत कारिणी सभाने कुर्सियोंका प्रबन्ध नहीं किया, चाहे

यह प्रबन्ध चबूतरेपर हो या नीचे फर्शपर—तो इससे उनके कई हजार रुपये भी बच जायगे और जगह भी काफी निकल आवेगी। हमें जनता तथा उनके नेताओंके आरामका अधिकाधिक भरोसा करना चाहिये। हम लोगोंको जनातपर उन्हींके नेताओंद्वारा अधिकार प्राप्त करना होगा। ये नेतागण भी उतने ही सीधेसादे होते हैं जितनी की स्वय जनता। इसलिये चन्देकी आवश्यकताकी पूर्त्तिके लिये बहुतोंको कुर्सीपर बैठनेके लिये मजबूर करना उचित नहीं प्रतीत होता। मुझे यह भी आशा है कि नागपुर कांग्रेसके स्वयंसेवक दल अभीसे ट्रेन किये जायगे जिससे वे अपने कर्तव्यको अच्छी तरह समझ सकें और उसका पालन कर सकें तथा साधारणसे साधारण बातका अच्छा प्रबन्ध कर सकें।



आसामका दर्शन

आसामका तो मैंने सिर्फ नाम ही सुना था। जब मैं खिलाफतमें था तब मैंने मणिपुरकी चढ़ाईकी कहानी पढ़ी थी। और तबसे मेरा यही ख्याल हो गया था कि आसामके लोग बड़े जङ्गली होते हैं। इससे मैंने अपने हिन्द स्वराज्यमें उन्हें जङ्गली लिखा था। यह बात आसाम भाइयोंको अखरती थी। हाकिमोंने उस बातका दुरुपयोग भी खूब किया। और जिस अज्ञानीने आसामियोंको जङ्गली लिखा, उसको भला आसामी लोग भी कैसे चाह सकते हैं? परन्तु लोग तो अब मनुष्यके हृदयको परखने लगे हैं, तब यह कैसे हो सकता है कि वे निर्दोष अज्ञानपर बुरा मानें? तथापि मैंने अपनी भूलके लिये सभामें लोगोंके सामने सबसे पहले माफी माग ली। जब मैंने अपनी भूलका जिक्र किया तब लोग खिल-खिला कर हंस पड़े, क्योंकि वे तो माफीकी उम्मेद ही नहीं करते थे।

आसामके लोगोंको जङ्गली कौन कह सकता है? कहने-वालाही मुझ जैसा जङ्गली होना चाहिये। जिनकी स्त्रियां सुन्दरसे सुन्दर कपड़ा बुनती हैं और अपने हाथका बुना कपड़ा पहनती हैं, उन्हें कौन जङ्गली मान सकता है?

गुजरात जिस तरह हिन्दुस्तानके पश्चिममें और विन्ध्याचलके दक्षिणमें है उसी तरह आसाम ठेठ पूर्व और उत्तरमें है। आसाम हिन्दुस्तानका ईशान कोण है। यहांसे ब्रह्मपुत्रके किनारे किनारे तिब्बत जानेका रास्ता है और वहांसे दक्षिणकी ओर पहाड़ोंसे होकर ब्रह्म देश जानेका पहाड़ी रास्ता है। आसाममें जहां देखिये वहीं हरियाली ही हरियाली छाई हुई है। आसामकी एक पहाड़ी चीरापूजीपर हिन्दुस्तानमें सबसे ज्यादा वर्षा होती है। हर साल औसत दर्जे कोई ३६८ इञ्च पानी बरसता है। परन्तु सन् १८६१ ईस्वीमें ८०५ इंच वर्षा था और उसमें भी अकेले जुलाई मासमें ही ३६६ इंच पानी हुआ था। साठ इंचसे अधिक तो बरसात यहां कहीं नहीं होती। इस तरह जहां एक तरफसे बरसातका पानी और दूसरी ओर ब्रह्मपुत्र जैसा नद, वहां हरियालीका क्या पूछना ? फिर नदीके आसपास जहां तहां टेकड़िया खड़ी हैं, इससे जहां जहां नजर फेंकते हैं वहां बड़े ही ऊंचे दरजेका दृश्य दिखाई देता है।

जिस मकानमें हमलोग ठहराये गये थे वह ठीक नदीके किनारेपर ही था। सामने नदी शान्तिके साथ बह रही है। 'शान्तिके साथ' शब्दोंका प्रयोग मैंने जान बूझकर किया है। पानी खूब गहरा है। इससे उसमें जरा भी छलछलाहट नहीं दिखाई देती। ब्रह्मपुत्रमें इतनी ताकत है कि बड़े बड़े स्टीमर उसपर बारहों महीने चल सकते हैं। उसकी जैसी गहराई हम लोगोंमें आ जाय और उसकी जैसी शान्ति हमलोगोंमें छा

जाय तो हमें स्वराज्य प्राप्त करनेमें किस बातको देर लगे ? हमें उछले पानीकी छलछलाहट दरकार नहीं। हमें तो गहरे पानीकी शान्ति और उसमेंसे प्रगट होनेवाले बलकी जरूरत है।

आसाममें तरह तरहके पेड पौधे और मेवे फलते हैं, चाय तो वहा हई है। उससे फायदा तो कौन जाने क्या हुआ है, पर नुकसान तो हम सब लोगोंको मालूम है। आसाममें केले अनारस, नारङ्गी, शरीफा, इत्यादि बहुतेरे फल होते हैं। अनाजमें चावल, फसल मुख्य है।

लोग भोले भाले और सीधे साधे हैं। हिन्दू-मुसलमान दोनों आसामी बोली बोलते हैं। आसामी भाषा बङ्गालीकी बहन मानी जाती है। लिपि बंगाली है। मैं ज्यों ज्यों ज्यादा घूमता हूं त्यों त्यों यही देखता हूं कि यदि हिन्दुस्तानकी सारी भाषायें देवनागरी लिपिमें लिखी जाया करें तो इससे हमारी जातीयतामें बहुत ताकत मिले। लिपियां तो बस दो ही हो सकती हैं उर्दू और देवनागरी। आसामी, बङ्गाली, पंजाबी, सिन्धी इत्यादि भाषायें जो देवनागरीमें लिखी जायें तो उनके समझनेमें बहुत ही थोडी दिक्कत हो, इसमें कोई शक नहीं। ऐसा होनेसे इन सब भाषाओंके पढनेवालोंका बहुत समय बच जाय और भाषा बड़ी सहज मालूम होने लगे।

पर यह तो मैं बीचमें एक नया ही मामला छेड बैठा। आसामके लोगोंको और लोगोंसे सुखी कह सकते हैं। उन्हें जमीनको बहुत जोतना नहीं पडता। नदीकी धारायें खादका

मशाला देती हैं इससे लोग थोडी मेहनतसेही अपनी रोजी कमा सकते हैं। आसाम बडी देर बाद अँग्रेजोंके कब्जेमें आया, जिससे उसमें 'सुधारों' का प्रवेश कम हो पाया है। इससे लोग अपना धन और आबादी कायम रख पाये हैं। आसामके लोग मजदूरी तो करते ही नहीं। पर चायके खेतोंपर तो मजदूरोंके बिना काम नहीं चल सकता। इसीलिये संयुक्त प्रान्तसे मजदूर बुलाये जाते हैं। यही कारण है कि जो मजदूरोंके साथ अत्याचारोंकी कितनी ही बातें सुनाई देती हैं और इसीसे चाँदपुरकी जैसी घटना हो सकी।

आसाममें पचास साल पहले ऐसा जमाना था कि वहांके लोगोंकी तमाम जरूरतें वहीं पूरी हो जाती थीं। पाठक यह जानकर खुश होंगे कि आज भी आसाममें हर एक औरत कपडा बुनना जानती है। छोटे बड़े सब घरोंकी स्त्रियां बुनना जानती हैं। वे पेशेके तौर पर बुननेका काम नहीं करतीं बल्कि घरमें जब फुरसत मिल जाती है तब वे बुनाई किया करती हैं। जो लडकी बुनाई नहीं जानती उसकी तो सगाई होना ही मुमकिन नहीं। जिस घरमें मैं ठहरा था उसके मालिक बड़े जमींदार, पैसेकी कमी नहीं। लेकिन उनकी ७० वर्षकी बूढी मां और बहनें और बीबी सब कपडा बुनती हैं। ' उन्हें एक दस ग्यारह वर्षकी लडकी है। यह भी बुनाई करती है।

आसाममें रेशम अच्छा पैदा होता है। इससे वहांकी औरतें रेशम और सूत दोनों बुनती हैं। उन पर अनोखे बेल-

बूढ़े भी काढ सकती हैं। पचास वर्ष पहले प्रत्येक स्त्री सूत भी कातती थी और बुनती भी थी। पर जबसे अंग्रेजी शासन पद्धति—तर्जे अमलने पांव रखा तबसे उनके साथ ही, विलायती सूत भी वहां आ पहुंचा। इसी सूतने सारा काम चौपट कर दिया। इसी सूतसे ललचाकर औरतोंने कातनेका काम छोड़ दिया। सौभाग्यसे यह नियम था कि जो बुनना नहीं जानती, वह शादी करनेका भी हक नहीं रखती। इससे बुननेकी कला कायम रही। जिन औरतोंका महावरा है उनके लिये तो कातना सहज ही है। इससे अब फिर औरतोंकी आंखे खुली हैं और कातनेका काम भी शुरू हुआ है। पर जिन दिनोंमें आसाममें विलायती सूतका प्रवेश हुआ उन्हीं दिनों एक अंग्रेजी अवलोकन कर्त्ताने यह टिप्पणी की थी कि विदेशी सूतको अंगीकार करके इन स्त्रियोंने कुछ कमाया नहीं क्योंकि उन्होंने कताईके बदलेमें किसी दूसरे उद्योगकी तजवीज नहीं की। आसाममें आज भी ४० हजार एकड़ जमीनमें कपास पैदा होती है। यह रुई बड़े ऊंचे दर्जेकी होनी चाहिये, क्योंकि इसकी जो पुनिया मुझे दिखाई गई थीं, उन्हें देख कर मुझे आंध्र देशकी पुनियोंकी याद आ गई। पुनिया बहुत ही साफ सुथरी मुलायम और बिना गर्द लगी थीं। मुझे एक कपड़ेका नमूना भी दिखाया गया था, वह भी इतना उमदा था कि प्रायः आंध्र देशके कपड़ोंकी बराबरी करता था। आसाममें आसामी भाषा बोलनेवालोंकी आबादी ३७ लाख

है। इनमें कमसे कम-१० लाख औरतें हैं। ये दसों लाख औरतें जो हिन्दुस्तानके सूत काते बुने तो आसाम केवल अपने ही लिये नहीं, बल्कि सारे हिन्दुस्तानको बहुतसी खादी दे सके।

मालूम होता है कि आसाममें जातीय महासभा काग्रेसके कार्य-कर्त्ता लोग अच्छे हैं। जिनके यहा मैं ठहरा था वे आसामके 'सेनापति' घरानेके हैं। पुराने बैरिस्टर हैं। भारी जमींदार हैं, कौन्सिलके मेंबर भी थे। बहुत सार्वजनिक सेवायें की हैं। अब वे पक्के असहयोगी हैं। मन्त्री हैं श्रीयुत बारदोलाय। वे भी पुराने वकील हैं, घरबार और जमीन जायदाद वाले हैं। आपनेभी पूरा असहयोग किया है। आसामी वकीलोंकी सख्या ७८ है। उनमेंसे १५ लोगोंने वकालत छोड दी है और सबके सब असहयोगके काममें लगे हुए हैं। उनके साथ कोई ५०० स्वय सेवक हैं। उनमें बहुतेरे कालेज छोड चुकने वाले हैं।

आसामके लोगोंको अफीम खानेकी बुरी टेव है। इसमें वे लोग लाखों रुपये गंवाते हैं। कार्यकर्त्ता लोग कहते हैं कि असहयोगकी हलचलके बादसे अफीम सेवनकी कुटेव बहुत कम हो गई है। विलायती बीडियां लोग बहुत पीते थे। पर उनमें अब शायद ही कोई पीते नजर आते हैं। जो लोग पीते हैं वे सिर्फ स्वदेशी बीडियां पीते हैं। परन्तु यह व्यसन भी हालमें तो छूटता जा रहा है। मुझे यह भी खबर दी गई है कि असह-

योगके बदौलत लोग खुद ही अपने आप सुधार करते जा रहे हैं।

स्त्रियोंकी सभा

औरतोंके तीन जलसे अलग अलग किये गये थे, एक मारवाडी बहनोंका, दूसरा आसामी बहनोंका और तीसरा बङ्गाली बहनोंका। इनमें आसामी और बङ्गाली बहनें तो अपनी कीमतीसे कीमती विलायती साड़ियोंकी जगह खादीकी सादीसे सादी धोतियां पहनकर आई थीं परन्तु बहुतसी बहनें खादीकी साडी अपने पास न होनेके कारण शर्मिन्दा हो रही थीं। मारवाडी बहनें तो बिलकुल विलायती कपडे पहनकर आई थीं! परन्तु श्रीजमनालालजीने मुझसे कहा कि उन बहनोंने भी अब खादीकी साडियां मंगवाई हैं। इस सभामें मौलाना मुहम्मद अलीकी धर्मपत्नी भी आई थीं। उनको खादीकी पोशाक देखकर लोग बडे खुश हुए। उनमें बोलनेका माद्दा अच्छा है। उन्होंने खुद बुरका ओढे हुए भाषण भी किया था।

विलायती कपडोंकी होली

गोहटीमें बैठे हुए यह लिख रहा हूं। गोहटी आसामका मुख्य शहर है। कलकत्तेसे १६ घण्टेका रास्ता है। यहां भारी सभा की गई थी। उसमें विलायती कपडोंके बडे भारी ढेरकी होली की गई थी। उसमें मैंने कितनी ही महीन धोतियां, पतली साडिया, टोपियां और हैटें देखीं। होली

सुलगानेका पवित्र काम तो मेरे ही हाथों कराया जाता है। होली सुलगानेके वादका दृश्य तो मुझे बडा भव्य दिखाई दिया। सैकडों वारीक कमीजें और दूसरे कपडे हवामें उडते हुए होलीमें गिरते थे। इस प्रान्तमें टोपी कम पहनी जाती है। इससे विदेशी टोपियां कम उछलीं। खादी तो यहा भी पहुंच गई है। इससे जो लोग टोपी पहनते हैं वे वहुत करके खादीकी ही पहनते हैं।

आसाममें मारवाडी भाइयोंकी वस्ती घनी नजर आती है। वाहरका तमाम व्यापार उन्हींके हाथोंमें है। मैं पहले ही कह चुका हूं कि आसामके लोगोंके अपने खेतोंमें फसल अच्छी पकती है। इसलिये वे दूसरे व्यापारमें अथवा नौकरी की झंझटमें वहुत कम पडते हैं। इससे व्यापारको मारवाडियोंने अपना लिया है। और सरकारी नौकरीपर वङ्गाली लोग टूट पडे हैं। इनमेंसे वहुतसे मारवाडी विदेशी कपडोंका व्यापार करनेवाले हैं। उसमेंसे कितने ही कोई ६५ व्यापारियोंने शपथ ली है कि अवसे हम विलायती कपडा और विलायती सुत नहीं मंगावेंगे।

आसाममें मुसलमान भाइयोंकी वस्ती वहुत वडी है परन्तु फिर भी वे सार्वजनिक कामोंमें कम हिस्सा लेते हैं। खिलाफतके मामले पर भी उनका पूरा ध्यान नहीं जाता।, पर अब उनमें भी अच्छी जागृति देखी जाती है।, कहा जा सकता है कि हिन्दू नेताओंने उन्हें जगाया है। इससे यहा हिन्दू

मुसलमानोंमें वैर भाव नहीं देखा जाता। मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना आज़ाद सुभानीके आनेसे मुसलमानोंमें अधिक जागृति और हिम्मत आगई है।

मैंने ऊपर कहा है कि गोहटी आसामका मुख्य शहर है। इससे गोहटीको आसामकी राजधानी न समझियेगा। आसामका सदर मुकाम तो है शिलांग। गोहटीसे कोई ५ घण्टेमें मोटरके ज़रिये वहां जाया जाता है। शिलांग समुद्रकी सतहसे कोई ४ हज़ार फीट ऊंचा है। मैं वहां तक न जा सका। पर कहते हैं कि वह तो अकेले यूरोपियनोंके ही रहनेका मुकाम है। अगर शिमलामें भी बारहो मास रहनेकी सुविधा होती तो शिमला भी केवल गर्मी भरकी राजधानी नहीं रहती, वरन् हमेशाके लिये हो जाती। यदि दार्जिलिङ्गमें लोग हमेशा रह पावें तो दार्जिलिङ्ग बङ्गालकी बारहो मासकी राजधानी हो जाय। क्यों बम्बई हातेमें तीन सदर मुकाम नहीं हैं? कभी बम्बई कभी गनेशखिंड और गर्मियोंमे महाबालेश्वर। परन्तु शिलाङ्गकी आबहवा ऐसी है कि वहां यूरोपियन लोग बारहो मास मज़ेमें रह सकते हैं। इससे शिलांग आसामकी राजधानी बनाया गया है। इतने ऊंचेपर भला कहीं खेतोंमें काम करनेवाले मजदूरोंको प्रकाश पहुंच सकता है। हरएकमें जिसकी 'लाठी उसकी भैंस' वाला मामला देखा जाता है। प्लेन्टर लोग शिलाङ्गमें रह सकते हैं और जब चाहें। वहां जा सकते हैं। उनके मजदूरोंमेंसे किसीकी ताब नहीं जो वहां जा सके? उन्न किन्ता

रोकी तो अर्जी भी शिलाग तक पहुंचते २ फटकर चिथड़ा हो जाती है।

कहां ब्रह्मपुत्र और कहा सरकार

ब्रह्मपुत्र इतनी विशाल नदी है कि वह नारीसे नर —नदीसे नद हो गयी है। फिर भी उसकी नम्रताका पार नहीं। हिमालय की चोटीपर रहते हुए भी वह नीचे उतरकर लोगोंको सुखी करती है और अपनी छाती पर उठा २ कर हजारों मनुष्योंको और उनके माल असबाबको एक जगहसे दूसरी जगह पहुंचाती है। इस कारण आसामका संसार उसकी पूजा करता है। और मुझ जैसे एक पश्चिमसे आनेवाले प्राणीका भी सिर अपने आप उसके चरणोंपर झुक जाता है। पर हमारी सरकार अपोलो बन्दरपर उतरकर बेशुमार मजदूरोंकी, भाफकी और बिजलीकी मदद लेकर, नीचेसे ऊपर चढकर, शिमला और शिलाङ्ग पर जाकर विराजमान होती है और वहांसे बैठे २ लोगोंको हड़पती है। फिर लोग बिचारे भयभीत होकर "बचाओ! बचाओ!" पुकारें तो इसमें कौन ताज्जुबकी बात? ब्रह्मपुत्र आश्वासन, तसल्ली देती है। शिलांगमें रहनेवाली सरकार ऊपर चढ़कर लोगोंको सताती है। इसीलिये आसामियोंने सरकार-को सलामी उसका सहयोग छोड़ दिया है।

ब्रह्मपुत्र अगर मस्तीमें आकर लोगोंके खेतो और गांवोंको डुबाने लगे तो लोग उससे दूर हटनेके सिवा और क्या कर सकते हैं? फिर सरकारके क्रोधानलसे जलनेवाले लोग भागे

नहीं तो क्या करें ? आसामी लोग समझ चुके हैं कि हमारे लिये तो, बस, असहयोग ही एकमात्र राजमार्ग है।

आसामका दर्शन

(२)

ब्रह्मपुत्र पर

नदीमें स्टीमर चल रही है। मेरे तीसरे दर्जेकी मुसाफिरीके दिन तो कभीके पूरे हो चुके हैं। हम सब पहले दर्जेके डेकपर बैठे हुए हैं। जब जब मैं तीसरे दर्जेका खयाल करता हूं तब तब मुझे पहले या दूसरे दर्जेमें बैठते हुए शर्म मालूम होती है। पर लाचारी है। ऐसी रात दिनकी कष्टकर मुसाफिरीमें तीसरे दर्जेकी असुविधाओंको मैं सहन नहीं कर सकता। तथापि मैं यह मानता हूं कि हम लोगोंमें तीसरे दर्जेमें सफर करनेकी ताकत जरूर ही होनी चाहिये, हमारे शरीर अवश्यही इतने मजबूत होने चाहिये। जबतक हम तीसरे दर्जेसे डरकर दूर रहेंगे तबतक उसकी हालत नहीं सुधर सकती, उसकी-मुसीबत दूर नहीं हो सकती। सैकडों कार्य्यकर्ता अगर पहले, दूसरे दर्जेकी मुसाफिरी करने लग जाय तो बिचारी रैय्यतका सारा धन मुसाफिरीमें ही लग जाय और हमारी स्वराज्यकी नैया तिल भर भी आगे न बढ सके। रैय्यतका पैसा

खर्च करते समय हमें कदम कदमपर विचार करनेकी जरूरत है। मैं यह इसलिये कह रहा हूं कि एक धनी आदमीने ऐसी बातोंपर खुद मेरे सामने टीका टिप्पणी की है और इससे बरा-बर मेरे हृदयको दुःख बना ही रहता है। मेरे खादीकी बात छेड़तेही उन्होंने मुझसे कहा कि "हमलोगोंका हाल आपको मालूम नहीं होता क्योंकि आपको तो जब चाहें तभी बैठ-नेको मोटर तैयार! एक प्याला मांगते ही दस प्याले बकरीका दूध हाजिर! खादी भी लोग आपको घर आकर दे जाते हैं। लेकिन मुझ जैसे पैसेवाले आदमीको भी जब हर वक्त मोटरका और होटलोंका किराया देना पडता है और अपनी जरूरत भरकी खादीके दाम चुकाने पड़ते हैं, तब तो जनताकी सेवा हमें अख-रने लगती और महगी मालूम पडती है।" ये महाशय राष्ट्रीय सभाकी महासमितिके सदस्य हैं और देशकार्य्यमें पैसा खर-चते हुए हिचकते भी नहीं, लेकिन मैं यह समझ सकता हूं कि उन्हें बम्बईमें हमेशा बीस रुपयेसे कम तो खर्च उठाना ही न पडा होगा। मुझे उनकी दलीलमें बहुत कुछ सार मालूम होता है। लेकिन इस समय तो मैं निरुपाय हूं। मैं कमजोर हो गया हूं और यह जरूर जानता हूं कि इससे मेरी सेवा करनेकी शक्ति भी घट गई है। इसीलिये अब मुझे यह हिम्मत नहीं पडती कि सब लोगोंको पैदल सफर कर-नेकी सलाह दूं। चूंकि मैं खुद कमजोर हूं, इस कारण दूसरोंको भी कमजोर समझ कर मैं कितनी ही बार झठी

द्या करने लग जाता है। यहां जनताकी सेवा करनेवालोंका ज्यादा खर्च करनेकी जरूरत ही नहीं पड सकती। तीसरे दर्जेकी मुसाफिरीका खर्च भारी नहीं जान पडता। जहा मुकाम करे वहा गाडी-किराया न उठाया जाय। भोजन सादा किया जाय। और पोशाक भी सादी पहनी जाय। किन्तु हमने अपनेको इतना आराम-तलब बना लिया है कि लाखों आदमी जो काम कर सकते हैं, उसके लिये हम अपनेको असमर्थ मानते हैं।

मुझे करना तो था नदीका-वर्णन, और मैं लिख गया अपने दिली दर्दका हाल। खैर, नदी समुद्रकी तरह विशाल जान पडती है। बहुत दूरीपर दोनों तरफके किनारे दिखाई देते हैं। नदीकी चौडाई लगभग दो मील या इससे भी कुछ अधिक होगा। १६ घंटेका सफर है। नदीकी शांति भव्य जान पडती है। बादलोंमें छिपा हुआ चन्द्रमा पानीपर अपनी चमकदार चादनी छिटका रहा है। स्टीमरके पखे पानी फाड रहे हैं और उनका स्वर बडा मधुर मालूम होता है। इसके सिवा बस, चारों ओर बिलकुल शान्ति छा रही है। पर फिर भी मेरे दिलमें शान्ति स्थापित होना मुश्किल मालूम हो रही है, क्योंकि न तो स्टीमर मेरी है और न नदी ही। और जिस सत्ताके जुलमसे मैं आजिज आ गया हू, जिस सत्ताके बलसे हिन्दुस्तान घायल, निस्तेज और भिखारी बन चुका है, उसी सत्ताकी मिहरबानीसे मैं नदीमें घूम रहा हू, और स्टीमरमें

भी मैं उसीकी कृपासे सफर कर रहा हू—ये विचार मुझे इस शान्तिके राज्यमें भी अशान्त कर डालते हैं। पर इसमें सत्ताको दोष भागी नहीं कह सकता। तीस करोड़ हिन्दुस्तानी यदि अपने कर्तव्यको न समझें तो इसके लिये मैं सत्ताको दोषी कैसे कहूं? सूदखोर मुझसे दुगने रुपये मांगता है। अब मैं दूने रुपये लेनेके लिये उसे दोषी बनाऊं या खुद अपनेको—देनेवालेको—अपराधी समझूं। व्यापारीका तो यह स्वभाव ही है कि वह मेरे साथ व्यापार करे। लेकिन उसके साथ व्यापार करना न करना तो मेरी मर्जीकी बात है। मैं उसके साथ व्यापार करूं ही क्यों? मैं अगर न मांगूं तो मुझे कौन परदेशी कपड़ा दे सकता है? इसलिये यह समझ कर कि इसमें सत्ताको दोषी बनाना तो मेरी ही कमजोरीका चिह्न है, मैं फिर शान्त हो जाता हू, और इस खयालसे कि बस मुझे तो सिर्फ जनतामें ही काम करना है, मैं कर्तव्य पालनमें लग जाता हू।

आसामके हाथी

आसाम जिस प्रकार वहांकी स्त्रियोंकी बुनाईकी क्रियाके लिये मशहूर है उसी तरह वह हाथियोंके लिये भी प्रख्यात है। पेड़की छालपर लिखी हुई दो सौ वर्ष पुरानी एक हस्ति विद्याकी पुस्तक भी मुझे दिखाई गई थी। उसमें लेखके अलावा हाथी वगैरहके कई खूबसूरत चित्र भी थे। उनके रङ्ग अनूठे थे। वैसे सुहावने रङ्ग आजकल विरले ही जगह दिखाई

देते हैं। चित्रोंमें तारतम्यका खयाल भी इतना रखा गया है कि देखनेवालेके मनमें आसामकी पुरानी कारीगरीके प्रति अभिमान उत्पन्न हुए बिना रह नहीं सकता। हाथीकी कीमत ६०००) तक आकी जाती है। और बोझ ढोने तथा शिकार करनेका भी काम उनसे लिया जाता है। एक अनुभवी आदमीने मुझसे कहा कि जब जङ्गली हाथीको पकड़ते हैं तब शुरूआतमें उसपर बहुत अत्याचार किया जाता है। हाथी संगीत प्रिय होता है, इस कारण कभी कभी महावत गाना गाकर उसकी खुशामद भी करता है। हाथी हमारी भाषाको इतना अधिक समझता है कि गुस्से तथा प्रेमके शब्दोंको अच्छी तरह पहचान सकता है। कहते हैं कि 'शाबास' शब्दसे आसामका हरएक हाथी जानकार है। हाथी दांतका तो आसाममें मिलना बहुतायतसे स्वाभाविक ही है। मैं यह जानकर बहुत खुश हुआ कि आसाममें हाथी दांतके लिये हाथी नहीं मारे जाते। यही नहीं, बल्कि इसके लिये हाथी मारनेकी मनाही भी है।

आसामके रेशम

आसाममें दो तरहके रेशम होते हैं। और दोनों ही तरहके रेशम कीड़ोंसे पैदा होते हैं। एकका नाम है—एण्डी-फेरी और दूसरेका मूगा। एण्डीका रेशम तैयार करनेमें कीड़ेका नाश नहीं किया जाता। उसका कोया रुईकी तरह काता जाता है। मूगेका रेशम मूगा खुद ही कातता है।

जब कताई खतम हो जाती है तब मूंगेको धूपमें रखकर मार डालते हैं। इसके बाद कोयेको पानीमें उबाल कर रेशम गिर्रीपर लपेट लिया जाता है। यह काम खुद मेरे सामने करके दिखाया गया। इन दोनों तरहके रेशमके कपडे आसाममें बहुतायतसे बनाये जाते हैं। इस उद्योगके जारी रहते हुए भी अब वहा परदेशी रेशमने अपना अड्डा जमा लिया है। और बहुतसे जुलाहे सिर्फ विदेशी रेशमका ही ताना तनते हैं।

रुईकी क्रिया

रुईकी क्रिया भी मैंने देखी। मैं समझता हू कि आंध्रकी तरह महीन कपडा आसाममें भी तैयार होने लग जायगा। हालहीमें तैयार किया हुआ ऐसा एक कपडा मुझे दिया गया है। दो सौ वर्ष पुरानी सूतकी साडिया भी मुझे दिखाई गई। मिसर देशकी कपासके पौधे भी अब कितनो ही जगह लगाये गये हैं और उसकी रुई तो मैंने बिनौले समेत कतते देखी। दूसरी तरहकी रुईको जिस तरह आश्रममें कातते हैं उसी तरह आसाममें कातते देखा। हर एक बीजको पहले तो मछलीके दातसे संवारते हैं। इससे तमाम रेशे अलग अलग हो जाते हैं। दातोंमें जो रुई घुस जाती है उसे वैसे ही कातकर उस सूतसे खादी बुनते हैं। इसके बाद जो रुई बिनौलोंपर छूट जाती है उसमेंसे बिनौले निकाल लिये जाते हैं। फिर उस रुईको धुनते हैं। इस तरह हर एक बीज पर क्रिया की जाती है। इस तरहकी रुईको कातकर महीनसे

महीन सून तैयार किया जाता है। अगर आसामकी औरतोंके दिलोंमें उमङ्ग उमड पड़े तो उनसे जो सहायता मिल सकती है उसका पार ही न रहे। स्वदेशी पालनमें मदद करनेकी आसामकी शक्ति तो मुझे पञ्जाबसे भी ज्यादा मालूम होती है। आसामकी औरतें अगर कातें और बुनेंगी तो वे पैसेकी गरजसे नहीं, बल्कि स्वदेशीके प्रेमके वश होकर कातें और बुनेंगी। हर एक औरत, आध्रकी तरह, अपनी रुईको आप ही धुन लेती है।

शोणितपुर

अब हम तेजपुर आ पहुंचे। इसका पुराना नाम शोणितपुर है। कहा जाता है किसी अङ्ग्रेज हाकिमको शोणितपुर शब्दका उच्चारण कठिन मालूम हुआ। उसने जब शोणितका आसामी भाषामें अर्थ पूछा तो उसे मालूम हुआ कि आसामी लोग शोणितको 'तेज' कहते हैं। इसलिये उसने शोणितपुरका नाम तेजपुर रख दिया। कहा जाता है कि तेजपुर पहले बाणासुरकी राजधानी था। इसीसे पुराण लेखकोंने उसे शोणितपुर लिखा है। यहाकी यह आख्यायिका है कि उषाके लिये चित्रलेखा अनिरुद्धको द्वारकासे यहा उठाकर लाई थी। कहते हैं, अर्जुन ठेठ मणिपुरतक गया था। ब्रह्मपुत्रके पूर्व किनारेपर पहला शहर पांडु है। वहांतक पाण्डव लोग अज्ञातवासके समय आये थे। पांडुसे पाच मीलके फासलेपर ब्रह्मपुत्रके किनारे ही गौहट्टी है, जहासे कि हम

तेजपुर पहुंचे हैं। गौहट्टीका भी प्राचीन नाम है। कहते हैं, हरिहर युद्ध तेजपुरके पास ही हुआ था। वहां उनकी पादुका भी बतलाते हैं। इस तरह मैं जहां जाता हूं वहीं इस बातके प्रमाण मिलते हैं कि पहले हिन्दुस्तान एक था।

प्लैंटर-राज्य

तेजपुरकी आबादी ६ हजार होगी। लेकिन यहां म्युनिसिपैलिटी है, रेलवे है और बिजलीकी रोशनी भी है और पानीके नल भी हैं। यह सब क्यों है? इसका उत्तर फौरन ही दिया जा सकता है। तेजपुरके नजदीक ही चायके बड़े बड़े खेत हैं। बस, चायको ढोनेके लिये रेलें हैं और इस बन्दरगाहके रास्तेसे चाय ले जाई जाती है। लोग यही मानते हैं कि आसाममें प्लैण्टरोंका राज्य तो हुई है। लेकिन कर्ता हर्ता सब प्लैण्टर ही हैं। चांदपुरमें गरीब मजदूरोंपर जो चढ़ाई हुई थी वह, मि० एण्डरूजका कहना है, कि इन प्लैण्टरोंके ही लिये हुई थी।

ब्रह्मपुत्रका पानी गङ्गाकी तरह आरोग्य वर्धक नहीं माना जाता। इस कारण आसाममें कितनी ही जगह दरवाजेपर नदी होनेपर भी लोग नलका पानी ही काममें लाते हैं। यह पानी कई तरहके क्षारोंमेंसे छानकर काममें लाया जाता है। खास तेजपुरमें ६० फुट ऊंचा एक हौज बनाया गया है, उसमें पानी छाना जाता है और फिर वह नलके द्वारा लोगोंतक पहुंचाया जाता है।

कलकत्तेके कडुवे अनुभव

पूर्व बङ्गालकी मुसाफिरीका हाल मैं पहले ही लिख चुका हू। वहां यद्यपि हजारों आदमियोंकी भीड होती थी तो भी उससे मैं परेशान नहीं होता था। लेकिन कलकत्तेमें तो मैं सोलहो आने थक गया हू। एक तो आधी आधी रात तक सोनेको नही मिलता और दूसरे जयघोषकी आवाजपर आवाज! ये बातें अब मुझे नागवार मालूम होती हैं। दिन भर 'जयघोष' को सुनते सुनते मैं थक जाता हू। कान उसे गवारा नही कर सकते। फिर, इसमें कुछ मतलब भी नजर नहीं आता। इससे मुझे यह दुःसह मालूम होता है। इस तरहकी आवाजोंसे लोगोंको कोई फायदा नहीं पहुचता, यह बात मैं अच्छी तरह जानता हू। जब लोगोंको ज्ञान नहीं था, जबकि वे बोलते हुए भी डरते थे, तब तो जरूर इस जयजयकारसे उनके दिलोंमें जोश उमडता होगा। इस बातका अनुभव मुझे चम्पारनमे मिल चुका है। वहा सैकडों आदमी सिर्फ इसीलिये मुझे घेरकर बैठ जाते थे कि उन्हें स्फूर्ति मिले। इस कारण, यद्यपि उनका प्रेम मुझे हैरान तो कर देता था लेकिन फिर भी मैं उसे गवारा कर जाता था। यहा भी प्रेम तो वैसा ही है। इस जय जयकारसे तो अन्ध मोह प्रगट होता है। इसमे न लोगोंका फायदा है और न मेरा।

यह तो मैंने अपने मतलबकी नजरसे जयघोषकी जाच की। लेकिन चरण स्पर्श (पैर छूना) भी उतनाही दुःखदाई है। कितनी ही बार मुझे चोट लग जाती है, और कभी कभी तो मैं गिरते गिरते भी बच जाता हू। सभाओंमें जाते हुए मेरा कलेजा कापता है। लेकिन जयघोषमें तो मुझे खतरा भी नजर आता है, क्योंकि जब लोग प्रेमोन्मत्त होकर बराबर चिल्लाते रहते हैं तब वे अपने कानसे तो किसी दूसरी बातको सुन नहीं सकते, और न आखोसे कुछ देखने ही बनता है। अब मान लीजिये कि ऐसे मौकेपर किसीने दगा फसाद खडा कर दिया और दो तीन लाठिया भी चल पडीं। मैं खडा हुआ यह सब देख रहा हू और हाथोंसे तथा मुहके बल मारपीट रोकनेके लिए प्रयत्न कर रहा हू। लेकिन नक्कारेमें तूतीकी आवाज सुनता कौन है। मान लो कि इसी बाच मार पीट बढ गई और दलबन्दी होकर खूनकी नदी वह चली। ये सब बाते बिना किसी इरादेके हो सकती हैं। अमृतसरमें भी, मेरा तो ख्याल है कि ऐसा ही हुआ है। मैं यह नहीं मानता कि किसीने पहलेसे ही उस बेकसूर बैंक मनेजरके खून करने का इरादा किया होगा। बल्कि उस समय, लोगोंके खूनमें जोशको उमडते हुए देखकर, हो न हो, किसी शैतानने अपना मतलब बना लिया हो।

इसलिये मैं समझता हू कि, इस खामोशीकी लडाईमें जयघोषकी जरा भी जरूरत नहीं है, और अगर है भी तो बहुत

मुनासिब ढंगसे और जरूरतके वक्तपर, और बहुत ही कम तादाद में।

मालूम होता है कि कलकत्तेमें स्वयं सेवकोंको सभाके नियम पालनेकी तालीम नहीं दी गई है, क्योंकि मैंने देखा कि अगर लोगोंको शुरूसे ही हिदायतें मिल जाय तो वे उसके अनुसार चल सकते हैं। गला फाड़ फाड़कर चिल्लानेसे ही प्रेम दिखाई दे सकता हो सो बात नहीं है, बल्कि चुप रहना भी शुद्ध-प्रेम—अदबका चिह्न है। यह बात अगर लोगोंको समझाई जाय तो जरूर ही वे इसका मर्म समझ सकते हैं, क्योंकि मैंने दो एक सभाओंमें ऐसा करके भी देखा है। कई जगह भीड़को पार करते हुए मेरे पैर कुचल गये और जयघोषसे मैं हैरान भी हुआ। एक जगह तो मुझे अपने स्थान तक पहुंचनेमें २० मिनिट लग गये।

इन दोनों जगहोंमें मेरे भाषणका चौथाई हिस्सा तो केवल सभामें चुप रहने शान्ति बनाये रखने—और नेताओंके लिये रास्ता देनेके उपदेशने ही ले लिया! लेकिन दोनों ही जगह इसका नतीजा यह निकला की लौटते वक्त हमें रास्ता मिल गया। शोर भी न मचा और जबतक हम वहांसे चले न गये तब तक लोग अपनी जगहसे उठे तक नहीं। इस तरह जहां भीड़को पार करनेमें मुझे बीस मिनिट लगे थे, वहीं लौटनेमें सिर्फ एक मिनट ही लगा!

इन बातोंसे मैं यह देखता हूं कि अगर लोगोंको शुरूसे ही

ठीक तौर पर समझा दिया जाय तो जरूर ही वे उसे मानेंगे और उसपर अमल करेंगे। मुझे यह विश्वास है कि आम तौर पर लोग शान्तिके पाठको—अमन के सबकको—समझते हैं और उसको अमलमें लानेका इरादा भी रखते हैं।

अब मैं अपने ऊपरवाले उदाहरणकी उल्टी स्थितिका अनुमान करता हूं। मान लिजिये कि सभामें सब लोग चुप चाप बैठे हैं, सबका ध्यान मुख्य नेताकी तरफ है। ऐसी शान्त सभामें अगर कुछ लोगोंमें कहीं लडाई झगडा खडा हो जाय, और फिर भी अगर सब लोग चुपचाप ही बैठे रहें तो नतीजा यह होगा कि मुख्य नेताकी आवाज जैसे दूसरोंको सुन पडती हैं, वैसे ही उन लड़नेवालोंको भी सुनाई देगी और उन्हें शान्त कर देगी। अगर ऐसा न हो पाया तो भी कमसे कम हमारी जानमें तो झगडा बढ ही नहीं सकेगा और शान्ति-भङ्गका दोष भी हमारे सिर न आने पावेगा।

फौजमें ऐसा ही होता है। सब सिपाही अपनी अपनी जगहको सभाले रहते हैं। बिना हुक्मके वे अपनी जगह परसे जरा भी आगे पीछे नहीं हट सकते। दूसरे किसी काममें पड ही नहीं सकते। हम भी तो स्वराज्यके शान्तिमय सैनिक ही हैं। हमें भी अपने अपने स्थानोंपर रहकर अपने अपने कर्त्तव्योंका पालन करना चाहिये। दूसरे लोग क्या कर रहे हैं, इसका विचार करना हमारा काम नहीं। हम यह जानते हैं कि उस बातका प्रबन्ध उस विभागके कार्यकर्त्ता कर लेंगे।

शान्तिकी सेनामें तो अशान्तिकी सेनासे भी अधिक संयमकी और अधिक व्यवस्थाकी जरूरत है, अथवा होनी चाहिये।

कलकत्ते में प्रेमका जिस तरह कडुआ अनुभव हुआ उसी तरह अनबनका भी हुआ! मुझे मालूम होता है कि जितना पक्ष द्वेष कलकत्ते में है उतना दूसरी जगह शायद ही कहीं हो। जो अंग्रेजी अखबार असहयोगका विरोध करते हैं उनमें मुझे सिवा जहरके और कुछ नहीं दिखाई देता। असहयोगियोंके लेखोंकी बेमतलब और वाहियात नुक्ताचीनी और उनके विषयमें फैलाई बिलकुल झूठी अफवाहोंका तो पार ही नहीं। उसमें भी फिर कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरके लेखों और व्याख्यानोंका तो इतना कुछ जहरीला उपयोग किया जाता है कि, यह मेरी समझ तकमें भी नहीं आता कि, लोग ऐसा करनेकी हिम्मत कैसे करते होंगे! कितनी ही बार ऐसी बातोंको देखकर रावण राज्यकी तस्वीर मेरी आंखोंमें खिंच जाती है। जहां साधनकी पसन्दगी मनमाने ढंगपर की जाती हो वहां मक्कारी और जाल फरेबका उपयोग कौन अचम्भेकी बात है? सीताजीका हरण राक्षसके वेषमें नहीं हो सकता था? वह तो साधुके वेषमें ही हो सका। और जहां साधुताका इस तरह दुरुपयोग हो वहां नाश होते जरा भी देर नहीं लगती। यहां सत्यके नाम पर झूठको फैलते हुए मैं अंग्रेजी अखबारोंमें अपनी आंखोंसे देख रहा हूं। असहयोगियोंको इस तरहकी झूठसे बचनेका संकेत करनेके लिये ही मैंने इस जहरीली हवाका यह सारा हाल

लिखा है। हमारा शस्त्र तो सभ्य और शान्ति है, यह बात हमें हरगिज नही भूलनी चाहिये।

यहाके राष्ट्रीय महाविद्यालयमें चरखोंकी नुमाइश की गई थी। यहा मैंने कोई १५ किस्मके नये चरखे देखे। इनमें नई नई तरकीबोंका तो पार ही नहीं। बहुतसे नवयुवक अपनी शक्तियोंका उमदा प्रयोग कर रहे हैं। कितने ही चरखे बडे सुन्दर थे, कितने ही छोटे छोटे भी थे। एक तो इतना छोटा था कि एक छोटीसी पेटीमें ले जाया जा सकता था और उसमें बाजा बजनेकी भी तरकीब लगाई गई थी। परन्तु मुझे एक भी चरखा ऐसा नहीं दिखाई दिया, जो अधिक सूत कातनेमें पुराने चरखेका मुकाबला कर सकता हो। हा, इन सब आविष्कारोंको देखकर मैंने यह नतीजा जरूर निकाला कि आजकल चरखा खूब लोकप्रिय हो गया है और अनेक कारीगरोंकी बुद्धिको उसने अपने सुधारके काममें लगा रखा है।



उड़ीसा और आंध्र

(अप्रेल ३, १९२१)

मैं पहले ही पहल इस बार उडीसा और आंध्र गया। मैं इन प्रान्तोंके कुछ अमिट दृश्य और स्मृतियोंका उल्लेख करना चाहता हूं। कार्य बहुत करने थे, अतएव मैंने प्रसिद्ध स्थानोंको बड़ी शीघ्रतासे देखा।

मैं उडीसामें चर्मावशिष्टोंको देखनेके लिये जितना प्रस्तुत था उससे कहीं अधिक देख पडे। मैंने चित्र बहुत भीषण देखे थे परन्तु यथार्थता भीषणतर थी। स्वराज्यका अर्थ इन चर्मा-वशिष्ट स्त्री-पुरुष बच्चोंके लिये क्या हो सकता है जो स्मरणीय २६ मार्चको पवित्र जगन्नाथ 'धामकी सडकोंपर कतार बांधे खडे थे। ये एक दोकी संख्यामें नहीं थे, बहुत थे पर तोभी सब नहीं थे। क्षुधातुरोंमें वे सबल थे, उनमें कुछ दूर चलनेका दम था। वे उनके दर्शनको आये थे जिन्होंने उनके हेतु चावल प्रदान किया था और जिनसे और पानेकी आशा रखते थे। वे चिल्लाये और बड़े करुणोत्पादक शब्दोंमें बोले "हमें भोजन चाहिये ? और किसीने पूछा कि चीजोंका दाम कब घटेगा। मैं समझ गया कि इनके लिये स्वराज्यका अर्थ, सस्ता भोजन और कपडा है। यद्यपि कपडा उतना नहीं क्योंकि उनके लज्जा

निवारणके लिये एक चिथडाही यथेष्ट है पर भोजन अवश्य मिले। मैं इस घटनास्थलपर एक बड़े विस्तृत बङ्गलेसे गया था जहा मेरे सत्कारके लिये प्रचुर सामान मौजूद थे। मैं जगन्नाथजीके मन्दिरके पास कई बार आया गया। मुझे शहमें धनी महन्त पण्डे और अनगिनत यात्री मिले जो सहजही सैकड़ों रुपये खर्च कर सकते हैं।

इनकी असमानता स्पष्ट होनेके कारण मुझे और भी अत्यन्त मार्मिक शोक हुआ। वे मुझे एक दयालु पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्टके स्थापित किये हुए अनाथालयमें ले गये। मैंने वहां सुन्दर बालक बालिकाओंको देखा, कुछ सूत कात रही थीं और कुछ चटाई बिनती थीं। वे चर्मावशिष्ट व्यक्ति भी यही क्यों नहीं कर सकते? तब उन्हें भिखमङ्गी करने, जूठे खाने और मुट्ठीभर चावलपर गुजारा करनेकी जरूरत न हो। सिर्फ सूत ही कातकर अपनी रोटी कमा सकते हैं। पर उन्हें चर्खे कौन देगा? इसका सीधा जवाब आता है कांग्रेस। सूत कात कर स्वराज्य प्राप्त करनेकी शिक्षा उन्हें 'कांग्रेस दे' सकती है। कोई दूसरा उद्योग धन्धा ऐसा नहीं है जिसे करोड़ों आदमी अपना सकते हैं, चटाई बनाना भी नहीं- क्योंकि करोड़ों चटाइयोंका खपत कहां! भोजन सामग्रीके बाद कते सूतका ही ऐसा दरजा है जिसकी तुरंत खपत हो सकती है। मैं कांग्रेस नेताओंसे मिला और सारा वृत्तान्त कह सुनाया। कुछ-ने तो उस दृश्यको मेरे साथ ही देखा था। वे भी सहमत हुए

कि काग्रेस फण्डका अधिकतर उपयोग चरखा प्रचारहीमें होना चाहिये। महन्त और यात्रियोंसे भी वे सहज ही द्रव्य पा सकते हैं। अतएव दरिद्र उड़ीसाकी काग्रेस कमेटी भी अपना खर्चा आप जुटाकर इन भूखोंका पेट भर स्वराज्य निकट ला सकती है।

उनके कार्यकर्त्ता भी हैं प० गोपबन्धु दास जो पहले एम० एल० सी० वकील, इत्यादि थे, अति त्यागी नेता हैं। उनसे मुझे विदित हुआ है कि ये और उनका दल केवल भात दाल पर गुजारा करते हैं, घी उन्हें शायद ही मिलता है। असहयोग करनेके अनन्तर कार्यकर्त्ताओंने अपनी आवश्यकताये एक बार ही कम कर दी हैं यहातक कि दस रुपये जैसी छोटी रकमपर ये अपना निर्वाह कर लेते है। मुझे तनिक भी सन्देह नहीं कि ऐसे अदम्य उत्साही कार्यकर्त्ताओंके द्वारा स्वराज्य इसी वर्षमे प्राप्त हो सकता है। पण्डित गोपबन्धुकी एक खुले मैदान पाठशाला सात्यीगोंपालमें पुरीसे १२ मीलपर है। यह एक कुञ्ज पाठशाला है। यह पाठशाला देखने योग्य है। मैंने उसके छात्रों और शिक्षकोंके बीच एक दिन बड़े आनन्दमें काटा। यह खुले मैदानमें शिक्षापद्धतिकी बडी अच्छी परीक्षा है। वहाके कुछ छात्र जबर्दस्त कुश्तीबाज हैं।

उड़ीसाको एक बड़ा कष्ट है। "उड़िया आन्दोलन"के योग्य ग्रन्थकारने ठीक ही लिखा है कि राजनीतिक सुविधाके लिये उड़ीसा विभक्त कर दिया गया है। इसका कुछ भाग तो विहा-

रमें, कुछ यङ्गालमें, कुछ मध्य प्रान्तमें, और कुछ आध्रमें सम्मिलित कर दिया गया है। खास उडीसामें कुछ नहीं बचा है। कांग्रेसने उडिया भाषा भाषियोंको एक ही प्रान्तका माना है। बिहार, य ाल, मध्य प्रदेशको इसमें कुछ कहना नहीं है, परन्तु उसके बरहमपुरके टानेमें आध्रको आपत्ति है। मैंने उनका झगडा निपटानेके लिये कुछ सहज नियम बनाये हैं। आधुनिक संघर्षणसे हमें एक व्यापक सुशिक्षा यह लेनी चाहिये कि सबल ही निर्बलके सम्मुख सिर झुकावें, सन्देहात्मक विषयमें निर्बलहीकी जीत हो। अब मैं उडीसाके हृदयस्पर्शी वृत्तान्तको साक्षीगोपालकी सभामें समवेत सैकड़ों क्षुधा पीडनोंकी स्मृति हृदयमें रख कर अपना व्याख्यान समाप्त करता हूं। जिन्होंने अपनी गाठोंसे पैसे और अधेले निकाले थे वह विधवाका दान सा था जिसके साथ उनका हार्दिक फलप्रद आशीर्वाद भी रहता है। देनेके लिये उनका एक दूसरेको अनुरोध करना देखकर मेरा विश्वास और भी दृढ हो गया।

बिहार और आन्ध्र

(अप्रेल ३, १९२१)

आन्ध्र उत्कल जैसा नहीं है। इसमें दम है। मुझे वहा चर्मावशिष्ट व्यक्ति देख न पडे। वहाके लोग बलवान हृष्टपुष्ट अध्यव्यवसायी उदार और स्नेहशील है। उन्हें अपने प्रान्तके भविष्य और भारतमें दृढ़ विश्वास है। स्त्री और पुरुषोंके प्रचुर आभूषण हैं। मुझे दिखानेमें उन आभूषणोंकी खैर नहीं है। मैं इस रहस्यको छिपा न सका कि तिलक-महाराजकी स्मृति और स्वराज्यके लिये मैं उन आभूषणोंको चाहता हू। स्त्री पुरुष दोनों ने ही सानन्द दिया और छटी दिनमें प्राय ५०,००) रुपये और अधिकके वचन मिले। यदि आन्ध्रवासी चाहें तो करोड रुपये केवल अपने आभूषणोसे ही दे सकते हैं। मैंने आन्ध्रनिवासियोसे कहा कि आन्ध्र महिलाओंकी निष्कपन, सरलता तथा नम्रतापूर्णकार्य स्वातन्त्र्यसे मुझे महाराष्ट्र महिलाओंका स्मरण हो आता है। यह उनके लिये प्रशसाकी बात है। मैं इस सम्मतिसे पूर्ण सहमत हूं। इलोरकी एक नव विवाहिता बालिकाने—जिसकी शिक्षा कलकत्ते मे हुई थी—अपने सौभाग्यसूचक आभूषणोंको छोड प्राय सभी दे डाले। वह शादी पहिले हुई थी। आन्ध्र स्त्री पुरुषोंको उदारता चित्ता-

कपेक थी। सुन्दर सूत कातनेमें आन्ध्रकी बहनें पञ्जाबी बहनोंका स्थान प्राप्त कर सकती हैं। मैंने समझा था कि सूत कातनेमें पञ्जाबी महिलाओंके बराबर कोई सिद्धहस्त नहीं। परन्तु आन्ध्रमहिलाये भी नम्बरी सूत कात सकती हैं। रूईको आप धोकर साफ भी कर लेती हैं। मैं उनके कते सूतके वस्त्र का भूषण यहा लाया हू जो जापान फ्रास अथवा लकाशायरके सूतसे भी उत्कृष्ट है। यह कला लुप्तप्राय हो रही थी। परन्तु स्वदेशी आन्दोलन इसको रक्षाके लिये प्रादुर्भूत हुआ। मछलीपट्टममें इनमेंसे कई स्त्रियोंने अपनी शक्तिका मुझे अच्छा परिचय दिया। उन पर्णकुटीरका यह दृश्य बहुत ही हृदयस्पर्शी था।

अपने सूतको वे आपही धोतीं और साफ करती थीं। मुझे चरखेकी ध्वनि संगीतका आनन्द दे रही थी। मैं अब हृदयस्पर्शी अनुसन्धानोंसे मर्मभेदीकी ओर आता हू। कोकनदमें जब मैं विराट सभासे प्राय नौ बजे अपने डेरेको लौटा तो कुछ स्त्री और बालिकाये मुझसे मिलीं। जब मैं अन्दर गया तो रोशनी धीमी थी। उनकी चालढालमें कुछ अकृत्रिमता झलकती थी। क्या आप सूत कातती हैं, मुझे तिलक-स्वराज्य फण्डमें आप क्या देंगी? यह साधारण प्रश्न मैं उनसे न कर सका। उसके विपरीत मैंने आतिथ्यकर्त्तासे पूछा कि ये कौन हैं। वे स्वयं नहीं जानते थे और उनसे प्रश्न करनेपर उत्तर मिला कि हम नर्त्तकी हैं। मुझे मालूम हुआ कि मैं

पृथ्वी गर्भमें समा रहा हू। मेरे आतिथ्यकर्त्ताने मेरी सान्त्वना यह कहकर करना चाहा कि जीवनारम्भ करनेमें ऐसा एक रस्म है। इससे और भी बुरा हुआ क्योंकि इस घृणित व्यापार पर मर्य्यादाका रङ्ग चढ़ाया जा रहा था। मेरे पूछताछ करने पर उन्होने बडी नम्रतासे कहा कि हम आपके दर्शनोंको आयी हैं। यह पूछनेपर कि क्या तुम कोई दूसरा धन्धा करोगी उत्तर मिला हा, यदि पेट भरे। मुझे और उस समय कुछ कहनेका साहस न हुआ। मुझे अपनी स्त्रियोंकी दशा पर लज्जा हुई। दूसरे पडाव राजमेण्टरीमें मैंने स्पष्ट बातें कहीं मै यह एक दुखद अनुदारताका उदाहरण समझता हू। समस्त भारतमें यह पाप किसी न किसी रूपमें व्याप्त है। मैं केवल यही कह सकता हू कि यदि आत्मशुद्धि द्वारा हम स्वराज्य प्राप्तकर सकें तो स्त्रियोंको भी अपनी विलासितासे मुक्त कर सकते हैं। दुर्बलोकी सरक्षताका नियम इस विषयमें और भी अधिक प्रयुक्त होता है। मेरे लिये गोरक्षा और स्त्रीकी सतीत्वरक्षा एकही बात है। भारत उन्नत तबही होगा जब हम स्त्रियोको अपनी मा बहन और लडकीके सदृश सम्मान करें।

हमें इस पापसे अपना पिण्ड छुडाना होगा क्योंकि यह हमारे मनुष्यत्वको नाशकर हमें पशु बनाये डालता है। फिर भी सुखद वृतान्त यह है कि मछलीपट्टममें मेरी आखोसे आनन्दाश्रु पात हुए थे। वह मेरे मौन व्रतका दिवस था। अतएव

मैंने शोरगुल न मचानेके लिये डा० पत्तमी सीतारमैयासे प्रार्थना की थी अतएव लोगोंको पहलेही इसकी चितावनी दे दी गई थी। मैं उस दिन सवेरे ही मोटरपर गया और लोग सुसज्जित सडकोंके किनारेपर कतार बांधे खड़े थे। पर जरा भी शब्द न हुआ। सभी अपनी जगह चुप मारे खड़े रहे। जब मैं राष्ट्रीय कलेजके फाटकपर पहुचा तो वीन और गानकी ध्वनिके अतिरिक्त और किसी प्रकारका शब्दकर मेरा स्वागत नहीं किया गया। इस सुप्रेमका आनन्द अनुभव मैंने किया और उनके आत्म स यम देशकी विभिन्न भाग पूर्तिकी योग्यता और देश भक्तका पूर्ण परिचय भी मुझे मिला। मुझे वे सचमुच ही एक पर्णकुटी-में ले गये। और जब मैं शिक्षकों और प्रबन्धकर्ताओंकी उनकी प्रणाली और कला कौशलके लिये बधाई दे रहा था उस समय मैं यह कहे बिना न रह सका जबतक सब छात्र और शिक्षक अपने समस्त समयको सूत कातने और बुननेमें लगानेकी ओर ध्यान न देंगे और उसको पूर्णतया सूत कातने और बुननेकी स स्था न कर डालेंगे तबतक मैं उनके कार्य्यको पूर्ण राष्ट्रीय प्रयत्न नहीं कह सकता। अपने विषयमें आगे बढ़ रहा था कि मि० कृष्णरावने, जो मेरे कथनको ध्यान पूर्वक सुन रहे थे, पर वादविवादमें योग नहीं देते थे, मुझसे पूछा कि कि आप सूत कातना धार्मिक कर्म समझते हैं।,मैंने कहा "हां" आपको भी इस शब्दके लिये धन्यवाद है!, अपने मैं इस शब्दका प्रयोग किया करूगा। सूत कातना राष्ट्रीय शुद्धता,

शक्ति और वैभवका स्पष्ट और पवित्र चिह्न है। यह हिन्दू, मुसलमान, यहूदी, ईसाई, पारसी सभीका कर्त्तव्य है। आंध्र राष्ट्रीय कालेज एक प्राचीन संस्था है, जो प्रत्येक आंध्र निवासीके लिये एक गौरवका विषय है। १६०७ ई० की वंगजागृतिसे ही इसका जन्म हुआ था और इसने कितने बुरे दिन भी काटे हैं। आशा करता हूं कि वर्त्तमान जागृतिसे यह और भी परिमार्जित और संभलकर उठेगा।

आंध्र देश अछूत जातिका एक जोशीला सुधारक और हार्दिक सहायक है। ब्राह्मण रामचन्द्ररावकी पवित्रात्मा अछूतकी बुराइयोंको सहन नहीं कर सकती है। अपने मुवक्किलोंकी ओरसे ये आप दासत्व कर रहे हैं और परिहा भाइयोंको गुलामीसे मुक्त करनेके लिये उनका अधीर होना उचित ही है। वे हिन्दुओंसे असहयोग कर देनेकी सम्मति भी सहर्ष उन्हें दे देंगे। यद्यपि मैं भी अछूत भाइयोंके सुधारका उत्कट पक्षपाती होनेका दवा करता हूं तोभी जबतक उनमें आत्मत्यागके भाव जागृत न हों तबतक मैंने असहयोग न करनेकी उन्हें चेतावनी दी, क्योंकि असहयोग आन्दोलन आत्म शुद्धि आत्म-बल और स्वावलम्बनका है जो सच्चे सहयोगके लिये प्रेरित करता है।

आंध्रने मुझे मुग्ध कर दिया है। बिहार बहुत पहलेहीसे मेरा प्रिय हो रहा है। असहयोगके पूर्वहीसे उसमें मेरा दृढ़ विश्वास है। आंध्र यदि विहारके दर्जे का नहीं तो उसका

नम्बर दूसरा जरूर है। आंध्रमें एक आत्मत्यागी नेता और अदम्य उत्साही कार्य कर्त्तागण हैं। इसमें धन, कविता, विश्वास, आत्मत्यागका भाव सभी हैं। इसमें अनेक राष्ट्रीय विद्यालय हैं। इसने कई वकीलोंको देशके लिये दिया है। यहा बडी अच्छी रूई पैदा होती है और सूत कातने और कर्घेकी सम्भावना इसकी बहुत उत्तम है। दो प्रबल नदियोंसे इसकी जवान पड़ती है। इसके कई भाग पहले बहुत प्रसिद्ध थे। सहज ही यह विहारकी बराबरीकी हो सकती है।

मेरी धारणा है कि अन्य बड़े प्रान्त यदि दमनसे भयभीत भी हो जायं तो भी आंध्र और विहार आत्मबलमें सिक्खोंको भी नीचा दिखाकर स्थितिकी रक्षा करेगा। मेरा अनुमान ठीक न भी निकले। हमको एक दूसरेसे बढ़ जानेका प्रयत्न करना चाहिये। प्रतिद्वन्द्विता इस जातिका गुण ही नहीं वरन कर्त्तव्य है। कानून भङ्ग करनेकी प्रतिज्ञाके विषयमें—जो दो सुन्दर ग्रामों और उनके नेताओंने की थी—मैं कभी दूसरे समय लिखूंगा और मल्लोरकी हिन्दू मुसलमानोंकी एकताकी चर्चा भी करूंगा। मैं इन अनुभवोंको कृतज्ञतापूर्वक एक घटनाका उल्लेखकर समाप्त करूंगा। वह यह है कि मेरे साथ यद्यपि पञ्चम थे तथापि हनुमन्तराव और उनके ब्राह्मण साथी मुझे आमन्त्रित कर सूत कातने और बुननेके आश्रमके सन्निकट एक ग्राममें ले गये। यह एक ऐसा गांव था जहां ब्राह्मणोंमें कभी पहले पञ्चम नहीं जाने पाये थे।

भीड़का उपद्रव

(दिसम्बर १, १९२०)

जिन लोगोंको असहयोगियोंकी कोई शिकायत करनी हो उनके लिये यंग इण्डियाके पन्ने सदा खुले रहते हैं। किसी "जानकार" ने सम्पादकके नाम एक पत्र भेजा है जिसे हम सहर्ष प्रकाशित करते हैं।

पत्रकी नकल

मिसेज बेसेण्टके भाषणके समय बम्बईके नवयुवकोंने जो होहुल्लड मचाया था तथा अभी धारवारमें हालमें जो घटना हो गई है उसका अनुमान करके हमें यही कहना पड़ता है कि जिस असहयोग आन्दोलनकी आज घर घर चर्चा हो रही है उसे महात्माजीके अनुयायियोंने भी नहीं समझा है। मिस टी० एल० मैकेकी नामकी एक उदार हृदया और दयालु महिला दाक्षिणात्यमें रहती हैं। धारवार तथा कनारा जिलोंमें उनकी उदारता सर्व विदित है और जनतामें उनका बड़ा नाम है। वे चुपचाप गरीबों, दीनदु खियों तथा अनाथ बालक और बालिकाओंकी सेवामें अपना प्रचुर धन व्यय करती हैं और उनकी शिक्षा आदिका प्रबन्ध करती हैं। उन्होंने "चिल्ड्रन गाईड आफ दी सर्विस" नामकी एक संस्था भी खोल रखी है

जिसकी आप उप सभापति हैं। मद्रासके गवर्नर मिस्टर लायड जार्जकी पत्नी श्रीमती लेडी लायड उसकी सभापति हैं। उसी संस्थाके लिये चन्दा संग्रह करनेके हेतु उन्होंने जलसा किया था। उस समय उन्हें जिस कठिनाईका सामना करना पड़ा तथा जो संकट झेलना पड़ा वह वर्णनातीत है। इस जलसेका उद्देश्य यह था कि धारवारके अस्पतालमें एक अनाथ बालक बीमार पड़ा था। वे चाहती थीं कि चन्दा द्वारा उसके लिये स्थायी प्रबन्ध हो जाय। इस जलसेमें मिसेज़ कवण्टंन सभापति थी। जलसेमें स्कूलकी लड़कियों द्वारा नाटकका अभिनय होने वाला था पर अभिभावकोंने ठीक समय पर यह नामंजूर किया। निदान नाटकका अभिनय रुक गया। इसलिये चटपट गाने बजानेका प्रबन्ध किया गया और जिन बालिकाओंके अभिभावकोंने आज्ञा दे दी वे इसमें शरीक हुई। पर शर्मके साथ लिखना पड़ता है कि ज्योंही कार्यारम्भ हुआ, नगरके कुछ नवजवान लड़के जो बाहर एकत्रित हुए थे, असहयोगियोंके कहनेमें आकर मकानपर खिड़कियोंके शीशोंपर पत्थर फेंकने लगे और शोरगुल मचाने लगे तथा उपस्थित सज्जनोंका उपहास करने लगे। किसी न किसी तरह जलसा समाप्त हुआ और जब सब लोग घर जाने लगे तो उनपर पत्थर फेंके गये। जो अंग्रेज उस सभामें उपस्थित थे उनका विशेष तरहसे अपमान किया गया और कुछ शिक्षिकाओंको भी चोट आई। अपने नौकरोंकी रक्षामें

मिस मैरेकी किसी तरह वहासे रवाना हुई तोभी उन्हें अधिक तरहसे अपमानित किया गया। ईश्वरकी असीम कृपासे वे बेदाग बच गई और उन्हें कहींसे चोट नहीं आई। उन्होंने इतना सकट उन लोगोंके लामके लिये झेला जिनके साथ रहनेसे उनके प्रति उनके हृदयमे दयाका भाव आ गया है पर जिन्होंने उस उपकारका उन्हें बहुत ही बुरा बदला दिया। उनके साथ उन लोगोंका व्यवहार कायरतापूर्ण और लज्जा जनक था। यह लिखते और भी शर्म आती है कि उस अंग्रेज महिलाकी सहायताके लिये सिवा एक बनियेके और कोई नहीं आया। वागवारके असहयोगियोंने उत्तेजित विद्यार्थियोंको शान्त करना तथा शान्ति स्थापित करना—विशेषकर ऐसी अवस्थामें जब कि स्त्रियों और बच्चोंका जीवन संकटमय था—अपना कर्त्तव्य नहीं समझा और वे चुपचाप बैठे रह गये। असहयोगके नामपर यदि इस तरहकी कार्रवाइया होती रहेंगी तो हताश होनेके सिवा हमारे मार्गमें और क्या चारा रह जाता है। यह सिद्धान्त कि कोई भी आन्दोलन तबतक पूर्ण सफलताको नहीं प्राप्त हो सकता जबतक उसके प्रत्येक कार्यकर्ता इस बातको नहीं समझ लेते कि साधारण हिंसासे भी इसको घोर क्षति पहुंच सकती है। पर इस बातको इस आन्दोलनके प्रवर्तक शिक्षित समुदायने भी नहीं समझा है फिर साधारण नवजवानोंकी तो बात ही क्या है जिनकी नसमें जवानीका खून उबल रहा है। इन सब घटनाओंसे देशके भविष्यमें सन्तोष जनक अनु

मान नहीं किया जा सकता। इस तरहके उपद्रव तथा हुल्लड़बाजीसे प्रत्येक देश भक्तको शर्म आनी चाहिये।

आपका "एक जानकार"

इस पत्रके लेखकने पत्रके भीतर अपना नाम देकर इसके प्रकाशनके लिये प्रार्थना की है। पर सार्वजनिक लाभका विचार करते हुए इस तरहकी प्रार्थनाकी कोई आवश्यकता नहीं थी। यदि इस सवाददाताकी बातें सच हैं तो धारवारके नवयुवकोंके आचरणके लिये हम सन्तुष्ट नहीं हो सकते। सवाददाताने इस घटनाका सम्बन्ध असहयोगसे बताया है पर यह वर्तमान कालका फैशन हो गया है कि जहा कहीं जनताने कोई दुराचरण किया असहयोगको घुसा दिया जाता है और उसका कारण असहयोग ही बतलाया जाता है। जिस समय मैं धारवारमें था उसी समय यदि इस घटनाकी सूचना दे दी गयी होती तो अच्छा होता। उस अवसामें मैं इस घटनाकी निगरानी करता और उसपर विचार करता तथा उसका प्रतीकार करता। यहीं पर मैं यह भी लिख देना चाहता हू कि धारवारमें मैंने, जो खुले मैदानमें सार्वजनिक सभा की थी, उसमें भी इसी तरह पत्थर फेके गये थे। एक लडका तो बालबाल बच गया नहीं तो उसे कड़ी चोट आई होती। पर इतनेपर भी जनता शान्त थी। उन्होंने किसी तरहकी अशान्ति नहीं प्रगट की। मुझे यह भी विदित हुआ कि असहयोग आन्दोलनके कारण यहां इस तरह पत्थर फेंकना असाधारण बात नहीं है। इस घटनाका उल्लेख मैंने

केवल यह दिखलानेके लिये किया है कि पत्थर फेंकनेके काममें धारवार विशेष तरहसे विख्यात है। इसलिये उस घटनाका सम्बन्ध न तो मैं असहयोग आन्दोलनसे मानता हूं और न किसी तरहके यूरोपियनोंके विरुद्ध किसी आन्दोलनसे। संवाददाताने स्पष्ट नहीं लिखा है, फिर भी उनके पत्रसे यह प्रगट होता है कि इस बातसे लोग असन्तुष्ट और क्षुब्ध थे कि बालिकायें इस जलसेमें भाग लें। संवाददाताने लिखा है कि ऐन मौकेपर अभिभावकोंने अस्वीकार किया और नाटकका अभिनय—जिसमें बालिकायें भाग लेने वाली थीं—बन्द कर दिया गया इस तरह क्षोभ उत्पन्न करनेका कारण अवश्य ही उपस्थित किया गया होगा।

पर मेरी स्थिति स्पष्ट है। यदि नवयुवक उत्तेजित होकर भी दङ्गा मचावें तो उनका किसी भी अवस्थामें समर्थन नहीं किया जा सकता। यदि अभिभावकोंको कोई इतराज नहीं था तो नवयुवकोंको इस तरह लडकियों द्वारा अभिनयमें बाधा डालनेका कोई कारण नहीं था। स्वतन्त्रताकी सच्ची कसौटी यही है कि जबतक कोई व्यक्ति किसीकी जान मालपर किसी तरहका अनुचित आक्षेप नहीं करता उसे अपनी इच्छाके अनुसार काम करनेकी पूर्ण स्वाधीनता होनी चाहिये। हुल्लड मचाकर जनताका सुधार करना या उसके आचरणको ठीक करना असम्भव हैं। किसी भी समाजको पवित्र और सुदृढ रखनेका एकमात्र उपाय सार्वजनिक भय और विश्वास है। यदि धारवारके निवासियोंको इस तरह लडकियोंका पबलिकमें आना अभिमत

नहीं था तो उन्हें उचित था कि सार्वजनिक सभा द्वारा या अन्य प्रकारसे सार्वजनिक मतको अपने पक्षमें किया होता। असहयोग आन्दोलनका अभिप्राय इस तरहकी बुराइयोंको रोकना है। जिस तरहकी हिंसात्मक घटनाकी चर्चा की गई है उस तरहकी घटना-में असहयोगियोंको किसी तरहसे भाग नहीं लेना चाहिये बल्कि उनका कर्तव्य यह होना चाहिये कि वे दूसरोंको भी इस तरहके आचरणसे रोकें। असहयोगकी सफलता केवल इस बातपर निर्भर है कि असहयोगी हर तरहको हिंसाकी प्रवृत्ति रोकनेकी चेष्टा करें। आत्मत्यागके कार्यक्रमको प्रत्येक व्यक्ति भले ही स्वीकार न करे पर सबको यह बात तो स्वीकार करना ही चाहिये कि मनसा, वाचा तथा कर्मणा अहिंसात्मक होनेकी पूर्ण आवश्यकता है।

मुझे एक बातसे विस्मय हुआ। बाद्दाताने धारवारके हुल्लडकी तुलना जालियावाला बागके कत्ल आमसे की है। इस तरहकी तुलनासे उन्होंने कितना भारी अन्याय किया है। कहा तो एक तरफ उद्दण्ड अधिकारियोंका निहत्थों और निर्दो-षोंपर अकारण गोलियोंका बौछार कहा उच्छृखल नवयुवकोंका दुर्व्यवहार, जिसका कारण सच्चा या अनुमानित अनाचार है। दोनों कार्रवाइयोंपर घृणा प्रगट करनेकी आवश्यकता है। पर धारवारके युवकोंकी कार्रवाई तथा अमृतसरमें डायरके अत्या-चारमें उतना ही अन्तर है जितना साधारण चोट और हत्यामें हो सकती है।

हुल्लड़वाजी

(फरवरी २३, १९२१)

मिस्टर शास्त्री तथा मिस्टर परांजपेके लिये वम्बई और पूनामें जो सभायें की गई थी उसमे लोगोने जिस तरहका व्यवहार किया उससे असहयोग आन्दोलनको वडा धक्का पहुंचा। मैंने पढा है कि दङ्गा किया गया था, पर इस दगेमें असहयोगी शामिल नही थे वल्कि इसके करने वाले वे लोग थे जो असहयोग आन्दोलनको वदनाम करना चाहते थे। यह वात सम्भव है क्योंकि ऐसे लोग प्राय पाये जाते हैं जो किसी आन्दोलनको वन्द करनेके हेतु उसकी निन्दा ही करना आरम्भ नहीं करते वल्कि उसपर हर तरहके कलंक लगाते हैं। पर यदि हम लोग असयोग आन्दोलनको सफल वनाना चाहते हैं तो हमें इस तरहकी घटनाओंको रोकनेका भी प्रवन्ध करना चाहिये। यदि सिपाही हार जाय तो वह अपनी रक्षामें यह नहीं कह सकता कि हमारे मार्गमें अनेक तरहकी कठिनाइयां थीं। जव जेनरल वुलर लेडी स्मिथ नामक स्थानकी रक्षा नहीं कर सके तो वे अपने पदसे हटा दिये गये और दूसरा व्यक्ति नियुक्त कया गया। जव लार्ड रावर्ट दक्षिण अफ्रिकन युद्धका अन्त नही कर सके तव लार्ड किचनरको उनका स्थान ग्रहण करना पडा। यह सरकार तभीतक जीवित

रह सकती है जबतक यह असहयोग आन्दोलनको दबा सकती है या चकमा दे सकती है। यदि असहयोगी छात्र इस तरहके कलङ्क से बचना चाहते थे तो उन्होंने पूने तथा बम्बईके सभामें भाग क्यों लिया। सूचनामें स्पष्ट शब्दोंमें लिखा था कि इस सभामें वे ही लोग पधारनेकी कृपा करें जो विपक्षकी बातें सुननेको तैयार हों। इस लिये इन स्थानोंमें जो घटनाएं हुईं उनके लिये कोई भी यथेष्ठ कारण नहीं उपस्थित किया जा सकता। इसके अतिरिक्त यह बात भी ध्यानमें रखने योग्य है कि मिस्टर शास्त्री और मिस्टर परांजपे सार्वजनिक काम करने वालोंमें सबसे अग्रसर और उत्साही पुरुष हैं। उन्हें इस देशसे उतना ही स्नेह है जितना किसी भी असहयोगीको हो सकता है। जिस तरहसे वे हमें गलत मार्गपर समझते हैं उसी तरह हम उन्हें गलत मार्गपर समझते हैं। पर यदि हम अपने विरोधियोंकी बातें तक सुनना स्वीकार न करें तो हमारी कितनी भारी भूल है।

अङ्गरेजोंका अनुकरण करके हुल्लड भी हमें नहीं मचाना चाहिये। अङ्गरेजोंकी उत्तेजना और अविवेकका अनुकरण करके हम आन्दोलनको धार्मिक नहीं रख सकते। यदि इस आन्दोलनको अहिंसात्मक रखना है और यदि इसके द्वारा सफलता प्राप्त करना है तो यह अवश्य ही अहिंसात्मक रहेगा और ऐसी दशामें इसके इस प्रधान लक्ष्यपर ध्यान देना होगा।

मद्रासमें हुल्लड़

मद्रासकी हड़ताल और हुल्लड़ पर डा० राजन ने श्री गांधीजी को एक पत्र लिखा है। उसमें वे लिखते हैं कि मद्रासकी हड़ताल पूरी तरह सफल हुई, किन्तु कहीं कहीं हुल्लड़ भी खड़े हो गये। बेढङ्ग लोगोंका समूह दुधारी तलवार का सा होता है। लोग सशस्त्र सेनाओंको देखकर कभी कभी उत्तेजित हो जाते हैं। माऊन्ट रोड पर एक पारसी सीनेमा थियेटरको भी हुल्लड़बाज़ोंने भारी हानि पहुंचाई। सर त्यागराज चेट्टीके मकानको भी कई लोगोंने जा घेरा था जिससे वे युवराजके स्वागतमें सम्मिलित न हो सके।

इस पर श्रीगांधीजी 'यंगइण्डियामें' लिखते हैं.—

"डा०राजनका पत्र मैंने मद्रासमें मनाई गई पूरी हड़तालका अभिनन्दन करनेके हेतु से उद्धृत नहीं किया, किन्तु हड़तालके दिन जो हुल्लड़ खड़ा होगया उसपर खेद प्रगट करनेके हेतुसे किया है। उस रोज तो यदि हड़ताल और हुल्लड़ दोनों न होते तो ही अच्छा था। "यह मनमानी तोड़-फोड़ करना हुल्लड़बाज़ों-का काम था" यह भी कोई बचाव है? क्योंकि वह तो मद्रास-के असहयोगियोंकी स्वराज्य-विषयक अयोग्यताका खासा प्रमाण है। जो लोग अपनी अयोग्यताका दावा करते हैं उनमें

हर प्रकारकी हुल्लडबाजी भी रोकनेकी शक्ति होनी चाहिए। उस हड़तालको शान्तिमय नही कह सकते, क्योंकि जो हालत उस बिचारे सीनेमा वालेकी हुई वही औरोंकी भी होती, यदि वे भी अपनी दुकानें खुली रखनेकी हिम्मत करते। मै तो उस गोली चलानेवाले सीनेमा वालेकी हिमायत ही करूंगा, क्योंकि अगर वह गोली नहीं चलाता, तो उसका थियेटर ही नष्ट कर दिया जाता। लोगोंका बेहतर बिगड खड़ा होना आखिर क्या है? उनके हुल्लडका जो उचित दण्ड उन्हे सीनेमा वालेकी ओरसे मिला उसपर आग बबूला होजानेकी गुस्ताखी करना। सर त्यागराज चेट्टीके घरको घेर कर उनकी वैयक्तिक स्वतन्त्रतामें बाधा डालना भी कायरता नहीं तो क्या है? लोगोंने सर त्यागराज-को सम्मान करने देनेसे रोककर खुद अपना अपमान किया और सर साहबके उस सम्मानको, जो कि वे युवराजका करने वाले थे किन्तु रोक दिये गये, और भी उच्च कर दिया। यह काम हुल्लड-बाजोंके योग्य भले ही कहा जा सकता हो, किन्तु असहयोगियो-के अर्थात् गम्भीरतासे काम लेनेके योग्य कभी नहीं कहा जा सकेगा।

मदरासकी हड़तालको शान्तिमय बनाये रखनेके लिए डा० राजन् और उनके साथियोंने कुछ भी उठा नहीं रखा। इसलिए उनको तो हर तरहसे धन्यवाद। किन्तु बम्बईकी तरह मदरास भी हमें एक पाठ पढाता है। अभी हमें बहुत कुछ करना बाकी है। तभी स्वराज्यके योग्य परिस्थित होगी। या तो हम

यह मानें कि शान्तिमय क्रान्ति सफल हो सकती है या यह माने कि अहिंसा हिंसाकी पूर्व तैयारी मात्र है। अगर हमारी सच्ची परिस्थिति ऐसी ही हो तो हमें अपने ध्येयको बदल देना चाहिए। किन्तु मैं तो काफी आशावादी हूं और यह भरोसा कर सकता हूं कि भारतने अहिंसाके रहस्यको अपने हृदयमें अच्छी तरह अङ्कित कर लिया है। वह अनुकरणीय आत्म संयम जो कि अमृतसर, लाहोर, अलीगढ़, इलाहाबाद, कलकत्ता, बरीसाल आदि, कहांतक गिनाऊं, कई स्थानोंने दिखाया है वही सिद्ध करता है कि जहां जहां सच्चे प्रतिज्ञाबद्ध असहयोगी काम करते हैं वहांके लिए हम यह विश्वास रख सकते हैं कि वहां शान्तिका भङ्ग न होगा। किन्तु जहां अनाड़ी लोग इकट्ठे हो जाते हैं, जैसे कि मद्रासमें हुए थे, वहां असहयोगियोंकी नहीं चलती। किन्तु हम निराश न हों। मद्रासके जैसी हुल्लडबाजी भी फिर न होने पावे, ऐसा उपाय हमें खोज निकालना चाहिए। हरदोईमें उस दिन श्री बेगरपर आक्रमण किया गया। पर सौभाग्यसे वे बच गये। यह दुर्घटना भी उतनी ही लज्जास्पद है। ऐसे कहीं कहीं होनेवाले हिंसा कृत्यको ढूंढना या उनपर कोई कार्रवाई करना कठिन है। मुझे विश्वास है कि वह काम तो किसी ऐसे अज्ञात शख्सका है जिसका असहयोगसे कोई सम्बन्ध नहीं। किन्तु हमें ऐसे लोगोंका भी ठीक बन्दोवस्त करना चाहिये। अहिंसाके साम्राज्यमें तो ऐसी बातें बिलकुल असम्भव हो जानी चाहिये।

किन्तु यह तो मानना होगा कि वह आवश्यक परिस्थिति अभीतक तैयार नहीं हो पाई है। यह तो तभी हो सकती है जब हम हिंसा-को अपने विचार तकसे दूर कर देंगे।



होशियार

मदरासकी हुल्लडबाजीपर एक सज्जनने "यङ्ग इण्डिया" में एक पत्र प्रकाशित कराया है। उसका सार इस प्रकार है—"मदरासके असहयोगियोंको करतूतें देखकर तो सब लोगोंके दिल दहल उठे। ट्राम-गाडिया रोक दी गई और अन्दर बैठनेवालोंको पत्थर मारे गये। गालिया दी गई। कई स्त्रियोंपर तो—जो कि ट्रामोंमें बैठकर जा रही थीं थूका भी गया। उनको बुरी बुरी गालिया दी गई और राम जाने किस किस बुरी तरहसे वे सताई गई। आपने ऐसे कैसे अहिंसावादी असहयोगियोंपर अपने आन्दोलनका भार सौंप रखा है जो लोगोंको संभालतक नहीं सकते? क्या आपके ऐसे अनु-यायियोंके नीच और दुष्ट कार्यों से असहयोग जैसे उच्च आदर्शमे जनताकी सहानुभूति हट न जायगी?"

इसपर श्रीगांधीजी लिखते हैं—

इस पत्रको मैं खुशीके साथ, जिसमें कुछ 'सुख' भी मिला हुआ है, प्रकाशित करता हू। यह तो स्पष्ट मालूम होता है

,, हमें तो सरकारके अत्याचार तथा गलतियोंके बनिस्बत खुद अपनी ही गलतियोंसे तथा हिंसा वृत्तिसे अधिक डरना चाहिए। सरकारकी भूलोंसे तो, यदि हम उनका अच्छा उपयोग करें तो, हमें फायदा ही होता है जैसा कि अभीतक हुआ है। किन्तु अगर खुद हमारे अन्दर हिंसा या असत्यका अंश हुआ तो वह मृत्युकी तरह हमारा घातक होगा। यदि खुद अपने ही घरका बन्दोबस्त हम न कर सके तो हम अपने ही हाथों अपना सत्यानाश कर लेंगे, और असहयोगका नाम लेते ही लोग छीथू करने लगेंगे।

'रंगून डेली न्यूज' से मालूम हुआ है कि रंगूनके निजामुद्दीन नामके किसी गाडीवानने युवराजके स्वागतमें भाग लिया और गाडी चलाई तथा दूसरोंको भी चलानेके लिये कहा, इसलिये उसकी स्त्रीने अपने पतिको तिलाक

मैं इसपर यह कहनेकी धृष्टता रखता हूं कि अगर यह खबर सच है तो जि ... किसीने तिलाक देनेकी इजाजत दी हो उसने इस्लामके कानून ... यताके खिलाफ काम किया है। उसने बडी शोचनीय भूल की है। इस्लाममें ऐसी छोटी छोटी बातोंपर कहीं तिलाक नहीं दे दिया जाता। अगर हडतालें ऊपर लिखे तरीकोंसे मनाई जा रही हों तो वे किसी कामकी नहीं। ऐसी हडतालें जनताके विचारोंको स्वतन्त्रता-पूर्वक नहीं जाहिर कर सकतीं। और मुझे हडताल जैसे थोडे समयके लिए स्वीकृत किये हुए उपायका उतना खयाल नहीं कि जितना

दीने इस्लामकी और असहयोग जैसे उच्च सिद्धान्तकी नेकनामीका है। असहयोगका कानून तो विरोधी विचारोंके और कार्योंके प्रति पूरी सहनशीलता रखनेकी तथा उनका आदर करनेकी आज्ञा देता है। और इस्लामी कानून भी, जहांतक कि एक गैर मुस्लिम अपनी राय दे सकता है, इतनी ही कडी सहन-शीलताकी आज्ञा करता है। पैगम्बर साहबको भी इतना दुःख किसी बातसे न हुआ होगा जितना कि उन्हें अपने नये धर्म प्रचार करनेके आरम्भिक कालमें मक्काके लोगोंकी असहन-शीलतासे हुआ होता इसलिये उन्होंने कभी भी असहन शीलताके साथ अपनी सहानुभूति नहीं दिखाई होगी। "धार्मिक बातोंमें जबरदस्तीसे काम न लिया जाय" यह उन्हें तभी कहना पडा होगा जब उनके नये नये शिष्य नये धर्म-प्रचारके समय समझदारीके बनिस्बत उत्साह अधिक दिखाने लगे होंगे।

हम चाहे हिन्दू हों, या, मुसलमान हों अथवा और कोई क्यों न हों, उसको कोई बात नहीं। प्रजासत्ताका सिद्धान्त जिसका कि हमें भारतमें प्रचार करना है हिंसाके बलपर नहीं फैलाया जा सकता, फिर वह वाचिक हो कायिक हो, प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष।

एक पादरीका भ्रम

मदरासमें हुल्लडबाजोंके समय एक पादरी साहब भी पिट गये। इसपर बिगड़कर उन्होंने श्रीगांधीजीको एक लम्बा-चौड़ा पत्र लिखा। वे कहते हैं कि देखिये आपके असहयोग आन्दोलनका यह फल! पञ्जाब, बम्बई, मलाबार और मदरासकी दुर्घटनाओंको देखकर भी आपकी आंखें क्यों नहीं खुलतीं? आप गलत रास्तेपर जा रहे हैं। क्रान्तिसे नहीं, बल्कि क्रमशः विकाससे देशका उत्कर्ष होता है। इन सारी आफतोंके जिम्मेदार आप ही हैं। सो, हे महात्मा! यदि आप सचमुच महान् आत्मा हैं तो अपना रास्ता ठीक कीजिये।"

पिछले दो अङ्कोंमें मैंने जो दो अंगरेज महिलाओंके पत्र प्रकाशित किये हैं उनसे यह पत्र विपरीत प्रकारका है। वे भी ईसाई पादरिन थीं। इन पादरी साहबके पत्रसे यह साफ प्रतीत होता है है कि उन्होंने असहयोग आन्दोलनका न तो मनन ही किया है न चिन्तन ही। जो सब लोगोंको धर्मका उपदेश करता है उसे तो यह जानना चाहिये कि एक उदाहरणको लेकर उससे किसी सामान्य सिद्धान्तको स्थिर कर लेना बहुत भयावह है। हां, इसमें कोई शक नहीं कि मदरासके हुल्लडबाजोंके द्वारा पादरी साहबपर आक्रमण किया जाना

कायरताका सूचक है और प्रत्येक समझदार आदमीने उसका निषेध किया है। प्रत्येक समझदार आदमी मानता है कि इस दुर्घटनाके बदौलत हमारे कार्यको बहुत हानि पहुची है, क्योंकि जिस असहयोगका मुख्य आधार अहिंसा है उसीके प्रति मिथ्या सहानुभूतिके कारण यह हिंसा काण्ड हुआ था।

परन्तु क्या जो घटनायें बम्बई, मद्रास आदि जगहोंपर हुई हैं वे संसारके इतिहासमें कोई नई बात है? क्या यूरोपमें ऐसी घटनायें बार बार घटित नहीं हुई है? क्या इंगलैंड और स्काटलैंडमें ये बातें नहीं हुई है? क्या कोपित और क्रुद्ध जन समूहके द्वारा ठीक ठीक बम्बई और मद्रासके जैसी हरकतें नहीं होती है? क्या आयर्लैण्डके लोगोंने बम्बई और मद्रासके हुल्लड़बाजोंसे भी अधिक बुरी बाते नहीं की है और क्या इसी हुल्लड़बाजीके बदौलत उन्होंने स्वराज्यका बहुत कुछ भाग प्राप्त नहीं कर लिया है?

मैं मद्रास और बम्बईकी घटनाओंको हृदयसे नापसन्द करता हू। परन्तु दूसरे कारणोंसे। मैं आयर्लैण्ड वालोंकी हुल्लड़बाजीसे भी घृणा करता हू। परन्तु आयर्लैण्डकी हुल्लड़बाजीमें और बम्बई मद्रासकी हुल्लड़बाजीमें भेद है। आयरिश हुल्लड़बाजी अमली और प्रमाणित थी। अमली तो इस लिये कि वह आयर्लैण्डकी परिस्थितिके अनुकूल थी और प्रमाणित इस लिये कि उन्होंने अपने सिद्धान्तोंको छिपा नहीं रखा। परन्तु भारतीय हुल्लड़बाजी न तो अमली ही है और न प्रमाणिक ही,

क्योंकि जहातक हिन्दुस्तानियोंकी मनःस्थितिको मैं जान पाया हूं, भारतमें हुल्लडबाजी कभी फलफूल नहीं सकती। भारतवासियोंकी मनोभूमि उसके अनुकूल नहीं है। वह अप्रमाणिक इसलिये है कि भारतीय अपने आन्दोलनको पूर्णतः शान्तिमय कहते हैं, यद्यपि समयोपयोगी समझकर उन्होंने उसका अवलम्बन किया है। असहयोगियोंको उन बातोंमें पड़ना ही नहीं चाहिये जिनको वे शान्तिमय न रख पावें।

लेकिन पादरी साहब तो मद्रासकी हुल्लडबाजीसे इतने डर गये हैं कि वे भारतको स्वराज्यके अयोग्य बताते हैं। पर इसके विपरीत मैं तो यह मानता हू कि इस वर्तमान अस्वाभाविक और अप्रमाणिक अवस्थासे तो यह हुल्लडबाजीकी अवस्था भी अच्छी हो सकती है। इसका अन्त तो जिस तरह हो सके उसी तरह हो जाना चाहिये। पर हां, भारतके वर्तमान नेता हिंसात्मक आन्दोलनमें नहीं पड सकते। अधिकांश लोग न तो इसकी इच्छा ही रखते हैं और न योग्यता ही। वे इस आन्दोलनको शान्तिमय बनाये रखनेका भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं।

पादरी साहब दावा करते हैं कि वर्तमान शासन-प्रणालीके बदौलत भारतको बहुत लाभ पहुंचा है। मेरी रायमें तो उसकी हरकतोंका फल हुआ है भारतकी नैतिक, भौतिक और राजनैतिक हानि। लोगोंकी नैतिक अवस्था आज पहलेसे गिरी हुई है। हां, आजकी अनीति पहलेसे मजी हुई है और इसलिये धोखा देनेवाली और भयंकर है। भारतकी दरिद्रता भी आज

पहलेसे बहुत बढ़ी हुई है। राजनैतिक दृष्टिसे तो भारत इतना पौरुषहीन हो गया है कि अपने अधःपातका भी ख्याल बहुत कम हो पाता है।

राष्ट्रोंकी उन्नति विकाश और क्रान्ति दोनोंके द्वारा हुई है। दोनों एकसे आवश्यक हैं। मृत्यु, जो कि शाश्वत सत्य है, क्रान्ति है और जन्म तथा जीवन धीरे धीरे और स्थिर रूपसे होनेवाला विकास है। मनुष्यकी उन्नतिके लिये स्वयं जीवन जितना आवश्यक है उतना आवश्यक मृत्यु भी है। ईश्वर सबसे बड़ा क्रान्तिकर्ता है। संसारमें ऐसा क्रान्तिकारी न आजतक देखा है और न आगे देखेगा। वह जल-प्रलय करता है। वह ऐसी ऐसी जगहोंमें विकट तूफान उत्पन्न करता है जहां कि एक ही मिनिट पहले शान्ति ही शान्ति थ । वह बड़े बड़े पर्वतोंको मैदान बना देता है जिनको उसने अत्यन्त चिन्ता और अपार धैर्यके साथ निर्माण किया था। हां, मैं आकाशको देखता हू और उसको देखकर मेरा हृदय भय और आश्चर्यसे भर जाता है। क्या भारत और क्या इङ्गलैंड, दोनोंके गम्भीर नील गगनमें मैंने बादलदलको घिरते हुए और प्रकोपके साथ बरसते हुए देखा है, जिसे देखकर मैं अवाक् रह जाता हू। इतिहासमें सुव्यवस्थिति कही जानेवाली उन्नतिकी अपेक्षा क्रान्तिके ही उदाहरण अधिक मिलते हैं। इङ्गलैण्डके इतिहासमें ये उदाहरण जितने अधिक मिलते हैं उतने और कहीं नहीं। और मैं पादरी महाशयको यह सूचित कर देना चाहता हू कि

मैंने लोगोंको धीरे धीरे पहाडपर चढ़ते हुए देखा है और साथ ही लोगोंको ऊपर आकाशमें एकदम उड जाते हुए भी देखा है।

स्वराज्य भारतका जन्मसिद्ध हक है। इस ब्रिटिश शासन पद्धतिने उसे उससे वञ्चित कर रखा है। भारत अपनी खोई हुई स्वतन्त्रताको प्राप्त करनेके लिये लड रहा है। और ऐसा करते हुए वह इतिहासकी पुनरावृत्ति नहीं, बल्कि नये इतिहासकी सृष्टि करनेका प्रयत्न कर रहा है। अन्तमें मैं पादरी साहबको तथा उनके सदृश विचार रखनेवाले दूसरे सज्जनोंको यह यकीन दिलाता हूं कि यह आन्दोलन किसीके प्रति मनोमालिन्य करनेके लिये नहीं बल्कि सबके प्रति सद्भावकी वृद्धि करनेके लिये उठाया गया है। समय ही केवल इसकी सत्यताको सिद्ध करेगा। इसके गर्भमें जो नूतन तथ्य छिपा हुआ है उसे यन्त्रणा हमें देखने नहीं देती है। आइए, हम ध्यान करें, ठहरें और प्रार्थना करें।

हमारे मार्गकी कठिनाइयां

(नवम्बर १, १९२०)

हमारी कठिनाइयां दो प्रकारकी हैं। एक तो वे जो बाहरसे हमारे विरुद्ध खडी की जाती हैं और दूसरी वे जो हम स्वयं उत्पन्न करते हैं। जो कठिनाइया हम स्वयं उपस्थित करते हैं वे बहुत ही भयानक होती हैं, क्योंकि उन्हें हम छातीसे लगाये रहते हैं और उन्हे छोडना नहीं चाहते। उदाहरणार्थ बम्बईमें मिसेज बेसेण्टके व्याख्यानके अवसरपर जो होहल्ला मचा वह हमी लोगोंने मचाया। और राजद्रोही सभाकी घोषणाका इलाज करना तो सहज है, पर मिसेज बेसेण्टकी सभाओंमें होहल्ला शान्त करना बडा कठिन है। "राजद्रोही" सभाओंकी बन्दीसे हमारा बल बढता है। पर हमलोग जो होहल्ला मचाते हैं उनसे हमारा काम बिगडता है। मिसेज बेसेण्टकी सभामें सदाकी तरह जो होहल्ला मचा वह एक प्रकारका उपद्रव था। शान्त-युद्ध आन्दोलनके संकल्पके यह बात बिलकुल विरुद्ध थी। इसका परिणाम शारीरिक उपद्रव में आसानीसे हो सकता है।

जिन लोगोंने यह होहल्ला मचाया उन्हें अपने पवित्र कार्यका स्मरण करके यह सोचना चाहिये कि उस कार्यके लिये यह

कितना बुरा है। स्वराज्यकी अवस्थामें हम ऐसी बुरी शिक्षा देना कदापि पसन्द न करेंगे। मतमतान्तरका, परस्पर सहिष्णुताका भाव स्वराज्यका एक लक्षण है, कोई मत हमें कितना ही अप्रिय क्यों न हो उसे सह लेना ही होगा। यदि असहयोगवादी अन्य दलके विचार सुननेसे इनकार करें तो उनपर भी वही इलजाम लगाया जायगा जो सरकार पर लगाया जाता है। सरकार बिना हमारी बातोंको सुने चाहे जो निर्णय कर डालती है, यह शिकायत जो लोग करते हैं वे ही ऐसा करें, यह सर्वथा अनुचित है। सरकारके विरुद्ध असहयोग करनेका आधार हमारा परस्पर सहयोग है और इसी परस्पर सहयोगसे ही असहयोग संभव है। जहांतक हो सके हमलोगोंको अपने संकल्पका बिना परिवर्तन किये, आपसमें मेल रखना चाहिये। होहल्ला मचाने या ऊधम करनेसे मेल नहीं हो सकता।

सभाओंमें होहल्ला मचाकर असहयोगवादियोंने मिसेज बेसेण्ट और उनके मित्रों तथा अनुयायियोंको अलग कर दिया है। यह बडी भारी हानि है। होहल्लासे वे अपनी ओर कोई नये अनुयायी नहीं ला सके। छात्रोंने मिसेज बेसेण्टका अपमान कर अपने विभागके इस विकासके समयमें अपने ऊपर धब्बा लगाया है। धर्म तथा ईश्वरके नामपर विद्यार्थियोंसे कहा जाता है कि मातापिताके निषेध करनेपर भी सरकारसे सहायता पाने या सम्बन्ध रखनेवाले स्कूलोंको छोड़ दें। बालक बालिकायें मातापिता और गुरुजनोंके परम आज्ञाकारी होनेपर

भी उनके लिये यह अत्यन्त वैध है। यह उस अवस्थामें वैध है जब किसी महान उच्च कार्यमें इसकी आवश्यकता पडे और जब उसमें विद्वेष, वैर और क्रोधका भाव न पाया जाय। पर जब उसमें उद्धता और होहल्ला मचानेका जोश आ जाता है तब वह बडा भारी दुर्गुण है। एक महान बनाता है और दूसरा पतन करता है। सब बातोंके बाद भी क्यों मिसेज बेसेण्टकी इतने वर्षों की सेवाके लिये उनके प्रति कृतज्ञ नहीं हो सकते? उनके वर्गका भी हम आदर नहीं कर सकते? भावी सन्तान आत्म घात करेगी यदि वह कृतघ्न हो। भारतवासियोंको कृतघ्न न होकर आदर पूर्वक मिसेज बेसेण्टका भाषण सुनना चाहिये, यद्यपि वे भारतके मतका विरोध ही करे। मिसेज बेसेण्ट जो कुछ विरोध कर रही हैं सच्चे शुद्ध हृदयसे कर रही हैं, कपटसे नहीं। उनकी धारणा है कि गरम दलवाले गलती कर भारतकी उन्नतिको रोकते हैं। इसलिये निस्सन्देह उनका कर्त्तव्य हमें अपनी भूलोंसे हटानेका है और यह हमारा धर्म है कि हम आदरपूर्वक उनकी बातोंको सुनें।

मुझसे कहा गया है कि यदि मिसेज बेसेण्टके व्याख्यानमें उनकी बातोंका जोरशोरसे खण्डन नहीं हो तो इससे लाभ उठाकर लोगोंको यह दिखावेंगी कि गरम दलवालोंकी अपेक्षा अधिक आदमी हमारी ही ओर है। यदि ऐसा कहना ठीक हो तो भी इसके लिये खण्डनका मार्ग सिर्फ होहल्ला ही नहीं है। सबसे उत्तम उपाय यह है कि हम उनके व्याख्यानमें ही नहीं

(१४) उम्मेदवारोंको चाहिये कि उम्मेद्वारीसे अपना नाम कटा दें और यदि निर्वाचित हो गये हैं तो अपने पदोंसे स्तीफा दे दें।

(१५) जिन निर्वाचकोंने अभी तक अपना मत नहीं स्थिर किया है उन्हें उचित है कि इसे निश्चय समझलें कि किसीको वोट देना पाप है।

यदि जनताने दृढता और साहसके साथ यह काम किया तो उसे स्वराज्यके लिये एक वर्ष तक भी नहीं ठहरना पड़ेगा। यदि हमलोगोंने इतनी दृढ़ता और साहस दिखाई तो हमें स्वराज्य अवश्य मिल जायगा।

उस समय स्वराज्यकी सरकार द्वारा मैं मुक्त किया जाऊंगा। मेरी प्रसन्नताकी सीमा नहीं रहेगी। आज जिस स्वतन्त्रताका मैं उपभोग कर रहा हूं वह जेल जीवनसे भी अधम है।

यदि जनताने मेरी मुक्तिके लिये जोर जुल्म किया या हिंसासे काम लिया और तब स्वराज्यकी प्राप्तिके लिये मेरी सहायताकी अपेक्षा की तो उनकी अयोग्यता समझी जायगी। न तो मैं ही, न कोई अन्य व्यक्ति राष्ट्रके लिये स्वराज्य प्राप्त कर सकता है। स्वराज्यकी प्राप्ति केवल राष्ट्रकी अपनी योग्यता साबित करनेपर ही हो सकती है।

अन्तमें मुझे यही कहना है कि सरकारके ऊपर आक्षेप या दोषारोपण करना व्यर्थ है। हमलोग जिस तरहकी योग्यता दिखलावेंगे उसी तरहकी शासन व्यवस्था हमें प्राप्त होगी। यदि

हम तरक्की कर गये, अपनी अवस्था सुधारते गये तो सरकार भी अवश्य तरक्की करेगी और अपनी अवस्था सुधार देगी। अपनी अवस्थाका सुधार करनेसे ही हमें स्वराज्य मिल सकता है। असहयोग करके राष्ट्रने अपनी अवस्था सुधारनेके लिये दृढ़ता दिखलायी है। तो क्या मेरी गिरफ्तारीके बाद राष्ट्र अपनी दृढ़ प्रतिज्ञासे सुधर जायगा और सहयोग करने लग जायगा। यदि जनता उन्मत्त हो जाय और हिंसा कर बैठे तो इसके परिणाम स्वरूप उसे पेटोंके बल रेंगना पड़ेगा, जमीनपर अपनी नाक रगड़नी पड़ेगी, यूनियन जैक (अंग्रेजी झण्डा) को सलाम करना पड़ेगा और यह सब करनेके लिये अठारह अठारह मील पैदल चलना पड़ेगा। इसे सहयोग नहीं तो और क्या कहेंगे! इस तरहके पेटके बल रेंगनेकी आज्ञाओंको स्वीकार करनेसे अच्छा तो मर जाना है। मेरे कहनेका तात्पर्य यह है कि चाहे जिस पहलूसे विचार करो, यह स्पष्ट है कि जो उपाय मैंने बतलाये हैं वे ही ठीक हैं और वे ही जनताके लिये कल्याणकारी हैं। इसलिये जनताको उन्हें ही अपनाना चाहिये।

(१४) उम्मेदवारोंको चाहिये कि उम्मेदवारीसे अपना नाम कटा दें और यदि निर्वाचित हो गये हैं तो अपने पदोंसे स्तीफा दे दें।

(१५) जिन निर्वाचकोंने अभी तक अपना मत नहीं स्थिर किया है उन्हें उचित है कि इसे निश्चय समझलें कि किसीको घोट देना पाप है ।

यदि जनताने दृढता और साहसके साथ यह काम किया तो उसे स्वराज्यके लिये एक वर्ष तक भी नहीं ठहरना पड़ेगा। यदि हमलोगोंने इतनी दृढ़ता और साहस दिखाई तो हमें स्वराज्य अवश्य मिल जायगा।

उस समय स्वराज्यकी सरकार द्वारा मैं मुक्त किया जाऊंगा। मेरी प्रसन्नताकी सीमा नहीं रहेगी। आज जिस स्वतन्त्रताका मैं उपभोग कर रहा हूं वह जेल जीवनसे भी अधम है।

यदि जनताने मेरी मुक्तिके लिये जोर जुल्म किया या हिंसासे काम लिया और तब स्वराज्यकी प्राप्तिके लिये मेरी सहायताकी अपेक्षा की तो उनकी अयोग्यता समझी जायगी। न तो मैं ही, न कोई अन्य व्यक्ति राष्ट्रके लिये स्वराज्य प्राप्त कर सकता है। स्वराज्यकी प्राप्ति केवल राष्ट्रकी अपनी योग्यता साबित करनेपर ही हो सकती है।

अन्तमें मुझे यही कहना है कि सरकारके ऊपर आक्षेप या दोषारोपण करना व्यर्थ है। हमलोग जिस तरहकी योग्यता दिखलावेंगे उसी तरहकी शासन व्यवस्था हमें प्राप्त होगी। यदि

हम तरक्की कर गये, अपनी अवस्था सुधारते गये तो सरकार भी अवश्य तरक्की करेगी और अपनी अवस्था सुधार देगी। अपनी अवस्थाका सुधार करनेसे ही हमें स्वराज्य मिल सकता है। असहयोग करके राष्ट्रने अपनी अवस्था सुधारनेके लिये दृढ़ता दिखलायी है। तो क्या मेरी गिरफ्तारीके बाद राष्ट्र अपनी दृढ़ प्रतिज्ञासे सुधर जायगा और सहयोग करने लग जायगा। यदि जनता उन्मत्त हो जाय और हिंसा कर बैठे तो इसके परिणाम स्वरूप उसे पेटोंके बल रेंगना पड़ेगा, ज़मीनपर अपनी नाक रगड़नी पड़ेगी, यूनियन जेक (अंग्रेजी झण्डा) को सलाम करना पड़ेगा और यह सब करनेके लिये अठारह अठारह मील पैदल चलना पड़ेगा। इसे सहयोग नहीं तो और क्या कहेंगे? इस तरहके पेटके बल रेंगनेकी आज्ञाओंको स्वीकार करनेसे अच्छा तो मर जाना है। मेरे कहनेका तात्पर्य यह है कि चाहे जिस पहलूसे विचार करो, यह स्पष्ट है कि जो उपाय मैंने बतलाये हैं वे ही ठीक हैं और वे ही जनताके लिये कल्याणकारी हैं। इसलिये जनताको उन्हें ही अपनाना चाहिये।

प्रजासत्ता और उत्तेजित भीड

(सितम्बर ८, १९२०)

ऊपर ऊपर देखनेसे पता लगता है कि उत्तेजित भीडके शासन और जनताके शासनमें बहुत थोडा ही अन्तर है, पर तो भी यह पूर्ण है और सर्वदाके लिये विद्यमान रहेगा।

भारत आज बडी शीघ्रतासे उत्तेजित भीडके शासनमें जा रहा है। बडी शीघ्रता मैंने इस लिये कहा है कि ऐसी मेरी सम्मति है। यह हमारा दुर्भाग्य हो सकता है कि धीरे धीरे काम करनेमें भी हमें इस ढङ्गसे जाना पडे। पर इस पद्धतिका शीघ्र त्याग कर देना ही बुद्धिमत्ता है।

उत्तेजित भीडके शासनाधीन होनेका हमारा भाव बडा पाया जाता है। १० अप्रैल १९१९ को अमृतसरमें ऐसी भीडका शासन था। उसी दिन अहमदाबादमें भी उत्तेजित भीडका राज्य हो रहा था। यह नियम भग कर नाशका काम करती थी इसलिये इसका काम व्यर्थ, हानिकारक तथा ढङ्गता-पूर्ण था। समर नियमबद्ध नाशका नाम है और अब तक उत्तेजित भीडको अपेक्षा उसने अधिक ही हानि की है। पर इस पर भी समरकी सराहना की गई है। कारण हम लोगोंने समझ लिया है कि उससे बडी भारी विजय प्राप्त हो सकती है, किन्तु यह

विजय स्थायी नहीं है और धोखेसे ही हम इसे श्रेष्ठ समझते हैं।

इस लिये यदि भारत जोर-जबरदस्तीसे अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करना चाहता है तो उसे यह जोर-जबरदस्ती नियम-पूर्ण तथा सम्मान-जनक करना चाहिए (जोर-जबरदस्तीके साथ जहां तक सम्मानका प्रयोग हो सकता है) अर्थात् समरके लिये तब यह ऐसा कार्य होगा जिसे हम उत्तेजित भीडकी नहीं, बल्कि प्रजासत्ताकी कार्रवाई कहेंगे।

किन्तु आज मेरा यह उद्देश्य नहीं है कि अहमदाबाद जैसी उत्तेजित भीड़के विषयमें वर्णन करूं। मैं वैसी भीडोंके शासनके विषयमें वर्णन करना चाहता हूं जिन्हें मैं अच्छी तरह जानता हूं। कांग्रेस उत्तेजित भीडके लिये प्रदर्शन है। इसका अर्थ भी यही है। यद्यपि समझदार पुरुषों और स्त्रियोंने इसका सगठन किया है तथापि वह उत्तेजित जनताका प्रदर्शन ही कहा जा सकता है। जनताके जो प्रदर्शन हैं वे निस्सन्देह उत्तेजित जन-समूहके प्रदर्शन हैं। पञ्जाब, सिन्ध तथा मद्रासमें खिलाफतके दौरेमें मैंने ऐसे हदसे ज्यादे प्रदर्शन देखे हैं।

रेलवे स्टेशनोंपरके जुलूसोंको देख कर मैं लज्जित हुआ हूं, कारण उत्तेजित भीड यात्रियोंके असबाबका ख्याल न कर अपने पूज्य नेताओंका स्वागत करनेके लिये दौड मारती है। ऐसा करनेमें कितने ही आदमियोंकी चीजें नुकसान हो जाती हैं, यद्यपि भीडकी ऐसी इच्छा नही रहती। आगत नेताओंको उसके शोर-गुलसे बहुत असुविधा ही होती है। उत्तेजित भीडमें एक

दूसरेको रौंद कर चला जाता है और एक दूसरेको कुहनीसे ठेल कर आगे बढ़ता है। सब पवित्र सुव्यवस्था तथा शान्तिके लिये चिल्लाते हैं। कभी कभी १० स्वयंसेवकोंने एकही वार एक तरहकी आज्ञा दी है। स्वयंसेवक जनताके रक्षक होनेकी अपेक्षा प्रदर्शक बन जाते हैं। स्वयसेवकोंकी टूटी हुई कतारमें प्लेटफार्मसे सवारी तक जाना आगत नेताओंके लिये बड़ा विपन्मय तथा असुविधा-जनक हो जाता है। इतनी थोडी दूर जानेमें भी, जो ५ मिनटकी राह रहती है, नेताओंको सवारी पर पहुचनेमें एक एक घण्टा लग जाता है। भीड पीछे हटनेके बदले नेताओंकी ओर ही बढ़ती है जिससे उनकी रक्षा करनेकी आवश्यकता पडती है। नेताओंकी सवारी गाडी जो चाहे पकड लेता है। स्वयंसेवक तो इस सम्बन्धमें सबसे पहले भारी भूल करते हैं। इस लिये नेताओं तथा उनके साथिओंको समझाना पडता है कि आप लोग इस प्रकार गाडीके पायदानों पर मत चढें।

जुलूसवाले सवार-गाडीकी छतको धक्का दे देते हैं। मैंने कई वार मोटरोंकी छतें भीड द्वारा नष्ट हुई देखी हैं। मार्गमें भीड सडककी दोनों ओर क्या चलेगी कि नेताओंकी गाडीके पीछे ही पीछे रेलते हुए बढती है।

इसका परिणाम यह होता है कि चारों ओर बड़ा होहल्ला मच जाता है जिसका ठिकाना नहीं रहता। ऐसे जुलूसोंमें प्रतिक्षण खतरा होनेकी अशङ्का रहती है। इनमें दुर्घटनाएं बहुत कम

ती, है इसका श्रेय जुलूसोंके प्रबन्ध-कर्त्ताओंको नहीं है बल्कि ीडको, जो आनन्दसे सब तरहका धक्का-मुक्का सह लेती है। न जुलूसोंमें यद्यपि एक दूसरेको ठेलकर आगे चढता है तथापि कसीको बदला लेनेकी इच्छा नहीं रहती।

जुलूस पहुचनेपर सभा होती है। लोग इसके लिये बडे त्सुक रहते हैं। ऐसी सभामें हो हल्ला, चिल्लाहट आदिके सिवा ौर कुछ नहीं पाया जाता। सुवक्ता शोर-गुल मचानेवाली ऐसी सभाको अपने भाषणसे शान्त कर लेता है, यहा तक कि सभामें एक आलपीन गिरनेकी आवाज भी सुनाई देती है।

जो हो, यह कार्य उत्तेजित भीडका ही है। इसमें आप ासीके अधीन रहते हैं। जब तक आप तथा इस भीडमें सहानु- भूति है तब तक प्रत्येक काम अच्छी तरह होता जाता है। पर जहा यह सहानुभूति गई कि सब मामला बिगड जाता है। महमदाबादकी एक घटनासे आपको उत्तेजित भीडके मिजाजका ता लगेगा।

इस लिये होहल्ला तथा शोर-गुलमें हमें शान्ति स्थापित करनेका प्रयत्न करना चाहिये। मुझे पूरा विश्वास है कि ऐसी अवस्थामें दत्तचित्त भीडकी पद्धतिकी अपेक्षा शान्त जनताकी पद्धति ही अच्छी है।

इस सम्बन्धमें सबसे बडी भारी त्रुटि यह है कि हम लोगोंने गान वाद्यको विसार दिया है। गान वाद्यका अभिप्राय जनतामें शान्ति जमाना है। इसका प्रभाव बिजलीकी तरह पडता है।

लगी। अब चरों ओरसे शोर गुल मचने लगी कि एक गोलाकार वना लो। यह प्रथा बडी ही खराब है। फिर भी यह इतनी प्रचलित हो गई है कि जहा कहीं भीड नहीं भी रहती, स्वयंसेवकोंके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं भी रहता, वहां भी गोलाकार बना लेनेकी प्रथा चल गई है। कदाचित नेताका सच्चा आदर और स्वागत लोग इसीमें समझते हैं।

अस्तु मद्रास स्टेशनपर भीड जबर्दस्त थी। वे लोग इतना भीषण शोर गुल मचा रहे थे कि स्वयसेवकोंकी सूचनाओं तकका पता नहीं लगता था। उन्हें कोई सुनही नहीं सकता था, अनुकरण करना तो दूरकी बात थी। चारों ओर अन्धेर मचा था। मुझे हर वक्त यही भय लग रहा था कि कोई मेरे ऊपर न चढ़ जाय और मेरे पैरको कुचलकर उसका भुरता कर दे। कभी कभी उन्हीं स्वयसेवकोंकी धक्कमधुकासे—जो मुझे बचा रहे थे-मैं लड़खड़ा जाता था और गिरने लगता था। यदि उन्होंने इतनी तत्परतासे मेरी रक्षाका प्रबन्ध न किया होता और यदि पुरुषसिंह मौलाना शौकतअली मेरी सहायताके लिये न होते तो मेरी वह दुर्गति हुई होती जिसका मैं अनुभव भी नहीं कर सकता था। हवाकी इतनी कमी थी कि मेरा गला घुटने लग जाता था। इस तरह भीडसे संग्राम करके किसी न किसी तरह उस तीन मिनटके मार्गको हम लोगोंने पूरे पौन घण्टेमें पार किया और सडकपर मोटरकार तक पहुचे। गाडीमें सवार होना भी कोई सहज काम नहीं था। जहातक सुविधा जनक हो सका

के भीतर ढकेलकर बैठाया गया। गाडीमें बैठनेपर मुझे
णिक शान्ति मिली। उस समय मैंने समझा कि मेरी तथा
लाना शौकत अलीकी जो जैजैकार प्रजा पुकार रही थी उसके
म लोग उपयुक्त थे। यदि थोडीसी दूरदर्शिता और चतुराईसे
ाम लिया गया होता तो यही भीड खासा समारोह या सवारी
ा काम दे देती। और उस अवस्थामें जान जानेका जरा भी
र न रह जाता। जो अनुभव हम लोगोंको मद्रासमें हुआ वही
नेक स्थानोंमें भी हुआ। पर सलेम जाते हुए इन्दौरमें जो कुछ
आ वह तो अभूतपूर्व था। मुझे इतना श्रम करना पड़ा कि मैं एक
मसे थक गया। चिल्लाते चिल्लाते मेरा गला बैठ गया। अन्य
टेशनोंकी भाति वहा भी जबर्दस्त भीड एकत्रित थी। यद
त्तजामी भी औव्वल दर्जेकी थी। यद्यपि अन्य स्थानोंकी भाति
नमें भी उत्साह था और हृदयमें हम लोगोंके लिये आदर तथा
म्मान था। मैंने उनसे प्रार्थना की कि इस तरह शोर गुल
त कीजिये। चूकि वे लोग हम लोगोंको देख चुके थे इससे
ह भी प्रार्थना की कि आप लोग शान्ति पूर्वक यहासे चले
ाइये। मैंने यह भी कहा कि भाई आप लोग, यदि खिलाफत और
ञ्जाबके अत्याचारोंके लिये जो संग्राम किया जा रहा है, उसमें
ाग लेना चाहते हैं तो आपको तालीम सीखनी चाहिये। जो
ोग समझदार थे उन्होंने मेरी बात सुनी? मैंने उनसे कहा
कि आप लोग चुपचाप उठिये दरवाजेकी तरफ मुह फेरिये और
अपने अपने घरको रवाना होइये। उन लोगोंने मेरी बात मान

ली और शान्ति पूर्वक वैसा ही किया। अन्य लोगोंने भी उनका अनुकरण किया और दो मिनिटमें स्टेशन खाली हो गया। जिन लोगोंने मेरी बात सुनी, यदि वे कुछ परवा ना किये होते, और विवाद खड़े कर देते, इतराज करते बैठते, चिल्लाहट शुरू रखते और वहीं अड़े रहते और भीड़मेंसे एक आदमी भी नहीं छटता तो जितनी देर वहां गाड़ी खड़ी रही उतनी देर तक आफतका सामना करना पड़ता।

"इसके बाद जोलारपेटके अनुभवका वर्णन करके मैं इस विवरणको समाप्त करूंगा। हम लोग बङ्गलोरसे रातकी गाड़ी से मद्रासके लिये रवाना हुए। दिनको सलेममें सभा करनेके बाद हम लोगोंने १२५ मील मोटरपर आकर बङ्गलोरमें सभा की। बङ्गलोरमें जिस समय हम लोग पहुंचे जोरोंका पानी बरस रहा था। उसीमें व्याख्यान दिया, भोजनादिसे निवृत्त होकर रवाना हो गया। हम लोग आशा कर रहे थे कि रातभर शान्ति पूर्वक सोनेको मिलेगा। पर सोना कहा बदा था। प्राय सभी बड़े बड़े स्टेशनोंपर भारी जमात हम लोगोंके स्वागतके लिये उपस्थित थी। बारह बजे रातको हम लोग जोलारपेट पहुंचे। वहां गाड़ी प्राय ४० मिनिट तक ठहरती थी। वह ४० मिनिट इतना भयङ्कर था कि नहीं कहा जा सकता। मौलाना शौकत अलीने उन लोगोंसे चले जानेके लिये कहा। पर मौलाना साहब जितना अधिक समझाते थे वे उतना ही अधिक मौलाना शौकत अलीकी जै चिल्लाते थे। वे लोग समझते थे कि

मौलाना साहब जो कुछ कह रहे हैं वास्तवमें उनकी वही मन
नहीं है। वे लोग प्रायः बीस मील चल कर आये थे। इस
प्रतीक्षामें वे लोग वहां घण्टोंसे खडे थे। इसलिये उन्हें सन्तो
कर लेना कठिन था। मौलाना साहब हताश होकर चुप हो
गये और आकर लेट रहे। पर जनता उनके दर्शनोंकी इतनी भूख
थी कि वह गाडीके पावदान पर चढ गई और खिड़कीमें झांक
लगी। हम लोगोंने रोशनी बुझा दी थी। इसपर व लो
लालटेन लेकर आये। अन्तमें मैंने सोचा कि मैं कोशिश करके
देखूं, शायद मेरे समझानेसे मान जाय। मैं उठा और दर
वाज़ेके पास गया। मेरे दरवाजेके पास पहुंचते ही विजय
ध्वनि सुनाई दी। आवाज़ इतनी भीषण थी कि मैं घबर
गया। मैं एक तो यक दमसे थक गया था, दूसरे मेरी
प्रार्थनाये भी सब बेकार थी। वे लोग एक क्षणके लिये चुप
हो जाते और पुन शोर गुल आरम्भ करते। लाचार मैंने खिडकी
बन्द कर दी। पर इस तरह भीड हताश होनेवाली नहीं थी
उन्होंने बाहरसे खिडकी खोलना आरम्भ किया। वे लोग दोनों
व्यक्तियोंका दर्शन करना चाहते थे। इस तरह यह संग्राम जारी
रहा। अन्तमें मेरे पुत्रने चेष्टा करनी चाही। उसने उनसे
लगातार प्रार्थना की और समझाया कि अन्य यात्रियोंके
सुखदु खका आपको ध्यान रखना चाहिये। इसका कुछ असर
पडा और शोरगुल कुछ कम हुई पर लोगोंका झांकना बन्द न
हुआ। यह तो अन्तिम क्षणतक जारी रहा। मैं इस बातको

स्वीकार करता हू कि उनकी मशा अच्छी थी। अगाध प्रेमके वशीभूत होकर ही उन्होंने ऐसा किया था, पर अनुमान कीजिये कि यह कैसा क्रूर था, कितना विचारशून्य था। इस भीड़को जरा भी विचार नहीं था अर्थात् यह पूर्णतया विचारशून्य थी। उनके बीचमें एक भी ऐसा बुद्धिमान आदमी नहीं था जिसका कुछ प्रभाव पड़ सकता हो और यही कारण था कि कोई किसीकी परवा नहीं करता था।

इसलिये वास्तविक उन्नतिके मार्गपर आगे बढ़नेके पहले हम लोगोंको उचित है कि हम लोग इनको शिक्षित करें। इनका हृदय उदारता पूर्ण है देशप्रेमका अखिल भण्डार है, और शिक्षित होना तथा समझना भी चाहते हैं। आवश्यकता है चन्द बुद्धिमान, त्यागी, उदार और सच्चे स्थानीय कार्यकर्ताओंकी। यदि इसका समुचित प्रबन्ध हो जाय तो समस्त जनता पूर्ण योग्यताके साथ काम कर सकती है। इस तरह इस उत्तेजित भीड़की शासनसे प्रजासत्ताकी सहजमें स्थापना हो सकती है। राष्ट्रीय इस असहयोगके लिये इस तरहका विकास सबसे आवश्यक है।



संयुक्त प्रान्तके किसानोंको सन्देश

(मई ६, १९२१)

[अवधमें दौरा करते समय महात्माजीने संयुक्त प्रान्तके किसानोंको निम्नलिखित सदेश दिया था। किसान सभाके सभापति पण्डित मोतीलाल नेहरूने इस सन्देशोकी हजारों प्रतिया बटवाई थीं ।]

जबतक निम्नलिखित नियमोंका पालन नहीं किया जाता, स्वराज्यकी प्राप्ति अथवा अत्याचारोंका प्रतीकार नहीं हो सकता ।

१—हमें किसीको कष्ट नहीं देना चाहिये । अपनी लाठियों-का प्रयोग हमें कभी नहीं करना चाहिये। हमें न तो गाली देना चाहिये और न किसी तरहका दबाव डालना चाहिये ।

२—हमें दूकानोंको कभी नहीं लूटना चाहिये ।

३—हमें दया दिखलाकर अपने शत्रुओंको जीतना चाहिये। इसके लिये न तो हमें उनपर बलात्कार करना चाहिये और न उनका सामाजिक बहिष्कार करना चाहिये जैसे कूपसे पानी नहीं भरने देना, हजामोंको बाल बनानेसे रोक देना, धोबियोंको कपड़ा धोनेके लिये मना कर देना ।

४—हमें न तो सरकारी मालगुजारी और न जमींदारका लगान रोकना चाहिये ।

५—यदि जमींदारके खिलाफ किसी तरहकी शिकायत है तो उसकी सूचना पण्डित मोतीलालजी नेहरू सभापति किसान सभाको दी जानी चाहिये और उनकी आज्ञाओंका पालन किया जाना चाहिये।

६—इस बातका सदा स्मरण रखना चाहिये कि हम लोग जमींदारोंको भी अपना मित्र बना लेना चाहते हैं।

७—इस समय अभी हम लोग सविनय अवज्ञा नहीं चला रहे हैं। इस लिये हमें प्रत्येक सरकारी आज्ञाका पालन करना चाहिये।

८—न तो हमें रेलगाडियोंको रोकना चाहिये और न बिना टिकटके उनमें ज़बर्दस्ती घुस जाना चाहिये।

९—यदि हम लोगोंका कोई नेता गिरफ्तार होता हो तो हमें इसकी गिरफ्तारी न तो रोकनी चाहिये और न उसके गिरफ्तार हो जाने पर किसी तरहका उपद्रव मचाना चाहिये।

१०—हमें नशेकी वस्तुओंका त्याग करना चाहिये और बुरी आदतोंको छोड़ना चाहिये।

११—स्त्रियोंको अपनी मा और बहिन समझ कर उनकी रक्षाका समुचित प्रबन्ध करना चाहिये।

१२—हिन्दू और मुसलमानोंमें एकता तथा मेल स्थापित करनेका यत्न करना चाहिये।

१३—हिन्दुओंको आपसमें नीच ऊंचका विचार नहीं रखना चाहिये। हमें सबको बराबर मानना चाहिये और भाई भाईकी

तरह रहना तथा व्यवहार करना चाहिये। भारतके प्रत्येक निवासीको हमें अपना भाई या बहन समझना चाहिये।

१४—हम लोगोंको जुआ हरगिज नहीं खेलना चाहिये।

१५—हमें कभी भी चोरी नहीं करना चाहिये।

१६—किसी भी अवस्थामें हमें झूठ नहीं बोलना चाहिये हमें प्रत्येक काममें सचाईसेही चलना चाहिये।

१७—हमें घर घरमें चरखेका प्रचार करना चाहिये। प्रत्येक नर नारीको फालतू समय चरखा कातनेमें बिताना चाहिये। लड़कोंको भी चरखा कातना सिखाना चाहिये और उनसे भी कमसे कम ½ घण्टा प्रतिदिन चरखा कताना चाहिये।

१८—हमें हर तरहका विदेशी वस्त्र छोड़ देना चाहिये और हाथके कते सूतसे जुलाहोंसे कपड़े बिनवाकर पहनना चाहिये।

१९—हमें अदालतोंमें नहीं जाना चाहिये। हमें अपने सभी अभियोगोंका विचार पञ्चायती अदालतों द्वारा करा लेना चाहिये।

सबसे आवश्यक जानने और समझने योग्य बात यह है कि क्रोधको दबाना, और कभी हिंसाका भाव नहीं लाना और यदि कोई कष्ट दे तो उसे सह लेना चाहिये।

जमींदार तथा रैयत

(मई १८, १९२१)

एक तरफ तो संयुक्त प्रान्तकी सरकार अपनी सीमाका उल्लङ्घन कर रही है और लोगोंको हर तरहसे सता रही है, और दूसरी ओर प्रजा अपने नये शस्त्रका पूर्णतया प्रयोग कर रही है। समाचार मिला है कि कितनी जमींदारियोंमें तो वे सीमाको लांघ गये हैं, कानूनके स्वयं विधायक बन गये हैं और जो लोग उनके मुआफिक काम नहीं करते उन्हें तङ्ग करते हैं। सामाजिक बहिष्कारका वे पूरी तरहसे प्रयोग कर रहे हैं और उसके द्वारा वे लोग हिंसा तक कर रहे हैं। समाचार मिला है कि उन्होंने कुओंमेंसे पानी खींचना बन्द कर दिया है, हजामोंको हजामत करनेसे रोक दिया है तथा लगान तक देना बन्द कर दिया है। असहयोग आन्दोलनसे किसान सभाओंको उत्तेजना अवश्य मिली है पर वे इससे एकदम स्वतन्त्र हैं। जिस समय उपयुक्त अवसर आवेगा हमलोग रैयतोंसे लगान न देनेके लिये अवश्य कहेंगे पर इसका यह अभिप्राय नहीं है कि असहयोग आन्दोलनके किसी भी अवस्थामें रैयत मालगुजारीका देना बन्द कर दें और इस तरह जमींदारोंको मालगुजारीसे वञ्चित करें। किसान आन्दोलन द्वारा किसानोंकी दशा सुधारनेकी

चेष्टा करनी चाहिये तथा जमींदार और रैयतोंका सम्बन्ध ठोक करना चाहिये। किसानोंको बतलाना चाहिये कि उन्होंने जमींदारोंके साथ जो शर्तें कर ली हैं उनका उन्हें पूरी तरहसे पालन करना चाहिये चाहे वे शर्तें लिखी हो या परम्परासे चली आती हों। जहा कही लिखित शर्तें या प्रचलित प्रथायें बुरी हों वहा भी उन्हें उसके दूर करनेके लिये हिंसासे काम नही लेना चाहिये उचित यही है कि प्रत्येक जमींदारोंसे समझौता करके ही निपटारा करना चाहिये। बीचमें जो झगडे उत्पन्न हो जाय उनके, सरकारकी किसी तरहकी सहायता विना, निपटाराकी योग्यताही हमें पूर्ण स्वराज्यके योग्य साबित कर सकती है।

सामाजिक वहिष्कार

(दिसम्बर ८, १९२१)

सामाजिक वहिष्कारके सम्बन्धमें हैदराबादसे एक सवाददाताने एक पत्र लिखा है। इस पत्रमें उसने उन्हीं बातोंका उल्लेख किया है जो मिस्टर खापर्डेके साथ हुआ था। हैदराबाद (सिन्ध) से अमरावती बहुत दूर है। मुझे विश्वास नहीं होता कि मिस्टर खापर्डेको वे सब असुविधायें भुगतनी पडी थीं जिनका लेखनने उल्लेख किया है। मिस्टर खापर्डे अपनी सम्हाल आप स्वय कर सकते हैं। मेरी समझमें उनके सम्बन्धमें जो

जमींदार तथा रैयत

(मई १८, १९२१)

' एक तरफ तो संयुक्त प्रान्तकी सरकार अपनी सीमाका उल्लङ्घन कर रही है और लोगोंको हर तरहसे सता रही है और दूसरी ओर प्रजा अपने नये शस्त्रका पूर्णतया प्रयोग कर रही है। समाचार मिला है कि कितनी जमींदारियोंमें तो सीमाको लाघ गये हैं, कानूनके स्वयं विधायक बन गये हैं और जो लोग उनके मुआफिक काम नहीं करते उन्हें तङ्ग करते हैं। सामाजिक बहिष्कारका वे पूरी तरहसे प्रयोग कर रहे हैं और उसके द्वारा वे लोग हिंसा तक कर रहे हैं। समाचार मिला है कि उन्होंने कुंओंमेंसे पानी खींचना बन्द कर दिया है, हजामोंको हजामत करनेसे रोक दिया है तथा लगान तक देना बन्द कर दिया है। असहयोग आन्दोलनसे किसान सभाओंको उत्तेजना अवश्य मिली है पर वे इससे एकदम स्वतन्त्र हैं। जिस समय उपयुक्त अवसर आवेगा हमलोग रैयतोंसे लगान न देनेके लिये अवश्य कहेंगे पर इसका यह अभिप्राय नहीं है कि असहयोग आन्दोलनके किसी भी अवस्थामें रैयत मालगुजारीका देना बन्द कर दें और इस तरह जमींदारोंको मालगुजारीसे वञ्चित करें। किसान आन्दोलन द्वारा किसानोंकी दशा सुधारनेकी

चेष्टा करनी चाहिये तथा जमींदार और रैयतोंका सम्बन्ध ठीक करना चाहिये। किसानोंको बतलाना चाहिये कि उन्होंने जमींदारोंके साथ जो शर्तें कर ली हैं उनका उन्हें पूरी तरहसे पालन करना चाहिये चाहे वे शर्तें लिखी हों या परम्परासे चली आती हों। जहा कहीं लिखित शर्तें या प्रचलित प्रथायें बुरी हों वहा भी उन्हें उसके दूर करनेके लिये हिंसासे काम नही लेना चाहिये उचित यही है कि प्रत्येक जमींदारोंसे समझौता करके ही निपटारा करना चाहिये। बीचमें जो झगडे उत्पन्न हो जाय उनके, सरकारकी किसी तरहकी सहायता विना, निपटाराकी योग्यताही हमें पूर्ण स्वराज्यके योग्य साबित कर सकती है।

सामाजिक वहिष्कार

(दिसम्बर ८, १९२१)

सामाजिक वहिष्कारके सम्बन्धमें हैदराबादसे एक सवाददाताने एक पत्र लिखा है। इस पत्रमें उसने उन्हीं बातोंका उल्लेख किया है जो मिस्टर खापर्डेके साथ हुआ था। हैदराबाद (सिन्ध) से अमरावती बहुत दूर है। मुझे विश्वास नहीं होता कि मिस्टर खापर्डेको वे सब असुविधायें भुगतनी पड़ी थीं जिनका लेखकने उल्लेख किया है। मिस्टर खापर्डे अपनी सम्हाल आप स्वय कर सकते हैं। मेरी समझमें उनके सम्बन्धमें जो

चलाये जायगे तो उनसे इस आन्दोलनपर क्षति पहुंचनेकी पूर्ण सम्भावना है। सामाजिक वहिष्कार तभी सम्भव हो सकता है, जब उसका प्रयोग बतौर दण्डके नहीं होता बल्कि जिसके साथ इसका प्रयोग किया जाता है उसकी तालीमके लिये होता है। इसके साथ ही साथ असहयोग कार्यक्रममें वहिष्कारका प्रयोग मनुष्यताके खिलाफ नहीं होना चाहिये। सभ्यताका सदा ध्यान रखना चाहिये। यदि इससे उस व्यक्तिको कष्ट हो जिसके प्रति इसका प्रयोग किया जाता है तो प्रयोग करने वालेको भी इस दुःखको समझना चाहिये। झांसीका समाचार है कि किसी बीमारको वैद्यकी सहायतासे ही लोगोंने वञ्चित कर दिया। इस तरहका वहिष्कार तो बड़ा ही हेय है क्योंकि इसमें प्राण लेनेकी प्रत्यक्ष चेष्टा झलकती है। मेरी समझ में किसीकी हत्या करनेमें तथा किसी मरते हुएकी सहायता करनेसे वैद्यको रोक देनेमें कोई अन्तर या भेद नहीं है। इस तरहकी कड़ाई तो सांग्रामिक नियममें भी नहीं है। साग्रामिक नियम भी पीडित शत्रु के लिये दवा आदिकी व्यवस्था करता है। मान लीजिये कि किसी गावमें एक ही कुआ है और यदि किसीको उसके प्रयोगसे रोक दिया जाय तो उसका क्या अभिप्राय निकला। यही कि उसे वह गांव छोड़कर कहीं अन्यत्र जाकर बसना चाहिये। जिन लोगोंसे असहयोगियोंका मतभेद है, जो लोग किसी बातको उसी दृष्टिसे नहीं देखते जिस दृष्टिसे एक असहयोगी देखता है तो इसको यह तात्पर्य नहीं है कि

असहयोगीको उसके साथ इस कड़ाईके साथ व्यवहार करना चाहिये। इस बातपर मैं सदासे जोर दे आया हूं कि अधीरता और असहनशीलता इस आन्दोलनका घातक है। बलात्कार या जबर्दस्तीसे हम किसीकी आत्माको शुद्ध नहीं कर सकते। इसी तरह अपनी बात स्वीकार करानेके लिये हम उनपर बल प्रयोग भी नहीं कर सकते। जिस स्वाधीनताके लिये हमलोग अनवरत प्रयत्न कर रहे हैं उसके भावके यह सर्वथा विरुद्ध है।

यह निस्सन्देह है कि हमलोगोंके मार्गमें अनेक तरहकी बाधायें हैं। पर यदि कोई मुदालेह पञ्चायती अदालतोंको स्वीकार कर लेनेके बाद उसके फैसलेको स्वीकार करना नहीं चाहे तो उसके साथ सामाजिक बहिष्कारके शस्त्रका प्रयोग आवश्यक है। पर यह बात सहजमें ही समझमें आ जायगी कि सामाजिक बहिष्कारका शस्त्र आपत्तियोंसे भरा है क्योंकि इसका प्रभाव पञ्चायती अदालतोंपर भी बुरा पड़ता है। पंचायती अदालतें केवल असहयोगके मार्गमें ही सहायक नहीं हैं बल्कि इनसे देशका भी असीम कल्याण है। पंचायती अदालतोंकी पूर्ण स्वीकृतिके लिये समयकी आवश्यकता है। इसकी सादगी और किफायतसारीके कारण ही कितने लोग इसे नहीं स्वीकार करेंगे जैसे मसालेदार और चटपट खानेके खानेवाले सादा भोजन नहीं पसन्द करते। पंचायती अदालतोंके निर्णयपर अनेक तरहकी आशङ्कायें की जायगी और

सभी निर्णय इस तरहकी अशङ्काओंसे रहित हो भी नहीं सकते। इसलिये हमें इस आन्दोलनकी आन्तरिक उपयोगिता-पर ध्यान देना चाहिये और पंचायती अदालतोंके निर्णयपर जोर देना चाहिये।

यदि हमलोग सरकारी अदलतोंका पूर्णतया वहिष्कार करना चाहते हैं तो इसके लिये अधिकाधिक चेष्टा करनेकी आवश्यकता है। केवल इसीसे ही स्वराज्यकी स्थापना हो सकती है। पर यह कभी भी आशा नहीं की जाती कि हम असह-योगके किसी एकही कार्यक्रमको पूर्ण करेंगे। सार्वजनिक मतका विकास इतना तो अवश्य हो गया है कि सरकारी अदालतोंको स्वतन्त्रता या मुक्तिका मार्ग न समझकर लोग इसे दासता या गुलामीका मार्ग समझने लग गये हैं। इस समय वकालत करनेवाले वकीलोंको जनताका प्रतिनिधि बनना कठिन हो गया है।

असहयोग आन्दोलनने सरकारी अदालतोंकी प्रतिष्ठा एक दमसे गायब कर दी है। उतने हद तक सरकारकी भी प्रतिष्ठा लुप्त हो गई। अदालतोंके वहिष्कारका कार्य धीरे धीरे चल रहा है। यदि इसको शीघ्र सफलताकी आशासे बल प्रयोग किया गया या हिंसासे काम लिया गया तो इसका प्रभाव घट जायगा। यह सरकार इस आन्दोलनको रोकने और बन्द कर-नेके लिये अन्तिम दर्जे तक बल प्रयोगके लिये तैयार है और हिंसाकी प्रवृत्तिका वह आसानीसे दमन कर सकती है पर

अहिंसाके प्रबल पराक्रमको दबानेका उसमें लेशमात्रकी ताक नहीं है। यदि तीस करोड़ जनता एकत्र होकर अपनी रा प्रगट करती है और उसके लिये हर तरहकी तपस्या या यातन सहनेके लिये तैयार रहती है तो ये मुट्ठीभर अंग्रेज उन्हें किस भी तरह दबा नहीं सकते।

इसलिये असहयोगी कार्यकर्ताओंको सामाजिक बहिष्कारके इस मायाजालसे अपनेको बचाते रहना चाहिये। पर इनके माने यह नहीं है यदि सामाजिक बहिष्कारका प्रयोग न किया जाय तो सामाजिक मेल जोल ही रखा जाय। जो व्यक्ति जन समूहकी बातोंको नहीं मानता उसके साथ सामाजिक सबध नहीं रखना चाहिये और वह उनका अधिकारी भी नहीं है। उसके काममें हमें भाग नहीं लेना चाहिये, उसके विवाह शादीमें हमें शरीक नहीं होना चाहिये और उसके उपहार आदिको हमें स्वीकार नहीं करना चाहिये। पर हमें सामाजिक सेवासे मुह नहीं मोड़ना चाहिये, क्योंकि यह कर्तव्य है। दावत आदिमें शामिल होना एक तरहका अधिकार है जिसे हम इन्कार कर सकते हैं। पर कभी कभी आवश्यकता पड़नेपर हमें इस शस्त्रका प्रयोग दूसरी तरफ करनेको भी भूल करनेमें कोई हर्ज नहीं है अर्थात् अत्यन्त आवश्यकता पड़नेपर भी हम कर्तव्यमें ही बहिष्कारकी योजना कर सकते हैं। चाहे किसी भी तरफ क्यों न हो प्रयोक्ताको बहिष्कारका शस्त्र अपनी ही जिम्मेदारीपर प्रयोग करना पड़ेगा। इसका

प्रयोग किसी भी अवस्थामें कर्तव्य नहीं कहा जा सकता
यदि इसके प्रयोगसे किसी तरहकी बाधा असहयोग आन्दोलनके
ऊपर पड़नेवाली हो तो उसका प्रयोग किसीको नहीं करना
चाहिये।

एक बुराई

(मई ४, १९२१)

मालेगावके सम्बन्धमें समाचारपत्रोंमें जो समाचार निकले हैं यदि वे सही हैं तो मुझे यही कहना पड़ेगा कि वहांके असहयोगियोंने अपने आदर्श, अपने धर्म, अपने विश्वास तथा अपने देशको धोखा दिया। उन्होंने तरक्कीमें बाधा पहुंचायी है। असहयोगकी जड़में अहिंसारूपी फफूंद भरकर उसे दृढ़ तथा मजबूत किया जा रहा है। उसे निकाल लीजिये फिर इस तरहका त्याग बेकार है, क्योंकि बनावटी फल केवल देखनेके योग्य होता है खानेके योग्य नहीं होता। यदि समाचारपत्रोंका संवाद सही है तो इससे स्पष्ट प्रगट होता है कि उन आदमियोंकी हत्या जो कि अपना काम कर रहे थे, जान बूझकर की गयी थी। पर इस तरहका आक्रमण कायरता पूर्ण है। चन्द आदमियोंने जानबूझ कर कानून तोड़ा और सबको दण्डका भागी बनाया।

इस तरहके दण्डोंके लिये किसी तरहका असन्तोष नहीं प्रगट किया जा सकता। जो लोग मालेगावकी दुर्घटनाका अनुकरण करनेका साहस करते हैं वे सरकारके कट्टर अनुयायी हैं। सरकार यदि चन्द अफसरोंके प्राणकी आहुति करके असहयोग आन्दोलनको कुचल सकती है तो वह इसके लिये तैयार है। यदि इस तरहकी दो चार और हत्यायें हो जाय तो जनताका विश्वास हमारे आन्दोलनसे अवश्य उठ जायगा। हमें पक्का विश्वास है कि इस तरहकी हिंसाको जन समूह कभी भी पसन्द नही करेगा। वे शान्त प्रकृतिके जीव हैं और उन्होंने असहयोग आन्दोलनको इसलिये स्वीकार किया है कि वह हर तरहसे अहिंसात्मक है। इसलिये हमें क्या करना चाहिये। बाहर और भीतर हमें हर समय और हर स्थानपर अहिंसाकी शिक्षा देनी चाहिये। बुराई करनेवालोंके साथ हमें किसी तरहसे सहानुभूति नहीं रखनी चाहिये। जिन लोगोंने इस हत्यामें भाग लिया है यदि उन्हें इसके लिये जरा भी पश्चात्ताप है तो उन्हे उचित है कि वे अपनेको सरकारी अधिकारियोंके हाथमें सौंप दें। काम करनेवालोंको अपनी जबान पर भी पूरा अधिकार रखना चाहिये। उन्हें सरकारी कर्मचारियोंकी निन्दा नहीं करनी चाहिये, चाहे वे अंग्रेज हों या हिन्दुस्तानी, क्योंकि इस तरहकी बातोंसे राष्ट्रके सामने जो रचनात्मक कार्य रखा गया है उसमें बाधा उपस्थित होती है। यदि हम-लोगोंकी मांगे पूरी नहीं होती तो हमें धैर्यधारण करना चाहिये। पुलिस

की प्रत्येक आज्ञाका पूर्णतः पालन होना चाहिये। किसी भी कार्यकर्त्ता या नेताके पकड़े जाने या दण्डित होनेपर किसी तरहकी हड़ताल नहीं होनी चाहिये। यदि हम लोग निर्दोषोंके दण्डका स्वागत करते हैं और यह आवश्यक है, तो हमें निर्दोष बनना चाहिये और यदि हमलोग किसी निर्दिष्ट मतके धारण करनेके लिये अथवा उस कामके करनेके लिये जिस मतका धारण करना या जो काम करना हम अपना कर्तव्य समझते हैं, उदाहरणार्थ चरखा कातना, तिलक स्वराज्य कोषके लिये चन्दा संग्रह करना तथा कांग्रेसका सदस्य बनाना—दण्डित हों तो हमें हर्ष मनाना चाहिये और अपनेको भाग्यवान समझना चाहिये। सविनय अवज्ञा अभी नहीं होनी चाहिये। हमलोगोंने प्रतिज्ञा की है कि घोरतम उत्तेजनापर भी हम शान्ति भंग नहीं करेंगे। इसलिये हमें सावधान होना चाहिये नहीं तो अपनी भूलके कारण हम अपने विजयको पराजयमें परिणत कर देंगे। टाइम्स आफ इण्डिया पत्रने जो कुछ लिखा है उससे मैं पूर्णतया सहमत हूं। उसने लिखा है कि इस तरहका आन्दोलन, जिसकी सारी शक्ति आत्मबल पर है, उसकी उपयोगिता केवल मात्र उसके अनुयायियोंकी सचाईपर अवलम्बित है। यदि एक बार भी उस सचाईपर काला धब्बा लग गया या किसी तरहकी आशंका उत्पन्न हो गई तो फिर इसके बाद हमारे बीचमें वे ही शक्तियां दिखलाई देंगी जो इसकी विनाश करनेवाली होगी।

मालेगांवकी बदचलनी

(मई ११, १९२०)

मैं देख रहा हूं कि मालेगांवके असहयोगियोंकी ज्यादतियोंको छिपानेकी कड़ी चेष्टा की जा रही है। चाहे सबइन्स्पेक्टरने उन्हें उत्तेजित करनेकी कितनी भी चेष्टा क्यों न की हो पर असहयोगियोंको इस तरहकी कार्रवाई किसी भी अवस्थामें नहीं करनी थी। मैं उनके व्यवहारकी आलोचना कानूनकी दृष्टिसे नहीं कर रहा हूं। मैं उनकी जांच इस हैसियतसे कर रहा हूं कि वे असहयोगी हैं। जो प्रतिज्ञा उन्होंने की है, उसके अन्तर्गत उन्हें उत्तेजित होनेकी जरा भी गुञ्जायश नहीं है चाहे उन्हें उत्तेजित करनेकी कितनी भी चेष्टा न की जाय। सरदार लक्ष्मण सिंह, दलीपसिंह तथा उनके दलका उदाहरण हम लोगोंके सामने है। यदि हम लोग सच्चे असहयोगी हैं तो हमें मर-मिटनेकी वही योग्यता प्राप्त करनी चाहिये जो उनमें थी। यदि मालेगावके असहयोगियोंने असीम वीरताका परिचय देते हुए बिना किसी कारणके आज प्राण त्याग करके अहिंसाका उदाहरण दिया होता, तो मैं उनकी त्यागका हृदयसे प्रशंसा करता। उस दिन भारतका भविष्य और भी उज्वल दिखाई देता। जो कुछ हुआ उसीके अनुसार यह प्रश्न उठता है कि उत्तेजनाका कारण सबसे पहले किसकी

ओरसे उपस्थित हुआ। क्या उन्होंने पुलिसको डराने और धमकानेकी चेष्टा की थी या नहीं? इस तरहके आचरणोंसे स्पष्ट है कि जब हम गिरफ्तार हो जाते हैं तो दण्ड पानेसे बचनेके लिये इस तरहकी कार्रवाई कर बैठते हैं। हम लोगोंने अपने आचरणकी आचकी एक माप बना ली है और हमें उसीके अनुसार चलना चाहिये। जो कुछ समाचार इस समय विदित हो सके हैं उनसे मैं यही मत स्थिर करता हूं कि मालेगावके असहयोगियोंने अहिंसात्मक असहयोगका पूर्णत पालन न करके विश्वास भङ्ग किया। और इस तरह नियम तोडनेका कडा अपराध किया। मैं जनतासे इस बातके लिये सविनय अनुरोध करता हूं कि चाहे उनका नेता कितना भी प्रिय, कैसा भी निर्दोष क्यों न हो पर जब वह गिरफ्तार हो जाता है तो किसी तरहका समारोह नहीं करना चाहिये। यदि इस आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण आज मेरी या मौलाना शौकत अलीकी गिरफ्तारी हो गई और जनताने इसके कारण हडताल कर दी या सभायें करना आरम्भ कर दीं तो हम लोग इससे अपनी मर्यादाकी बढती नहीं समझेंगे। इस तरहके प्रत्येक अवसर पर मैं तो यही आशा करूँगा कि लोग हजारों और लाखोंकी संख्यामें कांग्रेसका सदस्य होनेके लिये दौड पडेंगे, विदेशी वस्त्रोंका पूर्णतया परित्याग करेंगे, चरखेके प्रति और भी अधिक उत्साह दिखलावेंगे, तिलक स्वराज्य कोषके लिये चन्दा देने तथा संग्रह करनेमें और भी तत्पर हो जायंगे। साथ ही मैं यह भी आशा करता हूं कि सरकारी

स्कूल और कालेज खाली कर दिये जायगे और अधिक संख्यामें वकील अदालतोंका वहिष्कार करेंगे। पर इसके प्रतिकूल यदि अधिकारियोंकी हत्याकी चेष्टा की गई और मकानात जला दिये गये तो केवल स्वराज्यकी प्राप्ति, खिलाफतके साथ न्याय कराना और पञ्जावके अत्याचारोंका प्रतिकार करानेमें वाधा ही नहीं उपस्थित होगी वल्कि असहयोग आन्दोलनका काम ही एकदमसे बन्द हो जायगा। और इससे राष्ट्रका पतन अवश्यम्भावी है। इसलिये हमें सदा उन अवस्थाओंको बचाते रहना चाहिये जहां इस वातकी सम्भावना हो कि जनसमूह उत्तेजित हो उठेगा और अनाचार करने पर तुल जायगा।

समारोह

(अगस्त ११ १९२१)

यह सहजमें समझमें नहीं आता कि अलीगढ तथा मालेगाव में इस तरहकी दुर्घटना किस तरह हो गई। इस तरहकी जनता उपस्थित हो गई थी जिसे कुछ भी तालीम नहीं था। इस तरहकी जमातमें दुष्टोंकी कमी नहीं रहती जो उपद्रव आरम्भ करनेका अवसर ढूढा करते हैं। और जब भीड उत्तेजित हो जाती है तो वह सम्भाल खो बैठती है और आपेसे वाहर हो जाती है। इसलिये असहयोगियोंके अभियोगोंके विचारके समय यदि हम

ऐसे लोगोंकी जमात इकट्ठा कर देते हैं जिस पर हम अधिकार नहीं रख सकते तो इससे हम अपने शत्रु के मनकी करते हैं और उनका शिकार बन जाते हैं। हम लोगोंकी तैयारी है शान्तिमय अहिंसात्मक दृढ़ असहयोगकी स्थापनाकी। यदि किसी तालीम शुदा सिपाहीने अचानक एक गोली दाग दी तो हमारी सारी दृढ़ता चली जाती है। इसलिये हमें राजनैतिक कैदियोंके अभियोगों पर समारोह करना अथवा भीड़ इकट्ठी करना छोड़ देना चाहिये। जिस किसीको सरकार हमारे बीचसे उठाकर अपने अधिकारमें रखना चाहती है उसे हमें बिना किसी ख्यालके चले जाने देना चाहिये। जिस दिन हममें आत्मसंयमकी पर्याप्त मात्रा आ जायगी, उसी दिन हम सविनय अवज्ञाके लिये तैयार हो जायंगे और फिर तो स्वराज्य हमारे बायें हाथका खेल हो जायगा। यह आत्मसंयम केवल स्वदेशीके द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार और आवश्यकता भर खादी तैयार करनेके लिये पूर्ण प्रयत्नके द्वारा जो आत्म विश्वास उत्पन्न हो सकता है वह किसी अन्य किसी तरह नहीं प्राप्त हो सकता।

हमारी अयोग्यतायें

(जून २२, १९२१)

एक तरफ तो डाक्टर पुलिनकी आलोचना है जिससे सिवा उत्तेजना और क्षोभके कोई अन्य प्रकारका लाभ नहीं हो सकता और दूसरी ओर एक अन्य अंग्रेजका पत्र है जिसने "जानबुल" के नामसे भेजा है। उनके आक्षेप विचारपूर्ण और सहायता देनेवाले हैं। उन्होंने अपने पत्रमें लिखा है —

मैं एक अंग्रेजकी हैसियतसे आपके जीवनकी घटनाओं तथा व्यवहारोंपर दो शब्द लिखना चाहता हूं। आशा है कि आप इसके लिये मुझे क्षमा करेंगे। लार्ड रेडिङ्गके भाषण पर यङ्ग इण्डियामें आपने जो कटाक्ष किया है उसीसे मैंने यह लिखनेका साहस किया है। मुझे प्रतीत होता है कि साधारण सत्यको समझने और पहचाननेकी आपमें जितनी योग्यता है उतनी और किसीमें नहीं है। आपको भारतवासियोंके सकटोंकी जड इसी बातमें दिखलाई देती है कि भारतमें रहनेवाला प्रत्येक अंगरेज भारतवासियोंको नीची निगाहसे देखता है।" मैं भी इस बातको स्वीकार करता हूं। पर इस सम्बन्धमें आपको दो बातो पर विचार करना चाहिये। पहले तो इस बातपर कि यह किसका दोष है और दूसरे इसका सुधार कैसे हो सकता है।

क्या भारतके अंग्रेज भारतीय जन समूहोंको अपनी जातिसे हीन या नीच समझकर अपनी किसी तरहकी सहायता कर सकते हैं ? इन लोगोंमें जो व्यक्ति वस्तुत यथार्थ दृष्टिसे देखना चाहते हैं हम लोग देखते हैं कि एक भारतीय नौकर एक अंग्रेज नौकरसे कहीं हीन है। उसको अपनी जिम्मेदारीकी उतनी परवा नहीं रहती। वह अधिक छुट्टिया चाहता है और साथ ही उसपर निगरानी रखनेकी आवश्यकता रखनी पडती है। मालिक-की हैसियनसे भी यह अङ्गरेजोंसे हीन ही है। उसमें न्याय प्रियता और उदारताकीमात्रा कम होती है। जीवकी हैसि-यतसे भी हम उसे अङ्गरेजसे हीन ही पाते हैं। वह सदा बी-मारियोंका शिकार बना रहता है। यदि अमीर या धनी है तो वह शारीरिक परिश्रमसे घृणा करता है, कसरत भी नहीं क-रता, और बहुत जल्द ही गल पचकर बुड्ढा हो जाता है। पताही नहीं लगता कि उसको जवानी कब आई। उसके ल-डके ढेरके ढेर मृत्युके गोदमें सो जाते हैं। मद्रास प्रांतकी हालत मुझे अच्छी तरह विदित है यहा बालकोंकी को मृत्यु-सख्या जनसख्याकी ठीक आधी है। नागरिककी हैसियतसेभी वह हीन है। घूस आदि देनेका शायद ही कभी विरोध करता है। वह अपने मनुष्यताके लिये डींग मारता है क्योंकि जीव हत्या वह पाप समझता है। और वह गौओंको भी भूखों मर-नेके लिये छोड देता है। भारतमें घोडों तथा बैलोंके साथ जो अत्याचार होता है उस तरहका अत्याचार और किसी देशमें

देखनेमें नहीं आता। रक्तकी पवित्रताका इतना अधिक ख्याल है कि उसने बाल विवाहकी तथा विधवा विवाह निषेधकी प्रथा निकाली है। पर इतने परभी चमड़ेकी बीमारियां (गरमी और सुजाक) भारतमें जितनी अधिक है शायद इङ्गलैण्ड में भी उतनी अधिक नहीं होगी और धर्मके नामपर ही छोटी २ अबोध बालिकायें वेश्यायें बननेके लिये छोड़ दी जाती हैं। क्या भारतके निवसी एक भी उदाहरण ऐसा पेश कर सकते हैं -जिसमें एक भी भारतके निवासी किसी गैरभारतीय-की निःस्वार्थ सेवा करते दिखायी देते हैं। जैसे आजकल अनेकों अङ्गरेज कर रहे हैं। जिनमेंसे एकाध तो शत्रु देशोंकी भी सेवा कर रहे हैं। मान लीजिये कि आज भारतमें पूर्ण स्वराज्यकी स्थापना हो गई और तब भारत पर किसी तरहकी आपत्ति आउपस्थित हुई तो क्या उसके ३३ करोड़ आदमियोंमेंसे ५ करोड़ भी अपने मनसे सेवामें नाम लिखानेके लिये तैयार होंगे।

तैतीस करोड़की आबादीमेंसे भारतने कितने नरपुंगव उत्पन्न किया है? केवल तीन—ठाकुर, बोस और गांधी ऐसे हैं जो अंगुली पर गिन लिये जा सकते हैं। महाराणी एलिजबेथके राज्यत्वकालमें इङ्गलैण्डकी आबादी वर्तमान मैसूर राज्यसे अधिक नहीं थी।

हमने ऊपर जिन बातोंका दिग्दर्शन कराया है वे आपको एक पक्षीय और गलत प्रतीत हो सकती हैं। कदाचित् संभव भी है।

आशा और प्रेमपर अवलम्बित है। बड़े बड़े राष्ट्रोंके निर्माणका यही आधार है। मेरी ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि भारत भी उन्हींमेंसे हो।"

इस पत्रको पढ़नेसे स्पष्ट मालूम होता है कि इस पत्रके लेखकने असहयोग आन्दोलनको समझनेकी चेष्टा की है। उनके आक्षेप सर्वथा निराधार नहीं हैं। पर उन्होंने जो अनुभव दिखलाया है वह अंग्रेजोंमें साधारण है। मेरी समझमें उनकी व्याख्या विचारने योग्य नहीं है। उनके अनुभवका आधार वे अल्पदल भारतीय हैं जो शिक्षाके वशवर्ती होकर अंग्रेजोंकी खुशामद करते रहते हैं। उन्हें जनताका सच्चा प्रतिनिधि नहीं कह सकते। मैंने दोनों जातियोंका पूरी तरहसे अध्ययन किया है। मुझे जो कुछ अनुभव हो सका है उससे मैं यही कह सकता हूं कि एकके मुकाबिले एक कोई भी भारतीय अंग्रेजोंसे किसी प्रकारसे हीन नहीं साबित हो सकता। जीवकी हैसियतसे हमलोग अंग्रेजोंसे हीन अवश्य हैं। पर इसका बहुत कुछ कारण भारतकी जलवायु है। हमलोग अपने यहांके पशुओंके प्रति जो उदासीनता और लापरवाही दिखाते हैं उसे भी किसी हद तक मानी जा सकती है। बड़े बड़े नगरोंके अतिरिक्त और भी कहीं हमलोगोंमें चमड़ेकी ये बीमारियां (गरमी, सुजाक) अन्य देशोंसे अधिक होती हैं, यह बात माननेके लिये मैं तैयार नहीं हूं। बालिकाओंको जिस अवस्थामें हम रखते हैं और वे जिस तरह वेश्यायें बन जाती हैं

भारतीय सदाचारपर भीषण कलंक है। यदि आज भारतकी दशा इङ्गलैण्डकीसी हो जाय और यदि अस्त्रशस्त्रमें भारतीयोंको भी उसी तरहकी शिक्षा और ट्रेनिङ्ग देना आरम्भ कर दिया जाय तो भारत जो उदाहरण उपस्थित करेगा वह संसारमें अद्वितीय होगा। पर हमारी सभ्यता अन्य जातियोंसे भिन्न है और मुझे पूरी आशा है कि हमलोग अन्त समयतक उस सभ्यताकी मर्यादाका पालन करते जायगे। भारतकी मानसिक स्थिति यौद्धिक नहीं है। यदि उसके शत्रु उसके साथ अन्याय भी कर रहे हों तोभी वह उस बातको पसन्द न करेगी कि उसकी सन्तान खाइयोंमें डेरा डालकर इश्वरकी रचनाका विध्वंस करे और अपने भाईका प्राण ले। भारतीय जनता—जिसमें भारतीय मुसलमान भी शामिल हैं—दूसरोंको पीड़ा देने और सतानेके बनिस्बत आप यातना सहने और तपस्या करनेकी अधिक योग्यता रखती है। इसी विश्वासके आधार पर मैंने उसके दुःखोंके निवारणका एकमात्र शस्त्र उन्हें असहयोग बतलाया है। भारतीय इसको अपनानेमें तत्परता दिखलाते हैं या नहीं यह तो भविष्यही बतलावेगा। यदि भारतीयोंने केवल प्रतिहिंसासे प्रेरित होकर इसे अपनाया है तो वह अवश्य असफल होगा। पर यदि इसे आत्मशुद्धि और तपस्याके भावसे अपनाया गया है—जैसा कि मेरा पूर्ण विश्वास है—तो इसकी सफलता अवश्यम्भावी है। भारतीय कायर नहीं हैं। इसका प्रमाण तो उनकी सग्राम प्रिय जातियोंने ही दे दिया है

चाहे वे हिंदू हों, मुसलमान हो, या सिक्ख हों या गुं
हों। मेरे कहनेका अभिप्राय यह है कि भारतीयोंके हृदय
साम्रामिक भावका होना स्वाभाविक नहीं है क्योंकि संसार
विकासमें उन्हें और भी प्रधान भाग लेना है। समय बतलावेग
कि उनके भाग्यमें क्या लिखा है।

पर "जानबुल" साहब मेरी इन बातोंको केवलमात्र बह ाना
बहस कह सकते हैं। पर मैंने तो इस तरहके आक्षेपोंको मित्रोंव
चेतावनी समझी है और सदा उसपर आचरण किया है।
"जानबुल"के इस कथनसे सहमत हूं कि मनुष्यको अपन
करनीसे प्रतिष्ठा और मर्यादा प्राप्त करनेकी चेष्टा करन
चाहिये न कि उसके अभावपर नाक भौंह सिकोडना चाहिये
यही कारण है कि भारतने असहयोग व्रत ग्रहण किया है
"जानबुल" को असहयोग शब्द पसन्द नहीं है। मैं इस शब्दक
आज ही छोड देनेके लिये तैयार हू यदि मुझे इससे अच्छा को
दूसरा शब्द मिल जाय। पर अभीतक तो मुझे केवल यह
एक शब्द मिला है जो मेरे अभिप्रायको पूर्णतया प्रगट करत
है। हमने आत्मिक सहयोग किया और अपनी आत्माक
गिराया। अब हम लोगोका धर्म है कि एक बात भी वैस
न करे। जो दोषारोपण किये जाते हैं उन्हें काटनेकी भी को
जरूरत नहीं है। "जानबुल" ने स्वयं इस बातको स्वीका
किया है कि अंग्रेज लोग भारतीयोंका जरा भी आदर नह
करते और यह बात एकदमसे सच है। इसलिये जबतक

हमलोग अपनेको बराबरीका न समझने लगे। हमें उनसे दूर ही रहना चाहिये।

पर "जानबुल"ने जो बातें कही हैं उनमें दूसरे पहलू भी हैं। उनकी बातोंसे साफ जाहिर होता है कि उनमें आत्मीय घृणाका भाव भरा है। हम मान लेते हैं कि हममें वे कमी हैं जिनका लेखकने उल्लेख किया है, तो क्या उनके कारण भारतीयोंको ठीक समझना और उन्हें नीची निगाहसे देखना उचित है। क्या समताका सिद्धान्त यह नहीं बतलाता कि यदि गुणोंमें समता न हो तो भी दो व्यक्तियोंको आपसमें बराबरीका भाव रखना चाहिये। क्या "जानबुल"ने वही भूल नहीं की है जो अनेक भारतीय अछूतोंके सम्बन्धमें करते हैं। यदि अछूतके इस भावको शैतानी कह सकते हैं तो क्या हम अंग्रेजोंकी श्रेष्ठताके इस भावको कम शैतानी कह सकते हैं? क्या अङ्गरेज लोग अपनी जातिके हीन भाइयोंके साथ उसी तरहका बर्ताव करते हैं जैसा वे भारतीयोंके साथ करते हैं। जिस तरह भारतीयोंने मान रखा है कि हिन्दू धर्मके अनुसार अछूत जातियां सदा पतित रहनेके लिये ही बनाई गई हैं उसी तरह क्या अंग्रेज जातिने भी यह भाव नहीं रखा है कि अंग्रेज भारतपर शासन करनेके लिये ही उत्पन्न हुए हैं और भारतीय उनके शासनको चुपचाप स्वीकार करनेके लिये उत्पन्न हुए हैं। मेरी आत्मा पूर्णरूपसे वर्तमान शासन प्रणाली की विरोधिनी उठ खड़ी हुई है। इसका प्रधान कारण यही है

कि मैंने भलीभाति देख लिया है कि जबतक अंग्रेज अपने इस भयानक विचारका परित्याग नहीं करेंगे कि भारतीयोसे अंग्रेज बढ़कर हैं तबतक ब्रिटिश छत्र छायामें भारत सच्ची स्वतन्त्रताका उपभोग नही कर सकता। अंग्रेजोंकी इस प्रवृत्तिका यह परिणाम हो रहा है कि योग्यतम भारतवासी भी अपनी योग्यताकी पूर्ण सीमातक नही पहुच सकता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि व्यक्तिगत अंग्रेज शासकोंकी शुभेक्षाके होते हुए भी हम लोग अपनी मर्यादासे अपनीही आंखोंमें गिर गये हैं। इसका फल यह हुआ है कि हम लोगोमेंसे कितने तो यह समझने लग गये हैं कि यदि हम योग्य होना चाहते हैं तो हमें अग्रेजोंके अधीन रहकर अनेक काल तक शिक्षा और ट्रेनिङ्ग ग्रहण करनी होगी। इसके प्रतिकूल मेरी धारणा है कि हम अपना प्रबन्ध आप कर लेनेकी पूर्ण योग्यता रखते हैं। इसलिये हमें यही उचित प्रतीत होता है कि उनके साथ उन सुधारोंको सफल करनेमें सहयोग करना छोड दें, जो सुधार पूर्ण स्वराज्यसे कहीं घटकर है। इस बातको मैं स्वीकार करता हू कि हमलोग आजसे भी अधिक भूलें करेंगे। पर हमलोग भूल करकेही सीखेंगे। पर यदि हम लोगोको जबरदस्ती भूल करनेसेही रोक दिया जायगा तो हम सीख नहीं सकेंगे।



जेल जीवन

(नवम्बर २, १९२०)

जेलमें असहयोगी कैदी साधारणसे साधारण बात पर अन्न त्याग कर देते हैं। इस बातके लिये मैं उन्हें कड़ी चेतावनी देना चाहता हूं। जेलकी कड़ाई कष्टदायक होती है और उसे दूर करनेके लिये यदि कोई इन शस्त्रोंका प्रयोग करता है तो उसका आचरण अनुमोदित नहीं कहा जा सकता। साधारण जीवनमें जिन असुविधाओंको भोगनेके लिये हम तैयार नहीं रहते जेलजीवनमें यदि वे सब असुविधायें हमारे सामने न रखी जायं तो फिर साधारण जीवन और जेलजीवनमें अन्तरही क्या रह गया। पर यदि किसीके साथ अमानुषिक अत्याचार किया जाय अथवा किसीको ऐसा भोजन दिया जाय जिसे उसका धर्म स्वीकार नहीं करता या खाना इतना खराब हो कि खाया नहीं जा सकता तो उस अवस्थामें उसका व्रत धारण करना युक्त होगा। यदि अपमान या अनादरके साथ भोजन दिया जाय तो हमें उसे कदापि स्वीकार नहीं करना चाहिये। अर्थात् हमारे कहनेका अभिप्राय यह है कि यदि हमें यह व्यक्त होता है कि इस भोजनके ग्रहण करनेसे यह व्यक्त होता है कि हम क्षुधाके दास समझे जाते हैं तो हमें वह खाना कभी भी स्वीकार नहीं करना चाहिये।

कि मैंने भलीभाति देख लिया है कि जबतक अंग्रेज अपने इस भयानक विचारका परित्याग नहीं करेंगे कि भारतीयोंसे अंग्रेज बढ़कर हैं तबतक ब्रिटिश छत्र छायामें भारत सच्ची स्वतन्त्रताका उपभोग नहीं कर सकता। अंग्रेजोंकी इस प्रवृत्तिका यह परिणाम हो रहा है कि योग्यतम भारतवासी भी अपनी योग्यताकी पूर्ण सीमातक नहीं पहुंच सकता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि व्यक्तिगत अंग्रेज शासकोंकी शुभेक्षाके होते हुए भी हम लोग अपनी मर्यादासे अपनीही आखोंमें गिर गये हैं। इसका फल यह हुआ है कि हम लोगोमेंसे कितने तो यह समझने लग गये हैं कि यदि हम योग्य होना चाहते हैं तो हमें अंग्रेजोंके अधीन रहकर अनेक काल तक शिक्षा और ट्रेनिङ्ग ग्रहण करनी होगी। इसके प्रतिकूल मेरी धारणा है कि हम अपना प्रबन्ध आप कर लेनेकी पूर्ण योग्यता रखते हैं। इसलिये हमें यही उचित प्रतीत होता है कि उनके साथ उन सुधारोको सफल करनेमें सहयोग करना छोड दें, जो सुधार पूर्ण स्वराज्यसे कही घटकर है। इस बातको मैं सीकार करता हु कि हमलोग आजसे भी अधिक भूलें करेंगे। पर हमलोग भूल करकेही सीखेंगे। पर यदि हम लोगोको जबरदस्ती भूल करनेसेही रोक दिया जायगा तो हम सीख नहीं सकेंगे।



जेल जीवन

(नवम्बर २, १९२०)

जेलमें असहयोगी कैदी साधारणसे साधारण बात पर अन्न त्याग कर देते हैं। इस बातके लिये मैं उन्हें कड़ी चेतावनी देना चाहता हूं। जेलकी कड़ाई कष्टदायक होती है और उसे दूर करनेके लिये यदि कोई इन शस्त्रोंका प्रयोग करता है तो उसका आचरण अनुमोदित नहीं कहा जा सकता। साधारण जीवनमें जिन असुविधाओंको भोगनेके लिये हम तैयार नहीं रहते जेलजीवनमें यदि वे सब असुविधायें हमारे सामने न रखी जायं तो फिर साधारण जीवन और जेलजीवनमें अन्तरही क्या रह गया। पर यदि किसीके साथ अमानुषिक अत्याचार किया जाय अथवा किसीको ऐसा भोजन दिया जाय जिसे उसका धर्म स्वीकार नहीं करता या खाना इतना खराब हो कि खाया नहीं जा सकता तो उस अवस्थामें उसका व्रत धारण करना युक्त होगा। यदि अपमान या अनादरके साथ भोजन दिया जाय तो हमें उसे कदापि स्वीकार नहीं करना चाहिये। अर्थात् हमारे कहनेका अभिप्राय यह है कि यदि हमें यह व्यक्त होता है कि इस भोजनके ग्रहण करनेसे यह व्यक्त होता है कि हम क्षुधाके दास समझे जाते हैं तो हमें वह खाना कभी भी स्वीकार नहीं करना चाहिये।

की सम्पत्ति समझता हू सरकारकी नहीं और मैं इस सरकारको जनताका प्रतिनिधि नहीं समझता। इस तरह इन दोनों बातोंमें प्रत्यक्ष विरोधाभास प्रगट होता है कि एक ओर तो हम यह प्रगट करते हैं कि जिस सरकारको हम नितान्त पतित और गिरी समझते हैं उसके अधीन रहकर हम जेलोंके बाहर रहना दु:खमय समझते हैं और दूसरी ओर हम जान बूझकर अपनी सुविधाके लिये गिरफ्तार होने और जेल जानेसे जान बचाते हैं। हमें जेल जानेसे यथासम्भव बचना चाहिये क्योंकि एक तो देश अभी सविनय अवज्ञाके लिये पूर्णतया तैयार नहीं हैं, दूसरे मैं देखता हू कि अभी शान्ति तथा अहिंसाके भावका पूर्णतया प्रचार नहीं हो गया है, तीसरे हम लोगोंने रचनात्मक कोई ऐसा महत्वपूर्ण काम नहीं किया है जिससे लोगोंका विश्वास हम लोगोंपर जमे। यही कारण है कि हम लोग सविनय अवज्ञा—जिसे शान्तिमय क्रान्ति कह सकते हैं—के लिये तैयार नहीं हैं और अपने साधारण कार्यक्रमके चरितार्थ करनेमें जेल जाना स्वीकार कर लेते हैं तथा आचरणकी पूर्ण स्वतन्त्रता व्यक्त करते हैं। यह भी एक तरहकी शान्तिमय क्रान्ति है।

इससे यह स्पष्ट है कि यदि हमलोग इस बदनीयत सरकारके अधीन रहकर जेलकी दीवारके बाहर दिखाई देते हैं तो इसका विशेष कारण है नहीं तो हमें स्वराज्य प्राप्त उसी दिन समझना चाहिये जिस दिन हम जेलकी दीवारके भीतर हो जाते हैं अथवा सरकारको अपनी बात स्वीकार करनेके लिये झुका देते हैं।

इसलिये हम लोगोंको दण्डित करनेमें चाहे सरकारको परीशान होना पडता हो या सुख मिलता हो पर हम लोगोंके लिये तो शान्त और मर्यादित एकमात्र स्थान जेल है। यदि हमलोग इस बातको स्वीकार कर लेते हैं तो जब हमें अपने साधारण कर्तव्य पालनमें जेल जानेका अवसर आता है तो हमें प्रसन्न होना चाहिये, क्योंकि हमारा बल बढ जाता है, क्योंकि हमलोग अपने कर्तव्य पालनका मूल्य चुकाते हैं। यदि आज बलका प्रदर्शन हमारे कार्यक्रमका सच्चा प्रतिरूप है तो हम यह भी साहसके साथ कह सकते हैं कि प्रत्येक जेलयात्रासे जनताकी शक्ति बढती है और वह स्वराज्यके नजदीक पहुचती जाती है।

कुछ लोगोंका कहना है कि इस तरह गिरफ्तार होकर जेल जानेसे जनतामें एक तरहकी दुर्बलता आजायगी। पर मेरी धारणा इसके एकदम विपरीत है। दुर्बलता न आकर उसमेंसे एक तरहकी राष्ट्रीय विकासकी ज्योति निकलती है। इसका प्रमाण मैं उन दो पत्रोंसे देना चाहता हू जो मुझे अभी हालमेंही प्राप्त हुए हैं। पहला पत्र बरीसालसे आया है। उसमें लिखा है — पूर्वीय बङ्गालकी जनता पीर बादशाह मियाकी गिरफ्तारीसे अतिशय कृतज्ञ है क्योंकि इस गिरफ्तारीसे हिन्दू मुस्लिम एकता पर बडा भार पडा यह और भी दृढ हो गई है और विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारपर भी बडा प्रभाव पडा है। यहा तक कि यहाकी जनताने पूर्ण बहिष्कार कर दिया है। दूसरा पत्र आन्ध्र देशसे आया है। उससे भी यही भाव निकलता है। उस पत्रमें

खिलाफत, पञ्जाब तथा स्वराज्यके लिये निष्क्रिय प्रतिरोधीको हिन्दू मुस्लिम एकतामें पक्का विश्वास रखना चाहिये पर उसे अपने स्वार्थके लिये नहीं स्वीकार करना चाहिये बल्कि वास्तविक प्रेमके लिये। निष्क्रिय प्रतिरोधीको स्वदेशीका अटल भक्त होना चाहिये और इसलिये उसे केवल हाथका काता और हाथका बिना कपडा पहनना चाहिये। भारतके २५० जिलोंमेंसे यदि एक जिला भी इतनेके लिये तैयार नहीं है तो इस वर्षके भीतर स्वराज्यकी प्राप्ति असम्भव है। यदि एक भी जिला ऐसा है जहाकी नब्बे फी सदी जनताने विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार कर दिया है और अपनी आवश्यकताकी पूर्तिके लिये चरखे तथा करघेसे कपडा तैयार करती है, यदि उस जिलेकी समस्त हिन्दू मुसल्मान, पारसी, पादडी, और ईसाई जनता पूर्ण मेलके साथ रहती है, यदि वहाकी समस्त हिन्दू जनताने छूआछूतके भावको उठा दिया है, और यदि दस प्रति सैकडे लोग भी जेल जाने या फासी पर चढनेके लिये तैयार हैं, और शान्ति तथा सविनयके साथ सरकारका प्रतिरोध कर रहे हैं और साथही साथ समस्त भारत सङ्गठित तथा शान्तिमय रहकर केवल स्वदेशीके कार्यक्रमको चरितार्थ करता है तो मुझे पूर्ण निश्चय है कि इस वर्षके भीतरही स्वराज्य स्थापित हो जायगा। मुझे आशा करनी चाहिये कि इस तरहके अनेक जिले तैयार हैं। किसी भी अवस्थामें कार्यकर्ताओंको उचित है कि वे अपने अपने जिलोंकोही सङ्गठित और समुन्नत करनेमें लग जायं

तथा अन्य जिलोंका ध्यान छोड दें। जबतक वे पूर्णतया तैयार न हों उन्हें अपनेको गिरफ्तार नहीं कराना चाहिये। पर यदि यह नौबत आही पहुचे तो उस समय उन्हें उससे बचना भी नही चाहिये। भाषण आदि देनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। पूर्ण व्यवहारिकताके साथ उन्हें स्वदेशीका कार्यक्रम सफल करना चाहिये। जिस किसी जिलेमें कार्यकर्ताओंका साथ देनेवाला कोई न मिले वहा उन्हें हताश नहीं होना चाहिये। उन्हें चरखा, तथा करघा चलानेमें पूर्ण योग्यता प्राप्त कर लेना चाहिये। जिस समय उनके पडोसी इस विचारमें पड़े हैं कि क्या करना चाहिये उस समय उनका यह कार्य अतिशय लाभदायक और फलदायक होगा।



आदर्श कैदी

(दिसम्बर २६, १६२१)

कलकत्तेके एक असहयोगी मित्रने एक तार भेजा है। "क्या असहयोगियोंको जेलखानोंमें जेलके नियमोंके खिलाफ 'वन्दे मातरम्' का घोष करना चाहिये जिससे मामूली कैदियोंको दङ्गा फसादकी उत्तेजना मिल सकती है? क्या असहयोगियोंको अच्छा भोजन, पानेके लिये, तथा अन्य सुविधाओंके लिये अन्नत्याग कर देना चाहिये? क्या हड़ताल तथा दूसरे दिनोंमें उन्हें जेलके अन्दर काम बन्द कर देना चाहिये? क्या असहयोगियोंको इस बातका हक हासिल है कि वे जेलके नियमोंको, जबतक कि वे उनकी अन्तरात्माको चोट न पहुचाते हों, तोड़ डालें?"

भारतके एक असहयोगी मित्रने यह सुननेपर कि असहयोगी कैदी जेलको मर्यादाके अनुसार नहीं बरतते हैं, मुझे सूचना दी है कि आप जेलकी मर्यादाके पालनकी आवश्यकताके सम्बन्धमें कुछ लिखें। परन्तु इसके विपरीत मुझे तो यह मालूम है कि कहीं २ असहयोगी कैदी जेलकी मर्यादाका पालन सुयोग रीति से ठीक २ कर रहे हैं।

अब जबकि हजारों आदमी जेलोंको जा रहे हैं यह समझ

लेना आवश्यक है कि-असहयोगी कैदियोंको अपनी अहिंसा की प्रतिज्ञाके अनुसार किस तरह वरतना चाहिये। जब हम असहयोगके क्षेत्रकी सीमाओंको नहीं मानते तब यह एक कर्तव्य होनेके बजाय सब कुछ करनेका एक खुला परवाना अतएव एक जुर्म हो जाता है। अच्छे और बुरेका भेद बतलानेवाली रेखा प्रायः इतनी महीन होती है कि उसकी पहचान ही नहीं की जा सकती। लेकिन यह ऐसी है जो न तो तोडी जा सकती है और न उससे किसीको भ्रम ही हो सकता है।

तब उन लोगोंमें जो अच्छे कामके लिये जेल गये हैं। और जो बुरे कामके लिये जेल गये हैं, क्या फर्क है? दोनों अकसर एक कपडे पहनते हैं। एक सा खाना खाते हैं और दोनोंको एक ही जेलकी मर्यादाका पालन करना पडता है। परन्तु जहां दूसरे बुरे कामोंके लिये जेल जानेवाले लोग जेलकी मर्यादाका पालन अत्यन्त अनिच्छापूर्वक करते हैं और उसे दबे हुए अथवा हो सके तो खुले आम भङ्ग कर देते हैं, तहां पहले अच्छे कामोंके लिये जेलजानेवाले लोग खुशी खुशी अपनी पूरी योग्यताके साथ जेलकी मर्यादाका पालन करते हैं और अपने जेलके बाहर रहनेकी अवस्थाकी अपेक्षा अपनेको अधिक सुयोग्य और देशकी सेवाके अधिक योग्य सिद्ध करते हैं। हम देख ही रहे हैं कि इनमें जो बडे २ प्रसिद्ध कैदी हैं उनके जेलमें रहनेसे उनके द्वारा देशकी जितनी सेवा हुई है उतनी उनके बाहर रहनेसे नहीं। जितनी कडाईके साथ जेल-

की मर्यादाका पालन किया जायगा उसी परिमाणमे उनकी सेवाकी मात्रा बढती जायगी।

हमें याद रखना चाहिये कि हम खास जेलोंको ही तोड देना नहीं चाहते हैं। मैं तो समझता हू कि शायद स्वराज्य-में भी हमें जेलोंको कायम रखना होगा। यदि हम सच्चे अपराधियोकी दिमागमें यह बात भर देंगे कि स्वराज्यकी स्थापनाके बाद वे लोग अच्छी दशामें हो जायंगे तो बडी कठिनाईका सामना करना पडेगा। युवा कैदियोंके सुधारके शिक्षालयोमे भी मर्यादाका पालन तो करा ही लेना होगा। और मैं तो स्वराज्यमें इन जेलोंको वही स्वरूप देना चाहता हू। अतएव यदि हम मर्यादा भगकी प्रवृत्तिको उत्तेजना देंगे तो इस सेवास्त्रमें स्वराज्य की गति उलटी हो जायगी। हा, यह स्वराज्यका तेज चालवाला कार्यक्रम तो इसी विश्वासके आधारपर तैयार किया गया है कि हम सुसस्कृत लोग हैं और इसलिये हम थोडेही समयमें अपने अन्दर ऊचे दरजेकी नियमबद्धताका विकास कर सकते हैं।

सच बात तो यह है कि एक ओर जहा सविनय कानून भङ्ग उस राज्यके—जिसे हम नष्ट कर देना चाहते है—अन्याय मूलक तथा अनीति मूलक कानूनोंके अनादर करनेका अधिकार देता है तहा दूसरी ओर वह यह कहता है कि उस कानूनके अनादरकी सजा नम्रता और राजी रजावन्दीके साथ कुबूल करो और अतएव 'जेलके कानून कायदोंका प्रसन्न चित्त'

से पालन करो और उससे होनेवाले दुःखों और कष्टोंको सहन करो।

इससे यह बात बिलकुल साफ तौर पर जाहिर हो जाती है कि जेलमें जाते ही सत्याग्रहीका प्रतिरोध बन्द हो जाता है और आज्ञापालन फिर से शुरू हो जाता है। जेलके रहते हुए वह किसी तरहकी रिआयतका दावा नहीं रख सकता। इस विनापर कि कानूनका अनादर विनयपूर्वक किया गया है। जेलके अन्दर रहते हुए वह तो खुद अपने आचरणको उदाहरण भूत बनाकर आस पासके मुजरिमोंका भी सुधार कर सकता है। वह जेलरके तथा दूसरे अधिकारियोंके हृदयको मुलायम कर सकता है। ऐसा नम्रता पूर्वक व्यवाहर, जिसका उद्गम अपने बल और ज्ञानसे हुआ हो अन्तको जालिमके जुल्मको मिटाये बिना नहीं रह सकता। केवल इसी विनापर मैं यह दावा करता हूं कि स्वेच्छा पूर्वक कष्ट सहन बुराइयों और अन्यायोंको दूर करनेकी रामबाण दवा है।

अतएव यह प्रगट है कि किसी असहयोगीके लिये जेलकी मर्यादाको भङ्ग करते हुए 'वन्देमातरम्' आदि घोष करना उसका चुपके चुपके जेलके नियमोंको भङ्ग करना नाजायज है। असहयोगी ऐसा कोई काम नहीं करेगा जिससे उसके साथके कैदी नीति भ्रष्ट हों। खुल्लमखुल्ला जेलके नियमोंको भङ्ग करनेका या अन्न त्याग करनेका मौका सिर्फ तभी हो सकता है जब या तो उन्हें बुरी तरह दबानेका प्रयत्न किया

जाता हो, या वार्डसे लोग खुद ही कैदीको आराम पहुंचानेका नियम तोडते हों जैसा कि वे अकसर किया करते हैं या जब कि खाना इतना खराब दिया जाता हो, जिसे मनुष्य नहीं खा सकता जैसा कि प्रायः दिया जाता है। हां, जब किसी धर्म विषयमें बाधा डाली जाय तब भी जेलके अन्दर सविनय कानून भंग किया जा सकता है।

शिमलेका दर्शन

(मई २५, १९२१)

कितने लोग कह यह प्रश्न कर रहे हैं कि मैं बडे लाटसे मिलने क्यों गया? कितने यह कह रहे हैं कि क्या असहयोगके पिताके बडे लाटसे मुलाकात करनेका अवसर ढूढना उचित था। सभी उस मुलाकातकी बात जाननेके लिये उत्सुक हैं। असहयोगियोंकी इस कडी जांचको मैं पसन्द करता हू। असहयोग आत्म निर्भरताका दूसरा रूप है। हम लोग भारतमे स्वराज्य स्थापित करना चाहते हैं न कि उसे दूसरोंसे प्राप्त करना चाहते हैं। तब फिर बडे लाटके पास जानेका क्या अभिप्राय था? ये सब बातें जहातक, इनका सम्बन्ध है सभी अच्छी हैं। यदि मैं किसीके पास स्वराज्यकी भीख मांगनेके लिये जाऊं तो अपने आदर्शका मुझसा खराब प्र-

तिनिधि दूसरा नहीं हो सकता। मैं ने तो यहांतक कहनेकी धृष्टता की है कि स्वराज्यका दान तो ईश्वर भी नहीं दे सकता। स्वराज्य तो हमें अपने बलसे प्राप्त करना होगा। प्रकृत्या ही स्वराज्य किसीकी देनी नहीं है।

पर इस स्वतन्त्रताके सग्राममें हम लोग संसारको अपने साथ चाहते हैं, प्रत्येक व्यक्तिकी सदाकांक्षाकी सहायता चाहते हैं। हमारी माग पूर्ण न्यायके आधारपर अवलम्बित है। चन्द ऐसी बातें हैं जिन्हें हम चाहते हैं कि अंग्रेज छोड दें। इन बातोंके लिये एक दूसरेको समझना तथा मन स्थिर करना आवश्यक है। ससारकी राय अपने अनुकूल कर लेनेके लिये असहयोग सबसे प्रबल शस्त्र है। जबतक हम लोग केवल विरोध करते रहे और सहयोग करते रहे ससार हमें समझ नहीं सका। किसी समयके बङ्गालके शेर (कदाचित सुरेन्द्रनाथसे अभिप्राय है) बहुधा कहा करते थे, कि इंगलैण्डमें प्राय जो अंग्रेज उनसे मिलते थे वे यही पूछा करते थे कि यदि भारतकी अवस्था वास्तवमें उतनी खराब है जितनी आप कह रहे हैं तो फिर यहा रक्तपात क्यों नहीं होता? अंग्रेज लोग स्थितिकी भीषणताको इसी तरह समझते हैं। दूसरा प्रश्न जो ससारके राष्ट्र सदा से पूछते आरहे हैं वह यह है —"यदि वास्तवमें भारतकी दशा ऐसीही खराब है जैसा कि कहा जाता है तो यहाके निवासी उस सरकारके साथ सहयोग क्यों करते हैं जो उन्हें दरिद्र और हीन बनाती चली आ रही है। इस समय संसार हमारी शक्तिको

समझ रहा है चाहे उसका प्रदर्शन हम दुर्वलताके साथही क्यों न कर रहे हों। इस समय संसार यह बात जाननेके लिये चिन्तित होरहा है कि हमारे दुखोंका कारण क्या है। बडे लाट भी एक बडे देशके प्रतिनिधि हैं। बडे लाट यह जाननेके लिये आतुर थे कि मुझसा व्यक्ति, जो सरकारके साथ सहयोग करना परम धर्म समझता था, इस प्रकार असहयोगी कैसे होगया? या तो सरकारमें कोई बुराई है या मुझमें।

बडे लाटने पण्डित मालवीयजी तथा श्रीयुत अण्डरूज-से भी कहा था कि वे मुझसे मिलकर मेरी बातें सुनना चाहते हैं। पण्डितजी मुझसे मिलनेके लिये बड ही चिन्तित थे। इससे मैं उनसे मिलने गया। मैं उन्हें इस श्रद्धासे देखता हूं कि अच्छी हालतमें भी यथासाध्य मैं उन्हें अपने पास आनेका कष्ट नहीं दे सकता। उनके पास जाना मेरा धर्म था। मैंने उनसे बडे लाटकी बातें सुनीं। मैं बडे लाटसे मिलनेके लिये तैयार होगया और उनसे समय नियत करनेके लिये कहा। उस भेंटका कारण प्रगट करनेके लिये मैंने यहातक लिखा है, क्योंकि मैं असहयोगका तात्पर्य और सीमाको स्पष्ट समझा देना चाहता हूं।

असहयोगकी लडाई किसी व्यक्ति विशेषके साथ नहीं ठानी जाती, वल्कि उस व्यक्तिकी कार्रवाईयोंके साथ। असहयोग-का संग्राम शासकोंके साथ नहीं जारी किया गया है वल्कि उस प्रणालीके साथ जिसके वे सञ्चालक हैं। असहयोगकी जड

घृणा नहीं है बल्कि न्याय और प्रेम। मिस्टर ग्लैडस्टन कहा करते थे कि खराब आदमी और खराब आचरणमें बड़ा अन्तर है। अपने दुश्मनोंकी कार्यवाहीके सबन्धमें उन्होने किसी समय कड़े शब्दोंका प्रयोग किया था। इसपर उनपर अनुदारताका दोषारोपण किया गया था। इस आक्षेपका उत्तर देते हुए उन्होंने कहा था कि यदि मैं उनके आचरणका दोष न दिखलाता तो मैं अपने कर्तव्य पालनसे च्युत समझा जाता पर इससे मेरा यह अभिप्राय कभी भी नहीं था कि जो दोषारोपण मैंने उनके कार्यवाहीपर किया था वही उनके आचरणपर भी लागू है। युवावस्थामें मैं भी इस बातकी धार्मिकतापर आस्था नहीं रखता था। पर अब मेरा अनुभव जितना अधिक बढ़ता जारहा है मैं समझता जारहा हू कि उनका कहना कितना यथार्थ था। मैंने अपने कितने सच्चे दोस्तोंमें इस तरहके आचरण देखे हैं जिनकी सफाई नहीं दी जासकती। मेरे लिये वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री सदृश सच्चा आदमी बहुत कम हैं पर उनके आचरणोंसे मुझे विस्मय होता है। उनका विश्वास है कि मैं भारतवर्षको, अन्धकार पूर्ण गढ़में लिये चला जारहा हूं पर इससे मेरे प्रति उनका अनुराग कम नहीं होगया होगा। मुझे पूर्ण आशा है कि इस असहयोग आन्दोलनने हजारों व्यक्तियोंको यह बात सुझा दी होगी कि हम लोग व्यक्ति विशेषकी अप्रतिष्ठा और अनादर न करके भी उनके आचरण, कार्यवाही और कार्य प्रणालीकी आलोचना और विरोध कर सकते हैं। मनुष्य

सदा अपूर्ण रहता है, इससे हमें दूसरोंको ओर सदा नर्म रहना चाहिये और जहांतक हो एकाएक किसी तरहका दोषारोपण नहीं करना चाहिये।

यही कारण था कि मैंने उस अवसरसे लाभ उठाया और बड़े लाटको यह बतला देना चाहा कि हमारा यह असहयोग आन्दोलन पूर्ण धार्मिक है। इसके द्वारा हमलोग भारतीय राजनैतिक क्षेत्रको भ्रष्टाचार, धोखेबाजी, अन्याचार तथा सफेद जातियोकी श्रेष्ठताके बोझसे साफ कर देना चाहते हैं।

इससे पाठकोंको विस्मय नहीं होना चाहिये। समाचार पत्रोंने जो कुछ छापा है उसपर उन्हे विश्वास नही करना चाहिये। मेरे तथा बड़े लाटके बीच जो बातें हुई हैं वह परदेकी आडमें ही रहेंगी, वे प्रगट नही की जा सकतीं। पर इतना अवश्य कह देना चाहता हू कि मैंने भारतीयोंकी तीनो मांगोंको "खिलाफत, पञ्जाब तथा स्वराज्य—उन्हें समझाया और असहयोगकी पूर्ण व्याख्या कर दी। बड़े लाट पूर्ण धैर्य्य, शान्ति तथा उदारताके साथ मेरी बातें सुनते रहे। उनकी बातोंसे प्रगट हुआ कि वे भारत तथा भारतीयोंके साथ न्याय ही करना चाहते हैं। उन्होंने इस वर्तमान आन्दोलनपर साधारण व्यक्तिकी तरह विवाद किया। हम लोगोंने अहिंसा पर बहस की और वह हमलोगोंका समान तत्व प्रतीत होता था। इसके विषयमें कभी आगे चलकर मैं सविस्तर लिखूंगा।

इस मुलाकातसे हमलोग एक दूसरेको मजेमें समझ गये।

इससे अधिक कोई बात उस मुलाकातमें नहीं हुई। कुछ लोग तो इसे अवश्य स्वीकार करेंगे कि एक दूसरेको समझ जाना ही साधारण बात नहीं है। यदि यह ठीक है तो मेरी समझमें इस मुलाकातसे अधिक लाभ हुआ है।

इस मुलाकातसे मुझे एक बात और मालूम हुई और वह यह कि हमारा उद्धार केवलमात्र हमारे प्रयत्नोंपर ही निर्भर करता है। बड़े लाट सहायता कर सकते हैं या बाधा उपस्थित कर सकते हैं। पर मुझे तो यही विश्वास है कि वे सहायता ही करेंगे।

इसलिये हमे अपने कार्यक्रमको दूने उत्साहसे उठाना चाहिये। हम लोगोंका कार्यक्रम इस समय निम्न लिखित है — (१) छुआछूतका भाव दूर करना (२) शराबखोरी हटाना (३) विदेशी कपड़ोंके पूर्ण वहिष्कारके लिये चरखे और करघेका अनवरत प्रचार तथा खद्दरका उपार्जन करना (४) कांग्रेसका सदस्य बनाना तथा बनना और (५) तिलक स्वराज्य कोषके लिये चन्दा सग्रह करना।

हिन्दू मुस्लिम एकताको दृढ करने तथा अहिंसाके भाव-का पूर्ण प्रचार करनेके लिये इससे बढ़कर दूसरा कोई कार्यक्रम नही हो सकता।

मैंने छुआछूतका प्रश्न सबसे आगे रखा है क्योंकि जनताको इसके प्रति मैं सर्वथा उदासीन या सुस्त पाता हू। हिन्दू असहयोगियोंको इस प्रश्नपर जरासी असावधानी नहीं दिखलाना चाहिये। खिलाफतके साथ हम लोग न्याय भलेही करवा लें पर जबतक

छुआछूतका घुन हिन्दू समाजको चालता जायगा तबतलक स्वतन्त्रताकी व्यवस्था कदापि नहीं हो सकती। यदि हम लोग भारतीय जनताके पाँचवें भागको अनन्त कालतकके लिये दबाये रखना चाहते हैं और उन्हें राष्ट्रीय सभ्यताका फल नहीं चखने देना चाहते तो हम लोगोंके लिये स्वराज्यका कोई अर्थ नहीं है। इस आत्म-शुद्धिके आन्दोलनमें हम ईश्वरकी सहायता तो चाह रहे हैं पर साथ ही उसकी सबसे प्यारी सन्तानको मनुष्यके साधारण अधिकारसे भी वञ्चित रखना चाहते हैं। यदि हमलोग स्वयं इस तरहके अमानुषिक अत्याचार कर रहे हैं तो भला उस महापुरुषके सामने खड़े होकर हम स्वयं अमानुषिकतासे रक्षाके लिये कैसे प्रार्थना कर सकते हैं?

शराबखोरीको मैंने दूसरा स्थान दिया है क्योंकि मैं देखता हूं कि ईश्वरने आपसे आप यह बात हम लोगोंके हाथ सौंप दी है, यद्यपि हम इस समय उसके लिये प्रयत्नशील नहीं थे। इस समय इसके विरुद्ध सबसे भीषण आन्दोलन उठ खड़ा हुआ है। शराबखोरीके विरुद्ध जो आन्दोलन चल रहा है उसमें हिंसाका सबसे अधिक भय है। पर जबतक सरकार शराबकी दूकानें खोलवानेके लिये सयत्न है तबतक हमें अपने देश भाइयोंको समझाने तथा सावधान करते रहना चाहिये कि शराबको अपने मुंहमें लगाकर आप घोर पाप कर रहे हैं।

तीसरा स्थान चरखेको दिया गया है, यद्यपि मेरी दृष्टिमें इसका महत्व पहले दोके ही बराबर है। यदि हम लोगोंने इस

वर्षके अन्दर विदेशी वस्त्रोंका पूर्णतया बहिष्कार कर दिया तो हम लोग अपने इसी आचरणसे राष्ट्रीयताका वह भाव प्रगट करेंगे जिसके द्वारा स्वराज्यकी स्थापना हमारे लिये सहज हो जायगी।

देशमें चरखेका प्रचार करनेके लिये तथा खद्दर तैयार करने और लोगोंतक पहुचानेके लिये तथा लोगोंके हृदयोंमेंसे यह भय दूर करनेके लिये कि काग्रेसका सदस्य होना सरकारकी दृष्टिमें अपराध है काग्रेसके लिये अधिकाधिक सदस्योंकी आवश्यकता है।

— अन्तिम कार्यक्रम तिलक स्वराज्य फण्डसे हमे दो काम होता है, एक तो स्वराज्यके प्राण (लोकमान्य तिलक) की स्मृति अमर हो जाती है और दूसरे सग्रामके लिये हमें साधन मिल जाता है।

तीस जूनतक हमलोगोंने एक करोड रुपया इकट्ठा करने, एक करोड काग्रेसका सदस्य बनाने, तथा २० लाख चरखोंके प्रचारकी प्रतिज्ञा की है। अखिल भारत वर्षीय काग्रेस कमेटीने दीर्घ विचारके बाद जो निर्णय किया है यदि उसे हम पूरा न कर सके तो हम लोग अपने ध्येय तक कभी भी नहीं पहुच सकेंगे।

स्वावलम्बनमें स्वराज्य

(जून ८, १९२१)

बडे लाटके साथ मेरी जो मुलाकात हुई थी उसके सम्बन्धमें एक मित्रने लिखा है —मेरी नाकिस रायमें इस समय असहयोगी नेताओका बडे लाटसे मिलना राजनैतिक भूल है। इसका प्रभाव आन्दोलनपर बुरा पड सकता है। खिलाफत तथा पंजाबके प्रश्नके साथही साथ भारतके लिये स्वराज्यका भी प्रश्न है। भारतके लिये स्वराज्यका अभिप्राय होगा ब्रिटिश साम्राज्यका भारतपरसे अन्त। इस तरहके अन्तसे राष्ट्रके स्वायत्त सङ्गठनका प्रादुर्भाव हो सकता है। पर क्या आज एक भी ब्रिटिश राजनीतिज्ञ ऐसा है जिसकी दृष्टिकोण ब्रिटिश स्वार्थसाधनसे आगे बढकर मानव समाजके हितसाधनकी ओर जाती हो। यदि स्वराज्य आन्दोलनका विजय होना है तो वह स्वावलम्बनसे होगा। लार्ड रेडिंगसे मिलकर कुछ टुकडोके प्राप्त करनेमें स्वराज नहीं मिल सकता। मेरी समझमें यदि हम इस गोरखधन्धेसे अपनी रक्षा करना चाहते हैं तो हमें यही उचित है कि हम सरकारके साथ मेल मिलापकी बात त्यागकर तपस्याके लिये दृढ होकर खडे हो जायं। तपस्या और यातना सहकरही भारत इस यातनासे उद्धार पा सकता है।"

यद्यपि मैं इस बातसे सहमत नहीं हूँ कि बड़े लाटसे मुलाकात करना राजनैतिक भूल थी तथापि मैं इस बातको स्वीकार करता हूं कि उन्होंने हम लोगोंके कार्यक्रमके बारेमें जो बातें कही हैं वह ठीक हैं। ब्रिटिश राजनीतिज्ञ क्या करेंगे या क्या नहीं करेंगे इससे मुझे कोई मतलब नहीं है। हम लोगोंका लक्ष्य सदा अपनेको सन्मार्गपर रखना और उसीके अनुसार चलना होना चाहिये। अपने शत्रुओंसे दूर रहनेका हम लोगोंका यह अभिप्राय नहीं होना चाहिये कि हम लोग उन्हें अपना मत नहीं सुनाना चाहते। हमें अपने काममें दृढ़ रहना चाहिये और जो कोई हमसे हमारी बात जानना चाहे उसे सुनानेके लिये तैयार रहना चाहिये। पर मैं यह बात भी स्वीकार करता हूं कि इस तरहकी मुलाकातमें खतरा भी है। हम लोगोंकी मानसिक स्थिति ऐसी नहीं है कि हमलोग सदा अपने ध्यानमें एक निर्धारित सीमा रखें जिसके नीचे हमलोग किसी भी अवस्थामें नहीं जासकें, इससे हम लोगोंके फिसल जानेका सदा भय बना रहता है।

था या जहातक वे कर सकते थे मैंने यह सलाह दी कि इस आक्षेपोंसे वचनेके लिये संक्षिप्त विवरण निकाल दें। मेरी समझमें उस विवरणके प्रकाशित कर देनेसे उन्होंने खिलाफतके संग्रामकी मर्यादा बढ़ा दी है जिसमें कि वे प्रवृत्त हैं। अन्य कार्यकर्ताओंके सामने उन्होंने उदाहरण रख दिया है। केवल साहसिकताके वश होकर हमें जेलखानेके लिये नही तैयार हो जाना चाहिये। जेल स्वतन्त्रता तथा मर्यादाका मार्ग तभी होता है जब निर्दोष आत्मायें उसमे जाती हैं। अली भाइयोंकी क्षमा प्रार्थना असहयोगियोंके लिये एक तरहकी कडी चेतावनी है कि जो लोग इस संग्राममें प्रवृत्त हो रहे हैं, जो स्वतन्त्रता और सत्य की लड़ाई लड़ रहे हैं उन्हें भाषाके प्रयोगमें बड़ाही समझकर काम लेना चाहिये। यदि हम लोग अपने जबानको काबूमें नहीं रख सकते तो हमें लिखकर अपने भाषणोंको पढ़ना चाहिये। यदि यह भी न हो सके तो हमे कुछ बोलना ही नही चाहिये। प्रधान मुसलमान नेताने अपने ऊपर यही नियन्त्रण लगा दिया है। मौलाना अब्दुल बारी बड़े ही तीव्र मिजाजके मुसलमान हैं। जोशमें आकर वे इस तरहकी भाषाका प्रयोग कर जाते हैं जिसका प्रयोग साधारण अवस्थामें वे कभी भी पसन्द नहीं करते और न तो कभी उनका उस तरहका इरादा ही रहता है। मित्रोंकी सलाहको मानकर उन्होंने यह निश्चय कर लिया है कि वे सार्वजनिक सभाओंमें भाषण ही नहीं करेंगे। मैं इस उदाहरणको इसलिये पेश करता हूं कि हम सब लोग उसका

अनुकरण करें। अली भाइयोंने अपनी स्पष्टवादितासे हम लोगोंको रास्ता दिखलाया है। इसलिये यदि हम अपनेपर काबू नहीं रख सकते तो हमें अपने प्रत्येक शब्दोंको तौलकर प्रयोगमें लाना चाहिये। ऐसा न करनेसे हम लोग विना समझे बूझे ऐसे शब्दोंका प्रयोग कर बैठते हैं जिनके प्रयोगसे हमारा कोई मतलब नहीं रहता और अर्थका अनर्थ कर बैठते हैं तथा अपने उद्देश्य पर कुठाराघात करते हैं।

बड़े लाट बोले

(जून ८, १९२१)

बड़े लाट महोदयने मिस्टर शफीके भाषणके सम्बन्धमें जो कुछ कहा है वही अधिकांश उनके भाषणके लिये भी चरितार्थ होता है। मैंने अनेक प्रधान मन्त्रियोंको मैंशन हाउसमें उसी तरहके भाषण देते हुए अनेक बार देखा और सुना है। मैंने प्रत्येक बार इस बातको देखा कि उनमें बनावटीपनकी विशेष मात्रा रहती है। बड़े लाटके इस भाषणको पढ़कर भी मुझे इसी बातका खेद हुआ कि इसमें भी बनावटीपनकी अधिकाधिक मात्रा है। लार्ड रेडिंगने जो भाषण किया है उसके पढ़नेसे स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने अपने सच्चे अभिप्रायको केवल छिपानेका ही प्रयत्न नहीं किया है बल्कि उन्होंने इस बातको भी समझानेकी

चेष्टा की है कि जो वे कह रहे हैं वही सच है। पर मेरी नाक़िस रायमें बडे लाटके भाषणसे यह अभिप्राय नहीं सिद्ध हो सका। इसका एक प्रधान कारण यह है कि भारतके बडे लाटोंके पदोंके साथ साथ अनेक तरहके नियन्त्रण लगे रहते हैं जिन्हें परम्परागत मर्यादाकी रक्षा करनेके लिये भारतमें ब्रिटिश शासनकी निर्दोषिता स्वीकार ही करनी पडी। उन्होंने इस बातको इतनी सफाईके साथ कही, मानों इसमें किसी तरहका शक और शुबहा हो ही नहीं सकता था अर्थात् ब्रिटिश शासनसे किसी तरहकी बुराई हो ही नहीं सकती। उन्होंने कहा था, "हां भारतवर्षमें जातीय पक्षपातका कोई चिह्न नही पाया जाता और उस चिह्नका न रहना ही उचित है।" पर भारतीयोंके कानोंके लिये इससे कटु कोई बात हो ही नही सकती, क्योंकि चाहे वह कितने ही ऊंचे पदपर क्यों न हों पर उनका अनुभव सदा इस बातके प्रतिकूल जाता है। अंग्रेज जातिके साथ अपने जातिकी उत्कृष्टताको व्यक्त करना साधारण धर्म हो गया है। इसके साथही साथ इस भावको वह किसीसे छिपाना तक नहीं चाहती। जिस तरहसे उपनिवेशोंमें यह बलात् भारतीयोंके सिरपर सवार कर दिया जाता है उसी तरह यहां भी उसका बोझ हमारे सिरपर लाद दिया जाता है। नियम और विधान पोथियोंमें भी मोटे मोटे अक्षरोंमें लिख दिया गया है। अतीत कालमें ब्रिटिश शासनके अन्तर्गत जो जो बुराइयां रही हैं अथवा ... तथा अन्याय किये गये हैं उनका बडे लाटने ...

किया है। इसलिये यह किसी भी तरह प्रगट नहीं होता कि भविष्यमें भी उनकी अभिलाषा किसी नये रूपसे चलने की है।

बड़े लाट यदि "ब्रिटिश शासनके प्रधान सिद्धान्त" शब्दके प्रयोगमें कुछ संकुचित थे तो मौलाना महम्मद अली तथा मौलाना शौकत अलीके सम्बन्धमें उन्होंने जो कुछ कहा था उसमें उन्हें और भी संकुचित होना चाहिये। मैं इस बातको स्वीकार करता हूं कि अपने भाषणमें वे बड़े ही सतर्क रहे हैं। उन्होंने उन बातोंको नहीं छुआ है जिनसे किसी तरहका प्रभाव पड़ सकता है। पर यदि विचार कर देखा जाय तो इस तरहका कोई प्रश्न भी नहीं उपस्थित था। जहां कहीं मौलानाने गलतियां की हैं वहां उनकी रक्षाकी बड़े लाटसे कोई आशा भी नहीं करता। अली भाइयोंने जो विवरण प्रकाशित किया है उसका एकमात्र कारण मैं ही था। मेरे ही कहनेसे उन्होंने ऐसा किया। उन्होंने सरकारसे किसी तरहकी क्षमा प्रार्थना की भी नहीं है। उनकी क्षमा प्रार्थना अपने देश भाइयोंसे है। न तो दण्डसे बचनेके लिये ही उन्होंने यह क्षमा प्रार्थना की है। उनकी इस क्षमा प्रार्थनाका केवलमात्र अभिप्राय अपनी आत्मा तथा अपने देश भाइयों और मित्रोंकी दृष्टिमें अपनेको सच्चा साबित करनेके लिये था। इसलिये बड़े लाटका अपने भाषणमें यह कहना कि, जबतक अली भाई अपने इस वचनको निबाहते जायगे और इसीके अनुसार आचरण करेंगे तबतक उनपर किसी तरहका अभियोग नहीं चलाया जा सकता, यदि अपमान जनक नहीं था तो निरर्थक था। लार्ड

रेडिङ्गकी सरकार जिस समय चाहे अपनी इच्छाके अनुसार
अली भाइयों पर मुकदमा चला सकती है।

असहयोग आन्दोलनमें खुली तौर पर या छिपी तौर पर कु
टिल नीति या चालबाजीके लिये कोई स्थान नहीं है। असहयोग
व्रत ग्रहण करने वालेको किसी भी अवस्थामें सत्यका अनुसरण
करना ही पड़ेगा। बड़े लाटने मुझे अली भाइयोंका भाषण
दिखलाया। मैंने देखा तो मुझे विदित हुआ कि उस भाषणके
कतिपय वाक्य अनुचित हैं। उनके प्रयोगसे हिंसाके लिये उत्ते
जना दी जा सकती है। मैंने उसी वक्त इस बात पर विचार
किया कि अली भाइयोंपर मुकदमा चलाया जाय चाहे नहीं चला
या जाय पर जो विचार मेरे मनमें उत्पन्न हुआ है उसके अनुसार
उन्हें सलाह दे देना मैं अपना धर्म समझता हूं। मैं बड़े ला
महोदयसे यह बात स्पष्ट कह देना चाहता हूं कि यदि वे असह
योग आन्दोलनको उठाना चाहते हैं तो वह केवल स्पष्टवादितासे
हो सकता है। असहयोगी न तो किसी तरहकी रक्षाकी परवा
करते हैं और न उन्हें चाहिये। इसलिये मैं बड़े लाटसे कह देना
चाहता हूं अधिकारीवर्गमें अपराध करनेवालेको अधिकारकी
छत्रछायामें उन्हें नहीं छिपाना चाहिये।

वास्तवमें यदि विचार कर देखा जाय तो वर्तमान या भविष्य
भारतमें अधिकारी वर्गके लिये कोई गुञ्जायश नहीं है। इसलिये
यदि बड़े लाटको यह इच्छा है कि ब्रिटिश साम्राज्य जिस न्य...
शासन चलाना चाहती है उसमें भारतीय पूर्ण ... यों

देंगे तो उन्हें सबसे पहले अपने शासनकी भूलोंका पता लगाना चाहिये। मैं इतना तो अवश्य कह देना चाहता हूं कि भारतका भविष्य इसपर निर्भर नहीं करता कि भारतकी भलाई या लाभके लिये ब्रिटन क्या प्रबन्ध करता है बल्कि इस परकि भारतीय अपनी भलाईके लिये क्या उत्तम समझते हैं। किसी न किसी तरहसे वे अपना अधिकाधिक शासन करना चाहते हैं। जिस सुशासनकी उन्हें आशा दिलाई जा रही है स्वायत्त शासनके मुकाबिलेमें वह कुछ नहीं है।

इसलिये मुझे बड़े लाटकी मन्शामें किसी बातकी आशंका नहीं प्रगट होती क्योंकि जहा तक मैं समझ सका हू उनकी नियत अच्छी है, पर जिस आदर्शको लेकर वे काम कर रहे हैं उनसे ही मुझे आशङ्का है। वे भारतके लिये किसी उच्च आदर्शका स्वप्न देख रहे हैं जो अनिश्चित भविष्यकी गोदमें छिपा है पर असहयोगियोंका विश्वास है और कथन है कि भारतके भविष्यकी आज भी ब्रिटिश शासन प्रणालीके अन्तर्गत अवहेलना की जा रही है। उनकी यह धारणा है कि ब्रिटिश शासन प्रणालीकी रचना इस नीतिके अनुसार की गई है कि वह भारतीयोंको यदि अनन्त काल तकके लिये नहीं तो अतिदीर्घ काल तक तो अवश्य ही दबाकर रखना चाहती है। कभी कभी मात्राभेदसे ही सिद्धान्तमें भेद उत्पन्न हो जाता है। जब कभी कोई इस बातको कहता है कि भारतका सुदूर भाविष्य तो पूर्ण स्वाधीनताके प्रकाशसे अवश्य ही उज्वल होगा, पर वर्तमान अवस्थामें उसे अधीनताको ही स्वी-

कार कर काम करना पडेगा, तो मैं उसके आदर्शको भारतवर्ष या भारतीयोंके आदर्शसे एकदम भिन्न समझता हूं। जैसा कि स्वर्गीय लोकमान्य तिलकने कहा था कि स्वराज्य भारतका जन्म सिद्ध अधिकार है। इतने दिनों तक भारतवर्ष अपने उस नैसर्गिक अधिकारसे वञ्चित रहा है। इसलिये यदि वह आज अधीर हुआ सा प्रतीत होता है तो उसमे कोई आश्चर्यकी बात नहीं है।

कदाचित लार्ड रेडिंग उस उक्तिके—जिसे वह सदा पढ़ते और सुनते आये हैं कि सरकारकी कोई भी कार्रवाई, जिसका अभिप्राय पूर्ण प्रतीकार नहीं होगा, चाहे वह कितना ही अच्छा और उपकारी क्यो न हो, कमसे कम असहयोगियों द्वारा खराब या बुरे उद्देश्यसे प्रेरित समझा जायगा कि ब्रिटिश सरकार भारत की दासताको अवस्थाको अभी कुछ दिन और भी जारी रखना चाहती है—भाव और सत्यताको और भी अधिक समझ सकेंगे। आजकल ब्रिटिश शासन अन्धकारमें पडा है। उसके ऊपर जलियांवालाबागके निर्दोषोंके रक्तका धब्बा और इस्लामके प्रति बेईमानी और विश्वासघातका कलक लगा है। जिस तरह जहरीले वर्तनमें ढाला हुआ दूध भी जहरीला प्रभाव उत्पन्न करनेवाला समझा जायगा उसी तरह ब्रिटिश सरकारकी हर तरहकी कार्रवाई इसी दृष्टिसे देखी जायगी। भारतकी अशान्ति के शान्त करनेका एकमात्र उपाय यही है कि जिन कारणोंसे इस अशान्तिका जन्म हुआ है उसे दूर कर दिया जाय। केवल अधिकारका प्रलोभन देकर या अन्य विशिष्ट अधिकारोंके प्रदानसे,

चाहे वे कितने भी मोहक क्यों न हो, इसका प्रतिकार नहीं हो सकता, यदि ये मोहक पदार्थ असन्तोष और अशान्तिके कारणोंके प्रतिकारके लिये यथेष्ट नहीं हैं।

फिर वही क्षमा प्रार्थना

(जून १५, १६२१)

अली भाइयोंकी क्षमा प्रार्थनाकी बातें अब तक लोगोंके चिन्ताओंका कारण हो रही हैं। इससे लोग तरह तरहकी बातें निकाल रहे हैं। मेरे पास प्रतिदिन चिट्ठियोंकी ढेर लगी रहती है जिसमें लोग मुझसे पूछते हैं कि बड़े लाटके पास आपके जानेका क्या कारण था। कितने लोग मुझपर यह दोषारोपण कर रहे हैं कि मैंने सब मामला बिगाड दिया और कितने लोग अली भाईयों पर यह दोषारोपण कर रहे हैं कि मेरा सम्मान रखनेके लिये उन्होंने भारी कायरता दिखलाई। मैं यह भी जानता हूं कि यह तूफान केवल चन्द्रोजा है, थोड़े दिनके बाद यह ठंढा पड़ जायगा। इस मुलाकातके सम्बन्धमें मैंने बहुत कुछ सुना और पढ़ा। फिर भी मेरी यही धारणा है कि जब बड़े लाटने मेरी बात सुननेकी इच्छा प्रगट की तो उनसे मिलना मेरे लिये उचित था। ऐसी अवस्थामें मुझे उनके लिखित पत्रकी प्रतीक्षा करना उचित न होता। इसी तरह मेरी यह भी धारणा है कि

अलीभाइयोंको अपने भाषणके सम्बन्धमें उस तरहके विवरण प्रकाशित करनेकी सलाह देकर भी मैंने इस्लाम धर्म तथा भारतकी भलाईकी ही योजना की। उस विवरणको प्रकाशित करनेमे अली भाइयोंने उत्कृष्ट नम्रता और वीरताका परिचय दिया है। उसके द्वारा उन्होंने साबित कर दिया है कि देश तथा धर्मके लिये वे अपना सर्वस्व त्यागनेके लिये तैयार हैं, अभिमान तो साधारण बात है। यदि उन्होंने उस बयानको पेश करनेसे इनकार किया होता तो उनके द्वारा हमलोगोंके उद्देश्यको जितना धक्का पहुंचता उतनाही लाभ हमें उनके इस विवरणसे पहुचा है।

इस प्रकारके विश्वासके होते हुए भी इस तरहके विरोधोको पढकर मुझे आश्चर्य नहीं होता है। इनसे यही बात विदित होती है कि जिन तरीकोंका अवलम्बन किया जा रहा है वे एक दम नये हैं और राष्ट्र इस समय अपने गलत मार्गोंको रत्तीभर भी छोडनेके लिये तैयार नही हैं और अपने सन्तोषके लिये वह एकमात्र अपने ही बलपर खडा होना चाहता है। अलीभाइयोंको जो सलाह मैंने दी तथा जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया, उस सलाहकी निन्दाके कडेसे कडे आक्षेपोंको, जिसे मैं भी उचित कह सकता हू, यहा उद्धृतकर देना चाहता हू। इस पत्रको असहयोगियोंमेंसे सबसे कट्टर असहयोगीने लिखा है। इस पत्रको उन्होंने प्रकाशनार्थ नहीं लिखा है। पर यदि मैं पाठकोंकी जानकारीके लिये उसे प्रकाशित कर देना चाहता हूं तो इससे

लेखकको किसी तरहका दुःख नहीं होना चाहिये। इस पत्रके लेखकने जिन भावोंको प्रगट किया है वे ही भाव अनेक विचारवान असहयोगियोंके भी हैं। इसलिये इस घटनासे जो समस्या उठ गई है उस पर विचार करना मैं अपना परम कर्तव्य समझता हूं। इसी तरह धैर्य्यके साथ सब बातें प्रगट करके ही मैं सचाईको साबित कर दूंगा, जो असहयोगका धर्म है। उस पत्रमें निम्न लिखित बातें लिखी हैं —

"अलीभाइयोंके बयानको उठाकर पढ़नेसे तथा उसके पूर्वापर घटनाके साथ उसे न जोड़नेसे वह वीरतापूर्ण प्रतीत होता है। यदि क्षणिक जोशके कारण उन्होंने कुछ ऐसी बातें कह डाली हैं, जिन्हें इस समय देखने और पढ़नेसे यह आशंका उत्पन्न होती है कि उनसे हिंसाकी प्रवृत्ति लोगोंमें जाग सकती है, तो उन्होंने उसके लिये खेद प्रगटकर उस मार्गका अनुसरण किया है जिस मार्गका अनुसरण उनकी हैसियतके गण्यमान्य नेताको करना चाहिये। पर यदि उन्होंने भविष्यके लिये इस तरहका वचन अपने उन साथियोंके प्रति दिया होता—जो उनकी तरह हिंसामें विश्वास नहीं करते—तो सम्भव था कि उनके आचरणका प्रतिपादन मैं करता। पर उन्होंने लिखा है —"मैं उन सबको इस बातका वचन देता हूं जो इस तरहके वचनकी आवश्यकता समझते हैं।" यह व्यापक वाक्य है। इससे इस बातकी जरा भी आशङ्का नहीं रह जाती कि यह क्षमा प्रार्थना तथा वचन उसी विशेष दलके प्रति है जिसे इस बातकी

आवश्यकता थी और अन्य किसीके लिये यह कोई अभिप्राय नहीं रखता। बड़े लाटने अभी हालमें जो भाषण किया, है उससे सब बातें और भी स्पष्ट हो गई हैं। इस समय हम-लोगोंको यह स्पष्ट हो गया है कि असहयोग आन्दोलनके कर्णधार सरकारके साथ मन्त्रणा कर रहे थे और अलीभाइयोंको क्षमा प्रार्थनाके लिये तैयार करके अभियोग चलाये जानेसे उनकी रक्षा की है।

ऐसी अवस्थामें—इसके अतिरिक्त और दूसरा भी कोई भाव मेरी समझमें नहीं आता—समस्त आन्दोलनके लिये एक विकट विचारणीय प्रश्न उपस्थित हो जाता है। मुझे तो यही प्रतीत होता है कि असहयोगके सारे सिद्धान्तपर पानी फेर दिया गया।

मैं उन लोगोंमें भी नहीं हूं जो सरकारपर नितान्त अविश्वास रखकर इससे दूर रहना चाहते हैं और न मैं उन लोगोंमेंसे ही हू जो यह समझते हैं कि यदि हमारे दुखोंका किसी तरह प्रतीकार हो सकता है और हमें स्वराज्य मिल सकता है तो एकमात्र सरकारके साथ सुलह करनेसे और उसके साथ समझौता कर लेनेसे। मेरा पूर्ण विश्वास उन बातोंपर है जिनकी आपने लगातार शिक्षा दी है, अर्थात् भारतमें स्वराज्यकी स्थापना हमलोग अपने ही बलपर कर सकते हैं। साथ ही साथ मेरा यह भी विश्वास है और मुझे पूर्ण आशा है कि आपका भी यही विश्वास है कि उचित शर्तों पर सरकारके

साथ भी समझौता हो सकता है। पर उस समझौतेका आधार सिद्धान्त होगा न कि किसी व्यक्ति विशेषकी सुविधा या रक्षा। जहा एक ही कामको करनेवाले अनेक व्यक्ति साथ साथ चल रहे हैं वहा आप व्यक्ति व्यक्तिमें भेद नहीं कर सकते। उन कार्यकर्त्ताओंमें सबसे छोटा भी नेताके हाथसे इसी रक्षाको आशा करता है जो उनमेंसे सबसे बडा कर सकता है। हमारे सैकडों असहयोगी कार्यकर्त्ता खुशी खुशी जेल गये हैं, पर जिन शब्दोंका प्रयोग उन्होंने किया था वे अलीभाइयोंके शब्दोंसे कहीं उत्तेजक थे। इनमेंसे बहुतोंकी रक्षा हो गई होती यदि उन्होंने इसी तरहका खेद प्रकाशन किया होता या क्षमा प्रार्थना तथा वचन दिया होता। पर इस तरहकी सलाह एक लिये भी देना किसीको उचित नहीं जचा। इसके प्रतिकूल उनकी दृढता और साहसकी प्रशसा सभी असहयोगी नेताओंने तथा समाचारपत्रोंने की। इस घटनासे जो अभियोग सहसा स्मरणमें आ जाता है वह अभियोग है इलाहाबादके असहयोगी कार्यकर्त्ता हमीद अहमदका जिन्हें अभी आजन्म कारावास और सम्पत्ति हरणका दण्ड दिया गया है। क्या आप कोई कारण बतला सकते हैं कि इसी तरह इस आदमीकी रक्षा क्यों न की जाय। मौलाना मोहम्मद अलीने ३० मईके बम्बईके अपने भाषणमें इनकी (हमीद अहमदकी) वीरता और धीरताकी बडी प्रशंसा की है। जिस समय हमीद अहमदको यह विदित होगा कि मौलाना साहब भी मेरे ही सदृश कीचडमें फस गये

दण्ड दिया है पर उन परचोंके लिखने और छपानेवाले स्वतन्त्र-विचरण कर रहे हैं। क्या सरकार इससे भी कठोर और अनुचित कोई कार्रवाई कर सकती है जिससे हमारी आत्माको पीडा पहुंचे। मेरी समझमें वह समय आ गया है जब नेताओंको यातना सहनेके लिये तैयार हो जाना चाहिये और रक्षाके किसी भी अवसरका उपयोग नही करना चाहिये। इसी भावसे प्रेरित होकर मैंने अली भाइयोंकी क्षमा प्रार्थनाको अनुचित माना है। मेरा उनके प्रति वैयक्तिक स्नेह किसीसे कम नहीं है।"

उपरोक्त पत्रमें वीरता और नम्रता साफ झलकती है और इन्ही गुणोंका प्रसाद है कि इस स्थितिके कारण इस तरहकी आशंकायें उत्पन्न हो गई हैं। पर इस भ्रमकी सारी जिम्मेदारी बड़े लाटके भाषणपर है, जिसके लिये मुझे अत्यन्त खेद है।

अली भाइयोंने भारत सरकारसे क्षमा प्रार्थना नहीं की है। उन्होंने क्षमा प्रार्थना उन मित्रोंसे की है जिन्होंने उनके भाषणोंके प्रति उनका ध्यान आकृष्ट किया था। बड़े लाटके कहनेसे क्षमा प्रार्थना कभी भी नहीं की गई। यदि मैं यह कहूं कि उन्होंने इसकी चर्चातक नहीं की तो मैं किसी भी तरह रहस्योद्घाटनका जिम्मेदार नही हो सकता। ज्योंही मैंने उनके भाषणोंकी नकल देखी मैंने अली भाइयोंकी तत्परता तथा असहयोग आन्दोलनकी शान्ति प्रियता तथा

अहिंसात्मकता साबित करनेके लिये कहा कि मैं उनसे इसका खुलासा कर देनेके लिये कहूंगा। इसमे मैं उनकी स्वतन्त्रताके लिये किसी तरहका सौदा नहीं कर रहा था। यह जानकर कि अपने भाषणोंमें उन्होंने ऐसी बातें कही हैं, जिनसे हिंसाकी प्रवृत्ति जग सकती है और शान्ति भङ्ग हो सकती है, मैं अपना जोर फूटते उन्हें उसके ही कारण जेल नही जाने देना चाहता था। मैंने इस तरहकी सलाह सभी असहयोगी अभियुक्तोंको दी है कि यदि उन्हें यह विदित हो जाय कि उन्होंने अपने भाषणमें हिंसाजनक शब्दोंका प्रयोग किया है तो उन्हें क्षमा माग लेनी चाहिये। असहयोगीके लिये इसके अतिरिक्त अन्य कोई दूसरा मार्ग नही है। यदि उन्ही भाषणोके कारण अली भाइयोंपर किसी अदालतमें अभियोग चलाया गया होता तो मैं उन्हें उन वाक्योंके लिये—जिनसे मेरी समझमें हिंसाकी संभावना थी—उस अदालतसे भी क्षमा माग लेनेकी राय देता। किसी असहयोगीके लिये केवल इतना ही पर्याप्त नही है कि वह किसी भी तरह हिंसाका भाव नही दिखाता बल्कि उसके लिये यह भी आवश्यक है कि उसकी बातोंसे प्रत्येक विचारवान पुरुष यही भाव निकालना है कि उसकी सारी चेष्टायें अहिंसात्मक हैं या हिंसाकी विरोधिनी हैं। हमलोगोंको शक शुबहेसे सदा दूर रहना चाहिये। इस आन्दोलनकी सफलता केवल इस बातपर निर्भर करती है कि हमलोग पूर्ण त्याग तथा पवित्रताके भाव प्रगट करें। इसलिये

में इस पत्रके लेखकसे तथा उन लोगोंसे जिनके विचार इस पत्रके लेखककेसे हैं, यह कह देना चाहता हूं कि अली भाइयोंकी क्षमा प्रार्थनासे असहयोग आन्दोलनपर जरा भी धक्का नहीं लगा है, जैसा कि इस पत्रके लेखकने लिखा है, बल्कि इससे इसके अहिंसात्मक होनेका और भी पक्का सबूत मिल गया है। इसमें असहयोग आन्दोलनकी पुष्टि ही मिली है।

इस पत्रके लेखकको इस बातसे मानसिक सन्ताप होता है कि एक तरफ तो इनसे भी नर्म भाषाके प्रयोग करनेवाले अनेक असहयोगी जेलोंमें सड रहे हैं पर अली भाई इस तरह की कडी भाषाका प्रयोग करके भी जेलोंमें जानेसे बच रहे हैं। इसी बातमेंही असहयोगकी असलियतका पता चल जाता है। असहयोगीको अपने शरीरकी रक्षाके लिये किसी तरहका सौदा नहीं करना चाहिये। मेरे लिये यह मार्ग खुला था कि मैं दूसरोंकी स्वतन्त्रताके लिये सौदा करता। पर ऐसी दशामें मैं असहयोगके सम्पूर्ण कार्यक्रमपर ठण्ढा पानी छिडक देता। मैंने बडे लाटसे स्पष्ट शब्दोंमें कह दिया दिया था कि चाहे भारत सरकार अली भाइयोंके साथ किसी तरहकी कार्रवाई करे पर मैं अली भाइयोंसे मिलकर यह बात अवश्य कहूंगा कि अपनी मानकी रक्षाके लिये आपलोगोंको यही उचित है कि आप लोग अपने भाषणका खुलासा कर दें।

हमें अपना काम करते रहना है, चाहे सरकार उसमें भाग ले या नहीं। कमसे कम मुझे तो कभी भी इस बातकी आशा नहीं

है कि सरकार हम लोगोंके साथ इस काममें कभी भी साथ देगी। जिस समय मुझे इस बातका पक्का विश्वास हो गया कि अब यह सरकार मर्यादाके योग्य नहीं रह गई तब मैंने इसके साथ असहयोग किया। लार्ड रेडिङ्ग न्याय करना चाहते हैं और वे शायद न्याय और ईमानदारीसे काम करें भी। पर उन्हें ऐसा करनेकी स्वतन्त्रता ही नहीं मिलेगी। यदि सरकारको अपनी मर्यादाका जरा भी ख्याल होता तो उसने उसी समय—जब कि उसने अली भाइयोंपर मुकदमा नहीं चलानेका निश्चय किया—समस्त असहयोगी कैदियोंको रिहा कर दिया होता। यदि सरकारको अपनी मर्यादाका जरा भी ख्याल होता तो वह सबसे बड़े अपराधी पण्डित मोतीलाल नेहरूको स्वतन्त्र रहने देकर साधारण विद्यार्थियोंको पकड़कर जेलमें न ठूंस देती। ("अवधके किसानोंको सन्देश" शीर्षक पर्चे पण्डित मोतीलाल नेहरूने अपने हस्ताक्षरसे छपवाकर प्रतापगढ़, फैजाबाद आदि स्थानोंमें बाटनेके लिये कुछ नवयुवकोंको भेजा था। स्थानीय सरकारी कर्मचारीने उन परचोंको जब्त कर लिया और उन नवयुवकोंको पकड़कर ६।६ मासका कठिन कारावासका दण्ड दिया। जिस इजलासमें इनका विचार हो रहा था उसीके ठीक बाहर पण्डित जवाहरलाल नेहरू खुले आम उन्हीं परचोंको बाट रहे थे पर न तो उन्हें ही किसीने गिरफ्तार किया और उनके लिखने और छापनेवाले पण्डित मोतीलाल नेहरूको ही गिरफ्तार किया या दण्ड दिया) यदि सरकारको अपनी मर्यादाका जरा भी

ख्याल होता तो वह इस तरहकी निरर्थक अमन सभायें स्थापित करनेकी भूल न करती। यदि सरकारको अपनी मर्यादाका जरा भी ख्याल होता तो वह अपनी अमानुषिक और क्रूरता पूर्ण कार्रवाइयोंके लिये आजसे बहुत दिन पहले ही क्षमा याचना कर चुकी होती और उसके लिये खेद प्रकाशित कर चुकी होती जिस तरह हम लोगोंने अमृतसर, कसूर, विरामगाव, अहमदाबाद तथा हालमें मालेगावमें जनता द्वारा कीगई प्रत्येक ज्यादतियोंके लिये क्षमा प्रार्थना की और खेद प्रगट किया। मैं इस सरकारसे किसी तरहका भ्रमपूर्ण या झूठ आशा नहीं रखना चाहता। यदि सरकार अली भाइयोंपर कल ही अभियोग चला दे तोभी मैं उस क्षमा प्रार्थनाको सार्थक ही बतलाऊंगा। उन्होंने जैसा चाहिये वैसा ही किया है और हमें भी उनका ही अनुकरण करना चाहिये। जहातक सरकार अन्य लोगोंको अप्रीति फैलानेके अपराधमें गिरफ्तार कर रही है वह अली भाइयोंको ही गिरफ्तार कर रही है।

आगे चलकर लेखकने यह भाव दिखलाया है कि जो असहयोगी जेलमें हैं वे जेलसे बाहर वाले असहयोगियोंसे अभागे हैं। मैं तो यही कहूंगा कि यह लिखकर इस पत्रके लेखकने असहयोग आन्दोलनके असली भावको व्यक्त नहीं किया है। मेरी तो यही धारणा है कि यदि मैं असहयोग आन्दोलनके एक भी नियमको न तोड़ूं और न सदाचारके नियमको तोड़ूं तो भी यदि मैं जेलमें ठूंस दिया जाऊं तो मैं सच्ची स्वतन्त्रता उसीको कहता हूं। जिस

तरह स्वामीका घर दासके लिये जेलखाना है उसी तरह यह देश यहांके प्रत्येक निवासीके लिये जेलखाना है। यदि एक दास अपनी दासताकी बेड़ी काटना चाहता है तथा उस हीन अवस्था से मुक्त होना चाहता है तो उसे ऊपर उठना होगा और ऐसा करनेके लिये उसे अपने मालिकका विरोध करना होगा तथा उस विरोधके लिये उसे आजन्म उस मालिककी कालकोठरीमें सड़ना होगा। उसे कालकोठरीका द्वार ही स्वतन्त्रताका द्वार है। जो लोग सरकारी जेलोंमेंपड़े अनेक तरहकी यातनायें भोग रहे हैं उनके लिये मैं जरा भी दुखित नहीं हूं। अत्याचारी राजके अन्दर रहकर निर्दोष व्यक्तिको फांसीपर चढ़ते समय भी हसते ही रहना चाहिये। अलीभाईयोंके लिये यह कोई कठिन काम नहीं था कि उन्होंने मेरी सलाह नमानी होती और इस अवसरसे लाभ उठाकर अपने साथियोंके साथ जेलकी हवा जाते रहते। मैं पाठकोंसे यहीपर यह बात कह देना चाहता हूं कि दक्षिण अफ्रिकामें सत्याग्रह संग्रामके अन्तिम अवसरपर जब मैं गिरफ्तार हुआ तो मेरी पत्नी तथा अन्य बन्धु बान्धवोंको एक तरहका सन्तोष मिल गया। दक्षिण अफ्रिकाके जेलखानोंमें ही मुझे संसारके झंझटोंसे क्षणिक शान्ति मिल सकी थी।

इतना लिख देनेके बाद यह स्पष्ट हो गया होगा कि हम असहयोगी कैदियोंको अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके हेतु किसी तरहका बयान या क्षमा प्रार्थना न पेश करना चाहिये।

फिर मिस्टर पाल

(जून १५, १९२१)

मिस्टर पालने इङ्गलिशमैनमें एक पत्र लिखा है। अन्य समाचारपत्रोंनेभी उसे उद्धृत किया है। उस पत्रका पूरी तरहसे उत्तर दिया जाना चाहिये। मिस्टर पालका पत्र पढ़नेसे साफ मालूम होता है कि उन्हें गलत समाचार मिले हैं और यही कारण है कि उन्होंने अनेक तरहकी सिफारिशें की हैं। पर यदि उन्हें सब बातोंका पता लगा होता तो कदाचित वे वैसा नही करते।

बड़े लाटसे मेरी मुलाकात तथा अली भाइयोंकी क्षमा प्रार्थनाके सम्बन्धमें जो अनेक तरहके भ्रमपूर्ण विचार चारों ओर फैल रहे हैं उनके प्रधान कारण हैं सरकारकी सूचना, बड़े लाटका भाषण तथा पत्रोंके सवाददाताओंका मेरी शिमलेकी यात्राके सम्बन्धमें अनुमानित विचार।

जिस समय मैं शिमला गया मुझे स्वप्नमें भी इस बातका अनुमान नही था कि मुझे बड़े लाटसे मुलाकात करना पड़ेगा। वहा जाकर मुझे ज्ञात हुआ कि पण्डित मदनमोहन मालवीय तथा श्रीयुत सी० एफ० मण्डरूज दोनों यह हृदयसे चाहते हैं कि मैं बड़े लाटसे मिलू। पर मेरी शिमला-यात्राका एकमात्र अभिप्राय पण्डित मदनमोहन मालवीयसे मिलना था जो उस

समय इतने कमजोर थे कि मुझसे मिलने नहीं आ सकते थे। पण्डित मदनमोहन मालवीयजीसे सब बातें सुनकर तब मैंने बड़े लाट या उनके मन्त्रीके पास यह लिखना निश्चय किया कि यदि आप (बड़े लाट) इस (असहयोग) संग्रामके बारेमें मेरा मत सुनना चाहते हैं तो मैं आपसे मुलाकात करनेके लिये तैयार हूं। मैं बड़े लाटसे मिलकर उन्हें यह बतलाने गया कि मैं असहयोगी क्यों होगया न कि उनसे मेरे मिलनेका यह अभिप्राय था कि मैं उनसे अली बन्धुओंके सम्बन्धमें भारत सरकारके किये निर्णय को बदलवाऊं। न तो बड़े लाटने पहले पहल अली भाइयोंके होनेवाले अभियोगकी चर्चाही छेड़ी और न उस विषय पर हम लोगोंने अधिक समय तक बातचीतही की। हमलोग असहयोग आन्दोलन पर बातचीत कर रहे थे। बीचमें अहिंसाका प्रसंग आया कि व्यवहारमें उसे किस तरह चरितार्थ किया जाता है। उसीपर बड़े लाटने अली भाइयोंके भाषणकी भी चर्चा चलाई। निदान बड़े लाटने अलीभाइयोंके भाषणमेंसे कुछ अंश मुझे पढ़कर सुनाये। उन शब्दोंको सुनकर मैंने इस बातको स्वीकार किया कि इनका जो तात्पर्य लगाया जाता है उसकी ध्वनि इनमेंसे निकलती है। इसपर मैंने बड़े लाटसे कहा कि मैं अलीभाइयोंसे मिलूंगा और उन्हें सलाह दूंगा कि वे अपने उस भाषणका खुलासा कर दें। पर इसके लिये मैं सरकारकी किसी तरहकी कार्रवाईमें उलट फेर नहीं कराना चाहता। सरकार जो मनमें आवे करे। उन्होंने जो खुलासा प्रकाशित किया उसमें यह कहीं,

नहीं लिखा था कि यह इस शर्तपर किया गया है कि, सरकार हमारे (अली भाइयोंके) ऊपर अभियोग चलानेके विचारको पलट दे। अली भाइयोंके क्षमा प्रार्थना तथा खुलासाके बाद सरकारने अपना निर्णय बदल दिया, इसमें सरकारकी बुद्धिमानी और दूरदर्शिता झलकती है। मैं इस बातको स्वीकार करता हूं कि इससे मुझे बहुत शान्ति मिल गई। पर मैं मिस्टर पालके इस कथनसे सहमत नहीं हो सकता कि अली भाइयोंकी गिरफ्तारीसे खूनखराबी होना अवश्यम्भावी था। मेरी भांति अली भाई भी विद्रोहवाले कानूनको भङ्ग करते जा रहे हैं और ऐसा करके गिरफ्तारीको निमन्त्रित कर रहे हैं। यदि देशने हमलोगोंका साथ दिया तो इसी वर्ष किसी न किसी समय हमलोग सरकारको ऐसी स्थितिमें डाल देंगे कि या तो वह हम सबको पकड़कर जेलमें डाल देगी या जनताकी मांगोंको पूरी करेगी। अली भाइयोंके क्षमा प्रार्थनासे यदि उनपर मुकदमा चलाया जाना रुक गया है तो अभियोग गलत आधारपर अवलम्बित था जिसकी सफाई भी नहीं हो सकती थी।

इसलिये मैं हृदयसे यह बात चाहता था कि अलीभाइयोंपर इसलिये अभियोग नहीं चला जाय कि उन्होंने हिंसाकी प्रवृत्तिको जगाकर शान्तिभङ्ग करनेके लिये जनताको प्रेरित किया पर साथ ही यदि मेरी तथा उनकी गिरफ्तारी इस कारण हो कि हमलोग कानूनके आधारपर प्रतिष्ठित इस सरकारके प्रति

अप्रीति फैलानेकी योजना कर रहे हैं तो मैं उस गिरफ्तारी और सजाका स्वागत करूंगा। हमलोगोंने देखा है कि जो कुछ हो रहा है उसका अनुभव करते हुए क्षमा प्रार्थना न करना और खुलासा न करना भूल होगी, इससे आन्दोलनको धक्का पहुंचेगा और हमलोग शत्रुओंके मनकी कर देंगे।

मिस्टर पालका यह अनुमान सच है कि विषय गम्भीर नहीं है तथा जिनसे गहरे स्वार्थसे सम्बन्ध नहीं है उनका निपटारा सहल और समझौतेसे कर देनेका मैं पक्षपाती हूं। पर मैंने किसी तरहके भी समझौतेकी शर्तों पर बड़े लाटसे बात चीत नहीं की। इस तरहके समझौतेके लिये बात चीत करनेका अधिकार उसीको हो सकता है जिसे प्रजा अपना प्रतिनिधि मान ले। मैं मिस्टर पालको इस बातका भी सन्तोष दे देना चाहता हूं कि मैं बिना जनताकी रायके इस तरहके समझौतेके लिये तैयार भी नहीं हो सकता और यदि मैंने समझौतेकी बातचीतकी भी तो उसमें किसी तरहका रहस्य नहीं रहेगा और कोई भी कार्रवाई छिपी नहीं होगी। पर जब दो शांत व्यक्ति एक दूसरेके मतको जाननेके लिये मिलते हैं तो उस अवस्थामें उनकी बातें अवश्य गोपनीय होंगी। मेरी बड़े लाटसे मुलाकात केवल एक दूसरेको समझने तथा जाननेके लिये हुई थी। इस मुलाकात और बात चीतसे जो परिणाम निकला उसके सम्बन्धमें जनतासे केवल इतना कह देना चाहता हूं कि निकट भविष्यमें उन्हें सरकारके साथ किसी तरहके

समझौतेकी आशा नही करनी चाहिये । इसका प्रधान कारण यह है कि जनता अभीतक पूरी तरहसे तैयार नहीं है और लार्ड रेडिंग न माननेवालेको भी मनानेके लिये तुले हैं। वे इसी पुरानी बोतलमे नई शराब नही ढाल सकते। पञ्जाब और खिलाफतके अत्याचारोके ज्योंके त्यों रहते हुए वे भारतीयोंको सुखी और सन्तुष्ट नही कर सकते।

मिस्टर पालने लिखा है कि पञ्जाब और खिलाफतका प्रश्न हल हो जानेपर क्या मैं सन्तुष्ट हो जाऊंगा और स्वराज्य प्राप्तिका भार अन्य नेताओंपर छोड दूंगा ? मिस्टर पालका यह अनुमान ठीक है। मैं भी यही चाहता हू और इसका प्रधान कारण यही है कि जिस समय भारतकी जनतामें इतना जोर आ जायगा कि खिलाफत तथा पञ्जाबके अत्याचारोका प्रतीकार करा सकेगा तो फिर स्वराज्य तो उसके बायें हाथका खेल हो जायग। वह जब चाहेगी ले लेगी । मेरी समझमें स्वराज्य कोई भिन्न वस्तु नहीं है। प्रजाके हाथमे इस तरहका अधिकार आ जाना, कि वह डायर आदिकी क्रूरतायें तथा लायड जार्जकी चालवाजियो तथा विश्वासघातका प्रतीकार करा सके, इसकोही मेरी समझमें सच्चा स्वराज्य कहते हैं। जिस समय हममे इसके प्रतीकारकी योग्यता आ जायगी हम स्वतन्त्र शासनके सर्वथा योग्य हो जायेंगे। यदि बङ्गालके मेरे अनुयायी मेरी इस मुलाकातसे नाक भौंह न सिकोडें तो वे अच्छी तरहसे समझ सकते हैं कि मेरे लिये किसी तरहका समझौता अस-

म्भव है, जबतक इन दो अत्याचारोंका प्रतीकार न हो जाय, उन्हें यह भी विदित हो जायगा कि स्वराज्यके रूपका प्रश्न तभी उठ सकेगा और उसके लिये समझौतेकी बात तभी होगी जब उसके मार्गसे ये दो बाधायें हटा दी जायँगी। जबतक ये बाधायें दूर नहीं की जाती तबतक भारतको पूर्ण स्वाधीनताके सिवा और किसी बातकी चिन्ता ही नहीं करनी चाहिये। जो बङ्गाली सज्जन बारीसालकी कानफरेन्समें उपस्थित थे वे—जहातक मुझे विदित हो सका—मिस्टर पालकी इन विवेचनाओंसे सन्तुष्ट नहीं थे। जहातक मैं समझ सका उनका कथन था कि यह प्रसङ्ग मिस्टर पालने कुसमयपर छेड़ा है और इससे स्वराज्यकी सच्ची प्रगतिके मार्गमें बाधा पहुच सकती है। मिस्टर पालकी विवेचना ठीक उसी राजके समान हुई जो बिना दृढ नींव दिये ही अन्तिम खण्ड बनानेकी तैयारी करने लगा। इसलिये मैं मिस्टर पालसे अनुरोध करूगा कि अभी असमयमें ही आप स्वराज्यके रूपका प्रकरण न उठाइये। मेरी तरफसे मैं उन्हें विश्वास दिला देना चाहता हू कि जनताके प्रतिनिधियोंकी सलाह लिये बिना स्वराज्यके संबन्धमें मैं कुछ भी नहीं करूगा। खिलाफत तथा पञ्जाबके सम्बन्धमें पूछताछ या सलाहकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि उस सबन्धकी कमसे कम मागें सर्वसम्मतिसे उपस्थित कर दी गई है और उनसे प्राय सभी परिचित हैं।

फिर क्षमा प्रार्थना

(जून २२, १९२१)

मेरी शिमलेकी यात्रा तथा अली भाइयोंकी क्षमा प्रार्थनाके प्रसगको लेकर मुझे जितना समय नष्ट करना पडा है उतना और किसी प्रसगपर नहीं। इस सम्बन्धमें मेरे पास जितने पत्र आये हैं उनमेसे केवल एक पर विचार करना चाहता हू। एक सम्मानित मित्रने—जिसे मेरी इमानदारी और स्पष्टवादितापर अभिमान है—शिमलेसे लिखा है कि शिमलेमें यह खबर फैली है कि मैंने बडे लाटके साथ अन्याय किया। मैं उनपर मर्यादा भङ्ग करनेका दोषारोपण किया और इस बातकी घोषणा करके कि अली भाइयोंने सरकारसे क्षमा प्रार्थना नही की है मैं जानकर या अनजानकारीसे सत्पथसे गिर गया हू। पर मेरा इस समय भी यही विश्वास कि है क्षमा प्रार्थना सरकारसे नहीं की गई थी। यदि वास्तवमें यह बात होती तो मैं उन शब्दोंमे ही उस बातको स्पष्ट कर देता। इस सम्बन्धमें जो शब्द लिखे गये थे उनका प्रयोग दो अर्थी अभिप्रायसे नही हुआ था। ऐसी कोई भी घटना नहीं उपस्थित हुई थी कि अली भाइयोंकी मुंहकी लाली रखनेके लिये इस तरहके आचरणकी आवश्यकता थी। मैं प्रत्येक व्यक्तिको—

स्वयं बड़े लाटको भी—इस बातका पक्का विश्वास दिला देना चाहता हूं कि यदि मैं अपनी बातसे जरा भी हटा हूं तो मैं उसके लिये उनसे (बड़े लाटसे) तथा समस्त संसारसे क्षमा मांगनेके लिये तैयार हूं। मैं सचको सबसे उत्तम समझता हूं। इसके लिये मुझे यदि अपना सर्वस्व, देशपर अपना प्रभाव, खो देना पड़े तोभी मैं इसका साथ नहीं छोड़ सकता। जहां तक मुझे स्मरण है मैंने लार्ड रेडिङ्ग पर मर्यादा भङ्गका दोषारोपण कभी भी नहीं किया है। जहां शीघ्रतासे बातचीत होती है उसका असर केवल मस्तिष्क पर पड़ता है। जहां तक सम्भव हो सकता है मन उस बातचीतका चित्र अङ्कित करता जाता है पर न तो वह सम्पूर्ण बातचीतको ही स्मरण रख सकता है और न उनके क्रम तथा शब्दको ही स्मरण रख सकता है। इससे यह सम्भव हो सकता है कि भिन्न भिन्न प्रसङ्गोंपर हम लोगोंकी जो बातें हुई उनका हम लोगोंके मस्तिष्क पर भिन्न भिन्न प्रभाव पड़ा हो। उस बातचीतसे मैं जो कुछ समझ सका था उसका मैंने ठीक ठीक विवरण दे दिया है। और जहां तक सम्भव था मैं गोपनीय बातोंको प्रगट करनेका अपराधी भी नहीं बना। पर मैं देखता हूं कि अब भी जनता अन्धकारमें पड़ी है। इसलिये मैं देखता हूं कि जबतक उस मुलाकातकी बातें साफ साफ न प्रगट करदी जायंगी तबतक मुझे सन्तोष नहीं हो सकता। इसलिये मैंने बड़े लाट महोदयके पास पत्र लिखा है कि या तो मैं और आप दोनों मिलकर संयुक्त विवरण प्रकाशित कर दें या आप मुझे

अली भाइयोंने असहयोग आन्दोलनका बड़ा उपकार किया है। इसलिये मुझे इस बातका जरा भी दुःख नहीं है कि मैंने उन्हें यह सलाह दी। मैं इस बातके लिये भी अतिशय कृतज्ञ हूं कि लार्ड रेडिङ्गने मेरी बातें मान लीं और संयुक्त विवरणके प्रकाशनके लिये तैयार हो गये। इस संयुक्त विवरणके सम्बन्धमें मुझमें तथा बड़े लाटमें जो पत्र व्यवहार हुआ उसमें भी मैंने यही देखा कि बड़े लाटने ऐसी किसी भी बातके समावेशसे इन्कार नहीं किया जो आवश्यक थी और जिससे उस घटना पर कुछ भी प्रकाश पड़ सकता था। अपनी तरफसे तो मैंने उन्हें लिख दिया था कि मैं कोई भी बात परदेमें नहीं रखना चाहता। इस लिये इस समय जो विवरण प्रकाशित किया गया है वह दोनों तरफका पूरा विवरण है।

संयुक्त विवरण

महात्मा गांधीने शिमलामें बड़े लाटसे मुलाकात करके जो बातचीत की थी तथा उसके बाद ही अली भाइयोंके सम्बन्धकी जो घटना घटित हुई उसके सम्बन्धमें समाचार पत्रोंमें जो समाचार निकले तथा उसके आधार पर जो जो आक्षेप और कटाक्ष किये गये उनकी ओर बड़े लाटका ध्यान—विशेष कर महात्मा गांधी द्वारा—आकृष्ट किया गया। इन विवरणोंको देखनेसे विदित होता है कि जो कुछ बातचीत शिमलाकी मुलाकातमें हुई थी उनका ठीक ठीक समावेश इनमें नहीं है।

महात्मा गांधीकी मुलाकात बड़े लाटसे कैसे हुई? पण्डित

मालवीयजी बड़े लाटसे मिलने आये और बातचीतमें देशकी वर्तमान अवस्थाका प्रसङ्ग छिड़ गया। बड़े लाटने पण्डित मालवीयजीसे कहा कि शौकत अलीने अपने भाषणोंमें ऐसी बातें कहीं हैं जिनसे शान्ति भङ्ग होनेकी सम्भावना है, इससे उन भाषणोंके लिये उनपर अभियोग चलाना सरकारने निश्चय कर लिया है। इसपर यह बहस छिड़ गई कि इससे देशमें उपद्रव उठ पड़ा होनेकी सम्भावना है। पण्डित मालवीयजीने इसपर बड़े लाटसे कहा कि यदि आप महात्मा गाधीसे मुलाकात करें तो बहुत लाभ हो सकता है। बड़े लाटने कहा कि यदि गाधीजी मुझसे मिलनेके लिये आवें तो मैं उनसे बड़ी खुशीसे मिलूंगा और उनका मत सुनूंगा। दूसरे ही दिन श्रीयुत अण्डरूज भी बड़े लाटसे मिले और उन्होंने भी यही सलाह दी। यहींपर यह भी लिख देना उचित होगा कि उस मुलाकातमें अनेक तरहकी बातोंपर विचार हुआ पर प्रधान विषय देशकी वर्तमान अवस्था थी। बड़े लाटको यह भी मालूम है कि पण्डित मालवीयने महात्माजीसे इस बातकी चर्चा नहीं की थी कि मौलाना शौकत अली और मौलाना मुहम्मद अलीके ऊपर फौजदारी अदालतमें अभियोग चलानेकी व्यवस्था की जा रही है।

मालवीयजीके बुलानेपर महात्मा गाधीजी शिमला आये। यहा पर श्रीयुत अण्डरूजने उनसे प्रार्थना की कि आप बड़े लाटसे अवश्य मिल लीजिये। बात भी तै हो गई। पहली मुलाकातमें

अली भाइयोंपर मुकदमा चलानेकी कोई चर्चा नहीं की गई। भारतमें अशान्तिका क्या कारण है, इसी विषयपर बातचीत होने लगी। दूसरे दिनकी बातचीतमें बड़े लाटने कहा कि यद्यपि आप (महात्मा गान्धी) का कहना है कि असहयोगका प्रधान अंग अहिंसा है और यही असहयोगीका परम धर्म है तो भी अनेक कट्टर असहयोगी अपने भाषणोंमें ऐसे शब्दोंका प्रयोग करते हैं जिनसे हिंसाकी सम्भावना हो सकती है। इस पर महात्मा गान्धीने कहा—"मैं इस बातको कभी भी स्वीकार करनेके लिये तैयार नहीं हूं कि कोई भी असहयोगी अपने पथसे विचलित होकर हिंसा उत्पन्न करनेवाले शब्दोंका प्रयोग करेगा पर यदि मुझे इस बातका पक्का विश्वास दिला दिया जाय कि किसी भी व्यक्तिने ऐसा किया है तो मैं खुले आम उसकी तथा उसके भाषणोंका तबतक निन्दा करता रहूंगा जबतक कि वे अपने उन भाषणोंके लिये खेद न प्रकाशित करें जिनसे इस तरहकी हिंसाकी सम्भावना हो सकती है। इसपर बड़े लाटने अली भाइयोंका नाम लिया और कहा कि मैं आपको उनके उन भाषणोंको दिखाऊंगा जिनसे इस तरहकी ध्वनि निकलती है और जिनसे शान्ति भंग होनेकी सम्भावना है। निदान वे अंश पढ़कर महात्माजीको सुनाये गये। तब उन्होंने इस बातको स्वीकार किया कि इनसे इस तरहकी ध्वनि निकल सकती है जैसा कि बड़े लाटका कहना है। पर साथ ही महात्माजीने बड़े लाटको विश्वास दिलाते हुए कहा कि मैं अच्छी तरह जानता हूं कि

मौलाना मोहम्मद अली या मौलाना शौकत अलीने इन शब्दोंका प्रयोग जान बूझकर इस नियतसे नहीं किया है कि इनसे किसी तरहकी उत्तेजना फैले। उसके बाद महात्माजीने यह भी कहा कि शिमलासे रवाना होते ही मैं उनसे मिलूगा और उन्हें सलाह दूंगा कि वे उन शब्दोंके लिये जो सयोगवश उस भाषणमें आ आ गये हैं, पर जिनके समावेशकी उनकी मन्शा नहीं है, उनके लिये वे खेद प्रकाशित करें। इसपर बडे लाटने यह भी कहा कि यह बात बडी भारी है इससे मैं चाहता हू कि जो खुलासा और खेद प्रकाशन महात्मा गांधी प्रकाशित करवाना चाहते हैं उसे एक बार मुझे भी दिखला लें।

यहीं पर बडे लाटने यह भी कहा कि इन भाषणोंके लिये मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना शौकत अलीपर फौजदारी अदालतमें अभियोग भी चलाया जाने वाला है, इसलिये यदि महात्मा गांधी उस खुलासा तथा खेद प्रकाशके विवरणको मुझे दिखलाकर तब प्रकाशित करे और यदि सरकारकी दृष्टिसे मुझे सन्तोष हो जायगा तो मैं अपना प्रभाव डालकर उनपर जो मुकदमा चलाये जाने वाला है उसे रोक दूंगा, क्योंकि यदि भविष्यमें इस तरहके उत्तेजित करनेवाले भाषणोंका दिया जाना रोक दिया जाय तो सरकारका अभियोग चलानेका अभिप्राय सिद्ध हो जाता है। इसपर महात्माजी उस विवरणको दिखलानेके लिये तुरन्त तैयार हो गये। यथासमय उस विवरणका खुलासा बडे लाट साहबको दिखलाया गया। उसे देखकर

बड़े लाटने कहा कि इनमें चन्द वाक्य ऐसे हैं जिनके कारण यह विवरण एक तरहकी सूचनाका रूप धारण कर लेता है जिसमें उनके धार्मिक विश्वासकी बहुत सी बातें आ जाती हैं। साथही साथ बड़े लाट महोदयने यह भी कहा कि यह अधूराही है, क्योंकि इसमें यह बात नहीं लिखी गई है कि भविष्यमें इस तरहके भाषण नहीं किये जायंगे जिससे किसी तरहकी उत्तेजना फैलनेकी सम्भावना हो। और इस क्षमा प्रार्थनाके प्रकाशनके बाद मौलाना मुहम्मद अली और मौलाना शौकत अली जनताके सामने इसकी व्याख्या किसी भी भाषामें कर सकते हैं जिससे कानून न भंग होता हो। इसपर महात्माजीने इस बातका वचन दिया कि जिन वाक्योंसे बड़े लाटको एतराज है वे निकाल दिये जायंगे और भविष्यमें ऐसा न करनेके लिये वचन दे दिये जायंगे। इसपर बड़े लाटने कहा कि यदि इस परिवर्तित विवरणपर मौलाना मोहम्मद अली तथा मौलाना शौकत अली हस्ताक्षर कर देंगे तथा भविष्यमें इस तरहकी उत्तेजना फैलाने वाले भाषण न करनेका वचन दे देंगे तो ऐसी कार्रवाई कर दी जायगी जिससे उनके ऊपर अभियोग नहीं चलाया जायगा और जबतक अपने इस वचनके अनुसार वे लोग आचरण करते रहेंगे तबतक उनके विरुद्ध किसी तरहकी कानूनी कार्रवाई नहीं की जायगी। पर इनके पहलेके भाषणोंपर अभियोग चलानेके लिये सरकार पूर्णरूपसे स्वतन्त्र है। बड़े [illegible] भी कहा कि मौलाना शौकत [illegible] इस विव-

रणके प्रकाशित करनेके बाद सरकारको अपनी स्थिति स्पष्ट करनेके लिये, कि उसने उनपर मुकदमा चलाना क्यों मुल्तवी किया, सरकारी तौरपर सूचना निकालना जरूरी है। पर इसमें लेन देन की कोई बात नहीं थी। महात्मा गांधीने यह बात भी कही थी कि उनपर मुकदमा चलाया जाय या नहीं पर जब मुझे यह मालूम हो गया है कि उनके भाषणोंमें ऐसी बातें हैं जिनसे हिंसा और उत्तेजना उत्पन्न होनेकी सम्भावना है तो मैं उनको मर्यादा तथा इस आन्दोलनकी मर्यादाकी रक्षाके लिये उन्हें इस बातको सलाह दूंगा कि वे खुली माफी मांग लें।

इस वादविवादमें महात्मा गांधी तथा बड़े लाट महोदयका ध्यान इस बातपर अवश्य था कि दोनों व्यक्ति हर तरहसे यह बात बचाना चाहते थे कि अली भाइयोंपर अभियोग चलानेसे कोई असम्भावित घटना न उपस्थित हो जाय। साथ ही वे लोग यह बात भी रोकना चाहते थे कि इस तरहके भाषण भी न किये जांय जिससे उत्तेजना फैलनेकी किसी तरहकी सम्भावना हो। बड़े लाट साहबने महात्माजीसे यह भी कहा कि यदि शीघ्रातिशीघ्र अली भाई अपना विवरण प्रकाशित नहीं कर देंगे तो उनपर जो अभियोग चलाया जाने वाला है उसे रोकना असम्भव हो जायगा क्योंकि इस भाषणकी केवल यही नहीं बल्कि इङ्गलैण्डमें भी जोरोंकी चर्चा चल रही है। इसपर गांधीने कहा कि यथाशीघ्र उसे प्रकाशित करनेकी चेष्टा की जायगी। इसके बादही महात्माजी शिमलासे रवाना हो गये

कतिपय दिनके बाद बडे लाटके पास तार भेजा कि
र्तित विवरण पर अली बन्धुओंने हस्ताक्षर कर दिया है और
प्रकाशनार्थ समाचार पत्रोंमें भेज दिया गया है। निम्न
खित परिवर्तन किया गया था। महात्मा गांधीने जो विवरण
र किया था उसमें उन्होंने लिखा था :—"हम लोग यह बात
कर देना चाहते हैं कि हम लोगोंकी कभी भी यह मन्शा
थी कि हम लोग किसी भी प्रकारसे उत्तेजना फैलानेकी
ा करें पर देखनेसे प्रतीत होता है कि हम लोगोंके कतिपय
णोंमें कुछ ऐसे शब्द आ गये हैं जिनसे उत्तेजना फैलनेकी
ावना हो सकती है।" इस शब्दके स्थानपर अली
योंने यह वाक्य लिखा था —"हम लोग यह बात भलीभांति
ट कर देना चाहते हैं कि हम लोगोंकी कभी भी यह मन्शा
ीं थी कि हम लोग किसी भी प्रकारसे उत्तेजना फैलानेकी
ा करें और न हम लोगोंको कभी इस बातका ख्याल भी था
हम लोगोंके भाषणोंमें ऐसे एक भी वाक्य पाये जायगे
सले यह अभिप्राय निकाला जायगा कि उनका अभिप्राय
तेजना फैलाना था पर हम लोगोंके मित्र (महात्मा गांधी)ने
अभिप्राय तथा मतलब उनका लगाया है उसे हम लोग
ाकार करते हैं।"

इस विवरणके प्रकाशित होनेके बाद सरकारकी ओरसे
वना निकाली गई। उस सूचनाके शब्द उनके प्रकाशित होनेके
हले तक निश्चित नहीं किये गये थे और महात्मा गाधीने उन्हें

कभी नहीं देखा था यद्यपि सरकारी सूचना (जो प्रकाशित की जाने वाली थी) का अभिप्राय उन्हें बतला दिया गया था। महात्मा गांधी तथा बड़े लाटसे जो बात चीत हुई उसका अधिकांश भाग उन घटनाओंसे सम्बन्ध रखता है जिसके कारण भारतमें इस समय अशान्ति फैली हुई है अर्थात् पञ्जाबकी दुर्घटना, खिलाफत आन्दोलन, सेवरकी सन्धि, तथा जनताकी साधारण अवस्था। महात्मा गांधीने स्वराज्यका कोई मशविदा बड़े लाटके सामने नहीं पेश किया और न किसी मसविदेकी चर्चा की।

हमारी जिम्मेदारी

(सितम्बर १२, १६२०)

पीर महबूब शाह गिरफ्तार हो गये। वे बड़े ही बहादुर आदमी थे। मुझे उनके दोष तथा निर्दोषिताके बारेमें कुछ नहीं कहना है। पर जो अभियोग उनपर चलाया गया था यदि वह ठीक है तो यह स्वीकार करना पड़ेगा कि उनकी भाषामें उत्तेजना फैलाने और शान्ति भङ्ग करनेके भाव थे। और इस अवस्थामें उन्हें जो दण्ड दिया गया है अर्थात् दो वर्षके लिये साधारण कारावास, बहुत ही हलका है। यदि अपराध साबित हो गया तो कोई भी दण्डसे बच नहीं सकता चाहे वह कितना

भी बड़ा आदमी क्यों न हो और चाहे वह कितना ही बड़ा सरकारी पदाधिकारी क्यों न हो। जिस बातके लिये मैं उनकी प्रशंसा करने बैठा हूं वह उनकी वीरता, धीरता और उदासीनता है। उन्होंने वीरता तथा धीरताके साथ अपने मुकदमेकी पैरवी करने तथा सफाई देनेसे इनकार कर दिया और उदासीनताके साथ कानूनन नियुक्त अदालतके निर्णयको स्वीकार करना तै किया। इससे मुझे विदित होता है कि उन्हें इस असहयोग संग्रामका तत्व मिल गया है। उनके अनुयायियोंने उनकी इस दण्डाज्ञाको जिस प्रकार वर्दाश्त किया है उससे भी अतिशय सन्तोष होता है।

बादको समाचार मिला कि पीर साहबने माफी मांग ली और वे रिहा कर दिये गये। इससे तो हमारी प्रत्यक्ष दुर्बलता प्रगट होती है। दासताकी कमजोर हवामें पालित तथा पोषित होनेके कारण कभी कभी हम लोगोंमें से बड़े लोग भी साधारण धक्कायातसे कांप उठते हैं और उसके सामने सिर झुका देते हैं। हम लोगोंने पश्चिमी सभ्यताका अनुकरण अवश्य किया पर उसके अन्तर्गत जो तालीम लेनी पड़ती है उसके अभ्यस्त न होकर हमने अपनी अवस्था इतनी खराब कर डाली है कि सादी सजाकी साधारण कठिनाइयां भी हमसे नहीं झेली जातीं। पर पीर महबूब शाहकी माफीसे हमें हताश नहीं होना चाहिये। मान लिजिये कि एक आदमी कई घोड़ोंपर असबाब लादे चला जा रहा है। मार्गमें एक घोड़ा थक गया। तो क्या अन्य घोड़ों-

का यह कर्त्तव्य नहीं है कि वे अपने साथीके भारको आपसमें बाट लें। इसी तरह हमें थोडा और प्रयास करके यह बोझ अपने ऊपर ले लेना चाहिये। हमलोग मनुष्य हैं, समझदार जीव हैं, यह समझ लिया जा सकता है कि जब हमारा एक साथी फिसल पडता है तो उसका बोझ सम्हालनेके लिये हमें कितना प्रयास करना चाहिये।

हमें यह समझना चाहिये कि वह बोझ क्या है और उसका क्या अभिप्राय है। जो सिपाही अपने शत्रुके बलकी अवहेलना करता है वह निकम्मा है। इसलिये हमें सबसे पहले उस सरकारका बल जान लेना चाहिये जिसके साथ हम उस भीषण संग्रामको चला रहे हैं। वह सरकार एक संगठित संस्था है जो चालबाजी बेईमान और अविश्वासी है पर साथ ही साथ साहसी, योग्य, आत्मत्यागी है और संगठनको उसमें पूर्ण योग्यता है। इसलिये हमें उसकी चालबाजीका मुकाविला सादगीसे, अविश्वासिताका मुकाविला विश्वाससे तथा झुठाईका मुकाविला सचाईसे करना चाहिये। उसकी साहसिकताके मुकाविले हमें अधिक साहस दिखलाना चाहिये, उसके आत्म-त्यागके मुकाविले हमें अधिक त्याग करना चाहिये, उसके संगठनके मुकाविले हमें अधिक संगठित होना चाहिये। उसके हाथमें हिंसा और मारकाटकी जो शक्ति है उसका मुकाविला नहीं किया जा सकता। पर उसका मुकाविला हम पूर्ण अहिंसासे कर सकते हैं। यदि हमलोग इस परीक्षामें उत्तीर्ण होनेके

लिये तैयार नहीं हैं तो हमें वर्तमान दासताकी अवस्थामें रहकर ही सन्तोष करना चाहिये। असहयोग आन्दोलनने राष्ट्रके सामने यह अवसर उपस्थित कर दिया है कि राष्ट्रीय मर्यादाको द्योतित करनेके लिये वह उन सभी आवश्यक गुणोंको प्रदर्शित करे।

अमान्य

(जून, १, १९२१)

अली भाइयोंकी क्षमा प्रार्थनाको दुर्बलताका कारण बतलाकर कितने ही समाचारपत्रवालोंने जेल जीवनकी कठिनाइयों और असुविधाओंसे बचनेके लिये यह सलाह दी है, कि सरकारको उचित है कि राजनैतिक अपराधके कारण जितने लोग गिरफ्तार हैं तथा सजा भोग रहे हैं उनसे इसी तरहकी प्रतिज्ञा कराके सबको छोड़ दे। कोई भी असहयोगी जिसे अपने आदर्श या व्रतका अभिमान है, वह इस तरहका कोई वचन देकर अपनी मुक्ति नहीं करावेगा। जहांतक मुझे विदित है प्रत्येक असहयोगी अभियुक्तने अपने अभियोगका इस बातपर विरोध किया है कि उसने ऐसी कभी प्रेरणा नहीं की थी। यदि अली भाइयोंपर अभियोग चलाया भी गया होता तोभी वे इस खुलासा तथा क्षमा प्रार्थनाको प्रकाशित करते। पर इससे उनके

जेल जानेमें किसी तरहकी रुकावट नहीं पड़ती। इस तरहकी सलाह देनेवालोंको स्मरण रखना चाहिये कि बहुतसे असहयोगी केवल इसलिये जेल गये हैं कि उन्होंने नेकचलनीका जमानत देना अस्वीकार किया तथा कितने अफवाहें फैलानेके अपराधमें जेल गये। प्रत्येक असहयोगीका यह धर्म है कि वह वर्तमान शासनप्रणालीके प्रति प्रत्येक जनताके हृदयमें अप्रीतिका भाव भर दे, देशको सविनय अवज्ञाके लिये तैयार करे और जिस तरहकी जमानतकी ऊपर चर्चा की गई है उसे देनेसे इनकार करे। अली भाइयोंने इस तरहका कोई वचन नहीं दिया है कि वे वर्तमान शासन प्रणालीके प्रति अप्रीति नहीं फैलावेंगे अथवा जनताको सविनय अवज्ञाके लिये तैयार नहीं करेंगे। इसलिये यदि सरकार केवल उत्तेजना फैलानेके अपराधमें दण्ड देना चाहती है तो आजतक जितने लोग पकड़े गये हैं तथा जेलोंमें सड़ रहे हैं उन्हें बिना किसी शर्तके तुरन्त छोड़ देना चाहिये। पर असहयोगियोंको इस बातसे सदा उदासीन रहना चाहिये। उनमेंसे अधिकांशको जेल जीवन ही अपना साधारण जीवन बना लेना चाहिये। उन लोगोंका नाम सुनकर मुझे अतिशय प्रसन्नता होती है जो किसी तरहकी जमानत न देकर जेल जाना अधिक पसन्द करते हैं। जब वह हर तरहसे अपने विश्वासकी रक्षा करनेकी चेष्टा करते हैं तो असहयोगीका यह परम कर्त्तव्य है कि वह किसीको भी किसी तरहका वचन न दे।

पञ्जाबमें दमन

(सितम्बर २६, १६२०)

लाहोरके जमींदार पत्रके मालिक और सम्पादक मिस्टर जाफरअली खापर अभियोग चल रहा है। कदाचित इस लेखके छपते छपते उनके मुकदमेका फैसला भी हो जाय। पाठक उनके मुकदमेकी पडताल करके उनपर जो अभियोग लगाया गया है उसे देखेंगे। राजनैतिक दृष्टिसे भी इस अभियोगपर विचार करनेकी आवश्यकता है। सम्प्रति विचार करनेका अधिकार सोलहो आना जजोंके हाथमें है। उनपर दोष लगाया गया है कि उन्होंने ऐसे उद्गार निकाले हैं जिनसे सम्भावना है कि राजा और प्रजामें तथा भिन्न भिन्न प्रजामें परस्पर वैमनस्य उपस्थित हो जाय और अप्रीति फैले।

मिस्टर जाफरअलीके खिलाफ अदालतमें जो बयान पेश किया गया है यदि वह बनावटी है और वास्तवमें सच नहीं है तो उनका अपराध प्रमाणित नहीं होता है, क्योंकि सच्ची बातको दोहराना या किसीके सामने कहना किसी भी कानूनके अनुसार अप्रीति फैलाना नहीं कहा जा सकता और न इससे वैमनस्य ही बढ सकता है। यदि कोई जेनरल डायरकी क्रूरता और नृशंसताकी चर्चा करता है, मिस्टर लायड जार्जके विश्वास-

घातकी बातें कहता है, बड़े लाटकी बातोंको दोहराता है अथवा मिस्टर माण्टेगूकी उन बातोंकी चर्चा करता है, जो उन्होंने सर माइकेल ओडायरकी प्रशंसामें कही थीं, तो वह साधारण सब बातोंके नाश करनेके और कुछ नहीं करता और उसपर उस सरकारके प्रति अप्रीति फैलानेका दोषारोपण किसी भी अवस्थामें नहीं किया जा सकता जो सरकार अत्याचारोंके बचा जानेकी दोषी है और प्रतिज्ञा भङ्गका अपराधी है। ऐसी अवस्थामें यदि सच कहना भी दोष है तो इस तरहकी अप्रीति फैलाना अपना परम कर्तव्य समझना चाहिये। इसी तरह यदि सच कहनेसे राजा और प्रजामें परस्पर वैमनस्य फैलता है तो यदि सत्यकी हत्या नहीं करनी है तो यह खतरा भी उठाना पड़ेगा। पर वास्तविक बात तो यह है कि वास्तविक बातोंको छिपाना—जिससे हानि होती हो, अपमान होता हो—मैत्री या प्रीति कभी भी नहीं बढ़ा सकता, बल्कि इससे तो दुश्मनी दिनपर दिन गाढ़ी होती जायगी।

मिस्टर जाफरअलीके अभियोगमें दो दोषारोपण ऐसे हैं जिनका समर्थन किसी भी गवाहने नहीं किया है। पहली बात मक्केमें आग लगाये जानेकी है। यह घटना कभी भी नहीं हुई और इस कथनका भी कोई प्रमाण नहीं है कि बगदादमें कुमारी कन्याओंका सतीत्व नष्ट किया गया। मैं नहीं कह सकता कि इन दो बातोंको मिस्टर जाफरअली खाने लिखा था या नहीं। यदि वास्तवमें उन्होंने ये बातें लिखी थीं

पञ्जाबमें दमन

(सितम्बर २६, १९२०)

लाहोरके ज़मींदार पत्रके मालिक और सम्पादक मिस्टर ज़ाफरअली खांपर अभियोग चल रहा है। कदाचित इस लेखके छपते छपते उनके मुक़दमेका फैसला भी हो जाय। पाठक उनके मुक़दमेकी पड़ताल करके उनपर जो अभियोग लगाया गया है उसे देखेंगे। राजनैतिक दृष्टिसे भी इस अभियोगपर विचार करनेकी आवश्यकता है। सम्प्रति विचार करनेका अधिकार सोलहो आना जजोंके हाथमें है। उनपर दोष लगाया गया है कि उन्होंने ऐसे उद्गार निकाले हैं जिनसे सम्भावना है कि राजा और प्रजामें तथा भिन्न भिन्न प्रजामें परस्पर वैमनस्य उपस्थित हो जाय और अप्रीति फैले।

मिस्टर ज़ाफरअलीके खिलाफ अदालतमें जो बयान पेश किया गया है यदि वह बनावटी है और वास्तवमें सच नहीं है तो उनका अपराध प्रमाणित नहीं होता है, क्योंकि सच्ची बातको दोहराना या किसीके सामने कहना किसी भी कानूनके अनुसार अप्रीति फैलाना नहीं कहा जा सकता और न इससे वैमनस्य ही बढ़ सकता है। यदि कोई जेनरल डायरकी क्रूरता और नृशंसताकी चर्चा करता है, मिस्टर लायड जार्जके विश्वास-

घातकी बातें कहता है, बड़े लाटकी बातोंको दोहराता है अथवा मिस्टर माण्टेगूकी उन बातोंकी चर्चा करता है, जो उन्होंने सर माइकेल ओडायरकी प्रशंसामें कही थीं, तो वह साधारण सब बातोंके ताज़ा करानेके और कुछ नहीं करता और उसपर उस सरकारके प्रति अप्रीति फैलानेका दोषारोपण किसी भी अवस्थामें नहीं किया जा सकता जो सरकार अत्याचारोंके पचा जानेकी दोषी है और प्रतिज्ञा भङ्गका अपराधी है। ऐसी अवस्थामें यदि सच कहना भी दोष है तो इस तरहकी अप्रीति फैलाना अपना परम कर्तव्य समझना चाहिये। इसी तरह यदि सच कहनेसे राजा और प्रजामें परस्पर वैमनस्य फैलता है तो यदि सत्यकी हत्या नहीं करनी है तो यह खतरा भी उठाना पड़ेगा। पर वास्तविक बात तो यह है कि वास्तविक बातोंको छिपाना—जिससे हानि होती हो, अपमान होता हो—मैत्री या प्रीति कभी भी नहीं बढ़ा सकता, बल्कि इससे तो दुश्मनी दिनपर दिन गाढ़ी होती जायगी।

मिस्टर जाफरअलीके अभियोगमें दो दोषारोपण ऐसे हैं जिनका समर्थन किसी भी गवाहने नहीं किया है। पहली बात मक्केमें आग लगाये जानेकी है। यह घटना कभी भी नहीं हुई और इस कथनका भी कोई प्रमाण नहीं है कि बगदादमें कुमारी कन्याओंका सतीत्व नष्ट किया गया। मैं नहीं कह सकता कि इन दो बातोंको मिस्टर जाफरअली खाने लिखा था या नहीं। यदि वास्तवमें उन्होंने ये बातें लिखी थीं

तो बड़े दुःखो बात है। सर्वसाधारणको तथा विशेषकर खिलाफत आन्दोलनके विधायकोंको इस वातपर सदा ध्यान रखना चाहिये कि वे किसी भी अवस्थामें किसी साधारण वातको व्यर्थ बढ़ाकर नहीं लिखते या उसपर तूल नहीं देते। सच बात तो यह है कि सच बातें बनावटी बतोंसे सदा जोरदार होती हैं। झूठी बातें कभी न कभी खुल अवश्य जाती हैं। इससे उस कामपर भी क्षति पहुचती है और कहनेवालेकी मर्यादा भी क्षीण हो जाती है। जो बातें प्रमाणित हो गई हैं उन्हींके आधारपर सरकारपर भी अभियोग लगाया जाय वही काफी प्रबल हो सकता है। और यदि कार्यकर्ताओंके ऊपर किसी भी प्रकार बनावटीपनका दोषारोपण नहीं किया जा सकेगा तो सार्वजनिक आन्दोलनोंको बहुत लाभ होगा।

पर जिन अभियोगको मिस्टर जाफरअली खाको स्वीकार कर लेना चाहिये—और मुझे आशा है कि उसे वे अवश्य स्वीकार कर लेंगे—और जो सरकारके अनुसार बड़े ही भीषण अपराध हैं, पर उन अपराधोंका दोषी मैं भी मिस्टर जाफर अली खाकी भांति हूं। उदाहरणार्थ युवराजके स्वागतके लिये उन्होंने जो शर्तें पेश की हैं अथवा जिन शर्तोंका कहना उनके खिलाफ पेश किये गये हैं वे ही मेरे भी हैं। मैं भी उन्हीं शर्तोंपर ही युवराजका स्वागत कर सकता हूं। यह भी कहना कितना सच है कि यदि वे शर्तें पूरी न कर दी गई तो इस साम्राज्यका पतन अवश्यम्भावी है।

आजतक सरकारने असहयोगियोंके उन भाषणोंपर ध्यान
हीं दिया था जो उन्होंने इसविषयमें किया था अथवा जिनमें
स तरहकी मागें थीं जो मिस्टर जाफर अली खापर बतौर अभि
ोगके लगाये गये हैं। इससे मुझे पूरी आशा हो गयी थी कि
रकार यह उचित ही कर रही है कि जबतक इनसे किसी
रहकी उत्तेजना और शान्ति भङ्ग होनेकी सम्भावना नहीं
खती तबतक किसी तरहका हस्तक्षेप करना नहीं चाहती।
सोचने लग गया था कि सरकार महज बोलनेके लिये तथा
अपनी उचित मागोंको दोहरानेके लिये किसीको केवल भाषाकी
कड़ाईके लिये तबतक दण्ड देना नहीं चाहेगी जबतक किसी
रहसे उनके भाषणोंसे शान्ति भङ्ग होने अथवा उत्तेजना
फैलानेकी सम्भावना न हो।

पर अब मालूम होता है कि सरकार अपनी नीतिको
बदलनेकी चिन्ता कर रही है। शायद मिस्टर जाफरअली खाके
भाषणने इसकी आवश्यकता बतला दी है। जिन जिलोंसे
रङ्गरूटोंकी अधिक सख्या मिलती थी उन्हीं जिलोंमें उन्होंने
रङ्गरूटोंमें भर्ती होनेके खिलाफ अथवा रोकनेके लिये भाषण
दिया। पर यदि उस तरहका उपदेश देना गलत या गैरकानूनी
है तब तो काग्रेसपर भी अभियोग चलाना चाहिये क्योंकि
वह भी उसी दोषका अपराधी है। पर जिस पेशेसे हम देखते
हैं कि हमारे धर्म और मर्यादापर क्षति पहुचती है उस पेशेको
ग्रहण करनेसे अपनेको रोकना हमारा परम धर्म है।

सियासतके हबीब शाहकी भी जमानत जब्त कर ली गई। मैं समझता हूं इस जब्तीका भी वही कारण है। ज्यों ज्यों असहयोग आन्दोलन अपना प्रभाव बढ़ाता जायगा और इसका प्रभाव ज्यों ज्यों प्रत्यक्ष होता जायगा त्यों त्यों इस तरहके तीखे दमनके अस्त्रोंकी भी प्रबलता होती जायगी। इससे यह स्पष्ट है कि इस आन्दोलनकी सफलता इसी बातपर निर्भर है कि इस तरहके दमन चक्रमें अपने नेताओंको पीसे जाते देखकर तथा समाचार पत्रोंकी स्वतन्त्रता अपहरण होते देखकर भी हम कदम पीछे न हटावे, अपनी पूर्व गतिके साथ आगे बढ़ते जायं। इस तरहके दमनसे हमें और अधिक जोर पकड़ना चाहिये और अन्य कामोंको भी तेजीसे चलाना चाहिये। हमारी मांगोंको एक नहीं सैकड़ों और हजारों आदमियोंको दोहराना चाहिये और दोहराते रहना चाहिये। यदि अख बारोंकी स्वतन्त्रता हर ली जाती है और समाचारपत्र चलाने वालोंका हाथ पैर बंध जाता है तो उन्हें इसकी विशेष चिन्ता नहीं करनी चाहिये। उन्हें द्वार द्वार घूम घूमकर प्रचारका काम करना चाहिये। हाथोंसे लिख लिखकर परचे बांटना चाहिये। इस तरह हाथसे लिखकर तथा स्वयंसेवकोंद्वारा उनकी नकल और लिथो करवाकर बांटनेसे प्रचारमें जो लाभ होगा वह समाचारपत्रोंद्वारा नहीं हो सकता। इस तरहसे यदि हमारा आन्दोलन अपना पूर्ण प्रभाव उत्पन्न करता गया तो एक दिन वह आवेगा जब देशमें पूर्ण शान्तिके रहते भी

हमें जोलोंमें जानेके लिये, कालेपानीकी हवा खानेके लिये तथा इससे भी खराबके लिये तैयार रहना होगा। यदि इस तरहके दमन शस्त्रोंका सामना करनेपर भी असहयोग आन्दोलन जीवित निकल आया तो इसकी प्रतिष्ठा जम जायगी और विजय हमलोगोंके सामने आ जायगी। क्या इससे यह बात प्रमाणित नहीं हो जायगी कि जो सरकार जनताकी उचित मांगोंको दबाकर रखना चाहती है तथा सच्ची बातको भी प्रगट करनेसे रोकती है, चाहे वे सरकारके हकमें कितनी भी हानिकर या अहितकर क्यों न हों तो उसके साथ असहयोग करना नितान्त आवश्यक है।

केवल हमें अधीर नहीं हो जाना चाहिये। मिस्टर जाफर अली खाके सम्बन्धमें कतिपय बातें ऐसी कही गई हैं जिनसे उनकी अधीरता प्रमाणित होती है। उदाहरणार्थ कहा गया है कि उन्होंने अपने भाषणमें कहा था कि—"मैंने सुना है कि बगदादमें एक पिता और पुत्र दोनों अंग्रेजी सेनामें तुर्कोंके खिलाफ लड रहे थे। युद्धमें लडका मारा गया। पिता पुत्रकी शव लेकर बगदाद शहरको लौट रहा था। रास्तेमें उस मृतः पुत्रका मुंह सूअरके बच्चेकासा हो गया। इस तरहकी बातोंसे अन्ध विश्वास बढानेका प्रयास किया जाता है। मुझे, पूरा विश्वास है कि मिस्टर जाफरअली खाने इस तरह जनताके अन्ध विश्वासको बढ़ानेकी प्रेरणा कभी न की होगी। खिलाफत आन्दोलन पूरा धार्मिक अन्दोलन है। झूठ बनावटीपन मनसा

अथवा कर्मणा हिंसा तथा अन्धविश्वास आदिसे इसे बचाकर रखना ही उचित होगा। खिलाफत आन्दोलन सच्चा आन्दोलन है और जिस सचको प्रगट करनेके लिये आत्मत्याग और साहसका सहारा लिया गया है उसको असफल होते तो कभी देखा ही नहीं गया।

कैदियोंके साथ व्यवहार

(नवम्बर ३, १९२०)

पंजाब सरकारने सूचना निकाली है कि लाहोरके किसी सार्वजनिक सभामें एक वक्ताने भाषण करते हुए यह कहा था कि मिस्टर जाफरअली खाके पुत्रने यह संवाद भेजा है कि यद्यपि मेरे पिताके मुकदमेंका अभी तक विचार नहीं हो चुका है तथापि उनके साथ साधारण कैदियोंका सा व्यवहार किया जाता है अर्थात् उन्हें एक कोठरीमें बन्द कर दिया गया है और साधारण कैदियोंका भोजन उन्हें दिया जाता है। पर यह बात बिलकुल गलत है। पंजाब सरकारने उस वक्ताका नाम नहीं प्रगट किया है। सर्वसाधारणको मैं यह बतला देना चाहता हूं कि मैं ही वह बोलने वाला था और मैंने ही वह बातें कही थीं जिनका अब पंजाब सरकारने विरोध किया है। मैंने पूरी सावधानीके साथ सब बातें कही थीं। यह बतलाते हुए कि यह

समाचार मुझे कहासे मिला, मैंने कहा था कि यदि यह बात सच है तो मैं कह सकता हूं कि जेलका व्यवहार नाजायज और अमानुषिक है। मुझे इस बातकी अतिशय प्रसन्नता है कि सरकारने तीनों बयानोंका खण्डन किया है। जिस पंजाब सरकारका इतना अपमान हो चुका है, जिसपरसे जनताका सारा विश्वास उठ गया है उस सरकारको, इस तरहकी एक घटनाको बनाकर मैं और अपमानित या अविश्वासी करना नहीं चाहता था। मुझे यह बात भली भांति विदित है कि इस तरह-की साधारण गलत बातोंके प्रचारसे भी हमारे उद्देश्यपर धक्का लगेगा। साथ ही साथ सरकारी विरोधोंके प्रति मुझे सन्देहकी दृष्टिसे देखनेके लिये क्षमा मिलना चाहिये, क्योंकि पंजाबकी दुर्दशाके दिनोंमें इस तरहके विरोधोंका मुझे बुरा अनुभव हुआ है। इस तरहके विरोधोंका अधिक भाग झूठी बातोंसे भरा था। इसलिये पाठकोंसे मेरा निवेदन है कि जबतक स्वयं मिस्टर जाफरअलीके पुत्र इस विषयपर कुछ न कह लें आप लोग अपना मत न प्रगट करें। उन्होंने बड़ी सावधानीके साथ ये बातें मुझसे कही थीं और मुझे इसकी सचाईमें किसी तरहका सन्देह नहीं प्रगट होता फिर भी मैं उनसे पूछताछ कर रहा हूं।

मिस्टर जाफरअली खाको ५ वर्षका निर्वासन तथा १०००) रु० जुर्मानेका दण्ड हुआ है। इस दण्डाज्ञाके लिये मैं मिस्टर जाफरअली खाको हार्दिक बधाई देता हूं। जनताको यह स्मरण रखना चाहिये कि उन्हें यह दण्ड केवल इस अपराधपर

दिया गया है कि उन्होंने कुछ राय कायम कर ली थी। मैंने इन बातोंकी पूर्ण आलोचना पहले ही कर दी है। इस तरह बजाय सरकारने दमनका श्रीगणेश किया है। गैरकानूनी सभा कानून भी जारी कर दिया है। यदि कानेको काना कहना बुरी बात है तो जोरदार भाषण भी बुरा ही समझ लेना चाहिये। ऐसी दशामें जो सरकार अपने किये पर पश्चात्ताप प्रगट करना नहीं चाहती उससे पूर्ण स्वतन्त्रता लाभ करनेको चेष्टा भी बुरी ही है।

पर केवल इस तरहके दमनसे हमें नहीं घबरा जाना चाहिये। इस तरहके दमनसे हमें साहस बढाना चाहिये और उस दासताके जूएको—जो हमें आजन्म दबाकर तथा पद-दलित बनाकर रखना चाहता है—सदाके लिये तोडकर फेंक देनेका दृढ संकल्प कर लेना चाहिये। पर हमें खुली या छिपी तौरसे प्रतिहिंसाका यत्न नहीं करना चाहिये। जितने कडे भी दमन क्यों न हों हमें सहिष्णुताके साथ बरदाश्त करना चाहिये और उससे हमें और भी दृढ होकर इस सरकारका अन्त कर देने अथवा इससे असहयोग करनेके लिये तैयार हो जाना चाहिये। सफलताके लिये सबसे आवश्यक बात यही है कि किसी भी अवस्थामें हमें दमनसे घबराकर विचलित नहीं हो जाना चाहिये और अपना माथा नहीं खराब करना चाहिये। यदि कोई निर्दोष व्यक्ति पकडा जाता है और हम लोग हड़ताल कर देते हैं तो इससे हम अपनी दुर्बलता प्रगट करते हैं कि हम

जेलखानोंमे जानेसे डरते हैं। पर मेरी समझमे यदि स्वतन्त्रता देवीके मन्दिरमें प्रवेश करनेका कोई द्वार है तो वह सरकारका जेलखाना है। और जब कोई राजनैतिक अपराधी केवल इस लिये दण्ड पाता है कि उसने अपना निश्चित मत प्रगट किया है तो हमें दु ख न प्रगटकर प्रसन्न होना चाहिये। राजनैतिक कैदियोंसे जेलखानोंको भरनाही उन्हें मुक्त करनेका सबसे सहल मार्ग है और जेलखानोंको भरनेका सबसे सहल उपाय यही है कि अनवरत परिश्रमसे हम असहयोग आन्दोलनका प्रचार करते जाय तथा ब्रिटिश साम्राज्यके अन्दर या बाहर पूर्ण स्वाधीनताकी माग स्पष्ट शब्दोंमें बिना किसी विघ्न बाधाके उपस्थित करते जाय। पर इस तरह मत प्रकाश करनेके लिये दमन जारी करनेमें केवल पजाब सरकारने ही अपना हाथ नहीं बढाया है। सयुक्त प्रान्तकी सरकार भी इससे उदासीन नहीं है। मौलाना जाफर उल मुल्कको दो वर्षकी सजा और ७००) रु० जुर्माना किया गया है। और यदि जुर्माना न दे सके तो ६ मास और दण्ड भोगना पड़ेगा। और भी अनेक गिरफ्तारियोंकी सम्भावना है। इसके साथ ही साथ यह बात भी धीरे धीरे उठने लगा है कि मेरी कार्रवाइयोंमें भी हस्तक्षेप होना चाहिये। मुझ स्वतन्त्र छोड देना उचित नहीं। मेरी कार्रवाइयोंका फल यह होना चाहिये कि अल्प समयमें भारतको स्वराज्य मिल जाना चाहिये। पर यदि स्वराज्य नहीं मिला तो जनता मेरी बातोंके सुनने तथा उनपर आचरण करनेसे अवश्य रोक दी जायगी। जब

सरकार यह समझती है कि मेरे आचरणसे किसी तरहकी क्षति पहुचनेकी सम्भावना है तो वह मेरी स्वतन्त्रताका अपहरण कर सकती है। इस बातका उसे पूरा अधिकार है। पर सरकारको भी यही उचित है कि वह मुझे उचित दण्ड दे, मेरे साथ काम करने वालोंको क्यो व्यर्थ तग करती है, क्योंकि प्रधान अपराधी तो मैं हू। वह मेरी कार्रवाई तथा मेरे साथियोकी कार्रवाईमें कोई भेद नहीं निकाल सकती। हम लोग केवल किसी निर्दिष्ट तत्वका प्रचार करते हैं जो सदा चलता रहनेपर भी किसी तरहसे शान्ति नही भग कर सकता। केवल अत्याचारी सरकार इस तरहकी शान्तिमय कार्यवाहियोंको रोकनेकी चेष्टा करेगी। इसलिये जबतक यह सरकार पजाबके अत्याचारोंके प्रतीकार तथा खिलाफतके साथ अन्याय करनेसे हाथ मोडती रहेगी तबतक वह दमनका शस्त्र भी प्रबल वेगसे चलावेगी क्योंकि जब अत्याचारीके मार्गमें किसी तरहकी बाधा उपस्थित की जाती है तो उस बाधाको हटानेका उसके पास एक मात्र यही शस्त्र रह जाता है।

इसी प्रसगपर दिसम्बर १, १९२०के यग इण्डियामें महात्माजीने लिखा था —

मैंने पाठकोको वचन दिया था कि मैं मौलाना जाफर अली खाके पुत्रसे इस बातकी पूछताछ करूगा कि अपने पिताके साथ जेलमें किये गये व्यवहारके बारेमें उन्होंने जो कुछ मुझसे कहा

था वह सच था-या नहीं, क्योंकि सरकारी सूचना द्वारा इसका विरोध किया गया है। -उन्होंने मेरे पास लिखा है कि मै सरकारी सूचनाको झूठा बतलानेमे जरा भी भय नही खाता। जो कुछ मैंने अपने पिताके बारेमें लिखा था वह पूर्णतया सच था। वे काल कोठरीमें बन्द कर दिये गये थे और उन्हें बाहरसे खाना नही मिल सकता था यद्यपि उनके अभियोगका फैसला नही हो गया था। लाहोरकी सभामे जब उनके साथ इस व्यवहारका सार्वजनिक घोषणा की गई उसके बादसे उन्हें अच्छा स्थान मिला है और उन्हें बाहरसे भोजन भी मिल सकता है। पर इससे सरकारका पक्ष दृढ नहीं होता। इससे तो उसकी और दुर्बलता प्रमाणित होती है। जब उनके दुराचरणकी निन्दा की गई तो उन्होंने उसे सुधारा, इससे तो उनके दुर्बुद्धिका ही प्रमाण मिलता है। वे जानते थे कि जो कुछ वे कर रहे हैं अनुचित है। पर उन्हें आशा थी कि विचाराधीन कैदीके साथ उनका यह दुर्व्यवहार अलक्षित रह जायगा। एक बात और हो सकती है, इस तरहकी बातें उदार आदमी ही सोच सकता है। सम्भव है ऊंचे अधिकारियोंको इस तरहके अनुचित व्यवहारका पता न हो और छोटे छोटे कर्मचारी ही इस तरहके आचरणके दोषी हों। पर यदि यह बात सत्य है तो इससे भी यह प्रमाणित होता है कि वर्तमान शासन प्रणाली पूर्णतया चरित्रहीन हो गई है। मुझे आशा है कि सरकार इस घटनाकी पूरी तरह जाच करावेगी। अनुचित प्रकारसे मैं उस पर किसी

तरहका आक्षेप या दोषारोपण नहीं करना चाहता। पर जब तक सरकार इस मामलेपर पूर्ण प्रकाश नहीं डालती तब तक जनताको उन बातोंमे विश्वास करना उचित होगा जिनका समर्थन मौलाना जाफर अलीके पुत्रने किया है।

पश्चात्तापका परिणाम

(जुलाइ ८, १९२१)

मद्रासके मिस्टर याकूब हसनने मेरे पास निम्नलिखित दयनीय पत्र लिखा है:—

"मेरी समझमें अब आ रहा है कि क्षणिक दुर्बलताके कारण मैंने अविवेकपूर्ण काम कर डाला है। जबसे मुझे अपनी भूलका पता लग गया है तबसे मेरी आत्माको इतना भीषण सन्ताप हो रहा है कि मुझे सन्देह हो गया है कि कहीं मैं पागल न हो जाऊं। आप इस आन्दोलनके कर्णधार हैं इसलिये मैं आपके सामने अपनेको अपराधी समझता हूं। इसलिये मैं अतिदीन और विनम्र शब्दोंमें आपसे क्षमा प्रार्थना करता हूं। आप मेरे नेता और पथ प्रदर्शक हैं। आपको अधिकार है कि आप मुझे उचित दण्ड तथा निर्भत्स्ना दें। पर साथ ही मुझे यह भी आशा है कि आप मुझपर असीम अनुग्रह कर मेरे अपराधको क्षमा कर देंगे। जिस व्रतको मैंने

उठाया था, जिसका पालन करनेकी मैंने प्रतिज्ञा की थी उसका यदि मैंने अपने इस आचरणसे अपकार किया है और इस तरह ईश्वरके सामने अपराधी हूं तो मैं उसकी कृपा प्राप्त करनेके लिये बिना किसी परितापके कठोरसे कठोर दण्ड भी सहनेके लिये तैयार हूं।"

इस पत्रमें हृदयके सच्चे भाव अङ्कित हैं। इससे इसपर टीका करना व्यर्थ है। मैंने मिस्टर याकूब हसनको लिख दिया है कि क्षमाप्रदान मेरा काम नहीं है। कौन कह सकता है कि आपत्तियोंसे घिर जानेपर मैं भी उन्हींकी तरह दुर्बल नहीं प्रमाणित होऊंगा। सबको क्षमाप्रदान करनेवाला एकमात्र ईश्वर है, क्योंकि वही हमलोगोंको भलीभांति जानता है, उससे हमारा कोई परदा नही है। उसके वचन हम सबको याद हैं, स्थान स्थानपर उसने कहा है कि जब मनुष्य अपने पाप कर्मको समझ जाता है और उसके लिये हृदयसे पश्चात्ताप प्रगट करता है तो हम उसे क्षमा कर देते हैं। हमलोग स्वयं दुर्बल हैं। इसलिये हमें उचित नहीं है कि हमलोग उस भाईकी ओर अंगुली उठावें जिसने हमारे सामने अपनी दुर्बलता प्रगट की है।

पर मिस्टर याकूब हसनकी अवस्थासे हमें सबको शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। यद्यपि विजय सामने खड़ी मुस्करा रही है पर उसका आगमन उत्तापपूर्ण होगा। उस समय यदि हम उस उत्तापको बरदाश्त नहीं कर सके तो सब बेकार हो

जायगा। हमलोगोंको यह बात भली भांति समझ लेनी चाहिये कि यह सरकार हमें भली भांति तङ्ग कर लेगी, हर तरहसे नचालेगी तब कहीं जनताके सामने अपना सिर झुकावेगी या झुकानेके लिये तैयार होगी। हमें लाखोंकी संख्यामें भारतीय जेलोंको भरनेके लिये तैयार रहना चाहिये। यदि जेलमें हैजाका प्रकोप हो जाय तोभी हमें चिन्तित नहीं हो जाना चाहिये। दासताकी जो बीमारी हमलोगोंको सता रही है और जिसके वशीभूत होकर हम अपनी सत्ताको खोते जा रहे हैं उससे यह हैजेका प्रकोप कहीं साधारण और सहनीय है। शेरवानीके अभियोगका जो नाटक खेला गया है उसकी रिपोर्ट यदि सच है तो मैं यही कहूंगा कि शेरवानी बिना किसी अपराधके जेल भेज दिये गये। संयुक्तप्रान्तमें प्रतिदिन कोई न कोई बिना किसी अपराधके जेल भेजा जा रहा है। अभी आन्ध्र देशसे तार आया है कि गन्तूर जिलेके दो असहयोगी कार्यकर्ता बिना किसी अपराधके जेल भेज दिये गये। उनमेंसे एक बैरिस्टर हैं। इस तारमें मिस्टर वेङ्कटपैय्याने लिखा है कि जहांतक आशा की जाती है दमनका दौरा जोरोंमें होगा। पर जल्दी या देरमें इस तरहका दमन अवश्य चलाया जायगा। यदि हमलोग बिना किसी घबराहटके इस आंचको बरदाश्त करते गये तो स्वराज्य इस वर्षमें अवश्य मिल जायगा। पर हम लोगोंके मार्गमें केवल दुर्बलताका ही भय नहीं है। एक भय और भी है। उत्तेजना तथा उपहासके कारण जनता कहीं आत्म-

न छोड दे, उसका दिमाग न खराब हो जाय, या आपेसे न हो जाय। 'यह भय यातना सहनेकी अयोग्यता ा अनिच्छासे कहीं भीषण है। इसलिये प्रत्येक कार्यकर्ताके यह देखना अति आवश्यक है कि वह अपनी जानको संकटमें कर भी हिंसा और उत्तेजना की प्रवृत्तिको रोकती है।

इस समय जो दमन चलाया गया है उसका भारत सबसे उत्तर यही दे सकता है कि हम विदेशी वस्त्रोंका पूर्णतया कार कर दे चाहे इसके लिये हमें कितनी भी आर्थिक क्यों न उठानी पडे। यदि हमलोगोंमें दृढता और तत्परता ' हमलोग तीन मासकी अवधिमें अपनी आवश्यकताके पर्याप्त वस्त्र चरखे और करघे द्वारा तैयार कर सकते हैं। हमलोगोंमें यह क्षमता है कि स्वराज्यकी प्राप्तितक केवल र खादीका प्रयोग करें और उसीसे सन्तुष्ट रहें?



यह कभी भी उचित नहीं है कि अभियोग चलाये जानेसे अपनी रक्षा करनेके लिये वह क्षमा प्रार्थना करें। हा, उसे इतना अवश्य करना चाहिये कि जिस समय उसका ध्यान ऐसी बातकी ओर आकृष्ट किया जाय, जिसे उसने कहा है या किया है तथा जिसके कारण किसी तरहकी अहिंसा या अशान्तिके उठनेकी सभावना हो, तो उसे अपनी भूल उसी समय सुधार कर अपने आदर्शकी ओर अपनी तत्परता साबित करना चाहिये। यदि सरकार हृदयसे असहयोगियोंको तङ्ग करना चाहती है और पूर्ण रूपसे शान्ति और अहिंसात्मक रहनेपर भी उनपर अभियोग चलाना चाहती है, क्योंकि उसे असहयोग आन्दोलप पसन्द नहीं है, तो वह उनपर केवल १२४ (ए) धाराके अनुसार अभियोग चला सकती है। इस अवस्थामें हम सबको दोष स्वीकार कर लेना चाहिये, क्योंकि यह प्रत्येक असहयोगीका धर्म है कि वह सरकारकी वर्तमान शासन प्रणालीके प्रति असन्तोष तथा अप्रीति फैलावे। हमलोग इस सरकारको समूल नष्ट कर देनेके लिये ही तैयार हुए हैं और मुझे मालूम हुआ है कि १२४ (ए) धाराके शब्दोंके अनुसार यह काम राजविद्रोह है। यदि वर्तमान सरकारको नष्ट कर देना किसी भी धाराके अनुसार जायज है तो प्रत्येक असहयोगी कट्टर राजभक्त है।

अब उपहास नहीं

(अक्तूबर २०, १६२०)

ाह तो स्वीकार ही किया जायगा कि असहयोग आन्दोलन
उपहासका सामान नहीं रह गया। उस अवस्थाको वह
कर गया। अब केवल यह देखना है कि इसका दूसरा
या होता है—दमन कि आदर। हमने लिखा है कि
स भी एक प्रकारका सभ्य विरोध है। बड़े लाटका
स, यद्यपि उसकी भाषा निहायत गन्दी थी, इसी विरोधमें
ल था।

र परीक्षाका समय आ गया है। सभ्य देशोंका तरीका है
व उपहाससे कोई आन्दोलन नहीं दबता तो उसकी प्रतिष्ठा
लगती है। जो उसके विरोधी रहते हैं वही उसका
न करने लगते हैं। और फिर दोनों दलोंका व्यवहार
ात्मक नहीं होता।

उसके बाद प्रत्येक दल एक दूसरेको अपनी ओर मिलानेके
अथवा अपने मतमें परिवर्तित करनेके लिये शुद्ध भाषा और
विवादका प्रयोग करता है।

इसमें अब जरा भी सन्देह नहीं रह गया कि कौंसिलोंका
कार यदि पूर्णरूपसे नहीं हुआ तोभी विस्तृत होगा।

छात्रोंमे असन्तोष उत्पन्न हो गया है। प्रधान प्रधान संस्थायें किसी भी दिन राष्ट्रीय हो सकती हैं। पण्डित मोतीलालजी नेहरूका वकालत छोड़ना साधारण बात नहीं है। केवलमात्र यही घटना असहयोगके उपहास उड़ानेवालोंका मुंह बन्द कर देनेके लिये प्रर्याप्त है। अब विचारवान पुरुषोंको अपना मत स्वयं निश्चित कर लेना चाहिये। पण्डित मोतीलाल नेहरूने जो रूप धारण किया है वह प्रत्यक्ष बतलाता है कि वर्तमान सरकारके अन्दर कोई दोष आ गया है। बी० ए० के ऊपरकी कक्षाओंमें पढ़नेवाले छात्रोंने अपनी उपाधियां त्याग दी हैं, डाक्टरीके विद्यार्थियोंने अपनी अन्तिम परीक्षामें सम्मिलित होना अस्वीकार कर दिया। ऐसी अवस्थामें असहयोग आन्दोलनको पागलपनकी बातें कहना उचित नहीं प्रतीत होता।

अब दो ही मार्ग हैं। या तो सरकार जनताकी बात मान ले और असहयोग आन्दोलनद्वारा जिन स्पष्ट शब्दोंमें वे अपनी मांगोंको रख रही हैं उन्हें स्वीकार कर ले या दमनचक्र चलाकर उस आन्दोलनको बन्द कर दे।

किसी सरकार द्वारा किसी भी अवस्थामें प्रयुक्त प्रत्येक उपायको दमन नहीं कह सकते। मान लीजिये कि किसीने खुली भाषामें हिंसात्मक उत्तेजना फैलानेवाला तथा शान्ति-भङ्ग करनेवाला भाषण दिया और सरकारने उसपर फौजदारी अदालतमें अभियोग चलाया तो उसे दमन नहीं कहा जा

सकता। प्रत्येक राष्ट्रको यह अधिकार है कि वह हिंसाके भावोंको जबर्दस्ती दबावे। पर मौलवी जाफर अली खा तथा पानीपतके दो अन्य मौलवियोंके अभियोगसे स्पष्ट प्रतीत होता है कि सरकार हिंसाको दबाने या रोकनेकी चेष्टा नहीं कर रही है, बल्कि वह मत प्रकाशनके अधिकारको भी छीन लेना चाहती है अथवा अप्रीति फैलानेको भी रोकना चाहती है। यही दमन है। इन अभियुक्तोंपर मुकदमा चलाया जाना उस दमनका आरम्भमात्र है। उसने अभी भीषण रूप धारण नहीं किया है पर यदि इन अभियोगों और दण्डाज्ञाओंसे असहयोग आन्दोलनकी गति धीमी नहीं पड गई तो इसकी बहुत कुछ सभावना है कि सरकार घोर दमनसे काम लेगी।

इस बढते असन्तोषको दबानेका दूसरा मार्ग यह है कि इसके कारणका निवारण किया जाय। पर इसका अभिप्राय यह है कि असहयोग आन्दोलनके प्रति लोगोंके हृदयोंमें जो श्रद्धा बढती जा रही है उसका समर्थन किया जायगा। जो सरकार अधिकारके मद तथा विजयसे पागल हो रही है उससे परिताप अथवा नम्रताकी आशा करना व्यर्थ है।

इसलिये हमें यह बात मान लेनी चाहिये कि उपहासके बाद सरकारका दूसरा उपाय दमन होगा और वह इसका प्रयोग उतनेही तेजीके साथ करती जायगी जितनी तेजीके साथ असहयोग आन्दोलन बढता जायगा। पर यदि भीषण दमनके बाद भी यह आन्दोलन न मरा बल्कि पूर्ववत् पडा रह गया

छात्रोंमें असन्तोष उत्पन्न हो गया है। प्रधान प्रधान संस्थाये किसी भी दिन राष्ट्रीय हो सकती हैं। पण्डित मोतीलालजी नेहरूका वकालत छोड़ना साधारण बात नही है। केवलमात्र यही घटना असहयोगके उपहास उड़ानेवालोका मुंह बन्द कर देनेके लिये पर्याप्त है। अब विचारवान पुरुषोंको अपना मत स्वयं निश्चित कर लेना चाहिये। पण्डित मोतीलाल नेहरूने जो रूप धारण किया है वह प्रत्यक्ष बतलाता है कि वर्तमान सरकारके अन्दर कोई दोष आ गया है। बी० ए० के ऊपरकी कक्षाओंमें पढ़नेवाले छात्रोंने अपनी उपाधियां त्याग दी हैं, डाक्टरीके विद्यार्थियोंने अपनी अन्तिम परीक्षामें सम्मिलित होना अस्वीकार कर दिया। ऐसी अवस्थामें असहयोग आन्दोलनको पागलपनकी बातें कहना उचित नही प्रतीत होता।

अब दो ही मार्ग हैं। या तो सरकार जनताकी बात मान ले और असहयोग आन्दोलनद्वारा जिन स्पष्ट शब्दोंमें वे अपनी मांगोको रख रहा हैं उन्हें स्वीकार कर ले या दमनचक्र चलाकर उस आन्दोलनको बन्द कर दे।

किसी सरकार द्वारा किसी भी अवस्थामें प्रयुक्त प्रत्येक उपायको दमन नहीं कह सकते। मान लीजिये, कि किसीने खुली भाषामें हिंसात्मक उत्तेजना फैलानेवाला तथा शान्ति-भङ्ग करनेवाला भाषण दिया और सरकारने उसपर फौजदारी अदालतमें अभियोग चलाया तो उसे दमन नहीं कहा जा

बड़े लाटकी वक्तृतायें

९

(मार्च ६, १९२१)

वायसरायने खिलाफत और असहयोगपर दो मुख्य घोषणाये की हैं। खिलाफतके सम्बन्धमें उन्होंने सरकारकी प्रवृत्तिका ठीक चित्र दे दिया है। वे समझते हैं कि मुसलमानोंके दावेको दिखाकर मैं उनके प्रति जवाबदेहीसे एकदम मुक्त हो गया। पर भारतीय कहते हैं कि जब इम्पीरियल गवर्नमेंटने मुसलमानोंके ऐसे आवश्यक विषयमें भारतके दावेको नामंजूर कर दिया तो उन्हें इस्तीफा दे देना चाहिये था। राष्ट्रसङ्घकी कौंसिलमें ब्रिटन असहाय था इस दलीलको कोई मंजूर नहीं कर सकता। सर्व साधारण यह भी स्मरण दिला सकते हैं कि जब सेवर्सकी सन्धिकी शर्तें प्रकाशित हुई थी तो प्रधान मन्त्रीने जो उनमें भाग लिया था वाइसरायने उनका पूरा समर्थन किया। तब यह कैसी बात है कि फिर आज वे मुसलमानोंके मामलेकी फिर भी बहस कर रहे हैं। यदि असहयोग नहीं होता तो क्या वे ऐसा करते ? और आज भी उन्हें क्या कहना है ? यदि अब भी दावा नामंजूर किया जाता है और असहयोग जारी रखा जाता है तो वे समझते हैं कि इसका फल होगा अराजकता।

तो विजय अपनी समझिये । इसलिये हमें सदा मुकदमा चलाये जाने तथा जेल जाने और यदि आवश्यकता पडे तो कालेपानी तकके लिये तैयार रहना चाहिये । हमें इतनी योग्यता प्राप्त कर लेनी चाहिये कि विना किसी नेता आदिके ही हमें अपने मार्गपर अवरुद्ध गतिके साथ चलते रहना चाहिये । इसीमें हमारी स्वायत्त शासनकी योग्यता प्रमाणित होगी । पर यह भी निश्चय है कि कोई भी सरकार समस्त राष्ट्रको जेलमें नहीं ठूस सकती । इसलिये या तो उसे प्रजाकी मांगको स्वीकार करना पड़ेगा या राष्ट्रके लिये हितकर अथवा उपयोगी शासनके पक्षमें हट जाना पड़ेगा ।

इसलिये हमें हर तरहसे यही प्रतीत होता है कि यदि हम अपने ध्येयतक पहुचना चाहते हैं तो हमारे लिये दोही मार्ग खुले हैं, एक तो हमें हर तरहसे हिंसासे दूर रहना चाहिये और दूसरे हमें अपने कार्यक्रमको पूर्ण करनेके लिये अनवरत यत्न करते रहना चाहिये ।

सरकारके हाथमें दोनों बातें हैं । चाहे वह इस आन्दोलनकी इज्जत और प्रतिष्ठा करे तथा अमानुषिक तथा असम्मानित उपायो द्वारा उसके दबानेका यत्न करे । और हमारे हाथमें भी दोनों बातें हैं चाहे दमनके भयसे दब जायें और अपना कदम पीछे खींच लें अथवा दमनकी परवा न करके अपने आन्दोलनको जारी रखें ।

बड़े लाटकी वक्ततायें

८

(मार्च ६, १९२१)

वायसरायने खिलाफत और असहयोगपर दो मुख्य घोषणायें की हैं। खिलाफतके सम्बन्धमें उन्होंने सरकारकी प्रवृत्तिका ठीक चित्र दे दिया है। वे समझते हैं कि मुसलमानोंके दावेको दिखाकर मैं उनके प्रति जवाबदेहीसे एकदम मुक्त हो गया। पर भारतीय कहते हैं कि जब इम्पीरियल गवर्नमेंटने मुसलमानोंके ऐसे आवश्यक विषयमें भारतके दावेको नामंजूर कर दिया तो उन्हें इस्तीफा दे देना चाहिये था। राष्ट्रसङ्घकी कौंसिलमें ब्रिटन असहाय था इस दलीलको कोई मंजूर नहीं कर सकता। सर्व साधारण यह भी स्मरण दिला सकते हैं कि जब सेवर्सकी सन्धिकी शर्तें प्रकाशित हुई थी तो प्रधान मन्त्रीने जो उनमें भाग लिया था वाइसरायने उनका खूब समर्थन किया। तब यह कैसी बात है कि फिर आज वे मुसलमानोंके मामलेकी फिर भी बहस कर रहे हैं। यदि असहयोग नहीं होता तो क्या वे वैसा करते ? और अब भी उन्हे क्या कहना है? यदि अब भी दावा नामंजूर किया जाता है और असहयोग जारी रखा जाता है तो वे समझते हैं कि इसका फल होगा अराजकता।

इसलिये वे धमकाते हैं कि सरकार सुव्यवस्था स्थापित करनेके लिये आगे बढ़ेगी। सुव्यवस्था स्थापनका क्या अर्थ है उसको हमलोग जानते हैं। बड़े लाट साहब यह बात भूल जाते हैं कि यदि भारतमें अराजकता हो जायगी तो वह भारतके ३० करोड़ आदमियोंके प्रति ब्रिटिश और भारत सरकारके कर्तव्यच्युत होनेके कारण होगी।

भारतके मामलेकी बहस कर वायसराय ही सतुष्ट हो सकते हैं। जो आदमी भूखसे मर रहा है क्या वह केवल सहानुभूतिसे ही सन्तुष्ट हो जायगा जब वह इस बातको जानता है कि सहानुभूति दिखानेवाला केवल सहानुभूति दिखानेके अतिरिक्त और अधिक दे सकता है। जब भारत सरकार एक नीति शून्य उच्च शक्तिकी आज्ञा पालनके कर्तव्यकी दलील करती है उस (उच्च शक्तिके) विरुद्ध जो विचार प्रगट किये जायँ उनमें उसको (भारत सरकारको) साथ देना चाहिये। विश्वास या मान भङ्ग करनेवाली आज्ञाका पालन करनेका कर्तव्य किसी नौकरपर नहीं है। सेवर्सकी सन्धि प्रतिज्ञा और सम्मानके साधारण नियमोंका भङ्ग है। जो आदमी भूखसे मरते हुए आदमीके साथ सहानुभूति दिखाता है उसको लोग समझते हैं कि वह उसके दुःखसे दुःखी होता है। यदि वह (भूखसे मरनेवाला) आदमी भूखकी मुसीबतके कारण पागल होनेका लक्षण दिखाने लगता है तो सहानुभूति दिखानेवाला आदमी

उसे गोली नहीं मार देता है। इसलिये यदि भारतमें अराजकता होगी तो इसका उत्तरदायित्व भारत सरकार तथा उन लोगोंपर रहेगा जो अत्याचार करनेपर भी उसका समर्थन करते हैं। इसका उत्तरदायित्व उन लोगोंपर कदापि नहीं रह सकता जो उनके अत्याचारका साथ नहीं देते और लोगोंको अत्याचार भूल जानेको कहनेका असम्भव काम अपने ऊपर नहीं उठाते।

सरकारको शैतान कहनेके कारण बड़े लाटको आश्चर्य होता है। अपने सम्बन्धमें इस कथनका उपयोग करना उनका भूल है। किसीने किसी व्यक्ति विशेषको शैतान होनेका दोष लगाया है। उन्होंने अपने भारतीय साथियोंको भी उसी श्रेणीमें बड़ी चतुरतासे लिया है। यह ऐसी बात है जिससे किसी भी आदमीको धोखा हो सकता है। जिस पद्धतिके अनुसार वायसराय और उनके साथी, वह हिन्दुस्तानी हों चाहे युरोपियन, शासन करते हैं उसमें ओछापन, कपटता अविवेक तथा कभी कभी अत्याचार करना और दबे हृदयसे उससे स्वीकार करना आदि शैतानके सभी गुण वर्तमान हैं। बड़े लाटको यह विश्वास रखना चाहिये कि असहयोगमें कुछ भी पक्षपात नहीं है असहयोगवादियोंके दलमें अंग्रेजोंके लिये सम्मानका बराबर एक स्थान रहता है। बुरी सरकारके अपराधमें जो सहयोगवादी शामिल होगा उसकी आलोचना किये बिना नहीं छोड़ा जायगा। बड़े लाट असहयोगके आ-

न्दोलनका सामना करना चाहते हैं। उन्हें इस बातसे खूब आनन्दित होना चाहिये कि उपाधिधारियों और विद्यार्थियोंने बहुत ही कम योग इसमें दिया है और नयी कौंसिलोंमें मेम्बरीका काम करनेके लिये काफी भारतीय मिल गये हैं। असहयोगवादी इस बातको स्वीकार करते हैं कि अधिक संख्यामें लोगोंको इस आन्दोलनमें योग देना चाहिये पर उन्हें इस बातसे बहुत प्रसन्नता होती है कि उपाधियों, स्कूलों और अदालतोंका अब लोग कोई मूल्य नहीं समझते हैं। वे संस्थायें पहलेकी नाईं अब ऐसी नहीं रह गयीं जिनकी लोग पूजा करें। असहयोगियोंको यह देखकर सन्तोष है कि वकालत करनेवाले वकील और उपाधिधारी लोकप्रिय नेता नहीं हो सकते। वे जानते हैं कि जिन लोगोंने वकालत, उपाधि और स्कूल नहीं छोड़े हैं हृदयसे असहयोग वादी हैं और अपनी कमजोरीको स्वीकार करते हैं।

वायसरायको उनके सलाहकारोंने यह विश्वास देकर उन्हें गुमराह कर दिया है कि असहयोगवादियोंने अब अपना ध्यान जनताकी ओर आकर्षित किया है। हमारा प्रधान अवलम्बन वही है। पर उसके साथ हम छेड़ छाड़ नहीं करना चाहते हैं। हमलोग धैर्यपूर्वक उन्हें राजनीतिक शिक्षा देना तबतक जारी रखना चाहते हैं जबतक वे सुरक्षित कार्यके योग्य हो सकें। हमलोगोंके उद्देश्यके विषयमें किसीको भ्रम नहीं रहना चाहिये। जब हमलोगोंको विश्वास हो जायगा कि

धडपकड होनेपर भी अहिंसाको वे जारी रखेंगे तो हम सिपाहियोंको अस्त्र छोड देने और किसानोंको टैक्स बन्द कर देनेके लिये कहेंगे। हमलोग आशा कर रहे हैं कि ऐसा समय कभी न आये। इस कार्रवाईको रोकनेके लिये हमलोग कोई उपाय न छोडेंगे। पर जब समय आ जायगा और आवश्यकता हो जायगी तो हमलोग पीछे भी न हटेंगे।

पागलपन

(मई १६, १६२०)

इलाहाबादके लीडर पत्रने असहयोग आन्दोलनके सम्बन्धमें मेरे विचारकी आलोचना करते हुए मुझसे पूछना है कि मेरे इस कहनेका क्या अभिप्राय है कि खिलाफत आन्दोलन पर विचार करते समय भारत सरकारको "बुद्धिमानी और दूरदर्शितासे काम लेना चाहिये,। संयुक्त प्रान्तकी सरकारने इस तरहकी अविवेक तथा अदूरदर्शितापूर्ण कार्रवाईका पर्याप्त सबूत दिया है जिसे मैं एक तरहका पागलपन ही कह सकता हू।। मेरा अभिप्राय संयुक्त प्रान्तकी सरकारकी उस आज्ञासे है जिसके द्वारा उसने पण्डित मोतीलाल नेहरूके पुत्र पण्डित जवाहरलाल नेहरूको मसूरीसे बाहर कर दिया है।

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्टके पास जो पत्र लिखा है उससे इस आज्ञापत्रके सम्बन्धमे सभी बातोंका पता सर्व साधारणको लग जाता है। यदि किसी भले आदमीके आचरणके लिये भी गवाहोंकी आवश्यकता प्रतीत होती है तो प्रयागकी समस्त जनता इस बातकी शाक्षी देनेके लिये तैयार है कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू अपनी मा, अपनी बहन तथा अपनी बीमार-पत्नीको लेकर केवल स्वास्थ्यके ख्यालसे मसूरीकी यात्रा कर रहे थे। उनसे काफी पूछताछ कर लेने पर, मसूरीमें उनके रहनेके सम्बन्धमें सभी बातें स्पष्ट जान लेने पर और यह जानकर कि मसूरीमे उनके साथ उनकी घरकी स्त्रियां थीं उन्हें पण्डित जवाहरलाल नेहरूकी बातें सच मानकर अपनी कार्रवाईसे बाज आना चाहिये था। जनताको स्मरण रखना चाहिये कि पण्डित जवाहर लाल नेहरूने पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट के पास जो पत्र लिखा था उसमें स्पष्ट लिखा था "मुझे अफगान प्रतिनिधियोंसे कोई सरोकार नहीं है। यह केवल संयोगकी बात है कि हम दोनों एक ही होटलमें टिक गये। यदि सचमुच पूछिये तो इस होटलमें उनके ठहरनेसे मुझे कुछ असुविधा हुई है, क्योंकि मैं उन कमरोंको अपने लिये लेना चाहता था जिनमे वे टिके हुए हैं। प्रत्येक विचारवान और समझदार आदमीको उन प्रतिनिधियोंके सम्बन्धमें जो दिलचस्पी हो सकती है वही दिलचस्पी मुझे भी है पर इनके लिये मेरे दिलमें यह मन्शा नहीं है कि मैं उनसे मिलूं और बातचीत करू। मै इस होटलमें प्राय

सात दिनसे हू पर आज तक मैंने दूरसे भी उन प्रतिनिधियोंको नही देखा है। इस बातसे आप भी अवगत हैं क्योंकि आज प्रात कालकी मुलाकातमें आपने स्वय मुझसे यह बात कही थी।" पर अधिकारियोंको इतनेसे ही सन्तोष नही हो सकता था। उनका दिमाग फिर गया था। उन्होंने इस बातकी प्रतिज्ञा चाही कि पण्डित जवाहरलाल उन अफगान प्रतिनिधियोंसे किसी तरहका सम्बन्ध नहीं रखेंगे। उसी पत्रमें आगे चलकर पण्डित जवाहरलाल नेहरूने लिखा था .—"यद्यपि अफगान प्रतिनिधियोंसे किसी तरहके सम्बन्ध रखने अथवा बातचीत करनेका मेरा कतई इरादा नही है फिर भी सरकारकी आज्ञाके अनुसार इस तरहके किसी आचरणके लिये मैं अपनेको बाधना नही चाहता, चाहे उससे मुझे किसी तरहकी भी असुविधा प्रतीत क्यों न हो। यह एकदम सिद्धान्त और आत्माका प्रश्न है। इसलिये मुझे पूर्ण आशा है कि आप मुझसे सहमत होंगे।" और हुआ भी यही। सरकारके प्रतिनिधि स्वरूप पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट मिस्टर ओक्सने उनसे सहमत होकर उस पत्रके पानेके दोही दिन बाद उन्हे मसूरी छोड देनेके लिये आज्ञापत्र निकाला। पण्डित जवाहरलाल यह चाहते थे कि सरकारके पास सभी बातें पहुच जाय और सारी अवस्थाका उसे पूरा ज्ञान हो जाय। इसीसे उन्होंने उसी पत्रमें यह भी लिख दिया था —"यदि सरकार मेरे नामकोई आज्ञापत्र निकालना चाहती है तो इस समय मैं उसे माननेके लिये भी तैयार हू। अपने घरवालोंको इसी नि सहाय अवस्थामे छोडकर एकाएक

चला जाना, मेरे लिये बड़ा असुविधाजनक होगा। मेरी स्त्रीकी अवस्था बडो नाजुक है। प्रतिक्षण उसकी देख रेखकी आवश्यकता है। मेरी माता हिलडोल तक नही सकतीं। ऐसी अवस्थामें विना किसीको निगरानीके उन्हें छोड जाना बडा कठिन है। इसके अतिरिक्त मेरे यकायक यहासे चले जानेसे मेरे तथा मेरे पिताजीके सारे मन्सूबे विगड जायगे। इससे हम लोगोंको कष्ट और चिन्ता होगी। पर राजकीय मामलोंके सामने व्यक्तिगत हानि लाभका कौन ख्याल करता है।"

राजकीय व्यवस्था जहा सुचारु है, वहा व्यक्तिगत असुविधाओका उतना ही ख्याल किया जाता है जितना राजकीय व्यवस्थाका। यदि कही ऐसी अवस्था न उपस्थित हो जाय कि राजकीय व्यवस्थाके लिये किसी व्यक्ति विशेषको असुविधा पहुंचाना नितान्त आवश्यक हो जाय। पर इस अवस्थामें ऐसी कोई बात नही थी। कोई भी ऐसी गम्भीर स्थिति नहीं उपस्थित हो गई थी जिसके कारण यह आवश्यक था कि विचारी बीमार पत्नीसे पति अलग कर दिया जाय, अपाहिज और लाचार माताका एकमात्र पुत्र उससे अलग कर दिया जाय विशेषकर ऐसी अवस्थामें जबकि वे अपने घरोंसे हजारों मीलकी दूरी पर हैं और उनकी देख रेख करने वाला दूसरा कोई नही है। क्या हम इसे निहायत पागलपन नहीं कह सकते? इस तरहकी बातें केवल कलुषित विचारसे ही निकल सकती हैं। सरकार जानती है कि सन्धिकी शर्तोंमें प्रधान मन्त्रीके वचन तोडे गये हैं और वे

अपमान जनक हैं। सरकार यह भी जानती है कि इससे भारतीय मुसलमानोंके धार्मिक भावों पर भीषण आघात पहुंचा है। सरकार यह भी जानती है कि भारतके समस्त हिन्दू मुसलमानों के साथ हैं। वह यह भी जानती है कि अफगानके प्रतिनिधि भारतीय मुसल्मानोके भावोंके पूर्ण समर्थक हैं। इसलिये सरकार डरती है और वह चाहती है कि कोई भी भारतीय अफगान प्रतिनिधियोंसे मिल जुल न सके और न उनसे कुछ कह सके या उनकी कुछ बात जान सके। यही कारण है कि सरकारको हर, तरहसे सन्देह उठ रहा है।

पर इस पागलपनका उत्तर हमें पागलपनसे नहीं देना चाहिये। मेरे हृदयमें यह विचार नहीं उठ सकता कि सर हारकर्ट बटलरकी सरकार इस तरहकी चेष्टायें करेगी जिससे जनता घबराकर हिंसाके लिये तैयार हो जाय और सर हार्कर्ट बटलर भी संयुक्त प्रदेशको पञ्जाब या जलियावाला बाग बना दें और दमनकी चक्कीमें पीसकर जनताको दबा दें। चाहे संयुक्त प्रान्तकी सरकारकी यह मन्शा हो या न हो पर खिलाफत आन्दोलनके नेताओंको, मसूरीसे भी खराब घटनाओंका सामना करनेके लिये तैयार रहना चाहिये। इससे सफलता पानेका उपाय यह है कि उत्तेजित न होकर इस तरहके दमनका सहर्ष स्वागत करना चाहिये ताकि जिनके ऊपर इनका प्रयोग किया जाय उसपर इनका कोई असर न पड़े और लाचार होकर सरकारको इनका प्रयोग उसी तरह बन्द कर देना पड़े जिस तरह वैद्य उस दवाका प्रयोग बन्द

कर देता है जिससे रोगीको किसी तरहका लाभ नहीं पहुंचता। कितना भी कड़ा दण्ड क्यों न हो यदि उसका प्रभाव न पड़ा तो उसे तुरंत उठा दिया जाता है।

पर सिन्धसे जो समाचार आये हैं उनसे प्रगट होता है कि सरकारका पागलपन अन्तिम सीमाको पहुंच गया है। कराचीसे सिन्धी भाषामें कोई सौदागर अलवहीद नामी पत्र प्रकाशित करते हैं। तारीख १३के अङ्कमें जकोबाबादकी खिलाफत कमेटीके मन्त्रीका उसमें एक पत्र निकला है। इस पत्रमें लिखा है कि खिलाफत आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण अनेक कार्यकर्ता जेल भेजे गये और एक प्रतिष्ठित जमींदारको डिप्टी कमिश्नरने दरवाजा बन्द करके खूब पीटा। जब वह चिल्लाने लगा तो पुलिसने घुसकर उसे और पीटा। मसूरीमें तो कमसे कम न्यायका दिखौआ रूप माना गया क्योंकि पण्डित जवाहरलाल नेहरूको शारीरिक कोई कष्ट नहीं दिया गया। पर यदि खिलाफत-कमेटीके मन्त्रीका विवरण ठीक है तो सिन्धमें डिप्टी कमिश्नरने एक प्रतिष्ठित व्यापारीको विना किसी अपराधके बेतोंसे पीटा। बम्बईके गवर्नरकी बड़ी प्रशंसा है। इसलिये आशा की जाती है कि इन मामलोंको वे पूरी जांच करेंगे और उस जांचका विस्तृत विवरण प्रकाशित करेंगे। बम्बे क्रानिकलने अलवहीदमें प्रकाशित समाचारका समर्थन किया है। उसी घटनाका विवरण मिस्टर शौकत अलीने बम्बे क्रानिकलके पास भेजा है। यदि ये घटनायें सच हैं तो उस डिप्टी कमिश्नरको, जिसने एक प्रति-

छिन व्यक्तिका इस तरह अपमान किया है, अवश्य ही निकाल देना चाहिये। चाहे वह डिपटी कमिश्नर निकाल दिया जाय या नहीं पर जो लोग खिलाफतके कर्णधार हैं, अर्थात् जो लोग इस आन्दोलनका सञ्चालन कर रहे हैं उनका कर्तव्य स्पष्ट है। क्या वे इस तरहकी अग्नि परीक्षामें तपनेके लिये तैयार हैं? सैन्यिकों द्वारा जो उद्दण्डता दिखलाई गई है, उसका यदि उन लोगोंने किसी तरह विरोध किया जिनके स्वार्थों पर इससे धक्का पहुंचा है तो उस उद्दण्डताका प्रतिपादन करनेके लिये उतनी ही वहृण्डता पूर्ण बल प्रयोगकी मीमांसा भी की जायगी। यदि भारतके मुसलमान तथा हिन्दू इन उद्दण्डताओंका सामना बल प्रयोगसे करनेके बनिस्बत सन्धिपर पुन विचार करवाना चाहते हैं तो उन्हें हर तरहके दुर्व्यवहारोंका—जो उनके साथ किये जायगे—सामना पूर्ण धैर्यके साथ करना होगा और उसी नीतिको चलाना होगा जिससे उन्हें उस सन्धिकी शर्तें स्वीकार न करनी पड़ें। यदि सरकारकी उत्तेजना और बल प्रयोगका सामना उत्तेजना और बलप्रयोगसे किया गया तो खिला फत आन्दोलनकी पूर्ण हत्या हो जायगी।

हैं और तलवार उठाकर सिवा नुकसानके हम अपना फायदा कभी भी नहीं कर सकते। मुझे पूरी आशा है कि अन्तमें जाकर मौलानाको मेरी बातें स्वीकार करनी पड़ेगी। यदि हम लोगोंके हाथोंसे एक भी अंग्रेज मारा गया तो इससे हम लोग केवल भारतकी स्वतन्त्रता को ही असम्भव नहीं कर देंगे, बल्कि सैकड़ों जालियावालाबागका दृश्य उपस्थित होनेका अवसर देंगे। तलवार लेकर यदि हम युद्धके लिये प्रस्तुत हों तोभी हमें तैयारी और त्यागकी आवश्यकता पड़ेगी। इसलिये हमें आत्म संयमकी नितान्त आवश्यकता है। हमें अपनी इन्द्रियोंको पूरी तरहसे अपने अधीन कर लेना चाहिये। पर हमें पजाब तथा खिलाफतके मामलेमें सरकारसे न्याय करानेकी सदा चेष्टा करते रहना चाहिये। यदि सरकार न्याय करनेके लिये तैयार न हो तो हमें उसके साथ किसी तरहका सम्बन्ध न रखकर उसे पगु बना देना चाहिये। इसलिये हमें दो ही काम करना चाहिये, या तो हमें मोलवी जाफर अली खाको मुक्त करा लेना चाहिये या अपनेको भी जेलखानोंमें भर देना चाहिये।



बिहारमें दमन

(मार्च २, १९२१)

बिहार एक ऐसा प्रान्त है जिसमें असहयोगके सम्बन्धमें सबसे अधिक मार्युक्त काम हो रहा है। वहाके नेता अहिंसाके सच्चे भावको समझते हैं। जो लोग अपने भाषणमें भी सीमाका उल्लंघन करना चाहते हैं उनके उत्साहको भी वे (बिहारके नेता) रोकते हैं। बिहारमें उपद्रव होनेका भय नहीं है। उस प्रान्तमें जितना पवित्र काम हुआ है उसका उज्वल प्रमाण है। शराब बन्द करनेका आन्दोलन इतनी जल्दीसे बढा है कि आबकारी विभागकी आमदनी पर बहुत असर पडनेकी आशा है। शिक्षा सम्बन्धी आन्दोलन भी बडी उन्नति कर रहा है। बहुत वकीलोंने वकालत स्थगित की है। लोग पञ्चायत द्वारा अपने झगडेका निपटारा कर रहे हैं। प्रत्येक दिशामें राष्ट्रीय उत्थानके चिन्ह देख पडते हैं जिनसे किसी लोकप्रिय सरकारको गौरव होता। पर बिहार सरकारके साथ यह बात नहीं है। पर तो भी बिहार (सरकार) से लोगोंको आशा थी क्योंकि इसके गवर्नर भारतके सबसे सुयोग्य पुत्रोंमेंसे एक हैं जो कांग्रेसके सभापति भी हो चुके हैं। लार्ड सिंहको भी (काम करनेकी) रद्द हो गयी है। वह उस शासन यंत्रके एक भाग हो गये हैं, जो

लोगोंको कुचल रहा है और उनकी योग्यता भी उस यंत्रका एक भाग हो गई है जो लोगोंको कुचल रही है और उनकी योग्यता भी उस यत्रके चलानेके काममे लगायी जा रही है। यदि वे ऐसा न करेंगे तो उन्हें हटना पड़ेगा।

बिहारमें दमन जोरोंपर है क्योंकि एक भारतीय गवर्नरकी आडमें आकर व्यफसर बडी वीरता दिखा रहे हैं। लार्ड सिंह अपराध करनेवाले अफसरोंको रक्षा करनेवाले हो गये हैं।

पाठक निम्नलिखित बातोंसे विचार करें। मौलाना मज हरुल हक और बाबू राजेन्द्रप्रसाद, जो बिहारमें प्रसिद्ध हैं, आरा जानेसे रोक दिये गये। एक मित्रने पत्रमें लिखा है—"मुज फ्फरपुर सारन और चम्पारनमें १४४ और १०७ धाराओंके अनुसार बराबर नोटिसे दी जा रही हैं। जो लोग बाध्य होनेसे इनकार करते हैं उन्हें जेल हो जाती है। ऐसे ३० आदमी जेल गये हैं। इसके विरुद्ध की गई कार्रवाइया विचाराधीन हैं। यह खुशीकी बात है कि इनमेंसे कुछ बुड्ढे लोग हैं। स्त्रिया इन सजाओंके कारण खेदित होनेके बदले चिन्तारहित हैं।"

मौ० शफी और बाबू राजेन्द्रप्रसादको यह नोटिस दिया गया है –

मुझे विश्वस्त सूत्रसे सूचना मिली है और मुझे विश्वास है कि तुम हाजीपुरकी एक सभामें भाषण करनेका विचार करते हो जिसमें तुम अपने श्रोताओंसे कहोगे कि असहयोगके लिये

जेल भी जाओ और असहयोगके सम्बन्धमें दूसरी दूसरी बातें भी कहोगे जिनसे श्रोताओंमें जोश पैदा होगा और इससे शान्ति भङ्ग हो सकती है। इसलिये फौजदारी कानूनकी १४४ वीं धाराके अनुसार जो अधिकार मुझे दिये गये हैं उनके अनुसार मैं हुक्म देता हू कि तुम मेरे इलाकेकी सीमाके भीतर असहयोगपर कोई भाषण न करो।"

सब डिविज़नल अफसर, जिनके हस्ताक्षरपर नोटिस निकाली गयी है, पहलेसे ही इस बातको जाननेका दावा करते हैं कि ये सज्जन क्या भाषण करते। और वह था असहयोग। सारे भारतमें वक्ता लोगोंसे कहते आ रहे हैं कि जेलके लिये तैयार हो। इनसे कहीं भी सार्वजनिक शान्ति भग नहीं हुई है, सभी लोकप्रिय संस्थाओंने असहयोगका उपदेश दिया है और हजारों प्लेटफार्मोंसे नित्य ही इसका उपदेश दिया जा रहा है। स्वदेशी, मादक वस्तु-निवारण, अस्पृश्यता और हिन्दू मुसलमानोंकी एकतापर वक्ता लोग इसी कारण नहीं बोलते हैं कि ये सभी बातें 'असहयोग' के भीतर आ जाती हैं।

दूसरा हुक्म इस प्रकार है —"मुझे खबर मिली है कि ग्राम बेगरा, पुलिस स्टेशन गोपालगञ्ज, जिला सारनके ब्रह्मचारी रामरक्षाने कल एक सभामें भाषण किया है जिसमें उसने सरकार और अगरेजोंको छली प्रतिज्ञाभंग करनेवाली और अत्याचारी कहा है। उसने यह भी कहा है कि ब्रिटिश सरकारकी नीति एक कौमको दूसरे कौमके विरुद्ध खड़ा करना है जिससे वह

दोनोंपर शासन कर सके। जुलुम करनेके कारण सरकार लुप्त हो जायगी। यदि सभी भारतवासी गांधीकी बात मान ले तो वे १० दिनमें ही ब्रिटिश सरकारको निकाल बाहर कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त यह भी खबर मिली है कि इस स्पीचके कारण बहुत जोश फैल गया है। ऐसी दूसरी स्पीचसे शान्तिभंग हो सकती है। मालूम होता है कि उक्त ब्रह्मचारी रामरक्षा उसी प्रकारकी एक और स्पीच आज देनेका विचार करता है। इसलिये मैं फौजदारी कानूनकी १४४ धाराके अनुसार आज तारीखसे एक महीने तक सीतामढी सब डिवीजनके किसी भागमें ५ आदमियों या ५ आदमियोंसे अधिककी सभामें भाषण देनेसे मना करता हूं।"

फिर भी, ब्रह्मचारीका मुंह जिन बातोंके कहनेके कारण बन्द किया गया है वह हजारों मुंहसे निकल चुकी हैं। जो दोष ब्रह्मचारीपर लगाया गया है स्पेशल कांग्रेसके प्रस्तावमें भी है। मुझे स्वयं सरकारको "छली" "प्रतिज्ञाभंग करनेवाली" और "अत्याचारी" कहनेका सम्मान प्राप्त हुआ है। इन शब्दोंमें सरकारकी निन्दा करना अपराध है इस बातको ढूंढ निकालना मजिस्ट्रेटके अधिकारमें था।

अब प्रश्न यह है,—लार्ड सिंह इस्तीफा देनेके छोड़ और क्या करेंगे? वे मजिस्ट्रेटकी आज्ञाका भी पर्य्यवेक्षण नहीं कर सकते। यदि करेंगे तो मजिस्ट्रेट असहयोग कर देंगे, हड़ताल कर देंगे और उनकी स्थिति असहनीय तथा सरकारको असम्भव

बना देगी । इसलिये गवर्नरकी हैसियतसे किसी प्रकार देशकी सेवा करनेके लिये वे अपनेको विश्वास दिलाते हैं कि किसी अंगरेज गवर्नरके लिये स्थान रिक्त करनेकी अपेक्षा अपनी जगह-पर बना ही रहना अच्छा है। यह उनके शासनका प्रारम्भ मात्र है। जनता देखेगी कि किसी अङ्गरेज गवर्नरकी अपेक्षा इनके शासनकालमें सिविलियन अपनी शक्तिको अधिक सुदृढ़ कर लेंगे। इसके दो कारण हैं। एक तो लार्ड सिंहके समय यदि उनपर नियन्त्रण किया जायगा तो वे इतनी शिकायत करेंगे जितनी किसी अंगरेज गवर्नरके शासनको कालमें नहीं करते। दूसरे, लोग भी उनके शासनको स्वभावत सफल करनेके लिये बड़ी खुशीके साथ अत्याचारको सह लेंगे। इसलिये सबसे जबरदस्त भारतवासी भी यदि गवर्नरके उच्च पदके लिये चुना जाता तो भी वह योग्यता और प्रयत्नके अभावके कारण नहीं वरन्, जिस शासन पद्धतिके अनुसार उन्हें शासन करना है उसकी स्वाभाविक बुराईके कारण असफल होता। इसलिये ऐसे सज्जनके शासनकी—जिसके लिये मुझे बड़ा सम्मान है—आलोचना करनेसे मुझे खुशी नहीं होगी। यदि वर्तमान पद्धतिके अनुसार गोखलेको भी शासन करनेको कहा जाता तो वे भी सफल न होते।

———:o:———

दमनकी भरमार

(मार्च २, १९२१)

'विहारमें दमन' पर मैंने एक पूरा लेख लिखा है। इसके लिखनेके बाद विहारके सम्बन्धके और भी समाचार मुझे समाचारपत्रोंसे मिले हैं। और यदि कोई दूसरा जलियानवाला बाग नहीं हुआ है तो इसका कारण अधिकारियों द्वारा दी गयी उत्तेजनाका अभाव नहीं है पर विहारियोंका अनुकरणीय आत्म संयम है। यदि कोई अफसर समझ ले और विश्वास कर ले कि कोई भीड किसी आज्ञाके विरुद्ध इकट्ठी हुई है तो उसपर गोली चलानेसे कौन रोकेगा। ऐसी बात हो सकती है और किसी सरकारी इतिहास लेखक द्वारा लिखित इतिहासमें वह घटना "समझकी भूल" के नामसे लिख दी जायगी।

युक्त प्रान्तसे दमन अब निश्चित रूप धारण कर रहा है। सर्वसाधारणमें भाषण करनेवाले लोग नियंत्रित किये जा रहे हैं।

कलिकटके मजिस्ट्रेटने मि० याकूब हसनको तथा उनके साथियोंको कैदकर अपनेको प्रसिद्ध कर लिया है।

पर जिस बातकी आशा की जाती थी वही हो रही है।

सस्तेमें स्वराज्य प्राप्त नहीं हो सकता है। युवक, वृद्ध सभी जेल क्यों न भोगेंगे? यही एक सामान्य सङ्कट है जिसके द्वारा हमें अभिन्न रूपसे एक सूत्रमें बँधेंगे। जब जब असहयोग सफल होने लगेगा तो अधिकारियोंका दिमाग अवश्य ही खपत हो जायगा।

यह प्रत्यक्ष है कि अभीतक पश्चात्ताप करनेकी वास्तविक इच्छा नहीं है। ड्यूकने शब्दाडम्बरसे भरे हुए विचारोंको प्रगट किया है और कहते हैं कि वे जब इन्हें प्रगट कर रहे थे तो वे क्षुब्ध हो गये थे। १९१९ के अप्रैल महीनेमें जो कुछ हुआ उसके लिये कौंसिलने एक प्रस्ताव पास कर दुःख प्रगट किया है मानों हमलोगोंकी हँसी उडानेके लिये जब ये खोखले विचार प्रगट किये जा रहे थे उसी समय भिन्न भिन्न प्रांतोंके मजिस्ट्रेट दमनका उपाय कर रहे थे। शाब्दिक पश्चात्तापका क्या अर्थ होता है इसका यह प्रभाव डालनेवाला उदाहरण है।

आज भारतको उदार भाषण या उदार कामकी आवश्यकता नहीं है। भारतको जिस चीजकी प्यास है, वह केवल न्याय है। भारतके खजानेसे सर माइकल ओडायर और जेनरल डायरकी पेंसन बन्द करनेके लिये कहनेका उसे अधिकार है। जबतक उन अफसरोंको, जिन्होंने बुरा आचरण किया है, बड़े बड़े पदोंपर रखा जायगा तबतक वह (भारत) असहयोगके संग्रामको जारी रखेगा और तबतक सरकार अपना दमन नीतिको जारी रखेगी।

दमनकी भरमार

(मार्च २, १९२१)

'बिहारमें दमन' पर मैंने एक पूरा लेख लिखा है। इसके लिखनेके बाद बिहारके सम्बन्धके और भी समाचार मुझे समाचारपत्रोंसे मिले हैं। और यदि कोई दूसरा जलियानवाला बाग नहीं हुआ है तो इसका कारण अधिकारियों द्वारा दी गयी उत्तेजनाका अभाव नहीं है पर बिहारियोंका अनुकरणीय आत्म संयम है। यदि कोई अफसर समझ ले और विश्वास कर ले कि कोई भीड किसी आज्ञाके विरुद्ध इकट्ठी हुई है तो उसपर गोली चलानेसे कौन रोकेगा। ऐसी बात हो सकती है और किसी सरकारी इतिहास लेखक द्वारा लिखित इतिहासमें वह घटना "समझकी भूल" के नामसे लिख दी जायगी।

युक्त प्रान्तसे दमन अब निश्चित रूप धारण कर रहा है। सर्वसाधारणमें भाषण करनेवाले लोग नियंत्रित किये जा रहे हैं।

कलिकटके मजिस्ट्रेटने मि० याकूब हसनको तथा उनके साथियोंको कैदकर अपनेको प्रसिद्ध कर लिया है।

पर जिस बातकी आशा की जाती थी वही हो रही है।

सस्तेमें स्वराज्य प्राप्त नहीं हो सकता है। युवक, वृद्ध सभी जेल क्यों न भोगेंगे ? यही एक सामान्य सङ्कट है जिसके द्वारा हम अभिन्न रूपसे एक सूत्रमें बंधेंगे। जब अब असहयोग सफल होने लगेगा तो अधिकारियोंका दिमाग अवश्य ही स्वस्थ हो जायगा।

यह प्रत्यक्ष है कि अभीतक पश्चात्ताप करनेकी वास्तविक इच्छा नहीं है। ड्यूकने शब्दाडम्बरसे भरे हुए विचारोंको प्रगट किया है और कहते हैं कि वे जब इन्हें प्रगट कर रहे थे तो वे क्षुब्ध हो गये थे। १९१९ के अप्रैल महीनेमें जो कुछ हुआ उसके लिये कौंसिलने एक प्रस्ताव पास कर दुःख प्रगट किया है मानों हमलोगोंकी हँसी उड़ानेके लिये जब ये खोखले विचार प्रगट किये जा रहे थे उसी समय भिन्न भिन्न प्रान्तोंके मजिस्ट्रेट दमनका उपाय कर रहे थे। शाब्दिक पश्चात्तापका क्या अर्थ होता है इसका यह प्रभाव डालनेवाला उदाहरण है।

आज भारतको उदार भाषण या उदार कामको आवश्यकता नहीं है। भारतको जिस चीजकी प्यास है, वह केवल न्याय है। भारतके खजानेसे सर माइकल ओडायर और जेनरल डायरको पेंसन बन्द करनेके लिये कहनेका उसे अधिकार है। जबतक उन अफसरोंको, जिन्होंने बुरा आचरण किया है, बड़े बड़े पदोंपर रखा जायगा तबतक वह (भारत) असहयोगके संग्रामको जारी रखेगा और तबतक सरकार अपना दमन नीतिको जारी रखेगी।

दमनको हमें वह कसौटी समझनी चाहिये जिसपर हमारी परीक्षा होगी । यदि हम बिना पराङ्मुख हुए अथवा आत्म संयम खोए इसका सामना करेंगे तो इससे हमारा हित होगा और हम अपने ध्येयके निकट पहुंच जायगे । यदि हम उत्सुक हैं तो बिना क्रोध प्रदर्शित किये हमें परीक्षामें शामिल होना चाहिये । हमलोग सहयोग करनेसे इनकार कर सरकारकी प्रवृत्तिकी जांच कर रहे हैं । इसमें जो आत्मरक्षाका भाव है उससे वह किसी हदतक शान्त रहती है । उस हदके बाद वह अपनी शान्ति खो देती है । हम क्रोधित होकर उत्तर देते हैं। इसलिये सरकार हमारी कमजोरीके कारण अपनेको जोरदार पाती है । अहिंसा इस बातकी शिक्षा देती है कि हम सरकारकी प्रवृत्तिका उत्तर नहीं देते हैं । यदि हम लोग व्यवहारकी शिक्षाको ग्रहण करें तो सरकारकी अवश्य हानि होगी । उत्तर न देनेसे ही दमनकी धार भोथी हो जायगी ।



असहयोगियोंका कर्तव्य

(मार्च १६ १९२१)

इस तरहके दमनके सामने हमलोगोंका कर्तव्य स्पष्ट है। इस्लाम, पञ्जाव तथा स्वराज्यके लिये सङ्कट झेलना हमने स्वीकार कर लिया है। इसलिये इस तरहके अभियोग तथा दमनके कारण प्राप्त दण्डोंका हमलोगोंको स्वागत करना चाहिये। प्रत्येक अच्छा आन्दोलन पाच अवस्थाओंमें होकर गुजरता है। उदासीनता, उपहास, गाली और निन्दा, दमन तथा सन्ताप। कुछ मासतक तो लोग इससे उदासीन रहे। उसके बाद बड़े लाटने अपनी बड़प्पन दिखाते हुए इसकी हंसी उड़ाई। गाली और निन्दा यहातक कि झूठा दोषारोपण करना इस सम्बन्धमें साधारण बात हो रही है। सरकारके प्रतिनिधि तथा असहयोग आन्दोलनके विरोधी, जहातक उनसे बन पड़ा है, इसकी निन्दा करनेमें कोई बात उठा नहीं रखते हैं। अब दमनका जमाना आ गया है। पर अभीतक इसका जोर नहीं है। प्रत्येक आन्दोलन, जो दमनका वार सार सम्हाल लेता है और उसमेंसे जीता निकल आता है, उसकी इज्जत होने लगती है, अर्थात् उसकी विजयका यह दूसरा नाम है। यदि हमलोग अपने सिद्धान्तके सच्चे हैं तो इस दमनको हमें विजयका आरम्भ

दमनको हमें वह कसौटी समझनी चाहिये जिसपर हमारी परीक्षा होगी। यदि हम विना पराङ्मुख हुए अथवा आत्म संयम खोए इसका सामना करेंगे तो इससे हमारा हित होगा और हम अपने ध्येयके निकट पहुंच जायगे। यदि हम उत्सुक हैं तो विना क्रोध प्रदर्शित किये हमें परीक्षामें शामिल होना चाहिये। हमलोग सहयोग करनेसे इनकार कर सरकारकी प्रवृत्तिकी जांच कर रहे हैं। इसमें जो आत्म-रक्षाका भाव है उससे वह किसी हदतक शान्त रहती है। उस हदके बाद वह अपनी शान्ति खो देती है। हम क्रोधित होकर उत्तर देते हैं। इसलिये सरकार हमारी कमजोरीके कारण अपनेको जोरदार पाती है। अहिंसा इस बातकी शिक्षा देती है कि हम सरकारकी प्रवृत्तिका उत्तर नहीं देते हैं। यदि हम लोग व्यवहारकी शिक्षाको ग्रहण करें तो सरकारकी अवश्य हानि होगी। उत्तर न देनेसे ही दमनकी धार भोथी हो जायगी।

स्वतन्त्रताका द्वार

(जून ६.१९२१)

अप्रत्व दलमें अब भी ऐसे लोग मौजूद हैं जो इस बातपर सन्देह करते हैं कि जेलखानेमें जाकर हम भारतवर्षको मुक्त करा सकते हैं। उनका विश्वास है कि जेलखानोंके कारण हमलोग वीर, धीर तथा साहसी व्यक्तियोंकी सेवाओंसे वञ्चित हो जाते हैं। इससे तो यही अभिप्राय निकला कि वीर सिपाहीको किसी भी अवस्थामें अपनी जानको सङ्कटमें नहीं डालना चाहिये क्योंकि इससे इस बातका भय रहता है कि यदि वह काम आया तो फिर जिस उद्देश्यको लेकर वह चला है उसका पथप्रदर्शक कोई भी नहीं रह जायगा। ऐसे लोग इस बातको भूल जाते हैं कि लोकमान्यकी ख्याति तथा उनका अतुल प्रभाव केवल इसी कारण था कि वे जेलकी अनन्त यातना भोग चुके थे। ईसाई धर्मकी सफलता उसी समय गगन चुम्बी हुई जिस समय ईसाको फांसीपर लटका दिया गया। करबलाके मैदानमें हसन इमामके उत्साहने ही इस्लाम धर्मकी जड़ जमाई। राजा हरिश्चन्द्रकी ख्याति इसीलिये है कि उन्होंने लगातार यातनाओंको सहर्ष स्वीकार किया था। इसी तरह भारत भी तबतक स्वतन्त्र नहीं हो सकता जबतक

उसकी लाखों सन्तान जेल जाने तथा हर तरहकी कठिनाई सहनेके लिये निर्भय तथा निडर तैयार न हो जाय। यदि लाखों तैयार नहीं हैं तो हजारोंको तो जेलोंमें जाना ही पड़ेगा यदि भारतको वे स्वतन्त्र बनाना चाहती हैं। असहयोग आन्दोलन इसीलिये चलाया गया है कि राष्ट्रमें सच्ची वीरताका प्रचार हो। यदि हम स्वतन्त्र होना चाहते हैं तो हमें हर तरहकी यातना सहनेके लिये—यहांतक कि मृत्युके लिये भी तैयार रहना चाहिये। जो अपनेको बचाना चाहता है वही सबसे पहले मरेगा।

इसपर प्रश्न यह उठता है कि हमें अपने मुकदमोंकी पैरवी करना चाहिये या नहीं। यदि सरकारकी इच्छाओंका विरोध करके हम भारतीय जेलखानोंको भरना चाहते हैं तो हमें फिर अपनी सफाई देनेकी जरूरत नहीं है। ब्रिटिश अदालतोंके सामने हमें अपनी सफाई देना या पैरवीके लिये वकील नियुक्त करना उचित नहीं। मैं जानता हूं कि कभी कभी कठिन समस्या उपस्थित हो जाती है, जैसे सावरकर बन्धुओंका मामला था। यदि मुझे विश्वास हो जाय कि वे कट्टर असहयोगी हैं तो मैं उन्हें भी यही सलाह दूंगा कि मुकदमा चलानेवालेके उनपर मानहानि या क्षतिके दावेका हक आप प्रयोगमें मत लाइये यद्यपि आपका पक्ष सच्चा और न्यायपूर्ण है। इस तरहका परहेज दोनों कारणोंसे यथार्थ है। पहले कांग्रेसकी आज्ञाका पालन है कि सरकारी अदालतोंको कोई न माने और उनका पूर्ण

बहिष्कार करे, दूसरे आत्म, यातना-तथा तपस्याके नियमका भी इससे पूर्णतया पालन होगा।

—०—

तारोंकी गड़बड़ी

(मार्च ६, १९२१)

बम्बईमें ड्यूकके आगमनके सम्बन्धमें मेरे एक सहकारीने अहमदाबादसे मुझसे कुछ सलाह पूछी थी। उसके उत्तरमें मैंने लाहोरसे १८ फरवरीको निम्नलिखित तार भेजा था —"अन्य नगरोंकी भांति बम्बईको भी ड्यूकके स्वागतका बहिष्कार करना चाहिये।" ४ मार्चको लाहोर तारघरसे मेरे पास निम्नलिखित पत्र आया —"आपने आनन्दानन्द, नवजीवन कार्यालय अहमदाबादके नाम १८ को जो तार भेजा था उसे अहमदाबादमें रोक दिया गया क्योंकि तार विभागके नियमोंके अनुसार वह आपत्तिजनक पाया गया। आपके लिखनेपर आपका खर्च (जो तार भेजनेमें लगा था) लौटा दिया जायगा।" यह होना ठीक ही है क्योंकि जिसके स्वार्थसाधन और लाभके लिये ये तारकी लाइनें तानी गई हैं उसीके नाशके लिये उनके प्रयोगको यदि रोका जाय तो यह भारी बात नहीं है। पर इस तरहकी रुकावट या अड़चनसे केवल इस शासन प्रणालीकी हीनता व्यक्त होती है। यदि केवल एक आदमी उक्त तारको

उसकी लाखों सन्तान जेल जाने तथा हर तरहकी कठिनाई सहनेके लिये निर्भय तथा निडर तैयार न हो जायं। यदि लाखों तैयार नहीं हैं तो हजारोंको तो जेलोंमें जाना ही पड़ेगा यदि भारतको वे स्वतन्त्र बनाना चाहती हैं। असहयोग आन्दोलन इसीलिये चलाया गया है कि राष्ट्रमें सच्ची वीरताका प्रचार हो। यदि हम स्वतन्त्र होना चाहते हैं तो हमें हर तरहकी यातना सहनेके लिये—यहातक कि मृत्युके लिये भी तैयार रहना चाहिये। जो अपनेको बचाना चाहता है वही सबसे पहले मरेगा।

इसपर प्रश्न यह उठता है कि हमें अपने मुकदमोंकी पैरवी करना चाहिये या नहीं। यदि सरकारकी इच्छाओंका विरोध करके हम भारतीय जेलखानोंको भरना चाहते हैं तो हमें फिर अपनी सफाई देनेकी जरूरत नहीं है। ब्रिटिश अदालतोंके सामने हमें अपनी सफाई देना या पैरवीके लिये वकील नियुक्त करना उचित नहीं। मैं जानता हू कि कभी कभी कठिन समस्या उपस्थित हो जाती है, जैसे सावरकर बन्धुओंका मामला था। यदि मुझे विश्वास हो जाय कि वे कट्टर असहयोगी हैं तो मैं उन्हें भी यही सलाह दूंगा कि मुकदमा चलानेवालेके उनपर मानहानि या क्षतिके दावेका हक आप प्रयोगमें मत लाइये यद्यपि आपका पक्ष सच्चा और न्यायपूर्ण है। इस तरहका परहेज दोनों कारणोंसे यथार्थ है। पहले काग्रेसकी आज्ञाका पालन है कि सरकारी अदालतोंको कोई न माने और उनका पूर्ण

बहिष्कार करें, दूसरे आत्म यातना तथा तपस्याके नियमका भी इससे पूर्णतया पालन होगा।

तारोंकी गड़बड़ी

(मार्च ६, १६२१)

बम्बईमें ड्यूकके आगमनके सम्बन्धमें मेरे एक सहकारीने अहमदाबादसे मुझसे कुछ सलाह पूछी थी। उसके उत्तरमें मैंने लाहोरसे १८ फरवरीको निम्नलिखित तार भेजा था —"अन्य नगरोंकी भांति बम्बईको भी ड्यूकके स्वागतका बहिष्कार करना चाहिये।" ४ मार्चको लाहोर तारघरसे मेरे पास निम्नलिखित पत्र आया—"आपने आनन्दानन्द, नवजीवन कार्यालय अहमदाबादके नाम १८ को जो तार भेजा था उसे अहमदाबादमें रोक दिया गया क्योंकि तार विभागके नियमोंके अनुसार वह आपत्तिजनक पाया गया। आपके लिखनेपर आपका खर्च (जो तार भेजनेमें लगा था) लौटा दिया जायगा।" यह होना ठीक ही है क्योंकि जिसके स्वार्थसाधन और लाभके लिये ये तारकी लाइनें तानी गई हैं उसीके नाशके लिये उनके प्रयोगको यदि रोका जाय तो यह भारी बात नहीं है। पर इस तरहकी रुकावट या अड़चनसे केवल इस शासन प्रणालीकी हीनता व्यक्त होती है। यदि केवल एक

आपत्तिजनक समझता है तो उसे इस बातपर विचार करना चाहिये कि इस तरह किसी व्यक्तिकी स्वतन्त्रतापर आक्षेप करके वह कितना बड़ा पाप कर रहा है और उसे अपना सिर नीचा कर लेना चाहिये। इस मामलेमें तो इस तरहकी कार्रवाईका परिणाम यही होता है मानों कोई पानीके प्रबल वेगको तिनकेके सहारेसे रोक देना चाहता है। चाहे कुछ भी हो इस तरहके निर्दोष प्रचारके काममें बाधा डालना चाहे वह सरकारकी दृष्टिमें कैसा ही आपत्तिजनक क्यों न हो, किसी भी विधानद्वारा जायज नहीं ठहराया जा सकता। यह भी उस सरकारके पतनका परिणाम सूचित कर रहा है जो जीर्ण शीर्ण हो रही है।

इस तरहकी अड़चन या रुकावट केवल स्थानीय अधिकारियोंकी राजभक्तिके कारण डाली गयी है फिर भी इससे हमें शिक्षा मिलती है। सरकार किसी भी दिन असहयोगियों द्वारा तार, रेल, डाक तथा छापाखानोंका प्रयोग रोक सकती है। तो क्या इससे हमारा संग्राम एक क्षणके लिये भी रुक जायगा। मैं ऐसी आशा नहीं करता। यह तो पहले ही से मान लिया गया है कि सरकारकी सद्कामनाओंसे यह सदा स्वतन्त्र रहेगा क्योंकि उसकी सर्वव्यापकता पर ही इसकी सफलता अवलम्बित है। व्यक्तिगत असहयोग तो पूरी तरह चल सकता है, कोई सन्देह नहीं है। उस अवस्थामें इसे दूसरा रूप धारण करना पड़ेगा। पर जिस समय उसका प्रभाव सारे भारत पर

यह कोई बडी बात नहीं है कि कांग्रेसके मन्त्री मियां मुहम्मद शफीकी पूर्ण अवहेलनाकी गई और उन्हें उस सन्यासीसे मिलने नहीं दिया गया। मुझे पूर्ण आशा है कि विहारके सरकारी कर्मचारी इस सरकारी सूचनाका उत्तर अधिकाधिक संख्यामें जलसोंमें शरीक होकर देंगे और सरकारको उन्हें पदच्युत करने देंगे। सार्वजनिक सभाओंमें बोलने या भाषण करनेसे सरकारी कर्मचारी भले ही रोके जा सकते हैं पर उन्हें सार्वजनिक सभाओंमें जानेसे रोकना, राष्ट्रीय फण्डमें चन्दा देनेसे रोकना तथा घरोंमें चरखा प्रचारसे रोकना व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर इस तरहका आक्षेप है जिसे कोई भी सरकार कर्मचारी नहीं स्वीकार करेगा।

लार्ड चेम्सफोर्डने अपने भाषणमें कहा था कि असहयोग आन्दोलनको निर्बल करनेके लिये सरकार भी प्रचारका कार्य या आन्दोलन आरम्भ करेगी। कदाचित बिहार सरकारकी यह सूचना उसी भाषणको चरितार्थ करनेके लिये की गई है। इस सरकारने प्रतिष्ठित तथा मान्य असहयोगियोंको दमनमें पीसा है, उन्हे पकडकर जेलोंमें भेज दिया है तथा अपने कर्मचारियोंको आज्ञा दी है कि असहयोग आन्दोलनके विरुद्ध प्रचार करो और उसके लिये किसी भी तरीकेका अवलम्बन करो, कोई रुकावट नहीं पड सकती। मैंने सुना है कि सरकारके उत्साही चौकीदार इन जलसोंकी सूचना मेरे नाम पर देते हैं। जब लोग एकत्रित होते हैं और विचित्र विचित्र चेहरे देखते हैं तो धीरेसे

अनेक कापियां तैयार करवा सकते हैं। यदि असहयोगी नेता अपने कलमसे ही काम लेने लगें तो इससे अनेक तरहके लाभ हो सकते हैं।

विहार सरकार

(मार्च ६, १९२१)

गत सप्ताहमें जब मैंने विहार सरकारके बारेमें लिखा था उस समय मुझे उसके बारेमें आधी भी जानकारी नहीं थी, जितनी कि मुझे आज है। यात्राओंमें मुझे समाचार पत्रोंके देखनेका कम अवसर मिलता है। पहले तो समाचार पत्र मिलते ही नहीं और यदि मिलते भी हैं तो उन्हें पढनेका मुझे कम अवसर मिलता है। लखनऊके दौरेमें मुझे समाचार पत्र पढनेका अवसर मिला तो मैंने विहार सरकारकी असाधारण सूचना देखी जिससे स्पष्ट प्रगट होता था कि अधिकारियोंको गैर कानूनी कार्रवाई करनेके लिये उत्तेजना दी जा रही है। इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। विहारमें असहयोग कानूनन अपराध समझा जाने लगा है। यह कोई विस्मयकी बात नहीं है कि विहारके किसी सरकारी कर्मचारीने हजारों आदमियोंकी भीडके सामने किसी निर्दोष सन्यासीको पीट दिया। मैं नहीं समझता कि एक वर्ष पूर्ण इस तरहका शान्त वायुमण्डल था।

बन्द नहीं करना चाहिये क्योंकि एक तो कभी कभी शराब पीना पाप नहीं है और दूसरे इससे सरकारको आमदनी होती है जिससे वह शिक्षाका व्यय चलाती है। चरखा और करघा प्रारम्भिक अवस्थाकी बातें हैं जिनका अब पुन प्रचार करना असम्भव है। जबतक भारत इस योग्यताको न प्राप्त हो जाय कि वह विदेशी बाजारोंकी प्रतिस्पर्धा कर सके, हमारे लिये विदेशी मालका त्याग असम्भव है। इस तरह सरकारका प्रयत्न शराबखोरी, मुकद्मेबाजी, तथा विदेशी वस्त्रोंके प्रचारको बढानेके लिये होता रहेगा।

ईमानदार सरकार, जो प्रजाकी इच्छाके अनुसार हो उनका शासन करना चाहती है, इस अपूर्व अवसरसे लाभ उठाती और प्रजाकी सहायता लेकर शराबखोरीके पापसे मुक्ति लाभ करती, तथा आत्मनिष्ठाके ख्यालसे राष्ट्रीय शिक्षाके लिये प्रजाको स्वतन्त्र कर देती, पञ्चायती अदालतों द्वारा झगडोंके निपटारे पर ज्यादा जोर देती और चरखेके प्रचारका स्वागत करती यदि और नही तो केवल इस ख्यालसे कि इससे मिलोंको सहायता मिलेगी और लोग बेकार न बैठे रहकर कुछ न कुछ काम ही करते रहेंगे, जो सरकार प्रजाकी भलाईकी कामना करती है वह इस तरहके आन्दोलनोंके आन्तरिक भावको समझती, उसके धार्मिक भावों का ख्याल करती, तथा उसके आत्मिकबल और सदिच्छा पर ध्यान देती और अपने विरोधका ख्याल न करके इस तरहके पौरुष, बल, साहस तथा धैर्यके प्रादुर्भावका स्वागत करती।

जलसोंमेंसे खिसक जाते हैं। जो लोग असहयोगियोंका भाषण, सुननेके लिये रह जाते हैं उनसे कहा जाता है कि यदि सरकारी अदालतें उठ जायगी और शराब खोरी बन्द हो जायगी तो सरकारकी आमदनी बन्द हो जायगी। इस तरह ये सहयोगी व्याख्यानदाता मुकदमेबाजी तथा शराबके प्रचार पर विशेष जोर देते हैं। जो कुछ मैंने कहा है वह उसी तरहकी एक सभाके विवरणके आधार पर है जिसका उल्लेख मुझसे एक बड़े ही विश्वासी कार्यकर्त्ताने किया था। इस तरहकी बातें सर्वथा सम्भव हो सकती हैं। एक क्षणके विचारसे ही यह व्यक्त हो जा सकता है कि सरकारी तरफदार प्राय. करके वही बातें कहेंगे जो उन्हें सूचितकी गई होंगी। एक असहयोगी अपना भाषण खिलाफतके प्रति किये गये अन्याय तथा पञ्जाबके अत्याचारोंसे आरम्भ करता है, उसके बाद जिस शैतानी शासन प्रणालीमें हम लोग पड़े हैं उसका वर्णन करता है, अन्तमें वह जनतासे शान्त रहने, चरखा कातने, कपड़ा बुनने, स्कूलों, कालेजो, अदालतों तथा विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार करनेकी सलाह देकर अपना भाषण समाप्त करता है। विचार हीन असहयोगी कभी कभी सहयोगियोंको गाली भी दे बैठता है और उनके सामाजिक बहिष्कारकी भी सलाह दे देता है। सरकारका हिमायती वक्ता, पञ्जाबके अत्याचार तथा खिलाफतके अन्यायके होते हुए भी सरकारको देवता स्वरूप बतलाता है, और लोगोंसे कहता है कि अदालतें मत छोड़िये क्योंकि अदालतोंमें न्याय मिलता है, और, शराब खोरी भी

न्नदेवजी—जिन्हें यहाके लोग 'महात्मा' पुकारते हैं—असहयोग आश्रमके प्रतिष्ठित निरीक्षक हैं। नागपुरमें इस आश्रमकी बड़ी उन्नति है। ये बड़े ही उत्साही कार्यकर्ता और प्रभावोत्पादक वक्ता हैं। आबकारीकी आमदनीमें बाधा न पड़े इसलिये सरकारने इनका भी मुंह बन्द कर देना उचित समझा। मध्यप्रांत तथा अन्य प्रांतोंमें जो अभियोग चलाये जा रहे हैं उनसे मुझे यही बात प्रगट हुई है। जो लोग किसी तरहकी हिंसाकी प्रवृत्ति दिखलाते हैं, शराब बेचनेवाले तथा पीनेवालोंके प्रति हिंसा करनेके लिये जो लोग अपने भाषणोंद्वारा उत्तेजित करते हैं उनपर मुकदमा चलावो, उन्हें दण्ड दो, उनपर विद्रोह या अप्रीति फैलानेका व्यर्थका दोषारोपण क्यों करते हो। इसका उत्तर सहज है। शराबखोरीके विरुद्ध आन्दोलन करनेवाले किसी भी तरह हिंसाका भाव नहीं दिखलाते। पर जिनपर किसी तरहकी जिम्मेदारी नहीं है उनके द्वारा की गयी हिंसा एक क्षणमें रोकी जा सकती है। पर सरकारका यह अभिप्राय तो है नहीं। उसे भय हो रहा है कि शराब और अफीमकी आमदनी मारी जायगी और इस विपत्तिके निवारणके लिये वह जायज और नाजायज सभी तरहके उपायोंका अवलम्बन करनेके लिये तैयार है।

यदि मेरी धारणा ठीक है तो इसकी दवा भी सरल है। हमें यत्न करना चाहिये कि सरकारको बनावटी मुकदमा चलानेका भी अवसर न मिले। यदि विद्रोहका अभिप्राय है

पर यह सब भाव तभी आ सकते हैं जब इस सरकारके हृदय बदल जाय। पर इतनी आशा अभी इस अवस्थामें नहीं करनी चाहिये।

दमनका परिणाम

(मार्च ३०, १९२१)

जिस समय मैं नागपुरमें था मैंने डाकृर चोलकरका भाषण पढा था जिसके लिये उनपर अभियोग चल रहा है। खुफिया विभागके इन्सपेक्टर ने भी जिस तरहसे उसे पेश किया है उसे देखनेसे भी यही प्रगट होता है कि भाषण निर्दोष है। लार्ड चेम्सफोर्डके शब्दोंमें यह भाषण विशेषण रहित है अर्थात् बहुत ही माकूल भाषण है। पर उस भाषणमें डाक्टर चोलकरने प्रजातन्त्र राज्यकी व्याख्या की है। यदि केवल इसलिये डाक्टर चोलकर दोषी ठहराये गये हैं तब तो एक भी कांग्रेसमैन निर्दोष नहीं कहा जा सकता क्योंकि यदि विना पूर्ण स्वराज्यके ही उसे अपने जन्म सिद्ध अधिकारकी प्राप्तिकी सम्भावना हो जाय तो वह उस प्रजातन्त्रकी चिन्ता और उसके लिये चेष्टासे क्यों मुंह मोड़ेगा। कारण यह है कि मध्य प्रदेश तथा अन्य प्रान्तोंमें शराबखोरीके विरुद्ध जनता एक दम से तैयार हो गयी है पर सरकारको यह सह्य नहीं है। भग-

चार कर दगे कि वह नशोली वस्तुओंसे परहेजको अवगुण और चर्खा कातनेको अपराध समझने लगेगी उसी दिन नि, श्चय जान लीजियेगा कि आपने सरकारको दबा दिया है। यह शासन प्रणाली तभी तक कायम रहेगी जबतक हमलोग इसके प्रति जरा भी श्रद्धा दिखलावेंगे या उसके प्रति उल्लास प्रगट करगे अथवा सरकारको अभियोग चलानेका साधारण भी अवसर देंगे।

यदि सरकार चर्खा कातना अपराध समझे तो इसमें वि-स्मय नहीं होना चाहिये क्योंकि यह कोई नयी बात नहीं है। इस्ट इण्डिया कम्पनी इतिहास जिन्होंने पढा होगा उन्हें विदित है कि चर्खा कातना तथा करघा चलाना महापाप समझा जाता था। इस कलाका इस प्रकार दमन किया गया कि बिचारे जेल जानेसे बचनेके लिये अपने हाथोंके थे अंगूठे कटा बैठे। कितने लोग भाषण करते समय घटनावालीकी खिचडी, बना कर यह कहने लग जाते हैं कि ईस्ट ईण्डिया कम्पनीके कर्म-चारियोंने इनके अंगूठे काट डाले थे। मेरी समझमें उस अ-त्याचारके मुकाबिले जिससे विवश होकर उन्हें अपने हाथों अपना अंग भंग करना पड़ता था इस तरहके अत्याचारकी क्रूरता उतनी भीषण नहीं प्रतीत होती।

शराबके प्रचारको रोकनेकी चेष्टाको अपराध प्रमाणित करना, सफेद टोपी पहननेको अपराध प्रमाणित करनेसे केवल एक कदम आगे है। मैंने जबलपुरमें सुना था कि किसी रेलवे

वर्तमान शासन प्रणालीके प्रतिकूल अप्रीति फैलाना तो यह हम लोगोका कर्तव्य है। पर हमें इसकी शिक्षा देनेकी आवश्यकता नहीं है। कोई भी आदमी इस तरहकी शासन प्रणालीसे स्नेह नहीं रख सकता। कितनोंने इस बातको स्वीकार किया है कि हम लोग उपाधियोंका त्याग इसलिये नहीं कर सकते कि हममें साहस नहीं है कि हम लोग अपने सर्वस्वका नाश बर्दाश्त कर सकें। मैं जानता हूं कि अनेक आदमियोंको इस बातकी धमकी दी गयी है कि यदि वे सरकारकी कृपाओंको अस्वीकार करेंगे तो उनकी जागीर छीन ली जायगी। और भी लोग हैं जो उपाधियोंका परित्याग केवल इस कारण नहीं कर सकते कि वे महाजनी पेशा नहीं छोड़ सकते। वे डरते हैं कि सरकारका प्रभाव इतना अधिक है कि यदि वे किसी तरहकी स्वतन्त्रताकी प्रवृति दिखलावेंगे तो सरकार उनका कारोबार बन्द करदेगी। पर सबके सब उस शासन प्रणालीका नाश हृदयसे चाहती हैं जिसमें रहकर दि वे हजारों रुपया कमाते हैं तो करोडों विना किसी लाभके उनके देशसे बाहर निकल जाता है। इसीलिये मैं फिर कहता हूं कि हमें अप्रीतिकी शिक्षा देनेकी आवश्यकता नहीं है। इस सरकारको जितना लोग समझने लग गये हैं उससे खराब हम लोग चित्र नहीं खींच सकेंगे। जरूरत है इस शासन प्रणालीको नाश करनेकी युक्ति बतानेकी। वह मार्ग आत्मशुद्धिका मार्ग है। जिस समय हम लोग अपने आचरणसे सरकारको इतना ला-

करनेवालेके बलात्कारके सामने सिर झुका देने से या उसकी हिंसाका उत्तर हिंसासे देनेसे। पर असहयोग आन्दोलन से सम्बन्ध रखनेवालोंसे मेरा अनुरोध है कि वे इस पापी सरकारका नाश केवलमात्र असहयोग आन्दोलनसे कर दें। इसके लिये न तो वे सरकारकी चर्चा करें और न उसकी बुराई करें, बल्कि उसकी बुराईका प्रमाण पाकर उसके साथ सहयोग करके उसकी प्रतिष्ठा करना छोड़ दें।

भारत सरकारने सूचना पत्र द्वारा जो कुछ कहा था वह सर्वथा उचित था। उसने विचार स्वतन्त्रता और भाषणकी स्वतन्त्रताको स्वीकार किया था। उसने केवल प्रत्यक्ष हिंसाको दमनद्वारा दबानेकी सूचना दी थी। पर जिस समय वह सूचना निकली थी उसी समय मैंने कह दिया था कि इसपर विश्वास नहीं किया जा सकता। इस सूचनापत्रके तैयार करनेवालेने यह आशा की थी कि केवल उदासीनता दिखलाकर ही वे लोग इसका नाश कर डालेंगे पर ज्योंही सरकारी प्रतिष्ठा सूचक संस्थाओंका नाश करके यह उनकी मर्यादा बिगड़ने लगा तथा विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार और शराबके प्रचारको रोककर उसने इनकी आमदनी घटाना आरम्भ किया कि सरकार डर गयी और उसने भाषणकी स्वतन्त्रता तथा प्रचारको रोकना आरम्भ किया और यह दमन तो एक तरह से हाथ बैठाना है। अभी तो दमनका असली अभिनय आरम्भ नहीं हुआ है। हमें तो असली दमनके लिये तैयार होना है। हमें सदा

विभागके कर्मचारी सफेद टोपी (गांधी टोपी) पहननेसे रोक दिये गये थे।

क्या संयुक्त प्रान्तकी सरकारने इस आन्दोलनको क्रांतिकारी नहीं बतलाया है। आजतक तो क्रांति शब्दका अर्थ हिंसा रहा है। और हिंसात्मक होनेके कारण प्रत्येक सरकार इसे अपराध बताती चली आ रही है। पर असहयोग आन्दोलनको सशस्त्र संग्रामके अभिप्रायमें क्रांतिकारी नही कह सकते। यह विकासकी क्रांति है। असहयोग आत्मशुद्धिका मार्ग है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि यह लोगोंके मत या विश्वासमें क्रांति उत्पन्न करनेका मार्ग है। इससे यदि इसका विरोध किया जाय तो इससे यह अभिप्राय निकला कि सरकार बलात्कारसे सहयोग कराना चाहती है। इसलिये इस आन्दलनके नाशकी चेष्टाका अभिप्राय यह हुआ कि चरखेके प्रचारको रोकनेका प्रयत्न, तथा शराबखोरीको रोकनेके आन्दोलनका रोकना अर्थात् लोगोंको हिंसाके लिये रोकना, क्योंकि विदेशी वस्त्रोंको पहनने तथा शराब पीनेकी किसी तरह से वाध्य करनेका प्रयत्न अवश्य ही जनताको उत्तेजित कर देगा पर हमारी सफलता तभी संभव है जब हम इस तरहकी उत्तेजनाको भी शांति के साथ पी जायंगे। हमें बदला लेनेके लिये नहीं तैयार होना चाहिये। हम लोगोंकी ओरसे किसी तरहकी कार्रवाईके लिये उदासीनता ही सरकारके पागलपनका नाश कर देगी। हिंसाके प्रचारके दो कारण हैं। या तो हिंसा

साथही वे निर्भीक और साहसी वक्ता हैं और उनके भाषणका बहुत असर पडता है। इसलिये मध्यप्रान्तकी सरकार उन्हें हटाकर अपना मार्ग साफ रखना ही उचित समझती है। श्रीयुत सुन्दरलालके ऊपर जो अभियोग चलाया गया है उसकी नकल नीचे दी जाती है —

सूचना मिली है कि दूसरी मार्च १९२१ के लगभग तुमने खरगामामें ५००० जनताकी उपस्थितिमें भाषण करते हुए कहा था कि भारतमें ब्रिटिश शासन केवलमात्र प्रजाका रक्त चूसनेके लिये पूर्ण बेईमानीके साथ चलाया जा रहा है और देशको शोचनीय दरिद्रावस्थामें पहुचा देना ही इस शासनका अभिप्राय है। अनेक तरहकी बीमारियों, अकाल तथा रोजगार और उद्योग धन्धोंके नाशकी पूरी जिम्मेदारी भारत सरकारके ऊपर है। तथा अन्य अनेक प्रकारकी आपदायें, जिनके कारण धीरे धीरे देश अध पतनकी ओर जा रहा है, उसकी भी जिम्मेदारी सरकारके ऊपर है। सरकारने मुसलमानोंको जो वचन दिया था, उसे जान बूझकर तोडा गया है, पञ्जाबमें नृशंसता पूर्ण अत्याचार तथा हिंसा की गई है। इसका परिणाम यह हुआ है कि ब्रिटिश शासन परसे जनताका विश्वास उठ गया है। इस अवस्थाके सुधारकी एकमात्र औषधि ब्रिटिश सरकारका पूर्णतया नाश है, पर यह तभी साध्य है जब हम लोग अहिंसात्मक असहयोगका शस्त्र पूरी तरहसे धारण कर ले। इस भाषणसे ब्रिटिश सरकारके प्रति प्रजाके हृदयमें घृणा उत्पन्न हो गई है या उत्पन्न होनेकी आशङ्का है और

लिये तैयार रहना चाहिये, स्थिर रहना चाहिये और अपने स्थान पर अटल रहना चाहिये। हमे तो डायर और ओडायरकी क्रूरता तकके लिये तैयार रहना चाहिये और जिस प्रकार सीताजीने कठिन परीक्षामें भी पतिप्रेमकी तल्लीनता दिखलायी उसी प्रकार हमें भी देशप्रेममें अटल रहना चाहिये।

मध्यप्रान्तमें दमन

(मई १५, १९२१)

प्रत्येक प्रान्तमें बारीबारीसे दमन हो रहा है और प्रत्येक प्रान्तके दमनका तरीका निराला है। सयुक्त प्रान्तके असहयोगी नेता अभीतक प्राय निर्विघ्न हैं। "अवधके किसानोंको सन्देश" शीर्षक परचेके लेखक पण्डित मोतीलाल नेहरू तो बेरोकटोक अपना काम करते चले जा रहे हैं, उनके शरीरको आचतक नहीं आई पर उस परचेके बाटने वाले-नवयुवक गिरफ्तार कर लिये गये और जेलमें सड़ रहें हैं। इधर मध्य प्रदेशके चुने नेता एक एक करके चुने जा रहे हैं। और उदारचित्त मजिस्ट्रेट साहब उन्हें लगातार जेलमें ठूसते जा रहे हैं। श्रीयुत सुन्दरलालजीका उदाहरण अभी ताजा है। छात्रोंमें उनकी जितनी प्रतिष्ठा है मध्य प्रदेशमें उतनी किसी अन्यकी नहीं है। पर जहातक हिंसासे सम्बन्ध है उनका प्रभाव उसको रोकनेमें सबसे अधिक कारगर है।

रोकना चाहती थी वह ज्योंका त्यो चल रहा है और प्रत्येकके दिलोंमें गहरा प्रभाव पडता जा रहा है। तब सरकार देखेगी कि उसके पागलपन तथा विचार-शून्यताका क्या प्रभाव पड रहा है। जनताका कर्तव्य स्पष्ट है। उन्हें अपना विधायक कार्य करते रहना चाहिये जिससे वे अन्तिम विजयके लिये तैयार हो जाय। सरकारको पागल होते देखकर भी हमे शान्त रहना चाहिये।

पीडित सिंध

(जून १५, १९२१)

सिन्धमें दमनका जो दौरदोरा है उसके सम्बन्धमे एक सम्मानित मित्रने निम्नलिखित पत्र मेरे पास भेजा है —

'सिन्धके कमिश्नरने मुख्तियारकारोंके नाम गुप्त सूचना जारी की है कि आप लोग असहयोग आन्दोलनके प्रतिकूल आन्दोलन उठाइये। तदनुसार असहयोग आन्दोलनको दबानेके लिये ये मुख्तियारकार कहीं कहीं विचित्र कार्रवाइया कर रहे हैं। असहयोग आन्दोलनके विरुद्ध यदि वे कोई खुली सभा या समिति कायम करके काम करें तो कदाचित किसीको विरोध न हो। पर यह न करके उन्होंने लोगोंको धमकाना आरम्भ किया है कि अपने गावोंमें असहयोगियोंको ठहरने मत दो।

तुमने इससे अप्रीति फैलाई है या इससे अप्रीति फैलनेकी संभावना है। इसलिये तुम ताजिरात हिन्द १२४ (ए) दफाके अनुसार दण्डनीय हो और मेरे इजलासमें विचारणीय हो।"

अभियोग स्पष्ट है। यह अभियोग हिंसा करने या हिंसाकी प्रेरणाके लिये नहीं चलाया गया है। केवल विद्वेष और अप्रीति फैलानेके लिये यह अभियोग चलाया गया है। अभियोगमें ऐसी कोई बात नहीं है जो विगत १२ महीनोंसे भिन्न भिन्न सभाओंमें दोहराई न गई हों। वास्तवमें बात यह है कि इस विद्वेष और अप्रीतिका—जिसका प्रदुर्भाव जनताके हृदयमे होगया है—समाचार घर घर पहुचाना तथा उसे फैलाना ही असहयोगका तत्त्व प्रत्येक असहयोगीका यही दृढ और अटल विश्वास है कि वर्तमान सरकार अर्थात् वर्तमान शासन प्रणाली खराब है, इसका निर्माण भारतके साधनोंको नष्ट कर देनेके लिये ही हुआ है, भारतको दरिद्रता तथा तद्गत अकाल और बीमारीके उत्पातका यही कारण है। भारतकी हीनताके लिये यही जिम्मेदार है। ब्रिटिश मन्त्रियोंने मुसलमानोंके साथ वादाखिलाफी की है। ये बातें प्रत्येक असहयोगीके हृदयमें जम गई हैं और यही कारण है कि असहयोग तथा अन्य उपायो द्वारा वह इस प्रथाका नाश करना चाहता है। मैं श्रीसुन्दरलाको बधाई देता हूं। बल्कि जिस पदपर वे पहुच गये हैं उसके लिये मुझे ईर्ष्या है। मध्य प्रान्तकी सरकार प्रत्येक नेताओंको एक एक करके उठा ले। फिर भी वह देखेगी कि जिस अप्रीतिके फैलानेको दमन द्वारा

रोकना चाहती थी वह ज्योका त्यो चल रहा है और प्रत्येकके दिलोंमें गहरा प्रभाव पडता जा रहा है। तब सरकार देखेगी कि उसके पागलपन तथा विचार-शून्यताका क्या प्रभाव पड रहा है। जनताका कर्तव्य स्पष्ट है। उन्हें अपना विधायक कार्य करते रहना चाहिये जिससे वे अन्तिम विजयके लिये तैयार हो जाय। सरकारको पागल होते देखकर भी हमे शान्त रहना चाहिये।

पीडित सिंध

(जून १५, १६२१)

सिन्धमें दमनका जो दौरदोरा है उसके सम्बन्धमे एक सम्मानित मित्रने निम्नलिखित पत्र मेरे पास भेजा है —

"सिन्धके कमिश्नरने मुख्तियारकारोंके नाम गुप्त सूचना जारी की है कि आप लोग असहयोग आन्दोलनके प्रतिकूल आन्दोलन उठाइये। तदनुसार असहयोग आन्दोलनको दबानेके लिये ये मुख्तियारकार कहीं कहीं विचित्र कार्रवाइया कर रहे हैं। असहयोग आन्दोलनके विरुद्ध यदि वे कोई खुली सभा या समिति कायम करके काम करें तो कदाचित किसीको विरोध न हो। पर यह न करके उन्होंने लोगोंको धमकाना आरम्भ किया है कि अपने गावोंमें असहयोगियोको ठहरने मत दो।

तथा पञ्चायतोंको धमकी दी है कि वह लोगोंको असहयोगियों-की सभाओंमें जानेसे रोके। इस तरहकी घटनायें हुई भी हैं। ष्दीन गांवमें कुछ असहयोगी उतरे थे। थोड़ी देरके वाद गृह-स्वामीने—जहा वे उतरे थे—उनसे आकर कहा कि आप लोग यहासे चले जाइये। थारपारकर जिलेमें एक असहयोगी ऊट पर चढ़ा चला जा रहा था। विप्रोमें कोसी नक़ाबपोशने उसपर हमला किया। हमला करनेवालेने उसे ऊंटपरसे खींच लिया और उसे लाठीसे मारा, उसके माल असबावपर हाथ नहीं लगाया। केवल उसका 'स्वराज्य झण्डा और ओढना ले गया। जिला भरके लोग यह बात जानते हैं कि एक सुवि-ख्यात सरकारी कर्मचारीने इस तरहके प्रहारकी योजना की थी। पर यहापर पुलिसका जोर जुलुम इतना बढ़ रहा है कि उन्हें (जनताको) प्रगट होकर कुछ कहनेका साहस नहीं हुआ। सक्कर जिलेकी अवस्था इससे भी खराब है। तीन सप्ताह होते हैं कि क्योरोमें सक्कर जिला परिषद्की बैठक हुई थी। यह स्थान स्टेशनसे दस मीलकी दूरी पर है। डिपटी कलक्टरने गाडीवानों-को धमका दिया था कि जो लोग गाधी टोपी पहने हों उन्हें गाडी किराये पर मत देना। गाडीवाले डिपटी कलक्टरकी नाराजगीको मोल नही लेना ... हि
होकर डरके मारे उनकी आ... जिस
समय उस कानफरे...
सक्करके ...

स्टेशनपर पहुचे तो उन्हें विदित हुआ कि एक भी गाडी नही मिल सकती। अन्तमें एक बैल गाडीवालेने उन्हें ले जाना स्वीकार किया। इसपर पुलिस जमादारने उसे पीटना आरम्भ किया। निदान उसने भी उन्हें ले जानेसे अस्वीकार कर दिया। लाचार होकर सब लोग पैदल चलकर नजदीकके गावमें पहुचे और वहासे पञ्चायतने सवारीका प्रबन्ध करके उन्हें भेजा। उयोरोके लोग कान्फरेसमें आते ही न थे। उन्हें डरा दिया गया था कि घर छोड़कर बाहर गये कि घरोंपर डाका पड जायगे। इसलिये स्वयसेवकोंने इस बातकी जिम्मेदारी ली कि जबतक इस गावके लोग सभामें रहेगे हम लोग गावमें पहरा देंगे। जिस समय कान्फरेस हो रही थी खुफिया पुलिसके उभारनेसे एक मुसलमान साहब बोलनेके लिये कहने लगे पर पूछनेपर वे यह नहीं बताते थे कि वे किस प्रस्तावपर बोलना चाहते हैं। अन्तमें उन्हें बोलनेकी आज्ञा दी गई तो वे उपस्थित कार्यकर्ताओंको गालिया देने लगे। पर जनता उनके साथ शान्तिसे पेश आई। थोडी देरके बाद एक दूसरा मुसलमान बिना किसी कारण दो स्वयसेवकोंपर झपट पडा और उन्हें तथा पासमें बैठने वालोंको जूतेसे पीटा। जिनपर मार पडी वे शान्त रहे, बदला लेनेके लिये नहीं उतारू हुए। जबतक कान्फरेस होती रही प्रत्येक क्षण सचालकोंको झगडेकी सभावना प्रतीत होती थी। पर अधिकारियोंके एजेंटोंके लाख यत्न करनेपर भी वे हिंसाके लिये किसीको उत्तेजित नही कर सके। उनका

प्रयत्न व्यर्थ गया। लौटते समय भी गाडीवालोंने कान्फरेंसके प्रतिनिधियोंको ले जाना स्वीकार नहीं किया। मार्गमें कुछ लोग मीरपुर माथेलोमें ठहर गये और सभाकी योजना थी। इस सभामें कुछ सरकारी कर्मचारी भी उपस्थित थे। उन्होंने मौलवी ताज मोहम्मदको खुली गालिया दीं तथा उनका अपमान किया। पर न तो उन्होंने उनके बदलेमें एक शब्द कहा और न जनताने ही एक शब्द कहा। इस कान्फरेंसके बादसे इस जिलाकी अवस्था प्रति दिन गम्भीर होती चली जा रही है। इस तरफके मुख्तियारकार लोग प्रतिदिन मुसलमानोंकी सभा करके उन्हें यह कहकर भडका रहे हैं कि हिन्दू लोग तुम्हें धोखा देना चाहते हैं। इसलिये हिन्दुओंसे मुसलमान लोग खुले शब्दोंमें कह रहे हैं कि यदि तुम लोग असहयोगियोंको अपने यहा टिकाओगे तो हम लोग तुम्हारे घरोंमे चोरी करेंगे।' एक गावमे कांग्रेस दलको मन्दिरमें जाकर रहना पडा। थोडी देर बाद करीब २५।३० मुसलमानोंने उस मन्दिरको घेर लिया और कहा कि जो कोई यहा भाषण करेगा उसे हम लोग पीटे बिना नहीं रहेंगे। अन्तमें पुजारीने इस दलको अनुनय विनयसे दूसरे मार्गसे मन्दिरके बाहर किया। घोटकीमें ३०।४० लट्ठबन्द मुसलमानोंने सक्कर कांग्रेस कमेटीके युवक मन्त्री श्रीयुत चोयथराम थलेचाको घेर लिया। वे शान्त खडे थे और मार खानेको तैयार हो गये।

इतनेमें कई एक हिन्दू नवयुवक वहा पहुच गये और श्रीयुक्त

बलेचाके पास चुपचाप बैठ गये। यह समाचार स्थानीय पञ्चायतको मिला। उसने आदमी भेजकर श्रीयुत बलेचा तथा अन्य काग्रेस कार्यकर्ताओंको बुलवाया। जब वे पञ्चायतमें पहुचे तो, वे सभी मुसलमान उनके पीछे पीछे वहा गये और पञ्चायतके सभामें बैठ गये। उनलोगोंने कहा कि वे लोग श्रीयुत बलेचाको मारना चाहते हैं। इस पर पञ्चायतने श्रीयुत बलेचा से प्रार्थना की कि आप इस गावको छोडकर चले जाइये। श्रीयुत बलेचाने उत्तर दिया कि हम काम समाप्त करके ही यहासे जायंगे अन्यथा नहीं। उन्हें हठ करते देखकर पञ्चायतने मुसलमानोंसे कहा कि आप लोग इनका पीछा छोड दीजिये, जिससे ये अपना काम करें। मुसलमानोंने उपहास करके जलसे मेंसे हटना अस्वीकार किया। एक घण्टे तक और प्रतीक्षा करनेके बाद पञ्चायतने लाचार होकर श्रीयुत बलेचासे फिर प्रार्थना की कि आप यहासे चले जाइये। निदान अन्य कोई चारा न देखकर उन्हें लौटना पडा और ४० हिन्दू स्टेशनतक पहुचा गये। जिन लोगोंने धमकी तथा अत्याचार और प्रत्यक्ष हिंसा द्वारा काग्रेसके प्रचारको गावोंमें रोकनेका प्रयत्न किया था उनके विरुद्ध अभीतक सरकारी कर्मचारियोंने कोई कार्रवाई नहीं की है। क्या लार्ड रेडिङ्ग या मिस्टर जार्ज लाइड इस आन्दोलनको इसी तरह दबाना चाहते हैं?

अन्तिम वाक्य द्वारा इस पत्रके लेखकने मेरे ऊपर कटाक्ष किया है। यह मुझे स्मरण दिलानेके लिये है कि मैंने लार्ड रेडिङ्ग

जुल्म

(अगस्त १८, १९२१)

संयुक्त प्रान्तके दौरेमें मुझे दमनकी विचित्र कहानियां सुननेमें आईं। इनमेंसे सम्प्रति मैं केवल दो अभियोगोंपर विचार करना चाहता हूं जिन्हें मैं किसी भी तरह जुल्मसे कम नहीं कह सकता। सीतापुरके जमींदार बाबू मोहनसिंह धारमल तथा भूतपूर्व नायब तहसीलदार श्रीयुक्त शम्भुनाथपर नोटिस जारी की गई है कि निम्नलिखित अभियोगोंके लिये उनसे जमानतें क्यों न मांगी जायं। समनमें लिखा है—रामगढ़के पटवारीके बयानसे मालूम हुआ कि तुमलोग (रामगढ़के ठाकुर मोहनसिंह और भोवाली तथा भुनियाधरके तहसीलदार बाबू शम्भुनाथ, सरकारके खिलाफ आन्दोलनमें भाग लेते हो और तिलक स्वराज्य फण्डके लिये नोट बेचते हो। सरकारके विरुद्ध यह आन्दोलन है और सम्भावना है कि इसका परिणाम खराब हो, इससे शान्ति-भङ्ग हो, इसलिये तुमलोग अदालतमें हाजिर होकर कारण दिखाओ कि तुमलोगोंसे नेकचलनीका एक वर्षके लिये एक एक हजार रुपयेकी जमानत और पांच पांच सौ रुपयेको फैलजामिनी मुचलका क्यों न ली जाय।

समनको पढ़कर कोई भी नहीं कह सकता कि इनपर कोई

अपराध लगाया गया है। केवल पटवारीके बयानपर अधिकारीवर्ग इस तरहकी शोचनीय कार्रवाईके लिये तैयार हुए हैं। पटवारीने अपने बयानमें कहा है कि उन्होंने चन्दा संग्रह करके पण्डित मोतीलालजी नेहरूको दिया है और रामगढ़में वे लोग पण्डित मोतीलालजी नेहरूके साथ थे। मजिस्ट्रेटको साहस नहीं था कि समनमें वह इस बातको लिखते पर अभियुक्तने अपने बयानमें ये बातें स्वीकार की हैं जिनसे प्रगट होता है कि उनका यही अपराध था। अभियुक्त नम्बर दो अपने जिलेमें विख्यात हैं। उसे क्षयीकी बीमारी है। उसका दहना फेफड़ा खराब है। दूसरे अभियुक्तको पेटकी बीमारी है। उसने कई महीनेसे किसी तरहके राजनैतिक काममें भाग नहीं लिया है। उसने कोई भाषण नहीं किया है। जिस तरह पण्डितजी अपने स्वास्थ्यके लिये रामगढ़ गये थे उसी तरह वह भी रामगढ़ स्वास्थ्यके लिये ही गया था। इसलिये उसे गिरफ्तार करनेका मजिस्ट्रेटके पास कोई पर्याप्त कारण नहीं था। असल बात यह थी कि जिन लोगोंकी असहयोग आन्दोलनके साथ किसी तरहकी सहानुभूति थी उनके हृदयमें भय उत्पन्न कर देना ही मजिस्ट्रेटकी आन्तरिक इच्छा थी। जिससे न तो कोई गावोंमें असहयोगका प्रचार कर सके और न तिलक स्वराज्य कोषके लिये चन्दा इकट्ठा कर सके। कहा जा सकता है कि इस तरहकी बातें असामान्य हैं और इनके प्रभावको विस्तार देना उचित नहीं होगा। पर मैं इनका

समर्थन नही कर सकता। मुमकिन है कि इस मजिस्ट्रेटने अपने मनसे उत्पीडनका यह नया तरीका अख्तियार किया हो। पर दौरेसे जो कुछ अनुभव मुझे हुआ है उससे मैं यही कह सकता हू कि संयुक्त प्रान्तमें जोरोंका दमन जारी है और सिवा सिन्धके इस दमनका मुकाबिला और कही नहीं किया जा सकता। इस तरहका दमन केवल इसी अभिप्रायसे चलाया गया है जिससे असहयोग आन्दोलन—चाहे वह कितना ही शान्तिमय और अहिंसात्मक क्यो न हो—एकदमसे मार दिया जाय। अली भाइयोकी क्षमा प्रार्थनाका भीषण दुरुपयोग किया जा रहा है। पर इस साहसिक और वीरतापूर्ण आचरणका इस तरह दुरुपयोग असहयोगियोंको नीचा दिखानेके लिये तथा दूसरोंको उस तरफसे बहकानेके लिये—अन्य बुराइयोंसे, जिसका प्रयोग इस कामके लिये किया जाता है—कहीं घटकर है। मुझे इस बातसे सन्तोष है कि उन गरीबों-को—जो कांग्रेसके झण्डेके नीचे आनेका साहस करते हैं—अनेक तरहसे तङ्ग किया जाता है ताकि वे कांग्रेस कमेटियोंमें शामिल न हों। साथ ही उसी तरहके बल प्रयोगद्वारा उन्हें अमन सभाओंमें भाग लेनेके लिये दबाया जाता है। ये अमन सभायें स्वयं जालिम हैं क्योंकि उनमें भाग लेनेके लिये जिन उपायोंका प्रयोग किया जाता है वे गैरकानूनी और असभ्य हैं। संयुक्त प्रान्तकी सरकार उसी कार्रवाईको कायरता-पूर्ण रीतिसे कर रही है जिसकी पञ्जाबकी ओडायरी सरकारने

साहस तथा बेवकूफीके साथ किया था। उसने अपनी नीतिका अनुसरण किया और जलियांवाला बागके लिये क्षेत्र तैयार करनेके हेतु एक साथ ही समस्त नेताओंको गिरफ्तार कर लिया। मैंने अन्य लेखमें दिखलाया है कि रङ्गरूटोंकी भर्तीके दिनोंमें पञ्जाबमें गुप्त रूपसे जलियांवाला बागसे भी भीषण अत्याचार किये गये थे। पर उनपर किसीने ध्यान नहीं दिया, क्योंकि कोई नेता गिरफ्तार नहीं किया गया था। संयुक्त प्रान्तकी सरकार अन्य नेताओंको गिरफ्तार करनेकी नीतिका अवलम्बन नहीं कर रही है। कहीं कहीं एकाध नेताको पकड लेती है। जैसे अलीगढके शेरवानी साहब। उसने श्रीयुत रङ्गा ऐय्यरको गिरफ्तार किया है। अभीतक उसने पण्डित जवाहरलाल तथा मिस्टर जार्ज जोसफको पकडनेके लिये हाथ नहीं बढाया है यद्यपि इन तीनों व्यक्तियोंने साथ ही सरकारको चैलेंज दिया था। संयुक्त प्रान्तमे मुझे जो कुछ अनुभव हुए उसके लिखनेकी मुझे विशेष आवश्यकता इसलिये पडी कि मिस्टर चिन्तामणिने अपने हालके भाषणमें सरकारकी कार्रवाइयोंका प्रतिपादन किया है और चूंकि मुझसे कहा गया था कि मैं यथासाध्य मन्त्रीगण तथा सुधारोंको सफल बनानेकी चेष्टा करू। मेरी नाकिस रायमें शासन सुधार तथा मन्त्रीगणको प्रयोग एकमात्र नौकरशाहीकी क्रूर कार्रवाइयोंकी लीपापोती और उसकी जड मजबूत करनेके लिये हो रहा है। केवल यह कह देना कि, बिचारे मन्त्रीगण इस बातको समझते

नही और इसलिये वे निर्दोष हैं, इस नीतिकी बुराई दूर नहीं हो जाती, यद्यपि इससे मन्त्रियोंका दोष कुछ हलका हो सकता है। मैं इस बातको जल्दी नही स्वीकार कर सकता कि राजासाहब महमूदाबाद और मिस्टर चिन्तामणि जो कुछ करते हैं उसके बुरे परिणामको समझते हैं। मेरी तो यही धारणा है कि नौकरशाहीके मायाजालमें वे जबर्दस्ती खींच लिये गये हैं और उनके सामने आशाका जो सौम्य चित्र रखा जाता है उससे मोहित होकर वे उस कामको करते हैं जिसे स्वतन्त्र होकर वे अवश्य घृणित और निन्दित कहते। इण्डिपेण्डेण्ट पत्रमें लिखा है कि बदायू के किसी मुन्सरीमके लडकेके नाम दफा १४४ के अनुसार नोटिस जारी की गई। जिला जजने मुनसरीमसे कहा कि तुम अपने लडकेसे नेकचलनीका इकरार-नामा लिखा लाओ। लडकेने लिखनेसे इनकार किया। इसपर जिला जजने उस मुनसरीमको मुअत्तिल कर दिया। जज साहबकी इस कार्रवाईको राजासाहब महमूदाबादने जायज बतलायी है और इसका समर्थन किया है। १० मईको वह मुनसरीम उपरोक्त अपराधके कारण मुअत्तिल किया गया। लडका अपने पिताके साथ अवश्य रहता था। इसका परिणाम यह हुआ कि ६ जूनको मुनसरीमने अपने लडकेके हस्ताक्षरसे एक दरखाश्त पेश की कि वह अमन सभामे नाम दर्ज कराना चाहता है। इस तरह अपने लडकेकी स्वतन्त्रता बेचकर उसने अपनेको बहाल कराया। यदि हमें इस घटनाका अन्तरङ्ग दृश्य

देखनेका अवसर मिल जाय तो हमें प्रगट हो जायगा कि जिला जजकी इस कार्रवाईका समर्थन करनेके लिये अनेक अधिकारियोंके बीच खत कितावत हुई होगी। इसके भीतर चाहे जो कुछ हो पर हमारे सामने यह दुखद घटना है कि गरीब सरकारी कर्मचारियोंपर इस बातके लिये दवाव डाला जा रहा है कि वे अपने लडकोंको असहयोग आन्दोलनसे खीच ले। इस बातमें मुझे जरा भी सन्देह नही कि तीन वर्ष पहले यही राजासाहब अधिकारियोंकी इस तरहकी उच्छृङ्खलता और दुष्टतापर मुझसे भी अधिक कडी भाषामें लिखे होते। मन्त्रियोंके इस तरहके विचारहीन प्रयोगसे अधिक आवश्यक एक बात है जिसपर असहयोगियोंका ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक है। इस तरहकी अनाचारपूर्ण उच्छृङ्खल तथा नाजायज कार्रवाइयोंसे असहयोगियोंको कभी भी घबराना नही चाहिये बल्कि उन्हें यह बात समझ लेनी चाहिये कि संसार भरके सुधारकोंकी यही दुर्गति हुई है। इसलिये इस तरहकी दुर्गति सहनेके लिये उन्हें सदा तैयार रहना चाहिये। हमें दण्ड देनेवालोंका वास्तवमें यही ख्याल रहता है- कि हमलोग गलत रास्तेपर हैं, हमारी कार्यवाहीसे देशको हानि पहुंच रही है। इसलिये वे उस आन्दोलनको दवानेके लिये किसी युक्तिका सहारा लेना नाजायज नहीं समझते। इसलिये हर तरहके दमनको हमें विजयका प्रारम्भिक चिह्न समझना चाहिये और अपनी दृढता और भी प्रौढ बनानेके लिये हमें

उसका स्वागत करना चाहिये और इसका सदुपयोग करना चाहिये।

गाली किसे कहते हैं ?

संयुक्त प्रान्तसे एक महाशय लिखते हैं—

"आजकल चारों तरफ बडी बुलन्द आवाजमें सरकारकी मलामत करनेकी बाढसी आ रही है। प्राय सभी उसे गालियां देनेमें मशगूल हैं। उनकी गालियोंका खजाना घटता ही नहीं। जिसे देखिये वही उसे दुष्ट, असभ्य, और क्या क्या नहीं, बताता है। ऐसा मालूम होता है कि मानों हर आदमी इस बातकी कोशिश करता है कि सरकारको 'गालिया देनेमें दूसरे लोगोंसे आगे किस तरह बढ जाऊँ। सच पूछिये तो हर एक व्याख्यान बदजवानी और बददुआसे भरा रहता है। एक भी भाषण ऐसा नही होता जिसमें व्याख्याता अपने दिलका गुब्बार नहीं निकालता और सरकारकी लानतमलामत नहीं करता। और फिर भी दिल्लगी यह कि ऐसे व्याख्यान बडे जोशीले और तबीयत फड़कादेनेवाले माने जाते हैं। थोडेमें,यह बात हद दर्जेको पहुंच गई है। ऐसा करनेका मानों रवाज ही पड गया है।

मुझे तो ऐसी वाहियात बातपर दिलसे नफरत होती है।

मेरे खयालमें तो इस प्रकार गुस्सा दिखाना और गर्जन-तर्जन करना कमजोरीका ही चिह्न है। इससे ऐसा जाहिर होता है कि उन व्याख्यानवाजोंके पास सच्चे काम करनेकी शक्तिका कोसों पता नहीं है और इसलिए वे गाली गुफ्तोंसे भरे व्याख्यान झाड़ झाड़ कर अपने श्रोताओंके सामने उसपर परदा डालना चाहते हैं। इस बारेमें मेरी चुस्त राय तो यह है कि कोई भी गुस्सा भरी बात, यहांतक कि सरकारके भी खिलाफ न कही जाय। हां, यह सच है कि हमारा राष्ट्र आज पीड़ित है और इसपर हमें क्रोध होना ठीक भी है। परन्तु क्या हमें गालीगलौज करके अपना गुस्सा निकालना चाहिये? क्या इस रास्तेमे हमें अपनी कार्य शक्ति खर्च करना उचित है? या इसके खिलाफ, क्या हमें अपनी उस कार्य्य शक्तिका, जो महज गाली देनेमें खर्च होती है, उपयोग सार-युक्त काम करनेमें करके उससे लाभ न उठाना चाहिये? निस्सन्देह गालियां वकना कोई वास्तविक कार्य्य करना नहीं है, और न यह मातृभूमिकी सेवा करना ही है।

मेरी दृष्टिमें हिंसा केवल दूसरोंपर प्रत्यक्ष हमला करना और उन्हें मार डालना ही नहीं, बल्कि बुरी बात मुंहसे निकालना भी हिंसामें दाखिल होता है। अगर यह ठीक है तो मेरी समझमें नहीं आता कि आप खुद जो इस सरकारको 'शैतानियतसे भरी हुई' 'राक्षसी' और 'जङ्गली' उपाधि प्रदान किया करते हैं उसका समर्थन आप किस तरहसे

करेंगे । इस वातमें रत्तीभर शक नहीं है कि इन शब्दोंका समावेश हिंसामें होता है, परन्तु आप तो ठहरे अहिंसाके आचार्य्य । अतएव यह स्वप्नमें भी खयाल नही हो सकता कि आप हिंसापूर्ण शब्दोंका प्रयोग करेंगे ।

यह तो गाली गलौजकी बात हुई । अब मैं दूसरे सवालको पेश करता हूं । आप हमेशा कहते हैं कि मैं और मेरे साथी लोग तो अंग्रेजी सरकारके खिलाफ लड़ाईका साज-सामान तैयार कर रहे हैं, न कि अंग्रेजोंके खिलाफ । आप इस शासन-प्रणालीके तो विरोधी हैं और इसे सुधारना या मिटाना चाहते हैं, परन्तु खुद अंगरेजोंके प्रति आपके दिलमें किसी तरहका बुरा खयाल नही है । इससे यह साफ ही है कि यद्यपि आप इस शासन पद्धतिको तो मटियामेट कर देना चाहते हैं, पर अंग्रेजोंको निकाल देना नही चाहते । अगर ऐसा है तो यह ऊंचा सिद्धान्त अभी उन लोगोंके भी हृदयपर पूरी तरह अंकित नही हो गया है जो आपके सच्चे अनुयायी होनेका दम भरते हैं । इसकी एक मिसाल लीजिये । आगरामें अभी हालहीमें संयुक्त प्रातकी जो राजनैतिक परिषद् हुई थी उसमें पण्डित जवाहरलाल नेहरूका भाषण हुआ था । विदेशी कपड़ेके बहिष्कारपर बोलते हुए आपने कहा कि मैं उन लोगों-मेंसे हू जो सरगर्मीके साथ अंगरेजोंको भारतसे भगा देना चाहते हैं और इसके लिये अगर मुझे कोई जरिया हाथ लग गई है तो वह स्वदेशी है । यह बात अखबारोंमें भी शाया हो चुकी

है और मैं समझता हू, आपको नजरसे भी गुजरी होगी। ऐसी हालतमें क्या यह कहा जा सकता है कि पण्डित जवाहरलाल नेहरूने आपके उस सिद्धान्तका मर्म समझ लिया है जिसके द्वारा हम मनुष्य और उसके कार्य्यों का भेद समझ जायँ, ताकि हम उसके कार्य्यों का तो तिरस्कार कर सकें परन्तु उस मनुष्यके प्रति किसी तरहका दुर्भाव न रखें ? इस मामलेमें मैं जोरके साथ कह सकता हू कि नेहरूजीकी बात किसी तरहसे वाजिब नही कही जा सकती। तथापि मैं यह जानना चाहता हू कि, आप उसे पसन्द करते हैं या नापसन्द।"

अगर असहयोगी लोग गालियोंका व्यवहार करते हैं तो वे निस्सन्देह हिंसा करते हैं और अहिंसाके व्रतका भंग करते हैं। लेकिन मैं इस बातको नही मान सकता कि 'हर एक *भाषणमे* महज बदजबानी और बद्दुआयें भरी रहती हैं।' मैं लेखक महाशयको यकीन दिलाता हू कि व्याख्यानोंमें क्या सरकारकी और क्या खुद हमारी दोनोंकी निन्दा की जाती है और उनमें निन्दाकी अपेक्षा अहिंसा हिन्दू मुसलमान एकता और स्वदेशीकी दलीलें ही अधिक रहती हैं और इन तीनों बातोंको लोगोंकी ओरसे जो इतना आश्चर्यजनक प्रत्युत्तर मिला है वह मेरे इस कथनका शायद सबसे बढ़िया सबूत है। फिर लोगोंकी यह इतनी प्रगति, बिना ही उन्हें बार बार कहे सुने नही हो गई है।

लेकिन आखिर गाली कहते किसे हैं? गालीका अर्थ है—अनुचित प्रयोग, कुप्रयोग, बुरा प्रयोग। अतएव अगर हम चोरको चोर और बदमाशको बदमाश कहें, तो यह गाली नहीं है। कोढीको कोढी कहनेसे वह बुरा नहीं मानता। हां, यह जरूर है कि ऐसे विशिष्ट शब्दका प्रयोग उसी नीयतसे होना चाहिये और प्रयोग करनेवालेको उसे प्रमाणित करनेके लिये तैयार रहना चाहिये। इस दशामें मैं इन हर जगह और हर मौकेपर होनेवाले शब्दोंके प्रयोगको बुरा नहीं कह सकता और न ऐसे बुरे कहे जाने योग्य विशेषणोंका प्रयोग हमेशा ही हिंसाका लक्षण हुआ करता है। मैं यह बात अच्छी तरहसे जानता हूं कि उचित विशेषणोंका प्रयोग कभी हिंसाका लक्षण हो सकता है। पर कब? जब कि उस व्यक्तिके प्रति जिसके लिये उनका प्रयोग किया गया है, हिंसाकी उत्तेजना देनेके लिये उनका उपयोग किया गया हो। जबकि किसी व्यक्तिकी लानत मलामत इसलिये की जाती है कि वह अपनी बुरी आदतको छोड दे या श्रोता उसकी सोहबत छोड दे तो ऐसी भर्त्सना बिलकुल जायज है। हिन्दू शास्त्रमें तो दुराचारियोंके निन्दा वचनोंसे भरे पडे हैं। उन्होंने तो उन्हें कोसा तक है शाप तक दिये हैं। तुलसी दास तो मूर्तिमान् दयाके अवतार थे। उन्होंने अपनी रामायणमें श्रीरामचन्द्रके शत्रुओंको ढूंढ ढूंढकर बुरे विशेषण लगाये हैं। यही क्यों, उन पापाचारियोंके जो नाम चुने गये हैं वे भी उनके गुणोंके ही सूचक हैं। ईसा म-

सीह उन लोगोंपर दैवी कोपका प्रहार करनेमें नहीं हिचके जिनको ये 'दुष्टों' 'धूर्तों' और मुरदारोंकी औलाद कहते थे। बुद्धने उन लोगोंको नही छोडा जो धर्मके नामपर निरपराध बकरोंका बलिदान करते थे। और न कुरान, न जेंदा अवस्था ही ऐसे प्रयोगोंसे बचे हुए हैं। हा, उन सब ऋषियो और पैगम्बरोंकी कोई बदनीयती उनके प्रयोग करनेमें नही थी। उन्हें तो जो लोग और जो चीज जैसी थी वैसा ही उनका वर्णन करना था और ऐसी भाषाका अवलम्बन करना था जिससे हमलोग अच्छे और बुरेकी पहचान कर सकें। हा, इस बातमें मैं लेखकसे सहमत हू कि हम सरकार और लाट लोगोंके वर्णनमें जितना ही अधिक किफायतसे काम लें उतना ही हमारे लिये अच्छा है। अभी हमारे अन्दर इतने विकार और इतनी बुराई भरी हुई है कि जिससे हमारे मुहसे बराबर जी दुखानेवाली बात निकला ही करती है। इस सरकारका हम जो अच्छेसे अच्छा उपयोग कर सकते हैं वह यह है कि हम इसके अस्तित्वको स्वीकार करते रहें और यह विश्वास करके कि इसका सर्वथा भ्रष्ट करने-वाला और नीचा गिरानेवाला है, जहांतक हो सके इसे अपने जीवनसे अलहदा रखते रहें।

मैं बार बार यह बात कहता आ रहा हूं कि इस आन्दोलनका उद्देश अंगरेज लोगोंको निकाल देना नहीं, बल्कि शासन प्रणालीको सुधारना या मिटा देना है

हमपर जबरदस्ती लाद दी है । मैंने पण्डित जवाहरलाल नेहरूका वह व्याख्यान नहीं पढा है, जिसका जिक्र पत्र-प्रेषक महाशयने किया है। लेकिन मैं उनसे इतना अच्छी तरह परिचित हूं कि जिससे मुझे यह विश्वास नहीं हो सकता कि उन्होंने ऐसी बात कही होगी, जिसकी तुहमत उनपर लगाई गई है। मैं जानता हूं कि वे उन अंगरेज सज्जनोंको सबसे पहले अपने हार्दिक मित्रकी तरह गले लगावेंगे जो भारतके प्रेमी हैं और जो उसके सेवक बनकर यहा रहना चाहते हैं । और न स्वतन्त्र भारतवर्षमें भी हम इस बातका ध्यानतक करेंगे कि जो अंगरेज सज्जन हमारे (भावी आशान्वित) राज्यसे तय हुई शर्तों के अनुसार हमारे यहा रहना चाहेंगे वे न रहने दिये जायं ।



न्यायका नाटक

(अगस्त २५, १९२१)

जिस समय करांचीके निवासियोंको समाचार मिला कि उनके प्रिय तथा मान्य नेता स्वामी कृष्णानन्दजी गिरफ्तार किये गये तथा तीन घंटेमें उनका विचार समाप्त करके उन्हें साल भरके लिये कडी सजाका दण्ड दिया गया उस समय (किराचीकी जनता) बेतरह बिगड गई और उपद्रव कर बैठी। उनके इस निन्दनीय आचरणकी मैंने कडे शब्दोंमें आलोचना की है। जिस समय स्वामी कृष्णानन्दका विचार हो रहा था अदालतका दरवाजा बन्द कर दिया गया था और हथियार बन्द सैनिकोंका कडा पहरा बैठाया गया था। पहले पहल स्वामीजी २० को गिरफ्तार किये गये और एक घण्टेके बाद रिहा कर दिये गये। उसी अभियोग पर बिना सूचनाके वे २५ को पुन गिरफ्तार कर लिये गये। उनपर अभियोग लगाया गया था कि उन्होंने किसी कांस्टेबिल पर लाठी चलाई थी। प्रोफेसर वस्वानी स्वामीजीसे भली भांति परिचित हैं। विचारके समय वे अदालतमें भी मौजूद थे। उन्होंने लिखा है कि स्वामीजीने कास्टेबिलको नहीं मारा बल्कि स्वामीजी अपने एक मित्रसे बातचीत कर रहे थे और उस कास्टेबिलने उनसे हट जानेके लिये कहा

और जब वे नहीं हटे तो उस कान्स्टेबिलने ही उन्हें पीटा था। जनताका स्वामीजीकी निर्दोषितामें पूरा विश्वास था। इसका परिणाम यह हुआ कि अपना क्रोध शान्त करनेके लिये उसने प्रत्येक अंग्रेज तथा अंग्रेजी टोपी लगा कर चलनेवालेको तङ्ग करना शुरू किया। जिन यूरोपियनोंको तङ्ग किया गया उसमें लेजिस्लेटिव असेम्बली (बड़ी व्यवस्थापक सभा) के सदस्य मिस्टर प्राइस भी थे। चाहे जनताको किसी भी प्रकारसे उत्ते-जित क्यों न किया गया हो, स्वामीजी कितने भी निर्दोष क्यों न रहे हों और उनकी कितनी भी अधिक प्रतिष्ठा क्यों न रही हो पर जनताको आत्मसंयम खो देना किसी भी अवस्थामें उचित नहीं था। यदि हममें घोरसे घोर उत्तेजना पर भी आत्मसंयमका बल नहीं है तो हमारी विजय कभी भी नहीं हो सकती। तोपोंकी वर्षाके सामने भी सिपाहीको धीर रहना चाहिये। यदि घोरतम उत्तेजना पर भी असहयोगी अविचलित नहीं रह जाता तो वह किसी कामका नही है। जिस अवस्थाको हमने पसन्द कर लिया है उसे स्वीकार करना ही उचित होगा। हम लोगोंको कभी भी यह आशा नहीं करना चाहिये कि प्रत्येक अवस्थामें सरकार शान्त रहेगी। जिस तरह हमारा धर्म है उसी तरह उसका भी धर्म है। उस अवस्था तक वह निरपेक्ष रहेगी। जबतक वह हम लोगोंको खेलते पावेगी उदासीन बैठी रहेगी पर जिस समय उसे यह विदित हो जायगा कि हम लोग तत्पर तथा दत्तचित्त हो गये हैं उसी समय वह भय और उत्पीडनके लिये तैयार हो

जायगी। जिस समय सरकारने देखा कि स्वामीजी तथा उनके साथी तत्पर हैं उसी समय उसने उनपर वार किया। यही हमारी परीक्षाका समय था कि हम लोग अपने व्रतपर अटल हैं या नहीं। पर हम असफल प्रमाणित हुए। यह सच है कि प्रोफेसर वस्वानी तथा अन्य सज्जनोंने भारी चेष्टा की और जनताको शान्त किया नहीं तो इससे भी बुरी अवस्था उपस्थित हो गई होती। पर इसका कोई महत्व नहीं है। जो बात सबसे प्रधान है वह यह है कि जनताने आत्मसंयम खो दिया। जनताको एकत्रित होनेका न तो कोई कारण था और न इसकी आवश्यकता थी। एकत्रित होकर भी उसे अन्तिम क्षणतक शान्त रहना चाहिये था तथा आत्मसंयमसे काम लेना चाहिये था। यदि उसे अपना क्रोध प्रगट करना था तो उसे विलायती वस्त्रोंका परित्याग करना था, शराबकी दूकानोंपर पहरा देनेके लिये तैयार होना था तथा चरखा कातना चाहिये था। इसकी चोट सरकारको गहरी लगती। पर जनताने जो आचरण किया उससे उस आन्दोलनपर चोट पहुंची जिसकी भलाईके लिये वह सब कर रही थी।

इस बातमें जरा भी भूल नहीं होनी चाहिये। जबतक जनता शिक्षित सैनिकोंसा व्यवहार न करे सविनय अवज्ञाकी सम्भावना कभी नहीं हो सकती। जबतक प्रत्येक अंग्रेजकी जान पूर्णरूपसे सुरक्षित न कर सकें हमलोग सविनय अवज्ञा कभी नहीं चला सकते। केवल विश्वास दिलाना ही पर्याप्त

नहीं है। प्रत्येक अंग्रेज पुरुष तथा रमणीको यह विश्वास हो जाना चाहिये कि हम इस देशमें पूर्ण सुरक्षित तलवार और बन्दूकोंके बलपर नहीं हैं बल्कि असहयोगियोंके अहिंसाके सिद्धान्तपर हैं। यह केवल सफलताकी ही शर्त नहीं है बल्कि इससे हमारी योग्यता प्रमाणित होती है कि हम इस आन्दोलनको सफलतापूर्वक इसी रूपमें चला सकते हैं। असहयोग आन्दोलन चलानेका अन्य कोई मार्ग नहीं है।

स्वामीजीने जेल जाते समय जो सन्देश दिया है उसे हमें स्मरण रखना चाहिये। उन्होंने कहा है—"शराबखोरीके विरुद्ध आन्दोलन जारी रखो और भङ्गियोंकी सहायता करो।" इससे अधिक वे और क्या कह सकते थे। यदि हमलोग शराबखोरी बन्द कर दें और भङ्गियोंको उस पतित अवस्थासे उठाकर अपने बराबर कर लें तो स्वराज्य हमारे हाथमें है।

सिन्धके अधिकारियोंका दिमाग फिर गया है। वहां लोगोंको स्वतन्त्र घूमने और लाठी आदि लेकर चलनेकी भी मनाही हो रही है।

प्रोफेसर वस्वानीने इसे *न्यायका नाटक* कहा है। इस तरहके न्यायके नाटकके दृश्य अधिकाधिक देखनेमें आवेंगे। ज्यों ज्यों हमारा आन्दोलन और भी वेगसे बढ़ेगा हमलोगोंको अनेक निर्दोषोंकी सजा सुनने तथा देखनेके लिये तैयार रहना चाहिये और उसके लिये किसी तरहका क्रोध, रोष या उद्वेग नहीं प्रगट करना चाहिये। यदि इस अवस्थापर पहुंचकर भी

हमलोग जनतापर अधिकार न रखनेके कारण असफल हुए तो
हमारा दुर्भाग्य होगा।

फिर गुरखी हमला

(नवम्बर ३. १९२१)

प्राय ऐसा मालूम होता है कि कष्ट सहनेमें अतएव स्वराज्य विजयमें बङ्गालका पहला नम्बर होनेवाला है। चाँदपुरके हिंसाकाण्डकी यादगार अभी ज्योंकी त्यों बनी हुई है। अब एक और वैसे ही भयङ्कर आक्रमणकी खबर चटगावसे आई है। उसकी कथा जिला कांग्रेस कमेटीके मन्त्री बा० प्रसन्नकुमार सेनके ही शब्दोंमें सुनिये।

"चाटगाव जिला कांग्रेस कमेटीके सभापति श्रीयुक्त सेन गुप्त और मन्त्री श्रीयुत मोहिमचन्द्र दास तथा दूसरे १६ सज्जन गत दो जुलाईको गिरफतार हुए। उनका अपराध यह था कि वे एक जलूसमें बिना इजाजत लिये शामिल हुये। पुलिस कानूनकी धारा ३० के अनुसार स्थानीय हाकिमने जुलूसके पहले ही एक नोटिस जारी कर दी थी। पूर्वोक्त सज्जनोंका जलूसमें शरीक होना उस नोटिसके मशाके खिलाफ माना गया। मुल्जिमोंने अपनी सफाई नहीं दी। फलत २० अक्टूबरको हरएकको तीन तीन मासकी सख्त कैदकी सजा दी

गई। कस्बेमें यह बात फैल गई कि उन भद्र कैदियोंको उसी रात अलीपुरकी सेण्ट्रल जेलको ले जानेवाले हैं। लोग ४ बजेके पहलेसे ही जेलके फाटकके पास जमा होने लगे। बैंड भजन-मण्डली, और संकीर्तन-मण्डली भी आ दाखल हुई। शामके वक्त सारे गावमें रोशनी की गई, आतिशबाजी छोडी गई। ये बातें लोगोंने काग्रेस कमेटीकी सूचनाके बिना ही की। ८ बजनेके कुछ ही देर बाद कैदी लोग जेलके दरवाजेपर लाये गये और स्टेशनपर जानेके लिये पुलिसकी गाडियोंपर सवार कराये गये। उनके पीछे बैंड, भजनमण्डलीका जलूस निकला। मशालें जल रही थीं। जलूस शान्ति और नियमके साथ जा रहा था।

जलूस ज्यों ही रेलवे स्टेशनके नजदीक पहुचा, कोई १०० गुरखोंकी सङ्गीनबन्द एक टोली, एक छिपे स्थानसे बाहर निकली। कुछ लोगोंने जिनका पता आजतक नहीं लगा, रोशनी बुझा दी, और गुरखा लोग 'मारो मारो' 'लगाओ, लगाओ' पुकारते हुए एकदम बिना खबर किये बिलकुल जङ्गलियोंकी तरह, उन बेगुनाह और शान्तिमय लोगोंपर टूट पडे। उन्होंने जिसे देखा उसे और जिधर देखा उधर हाथ साफ करना शुरू किया। बिचारे गाडीवान और उनके घोडे भी नहीं बचे। वे अपनी सङ्गीन तबतक लोगोंके बराबर भोकते रहे जबतक कि लोग स्टेशनसे बहुत दूर नहीं निकल गये और एक जगहसे सीटीकी आवाज आते ही बन्द हो गये। पता लगा है कि कोई १००

आदमियोंके बदनपर जगह २ पर घाव पहुंचे हैं, जिनमेंसे खून बहता था और कोई ३०० आदमियोंको ऐसी चोटें पहुची हैं जिनसे बडा दर्द होता था। जिला मजिस्ट्रेट मि० स्ट्राङ्ग और एडिशनल जिला मजिस्ट्रेट मि० बरोज उस जगहपर मौजूद थे। अमन सभाका एक खास आदमी हमला करते हुये जोर २ से चिल्लाते हुये कि 'मारो, मारो' देखा गया और जब यह चढाई खतम हो गई तब वह जिला मजिस्ट्रेटके साथ देखा गया। स्टेशनके बाहर इस हमलेके बाद एक यूरोपियन फौजी अफसर, जो कि अनुमानतः गोरोंका कमाण्डर था, प्लेटफार्ममें घुसा। पहले तो उसने यह दिखलाया कि मानो कैदियोंकी रिजर्व गाडीकी ओर जा रहा है, पर एकाएक बाईं तरफ घूमा और जो लोग प्लेटफार्म टिकट लेकर गये थे उन्हें धक्का देने लगा। प्लेटफार्म खाली कर देनेके लिये न तो किसी तरहकी हिदायत ही दी गई और न ऐसा कहा ही गया। हमें ऐसा शक होता है कि ऐसा करनेका उद्देश्य यह था कि एक दूसरे हमलेके लिये परिस्थिति उत्पन्न की जाय। परन्तु लोग शान्तिपूर्वक वहांसे हट गये, और जब गुरखे प्लेट-फार्मपर लाये गये तब उन्हे वहा कोई न मिला जिसपर वे हमला करते। ऐसी सनसनीकी हालतमें अगर लोग शान्त और खामोश न रहते तो प्लेटफार्मके भीतर और बाहर दोनों जगह कितनी ही जाने चली गई होतीं। गुरखे लोग तो बावले होकर भीडमें घुस पडे थे। ऐसी दशामें उनके हथियार

बन्द होते हुए भी उनके टुकड़े टुकड़े हो जाना एक आसान बात थी, पर लोगोंने उनपर उलटकर हमला नहीं किया। यह बात ध्यान देने लायक है कि चादपुरकी दुःखान्त घटना २० जून १९२१ को हुई और उसीका दूसरा संस्करण २० अक्टूबर १९२१ को, उससे भी अधिक वीभत्स रूपमें हुआ और सो भी ऐसे अवसरपर हुआ कि जिसके लिये कोई भी उज्र नहीं हो सकता।

स्थानीय कांग्रेस कमेटी, चटगाव अस्तोसियेशन, और स्थानीय खिलाफत कमेटीकी एक असाधारण आवश्यक सभा २१ अक्टूबरको हुई और उसमें इस मामलेकी तहकीकातके लिये कमेटी नियुक्त की गई। कमेटीकी बैठकें प्रतिदिन जगमोहन सेन हालमें हो रही हैं और गवाहिया ली जा रही हैं। फोटोग्राफर लोग जख्मी लोगोंकी तस्वीरें खींचनेके लिये तजवीज कर लिये गये हैं। अगर आप कृपा करके हमें यह बतलावेंगे कि इस विपदमें अपने कष्टोंको दूर करनेके लिये हमें क्या कार्रवाई करनी चाहिये, तो हम आपके कृतज्ञ होंगे।

स्वदेशी आन्दोलन पहलेसे भी अधिक जोर शोरके साथ बढता जा रहा है। हम आशा करते हैं कि शीघ्र ही जो ५ फी सदी विदेशी कपडा चटगावमें दिखाई देता है वह भी तिरोहित हो जायगा।

अबतक कांग्रेस आन्दोलनके सम्बन्धमें ३० आदमियोंको सजाये हो चुकी है और उनमेंसे २७ अभीतक जेलमें हैं और छः का मुकदमा जेर तजवीज है।

ये बातें इतनी सावधानीके साथ पेश की गई हैं कि इनके विषय मे अत्युक्तिका सन्देह करना कठिन है। पर वहांके हाकिमोंपर भी इतनी अजहद संगदिलीका दोषारोपण करना कठिन है जितना कि प्रसन्न बाबूके वर्णनसे अनुमान होता है। यह तो साफ प्रगट है कि लोग उस समय खुशी मना रहे थे। ईश्वरको धन्यवाद है कि अब कैदखानोंका डर हमारे दिलोंसे निकल गया है इस लिये लोगोंने अपने घरोंमें रोशनी की और उन कैदियोंके पहुंचानेके लिये जलूस निकाल कर स्टेशनपर गये। इसमें उनके दंगे फसादका कोई इरादा नहीं हो सकता था। लेकिन मजिस्ट्रेटके लिये तो इतना भी हद्से ज्यादा था। उसने निस्सन्देह सोचा कि इस खुशिया मनानेसे मेरी दी सजाओंमें प्रतिरोधक प्रभावकी प्रतिक्रिया हो रही है और आगे चलकर मुझे सारे चटगावको एक जेलखाना बनाना पडेगा तब कहीं तमाम लोगोंका समावेश उसमें हो सकेगा। इस लिये उसने गुरखी हमलेसे काम लिया। इसके सिवा दूसरी तरहसे (पूर्वोक्त रिपोर्टको सत्य मानते हुए) उस पशुता पूर्ण व्यवहारकी उपपत्ति नहीं लगाई जा सकती। जो उन बिलकुल बेगुनाह खुशिया मनाने वालोंके साथ किया गया। और यह भी स्पष्ट ही है कि अमन सभा कहलाने वाली संस्थाके लोग नौकरशाहीके हाथकी कठपुतली हो रहे हैं। यह समय निस्सन्देह परीक्षाका है। लेकिन इसके लिये हमें क्या क्या सहन करना होगा इसका हिसाब तो हमने इस रास्तेपर कदम बढानेके पहले ही कर लिया है। कष्ट हमें अवश्य सहन करना

चाहिये। हमें अग्नि परीक्षा देना होगी और उसमेंसे शुद्ध हो कर निकलना होगा, तब हम अपने गन्तव्य स्थानपर पात्र रखने पावे गे। चटगावके लोगों और नेताओंने ऐसे उद्वेग और सक्षेपके समय जो उदाहरणभूत आत्मसयम और शान्ति धारण की उसके लिये वे हार्दिक धन्यवादके पात्र हैं। मैं उन्हें इसके सिवा दूसरी सलाह नही दे सकता कि इससे कठिन सकट उपस्थित होनेपर भी अपने सीधे रास्ते पर आगे ही बढते रहें। हमारे पास तो क्षति पूर्तिका केवल एकही रास्ता है और वह यह कि ऐसे हर एक मौकेपर अधिकाधिक साहस और अधिकाधिक आत्म सयम दिखावें यहा तक कि आखिरको जालिम अपनी ही कोशिशोंके बोझसे दबकर थक जायगा। चटगावके सहयोगि-योंको अमन सभाके या सरकारी आदमियोंपर बिगड न जाना चाहिये। वे तो सिर्फ अपने स्वभावके अनुसार काम करते हैं। असहयोगीका तो धर्म है कि न तो बदला लेना और न सिर ही झुकाना। उसे तो अपने चारों ओर तूफानके उठते हुए भी अचल सीधा खडा रहना चाहिये। अगर हम बडभागी हों तो आइये सच्चाईके साथ गावें।—

"जब तक तेरा वरद हस्त है मेरे सिरपर हे प्रभुवर!
निश्चय ही वह पार लगावेगा प्रति पल आगे रहकर।
कठिन, करीले, मगसे, डरसे, दुर्गम गिरि दारुण दुख से,
बाह पकड कर लेजावेगा तिमिर रात्रिमें वह सुखसे।

विविध प्रश्न

(अप्रेल २०, १९२१)

सम्पादक 'यङ्ग इण्डिया'। महाशयजी, आपको विदित होगा कि मौलाना मोहम्मद अलीने अपने मद्रासके भाषणमें स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि यदि अफगान लोग उन लोगोंके खिलाफ—जिन्होंने इस्लामको निर्बल बना दिया है और मुसल्मानोंके पवित्र क्षेत्रोंपर बलात् अधिकार जमा लिया है—आक्रमण करे तो मैं उनकी सहायता करूंगा। मैं समझता हूं कि इस प्रश्न पर भारतीयोंमें मतभेद है। माडरेट लोग इस तरहके किसी भी आन्दोलनको पदद्लित करनेके लिये तुले हैं। लाला लाजपतराय, श्रीयुत देशबन्धु दास तथा पण्डित मालवीय सदृश राष्ट्रवादियोंने भी इस प्रश्नपर अपना मत नहीं दिया है। और तो और स्वय आपने भी इस भाषणपर कोई ध्यान नहीं दिया है। सम्राट्के शत्रुके साथ सहानुभूति दिखलाना और उसकी खुली सहायता करना पहले दर्जेका विश्वास घात है पर इस युगमें जहां लोग सब बातें साफ साफ कह डाल्ते हैं, प्रत्येक व्यक्ति अपने माननीय नेताओंकी बात सुननेके लिये आतुर रहता है। यह बहुत ही विकट प्रश्न है और मुझ सदृश सार्वजनिक लेखक किसी निश्चित मतपर नहीं पहुंच रहे हैं।

चाहिये। हमें अग्नि परीक्षा देना होगी और उसमेंसे शुद्ध हो कर निकलना होगा, तब हम अपने गन्तव्य स्थानपर पात्र रखने पावेगे। चटगावके लोगो और नेताओंने ऐसे उद्वेग और सक्षेपके समय जो उदाहरणभूत आत्मसयम और शान्ति धारण की उसके लिये वे हार्दिक धन्यवादके पात्र हैं। मैं उन्हें इसके सिवा दूसरी सलाह नही दे सकता कि इससे कठिन सकट उपस्थित होनेपर भी अपने सीधे रास्ते पर आगे ही बढते रहें। हमारे पास तो क्षति पूर्तिका केवल एकही रास्ता है और वह यह कि ऐसे हर एक मौकेपर अधिकाधिक साहस और अधिकाधिक आत्म सयम दिखावे यहा तक कि आखिरको जालिम अपनी ही कोशिशोके बोझसे दबकर थक जायगा। चटगावके सहयोगियोंको अमन सभाके या सरकारी आदमियोपर बिगड न जाना चाहिये। वे तो सिर्फ अपने स्वभावके अनुसार काम करते हैं। असहयोगीका तो धर्म है कि न तो बदला लेना और न सिर ही झुकाना। उसे तो अपने चारों ओर तूफानके उठते हुए भी अचल सीधा खडा रहना चाहिये। अगर हम बडभागी हों तो आइये सच्चाईके साथ गावें।—

"जब तक तेरा वरद हस्त है मेरे सिरपर हे प्रभुवर!
निश्चय ही वह पार लगावेगा प्रति पल आगे रहकर।
कठिन, करीले, मगसे, डरसे, दुर्गम गिरि दारुण दुख से,
बाह पकड कर लेजावेगा तिमिर रात्रिमें वह सुखसे।

अफगान विभीषिका

(मई ४, १९२१)

एक संवाददाताने अनेक प्रश्न किये हैं, जिनका उत्तर पिछले लेखमे दे दिया गया है। इसमें सबसे प्रधान प्रश्न मौलाना मोहम्मद अलीके उस भाषणके सम्बन्धमें है जो उन्होंने अफगान विभीषिकाके सर्वधमें दिया है। मौलाना मोहम्मद अलीके जिस भाषणका लेखकने हवाला दिया है उसे हमने नही पढा है पर चाहे मुहम्मद अली करे या न करें पर मैं तो एक तरहसे अफगानोंका मदद अवश्य करूगा यदि वे ब्रिटिश सरकारके साथ युद्ध जारी कर दे। मेरे कहनेका अभिप्राय यह है कि मैं खुल्लम खुल्ला अपने साथियोंसे कह दूगा कि जिस सरकारपरसे हमलोगोंका विश्वास उतर गया है उसकी सहायता करना पाप है। पर साथ ही मैं भारतीयोंसे यह नहीं कहूगा कि वे अमीरकी सहायताके लिये धन जन इकट्ठा करें। इस तरहका आचरण अहिंसात्मक असहयोगके सिद्धान्तके विरुद्ध होगा जिसे भारतीयोंने खिलाफत, पञ्जाब तथा स्वराज्यके लिये ग्रहण किया है। जहातक मेरा अनुमान है मौलाना मोहम्मद अलीका भी इससे अधिक कुछ अभिप्राय नहीं रहा होगा। जबतक हिन्दू मुस्लिम एकता कायम रहनी

हमारे पड़ोसी

(मई १६, १६२१)

"अफगान विभीषिका" शीर्षक जो लेख मैंने लिखा है उसे पढ़नेसे यही भ्रम होता है कि मैंने उस लेखद्वारा अफगानों को भारतपर आक्रमण करनेके लिये निमन्त्रित किया है इस तरह मैं प्रत्यक्षरूपसे हिंसाका प्रतिपादक बन जाता हू। श्रीयुक्त अण्डरूजके हृदयमें उसी तरहके प्रश्न उठ हैं। मैंने उस लेखको केवल भारत सरकार और भारतीयोंके लिये लिखा था। मै नही समझता कि अफगानके लोग इतने मूढ़ होंगे कि वे केवलमात्र मेरे लेखके बलपरही भारतपर आक्रमण करनेके लिये सन्नद्ध हो जायंगे। पर मैं देखता हू कि उसका जो अभिप्राय श्रीयुत अण्डरूजने ग्रहण किया ' अन्य भी कर सकते हैं। इसलिये मै सबको सूचित कर देना चाहता हू' कि मैं केवल यही नहीं चाहता कि अफगान या अन्य कोई मेरी सहायताको न आवें बल्कि उसकी सम्भावन प॰ मेरी चिन्ता बढ़ जाती है। मुझे भारतके बलपर पूरा भर। । है और मैं समझता हू कि विना किसी बाहरी सहायता॰ वह सरकारके साथ समझौता कर सकता है। इसके अ॰ा॰िक्त मेरा लक्ष्य तो यह है कि मैं अहिंसाद्वारा अपने ध्येयका प्राप्त करना चा-

हता हूँ। इसलिये मैं अफगानोंको भारतकी सीमाके बाहर ही र-खनेकी चेष्टा करूंगा पर इसके लिये (अर्थात् अफगानोंके आक्रम-णको रोकनेकी चिन्तामें) मैं धन जनसे सरकारकी सहायता क-रना कभी भी स्वीकार नहीं करूंगा।

उस लेखमें मैंने अपनी वर्तमान स्थिति एकदमसे स्पष्ट कर दी है। मेरे लिये वर्तमान सरकार सबसे असह्य है। भारतीय मनुष्यत्वके लिये यह सबसे बढ़कर संकट है कि किसी भी तरह मैं इसके पुनर्निमाणका स्वागत करूंगा। मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि इस सरकारको ईश्वरका जरा भी भय नहीं है। इसके सहायक भलेमानस अंग्रेज तथा हिन्दुस्तानी हैं इससे यह भारतके लिये और भी भयावह है। उनके अन्तर्गत जो बुराइयां हैं उसे वह राष्ट्रकी आखोंसे छिपाना चाहती। मैं किसी व्यक्ति विशेषका विरोधी नहीं हूं। मैं उस प्रणालीका कट्टर शत्रु हूं जिसका संयुक्त नाम सरकार है। अच्छेसे अच्छे वायसराय आये पर इस प्रणालीके विषैले प्रभावको नही मिटा सके। इस शासन प्रणालीकी जड़ ही विषसे सींची हुई है। इसलिये वर्तमान शासन प्रणालीके नष्ट करनेके लिये भारतपर जो कुछ विपत्ति आवे मैं उसका स्वागत करनेके लिये तैयार हूं।

पर जो कुछ मैं करूंगा वह जो कुछ मैं करना चाहता हूं उससे एकदम विपरीत है। मुझे खेदके साथ स्वीकार करना प-ड़ता है कि इस आन्दोलनका प्रभाव सैनिकोंपर इस तरह नहीं

पड़ा है कि वे इस सरकारको सहायता करना छोड़ दें। जिस समय सैनिक इस बातको समझ लेंगे कि वे राष्ट्रके अङ्ग हैं और अपने ही भाइयोंपर गोली चलाना सैनिक वीरताके लिये अपमानजनक है उसी दिन भारतकी स्वतन्त्रताका संग्राम विना किसी कठिनाईके परिपूर्ण हो जायगा। पर वर्तमान अवस्थामें भारतके सैनिक भयके उसी तरह वशीभूत हैं जिस तरह अन्य साधारण प्रजा। रङ्गरूटोंमें वह इसलिये नाम लिखाता है क्योंकि वह जानता है कि उसे कोई अन्य चारा नहीं है जिससे वह अपना पेट पाल सके। विशेष पारितोषिकोंद्वारा एक तो सरकारने इस पेशेको आकर्षक बना दिया है तथा जो एक बार उसमें घुस गया है उसके निकलनेके लिये इतने कड़े नियम तथा दण्डादि बना दिये गये हैं कि वह जल्दी बरी नही हो सकता। इसलिये मैं इस भ्रममें नही पड़ सकता कि आज अफगान लोग भारतपर आक्रमण करें तो भारतीयोंद्वारा ब्रिटिश सरकारकी सहायता नहीं हो सकती। पर मैं अपना यह परम कर्तव्य समझता हूं कि अवसर पड़नेपर मैं देशके सामने उस अवस्थाको उपस्थित कर दूं जो असहयोगके कारण उत्पन्न हुई है। साथ ही अफगान विभीषिकाके भयसे देशको मुक्त कर देना भी नितांत आवश्यक है।

इस प्रश्नके दूसरे भागमें हिंसाका जो भाव ग्रहण किया गया है वह भ्रमके कारण है। कोई बाहरी शक्ति सरकारके साथ संग्राम छेड़ दे तो असहयोगियोंका यह धर्म नहीं है कि

वे इस सरकारकी सहायता करें। वह इस युद्धमें किसी तरहसे भाग न लें। अहिंसात्मक असहयोगी इस संग्राममें किसी तरहकी सहायता भी न दें। पर युद्ध समाप्त करनेके लिये सरकारकी सहायता करना भी उसका कर्तव्य नहीं है। बल्कि असहयोगीकी आंतरिक इच्छा यही होगी कि जिस शक्तिके साथ हम संग्राम कर रहे हैं उसका नाश हो जाना ही उचित है। इसलिये अहिंसात्मक असहयोगी तथा भारतके हितेच्छुकी हैसियतसे मैं अफगान आक्रमणका भलीभांति स्वागत कर सकता हूं। भारतके साथ अफगानवालोंकी शत्रुता नहीं है। वे भी ईश्वरसे डरनेवाले मनुष्य हैं। बम्बई अथवा कलकत्तामें चन्द अफगानोंके असभ्य अथवा बर्बरतापूर्ण व्यवहारसे ही हमें अफगानोंकी जांच नहीं करनी चाहिये।

इस बातकी आशंका निर्मूल है कि यदि आज सीमान्त प्रदेशसे ब्रिटिश सेना हटा ली जाय तो वे भारतपर आक्रमण कर बैठेंगे। हमें यह बात सदा स्मरण रखना चाहिये कि यदि वे भारतपर आक्रमण करना चाहें तो उन्हें आज भी कोई रोक नहीं सकता। पर उन्हें भी अपने देशका उतना ही अभिमान है जितना हमें अपने देशका है। सीमान्त प्रदेशके पासकी जातियोंकी कठिनाईका विचार मैं एक स्वतन्त्र लेखमें करूंगा।



सीमाके मित्र

(मई २५, १६२१)

सीमान्त प्रदेशोंके पास जो पञ्जाबी रहते हैं उनके साथ प्रत्येक भारतवासीकी सहानुभूति होनी चाहिये आसपासकी जातिया इनपर आसानीसे आक्रमण कर सकती हैं, उनकी रक्षाका कोई उपाय नहीं है और जो कुछ समाचार मिले हैं उनसे मैं यह भी देख रहा हूं कि सरकार इनकी रक्षाका कोई भी प्रबन्ध नहीं करती और आजकल तो जो कोई अधिकारियोंके पास किसी तरहकी शिकायत करता है तो वे उसे तुरत उत्तर देते हैं:—अली भाइयोंके पास जाओ, गान्धीजीके पास जाओ"। यदि सीमान्त प्रदेशोंका अधिकार हम लोगोंके हाथमें होता तो ईश्वर ही जानते हम लोग क्या करते। या तो हम लोग उन निःशस्त्र निवासियोंकी रक्षाकी योजना पूरी कर दिये होते या कोशिशमे पूरी तरह मर मिटे होते। यदि उचित समझते तो हमलोग उन्हें सशस्त्र भी कर देते। पर इतना ही नहीं। हम लोग इन उद्धत पडोसियोंको शिक्षित करते और उन्हें विश्वासी तथा शान्त बनाते और डकैतीसे दूर करते। पर हमें तो उसी अवस्थाको स्वीकार करना है जो इस समय चल रही है। मैं इस बातको मान लेता हूं कि हिन्दू और मुसलमान परस्पर मित्र हैं। और

कोई भी मुसलमान विश्वासघातसे हिन्दुओंके खिलाफ सीमान्त प्रदेशकी जातियोंकी सहायता नही करेगा। सामान्त प्रदेशकी मुसलमान जातिया काफी बलिष्ट हैं और इस तरहकी सहायता दे सकती हैं।

पर हमें इन जातियोसे हताश नही होना चाहिये। हमने अनेक बार उन्हें असाध्य मान लिया है। मेरी समझमे वे भी समझायी जा सकती हैं। वे भी ईश्वरसे डरती हैं। केवल आनन्द के लिये ही वे लूट पाट नहीं करतीं। मेरी समझमें वे आत्म शुद्धिके प्रभावमें पड रही हैं जो इस समय धीरे धीरे फैलता जा रहा है।

मैं यह भी जानता हू कि सीमान्त प्रदेशकी जातियोंके पवित्र करने तथा सुधारनेका काम बडी उदासीनताके साथ किया जाता है। इनसे जो जातिया लूटी जाती हैं उनके आरामका कोई भी प्रबन्ध नहीं किया जाता।

इस कठिनाईका भी यही कारण है कि हम लोग अग्रेजोंसे डरते हैं और गुलाम हो गये हैं। हमलोग सिमान्त प्रदेशका जातियोंसे डरते हैं और हमलोग अपनी दासतासे सन्तुष्ट हैं। हमलोग इसके लिये अग्रेजोके कृतज्ञ हैं कि वे इन सीमान्त प्रदेशकी जातियोंसे हमारी रक्षा करते हैं। आत्माभिमानी आदमीके लिये इससे बढकर हीनताकी क्या बात हो सकती है कि वह अपनी आत्मरक्षाके लिये उनपर भरोसा करे जो उसीका शिकार किया करता है। मनुष्यताको बेचकर यदि रक्षा

करानी है तो मैं मर जाना ही उत्तम समझता हूं। इस दीनता-का प्रधान कारण यह है कि हम लोगोंने अपने दैनिक आचरणमें ईश्वरको जानबूझकर भुला दिया है। यदि वास्तवमें विचारकर देखा जाय तो व्यवहारमें हमलोग पूर्णरूपसे नास्तिक हो गये हैं और यही कारण है कि हमलोगोंके दिलमें यह बात समा गई है कि अन्तमें जाकर बल प्रयोग किये बिना हमारी रक्षा हो ही नहीं सकती। बल प्रयोगका डर हमें इस तरह पराभूत कर लेता है कि हम विचारशक्तिसे काम लेना छोड देते हैं। हम अपने दैनिक आचरणमें ईश्वरको अस्वीकार करते हैं। यदि हमारा ईश्वरमें विश्वास है अर्थात् अपने भरोसे रहते हैं तो हमें उन सीमान्त प्रदेशकी जातियोंसे किसी तरहका भय नहीं रह सकता। उस अवस्थामें हमें केवल समय समयपर अपनी सम्पत्ति और कभी कभी अपनी जान गंवा देनेका भय होगा पर मर्यादा सदा रक्षित रहेगी। हमें किसी भी अवस्थामें यह बात नहीं स्वीकार कर लेनी चाहिये कि हमारे पडोसी इतने जड और असभ्य हैं कि वे बुद्धिबलसे काम ले ही नहीं सकते।

इस तरह आत्माभिमानीकी हैसियतसे हमारे लिये दो ही मार्ग खुले हैं। या तो हम अपनी रक्षाकी योजना करें या यह विश्वास कर कि समझानेसे वे भी मान सकते हैं उसकी ही चेष्टा करें। मैं समझता हूं कि दोनों तरीके साथ चल सकते हैं। पर हमे तीसरी बातकी ओर कभी भी ध्यान नहीं देना चाहिये। अर्थात् हमें इस बातपर कभी भी भरोसा नहीं

करना चाहिये कि ब्रिटनकी गोलिया हमें सीमान्त प्रदेशकी जातियोंसे बचावेंगी। तीसरे तरीकेका अख्तियार करना राष्ट्रीय मानकी हत्या करना है।

यदि मेरी आवाज सीमान्त प्रदेशकी जातियो तक पहुंच सकती है तो मैं इन भारतियोंसे कह सकता हू कि आप लोग लूट पाटकी वृत्तिको छोड़िये। उन लोगोंका विश्वास है कि पैगम्बरकी यही शिक्षा है कि वे लूट पाटसे ही अपना जीवन निर्वाह करें और प्रत्येक हिन्दूको लूटकर या उसका प्राण लेकर वे अपने खुदाको प्रसन्न करते हैं। इसलिये प्रत्येक उल्मा तथा मुसलमान—जिनका इन जातियोंपर प्रभाव है—का धर्म है कि वे उन्हें समझावे कि यदि वे इस्लाम धर्मकी इस नयी विपत्तिसे रक्षा करना चाहती हैं तो वे सीमान्त प्रदेशके निवासियोंपर आक्रमण न करें क्योंकि एक तो ये विचारे उनकी किसी तरहकी क्षति नही करते दूसरे चाहे ये हिन्दू हों या मुसलमान इस्लामकी रक्षाका पूरा यत्न कर रहे हैं।



अफगानका भय

(जून १, १९२१)

कुछ स्वार्थियोंने अफगानिस्तानके आक्रमणकी चर्चा छेड दी है। इसपर मिस्टर विपिनचन्द्र पाल भी डर गये हैं। यह पढकर मुझे बडा आश्चर्य हुआ। मिस्टर विपिनचन्द्रपाल भारत-की पूर्ण स्वाधीनताके पक्षपाती भी हैं। तो क्या वे समझते हैं कि जबतक हम लोग इस तरहकी लाचारीकी दशाको दूर नहीं कर देंगे कभी भी स्वराज्यकी योग्यता हम लोगोंमें नही आ सकती। स्वराज्यके माने यह हैं कि हममें अफगान तथा इसी तरहके अन्य भयोंके निपटारा करनेकी पूर्ण योग्यता हो जाय। असहयोग कार्यक्रमकी व्यवस्था ही दूसरोंपर पूर्ण विश्वास रखनेके लिये की गई है और यदि वे विश्वासघात करे तो उनके विश्वा-सघातका बदला आत्म यातना या उत्पीडनसे दे। मैं मिस्टर पालको स्मरण दिलाना चाहता हू कि डाक्टर तेज बहादुर सप्रूके भाषणके उत्तरमे स्वय उन्होंने ही कहा था कि वही संग-ठन शक्ति, उदारता और तपस्या, जो वर्तमान दासताकी दशाका नाश करेगी, इसी तरहकी अन्य अयोग्यताओंको भी दूर कर देगी।

मिस्टर पालको भय है कि कहीं भारतमें इस्लाम धर्मकी पुनः

स्थापना न हो जाय। प्रत्येक मुसलमान समस्त मुसलमान राज्यों-को सगठित देखना चाहता है। इस अभिप्रायसे जो उपरोक्त भाव प्रशसनीय हैं। पर यदि मुसलमान लोग समस्त मुसलमान राज्योंका सगठन करके ससारमें आतक फैलाना चाहते हैं तो यह सिद्धान्त बहुत ही बुरा है। जिन मुसलमानोंसे मेरा परिचय है उन्होंने तो कमसे कम इस तरहकी बातें अपने मुहसे कभी नहीं निकालीं। पशुबलकी प्रधानतासे सारा ससार तग होता चला जा रहा है।

मिस्टर पालसे मैं यह बात स्पष्ट शब्दोंमे कह देना चाहता हू कि मैं मानसिक आवेगोंके वशवर्ती होकर ना बनेवालोंमें नहीं मैं बुरेको दूर और भलेको पास रखता जाता हू। मैं कभी भी विश्वास नहीं कर सकता कि कोई भी विचारवान मुसलमान अफगानोंका शासन कभी भी पसन्द करेगा जैसे कोई भी विचार-वान हिन्दू अफगानोंका शासन नहीं स्वीकार कर सकता। उसी तरह कोई भी विचारवान मुसलमान भी अफगान वालोंका शासन नहीं स्वीकार कर सकता। अफगान विभीषिकापर मैंने जो लेख लिखा था उसमें मैं भाई मोहम्मद अलीकी अवस्था पर विचार कर रहा था। साथही मैंने भारतीय जनताको इस बातकी भी चेतावनी दे दी थी कि उन्हें स्वार्थियोंकी इस तरहकी बातोंसे डरना या घबराना नहीं चाहिये।

मिस्टर पालने लिखा है कि यदि अफगान आक्रमणकी सभा वना प्रतीत हुई अथवा यदि इसका भूठा भी सवाद फैल ---

तो अधिकांश मुसलमान जनता उत्तेजित हो उठेगी और अनाचार करने लग जायगी। इससे यदि विद्रोह न हुआ तो शान्ति भङ्ग तो अवश्य हो जायगी। पर मेरा यह विश्वास नहीं है और न मैं मिस्टर पालके मतको स्वीकार कर सकता हूं। इसके प्रतिकूल मेरा तो यह विश्वास है कि मुसलमान इस तरहकी भूल कभी भी नहीं करेंगे क्योंकि उनके धर्मपर चोट है। मौलाना शौकत अलीने अनेक बार इस बातको कहा है कि मुसलमान इतने मूर्ख नहीं हैं कि वे हिंसा और अहिंसाको एकमें मिला दें। मिस्टर विपिनचन्द्र पालने लिखा है कि हिन्दुओंको उचित है कि वे अपना हिसाब किताब मुसलमानोंके साथ ठीक कर लें। क्या यह लिखकर उन्होंने हिन्दुओंके साथ अन्याय नहीं किया है? मैं दावेके साथ यह लिख सकता हूं कि उन्होंने हिन्दुओंके आन्तरिक भावोंको समझनेमें गहरा धोखा खाया है। हिन्दू लोग गोरक्षाके प्रश्नके लिये उतने ही तत्पर हैं जितने मुसलमान खिलाफतकी रक्षाके लिये तत्पर हैं। हिन्दू लोग यह बात भी भलीभांति जानते हैं कि वे मुसलमानोंके सद्भावके बिना अपने इस प्रिय काममें—गोरक्षा—सफलता भी नहीं पा सकते। मुझे पूरी आशा है कि अतीत कालमें मुसलमानोंने हिन्दुओंके ऊपर जो अत्याचार किये हैं उसे हिन्दू भूल जायगे और जिस दिन मुसलमान गौओंकी रक्षा करते देखे जायंगे उसी दिन मुसलमानोंके सभी अत्याचार हिन्दू भूल जायंगे। जिस समय मुसलमान लोग यह बात समझ लेंगे कि इस्लाम धर्मकी रक्षाके

लिये हिन्दुओंने अपने मनसे सहायता की है उस दिन वे हिन्दुओंके प्रति हृदयसे कृतज्ञता प्रगट करेंगे।

मिस्टर पालने आगे चलकर लिखा है कि हिन्दू और मुसलमान दोनों अफगान आक्रमणका स्वागत करेंगे। मैं इस तरहकी बातकी सम्भावनाको पूर्णतया अस्वीकार करता हूं। मौलाना मुहम्मद अलीके भाषणसे जो ध्वनि निकलती थी, उसका भिन्न भिन्न स्थानोंसे जिस तरह विरोध किया गया है उसीसे प्रत्यक्ष है कि भारत किसी भी तरहका अफगान आक्रमण नहीं बरदास्त कर सकता।

मिस्टर पालने लिखा है कि यदि अफगानोंका आक्रमण होगा और हम सरकारकी सहायता नहीं करेंगे तो इसके माने विद्रोह होगा। पर यह बात सर्वथा ठीक नहीं है। मैं इसके अतिरिक्त बात भी बतला सकता हूं। यदि भारत असहयोग करके सरकारकी सहायता नहीं करता तो सरकारको लाचार होकर भारतके साथ सन्धि करनी होगी। मैं नहीं समझता कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञ इतने बेवकूफ या बुद्धिहीन होंगे कि वे भारतीयोंके साथ सन्धि कर करके पञ्जाबके साथ न्याय करना, खिलाफतकी मागको पूरी करना तथा भारतको स्वराज्य देना पसन्द न करके भारत छोडकर चला जाना ही पसन्द करेंगे। भारतकी क्षमता इतनी नहीं है कि वह किसीका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर सके। यह बात मैं भी भलीभाति जानता हूं।

पर मैंने जो बात सामने रखी है वह करणीय है। शिमलामें

मैंने तथा लालजीने जो घोषणा की थी उसमें तथा हमलोगोंकी पूर्व घोषणाओंमें मिस्टर पालको अन्तर प्रतीत होता है। पर जहातक मेरी स्मृति काम करती है मैं दावेसे कह सकता हूं कि न मैंनेही अफगान आक्रमणके पक्षमे कभी कोई वात कही है और न लालजीनेही कभी कुछ कहा है। पर मैं अपनी वावत निम्नलिखित वात कह सकता हूं—

(१) मुझे यह विश्वास नही है कि अफगान लोग भारतपर आक्रमण करना चाहते हैं।

(२) मुझे पूरा विश्वास है कि अफगानियोंका मुकाबिला करनेकी सरकारमे पूरी शक्ति है।

(३) मुझे यह खेदके साथ स्वीकार करना पडता है कि यदि अफगानोंने आक्रमण किया तो भारतके प्रत्येक राजे और महाराजे विना किसी शर्तके भारत सरकारकी सहायता करेंगे।

(४) मेरा यह भी विश्वास है कि हमारा चारित्रिक पतन इतना अधिक हो गया है कि एक दूसरेको इस तरह सन्देहकी दृष्टिसे देखते हैं कि यदि अफगानोका आक्रमण हुआ तो केवल भयके कारण हमलोग ब्रिटिश सरकारकी सहायताके लिये दौड पडेंगे और इस तरह भारतकी गुलामीको और भी कडी कर देंगे।

(५) वातोंमें तो यह कहा जा सकता है कि ब्रिटिश भारतपर अफगान आक्रमण तथा खिलाफतके साथ न्याय करानेके लिये अफगान आक्रमणोंमें भेद है। पर इसको व्यवहारिकतापर दृष्टि डालनेसे दोनोंका भेद छिप जाता है। मान लीजिये कि खिलाफतके

साथ न्याय करानेके लिये अफगानोंने भारतपर आक्रमण किया और उन्हें सफलता मिली तो क्या राज्योपभोगका प्रलोभन उन्हें यहा रहनेके लिये कारण नहीं हो सकता।

(६) इस विश्वासके होते हुए भी असहयोगीकी हैसियतसे मैं उस सरकारकी—जिसे मैं सुधार देना चाहता हू या जिसका मैं अन्त कर देना चाहता हूं— विना किसी शर्तके मदद करना पाप समझता हू।

(७) यह सम्भव है कि इस तरहके विरोध करनेवालोंकी सख्या अपर्याप्त हो और उनका विशेष असर नहीं पड सकता पर इस तरहके विरोधके भावका जन्म देकर ही ये भारतको मनुष्यत्वके योग्य बनानेका बीजारोपण कर देंगे।

(८) अफगानोंके आक्रमणसे भारतका नाश मुझे स्वीकार है पर मुझे यह नहीं स्वीकार है कि भारत अपनी स्वतन्त्रता और मर्य्यादा बेचकर अपने शरीरकी रक्षा करे। जो सरकार अपनी क्रूर करनीके लिये पश्चात्ताप नहीं प्रगट करना चाहती, जिस सरकारके हाथों पञ्जाब और खिलाफत आज भी उसी तरह अपमानित पड़े हैं उसके द्वारा भारतको रक्षा कराना अपनी सम्मान और मर्य्यादा बेचनेके ही समान है।

(९) ब्रिटिश जातिका जो कुछ मुझे अनुभव है उसके द्वारा मैं भलीभाति कह सकता हू कि जिस दिन हमलोग पूरी दृढता दिखलावेंगे तथा आत्मत्यागकी पराकाष्ठापर पहुंच जायगे उसी दिन ब्रिटिश जाति हमारी बात पूरी तरह समझ जायगी और

स्वराज्य प्राप्तिके लिये एक करोड़ व्यय कर देना कोई बड़ी बात नहीं। यहापर यह भी ध्यानमें रख लेना चाहिये कि यह धन विदेशी आन्दोलनमें कदापि नहीं व्यय किया जायगा। उसका व्यय सूत कातने, बुनने और अन्य शिक्षा सम्बन्धी कार्योंमें लगाया जायगा। कोष संग्रहका कार्य ३० जूनके पूर्व समाप्त हो जाना चाहिये।

यह धन संग्रहका कार्य २१ प्रान्तोंमें विभक्त होनेके कारण प्रत्येक प्रान्तको लगभग ५ लाख एकत्र करना पड़ेगा। छोटे प्रान्तोंकी अपेक्षा बम्बई, गुजरात, बङ्गाल पञ्जाब आदि बड़े प्रान्तोको अधिक धन एकत्र करना पड़ेगा।

कार्यकारिणी समितिने यह निश्चय किया है कि सगृहीत धनका तीन चौथाई अर्थात् ७५ फी सैकड़ा प्रान्तीय कार्यके लिये सुरक्षित रख लिया जाय। शेष अखिल भारत वर्षीय तिलक स्मारक कोषमें भेज दिया जाय। अब एक मिनट भी देर करनेकी आवश्यकता नहीं। कार्य कारिणी समिति अवश्य ही कुछ नियम प्रकाशित करेगी पर हमें स्पष्ट और निश्चित कर्तव्यको आरम्भ करनेके लिये कदापि उक्त नियमोंको प्रकाशित होनेके आसरे न रहना चाहिये। हमें अपने पञ्जाबी भाइयोंके उदाहरण पर चलकर काग्रेस कमेटीको बता देना चाहिये कि हम अपने कर्तव्यको समझते हैं।

धन जन और गोला बारूद

(अप्रेल १३, १९२१)

इन तीन शब्दोंका प्रयोग करते हुए मि० दासने आल-इण्डिया काग्रेस कमेटीके प्रस्तावपर भाषण किया था। प्रस्तावमें एक करोड मेम्बर, एक करोड रुपया और २० लाख चरखेकी आवश्यकता बताई थी। यह प्रोग्राम बहुत बडा या असाध्य नहीं है। इसके लिये विशेष त्यागकी भी आवश्यकता नहीं है। इसके लिये केवल सङ्गठन, परिश्रम और दृढ इच्छाकी जरूरत है। काग्रेसके २१ प्रदेशोंमें अच्छे अच्छे कार्यकर्ता हैं। उन्हें तीनों कामोंमे शीघ्र लग जाना चाहिये। समय खोनेके लिये गुञ्जाइश नहीं है। प्रत्येक नौजवान स्त्री पुरुषको हमें काग्रेसका मेम्बर बननेका मौका देना चाहिए और भारतके प्रत्येक बालक बालिकासे तिलक स्वराज्य फण्डके लिये धन लेना चाहिए। निर्धनसे निर्धन प्रान्त भी इस प्रोग्रामके अनुसार अपना कर्तव्य पालन कर सकता है। हमें निर्धनोंकी पाईपर भी भरोसा करना चाहिये। बडे आदमियोंकी राह न देखनी चाहिए। साखी गोपालमें जब निर्धन जनताने अपनी थैलियोंसे पैसे और पाइया निकालकर दीं तो मुझे बडी भारी और प्रसन्नता हुई। बिहारमें मूठीसे काम लिया

जा रहा है। इस प्रकार काम लेनेसे एक करोड रुपया बहुत जल्दी जमा हो सकता है। काम करनेवालोंको सभी किस्मके मजूरी पेशावालोंसे मिलना चाहिए। हमें नाई, धोबी, चमार, भङ्गी सबसे चन्दा लेना है। चन्दा देकर वे स्वराज्यके आन्दोलनमें पूरा भाग लेनेवाले बन जायंगे। उन्हें स्वराज्यका महत्व समझानेकी आवश्यकता नहीं है, गोला बारूद तैयार करनेके लिये हमें धन जनकी जरूरत है। ३१ दिसम्बर तक भारतमें जो चरखे चल रहे हैं, उन्हें छोड़कर तीन महीनेके भीतर २० लाख चरखोंका प्रचार करना जरूरी है क्योंकि भारतमें कुल एक करोड २० लाख चरखोंका प्रचार होना जरूरी है।

मेरी सलाह है कि कार्यकर्त्तागण हर तरहके काम करनेवालोंसे मिले। हमलोग लोहार, बढई, धोबी, राजगीर, भंगी चमार, मोची सबको समझाकर इस आन्दोलनमें शामिल करना चाहते हैं। स्वराज्यकी आवश्यकताको समझनेके लिये उन्हें किसी विशेष शिक्षाकी आवश्यकता नहीं है। चरखा तथा स्वराज्यसे क्या सम्बन्ध है उसे वे भली भांति समझते हैं। हम लोगोंकी वर्ण व्यवस्थामें—जो एक तरहका व्यवसायिक संघ है—हमलोगोंके नर नारियोंके अधिकाश संख्याको तैयार करनेमें देर नहीं लगेगी क्योंकि ये इन संस्थाओंमें रहते चले आरहे हैं।

यह बात सदा ध्यानमें रखना होगा कि धन और जन हम लोग केवल एक कामके लिये चाहते हैं गोलाबारूद अर्थात् चरखे-

का प्रचार करनेके लिये। इसी वर्षके भीतर हमें विदेशी वस्त्रों-का पूर्ण बहिष्कार करना है। एक करोड रुपया तथा २० लाख चरखा कांग्रेसकी कमसे कम मांग है। इसमें उन चरखों की गणना नहीं की गई है जो ३१ दिसम्बरके पहले चल चुके थे। साल भरमें प्रत्येक व्यक्तिके लिये कमसे कम ३ सेर कपडेकी आवश्यकता है। इस तरह हमें समस्त राष्ट्रके लिये १८ ०००० , ०००, ०० पौंड कपडेकी जरूरत प्रति वर्ष पडेगी। इतना कपडा तैयार करनेके लिये हमें १२० लाख चरखे चलाने पडेंगे यदि ३०० दिन प्रत्येक चरखेसे काम लिया जाय और प्रत्येक चरखे प्रतिदिन कमसे कम आधा पौंड सूत तैयार करें। जूनके अन्ततक कांग्रेस केवल २० लाख अर्थात् ६वां अंश चाहती है। यह मान लेना कोई बडी बात नहीं होगी कि यदि तीन मासके प्रयाससे हमने २० लाख चरखोंका प्रचार कर दिया तो फिर आगेके तीन मासमें बिना हमारे अधिक प्रयासके ही चरखोंकी संख्या दूनी हो जायगी। यदि प्रत्येक घरकी जन संख्या ६ मान लें तो भारतमें ५० लाख घर हैं। इस समय हमें इन ५० लाख घरोंमेंसे केवल दो लाख घरोंको तैयार करना है।

यदि कार्यकर्त्ताओंको चर्खेमे उतनाही विश्वास है जितना मुझे है तो वे चरखा चलाना और उसे बनाना सीख लेंगे जिससे वे अच्छे और बुरे चरखेको पहचान सकें। उन्हें उन चरखोंका कभी भी इस्तेमाल नहीं करना चाहिये जो उस परीक्षामें नहीं ठहरते जिसका उल्लेख मैंने किया है। यदि स्वयं

अपने बदनपरसे विदेशी वस्त्र उतार नहीं देंगे तो उनकी अपीलका अधिक प्रभाव नहीं पड सकता। यदि स्वयं हम लोग विदेशी वस्त्रोंका पूर्णतया त्याग करके दूसरोंके सामने उदाहरण उपस्थित नहीं कर देंगे तो हमलोग इस वर्षके भीतर विदेशी वस्त्रोंका पूरी तरह बहिष्कार नहीं कर सकेंगे। यदि हम लोगोंने एक भी भारी काम सफलतापूर्वक कर लिया तो हमें आत्मविश्वास आशा और साहस हो जायगा।

मुझे मालूम हुआ है कि एक समाचार पत्रने यह प्रश्न किया है कि काग्रेस एक करोड़ रुपये लेकर क्या करेगी। इसका स्वाभाविक उत्तर तो यही होगा कि काग्रेसके प्रस्तावको कार्य्यरूपमें परिणत करनेके लिये अथवा यों कहिये कि अहिंसात्मक असहयोग द्वारा स्वराज्य प्राप्त करनेके लिये ही इसकी जरूरत पड़ेगी। चर्खा, राष्ट्रीय सेनाका सङ्गठन तथा कुछ ऐसे वकीलोंकी परवरिश करनेमें, जिन्होंने वकालत छोड दी है किन्तु राष्ट्रीय सेवा कार्य्यमें सम्मिलित नहीं हो सकते हैं और राष्ट्रीय शिक्षणसंस्थाओंकी सहायता आदि कामोंमें आर्थिक साहाय्यकी आवश्यक होगी। इनमें पिछली तीन चीजोंका सम्बन्ध चरखेसे ही है, क्योंकि वर्ष भरमें यदि हम विदेशी मालका पूर्णतया वहिष्कार करना चाहते हैं तो सभी कार्यकर्त्ताओं तथा स्कूल कालेजोंको केवल चर्खे और करघेके प्रचारमें ही संलग्न होना पड़ेगा। तिलक स्वराज्य फण्डसे यह काम किये जायंगे। जो प्रान्त जितनी रकम एकत्र

करेंगे उसमें सैकडे ७५ पर उसी प्रान्तका नियन्त्रण रहेगा। आल इण्डिया कांग्रेस कमेटीके आदेशोंके अतिरिक्त स्वराज्य स्थापित करनेके लिये और सब कामोंमें प्रान्त उस रकमको जिस तरह अच्छा समझे व्यय कर सकता है।

समयकी आवश्यकता

(जून, ८, १९२१)

यदि इस महीनेके अन्ततक हम बेजवाडा कार्यक्रमको पूरी तरहसे सफल नहीं कर देते तो यह हमारे लिये बड़ी हीनताकी बात होगी। इस मासमें भी सात दिन बीत गये। अब हमें एक क्षण भी नहीं खो देना चाहिये। इस समयतक मुश्किलसे २० लाख रुपया हम एकत्रित कर सके हैं। केवल तीन सप्ताहमें अस्सी लाख रुपया बटोर लेना असम्भव प्रतीत होगा। पर यदि हमलोग अनवरत परिश्रमसे चन्दा करनेके काममें लग जाय तो यह असम्भव काम भी सम्भव करके दिखला सकते हैं। यदि २१ प्रान्तोंमेंसे प्रत्येक प्रान्त अपनी योग्यताके अनुसार देनेकी व्यवस्था करेंगे तो एक करोडकी रकम सहजमें ही पूरी हो जायगी। बेजवाडाका कार्यक्रम पूर्णरूपसे व्यवहारिक है। इस तरहका कार्यक्रम देशके सामने पहले पहल रखा गया है। यदि जनता हमलोगोंके साथ है और

करनेवालोंकी भी पर्याप्त संख्या हमें मिल गई तो ३० करोड़ आदमियोंके बीचमें स्वराज्य तथा लोकमान्य तिलककी स्मृतिको अमर बनानेके लिये एक करोड रुपयेका मिल जाना कोई बडी बात नहीं है। यदि महिलायें चाहें तो अपने गहनेसे, शराबी अपने शराब पीनेवाली रकममेंसे एक करोड़की रकम अदा कर सकते हैं। स्वदेशी आन्दोलनसे जिन मिल मालिकोंको अपरिमित लाभ हुआ है वे यदि चाहें तो अस्सी लाख एक दिनमें दे सकते हैं। मारवाडी, भाटिया, पारसी, मेमन तथा बनिया लोग बिना किसी कठिनाईके ८० लाखकी रकम दे सकते हैं। ये सब समृद्ध जातिया हैं और अबतक प्रत्येक सार्वजनिक आन्दोलनकी वे ही सहायता करती आयी हैं। यदि सिन्धी लोग देना चाहें तो वे भी एक ही दिनमें सारी रकम अदा कर सकते हैं। यदि भारतके मजूर अपनी आमदनीका बीसवा हिस्सा भी दे दे तो ८० लाखकी रकम पूरी हो सकती है। मैंने कई मित्रोंसे सलाह ली है। उन्होंने बतलाया है कि निम्नलिखित रकम लोग आसानीसे दे सकते हैं—

(१) वेतनभोगी लोग अपने मासिक वेतनका दसवा हिस्सा दे।

(२) वकील, डाक्टर तथा सौदागर लोग तथा इस तरहके पेशेके अन्य लोग गत मई मासके अन्ततकको वार्षिक आयका दसवां हिस्सा दे दे।

(३) सम्पत्तिशाली लोग अपने सम्पत्तिके मूल्यका २॥) ८० सैकड़ेके हिसाबसे दें।

(४) इसके अतिरिक्त अन्य लोग अपनी हैसियतके अनुसार कमसे कम चार आना दें।

यदि इस गणनाके अनुसार सब कोई दे दें तो कई करोड़ रुपये हो सकते हैं। हमलोगोंको यह बात सदा स्मरण रखना चाहिये कि असहयोगी तथा असहयोगके प्रति सहानुभूति रखनेवाले प्राय सभी वर्गमें हैं। कोई भी वर्गविशेष इतना कट्टर असहयोगी नहीं है कि वह सारी रकमको अदा करनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ले। तिलक स्वराज्य फण्डके लिये चन्दा देना ही हमारी तत्परता तथा योग्यताका पूरा परिचय दे देगा। मुझे पूरी आशा है कि इस मासकी तीस तारीख हमें हर तरहसे योग्य साबित करेगी।

लगातार प्रश्न किये जाते हैं कि यह सौ लाख रुपया क्यों मांगा जा रहा है, इसकी क्या आवश्यकता है। इसका उत्तर बड़ा सहज है। इस रोजगारसे बड़ा लाभ है। इससे केवल व्यक्तिगत लाभ नहीं है बल्कि सार्वजनिक लाभ भी है। इस रुपयेका प्रयोग अधिकतर चरखेके प्रचार तथा राष्ट्रीय शिक्षालयोंकी स्थापनामें लगाये जायगे। समस्त भारतमें ६ करोड़ घर हैं। प्रत्येक घरोंमें हमें चरखेका प्रचार करके उन्हें वास्तविक सर्वतो परिपूर्ण गृह बनाना है। इस व्यवस्थासे चरखेके प्रचारके लिये एक करोड़ रुपया कमसे कम खर्च

है। इसी तरह यदि हम अपनी शिक्षा प्रणालीको सुधारना चाहते हैं तो हमें एक करोड़से भी अधिक रकमकी आवश्यकता पड़ेगी।

दूसरा प्रश्न यह किया जाता है कि इस रकमका ठीक तरहसे प्रयोग किया जाता है, इसका क्या प्रमाण है। पहले तो इस फण्डके कोषाध्यक्ष मियां छोटानी और सेठ जमनालालजी बजाज नितान्त विश्वसनीय आदमी हैं। इसके अलावा कार्यकारिणी समितिके १५ सदस्योंकी अनवरत देख-रेख है। यह समिति देशकी प्रतिनिधि है और प्रति मास एक बार इसकी बैठक अवश्य होती है जिससे कांग्रेसकी कार्यवाहीकी यह पूरी तरहसे देखरेख करती रहे। यह तो तिलक स्वराज्य कोषकी बात हुई। इसके अतिरिक्त चौथाई रकम अर्थात् २५) लाख खर्चका अधिकार तो सीधे अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीके हाथमें है। शेष तीन चौथाई प्रत्येक प्रान्तोंके हाथमें रह जायगी जो स्थानीय अवश्यकताकी पूर्ति करेगी। प्रत्येक प्रान्त अपने अपने आय व्ययकी पर्याप्त देखरेख करता रहेगा। इसके अतिरिक्त अखिल भारतवर्षीय तथा प्रान्तीय व्ययके ब्यौरेकी जांच जांचकर्ताद्वारा कराई जायगी जिसकी नियुक्ति अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीद्वारा होगी।

यही बातें सदस्य बनने तथा चरखेके प्रचारके लिये भी लागू हैं। विधायक तथा रचनात्मक काममें हमारी योग्यताकी ये ही कसौटी है।

प्रत्येक कांग्रेस कमेटी तथा खिलाफत कमेटीसे मेरा
अनुरोध है कि वे इस मासके अन्तिम दस दिनको अलग रख
दें और केवल बेजवाडा कार्यक्रमको पूरा करनेमें उसे लगावें
इस कामके लिये न तो व्याख्यान आदिकी आवश्यकता
और न सभा करनेकी आवश्यकता है। इस कामके लि
घरघर घूमना और लोगोंको समझाना अधिक लाभदायक होगा

निषेधात्मक अंश

(जून ८, १९२१)

इस (बेजवाडा) कार्यक्रमको देशके सामने रखनेके हेतु
इलाहाबादके लीडर पत्रने मुझे जो उपमा दी है उसके मैं कभी भी
योग्य नहीं था। उसने मेरी इस लिये हसी उडाई है कि मैंने
असहयोगके निषेधात्मक अंशको देशके सामने रखनेका साहस
किया है। उस पत्रके एक संवाददाताने तो मुझसे अपीलतक
की है कि मैं कमसे कम उस अंशको उठा लूं। मैं लीडरपत्र
तथा उसके संवाददाताको बतला देना चाहता हूं कि यदि मैं
चाहूं तोभी मेरे लिये यह संभव नहीं है। इस तरहका अधि
कार तो केवल कांग्रेस और खिलाफत कमेटियोंके हाथमें है।
साथ ही मेरा विश्वास भी निषेधात्मक अंशमें अटल है। इस
लिये मैं भी उसके त्यागनेकोपरामर्श नहीं दे सकता, यदि कांग्रेस

और खिलाफत कमेटिया ऐसा करना भी चाहें। उनके लिये—कमसे कम एक सस्था (खिलाफत) के लिये—अहिंसा प्रधान आदर्श न हो पर मेरे पास तो समस्त बीमारियोंकी एकमात्र दवा अहिंसा ही है। इसलिये न तो मैं वकीलोको अदालतोंकी शरण लेनेकी राय दे सकता हू और न छात्रोंको उन स्कूलोंमें कदम रखनेके लिये कह सकता हू जिसे छोडकर वे चले आये हैं और साथ ही जबतक काग्रेस असहयोगके सिद्धान्तको स्वीकार करता है तबतक मैं यह भी नही देख सकता कि सरकारी अदालतोंके वकील या छात्र काग्रेसके पदाधिकारी बनते हैं।

असहयोगके कार्यक्रमके प्रथम चरणका, निषेधात्मक कार्यकी तिथि समाप्त हो गई। इसमें जो सफलता हमें मिल सकी है, प्रत्यक्ष है। मेरी समझमें असहयोगियोंको इस बातसे पूरा सन्तोष है कि इन सस्थाओंकी मर्यादा अब लोगोंकी दृष्टिसे उतर गई। असहयोग आन्दोलनके शत्रु यह बात सोच सोच कर भले ही सन्तोष कर सकते हैं कि किसी गण्यमान्य सख्याने न तो उपाधियोको त्यागा है, न अदालतोंको छोडा है और न सरकारी स्कूलों तथा कालेजोंका बहिष्कार किया है। जिन लोगोंने छोडा है उनका प्रभाव यद्यपि बहुत अधिक पड़ता है तथापि लोग इसे साधारण समझते हैं। पर एक बात स्पष्ट है कि जबतक काग्रेसकी तीनों शर्तें पूरी नहीं हो जातीं सरकारके साथ सहयोग नहीं किया जा सकता।

इस बातको मैं स्वीकार करता हू कि केवल बेजवाडा कार्य-

क्रममें कोई ऐसी बात नहीं है जिससे स्वराज्य स्थापित हो जाय। पर साथही मैं इस बातको भी स्वीकार करता हूं कि वेजवाडा कार्यक्रमको पूरा कर देनेसे हम स्वराज्यके मार्गपर बहुत आगे बढ आयगे। यदि यह कार्यक्रम पूरा हो जायगा तो राष्ट्रमें आत्म-विश्वास, आजायगा और यदि आवश्यकता प्रतीत हुई तो वह दृढताके साथ अन्य कार्यक्रमको भी स्वीकार कर लेगा। एक करोड निर्वाचक—काग्रेसका सदस्य होनेसेही काग्रेसके पदोंपर निर्वाचनका अधिकार प्राप्त हो जाता है—बना लेना ही स्वराज्य-के निर्वाचनका जड है। २० लाख चरखेका प्रचार साफ साफ बता देगा कि भारत अपनी दरिद्रता दूर करके आत्म निर्भर होकर आर्थिक स्वराज्य प्राप्त करनेके लिये तुल गया है। एक करोड रुपयेका चन्दा स्पष्ट जाहिर कर देगा कि राष्ट्र अपने भाग्यके निपटारेके लिये सन्नद्ध है।

दूसरोंके इतिहासोंको पढकर हमने अपनी आखोंपर इतना मोटा परदा डाल लिया है कि हम इस बातपर विश्वास ही नहीं करते कि बिना तीस या पचास वर्षके सग्रामके हम अपना अभीष्ट सिद्ध कर सकेंगे और इसके लिये हमे अनवरत सैनिक शिक्षा तथा अस्त्र शस्त्रकी योजना करनी पडेगी। हम लोग अपना ही इतिहास पढकर यह देखनेकी चेष्टा क्यों नहीं करते कि एकके बाद दूसरे राजे आये और चले गये, राज्यके बाद राज्य लुप्त हो गये पर भारत आज भी उसी तरह दृढ और अटल खडा है मानों उसपर कुछ बीती ही नहीं है। हम लोग अभी हालके युद्धसे

शिक्षा नही ग्रहण करेंगे कि हमें सैनिक योजनाकी उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी आवश्यकता हमें भारतके भविष्यकी दृष्टिकोण बदलनेकी है। हम लोगोंकी यह धारणा दृढ हो गई है कि एक लाख अंग्रेजोंके सामने हमारी अपरिमित संख्या कुछ नही है यद्यपि हम यह बात भी भली भाति जानते हैं कि उस एक लाखकी संख्यामें सभी अंग्रेज कर्मचारी या अधिकारी नहीं हैं। जिस दिन हम लोग ब्रिटिश शासनको महत्व देना छोड देंगे और अपनी गणना केवल तिनके बराबर न करेंगे उसी दिन हम पूर्णतया स्वतन्त्र हो जायंगे। मुझे पक्का विश्वास है कि इस तरहका विचार परिवर्तन एक वर्षमे मजेमे हो सकता है और भारतवर्ष इसके लिये तैयार है। आजतक हम लोगोंने जो प्रतिज्ञायें की हैं उनमेंसे कमकाही पालन किया है। यदि हम लोग काग्रेसके केवल दो वर्षके पीछेका इतिहास उठाकर देखें तो हमें विदित हो जायगा कि हम लोगोंने उन प्रार्थना पत्रोंको भी नहीं भेजा है जिन्हें भेजना हमने काग्रेसमें निश्चय किया था। आजतक हम लोग सरकारका मुंह देखते आये हैं कि यही हम लोगोंके लिये सब कुछ करेगी और हम लोग केवल मात्र निराशाके अन्धकारमें पडे हैं। आज न हमें अपनेमें विश्वास रह गया है न सरकारमें। इस लिये यह वर्तमान आन्दोलन इस लिये चलाया गया है कि निराशाके कुहिरेको दूर करके प्रकाशकी दिव्य ज्योतिका यहा विस्तार किया जाय जिससे हमारी आशा और विश्वास बढे। जिस समय हमे अपने पर

फरोसा हो जायगा उस समय अंग्रेज भी हमारा सम्मान करेंगे। इस अवस्थाके उत्पन्न हो जाने पर ही हम लोगोंसे और सरकारसे सहयोग सम्भव है। इसके पहले तो कुछ होना असम्भव है। यदि हम लोग विचार कर देखें तो वर्तमान सरकारका संगठन हमारी दुर्बलताको घटानेके बजाय बराबर बढ़ाता गया है। इसलिये यह असहयोग आन्दोलन सरकारकी वर्तमान प्रणालीके नाशके लिये जितना प्रयत्न कर रहा है उतना ही प्रयत्न हमारी इस दुर्बलताको दूर करनेके लिये किया गया है। चाहे हम अंग्रेज हो चाहे हिन्दुस्तानी इससे संसर्ग रखनेसे ही हम अपवित्र और खराब हो जाते हैं। यदि एक दल भी इससे पूर्णतया संसर्ग त्याग देगा तो इससे दोनों शुद्ध हो जायंगे। इसलिये मैं नास्तिकको भी यही सलाह दूंगा कि केवल परीक्षाके लिये असहयोग आन्दोलनमे शामिल हो जाइये। मैं यह भी कह देता हूं कि यदि यह कार्यक्रम पूरी तरहसे निबाहा गया तो इसी सालके भीतर भारतमें पूर्ण स्वराज्य स्थापित हो जायगा।



लीका समर्थन कर रहे हैं जो डायर और ओडायरके समान क्रूर व्यवहारकेद्वारा ही हमे दबाकर रखना चाहती है और इसके लिये अपना सैनिक व्यय दिनपर दिन बढ़ाती जा रही है।

पर हमें सब बातोंका प्रत्यक्ष करना चाहिये। धनीवर्ग हर वक्त इस बातसे भयभीत रहते हैं कि कहीं कलक्टर या कमिश्नर साहब हमसे नाराज न हो जाय। कुछ लोग तो ऐसे भी हैं जो हृदयसे विश्वास करते हैं कि यदि असहयोग आन्दोलन सफल हो गया तो हमारी बड़ी हानि होगी। उनका विश्वास है कि असहयोग आन्दोलन सफल हुआ कि चारों तरफ अराजकता, लूट पाट तथा अन्धेर मच जायगी। कुछ कालतक तो यह अवस्था अवश्य रहेगी। इसलिये हमें उचित है कि मनसा, वाचा और कर्मणा पूर्ण अहिंसात्मक रहकर हम उन्हें अपनी ओर जीत लें।

सम्प्रति जो धनी लोग हमारे आन्दोलनके पक्षपाती हैं उन्हें साधारणसे अधिक त्याग करना पड़ेगा क्योंकि इसी तरह हमारी कमीकी पूर्ति हो सकती है। बम्बईके लोगोंने इसके लिये शुभ आरम्भ भी कर दिया है। धनी कार्यकर्ता भी दिन रात कड़ा परिश्रम कर रहे हैं और अच्छी रकम वसूल कर रहे हैं। उन्हें कठिनाइया पड़ रही हैं पर वे अदम्य साहसके साथ अपने मार्गपर आगे बढ़ते जा रहे हैं।

हमें सुस्त होकर नहीं बैठना चाहिये। हमें किसीकी

उत्तेजनाकी आवश्यकता नहीं चाहिये। बम्बईके धनिकोंको अपनी थैलियां खोल देनी चाहिये। उन्हें किसी अगुआकी प्रतीक्षा क्यों करनी चाहिये।

जो लोग लाखों या हजारों रुपया नहीं दे सकते उन्हें क्या कहा जाय। थोडा बहुत देकर भी वे इस बोझको हलका कर सकते हैं। उन्हें इस बातकी प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिये कि कोई मांगने आवे तो दें। प्रत्येक दल, प्रत्येक समाजको अपना चन्दा बटोरकर कांग्रेस कमेटीके दफ्तरोंमें स्वयं पहुंचा देना चाहिये।

यह शर्मकी बात है कि सब प्रान्तोंका टोटल ४० लाख भी नहीं हो सकता। अब भी समय है। इस महान् सप्ताहमें प्रत्येक प्रांतके निःस्वार्थी और उत्साही काम करनेवाले अपने समयका पूर्ण उपयोग करके चन्देकी रकम पूरी कर डालें

यह देखकर कि अनेक धनी रुपया देनेसे पीछे हट रहे हैं, यह देखकर कि सर्वसाधारण से चन्दा लेनेका कोई प्रयत्न नहीं किया गया है, तो इस रकमको पूरा करनेके लिये किसीको अवश्य आगे बढना पडेगा। एक महापुरुषने अपनी २०००० रु०की सम्पत्ति तिलक स्वराज्य फण्डके लिये देकर प्राण छोडा है। यही उनकी कुल कमाई थी, मुझे पूरी आशा है कि इस तरहके उदाहरणोंसे लोग उत्साह ग्रहण करेंगे। स्वतन्त्रताके लिये जो कुछ दान दिया जाय वह बेकार नहीं जाता। यदि हम लोग इस वर्षके भीतर ही स्वराज्य स्थापित करना

पूरी आशा थी कि बम्बईके अतिरिक्त अन्य जिलोंमें ४० लाख अवश्य मिल जायँगे। इस तरह १४ दिन तक प्रायः ५ लाखसे भी अधिककी रकम सारे भारतमें प्रतिदिन मिलती रही। इन १४ दिनोंमें अन्य प्रान्तोंने ४० लाख दिया तो बम्बईने अकेला ३८ लाख दिया। यह रकम कम नहीं है। पर जनताका यह विश्वास हम किस तरह कायम रखेंगे। हमें हिसाब साफ साफ रखना होगा जिससे एक बच्चा भी हिसाब देख और समझ सके। असहयोग आन्दोलनके अतिरिक्त किसी काममें इस रुपयेका प्रयोग नहीं होना चाहिये। इसका प्रयोग खासकर निम्नलिखित कामोंमें होना चाहिये —

(१) चरखे तथा खद्दरका प्रचार (२) छुआ छूतके रोगको दूरकर गिरी जातियोंको उठाना (३) राष्ट्रीय शिक्षालयोंका चलाना और उनमें चरखा और करघा शिक्षाका अंग रखना (४) शराबखोरीके विरुद्ध आन्दोलन चलाना।

इन सब बातोंके लिये राष्ट्रीय स्वयंसेवकोंकी सेवाकी नितान्त आवश्यकता रहेगी और इन्हीं स्वयंसेवकों द्वारा ही हमलोग इन कामोंको चरितार्थ कर सकेंगे। यदि हम लोग उपरोक्त बातोंमें सफलता प्राप्त कर सके तो हम स्वराज्यकी स्थापना अति सहजमें कर सकते हैं।

मैं भिन्न भिन्न कमेटियोंको चेतावनी दे देना चाहता हूं कि वे इन रकमोंके केवल सूदपर नहीं निर्भर करें। सूदपर रुपया लगाना और केवल सूद वसूल करके उसे व्यय करना, यही

साबित करेगा कि न तो हमें अपनेमें विश्वास है न राष्ट्रमें। राष्ट्रका विश्वास ही हमारी पूजी है और समय समयपर हमारी मांगको पूरी करना ही सूद अदा करनेके बराबर है। यदि हमलोग अपनेको राष्ट्रका सच्चा प्रतिनिधि मानते हैं तो राष्ट्र समय समयपर उन संस्थाओंको आर्थिक सहायता अवश्य दिया करेगा जो उसके लाभके लिये स्थापित किये गये हैं और चलाये जाते हैं। यदि हमलोग केवल सूदके भरोसे अपना काम चलानेकी व्यवस्था करते हैं तो हमलोग गैरजिम्मेदार हैं। भारतके भिन्न भिन्न भागोंमें अनेक धर्म संस्थायें हैं, वे धर्मके नामपर अतुल सम्पत्तिशाली हो गई हैं पर उन्होंने उन रुपयोंका किस तरह प्रयोग किया है। उनके द्वारा सिवा अनाचार बढनेके और कुछ नहीं हुआ है। इसलिये यदि हम उनसे कुछ भी शिक्षा लेना चाहते हैं तो हमें उचित है कि आगामी ६ मासके भीतर ही भीतर हमें कुल रकम खर्च कर देना चाहिये। जिस समय बेजवाडामें अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीके सामने मैंने यह एक करोड़ रुपयेका कार्यक्रम रखा उस समय मुझे यह पूर्ण विश्वास था कि कांग्रेसके कार्यकर्ता इतने ईमानदार और विश्वासी हैं कि वे कांग्रेसके फण्डका पूर्ण उपयोग करेंगे और हमलोगोंकी आवश्यकता ऐसी थी कि यह रकम हमलोग ६ मासके भीतर ही खर्च कर देंगे। जबतक हमलोग चरखेके प्रचार, सूत तथा खादीमें काफी रुपया नहीं खर्च करते विदेशी वस्त्रोंका पूर्णतया बहिष्कार नहीं हो

सकता। हमें स्वदेशी कार्यक्रमको तबतक चलाना होगा जबतक करघे और चरखे व्यवसायिक रूप नहीं धारण कर लेते और घरघरमें सदाके लिये नही चलने लगते। इतने भारी देशके लिये ६ मासमें एक करोड़की रकम बहुत अधिक नहीं है। मेरा अनुरोध है कि प्रत्येक प्रान्त इस मासके अन्ततक अपना बजट तैयार कर ले जिससे न तो वह अधिक खर्च कर सके न कम। मैंने एक मासका समय इसलिये रखा है कि जो रकम वादामें दी गई हैं उनको वसूल करना तथा बजट बनाना एक माससे कममें नही हो सकता। साथ ही साथ हमें अखिल भारत वर्षीय कांग्रेस कमेटीकी प्रतीक्षा करनी चाहिये कि वह हमें कौनसा मार्ग अनुसरण करनेके लिये बतलाती है। यदि हमलोगोंने कार्यक्रमको ठीक तरहसे पूरा किया तो दिसम्बरके पहले हम लोग स्वराज्य अवश्य स्थापित कर देंगे।



सप्तम खण्ड

सविनय कानून भंग

सविनय अवज्ञा

(अगस्त ४, १९२१)

अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीकी बम्बईकी बैठक (जुलाई २८, १९२१) में जितने सदस्य उपस्थित थे सभी सविनय अवज्ञाके लिये उतावले हो रहे थे। सबकी जबानसे यही एक शब्द निकलता था, "सविनय अवज्ञा।" इसका अनुभव तो किसीको था नहीं पर सभी यह समझ बैठे थे कि वर्तमान दुराचार और बुराईको रोकनेके लिये यदि हमलोगोंके हाथमें कोई शस्त्र है तो वह केवल मात्र सविनय अवज्ञा है। उनका अनुमान गलत नहीं था। यदि हमलोग उसके योग्य वायुमण्डलको तैयार कर लें तो उसका फल यही हो सकता है। व्यक्ति विशेषके लिये तो वायुमण्डल सदा तैयार है। वैयक्तिक रूपसे वह जब जो चाहे सविनय अवज्ञा कर सकता है। पर यदि वैयक्तिक सविनय अवज्ञासे भी खून खराबीकी सम्भावना हो तो उसे भी रोक देना चाहिये। सत्याग्रह आन्दोलनके दिनोंमें मुझे इसका पता चला। पर कभी कभी ऐसा अवसर आ पड़ता है कि परिणामका ख्याल और अनुमान न करके सविनय अवज्ञा करनी ही पड़ती है। मुझे वह समय

नजदीक आता दिखाई दे रहा है जब हम राजके बने प्रत्येक नियमकी अवहेलना करेंगे चाहे उससे खून खराबीकी ही आशंका क्यों न हो। यदि आवश्यकता आ पडे और उस समय तैयार न होनेमें धर्म या विश्वासपर आघात पडता दिखाई दे तो उस समय सविनय अवज्ञा चरम धर्म हो जाता है और उसके स्वीकार करनेके सिवा दूसरा कोई मार्ग ही नहीं रह जाता।

पर वैयक्तिक सविनय अवज्ञा और सामूहिक सविनय अवज्ञामे भेद है। इसका प्रयोग तभी किया जा सकता है जब वायुमण्डल पूरी तरहसे शान्त हो। पर यह शान्ति शक्ति द्वारा विस्पष्ट हो नकि दुर्बलता और लाचारी द्वारा। वयक्तिक सविनय अवज्ञा बहुधा नि स्वार्थ होती है पर सामूहिक सविनय अवज्ञा सदा स्वार्थमय होती है, क्योंकि उसमें भाग लेनेवाले प्राय अपने लाभकी बात सोचते हैं। जैसे दक्षिण अफ्रिकामे श्रीयुत कलेनबैच और श्रीयुत पोलाककी सविनय अवज्ञा वैयक्तिक थी, क्योंकि उसमें उनका निजी लाभ कुछ भी नहीं था। पर अन्य हजारों भारतीयोंने सविनय अवज्ञा केवल इसीलिये की थी कि उसमें उन्होंने अपना निजी लाभ देखा था। उदाहरणार्थ उनका सत्याग्रह यदि सफल हुआ तो उन्हें उस अपमानजनक करसे छुटकारा मिला जो कुली प्रथा समाप्त होनेके बाद स्वतन्त्र रूपसे अफ्रिकामें रहनेके लिये उन्हें प्रति व्यक्ति तीन पाउण्डके हिसाबसे

देना पडता था यदि सामूहिक सविनय अवज्ञा करनेवाले सिद्धान्तको भलीमाति समझ लें तो उससे मजेमें काम चल सकता है।

दक्षिण अफ्रिकामें २३ हजार सत्याग्रहियोंको लेकर जिस समय मैं "निषेधित भूमि" में प्रवेश कर रहा था मैं गिरफ्तार कर लिया गया। जहापर मैं गिरफ्तार किया गया वह देश अधिवासित नहीं था। उस दलमें अनेक पठान और हट्टे कट्टे लोग थे। जो लोग गिरफ्तार करने आये थे उन्हें वह दल सहजमें ही टुकडे टुकडे काट कर फेंक सकता था। पर ऐसा करना केवल कायरता पूर्ण ही नहीं होता बल्कि हमलोग उस प्रतिज्ञासे भ्रष्ट होकर गिर जाते जिसके लिये शपथ उठाई थी। इसके अतिरिक्त स्वतन्त्रताके उस संग्रामका अन्त हुआ होता और प्रत्येक भारतवासी पकड पकडकर जबर्दस्ती निर्वासित कर दिया गया होता। पर वे सत्याग्रही साधारण जीव नहीं थे। वे पूर्णतया तैयार थे और दृढ थे, हाथसे बली थे। मैं गिरफ्तार कर लिया गया पर उनपर उसका कोई असर नही पडा, वे पीछे नहीं हटे। वे आगे बढते ही गये और जबतक प्रत्येक गिरफ्तार कर कैदमें नहीं भेज दिये गये उनकी गति नहीं रुकी। मेरी समझमें शान्ति तथा अहिंसाका यह ज्वलन्त उदाहरण इतिहासमें अपना सानी नहीं रखता। जबतक इस तरहका संयम नहीं आ जाय सामूहिक सविनय अवज्ञा कभी भी सफल नहीं हो सकती।

प्रत्येक व्यक्तिकी गिरफ्तारीपर शोरगुल या जलसा करके सरकारको डराने धमकानेका ख्याल हमें छोड़ देना चाहिये। इसके विपरीत हमें इन गिरफ्तारियोंको असहयोगकी साधारण अवस्था समझनी चाहिये। जिस तरहसे युद्धक्षेत्रका सैनिक जान बूझकर मृत्युको आवाहन करता है उसी तरह हम असहयोगियोंको भी सविनय अवज्ञा आरम्भ करके जेलका आवाहन ही करना चाहिये। हमलोग इस बातकी यदि आशा करते हैं कि सरकारका विरोधकर जेल जानेका काम करके भी यदि हम जेल जानेसे बच जायंगे तो हमारी भूल है सविनय अवज्ञाका अभिप्राय है कि हम एक साधारण पुलिसके भी हवाले अपनेको कर देंगे। हम लोगोंको हजारों और लाखोंकी संख्यामें उसी तरह जेलोंमें जाना चाहिये जिस तरह चौपायें बूचड़खानोंमे जाते हैं। हमारी विजय इसीमें है कि हम बिना किसी अपराधके बार बार जेल जाय। हम जितने ही निर्दोष रहेंगे, हमारी ताकत उतनी ही बढ़ेगी और हमे विजय भी उतनी ही जल्दी मिलेगी।

यह सरकार डरपोक है और इसीलिये हम भी जेलसे डरते हैं। और जेलके नामसे हमारे इस डर भयका सरकार पूर्ण लाभ उठाती है। यदि हमारी बहिनें और मातायें जेलका भय त्याग दें और प्रिय जनोंकी जेल यात्रासे घबराय न जाय तो जेलको भी हमलोग भोजनालय ही समझ लेंगे।

हमलोग बहुत दिनोंतक मानसिक क्रियासे राजाके कानू-

नोंकी अवज्ञा करते आये हैं और अनेक बार चुपचाप इसको तोड़ा है। इस समय एकाएक हमें सविनय अवज्ञाके लिये तैयार होना है। यदि अवज्ञा सविनय होना है तो वह खुली और अहिंसात्मक होगी।

पूर्ण सविनय अवज्ञा शान्तिमय क्रान्ति है। इसमें राजाके प्रत्येक नियमकी अवज्ञा की जाती है। सशस्त्र क्रान्तिसे इसका रूप कहीं भीषण होता है क्योंकि यदि सविनय अवज्ञा करनेवाले अन्तिम यातना तकके लिये तैयार हैं तो इसका दबाया जाना कठिन है, बल्कि यह नहीं दबाया जा सकता। इसका आधार निर्दोष यातना सहना है। चुपचाप जेल जाकर असहयोगी शान्तमय वायुमण्डल तैयार करना है। प्रतिरोध न करनेपर अत्याचारी अत्याचार करते करते थक जाता है। यदि अभियुक्तने प्रतिरोध नहीं किया तो अत्याचारीका सारा मज़ा किरकिरा हो जाता है। सामूहिक सविनय अवज्ञा आरम्भ करनेके पहले जनताके प्रतिनिधियोंको भलीभांति समझ लेना चाहिये कि सविनय अवज्ञाकी सफलता किस बातसे हो सकती है। सबसे उत्तम उपचारमें सबसे अधिक भय रहता है और इसके प्रयोगके लिये सबसे अधिक सतर्क होकर तैयारी करनेकी आवश्यकता रहती है। मेरी निश्चित धारणा है कि यदि हमलोग विदेशी वस्त्रोंका पूर्णतया बहिष्कार कर दें तो ऐसी अवस्था उत्पन्न कर सकते हैं जिसमें सामूहिक सविनय अवज्ञा जारी की जा सकती है जिसका

मुकाबिला कोई भी सरकार नहीं कर सकती। इसलिये जो लोग सविनय अवज्ञा जारी करनेके लिये उतावले और अधीर हो रहे हैं उनका ध्यान मैं स्वदेशको ओर आकृष्ट करना चाहता हूं।

अली भाइयोंपर मुकदमा

(सितम्बर ८, १९२१)

अली भाइयोंपर मुकदमा चलानेकी अफवाह फिरसे उड़ी है। मगर मुझे उम्मीद है कि यह खबर गलत होगी। अगर सरकार दर असल यह चाहती हो कि इसके और रिआयाके बीचका यह मामला गुण दोपके अनुसार तय हो और लोकमत को परिपक्व बनाते हुए उसका निर्णय हो तो उसे अली भाइयोंको खुला ही रहने देना चाहिये। परन्तु अगर उनपर मामला चलाया ही गया और उन्हें कैदकी सजा हो गई तोभी मुझे आशा है, कि लोग अपनी शान्तिको न डिगने देंगे। उसमे अपना गौरव समझेंगे और अपनी बातपर दृढताके साथ डटे रहेंगे। लेकिन इससे एक बात जरूर होगी। उनके कैद हो जानेसे शान्तिकी रक्षाका काम पहलेसे भी ज्यादा मुश्किल हो जायगा। इन दो देशभक्त भाइयोंने मुसलमानोंकी तबीयतोंको जितना कामयाबीके साथ भडकनेसे रोका है उतना और

किसीने नहीं। क्या मौका और क्या बेमौका, क्या खानगीमें और क्या आमलोगोंमें, हर जगह और हर तरह उन्होंने "अहिंसा" का उपदेश किया है और खुद भी उसके पाबन्द रहे हैं। यहांतक कि अपने उन भाषणोंमें भी, जिनके कुछ हिस्सेके मानी हिंसाकी तरफ लगा लेनेका अन्देशा हो सकता है, मैं कह सकता हूं कि उनका मतलब हिंसासे हरगिज नहीं था। ऐसी दशामें अली भाइयोंपर मुकदमा चलानेके मानी यही होंगे कि सरकार हिन्दुस्तानमें दिन पदिन बढ़नेवाले खिलाफत आन्दोलनका गला घोट देना चाहती है। यह तो सरासर सारे मुसलमानोंको, नहीं सारे हिन्दुस्तानको, दूबदू ललकारना है, क्योंकि खिलाफतका सवाल अब सारे हिन्दुस्तानका मसला हो गया है। अब यह महज मुसलमानोंकी ही शिकायतका बाइस नहीं रहा।

लेकिन यह लिखनेमें मेरा रुख सरकारकी बनिस्पत लोगोंको सचेत कर देनेकी तरफ जियादा है। अगर लोगोंने अली भाइयोंके सन्देशका मर्म समझ लिया हो तो उन्हें अपने मजहबके लिए, और अपने मुल्कके लिए, गहरीसे गहरी सनसनीकी हालतमें भी ज्योंका त्यों मजबूत बने रहना चाहिये। उन्हें अपने देश और धर्मके लिये हद दरजेतक कष्ट सहन करना चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानोंका हित एक दूसरेमें मिला हुआ है। इसलिए उन्हें एक साथ तैरना या एक ही स डूबना होगा। उन्हें फौलादकी तरह पक्के रहना

और शेरकी तरह बहादुरी दिखानी होगी और चाहे वे फांसीपर क्यों न चढ़ा दिये जायं, जिस बातको वे सत्य समझते हैं उसे कहे बिना कभी न रहेंगे। ऐसे वक्तमें लोग अली भाइयोंकी जो बडीसे बडी इज्जत कर सकते हैं वह यह है कि असहयोगके कार्यक्रमके एक अक्षरका अनुसरण करें और इसी सालमें स्वराज्य प्राप्त कर लें। उनके जेल जानेपर गुस्सा दिखाना सिवा पागलपनके और कुछ न होगा। हमने खुले खुले हिम्मतके साथ यह इरादा जाहिर किया है और इस बातकी तैयारी की है कि इस मौजूदा तर्जे अमलको नेस्तनाबूद कर दें और उसके हाकिमों और अफसरोंको चुनौती दी है कि तुम हमारे लिए बुरसे बुरा जो कर सकते हो, करो। ऐसी हालतमें अगर वे हमारी ललकारको मानकर संजीदगीके साथ हमसे पेश आवें तो न हमें ताज्जुब करनेकी, न गुस्सा करनेकी जरूरत है, क्योंकि किसी न किसी दिन या तो उन्हें हमारी बातपर अडकर हमारी निमन्त्रित परीक्षाकी आंचमें हमें तपाना होगा या हमारी मर्जीके मुताबिक उन्हें सुधार करना होगा। अगर, इस तरह हम अपनी बनाई तराजूपर तौले गये और हलके साबित हुए तो ऐसा होना इस बाजीके नियमोंको बुरी तरह कुचलना होगा। इसलिये जब कभी कोई गिरफ्तार हो तो उस हालतमें असहयोगियोंके पास सिर्फ एक ही इलाज है और वह है असहयोगके कार्यक्रमको पूरा करनेमें दूने उत्साह और दूनी सरगर्मीके साथ अपनी ताकतोंको

लगाना, अर्थात् वे विलायती कपडेका बहिष्कार कर दें और अपनी जरूरत भरका कपडा अपने ही घरोंमें तैयार करें। हां, हडतालें तो हरगिज न की जायं।

—:o:—

कहीं गफलत न हो

(सितम्बर २२, १९२१)

मौलाना महम्मद अलीकी गिरफ्तारीकी जो चर्चा मुल्क-भरमे फैल रही थी, वह अखिर सच हो गई! मदरास जाते हुए ज्यों ही हमलोग रास्तेमें वाल्टेयर स्टेशनपर पहुचे, मौलाना साहब पकड लिये गये! अभी मैंने कुछ तार लिखकर खतम ही किये हैं और ट्रेनमे बैठे हुए इन सतरोंको लिख रहा हु'। गाडी वाल्टेयरमें २५ मिनिटसे भी ज्यादा ठहरती है। मैं और मौलाना महम्मद अली एक सभामें व्याख्यान देनेके लिये बाहर जा रहे थे। हम स्टेशनके दरवाजेसे कुछ ही कदम आगे बढे होंगे कि मैंने मौलाना साहबकी पुकार सुनी और देखा तो वे कुछ पढ रहे थे। मैं उनसे कुछ कदम आगे था। जो लोग उन्हे पकडने आये थे उनमें दो गोरे और आधे दर्जन हिन्दुस्तानी पुलिसके आदमी थे। इस टोलीके अफसरने मौलाना साहबको नोटिस पूरा पढने भी नहीं दिया और उनका हाथ पकडकर अपने साथ ले गया। मौलाना साहबने

मुसकराते हुए हाथ ऊंचा उठाकर सलाम किया और विदा हुए। मैं इसका मतलब समझ गया। अब झण्डेको फहराते हुए मुझे ही आगे बढना है। परमात्मा मुझे मदद दे कि मैं अपने एक साथीके—वह साथी जिसके साथ काम करनेका सौभाग्य मुझे अबतक मिला—इस सन्देशको पालन करनेके लायक साबित होऊं।

फिर मैं सभामें गया। मैंने लोगोंसे कहा कि शान्ति धारण करो और कांग्रेसके कार्यक्रमको पूरा करो। मैं वापिस लौटा और उस जगहपर गया जहां मौलाना साहब हवालातमें थे। जिस अफसरकी सिपुर्दगीमें वे थे उससे मैंने पूछा कि क्या मैं मौलाना साहबसे मिल सकता हू ? उसने कहा कि मुझे तो सिर्फ उनकी बीबी और सेक्रेटरीको ही उनसे मिलने देनेका हुक्म है। मौलाना साहबकी बेगम और उनके सेक्रेटरी श्रीयुत हयातको हवालातके कमरेसे लौटते हुए मैंने देखा।

आन्ध्र देशमें वाल्टेयर सुन्दरताका घर है। यहांकी आबो हवा तन्दुरुस्तीके लिये बहुत मुफीद है। ऐसे बढिया मुकामपर मौलाना साहबको गिरफ्तार होते हुए देखकर मुझे बडा रश्क हुआ। वे वाल्टेयरमें कुछ दिन ठहरकर आराम करना और अपने डेपुटेशनका हिसाब तैयार करना चाहते थे। परन्तु हमें बङ्गालमें अन्दाजसे ज्यादा दिन रहना पडा और इधर मोपलाओंमें उत्पात खडा हो गया। इससे उनकी यह इच्छा दिलकी दिलमें ही रह गई।

परन्तु परमात्माकी इच्छा कुछ और ही थी। वह मौलाना साहबको जबरदस्ती आराम देना चाहता था। और मैं जानता हूं कि अब हवालातमें बडे सुखसे रहेंगे।

मौलाना साहबकी गिरफ्तारीके लिये जो वारण्ट निकला उसकी नकल नीचे दी जाती है।

"श्रीयुत एफ० ई० कनिंघम साहब"
डिप्टी इन्सपेक्टर जनरल पुलिस, सी० आई० डी०
और रेलवे, मद्रास

चूंकि महम्मद अलीको हाजिर अदालत होकर यह बतलानेकी जरूरत है कि वह कानून फौजदारीकी दफा १०७ और १०८ के मुताबिक एक सालतक अमनो अमा कायम रखने और अपना चाल चलन दुरुस्त रखनेके लिये क्यों न जमानत दाखिल करे, हाला तुमको इत्तिला दी जाती है कि तुम सदर हू महम्मदअलीको गिरफ्तार करके मेरे इजलासमें पेश करो। इसमें कहीं गफलत न हो।

तारीख १४ सितम्बर १९२१

(सही) जे० आर० यूजिन्स,
जिला मजिस्ट्रेट,
विजगापट्टम।

क्या यह दिल्लगी नहीं है कि जो शख्स नासिर्फ खुद ही अमनो अमा कायम रखता रहा, बल्कि दूसरोंमें भी शान्तिका प्रचार, और सोभी बडी कामयाबीके साथ करनेकी जीजानसे

कोशिश करता रहा, और जो कि नेकचलनीका एक सरपरस्त रहा है, उसको एक ऐसी ताकत जोकि गुस्ताख है, "अमनो अमा कायम रखने और नेक चाल चलन रखनेको जमानत देनेके लिये" तलब करे? सच है, जो सरकार कि खुद वद है उसके यहा भलेमानसोके लिये सिवा उसके कैदखानोंके दूसरी जगह और कहा हो सकती है?

अब यहा जो छोटे भाई पर वीती है वही वडे भाई पर भी वीते विना नहीं रह सकती। वे दोनों अपनेको 'स्वामी' जडे भाई कहते हैं। वे जुदा तो हो ही नहीं सकते। और अगर एक भाईने वदचलनी की है तो दूसरेने भी जरूर ही की है। मुझे उम्मेद है कि जवतक यह लेख छपकर'शाया होगा तवतक आप लोग मौलाना शौकतअलीके भी पकड़े जानेकी खबर सुन चुके होंगे।

सरकारने मौलाना महम्मद अलीको क्या कैद किया, खिलाफतको कैद कर लिया है क्योंकि ये दोनों भाई खिलाफतके सच्चेसे सच्चे प्रतिनिधि हैं। जवतक कि खलीफा दर हकीकत एक कैदी वना हुआ है और जवतक कि उनके तीर्थस्थान करीव करीव सव तरहसे गैर मुसल्मान कौमके ही तावेमें हैं, तवतक वे दम नहीं ले सकते। इन दोनों भाइयो मेंसे किसी एकको या दोनोंको कैद करनेके माने यही है कि खिलाफतके दावेको साफ साफ नामजूर करना।

लेकिन सरकार देखेगी कि वह अली भाइयोंके तेज और

जोशको कैद करनेमें कामयाब नहीं हुई है, और देखेगी कि उनको कैद कर देनेसे खिलाफतका संग्राम उससे उग्र रूप धारण कर रहा है। इससे हर एक सच्चे हिन्दू और मुसलमान भाईके दिलमें दोनों भाइयोंका तेज और जोश जाग्रत और अमर हो जायगा और दोनों कौमें मिलकर खिलाफतकी लपटोंको वैसे ही धधकाती रहेंगी।

लेकिन वे दोनों भाई आज खिलाफतके अलावा कुछ और बातके लिये भी लड रहे हैं। वे स्वराज्य चाहते हैं और खिलाफतके जुल्मोंको मिटानेके साथ ही, उतना ही जोरके साथ पञ्जाबके जुल्मोंको भी मिटा देना चाहते हैं। उनकी शराफत ऐसी है कि वह अकेले खिलाफतके निपटारेसे उन्हें ठण्ढा नहीं पडने देगी। उनका ईमान ऐसा नहीं है कि वह खिलाफतके लिए, दूसरी सब बातोंको छोडकर, सरकारसे समझौता करने पर राजी होने दे। वे तो इन तीनों बातोंको एक ही समझते हैं, जुदा जुदा नहीं। और इसके सिवा दूसरी बात हो भी नहीं सकती, क्योंकि इनमेंसे किसी एक बातको देना या पाना दूसरी दूसरी बातको देना या पाना है।

मैं तो मौलाना साहबके कैद होनेको एक शुभ शकुन समझता हूं। अबतक तो सरकार असहयोगके मामूली अनुयायियोंकी पकड धकड करके खेल कर रही थी। मगर जो सरकार लोकमतके सामने सिर झुकाना नहीं चाहती उसके लिए देशके लोक प्रिय नेताओंको गिरफ्तार करने और

लोगोके जोश या तेजको कुचलनेके सिवा दूसरा रास्ता ही नही है। और इस हिन्दुस्तानकी सरकारके घरकी तो यह रीत ही चल आई है कि पहले तो अगुओंको पकड़-धकडकर उन्हें जेलमे बाध दे और उस समय उनकी मागे पूरी करे और लोकमतका आदर करे, जब कि उसके इस काममें किसी तरहकी शोभा नहीं रह जाती।

मौलाना महम्मद अलीकी इस गिरफ्तारीको तो स्वराज्यकी स्थापनाका "श्रीगणेश" समझना चाहिए। बस, इन जेलोंके दरवाजोंके ताले तो अब हमारी स्वराज्य, पार्लिमेण्ट ही खोलेगी और वही मौलाना साहबको तथा उनके दूसरे साथी कैदियोको उचित आदरके साथ छुडाकर लावेगी, क्योंकि यह जग जो कि छिड चुका है, अब खतम हुए विना बीचमे रुक ही नही सकता।

इस मौकेपर हम अली भाइयोंकी और उनके साथी कैदी भाइयोंकी उम्दासे उम्दा जो इज्जत कर सकते हैं वह इस तरह कि अब हम अपने तमाम शकोशुबहको, डरको और आलस्यको अपने दिलसे बिलकुल हटा दें। अबतक इस बातपर कि अपनी मञ्जिले मकसूदपर पहुचनेके काममें अहिसा और स्वदेशीकी महिमा कितनी है और इसी सालमें उसके कार्य क्रमको पूरा करनेकी काबिलियत हममें कितनी है, हम शक करते आये हैं। अबतक हम अपने दिलोंमें यह झिझक रखते आये हैं कि आवश्यक कुरबानीका माद्दा हममें है या नहीं,

और इसलिए इस कार्यक्रमको पूरा करनेमें बडी सुस्ती दिखा रहे हैं। अब, आइए, हम इन भाइयोंके साहसका, श्रद्धाका, निडरताका, सचाईका और जाग्रत तथा अविराम कार्य्य-तत्परताका अनुसरण करे और निश्चय ही, हमे स्वराज्य मिले बिना न रहेगा।

उस जिला मैजिस्ट्रेटके हुक्मनामेके आखिरी लफ्ज थे, "इसमें गफलत न होने पावे" और वह अफसर दर असल "चूका भी नहीं।" कितने ही अंगरेजोंने अपनी जानतक देकर भी अपने सौंपे कामोंको पूरा करनेका, उसमें गफलत न करनेका प्रयत्न किया है और इस बातका यश भी उन्हें दिया जाना चाहिए। अब महासभा और खिलाफतका भी यही फरमान है कि "देखना गफलत न होने पावे।" अब क्या हम इन शेष दो महीनोंमें इतना काम न करेंगे, जिससे महासभाको यह कह सकें कि "हा, हम चूके नही हैं?"

फरमान तो यही है—

(१) गहरी सनसनीकी हालतमें भी अहिंसाका पालन करो।

(२ चाहे कितना ही जोर हमपर क्यों न पडे हिन्दू-मुसलमानकी एकता कायम रखो।

(३) तमाम विलायती कपडोंका परनना एकदम छोड दो, फिर चाहे हमें मोटेसे मोटे कपडेपर क्यों न अपना काम चलाना पडे और तमाम फुरसतके वक्तमें चरखा कातो और कपडा बुनो।

जब हम इन तीनों शर्तोंको पूरा कर सकेंगे तभी हम बाअदब कानूनको तोडनेके लिये तैयार होंगे, उसके पहले नहीं। और यह बाअदब कानूनका तोडना वह चीज है जिसके बदौलत दुनियाकी बडीसे बडी ताकतवर सरकारको लोगोंका हुक्म माननेपर मजबूर होना पडेगा।

विश्वासघात

(सितम्बर २२, १६२१)

बडे लाट साहबकेद्वारा मौलाना महम्मद अलीकी गिरफ्तारीको अनुमति मिलनेके बारेमें मेरे मित्र लोग मुझसे पूछ रहे हैं कि क्या ऐसा करके बडे लाट साहबने विश्वासघात नही किया ? परन्तु मैं लार्ड रेडिङ्गपर विश्वासघातका इल्जाम नही लगा सकता, क्योंकि मुकदमा न चलानेका उनका आश्वासन तो हमें सेंतमेंत ही मिला था। पर हां, उनको यह जरूर मुनासिब है कि उनके शिमलावाले भाषणके बाद जो नयी परिस्थिति उत्पन्न हुई है उसे साफ साफ समझावें और बतावें कि मौलाना महम्मद अलीकी गिरफ्तारी किस वजहसे वाजिब है। बडे लाट साहबने यह उम्मीद तो जरूर ही नहीं की थी कि मौलाना साहब अपने मुंहपर मुहर लगा दें और अपने भाषणोंको नरम कर दिया करेंगे। वह "माफी" तो बहादुर बेखौफ

आदमियोंका काम था। और अगर किसी जोश सनसनीके मौकेपर उनके मुंहसे कोई ऐसी बात निकल गयी हो कि जिसके मानी दङ्गा फसादके लिये उभाडनेके हो सकते हैं, तो इसके लिये उन्होंने अफसोस जाहिर किया था। मैं अच्छी तरह जानता हूं कि अली भाई बहादुर हैं, ईमानके पक्के हैं और वे खुदाके सिवा किसीका डर नहीं रखते। उक्त मशहूर माफी की। घटनाके बादसे मौलाना महम्मद अली मेरे साथ ही साथ सफर करते रहे हैं। उन्होंने कितने ही व्याख्यान भी दिये परन्तु जहा एक ओर उन्होंने खूब जोरदार भाषण किये वहां, दूसरी ओर उन्होंने अहिंसाके उपदेश देनेका भी पूरा ध्यान रखा है और खानगी तौरपर तो अहिंसाके पक्षमें जो काम उन्होंने किया है वह तो और भी भारी और पक्का है। दोनों भाई खूब अहिंसाका प्रचार करते रहे हैं। और जो कुछ उन्होंने कहा वैसा ही खुद किया भी है। मद्रासकी सरकार यह जानती थी कि हम शान्ति स्थापित करनेके ही लिये निकले हैं। यह जानती थी कि मौलाना महम्मद अली हिन्दू मुसलमानकी एकताका उपदेश किये बिना माननेके नहीं। उनके पैगाम मोपला लोगोंतक पहुंचते और उनके मजहबी पागलपनको कुछ रुकावट मिलती। अगर उस अशान्त प्रदेशमें जानेकी इजाजत उन्हें दी जाती तो वे एक कतरा भी खून गिराये बिना शान्ति स्थापित कर करा देते। लेकिन इससे सरकारकी इज्जत मिट्टी में मिल जाती और असहयोगकी फतह जाहिर होती।

भारतके मुसलमानोंके नाम

(सितम्बर २६, १९२१)

प्रिय देशभाइयो !

मौलाना शौकत अली और मौलाना मुहम्मद अलीकी गिरफ्तारीका असर प्रत्येक भारतवासीके हृदयपर पड़ा है पर इस गिरफ्तारीका अर्थ आप लोगोंके लिये क्या है, यह भी मैं भलीभाँति जानता हूं। वीर अली बन्धु भारतको प्राणसे भी अधिक चाहते हैं पर उनकी धर्मनिष्ठा सबसे आगे है। प्रत्येक धार्मिक व्यक्तिके लिये यही उचित है। विगत वर्षोंमें अलीबन्धुओंने इस्लाम धर्मकी प्रकृष्टता व्यक्त करनेकी जी जान से चेष्टा की है। इस्लाम धर्मकी मर्यादा बढानेमें जितना काम उन लोगोंने किया है किसी भी अन्य दो मुसलमानने नहीं किया है। खिलाफतके प्रश्न पर जितना ध्यान इन लोगोंने दिया है, किसी मुसलमानने नहीं दिया है। अपने धर्मके कट्टर हैं और अपने हृदयके भावको वे उस समय भी उसी निर्भीकताके साथ प्रगट करते रहे जिस स चे छिन्दवारामें नजरबन्द थे। उस दीर्घकाल व्यापी नज न्दने उनके हृदयको जरा भी दुर्बल नहीं बनाया। नजरबन्द होते समय जो वीररस उनमें भरा था, नजरबन्दसे छूटते समय भी वही विद्यमान था।

जेलसे छूटनेके बाद उन्होंने सच्ची राष्ट्रीयताका परिचय दिया है और आप लोगोंने उनके कार्यों को अभिमान और सन्तोषके साथ देखा है।

अपनी सादगी, उदारता तथा नम्रतासे उन्होंने मुसलमानोंमे जिस तरहका जीवन उत्पन्न कर दिया है वह किसी भी मुसलमानके लिये सभव नही था।

इन गुणोंके कारण वे दोनों भाई आपके अतिशय प्रिय हो गये हैं। आप लोग उन्हें अपना आदर्श मानते हैं। इसलिये उनके इस तरहके वियोगसे आपका दिल अवश्य ही दुखी होगा। आप लोगोंके अतिरिक्त और लोग भी हैं जिन्हें उनकी जुदाई कष्टकर है। मेरे तो ये अभिन्न साथी हो गये थे। इस समय मैं बिना हाथका हो रहा हू। मुसलमानोंके साथ जहातक मेरा सम्बन्ध था, शौकत अली मेरे पथ प्रदर्शक थे। वे मुझे गलत मार्गपर कभी भी नहीं ले गये। अधिकाश अवस्थामें उनके निर्णय उत्तम और असलयित होते थे। जबतक अली भाई मेरे साथ थे मुझे हिन्दू मुस्लिम एकताके लिये जरा भी चिन्ता नही थी, हिन्दू मुस्लिम एकताका जो मूल्य उनके हृदयमें था उसका अनुभव आप लोगोंमेंसे कमही लोग कर सकते हैं।

इस समय वे हम लोगोसे अलग कर दिये गये हैं। हम लोगोको किसी भी तरह उदासीन या हताश नही होना चाहिये। हम लोगोंमेंसे प्रत्यकको केवलमात्र परम पिता परमात्माकी ही सहायतापर भरोसा करके सदा अपने पैरो खडा होना चाहिये।

हताश होकर हम केवल यही नहीं प्रगट करते कि हम भाइयोंकी आत्माको नही पहचान सके हैं। बल्कि हम यह भी प्रगट करते हैं कि हम धर्मकी मर्यादा भी नही जानते।

प्रत्येक धर्ममें लिखा है कि प्रियजनोंका शारीरिक विछोह भले ही हो जाय पर उनकी आत्मा सदा हम लोगोंके साथ निरन्तर निवास करती है। केवल अली भाइयोंकी आत्माही हम लोगोंके साथ नहीं है, बल्कि इस तरह यातना सहकर वे हमारे कामको जितनी सहायता कर रहे हैं, शायद स्वतन्त्र रहकर अपने कतिपय साहसिक और बुद्धिमत्ता पूर्ण कार्यों द्वारा नहीं कर सकते थे। शान्तिमय अहिंसात्मक असहयोगकी यही मर्यादा है कि हम लोग इस बातको भली भांति समझ लें कि केवल तपस्या और यातनासे ही हम अपने लक्ष्य तक पहुच सकते हैं। उपाधियोंका त्याग, अदालतो और कौंसिलोंका बहिष्कार, सरकारी विद्यालयोंका बहिष्कार, एक तरहकी तपस्याही है। इनसे ही आरम्भकर हमलोग आगे बढ़ेंगे और जेलकी यातना सहनेके लिये तैयार होंगे और यदि आवश्यकता पडी तो प्रसन्नता पूर्वक फांसीपर भी चढ जायंगे। हमलोगोंमें जितने अधिक लोग कष्ट भोगेंगे हमलोगोका अभिप्रेत आदर्श उतना ही निकट होता जायगा।

हमलोग इस बातको जितना जल्दी समझ लेंगे कि बडी बडी सभाओं और जूलूसोंके द्वारा नहीं बल्कि चुपचाप कष्ट सहनेसे ही हम सफल हो सकते हैं उतनीही शिघ्रगामी हमारी सफलता होगी।

मैंने आपके खिलाफत आन्दोलनको पूरी तरहसे अपनाया है क्योंकि मैं इसे अपना समझता हू। आपमेंसे सबसे निपुण लोगोंसे मैंने खिलाफतकी मीमासा सुनी है और वह मेरा लक्ष्य आदर्श हो गया है। आपलोग किसी बुराई या कुशासनके खिलाफ युद्ध नहीं चला रहे हैं। आप लोग तुर्कों की सहायता कर रहे हैं क्योंकि वे यूरोपके उन भले आदमियोंमें हैं और चूकि युरोपवाले विशेषकर अंग्रेज उनसे घृणा करते हैं। इस घृणा-का यह कारण नही है कि वे अन्य यूरोपियनोंसे खराब या कमजोर हैं वल्कि इस कारण कि वे यूरोपकी वर्तमान सत्ताका साथ देकर दुर्बल जातियोंके लूटनेमें वे सहायक नहीं हो रहे हैं। तुर्कों के लिये इस प्रकार सग्रामकर आप अपने धर्म और विश्वास की मर्यादा बढा रहे हैं।

इसीलिये आपने अपनी सफलताके हेतु सबसे शान्तिमय उपायका अवलम्बन किया है। यह बात तो निर्विवाद है कि हमलोगोंमे (हिन्दू और मुसलमान) चरित्र बलका सर्वथा अभाव हो गया है। धार्मिक आस्था भी हमलोगोंमें नहीं रही। ईश्वरकी सच्ची सन्तानकी भाति न रहकर हमलोग चाहते हैं कि हमारी धर्मकी देखरेख दूसरे करें और हमारे धर्मकी रक्षाके लिये दूसरे ही प्राण दें। पर सम्प्रति जिस तरीकेको हमलोगोंने स्वीकार किया है उसमें तो हमे बाध्य होकर ईश्वरकी ओर मुंह फेरना पड़ेगा और उसकी सहायताका भरोसा करना पड़ेगा। असहयोग इस बातको स्वीकार कर लेता है कि हमारा दुश्मन—

जिसके मुकाबिलेमें हम खड़े हुए हैं—जिस उद्देश्यको चरितार्थ करना चाहता है वह भी अमान्य है और उसके लिये जिन तरीकोंसे काम लेता है वे भी अमान्य हैं। इसलिये ईश्वर हमारी सहायता तभी करेगा जब हमारे तरीके हमारे शत्रुसे एकदम भिन्न होंगे। हमलोगोंने असाधारण काम उठाया है और उसी नियत अवधिके भीतर हम सफल हो सकते हैं यदि वास्तवमें हमने इस सरकारसे भिन्न तरीकेको अख्तियार किया।

इसलिये हमारे आन्दोलनका सारा बल अहिंसापर निर्भर करता है और सरकारका बल हिंसापर निर्भर करता है। बिना प्रतिरोधके किसी तरहकी शक्तिका जन्म सम्भव नहीं है। इसलिये यदि सरकारकी हिंसाका हमलोगोंने विरोध नहीं किया तो वह अवश्य ही मुर्दा हो जायगी। पर यदि हमें अहिंसाको पूरी तरह चरितार्थ करना है तो वह मनसा, वाचा और कर्मणा अवश्य होनी चाहिये। अहिंसाही आप लोगोंके लिये उत्तम मार्ग है इससे आपकी जिम्मेदारी कम नहीं हो जाती। अहिंसा-के सहारे चलते हुए आप हिंसाकी योजना नहीं कर सकते क्योंकि ऐसा करना आपकी प्रतिज्ञाके विरुद्ध होगा। हमें हर अवस्थामें मनसा, वाचा तथा कर्मणा अहिंसापर पूर्ण विश्वास रखना चाहिये। मैं चाहता हूं कि इस क्रोध और क्षोभके समय भी प्रत्येक मुसलमान इस बातको भलीभांति समझ ले कि केवलमात्र अहिंसाके द्वारा ही हमलोग इस वर्षके भीतर ही विजय प्राप्त कर सकते हैं।

अहिंसात्मक असहयोग स्वप्न नहीं है। जिस वातको सात करोड मुसलमान (हिन्दूओंको अलग कर दीजिये) एक मत होकर स्वीकार करें क्या उसमें कुछ भी सार नहीं है। यदि प्रत्येक उपाधिधारीने उपाधियोंका परित्याग किया होता, यदि प्रत्येक वकीलोंने अदालतोंका बहिस्कार किया होता, यदि प्रत्येक छात्रोंने सरकारी स्कूलोंसे सम्बन्ध छोड दिया होता, यदि नयी कौंसिलोंके लिये कोई भी उम्मेदवार न खडा हुआ होता तो हम आजसे बहुत पहले ही सफल हो चुके होते। पर हमें यह बात स्वीकार करना चाहिये कि हममेंसे बहुतोंने अतिशय दुर्बलता दिखलाई है। सात करोड मुसलमान और २२ करोड हिन्दुओंमें सच्चे मुसलमान तथा सच्चे हिन्दू कहलाने वाले बहुत ही कम हैं। इसलिये यदि हम लोगोंने अपना ध्येय प्राप्त नहीं किया है तो इसका दोष हमारे ही ऊपर है। यदि हमारा संग्राम धार्मिक है तो हमें किसी भी अवस्थामें अधीर नहीं होना चाहिये।

हिंसासे जितना दूर मैं रहता हूं अलीभाई भी उससे उतनेही दूर रहते हैं। इसलिये उनकी बलि निर्दोष बलि है। इस्लाम तथा भारतके लिये उन्होंने अपने बल भर काम किया है। यदि अब खिलाफतके प्रति किये गये अन्याय तथा पञ्जाबके अत्याचारोंका प्रतिकार इसी वर्षके भीतर न हो जाय तो दोष हमारे सिर पर है।

हमें अहिंसात्मक रहना चाहिये। सैनिकोंके बारेमें अली-

भाइयोंने जो बातें कही हैं उन्हें हमें भी दोहराना चाहिये और जेल जाना चाहिये। हमें यह बात कभी नहीं सोचना चाहिये कि यदि हममेंसे सबसे उत्तम भी जेलमें चले जाय तो यह संग्राम बन्द हो जायगा। यदि हम लोगोंमेंसे सबसे बडे नेताके जेल जाने पर असहयोग आन्दोलन बन्द हो सकता है तो निश्चय जानिये कि हम स्वराज्यके योग्य नहीं रहे और न हम खिलाफतके अन्याय तथा पञ्जावके अत्याचारोंका प्रतीकार करा सकते हैं। हमें हजारों रंगमञ्चोंपरसे इस बातकी घोषणा कर देनी चाहिये कि प्रत्येक हिन्दू या मुसलमानके लिये सरकारी नौकरी करना पाप है चाहे वह सेनामें हो या और कहीं हो।

सबसे ऊपर हमें विदेशी वस्त्रोंके बहिष्कारका यत्न करना चाहिये चाहे वे वस्त्र ब्रिटिश हों, जापानी हों, अमरीकन हों या फ्रान्स तथा किसी अन्य देशके हों। हमे अपने घरोंमें चरखो और करघोंका प्रचार करना चाहिये तथा अपने आवश्यकता नुसार कपडा तैयार करना चाहिये। इससे पता लगेगा कि हम अपने देशको मुक्त करनेके लिये तथा खिलाफतके प्रति किये गये अन्यायको दूर करानेके लिये किस तरह तैयार हैं। इससे हिन्दू मुस्लिम एकताका भी निरूपण होगा तथा पता लगेगा कि हम अपने कार्यक्रमको चरितार्थ करनेके लिये किस तरह तैयार हैं। मेरा पक्का विश्वास है कि यदि हमलोग आज ही विदेशी वस्त्रोंका पूर्ण बहिष्कार कर दे तो हम अपना ध्येय एक मासके भीतर ही प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि उस अवस्थामें

हमें पूर्ण योग्यता प्राप्त हो जायगी कि हम हिंसाके भावको हर तरहसे रोक सकेंगे। हमलोग तब सविनय अवज्ञा भी आसानीसे आरम्भ कर सकेंगे और उसीसे हमारा लक्ष्य भी पूरा हो जायगा।

सरकारने जो चोट आपको पहुचाई है उसका एकमात्र प्रतीकार मेरी दृष्टिमे यही आता है कि हमलोग अहिंसात्मक रहकर विदेशी वस्त्रोका पूर्णतया बहिष्कार करे और अपने घर कपडा तैयार करके अपनी सारी आवश्यकता पूरी करे।

मदुरा
सितम्बर २४, १६२१

आपका मित्र और साथी—
मोहनदास कर्मचन्द गान्धी



राजभक्तिमें दस्तन्दाजी

(सितम्बर २९, १९२१)

कुछ समय पहले बम्बईके लाट साहबने लोगोंको चेतावनी दी थी कि अब हमको गम्भीरतासे काम लेना है और हम अधिक समय तक जिस तर्जके भाषण किये जा रहे हैं उन्हें गवारा नहीं कर सकते। अब अलीभाइयोंके सम्बन्धमें जो प्रेस नोट उन्होंने जाहिर किया है उसमें उन्होंने अपनी गम्भीरताके मतलबको साफ किया है। अली भाइयोंपर यह जुर्म लगाया जाने वाला है कि उन्होंने फौजके सिपाहियोंकी राजभक्तिको डिगानेका प्रयत्न किया है और राजद्रोही भाषण किये हैं। लेकिन कहना पडेगा कि, मुझे यह खयाल तक नहीं होता था कि बम्बईके लाट साहब इस विषयमें इतनी बुरी तरहसे अज्ञान होंगे। इससे यह साफ जाहिर होता है कि उन्होंने इस बातपर ध्यान ही नहीं रखा कि इन पिछले बारह महीनोंमें हिन्दुस्तानके अन्दर क्या क्या घटनायें हुईं। मालूम होता है, उन्हें यह पता तक नहीं है कि राष्ट्रीय महासभाने तो पिछले साल सितम्बरमें ही फौजी सिपाहियोंकी राजभक्तिमें हाथ डाल दिया है और सेंट्रल खिलाफत कमेटीने तो उससे भी पहले तथा खुद मैंने तो इन सबके पहले, इस विषयमें अपनी आवाज उठाई है। क्योंकि यह

सुझानेका श्रेय या निन्दाका पात्र तो मैं ही हूं कि हिन्दुस्तानको यह पूरा हक है कि वह सिपाहियोंसे तथा सरकारके हर एक नौकरसे, फिर वह चाहे किसी जगह पर क्यों काम करता हो, यह कहे कि इस सरकारने जो जो अत्याचार किये हैं उनके पापके भागी तुम भी हो। कराचीमें जो खिलाफत कान्फ्रेन्स हुई थी उसने तो सिर्फ कांग्रेसकी इसी आवाजकी प्रतिध्वनि, इस्लामकी भाषामें की थी। इस्लामके सम्बन्धमें मुसलमानोंके धर्मगुरु ही कुछ कहनेके अधिकारी हैं। लेकिन हिन्दू धर्म और राष्ट्रीय धर्मकी तरफसे यह कहनेमें मुझे तनिक भी सकोच नहीं होता कि जिस सरकारने हिन्दुस्तानके मुसलमानोंके साथ दगाबाजी की है और जो पञ्जावके अमानुषिक अत्याचारोंकी अपराधिनी है उसके यहा सिपाही बनकर नौकरी करना महापाप है! यह बात मैं कितनी ही जगह खुद सिपाहियोंकी मौजूदगीमें कह चुका हूं। और अगर आज तक मैंने हर एक सिपाहीसे अलग अलग यह बात नहीं कही है तो इसका सबब यह नहीं है कि हम ऐसा चाहते नहीं हैं, बल्कि यह है कि हममें उनकी जीविका चलानेका सामर्थ्य अभी नहीं आया है। लेकिन मैं सिपाहियोंसे यह कहते कभी नहीं हिचका हूं कि अगर तुम कांग्रेस या खिलाफतके भरोसे न रहकर, खुदही अपनी गुजरका जरिया पैदा कर सकते हो तो तुम तुरन्त इस्तीफा दे दो। और मैं वादा करता हूं कि ज्योंही चरखा हर एक घरमें एक स्थायी वस्तु हो जायगा, और ज्योंही हिन्दुस्तानी यह महसूस करने लगेंगे कि

बुनाईकेद्वारा कोई भी आदमी किसी भी दिन अपनी गुजर वामिजाज और इज्जतके साथ कर सकता है, त्योंही मैं हर एक हिन्दुस्तानी सिपाहीसे अलग अलग यह कहते हुए जरा भी आगा पीछा न करूंगा कि तुम अपनी नौकरी छोड दो, जुलाहेका काम करने लगो, फिर ऐसा करनेके लिये मुझे गोली भी मार दी जाय तो परवा नहीं। क्योंकि, क्या हिन्दुस्तानको पराधीन रखनेमें इन सिपाहियोंका उपयोग नही किया गया ? क्या जालियावाला बागके बेगुनाह लोगोंके हत्याकाण्डके लिये उनका उपयोग नही किया गया है ? क्या चादपुरमें उस खौफनाक रातमें बेकसूर मर्दों औरतों और बच्चोंको घरसे बाहर निकालनेमें उनका उपयोग नही किया गया ? क्या मेसोपोटामियाके मान-धनी अरबोंको अपने अधीन करनेके लिये इन सिपाहियोका उपयोग नहीं किया गया है ? क्या मिश्रवालोंको पददलित करनेमें इनका उपयोग नही किया गया ? ऐसी हालतमें कोई भी हिन्दुस्तानी जिसमें मनुष्यताका कुछ भी तेज है, और कोई भी मुसलमान जिसे अपने मजहबका कुछ भी फक्र है, किसी तरह वही बात महसूस किये बिना नहीं रह सकता जो कि अली-भाइयोंने की है ? इन फौजके सिपाहियोंका उपयोग किसी शूरवीरकी तरह—जिसका यही धर्म है कि दीन दुर्बल लोगोकी आजादी और इज्जतकी रक्षा करे—करनेके बजाय ज्यादातर भड़ैत जल्लादोंकी तरह ही किया गया है। लाट साहबने हम लोगोंको यह कह कर तो, कि अगर गोरे सोल्जर और सिपाही न होते तो

मलाबारमें क्या हो जाता, हमारी अधमसे अधम वृत्तिका सहारा ढूढा है। मैं लाट साहबको जतला देना चाहता हू कि मलाबारके हिन्दू और मुसलमान दोनोंने मिलकर मोपलाओंको शान्त कर दिया होता, अगर खिलाफतका सवाल दरपेश न होता तो मुमकिन था कि मोपला उत्पात बिलकुल हुआ ही न होता और इससे भी गये गुजरे। अगर मान लें कि मुसलमान और मोपला आपसमें मिल जाते तो हिन्दू धर्म अहिंसाके ही सिद्धान्तका अवलम्बन करके हर एक मुसलमानको अपना दोस्त बना लेता या हिन्दुओंके शौर्यकी परीक्षा और आजमायश हो जाती। हिन्दू और मुसलमानोंके भेदको उत्तेजना देकर बम्बईके लाट साहबने खुद अपना और अपने कार्यका (फिर वह चाहे जो हो) बडा बिगाड कर लिया है और अपने उस नोटके द्वारा हिन्दुओं को यह अनुमान करनेका मौका देकर उनका बडा अपमान किया है कि हम तो बेकस और बेदम प्राणी हैं, हममें न तो अपने बाल बच्चोंकी, न अपने देशकी या अपने धर्मकी रक्षा करने की चकन है और न उनके लिये मर मिटनेकी ही जुरत हममें है। परन्तु अगर लाट साहबका यह ख्याल सही है तो हिन्दू लोग जितना ही जल्दी मर मिटे, इन्सानियतके लिये उतना ही बेहतर होगा। लेकिन इस जगह मैं लाट साहबको यह याद दिलाना चाहता हू कि यह कहना कि आज अगरेजी राज्यमें हिन्दुस्तानी इतने पौरुषहीन हैं कि वे लुटेरोंसे—फिर वे चाहे मोपला मुसलमान हों और चाहे आराके क्रोधोन्मत्त हिन्दू हों—अपनी रक्षा

बुनाईकेद्वारा कोई भी आदमी किसी भी दिन अपना गुजर वामिजाज और इज्जतके साथ कर सकता है, त्योही मैं हर एक हिन्दुस्तानी सिपाहीसे अलग अलग यह कहते हुए जरा भी आगा पीछा न करूंगा कि तुम अपनी नौकरी छोड दो, जुलाहेका काम करने लगो, फिर ऐसा करनेके लिये मुझे गोली भी मार दी जाय तो परवा नहीं ! क्योंकि, क्या हिन्दुस्तानको पराधीन रखनेमें इन सिपाहियोंका उपयोग नही किया गया ? क्या जालियावाला बागके वेगुनाह लोगोंके हत्याकाण्डके लिये उनका उपयोग नहीं किया गया है ? क्या चादपुरमे उस खौफनाक रातमे वेकसूर मर्दों औरतों और बच्चोंको घरसे बाहर निकालनेमें उनका उपयोग नही किया गया ? क्या मेसोपोटामियाके मान-धनी अरबोंको अपने अधीन करनेके लिये इन सिपाहियोंका उपयोग नही किया गया है ? क्या मिश्रवालोंको पददलित करनेमें इनका उपयोग नही किया गया ? ऐसी हालतमें कोई भी हिन्दुस्तानी जिसमें मनुष्यताका कुछ भी तेज है, और कोई भी मुसलमान जिसे अपने मजहबका कुछ भी फक्र है, किसी तरह वही बात महसूस किये बिना नहीं रह सकता जो कि अली भाइयोंने की है ? इन फौजके सिपाहियोंका उपयोग किसी शूरवीरकी तरह—जिसका यही धर्म है कि दीन दुर्बल लोगोंकी आजादी और इज्जतकी रक्षा करे—करनेके बजाय ज्यादातर भड़ैत जल्लादोंकी तरह ही किया गया है। लाट साहबने हम लोगोंको यह कह कर तो, कि अगर गोरे सोल्जर और सिपाही न होते तो

मलाबारमें क्या हो जाता, हमारी अधमसे अधम वृत्तिका सहारा ढूंढा है। मैं लाट साहबको जतला देना चाहता हूं कि मलाबारके हिन्दू और मुसलमान दोनोंने मिलकर मोपलाओंको शान्त कर दिया होता, अगर खिलाफतका सवाल दरपेश न होता तो मुमकिन था कि मोपला उत्पात बिलकुल हुआ ही न होता और इनसे भी गये गुजरे। अगर मान लें कि मुसलमान और मोपला आपसमें मिल जाते तो हिन्दू धर्म अहिंसाके ही सिद्धान्तका अवलम्बन करके हर एक मुसलमानको अपना दोस्त बना लेता या हिन्दुओंके शौर्यकी परीक्षा और आजमायश हो जाती। हिन्दू और मुसलमानोंके भेदको उत्तेजना देकर बम्बईके लाट साहबने खुद अपना और अपने कार्योका (फिर वह चाहे जो हो) बडा बिगाड कर लिया है और अपने उस नोटके द्वारा हिन्दुओं को यह अनुमान करनेका मौका देकर उनका बडा अपमान-किया है कि हम तो बेकस और बेबस प्राणी हैं, हममें न तो अपने बाल बच्चोंकी, न अपने देशकी या अपने धर्मकी रक्षा करने की बकत है और न उनके लिये मर मिटनेकी ही जुरत हममें है। परन्तु अगर लाट साहबका यह ख्याल सही है तो हिन्दू लोग जितना ही जल्दी मर मिटे, इन्सानियतके लिये उतना ही बेहतर होगा। लेकिन इस जगह मैं लाट साहबको यह याद दिलाना चाहता हूं कि यह कहना कि आज अंगरेजी राज्यमें हिन्दुस्तानी इतने पौरुषहीन हैं कि वे लुटेरोंसे—फिर वे चाहे मोपला मुसलमान हों और चाहे आगके क्रोधोन्मत्त हिन्दू हों—अपनी रक्षा

नहीं कर सकते, अ ग्रेजी राज्यपर बडेसे बडा कलङ्क लगाना है।

हां लाट साहबने अली भाइयोंके राजद्रोहका जो उल्लेख किया है वह उनके राजभक्तिमें दस्तन्दाजी करनेके उल्लेखसे तो कम अक्षम्य है, क्योंकि वे यह बात जरूर जानते होंगे कि राजद्रोह तो काग्रेसका विरुद्ध ही हो गया है। इस कानून सस्थापित सरकारके प्रति अप्रीति पैदा करनेका तो व्रत ही प्रत्येक असहयोगीने धारण कर लिया है। असहयोग आन्दोलन तो एक धार्मिक और पूर्ण नैतिक आन्दोलन है और वह इस सरकारका उच्छेद करनेके उद्देशसे ही, बहुत विचारके उपरान्त, उठाया गया है। इसलिये यह कानूनकी रूहसे, ताजीरात हिन्द भाषामे, जरूर ही राजद्रोहात्मक है। लेकिन यह आविष्कार कोई नया नही है। लार्ड चेम्सफोर्ड इस बातको जानते थे, लार्ड रेडिंग भी इसे जानते हैं। अब यह ख्यालमें नहीं आ सकता कि बम्बईकी सरकार इस बातको न जानती हो। यह बात आपसमें तय हो चुकी थी कि जबतक यह आन्दोलन हिंसाका अवलम्बन न करेगा तबतक इसमें किसी तरहका खलल न डाला जायगा।

पर इसपर यह कहा जा सकता है कि सरकारको यह अख्तियार है कि जब वह देखे कि अब तो यह आन्दोलन वाकई अपनी तर्ज अमलकी हस्तीको ही डावाडोल करने लगा है तब वह अपनी नीति बदल दे। मैं उसके अधिकारको नामंजूर नहीं करता। ऐतराज तो लाट साहबके उस नोट पर है। उसका

मजमून इस तरहसे लिखा गया है कि जिससे अनजान लोग यह खयाल करें कि सिपाहियोंको राजभक्तिसे हटाना और राजद्रोहका करना मानों कोई नये जुर्म हैं जो अली भाइयोंने इस वक्त किये हैं और मानों यह पहला ही मौका है जो लार्ड साहबका ध्यान इन पर गया है।

जो हो, अब यह तो साफ ही जाहिर है कि कांग्रेस और खिलाफतके कार्य्य कर्ताओंका क्या कर्त्तव्य है। हमें दयाकी भीख नहीं मांगनी है। हम सरकारसे इसकी उम्मीद भी नहीं करते। हमने कभी यह प्रार्थना नहीं की कि जबतक हम अहिंसाका अवलम्बन कर रहे हैं तबतक हम जेलसे मुक्त रहें और अगर हम राजद्रोहके लिये भी जेल भेजे गये तो अब किसी तरहकी शिकायत न करेंगे। इसलिये अब हमारा आत्म-सम्मान और हमारा व्रत यह चाहता है कि हम शान्त, स्थिर और अहिंसाके पाबन्द रहें। हमें तो अपने उसी निश्चित राहपर चलना है। हमें उसी बातका उच्चारण हजारों जगहोंसे करना चाहिये जो अली भाइयोंने सिपाहियोंके सम्बन्धमें किया है और हमें खुल्लमखुल्ला परन्तु तरतीबके साथ इस सरकारके प्रति अप्रीतिका प्रचार करना चाहिये, तबतक बराबर करते रहना चाहिये जबतक कि सरकार हमें गिरफ्तार न कर ले। परन्तु यह काम हमें क्रोधित होकर, 'जैसाको तैसा'की रीतिसे नहीं बल्कि अपना धर्म समझ कर करना चाहिये। हमें अली भाइयोंकी तरह खादी पहनना चाहिये और 'स्वदेशी'के मन्त्रका प्रचार करना चाहिये, मुसलमा-

नोंको रुमाल और अंगोरा सरकारके लिये चन्दा जमा करना चाहिये। हमे स्वराज्यकी प्राप्तिके लिये और खिलाफत तथा पञ्जाबके अत्याचारोंके निपटारेके लिये, अली-भाइयोंकी तरह हिन्दू-मुसलमानकी एकताके और अहिंसाके मन्त्रका प्रचार करना चाहिये।

अब जोखोंका समय आ पहुचा है। परन्तु, जिस रोगीमें उसके पार कर जानेका सामर्थ्य है उसके लिये तो यह अच्छा ही अवसर है। अगर खतरेको सामने देखते हुए भी एक ओर तो हम चट्टानकी तरह मजबूत रहे और दूसरी तरफ अधिक आत्मसंयम रखा तो हम निश्चय ही इसी साल अपने मंजिले मकसूदको पहुच जायगे।



घोषणा

(अक्टूबर ३, १६२१)

बम्बई सरकारके ता० १५ सितम्बर, १६२१, के कम्यूनिकमें बताये कारणोंसे अली भाइयों तथा दूसरे सज्जनों पर जो मुकदमा चलाया गया है उसे ध्यानमें रखते हुए हम नीचे सही करने वाले, अपनी व्यक्तिगत हैसियतसे यह प्रगट करते हैं कि प्रत्येक व्यक्तिको इस बातका जन्मसिद्ध अधिकार है कि वह इस विषय पर, कि सरकारकी नौकरीका उम्मीदवार होना, या उसकी नौक-

ोमें रहना फिर यह चाहे मुल्की विभागमें हो चाहे फौजी विभा-
गमें हो उचित है या नहीं, पूरी स्वतन्त्रताके साथ अपनी राय
ागट करे।

हम, नीचे सही करने वाले, बतौर अपनी रायके, यह भी
ज़ाहिर करते हैं कि इस सरकार—शासन प्रणाली—के मात-
हत मुल्की जगहो पर और खास करके सैनिककी हैसियतसे,
किसी भी हिन्दुस्तानीकी नौकरी करना उसके राष्ट्रीय गौरवके
खिलाफ है, जो हिन्दुस्तानके आर्थिक, नैतिक और राजनैतिक
नत्र पातकी कारणीभूत है और जिसने अपनी फौज और पुलि
सका उपयोग राष्ट्रीय उच्च आकांक्षाओंके दमन करनेमें किया
है। जैसे कि रौलट कानून सम्बन्धी आन्दोलनके जमानेमें,
और जिसने अपने सैनिकोका उपयोग अरब, मिसर तथा तुर्कि-
स्तान जैसे और दूसरे भी ऐसे राष्ट्रोंकी स्वाधीनताको नष्ट भ्रष्ट
करनेमें किया है, जिन्होंने हिन्दुस्तानको किसी तरह हानि नहीं
पहुचाई है।

हमारी यह भी राय है कि यह हरएक हिन्दुस्तानी सिपाही
और मुल्की नौकरका कर्तव्य है कि वह इस सरकारसे अपना
सम्बन्ध-विच्छेद कर ले और अपनी जीविकाके लिये कोई दूसरा
ज़रिया तलाश कर ले।

मोहनदास करमचन्द गाधी, अबुल कलाम आजाद, अजमल
ख़ा, लाजपत राय, मोतीलाल नेहरू, सरोजिनी नायडू, अब्बास
तैयबजी, नरसिंह चिन्तामणि केलकर, विट्ठलभाई जवेरभाई पटेल,

वल्लभभाई पटेल, एम० आर० जयकर, दत्तात्रय विश्वनाथ गोखले, शंकरलाल घेलाभाई बैंकर, जवाहरलाल नेहरू, गंगाधर राव देशपाडे, लक्ष्मीदास रवजी तेरसी, उमर सोबानी, जमनालाल बजाज, माधवराव अणे, एस० ई० स्टोक्स, एम० ए० अनसारी, खलीकुज्जमा, के० एम० अब्दुल गफूर, कृष्णाजी नी० करगुजप्पी, सी० राजगोपालचार्य कोंडा वेंकटप्पय्या, जी० हरि सर्वोत्तमराव, अनसूया साराभाई, जितेन्द्रलाल बनर्जी, मुशीर हुसन किडवाई, श्यामसुन्दर चक्रवर्ती, राजेन्द्रप्रसाद, आजाद सोबानी, हसरत मोहानी, महादेव हरिभाई देसाई, बरजोरीजी फ्रामजी भरूचा, याकूब हसन, बी० एस० मुंजे, जयरामदास दौलतराम, ए० आर० बोल्कर, बी० पी० दास्ताने, अहमद हाजी सिद्दीक खत्री, गुडुर रामचन्द्र राव, डी० एस० विजयराव, बी० एल० सुब्रह्मण्य, सी० म० हाजी जानमहम्मद छोटाणी, अब्दुल बारी ।



मत प्रकाश

(अक्टूबर ६, १९२१)

जिस किसी आन्दोलनमें हिंसाका त्याग धार्मिक भाव समझ कर किया जाता है तो वह आन्दोलन परम पवित्र माना जाता है। इस आन्दोलनको दबानेके लिये जो कुछ प्रयत्न किया जाता है उसका अभिप्राय सार्वजनिक मतको कुचलना है। वर्तमान दमनने यही रूप धारण किया है। मैं अपना विश्वास क्यों न पूर्ण स्वच्छन्दताके साथ प्रगट करू कि,

(१) सरकारी नौकरी किसी भी हैसियतसे करना पाप है, विशेष कर सिपाहीकी हैसियतसे।

(२) मादक वस्तुओंका प्रयोग पाप है।

(३) विदेशी वस्त्रोंका प्रयोग पाप है।

(४) अनाज या रुईका फाटका खेलना महापाप है।

जो सरकार इस आन्दोलनके विरुद्ध आन्दोलन चला रही है वह भले ही रङ्गरूट और कर्मचारी प्राप्त करनेकी चेष्टा करे, अनेक उपायोंसे लोगोंको शराब पीनेके लिये तथा विदेशी वस्त्रोंके प्रयोगके लिये वाध्य करे और लोगोंको अनाज तथा रुईकी फाटका करनेके लिये उत्साहित कर अपना शासन और भी दृढ करे तथा लोगोंकी सहायता प्राप्त करती रहे पर जिस दिन लोगोंको

इसके प्रतिकूल धारणा हो जायगी उस दिनसे लोग उसका सा
अवश्य छोड देंगे और वह गिर जायगी। जिस तरह मैं अ
आन्दोलन द्वारा शराब बेचनेवाले तथा फाटका खेलने वालों
रोक रहा हू तथा मना कर रहा हूं उसी तरह मैं सैनिकोंको
रोक सकता हूं और मना कर सकता हू। इस समय इस देश
जो परिवर्तन हो रहा है सैनिक उससे अनभिज्ञ क्यों रखे जाय
क्या सरकारके हृदयमें इस बातका भय समा गया है कि य
सनिक यह बात जान जायंगे तो उसकी सेवा न करेंगे? य
सरकार अपनेको योग्य समझती है तो उसे उचित है कि सैनि
कोंमें प्रकाश डालकर ही उन्हें राजभक्त बनावे। पर इस दे
(भारत) में तो केवल शस्त्रके बल शान्ति रखी जाती है, राजभ
बनाया जाता है, केवल प्रजा ही निरस्त्र कर दी गई है। इसलि
हम लोगोंका कर्तव्य तो स्पष्ट है। यदि हमें फासी पर भी ल
कना पडे तो हमें निर्द्वन्द होकर यह बात कहना चाहिये औ
अपना निश्चित मत स्पष्ट रूपसे प्रगट करना चाहिये। हा, य
बात सदा ध्यानमें रखना चाहिये कि हमारे कथनसे किसी त
हकी अशान्ति नहीं उत्पन्न होती। यही अहिंसात्मक असहयोग
का सच्चा संग्राम है। इस संग्रामको अन्त तक चलाना अत्या
वश्यक है। मैं जनताको यह बात भली भाति समझा देन
चाहता हू कि सैनिकोंको राजभक्तिसे विचलित करनेके अपराधो
अभियोग चलाना, केवल उस अभियोगका आरम्भ है जो इसलि
चलाया जायगा कि विदेशी कपडोंके प्रयोगको रोक कर प्रजाको

राजभक्तिमें दस्तन्दाजी की जा रही है। कालिकटके नौजवानोंके खादीके वस्त्रोंको जलाकर अधिकारियोंने क्या व्यक्त किया? विजगापट्टमके डाक्टरी कालेजके विद्यार्थियोंके प्रति जो व्यवहार किया गया है वह क्या व्यक्त करता है? क्या वह खादी पर प्रहार नहीं है?

अली भाइयोंपर आक्षेप

(अक्तूबर १३, १६२१)

अली भाइयोंका यह महाभाग्य है कि उनके कितने ही पक्के मित्र हैं। और यह भी उनका सौभाग्य है कि उनके कितने ही जबरदस्त नुक्ताचीन भी हैं। एक मित्र मुझे लिखते हैं कि आप अली भाइयोंपर इतने मुग्ध हो गये हैं कि उनकी कोई भी बुरी बात आपको नहीं दिखाई देती।" हां, उनका कहना ठीक है। सन्देह न रखना ही मित्रताकी सूची है। परन्तु जो अपने मित्रोंकी दुर्बलताओंको नहीं जानता वह कुमित्र होता है। हां, मैं अली भाइयोंको कमजोरियोंको जानता हूं। लेकिन मुझमें भी तो कमजोरियां भरी हुई हैं। यह देखकर उनकी दुर्बलताओंके प्रति मेरा हृदय कोमल हो जाता है। मेरा हृदय कहता है कि अबतक जिन जिन साथियोंके साथ काम करनेमें मैंने अपना सौभाग्य माना है, अली भाई उन

दूसरी उलझन जो मुझे चक्करमें डाल रही है, यह है—अभी हमने वाअदब कानूनको तोडनेके लिये कदम आगे नही बढाया है। अतएव हमको फिलहाल तो तमाम अंगरेजी अफसरोंके हुक्मोंको जरूर ही मानना चाहिये। खुद आपने भी उस हुक्मको नही तोडा है जो आपको मलाबार न जानेदेनेके सम्बन्धमें निकला था। ऐसी अवस्थामें क्या मौलाना महम्मद अलीको यह वाजिब था कि कराचीके मजिस्ट्रेटके हुक्मको न मानते? और जब कि उसने उन्हें बैठ जानेको कहा तब गुस्सा दिखाते? क्या यह मजिस्ट्रेटके हुक्मका जाहिरा तौरपर भङ्ग करना नहीं था? क्या मौलाना महम्मद अलीके लिये मजिस्ट्रेटसे यह पूछना अच्छा था कि "क्या आप खुदाको तसलीम नही करते?" और जब उनसे बैठ जानेके लिये कहा गया तब बैठनेसे इनकार करना और यह कहना कि 'देखूं' तो आप क्या कर सकते हैं?"

मेरे ख्यालमे तो वाअदब कानून भङ्ग कर देनेपर भी हम सबको नम्रताके ही साथ पेश आना चाहिये। असहयोगीको नम्रताका अवतार होना चाहिये। उसको किसी भी तरहकी सनसनीकी हालतमें आपेसे बाहर न होना चाहिये और न किसी तरहका बल प्रयोग ही करना चाहिये। गुस्ताखी तो उसे छूतक न जाना चाहिये। अगर मेरे ये ख्यालात वाजिब हों तो अली भाइयोंका यह काम किसी तरह ताईदके

काबिल नहीं और खासा गुस्ताखीमें दाखिल हो सकता है। इस शब्दके प्रयोगके लिये क्षमा चाहता हू ।

मेरी समझमें तो अगर अली भाई किसी भी तरहसे अदालतको मदद पहुचानेके या हाकिमोके साथ जहालतका बरताव करनेके बजाय, अदालतमे चुपचाप ही रहते तो यह उन जैसे नेताके लायक बहुत ही बेतरह और बहुत ही दूरन्देशीका काम होता।

मुझे डर है कि इस आखिरी बातसे शायद आप नाराज हो जायँ। अगर ऐसा हो तो मैं आपसे माफीकी दरख्वास्त करता हू। मुझसे तो यह बात कहे बिना रहा ही नहीं गया। हा, मैं यह तो जानता हू कि आप किसी न किसी तरह अली भाइयोंके इस कामका समर्थन करेंगे, परन्तु यह नहीं जानता कि किस तरह ।"

यह पत्र दिल खोलकर लिखा गया है। लेकिन इसमें पत्र लेखकका हेतु अच्छा ही है। कितने ही मित्रोंने मुझसे यही सवाल किये हैं और मैंने अपने बस भर उनके समाधानका प्रयत्न किया है। लेकिन इस पूर्वोक्त पत्रपर सार्वजनिक रीतिसे विचार करनेकी जरूरत है। यदि अदालतमें बयान पेश करना असंगत है तो इसका कारण है कि अखिल भारतवर्षीय महासभा समिति, जिसने कि बयान पेश करनेकी अनुमति दी है। हा, कोई चाहे तो समितिसे इस बारेमें सवाल कर सकता है, परन्तु वह अली भाइयोंपर असङ्गतिका दोषारोपण नहीं कर

सकता। भारतवर्षीय महासभा समितिके निर्णयका मूल है मेरी सलाह। और शायद इसके लिये सर्वसाधारणके सामने मुझे ही कारण बताना वाजिब है। बयान पेश करनेसे मुल्जिमको अपना अभिप्राय स्पष्ट करनेका अवसर मिलता है और अदालतमें उसके पेश करनेसे वह हमेशाके लिये मिसलमें शामिल रहता है। इसके सिवा मुझे इस बातपर विश्वास है कि भारतवर्ष इसी साल स्वराज्य प्राप्त करनेका सामर्थ्य रखता है। स्वराज्यकी स्थापना होनेके पहले मैं हजारों लोगोंके जेलमें दाखिल होनेकी उम्मेद करता हू। और यह आशा रखता हूं कि स्वराज्य पार्लिमेंट उन तमाम असहयोगी कैदियोंको छुडाकर ले जायगी, जिनपर कोई नैतिक अपराध साबित नहीं हुआ है। अतएव स्वराज्यके पश्चात् न्यायाधीशोंको ये बयान बड़े कीमती इमदाद देंगे। फिर मैं इस बातके लिये उत्सुक हू कि अपराधी लोग असहयोगसे अनुचित लाभ न उठा सके और बयान पेश करके सर्वसाधारणको अपनी निर्दोषिताके अनुमान करनेका मौका दें। जो बयान मुख्तसर हो, अपने विषयसे बिलकुल सलग्न हो और जिसमें दलीलोंका तो बिल्कुल ही सहारा न लिया गया हो, वही इस कसौटीपर उतर सकता है।

मौलाना महम्मद अलीका बयान इस श्रेणीमें नहीं आ सकता। वे तो इस्लामकी लम्बी चौड़ी और कष्ट साध्य व्याख्यामें लग गये। उन्होंने स्पष्टत अपनी सफाईके लिये

अदालतका उपयोग नहीं किया, बल्कि अपने स्वीकृत कार्यकी शोहरत फैलानेके लिये किया है। लोगोंने उनके बयानको बड़े चावके साथ पढ़ा है। उन्होंने उसे यदि निबन्धके रूपमें लिखा होता तो उसका असर मारा जाता। इसलिये मैं न तो उस बयानकी पुष्टि करनेके लिये तैयार हू और न निषेध। हा, वह मुख्तसर तो जरूर ही किया जा सकता था। लेकिन संक्षेपसे काम लेना मौलाना महम्मद अलीके लिए नामुमकिन है। मैं उन्हें जानता हू। उन्होंने थोडेमें व्याख्यान देनेका वादा करके एक एक घण्टा तक लगाया है।

दूसरा आरोप और भी तेज है। बैठनेसे इनकार करनेके मामलेमें बाअदब या बेअदब कानून भंग करनेका कोई सवाल नहीं था। वह तो सिर्फ रुचिका सवाल था। यह सब दृश्य मुझे तो पसन्द नहीं आया। हा, बेशक, उसमें कोई गुस्ताखी की बात नहीं थी। वह सिर्फ एक गैरजरूरी चुनौती थी। हा, मैं मानता हू कि असहयोगीको बिलकुल नम्र रहना चाहिये और उन कैदियोंका व्यवहार नम्रताकी सीमाके बाहर था।

लेकिन फिर भी मैं उन कैदियोंके व्यवहारकी निन्दा करनेमें असमर्थ हू। उन्होंने इसके द्वारा एक प्रयोजनकी पूर्ति की है और वह कोई बुरा प्रयोजन नहीं है। मारे दबावके आज हम बिलकुल दीन हो गये हैं। अदालतोंके आसपास देखिए तो एक खासा भय और भीतिका वायुमण्डल फैला रहता है। कानून और अदालतोंके प्रति आदर एक चीज है और उनका डर दूसरी

चीज है। मेरी रायमें तो अली भाई और उनके साथी कैदी शरारत पर तुल गये थे। वे अदालतकी और कैदखानेकी वह शानको मिटा देना चाहते थे। इसलिये उन्होंने समझ बूझकर अदालतको इस तरह ललकारा। अगर मजिस्ट्रेट उस विनोदावस्थाका मर्म समझ जाता तो अलीभाई उससे मामूलके मुआफिक सीधी तरह पेश आते। अदालत अपनी शानके दम पर चलना चाहती थी। लेकिन अली भाई तो उसे जरा भी नहीं रहने देना चाहते थे। हां, मैं इनकार नहीं कर सकता कि इसका इससे भी अच्छा रास्ता था। लेकिन मेरा तो यह निश्चित मत है कि अली भाइयोंने अपनी इस चुनौतीके द्वारा भी अपने स्वीकृत कार्यकी सहायता ही की है। अगर वे नम्रता धारण कर लेते तो अपने कामका बिगाड़ कर बैठते। उन्होंने इस बार भी अपनी सचाई और स्वाभाविकता सिद्ध कर दिखाई है और मेरी दृष्टिमें उनके चरित्रका अत्यन्त प्रिय और प्रधान अङ्ग है। हमको याद रखना चाहिये कि इन आजकी अदालतोंकी बेइज्जती जरूर ही करनी है, क्योंकि वे हमारे मनमें बेइज्जतीके ही लायक हैं। लेकिन एक ओर जहां मैं अली भाइयोंकी ललकारको बुरा नहीं बता सकता वहां, दूसरी ओर मैं उसे एक नमूनेके तौर पर भी पेश नहीं करता हूं, जिसका अनुसरण सब लोग करें। जो ऐसा करनेका प्रयत्न करेंगे वे असफल हुए बिना न रहेंगे, क्योंकि, मुझे पाठकोंको यह बता देना चाहिए, कि अली भाइयोंके दिलमें मजिस्ट्रेटके प्रति दुर्भाव

नहीं है। और इसमें कोई शक नहीं है कि जब मजिस्ट्रेट अदालतके बाहर हो तब उनसे वे उसी शिष्टतासे पेश आवेंगे जिससे खुद मेरे साथ आते हैं।

नीचे एक पत्र दिया जाता है जिसमे उसके लेखकने अपनी आखो देखा हाल लिखा है। उसमें पाठक वहाकी स्थितिका शायद और अच्छा अन्दाज कर सकेंगे। पत्र इस प्रकार है -

"अखबारोंके द्वारा आपने इस मुकदमेकी कारवाई पढी ही होगी लेकिन इस मामलेकी कारवाईको चुपचाप देखने वाले आदमीकी तबीयत पर उसका क्या असर हुआ है, यह दिखला देना मै अपना कर्त्तव्य समझता हू। आरम्भमें हा 'वीर' मुस्लिमको दबानेकी कोशिश की गई थी, लेकिन उस अभागे मजिस्ट्रेटको पाला पडा था किसी ऐसे वैसेसे नहीं, मौलाना महम्मद अलीसे। उस भले आदमीको उसके 'योग्य' ही डाट डपट मिल गई।

मेरी जिन्दगीमे यह दूसरा मौका है जो मै किसी अदालतमें किसी मुकदमेकी पेशी देखनेके लिये गया हू। पहली बार जो तजरबा हुआ उसकी यादगार तो हा, मीठी नहीं है, लेकिन इस दूसरी बार—जो और मै ख्याल करता हू कि आखिरी बारके पहलेकी—क्योकि आखिरी बार तो अभी आनेवाली है —हालत देखकर तो मुझे बहुत दुःख हुआ। जहा 'कानून और व्यवस्था' का शासन है उस देशकी लार्ड रेडिगके राज्यको न्यायालयके नामसे विख्यात होनेवाली

वह अदालत एक नाटकगृहसे बढ़कर नहीं थी। नहीं जनाब मैं गलती कर रहा हूं। नाट्यशालामें तो नट अपना अपना काम ईमानदारीके साथ करके अपने दर्शकोंको, जो अपने मन बहलावके लिये रुपया देकर वहां आते हैं, खुश करते हैं, लेकिन अंगरेजी अदालतका 'न्यायाधीश' फिर वह चाहे गोरा हो या काला, प्रामाणिकतासे कोसों दूर रहता है और मुझे विश्वास है कि न्याय शब्द तो उनके कोषमें रहता ही नहीं।

मैं वकील नहीं हूं। इससे मैं कानूनी बेकायदगियोंको नहीं जान पाया, पर अगर सामान्य बुद्धिसे कानूनका कुछ भी सम्बन्ध है तो मैं साहसके साथ कह सकता हूं कि उस खलीकदिना हालका सारा तमाशा एक खासा प्रहसन था जिसका सानी मैंने इससे पहले कभी नहीं देखा।

गवाहोंके बयान और साजिशको साबित करनेका तरीका बडा मजेदार था और मुकदमेके अन्तमें सरकारी वकीलने जो भाषण किया उसकी तो जरा भी नुक्ताचीनीकी आवश्यकता नहीं।

मैं खुद तो इस नतीजेपर आ पहुंचा हूं कि इन अदालतोंमें बयान पेश करना भी केवल जङ्गलमें रोना है। हां, अगर वह अपने देश भाइयोंके प्रति आखिरी अपीलके रूपमें हो और उससे अपने मतोंका कुछ प्रचार होता हो तो भले ही।"

बुलन्दशहरका एक पत्र यहां देता हूं। उससे मेरा प्रतिपाद्य विषय और भी अधिक स्पष्ट हो जायगा।

"गत ३ अक्तूबरको यहांके जिला मजिस्ट्रेटके इजलासमें एक राजनैतिक मुकदमा पेश हुआ। उसके सिलसिलेमें मजिस्ट्रेटकी महज वेजा कार्रवाइयोंकी तरफ आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं।

जिला मजिस्ट्रेट, मिस्टर डोवसके इजलासमें, महाशय महावीर प्रसाद त्यागीपर दफा १२४ ए और १५३ ताजीरात हिन्दकी रूसे मुकदमा चलाया गया। हेड कानिस्टबल मुहम्मद यार खांकी जिरहके वक्त मुल्जिमके व्याख्यानके मुख्तसर नोट अदालतके सामने पढ़े जा रहे थे। उसपर अदालतने कहा कि रिपोर्टका अंग्रेजी तरजुमा मूल व्याख्यानसे नहीं मिलता है। इसपर सरकारी वकीलने कहा कि हां, मालूम तो ऐसा ही होता है लेकिन मैं नहीं बता सकता कि ऐसा 'क्यों है।' जब गवाहकी जिरहका मुख्य भाग खतम हो चुका, अदालतने मुल्जिमसे पूछा कि तुम जिरह करना चाहते हो? मुल्जिमने जवाब दिया "नहीं। आप सिर्फ इतना ही लिख लिजिये कि अंग्रेजी तरजुमा मूल व्याख्यानोंसे नहीं मिलता है, जैसा कि सरकारी वकीलने अदालतके सामने साफ साफ कबूल किया है।" यहां पर यह लिख देना बेमौका न होगा कि मुल्जिमकी तरफसे कोई वकील नहीं किया गया था और वह कानूनकी वाकफियत भी नहीं रखता। उसने महकमे फौजके सिवा दूसरी जगह कहीं नौकरी नहीं की है। और लड़ाईके सिलसिलेमें समुद्र पार रहा था। मजिस्ट्रेटने यह बात लिख लेनेसे इनकार किया और

कहा—"क्या बेहूदा बात कहते हो ?" इस पर मुल्जिमको बुरा लगा और उसने उलटकर कहा—'मैं तो समझता हूं, आप ही बेहूदा बात कह रहे हैं। 'तब मजिस्ट्रेटने बलवन्त सिंह कान्स-टेबल नं० ५१ से, जो कि मुल्जिम पर तैनात था कहा कि एक तमाचा लगाओ। सिपाही झिझका और उसने बडी ही अनि-च्छाके साथ मुल्जिमके गर्दनके पीछले हिस्सेपर धीरेसे एक थप्पड लगाई। यह देख कर मजिस्ट्रेटने फिर उसे आज्ञा दी थी कि मुंह पर एक जोरका तमाचा लगाओ। कानिस्टबिल मजबूर हुआ। उसने वैसा ही किया। मुल्जिमने इस बेइज्जती और सख्तीको चुपचाप बरदाश्त किया। उसने न तो अपनी सफाई पेश की और न सरकारी गवाहसे जिरह ही की।

मुझे इतना और कहना चाहिये कि ज्योंही जिला मजिस्ट्रेट अदालतमें आये उन्होंने देखा कि मुल्जिम अदालतके बाहर एक बेंच पर बैठा हुआ है और एक थानेदारके हिरासतमें है। जब मामला पेश हुआ, उन्होंने थानेदारको झुडका कि क्यों तुमने उसको बेंच पर बैठाया और अदालतमें हथकडी खोल कर क्यों पेश किया ? कोई आध ही मिनिटके बाद उन्होंने हुक्म दिया कि इसके हथकडी डाल दो। यह फिर अपने हाथोंको बांह पर रख कर खडा है। मजिस्ट्रेटकी इस हद दर्जेकी सख्तीसे यहांके लोगोंमें बडी सनसनी फैली। कोई ४ हजार आदमियोंकी सभा हुई। श्रीयुत सैयदहसन बैरनी बी० ए० एल० एल० बी० वकीलने सभापतिका पद ग्रहण किया था। उसमें प्रसगोचित प्रस्ताव

पास हुए। प्रस्तावके अनुसार जगह जगह तार भेजे गये हैं, परन्तु यकीन नही कर सकते कि ये पहुंचाये गये हैं या नही। इसलिए पत्र द्वारा भी यह समाचार भेजा गया है। अखबारोंमें भी तार द्वारा खबर भेजी गई है।"

बुलन्दरशहरकी इस आम सभाके प्रस्तावोंमें मुल्जिमको उसके आत्मसंयम, वीरता, और विरक्ति पर बधाईया दी गई हैं। लेकिन मुझे इस बात पर बडा सन्देह है कि इन विशेषणोका उपयोग समुचित रूपसे हुआ है या नहीं। मुल्जिमने उनके प्रतीकारमें एक भी शब्द क्यों नही कहा? ऐसे मजिस्ट्रेट नामधारी व्यक्तिके इजलासमें अपना मुकदमा चलानेसे इनकार क्यो नही कर दिया? मजिस्ट्रेटने तो बिलकुल साफ साफ जुर्म किया है और इसी तरह उस अनिच्छुक कानिस्टिबिलने भी गुनाह किया है। क्या मुल्जिमने प्रेम और नम्रताके कारण अपना मुह बन्द कर लिया था? डर अथवा किसी अनिष्टके लिये स्तब्धता या निष्क्रियताका उपयोग, ढट्ठीके तौर पर, हरगिज न होना चाहिये। क्या अली भाइयोंका बरताव अधिक मर्दाना और कुदरती नही था? जहा बुलन्दरशहरके जैसा मौका पेश आता हो वहा मनुष्यका अपना बल ही उसकी रक्षाका साधन हो सकता है और मुझे इस बातमें कोई सन्देह नहीं है कि जब अली भाइयोंने अदालतको ललकारा है, तब अपने देश भाइयोंकी राजनैतिक निर्बलता ही उनके मद्दे नजर रही है।



श्री त्यागीका समर्थन

(नवम्बर ३, १९२१)

पिछली २७ अक्तूबर के 'यङ्ग इण्डिया' में श्री त्यागीके समर्थनमें काशीके विख्यात बाबू भगवान दासजी की एक विद्वत्तापूर्ण टिप्पणी प्रकाशित हुई है। उसमें बाबू साहबने १३ अक्तूबरके 'यङ्ग इण्डिया' में श्रीयुत महावीरप्रसाद त्यागीके अदालतके बर्तावपर को गयी सम्पादकीय टिप्पणीको अधूरी खबरों के आधारपर लिखी गई बताते हुए श्री त्यागीपर किये गये आक्षेपोंका जवाब सिलसिलेवार दिया है। आप कहते हैं—

"१—जब कि हुकूमतका और पदका इतनी बुरी तरहसे और बेशरमीके साथ उपयोग किया जाता है, तब सिर्फ उसके "खिलाफ" आवाज उठानेसे कुछ फल न निकलता। तथापि श्री त्यागीने उसका लेखी निषेध जरूर किया है जो अपने ढङ्गका गौरवपूर्ण और उस परिस्थितमें अत्युत्तम है।"

२—श्री त्यागीका यह प्रतीकार कि मैं अब न तो अदालतके और न मुकदमेकी पैरवी करनेवाले वकीलोंके सवालोंका जवाब दूंगा, केवल उस मजिस्ट्रेटके सामने मुकदमा चलानेसे इनकार कर देनेके बनिस्बत अधिक प्रभावशाली और अत्यन्त गौरवपूर्ण मालूम पड़ता है।

२—जहातक खबरें मिली हैं उनपरसे यह कहा जा सकता है कि श्री त्यागीने प्रेम या नम्रताके वशीभूत होकर मौन नहीं धारण किया था। मौन तो धारण किया भारतके उन अङ्गरेजी 'न्याय मन्दिरों' की तिरस्करणीय वृत्तिके प्रति तथा उस मजिस्ट्रेटके प्रति तिरस्कार प्रगट करनेके लिये, जिसका वर्ताव एक मुन्सिफकी बनिस्पत एक झगडालूकासा था और जो ताजीरात हिन्दकी दफा १०७ और ३५२ के अनुसार खासा जुर्ममें शामिल हो सकता है। इसमें शक नहीं कि यह तिरस्कारयुक्त मौन ईसामसीहके या बुद्धके उस प्रेममय या नम्रतायुक्त मौनकी बराबरी तो नहीं कर सकता, किन्तु वह असहयोगके सिद्धान्तके खिलाफ भी नहीं मालूम होता, क्योंकि वह तो यही कहता है कि यह शासनप्रणाली जितना अहिंसात्मक तिरस्कार बताया जा सके उस सबके योग्य है।

४—श्री त्यागीने भीतिको छिपानेके लिये मौन नहीं धारण किया था। इससे अधिक बुरी बात क्या हो सकती है?

यह सच है कि जब देशमें एक तरफ सरकारकी अयोग्यताके कारण स्त्रियों तथा पुरुषोंपर मोपलाओंकेद्वारा भीषण अत्याचार हो रहे हैं ऐसी हालतमें श्री त्यागीके वर्ताव जैसी छोटीसी बातपर लम्बी चौडी बहस करना अनुचित तो है तथापि "यङ्ग इण्डिया" देश भरमें बडे आदरकी दृष्टिसे देखा जाता है। ऐसी दशामें उसकी सम्पादकीय टिप्पणियोंमें एक असहयोगी कार्यकर्ताके वर्तावपर कुछ विपरीत लिखा जाय

अथवा उसके सिर व्यर्थ दोष लग जाय तो यह दुर्भाग्यकी बात होगी।

इसलिये 'यङ्ग इण्डिया' के सम्पादक महाशय से निवेदन है कि अब अधिक बातें मालूम हो गई। अतएव वे अपने मत पर फिर से विचार करनेकी कृपा करें।"

पाठकोंको याद होगा कि श्री त्यागीका लेखो बयान देखते ही य० इं० के गताककी टिप्पणीमें उनके साथ कुछ अन्याय हुआ हो तो उसका परिमार्जन किया गया है। मैंने इस चेतावनी को इसलिये आवश्यक समझा कि मैं अपने अनुभवसे यह जानता हूं कि ऐसो मौन हमारी कमजोरीका भी परिणाम होता है। दुर्भाग्यसे उसका प्रसार किसी एक ही शख्स तक खतम नहीं हो जाता है। यह कमजोरी तो हमारे राष्ट्र भरका दुर्गुण बन रही है। श्री त्यागीके मामलेका नाम तो इस दुर्गुणके एक ताजे उदाहरणके तौर पर आया है। मैं पहले बता चुका हूं कि मोपलाओंके अत्याचार तो बुरे हई हैं, किन्तु उनके अत्याचारोंके सामने दूसरोंका आत्मसमर्पण कर देना इससे भी अधिक बुरा है। "हम तो जबरदस्ती मुसलमान बना दिये गये" यह रोना रोनेके लिये भी वे जिन्दा क्यों रहे? हमारे धर्मकी रक्षा खुद हमारे सिवा और कौन कर सकता है? हर एक इन्सानको, फिर वह स्त्री हो या पुरुष अपना रक्षक स्वयं ही बनना चाहिये। जिस परमात्माने हमें धर्म दिया है उसीने हमें उसकी रक्षा करनेकी शक्ति भी दी है। हर एक इन्सानको

मारनेकी शक्ति नहीं होती, लेकिन मारनेकी शक्ति तो अन्धे, लङ्गडे लूलेपर अवश्य होती है। उस मजिस्ट्रेटने श्री त्यागीपर जो कायर वार किया वह उनके पौरुष पर और अतएव धर्मपर आघात था। इसलिये उनको चाहिये था कि वे वेअदबी, गुस्ताखी, पाजीपन आदि कहलानेवाला ऐसा कोई कार्य करते जिससे उन्हें वह अधिक थप्पडें लगवाता और इस तरह एक शांतिमय दृश्य खडा कर देते। सच्चा असहयोग तो यही होता लेकिन मैं श्री त्यागी अथवा किसी दूसरे व्यक्तिको दोष नही लगाता। हमारा पौरुष जान बूझकर नष्ट ही कर दिया गया है और हमको नि शस्त्र करके केवल शरण जानेके योग्य बना दिया गया। किन्तु अहिंसाके आधुनिक रूपके प्रणेताकी हैसियत से मुझे यह बडी चिन्ता रहती है कि कहीं यह कमजोरी हमारा आदर्श न बन जाय और उससे अपनी रक्षा करता रहता हू। इसलिये मेरी तो यह इच्छा है कि बहादुरी पर भी तब तक धन्यवाद न दू जबतक हमें उसका पक्का यकीन न हो जाय किंतु यों तो हमें उस प्रगतिके लिये जरूर धन्यवाद देना चाहिये जिसके बदौलत हम हुकूमतकी दहशतसे डरकर पीछे हटना भूल गये। असहयोग तो राम और भीमको दोनों के लिये अमोघ शस्त्र है। यदि हमें अपनी कमजोरीके कारण अपमानके सामने शिर झुकाना पडे पर यदि ऐसा करते हुए हम यह जानते हो कि यह अपमान हमें अपनी कमजोरीके कारण सहना पडता है और इसलिये हम उत्तरोत्तर उन्नति करनेकी चेष्टा

करते रहें तो फिर मुझे इसके लिये भी शरम न मालूम होगी।

बाबू भगवानदासजी यह जाननेके लिये उत्सुक हैं कि भयसे भी बुरा और क्या हो सकता है? मेरे ध्यानमें थी 'कायरता'।

यह बड़े मार्केकी बात है कि एक ओर तो बाबू भगवानदासजी श्री त्यागीके लेखी बयानके मामलेमें मेरी दूसरी टिप्पणीको न देखनेके कारण मेरेद्वारा जल्दीमें किये गये श्री त्यागीजीकी कमजोरीके निषेधके खिलाफ उचित आवाज उठा रहे हैं और दूसरी ओर मौलाना महम्मद अलीने अपने बर्तावके गुस्ताखी कहे जानेके खिलाफ आवाज उठाई है। इन विरोधोंको मैं अपने दोषमें छिपा राष्ट्रीय इच्छाके बड़े भारी शुभ शकुन समझता हूं। मौलाना साहब उस बातका श्रेय तक लेनेसे इनकार करते हैं जो अत्युच्च दृष्टिसे देखने पर, संस्कृतिके खिलाफ नजर आती हो और बाबू भगवानदासजी मुझे उस क्रियाको भीतियुक्त कहनेसे रोकते हैं, जिसका समर्थन वीरोचित अहिंसाके सिद्धान्तसे किया जा सकता है। अब यह आशा और प्रार्थना करते हुए कि हमारा देश इतना शूरवीर और साथ ही सभ्य और उच्च हृदय बने जिससे वह उत्कृष्टताओंकी सीमाको पहुंच जाय, हम इस विवादको खतम करते हैं।"

यंग इंडियाकी टिप्पणी

बुलन्दशहरके श्रीयुक्त त्यागीके सहासयुक और स्पष्ट लेखी बयान पर टिप्पणी करते हुए श्री गांधीजी 'यङ्ग इण्डिया' में लिखते हैं—

"मेरी रायमें तो 'जबानबन्दी' से और 'खामोशी' का खिताब पानेसे हमारा काम नहीं चल सकता। जब श्री त्यागीको थप्पड लगाई गई तभी उनका यह कर्तव्य था कि वे अदालतमें ठहरनेसे इनकार कर देते। उन्हें उसी समय उस मजिस्ट्रेट कहलानेवाले शख्सके इजलासमें मामला आगे चलानेसे इनकार कर देना चाहिए था। उन्हें बेधड़क वहां बैठ जाना चाहिए था और इस तरह दिखलाना चाहिए था कि वे अदालतकी सत्ताको नहीं मानते। इसका फल शायद यह होता कि ज्यादा थप्पड पडते, ज्यादा सजा मिलती। परन्तु असहयोगका प्रयोग जब बलवानके शस्त्रके तौर पर किया जाय तब उसका मर्म यही है कि अधिक कष्ट सहन और जाती नुकसान कुबूल करके अत्याचारके शिकार होनेसे अपनेको बचाया जाय। इस आन्दोलनमें अबतक यह मालूम रहा है कि सरकारका वारण्ट मिलने पर मुल्जिम अदालतमें हाजिर हो, क्योंकि यह अन्देशा नहीं किया जाता था कि मजिस्ट्रेट लोग बुलन्दशहरके मजिस्ट्रेटकी तरह पेश आवेंगे। लेकिन इस मजिस्ट्रेटके असाधारण व्यवहारके लिए जरूरत भी असाधारण उपायकी ही है।

अहिंसा व्रतके मानी यह नहीं हैं कि हम अपने तेजोवधके काममें सहयोग करें। वह नहीं कहता कि हम पेटके बल रेंगें या नाक रगडते हुए चलें, या 'यूनियन जैक' को सलाम करने जाय, या हाकिमोंके इशारे पर कोई भी अपनेको गिरानेवाला काम करें बल्कि, इसके खिलाफ, हमारा व्रत तो हमसे यही

कहता है कि चाहे हमें गोली ही क्यों न मार दी जाय पर हम हरगिज ऐसा न करें। अतएव जालियावाला बागके लोगोका यह कर्तव्य नही था कि जब गोलिया झाडी जा रही थीं तब वहा से भाग खडे होते या मुंह तक फेरले। अगर अहिंसाका पैगाम उन तक पहुच गया होता तो उनसे यह उम्मीद की जा सकती कि जब उन पर फायर शुरू हुआ तो वे अपनी छाती खुली करके उसी तरफ आगे बढ जाते और यह विश्वास करते हुए कि हमारी यह मौत देशको आजादीके लिए है, अपने प्राण खुशी खुशी गवाते। अहिंसा तो जालिमकी ताकतको कोई चीज नही समझती है। अपने जैसेके साथ उसी तरह पेश न आनेके तथा अपनी टेक पर अडे रहनेके निश्चयके द्वारा उसे बेकार कर देती है। हम जनरल डायरके पजेमें इसलिये फस गये कि हमने उस समय वैसा ही कर दिखाया जैसा कि वह हमसे कराना चाहता था। वह चाहता था कि उसकी गोलियोंको देखकर हम रफूचक्कर हो जायं, वह चाहता था कि हम पेटके बल रेंगें और जमीन पर नाक रगड़े। यह तो उस 'दहशत' के खेलका एक अङ्ग था। जब हम हिम्मत बाध कर उसका मुकाबला करते हैं तब वह किसी भूतप्रेतकी तरह तुरन्त गायब हो जाता है। मुमकिन है कि सभी लोग इतने साहसका परिचय न दे सकें। परन्तु यह तो मुझे निश्चय है कि अगर हममें से कुछ लोग भी इतना साहस रखे कि चट्टानकी तरह अटल खडे रहें पर जरा भी हाथ न उठावें तो हमें इस साल स्वराज्य अवश्य मिल स-

कता। जब जालिमको ताकतका जवाब नहीं मिलता तब वह खुद उसी पर उलट पड़ती है, ठीक उसी तरह जिस तरह कि अगर हवामें बड़ी ताकत और जोरके साथ हाथ घुमाया जाय तो खुद हाथ ही उखड़ जाता है।"

अहिंसाका व्यवहार

श्री० त्यागीविषयक मेरे उद्गारोंको पढ़कर मोतिहारीसे एक सज्जन लिखते हैं कि "आपकी टिप्पणियोंको पढ़कर मैं असमञ्जसमें पड़ गया हूं। मेरी समझमें नहीं आता कि अगर ऐसा अवसर मेरे सामने उपस्थित हो जाय तो मुझे क्या करना चाहिये।" हां मुझे स्वीकार है कि इसके लिये कोई सर्वाङ्ग पूर्ण नियम बना देना कठिन है। कायरता और क्षुद्रता द्वेष और प्रेम असत्य और सत्य ये सब हृदयके गुण हैं। सद्गुणको दिखाना आसान है पर दूसरेके हृदयमें रहनेवाले सद्गुणको परखना हमेशा ही कठिन होता है। सबसे सुरक्षित तो मार्ग है यह मान लेना कि मनुष्यके वचन जैसा वह कहता है वैसा सच ही है। जबतक सबल कारण न हो तबतक किसीकी भी बातपर सन्देह न करें। श्री त्यागीके सम्बन्धमें मुझे अधूरी खबरें मिली थीं और उन्हींके आधार पर मैंने न्याय अन्यायका अनुमान किया था। नीचे दी हुई मिसालोंसे यह जाना जा सकता है कि हमें

खुद किस तरह बरतना चाहिये। प्रह्लादको राम नाम लेनेकी मनाई कर दी गई थी। जब मनाई नहीं की गयी थी तब तो वह चुपचाप अपने रास्तेपर चला जाता था पर जब मना किया गया तब उसने उसका प्रतिकार किया और अत्यन्त कठोर सजाका आवाहन करके हसते हंसते उसे सहन किया। डेनियल पहले तो अपने घरके एक कोनेमे पूजापाठ किया करता था। पर जब ऐसा करनेसे रोका गया तब उसने झट अपने घरका दरवाजा खोल दिया और खुलमखुला ठाकुरजीकी पूजा करने लगा। वह साबजकी गुफाओंमें भेडकी तरह ढकेल दिया गया। हजरत अली अपने जालिमसे भी ज्यादह जोरावर थे। जालिमने उनपर थूक दिया तब उन्होंने उसका हाथ चूम लिया। बहादुर अली जानते थे कि अगर मैं जालिमके साथ हाथापाई करूंगा तो ऐसा करना मानो क्रोधके वशमें हो जाना होगा। पर हां, मैं यह जानता हू कि हम इन प्राचीन साधु सन्तोंकी श्रेणीमें नहीं खड़े रह सकते। न तो हममे इनका जैसा विशुद्ध शौर्य है, न उतनी पवित्रता और न उनके जैसी सम्यक् दृष्टि ही हमारी है। हम भय और क्रोधको अभी जीत नहीं पाये हैं। हम तो अभी अहिंसाका रहस्य और निर्भयता सीखनेका प्रयत्न कर रहे हैं। हमारी अहिसामें तो अभी मिलावट है। हमारा अहिंसा अभी अधिकांशमें दुर्बलता मूलक और अल्पांशमें सबलता मूलक है। हमारे लिये तो सबसे निष्कंटक मार्ग यही है कि अपनेको बलवान बनानेके प्रयत्नमें अपने वक्तका साक्षात्कार करते हुए जितने संकट

सहने पड़ें उतने सहें। अतएव जब कोई मजिस्ट्रेट मुझे थप्पड लगावे तब मुझे ऐसा बर्ताव करना चाहिये जिससे मुझे दूसरा थप्पड मिले। हां, यह बात जरूरी है कि पहले थप्पडके लिये मेरी तरफसे कोई मौका न देना चाहिये। मैं अगर बदतहजीबीसे पेश आया हूं तो माफी मांग लूं, गुस्ताखी की हो तो नम्रता धारण कर लूं, जाहिल हूं तो शान्त हो जाऊं। अदालतमें तो मुझे बाकायदा और मुनासिब तौर तरीकेसे बरतना चाहिये। यह नहीं हो सकता कि कभी तो मुनासिब तरीकेसे पेश आऊं और कभी नामुनासिब तरीकेसे। अदालतमें हमारा वही तर्ज तरीका अच्छा हो सकता है जो कुदरती हो। अतएव अगर हमें किलाफ्त करना हो तो अपने कामोंमें हमसे जो कुछ भूल हो वह अहिंसाकी तरफसे होना चाहिये।



न्यायका नाटक



[यङ्ग इण्डियामें मौलाना मुहम्मदअलीका कराची जेलसे भेजा हुआ एक पत्र प्रकाशित हुआ है। उसके पढ़नेसे यह स्पष्ट हो जाता है कि कराचीके खलफीड्ना हालमें न्यायका नाटक किस प्रकार हो रहा है। स्थानाभावसे केवल अदालती कार्रवाईसे सम्बन्ध रखनेवाला अंश यहां दिया जाता है।

"जब मैं जेलके बाहर था तब मुझे इतना समय और शान्ति नहीं मिलती थी कि मैं अपने भाषणोंकी रिपोर्टोंकी गलतियां रोज दुरुस्त करता रहता। किन्तु चूंकि अब मुझे जेलके जीवनमें अधिक फुरसत मिलती है और चूंकि इस कैदीके जीवन तैयारीके लिये मनुष्यको अधिक शान्ति और धीरजवान बननेकी आवश्यकता है अब मैं इतना आजाद नहीं रहा कि ऐसी गलतियोंको बिना ही दुरुस्त किये छोड़ दिया करूं जैसा कि पहले था। किन्तु निश्चय ही यह कोई ऐसा कारण नहीं है कि जिससे लोगोंको केवल छपे हुए शब्दोंपर ही पूरा विश्वास रखना चाहिये। जब मैंने अदालतकी कार्रवाई चौथे दिनकी अधूरी, नादुरुस्त और बिलकुल गलतफहमी फैलानेवाली रिपोर्ट पढ़ी तब तो मुझे ऐसा ही मालूम होने

लगा कि इससे कुछ लोगोंके तो ख्यालात जरूर हमारे निस्बत उलटे हो जायंगे। और इसलिये जो खत मैंने तेरसीको "बाम्बे क्रानिकल" की छापीउलट पलट बातोंके विषयमें—जिसमें मेरे बयानकी रिपोर्टके दर्जनों पैराग्राफ और वाक्य नीचेके ऊपर और ऊपरके नीचे छाप दिये गये हैं लिखा था उसमें मैंने उस परिस्थितिका भी कुछ जिक्र किया था जिसके कारण अदालतको ललकारनेकी घटना हुई थी। किन्तु सचमुच हम शरारतपर तुले हुए नहीं थे। पहले तीन दिनतक तो अदालतकी कार्रवाई शान्तिके साथ चलती रही और सरकारी वकील हमपर जितना 'सफाई' देनेका दोष लगा सकते हैं उससे अधिक अदालत भी "ललकार" का इल्जाम हमपर नही लगा सकती थी। हा बखेड़ा तो मौलाना हुसेन अहमद साहबके बयानसे ही शुरू हुआ। अदालतने एक काबिल दुभाषियेको बुलानेसे इन्कार किया। और जब मजिस्ट्रेट यह समझकर कि दूसरे मुल्जिमके लिये दुभाषियेकी जरूरत न होगी, मामला आगे चलाने लगे तब पूर्वोक्त घटनाके कारण किचलूने उर्दूमें ही बोलनेका आग्रह किया। दूसरे दिन तो अदालतका तमाम ढङ्ग ही बदल गया। यह बात किसे मालूम कि रातभरमें इतना बड़ा भारी परिवर्तन हो गया होगा। 'गुस्ताखी' तो अदालतकी ही थी। किचलूका बयान ठीक उसी तजका था जैसा कि मेरा था। परन्तु वह पद पदपर रोका जाने लगा और मजिस्ट्रेट भी उसे

नही चाहते थे। फिर उन्होने यह जिद पकड़ी कि शङ्कराचार्य्यको यदि बयान देना हो तो खडे होकर ही देना होगा। शङ्कराचार्य्यने धार्मिक कारण बतलाते हुए ऐसा करनेसे इन्कार किया। जब बात यहातक पहुंच गई तब मुझे मजिस्ट्रेटको दो बातें कहनी पडी—पर उनमें कहीं 'क्रोध' का नामोनिशा नहीं था।

मैंने उनसे पूछा कि क्या आप शङ्कराचार्य ऐसे धार्मिक पुरुषको भी, जो तमाम हिन्दुओमें एक अति उच्च पदपर स्थित हैं, अदालतके सामने अपना शिर झुकानेके लिये जिद कर सकते हैं जब कि ऐसा करनेमें उन्हें अपने मतके अनुसार धार्मिक आज्ञाओका उल्लङ्घन करना पडता है? मजिस्ट्रेट साहब पारसी हैं। इन जातिका मूल भारतवर्षके इतिहासमें इस प्रकार मिलता है कि वह इस देशमें अपनी मातृभूमिको छोडकर इसीलिये आई थी कि उसे यह विदित होने लगा था कि कहीं हमें अपने विश्वासके अनुसार ईश्वरीय आज्ञाओंका उल्लङ्घन न करना पडे। मैंने मजिस्ट्रेटसे पूछा— ब्रिटिश अदालतकी प्रतिष्ठा पर तो आपकी इतनी श्रद्धा है क्या ईश्वरपर आपका कुछ भी विश्वास नहीं है? और पत्रोंमें इन सब बातोंका कही जिक्र नही। सिर्फ इतना ही छपा है कि महम्मद अलीने पूछा— "क्या आप खुदाको नहीं मानते?" मेरी इस नम्र बातका जवाब क्या मिला? एक झिडकी भरी आवाजमें यह हुक्म हुआ "बैठ जाओ" मैंने माननेसे इन्कार तो किया, किन्तु यह मैंने

कभी नहीं कहा कि "देखूं तो आप क्या कर सकते हैं।" मैंने न यह कहा कि आप चाहें तो बल प्रयोग कर मुझे बैठा सकते हैं। किन्तु ऐसा कोई कानून नहीं है जिसके द्वारा मुल्जिमको मजबूरन बैठाया जा सके। बिचारे शौकतने मजिस्ट्रेटको सन्तुष्ट रखनेकी अपनी ओरसे भरसक कोशिश की और अपना बयान देते समय बीच बीचमें रोकनेसे भी उसको मना किया गया, क्योंकि ऐसा करनेसे उसके बयान देनेमें बड़ी विघ्न आती थी। किन्तु मजिस्ट्रेटने तो साफ साफ यही इरादा कर लिया था कि मेरे पिछले दिन जैसा एक भी बयान अब कहीं भी अदालतके दफ्तरमें दर्ज न होने पाये और न वह कोर्टमें बैठे हुए सहयोगियोंको और दूसरे आदमियोंके कानतक पहुंचने पावे। जब मौलाना हुसेन अहमद साहबने अपना बयान शुरू किया तब न तो मजिस्ट्रेटने उस दुभाषिये द्वारा जो पहले ही इस्लामी कानूनके निवेचनका तर्जुमा करते समय अपनी असमर्थकता प्रगट कर चुका था, उसका तर्जुमा करवा लिया और न खुद भी यह समझनेकी कोशिश की कि मौलाना साहब अपने बयानमें क्या कहते जा रहे हैं। और न कुछ लिखा ही। इतनेपर वे नहीं ठहरे। पहले तो उनकी लापरवाही ही कुछ कम गुस्ताखी नहीं थी, फिर उसमें उन्होंने कुछ अपमानकारक वचनोंको और जोड़ मिला। एकबार उन्होंने कहा—"यहांपर तमाम कुरान पढ़ जानेकी जरूरत नहीं है।" मौलाना निसार अहमद साहबके छोटेसे बया-

को भी वही हालत की गई। मजिस्ट्रेट साहब तो कानूनकी ोर जाब्ता कार्रवाईकी इतनी लापरवाही करते कि थे मेरा वह ा बयान (जिसके पूरा कर देनेका वचन मैंने उनके अनुरोध रनेपर और उनके शार्ट हैण्ड टाईपिस्ट भेज देना मंजूर करने : दिया था) बगैर लिये ही हमको उन्होंने दौरा अदालतके ुपुर्द कर दिया। किन्तु वह तो सब पहलेहीसे एक फांसी नेका इरादा था। उसके दूसरे दिन जब कि मुकद्मेका बूत आधा भी न होने पाया था कि मजिस्ट्रेटने सरकारी कीलकी इस दरख्वास्तपर कि दो गवाहोंकी तलबी की ंय, यह हुक्म दे दिया कि अब ख्वामख्वाह कार्रवाई बढ़ानेसे छ फायदा नहीं, दौरा अदालतमें भी इनको तलबी होनेसे काम ल जायगा। मजिस्ट्रेट साहब तो इस प्रकार फैसला पहले दे चुके !! और तारीख २६ को मुकद्मेकी कार्रवाई खतम नेके पहले ही खुद जुडीशियल साहब यह देख भाल करनेके ये आये कि यह हाल दौराके कामके लिये ठीक होगा या ीं और सरकारी वकीलसे भी उस मामलेमें बात चीत कर ये !!!

मैंने अदालतसे कहा कि 'फांसी देनेका तख्ता भी तैयार र रखनेके लिये बढ़ईको बुलवा लीजिये न।' इस्लामी ानूनका तो जहां कहीं जरा भी नाम निकला कि मजिस्ट्रेट ाहब घबराकर कह बैठते कि "यहांपर हमें फतवाओंसे कोई ास्ता नहीं है।" इसपर फिर शौकत बिगड़ उठा और उसने

कहा कि आप हमसे बेमतलबका बातें क्यों पूछा करते हैं? मुझसे आप यह पूछिये कि ऐसे मौकेके लिये इस्लामके कानूनोंकी क्या आज्ञा है।' पर इससे भी कुछ मतलब नहीं निकला। यह देखकर शौकत भी अधिक धीरज न रख सका। उसने कहा—"जहन्नुममें जाय यह सारा तमाशा।"

बस इतनी कार्रवाई खतम होनेपर मजिस्ट्रेट साहब थोड़ी देर आराम करनेके लिये बाहर चले गये और आप न मानेंगे पर जब वे वापिस लौटे तो बिलकुल ही नये आदमी बन गये थे। शौकतपर और मुझपर जब दूसरे मुकदमे चलाना शुरू हुये तब तो वे फिर एक बार उस तीसरे दिनके जैसे बन गये थे। कह नहीं सकते कि यह दूसरा पलटा कैसे हो गया कि अदालतकी (और साथ ही मुल्जिमोंकी भी) स्वाभाविक स्थितिका ख्याल तो आप इसी दरसे कर सकते हैं कि आखिरी दिन सरकारी वकील बड़ी जल्दीसे मेरे पास आये और कहने लगे कि क्या "आप फिर बराय मेहरबानी अदालतमें चल सकते हैं? एक गवाहने बिलकुल गलत बयान दिया है और मैं चाहता हूं कि वह फिर बुलाया जाय।" मैंने तुरन्त मंजूर किया और कहा 'ठीक है' जैसा आप चाहें और जब सी० आई० डी० के रिपोर्टरने कसम खा कर यह कबूल किया कि मैं जो बयान लिख रहा था वह महम्मद अलीके ही भाषणका था। तब मैंने हसते हसते मजिस्ट्रेट साहबसे यह कहा कि गवाहने पहले झूठी कसम खाकर कह दिया था मेरा

भाषण तो दूसरा था। अतएव इसपर मामला चलानेका मैं अपना हक छोड देता हूं" और इस बातके लिये मजिस्ट्रेटने भी हसते हंसते मेरे प्रति कृतज्ञता प्रगट की। यह बात है और उसे हम सब लोग जानते हो हैं कि मजिस्ट्रेट साहब तो एक बोलता चालता पुतला था। उस महत्वके दिन मैंने तो उन्हें कह भी दिया था कि मुझे यह देखकर बड़ा दुःख हो रहा है कि मेरे ही एक देश भाईका उपयोग एक घृणित कामके लिये किया जा रहा है परन्तु मेरे यह कहनेके दूसरे दिन तो वे खूब 'बाधी भरे हुये' आये थे। पीछेसे मुझे मालूम हुआ कि जिन लोगोंसे उन्होंने अपनी वफादारी और 'जी हुजूर गिरी' की तारीफकी आशा की थी उन्होंने भी इस बातपर खेद प्रगट किया कि मजिस्ट्रेटने कानून और जाब्ता कार्रवाईको ताकमे रख कर ऐसे ऐतिहासिक महत्वपूर्ण राजनीतिक मुकद्मेको बिगाड डाला, क्योंकि यह उनको रायमें इन सुधारोंके युगमें न्यायका एक आदर्श बनाया जानेवाला था। इसलिये तो इलाहाबादसे मि० अलस्टन और एक आलिम इस मामलेको भरसक बनानेके लिये आनेवाले थे और लाहोरसे दुभाषिया भी आ रहा था। पर यह तमाम मामला तो एक खासा फार्स था। अब तो वह किसी तरह सुधर नहीं सकता। हमें न तो गुस्ताखी करनेकी इच्छा है और न हमने शरारत ही करनी दिलमें ठानी है। तो हम ऐसे गूंगे जानवर तो नहीं हो सकते कि जिधर कोई हाक ले जाय उधर चले ही चलें

जार्य । और अहिंसा भी ऐसा वकरी वना देना नहीं चाहती। कयामतके दिन हिंसाको वहुतसी वातोंका जवाब देना होगा और वहुतसे मुसलमानोंकी आखें उस रोज खुल जायँगी जब उनकी करनीके अनुसार हिंसाकी परिभाषा वनाई जायगी। परन्तु उसके साथ ही अहिंसाकी कई वातोंके लिये जवाब देना होगा और मैं अभीसे देख रहा हूं कि उसके आचार्य अहिंसा देवीके उन कई भीरु उपासकोंका भ्रम दूर करनेका प्रयत्न कर रहे हैं जो दिव्य नामकी ओटमें कायरताको छिपानेका यत्न कर रहे हैं।

जेलमें तपस्या

कराचीसे डाकके जरिये एक तार आया है। उससे मालूम होता है कि जेलमें मौलाना महम्मद अलीका वजन ३५ पौंड कम हो गया है। मजिस्ट्रेट और डाक्टरके कहनेपर भी उनके कमरेमें रोशनी नहीं की जाती। उन्हें मधुमेहकी वीमारी है। उसके लिये डाक्टरकी वताई सुविधायें उन्हें पूरी पूरी नहीं मिल रही हैं।

मौलाना शौकतअली, डाक्टर किचलू, मौलवी निसार अहमद पीर गुलाम मजदीदको कहा गया कि अपनी जामा तलाशी देनी होगी। इसमें वदन पर एक लगोटी भर रहने दी जाती है और

अपनी बगल और मुंह भी खोलकर दिखाना पड़ता है। उन्होंने इस तरह बेइज्जत होनेसे इनकार किया। इसपर जबरदस्ती उनकी जामा तलाशी ली गई और एक महीने तक काल कोठरी-में रहनेकी सजा दी गई। मौलवी निसार अहमदको तलाशी नमाज पढते वक्त ली गई। पूर्वोक्त सज्जनोंने जेलके अधिका-कारियोंसे कहा कि इस मामलेको सरकार तक पहुंचाओ, पर उसने इनकार कर दिया। मौलाना शौकत अलीका वजन ४० पौंड कम हो गया है।

इससे यह सिद्ध है कि सरकारकी ओरसे ऐसा सङ्केत किया गया होगा, जिससे विवेकके साथ काम करनेकी नीतिके बजाय जेलके कानून कायदोंको सखतीके साथ बरतनेकी नीति काममें लाई जा रही है। जरा खयाल कीजिये मौलाना शौकत अली या दूसरे उच्च हृदय पुरुष जेलरके अथवा एक दूसरेके सामने प्राय नंगे खड़े रहें और उनकी जामा तलाशी ली जाय कितनी बेइज्जती! हां, पक्के मुजरिमोंकी जामा तलाशी लेना कितना आवश्यक और उपयोगी है, यह तो मैं समझ सकता हूं और जेलके ये मामूली कानून कायदे उन्हीं लोगोंके लिये बनाये भी गये हैं, परन्तु ऐसे लोगोंसे जो, राजनैतिक आन्दोलनकी बात छोड दीजिये, सभ्य नागरिक माने जाते हैं और जिनमेंसे कुछ लोग तो विख्यात देश सेवक समझे जाते हैं, ऐसे कानून कायदोंका पालन जबरदस्ती करवाना सिवा पागलपनके और क्या हो सकता है? ऐसे कैदियों पर इन मामूली नियमोंका

अमल करना असली बातकी अवहेलना करना है और आपत्तियोंको न्योता देना है। हां, जेलकी मामूली मर्यादाका पालन तो बड़ेसे बड़े आदमीसे भी, जब कि जेलमें आवे, जरूर कराया जाय और जब वे जान बूझकर जेलको स्वीकार करते हैं तब तो और भी अधिक उसका पालन उनसे कराना चाहिये। जेलके जीवनमें जो जो कष्ट हैं वे तो उन्हें अवश्य भोगना चाहिये और उसपर उन्हें नाक भौंह न चढ़ाना चाहिये। यदि वे स्वेच्छापूर्वक और खूबीके साथ जेलके अधिकारियोंसे अदबसे पेश न आवें तो यह उनसे जरूर कराया जाय परन्तु मर्यादा पालन बेइज्जतीके रूपमें न परिणत हो जाना चाहिये। कष्ट, यन्त्रणा का रूप न धारण कर ले और अदबका अर्थ 'पेटके बल चलाना' न हो जाय। और इसलिये असहयोगी कैदियोंको चाहिये कि वे बेड़ियों और हथकड़ियोंसे, कालकोठरीमें रहनेसे, चाहे कितना ही कष्ट क्यों न हो या चाहे उन्हे गोली ही क्यों न मार दी जाय, 'मर्यादा'के नामपर भी कभी जेलरके सामने नगे न हों, जेलके कष्टके नामपर मैले, बदबूदार कपड़े हरगिज न पहनें और गंदा या हजम न होने लायक खाना न खाय और इस तरह 'अदब'के नामपर हाथ न जोड़ें, दबकर न बैठे और जब कोई जेल अफसर आवे तब अपने मुंहसे हरगिज न कहें कि 'सरकार एक है' या 'सरकार सलाम।' और यदि सरकार अब जेलोंमें हमें आग पर चलाना चाहती हो और हमें झुकानेके लिये शारीरिक कष्ट दे, तो हमें अदबके साथ इस तरह बेइज्जत होनेसे

इनकार करना चाहिये और ईश्वर पर अपना भरोसा रखना चाहिये कि इस जान बूझकर की जानेवाली वेइज्जतीका मुकावला करने और उसके वदलेमें मिलने वाली शारीरिक यातनाओंको सहन करनेका वल वह दे। अच्छा है, वीर अलीभाइयों और उनके साथियोंको कराची जेलको शुद्धि करने दीजिये। स्वाभिमानी सिंधी अध्यापक क्रिपलानी काशीके कैदखानेको पवित्र करें। मुझे मालूम हुआ है कि वनारस जेलमें असहयोगी कैदियोंकी ऐसी वेइज्जती की जा रही है जिसे जवान वयान नहीं कर सकती और अध्यापक क्रिपलानी तथा उनके विद्यार्थियोंके लिये, जो कि वनारस जेलमें सजा भोग रहे हैं, उसका सामना करना असम्भव हो गया है। यह वात समझमें नहीं आती कि संयुक्त प्रान्तमें जहा कि राजनैतिक कैदियोंके साथ सरकारका वर्ताव आदर्शरूप माना जाता है, एक ओर आगरा और लखनऊमें तो वैसा ही है जैसा कि चाहिये, परन्तु दूसरी ओर वनारस में तथा अन्यत्र उसके विपरीत हो। क्या इसका यह अर्थ है कि स्थानीय अधिकारी वसके वाहर हो गये हैं और आला अफसरों के हुक्मकी परवा नहीं करते तथा खुदही कानून वन वैठे हैं? इन घटनाओंसे लोग इस वातका अनुमान कर लें कि भारतकी जेलोंमे अपराधी लोग किस तरह कष्ट भोगते होंगे, जिनका पता हमें नहीं है। मैं यह नही जानता कि केवल राजनैतिक कैदियोंके साथ ही ऐसा व्यवहार किया जाता है वल्कि इसके खिलाफ, मेरी तो यह धारणा है कि सच्चे मुजरिमोंके साथ

तो और भी बुरा बर्ताव किया जाता है, क्योंकि वे तो जेलोंमें आसानीसे दवा दिये जा सकते हैं। जेलर और वार्डर तो प्राय बेजवाबदेह होते हैं। वे मनमानी करते हैं और अपराधियोंके साथ बड़ी निर्दयतासे व्यवहार करते हैं। हम लोगोंको, जिन्होंने कि आजतक अपने अज्ञान अथवा स्वार्थके वश इस शासन प्रणालीको सहायता पहुचाई है जिसमें कि एक मुट्ठी भर लोगोंने लाखों मनुष्योंको अपना गुलाम बना रखा है, उस जगत्कर्ताके सामने उन तमाम भीषण कार्योंके लिये—वे दुष्कृत्य जो दिन दहाडे नहीं किये गये हैं और यदि आज इतने असहयोगियोंका बलिदान न हुआ होता तो जिनका पता किसीको न हुआ होता जवाब देना होगा, जो कहनेको तो कानून और शान्तिके नाम पर, परन्तु वास्तवमें इन मुट्ठीभर लोगोंके स्वार्थके लिये, मनुष्य जातिके खिलाफ किये गये हैं।

अस्तु, जैसा कुछ सलूक हो, होता रहे जो लोग जेलोंके बाहर हैं उनका कर्त्तव्य स्पष्ट है। हमें इससे बिगड न उठना चाहिये और जल्दीमे अथवा गलतीसे कोई काम न कर बैठना चाहिये। हमें ऐसी शासन प्रणालीसे काम पड गया है जो सड गई है और उसमेंसे मवाद बह रहा है और उसने सारी मनुष्य जाति, क्या अगरेज और क्या भारतीयको नीचे गिरा दिया है। हम तो सचमुच रोगका इलाज कर रहे हैं। मैं यह नहीं मानता कि अगरेज या हिन्दुस्तानी दोनोंमेंसे कोई भी बुद्धि पूर्वक ऐसे पैशाचिक कार्य करते हैं। बल्कि, इसके विपरीत,

मुझे तो विश्वास है कि वे जानते ही नहीं है कि हम क्या कर रहे हैं। यह तो निश्चित है कि वे यह ख्याल नहीं करते हैं कि हम कोई बुरा काम कर रहे हैं। और यह भी बहुत मुमकिन है कि बहुतसे लोग यह भी सोचते हों कि बाज मौकेपर इस तरह भय दिखाना भी सदय व्यवहारका ही एक अङ्ग है, जैसे हममेंसे कितने ही लोग अधीर होकर मामूली व्यवहारोंमें ऐसी ऐसी बातें कर बैठते हैं जिनका समर्थन हम 'आवश्यकता'के नामके सिवा, जो कि सत्यका आभास-मात्र है, दूसरी तरह नहीं कर सकते।

इतना लिख चुकने पर मालूम हुआ है कि अलीभाइयोंकी जामा तलाशी जबरदस्ती ली गई और उन्हें कालकोठरीकी सजा दी गई। जो सख्स वहा तैनात है वह उनके साथ बुरी तरह पेश आता है। यदि यह सब सच हुआ तो मुझे अत्यन्त दुख होगा। यह समझा जाता था कि सरकार नामी नामी देश सेवकोंके साथ जेलोंमे पूर्ण भलमन्सीका बर्ताव करेगी और वहा किसी तरह उनका अपमान न किया जायगा। पर यदि अलीभाइयोंके प्रति किये गये दुर्व्यवहारकी बात सच निकली तो इसका फल स्वरूप यदि सरकारके खिलाफ उससे उग्र आन्दोलन खड़ा हो जाय तो सरकारको इसके लिये खुद अपनेको ही धन्यवाद देना होगा।

मालूम होता है कि ईश्वर असहयोगियोंकी पूरी पूरी परीक्षा कर लेना चाहता है। मैं जानता हूं कि अली भाई बड़े बहादुर हैं

और वे इस अग्नि -परीक्षामें अटल रहेंगे और बेदाग निकलेंगे। कराचीमें जितने कैदी हैं वे सब चुनीदा लोग हैं और अपना निपटारा आप करनेका सामर्थ्य रखते हैं। तो भी अली भाइयों, डा० किचलू, पीर गुलाम मजद्दिद तथा दूसरे सज्जनोंका जो अपमान किया जा रहा है उससे लोगोका दिल दहले बिना न रहेगा। परन्तु इस सब निरर्थक सन्ताप और उत्तेजनाके होते हुए भी हमें संयमसे काम लेना चाहिये। हमारी मुक्ति तो आखिरकार हमारी प्रतिज्ञाके पूर्ण पालन पर ही अवलम्बित है। यदि हमको इस बातसे दुःख होता हो तो हम और अधिक शान्ति परायण हों, कम नहीं, सविनय कानून भङ्गमें अपनी शक्ति अधिक एकाग्र करें, सविनय भङ्गके लिये आवश्यक शर्तों-की पूर्ति करनेमें जरा भी देर न लगावें। हिन्दू मुसलमान तथा दूसरी जातियां परस्पर अधिक एक हो जायं, अब भी जो कुछ विलायती कपड़े हमारे पास हों उन्हें त्याग दें, अधिक खादी बुनने और चरखा कातनेमें लग जायं। व्यर्थके लिये झल्लाने और बक झक करनेमें हमारा एक मिनट भी न जाना चाहिये। हमारी प्रगति तो अपने कार्यक्रमके अनुसार चुपचाप काम करने पर अवलम्बित है। जो लोग जेलमें हैं उनके साथ होने वाले दुर्व्यवहार पर हमें हैरान और परेशान न होना चाहिये। व्यवहारके सम्बन्धमें सरकारने हमसे कोई शर्त नहीं कर ली है। हमने तो बिना किसी शर्तके अपने शरीर उसके अर्पण कर दिये हैं यह चाहे तो उनके टुकड़े टुकड़े कर डाले और यदि ईश्वर

हमें शक्ति दें तो, हम सी तक न करें। चाहे जो हो जाय, पर हमें अपने आपेसे वाहर न होना चाहिये।

स्वराज्य पार्लिमेण्ट

(नवम्बर १०, १६२१)

गत ४ नवम्बरको देहलीमे वर्तमान अखिल भारत राष्ट्रीय महासभा समितिकी आखिरी बार बैठक हुई। देहलीके प्रसिद्ध हकीमजी अजमलखानकी देख रेखमें सारा प्रवन्ध था। उनकी तबीयत अलील है और आपको कुछ समयतक आराम करनेकी सख्त जरूरत है। लेकिन वे इस समय आराम करना नहीं चाहते। उनका विशाल भवन और डाक्टर अनसारीका मकान खासी धर्मशालाये हो रही हैं, जहा महमानोंके ठहरनेका इन्तजाम किया गया है—फिर वे चाहे हिन्दू हों या मुसलमान। हिन्दुओंके धार्मिक विचारोंका पूरा खयाल रखा जाता है। जो लोग मुसलमानके घरमें पानीतक नहीं पी सकते उनके लिए अलहदा स्थान तजवीज किये गये हैं। यहां देहलीमें हिन्दू मुसल्मान एकताका प्रत्यक्ष व्यवहार दिखाई देता है। यहाके हिन्दू हकीमजीको कामिल तौरपर कृतज्ञतापूर्वक अपना नेता मानते हैं और यहातक कि अपने धार्मिक हितोंकी रक्षा भी उनके हाथोंमें सौंप देनेमें नहीं हिचकते।

अखिल भारतीय महासभा समिति जनताकी पार्लिमेण्ट है, जिसको वह हर साल चुनती है। उसका महत्व और प्रतिनिधि स्वरूप प्रतिवर्ष बढता आया है, और आज तो वह उन तमाम बालिग लोगोंका 'मुख हो' गई है, जो चाहे किसी मजहबके पाबन्द हों, या किसी दलसे ताल्लुक रखते हों, पर सिर्फ ।) देकर महासभाका ध्येय स्वीकार करते हों और जिन्होंने अपना नाम महासभाके रजिस्टरमें दर्ज करा लिया हो। प्रतिनिधियोंमें तो दरअसल हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख और ईसाई लोग हैं। पारसी और यहूदी लोग भी शामिल हैं या नहीं, यह मैं नहीं जानता। स्त्री प्रतिनिधियोंका सख्या भी अच्छी है। 'पचम' प्रतिनिधि भी हैं। अगर किसी समाजके लोगोंके प्रतिनिधि कम हों तो इसमें दोष उन्हीका है। तमाम प्रतिनिधि अवैतनिक हैं—वेतन नहीं लेते और अपने ही खर्चेसे अधिवेशनोंमें शरीक होते हैं और भोजन और स्थानका खर्च भी खुद ही बरदाश्त करते हैं। जो शहर समितिको निमन्त्रित करता है उसके निवासी जो प्रतिनिधियोंका स्वागत और सत्कार करते हैं यह उनकी उदारताका लक्षण है। यह विधि अच्छी है। परन्तु महासभाके नियमके अनुसार उनके लिये यह कोई कैद नहीं है। अधिकाश निर्वाचित प्रतिनिधि तीसरे दरजेमें सफर करते हैं और मामूली आराम पाकर सन्तुष्ट रहते हैं।

जनताकी इस पार्लिमेण्टका भवन था बस एक

शमियाना और सजावटका सामान था कुछ पौधे और लता पत्र। हा, कुरसिया और मेजें लगाई गई थीं, पर मैं समझता हू, वह इसलिए कि जहा पेण्डाल था वहां धूल उडती थी, कुरसियों और मेजोंके द्वारा उससे बचाव और सफाईकी सम्भावना थी। सभापतिकी मेजपर पीला रङ्गा हुआ खादीका कपडा 'टेबुल क्लाथ' का काम दे रहा था। प्राय सब प्रतिनिधि क्या स्त्री और क्या पुरुष मोटी खादीके कपडे पहने हुए थे, और कुछ इनेगिने लोग, आजकल जिसे बेजवाडाकी महीन खादी कहते हैं, उसके कपडे पहने थे। पोशाक सीधा-सादा और हिन्दुस्तानी था। इन सब बातोंकी सविस्तर चर्चा मैंने इसलिए की कि अखिल भारतीय महासभा, बहुतेरे लोगोंकी दृष्टिमें, भावी स्वराज्य पार्लिमेण्टका नमूना है। यह हिन्दुस्तानकी सच्ची हालतके अनुकूल ही है। यह भारत भूमिकी दरिद्रता, सादगी और उसकी आबोहवाकी जरूरतोंका थोडा बहुत प्रतिबिम्ब ही है।

अब इसके साथ वहा शिमला और यहा नई देहलीमे जो झूठा दिखावा, शान और फजूलखर्ची होती है, जरा उसका मुकाबला कीजिए।

जैसा बाहर वैसा ही भीतर राष्ट्रका यह अत्यन्त महत्वपूर्ण काम बहुत ही व्यवस्थित और यथोचित रीतिसे बारह घण्टोंमें किया गया। कोई भी ऐसी बात नहीं की गई या करने दी गई जिसकी प्राय पूरी छानबीन न कर ली गई हो। कार्य-

लम्बिनी जातियोंकी एकताका भी उल्लेख किया गया। यह तरमीम अच्छी है, क्योंकि इससे यह जाहिर होता है कि हिन्दू मुसलिम एकता कोई डरावनी बात नहीं है, बल्कि सब जातियोंकी एकताका प्रत्यक्ष चिह्न है।

इस प्रकार यद्यपि समितिमें पूर्ण मतैक्य रहा तथापि इससे यह समझना गलत होगा कि उसमें बाधा या विरोध था ही नहीं। महाराष्ट्र दल एक कार्यक्षम और युद्धाभ्यासी दल है। उसने इस कार्यक्रमको हार्दिक विश्वासकी अपेक्षा महासभाके और बहुमतको माननेके नियमके प्रति अपनी भक्तिके कारण ही स्वीकार किया है। इस कार्यक्रममें उसको पूर्ण विश्वास नहीं है, तोभी आजमाइशके तौर पर उसने उसे अपनाया है। हलकी हलकी बाधाये उपस्थित करके वह अपनी मौजूदगी-का अनुभव कराता है। परन्तु उसकी देशभक्ति इतनी जागृत है कि वह इन बाधाओंको कार्यनाशकी सीमा तक नहीं पहुचने देता। श्रीयुत अभयंकर अपनी दिल दहलानेवाली कठोर वक्तृता द्वारा उसकी किलाबन्दी करते हैं, श्रीयुत अणे अपने शान्त तर्क वादके द्वारा उसकी पुष्टि करते हैं, और श्रीयुत जमनादास मेहता तो इस दलमे बड़े मौजी जीव हैं। वे अपनी विवाद पटुता और बाधक उपायोंके विकासके लिए समितिका बड़े मजेमें उपयोग करते हैं। समिति उनकी बातों पर सजीदगीके साथ विचार नहीं करती और वे भी आपको बता देते हैं कि उससे वसी अपेक्षा नहीं रखते हैं। उनकी बात पर सब लोग

हस पडते हैं और खुद वे भी उसमे सच्चे दिलसे शामिल हो जाते हैं। उनकी बात वही खतम हो जाती है। कार्य्यारम्भके समय यह प्रश्न उठा कि कार्य्यकारिणी समितिका कोई सदस्य तैयार न हो तो दूसरे किसीको सभापति बनाया जाय। तब आपने अपनेको ही सभापति बनानेका प्रस्ताव उपस्थित किया। इससे जलसा खिल खिला उठा। वे कार्यकारिणी समितिके तमाम सदस्योंको माननीय मानते हैं और उनके मानका माप यह है कि उनकी रायमें वे लोग उन अधिकारोंको भी अनुचित रीतिसे निरन्तर अपनी तरफ खीचते हैं, जो उन्हें नहीं हैं। परन्तु इससे पाठक यह ख्याल कदापि न करे कि ये सब बातें किसी बुरे भावसे कही गई हैं। मैंने किसी सभा समाजमें लोगोंको इतनी अच्छी तरह पेश आते हुए और आनन्दविनोद करते हुए नही देखा, और मैं महाराष्ट्र दलको एक ऐसी प्राति मानता हू जिसका गर्व प्रत्येक राष्ट्रको होना चाहिये। मैंने जो इस दलका उल्लेख किया है वह मेरी इस बातको मजबूत करनेके लिये किया है कि महासभा समितिमें ऐसे ऐसे सज्जन हैं जो अपने इरादोंको अच्छी तरहसे जानते हैं और जिन्होंने इस बातका दृढ सकल्प कर लिया है कि भारतमाताको स्वतन्त्रता प्राप्त करानेके काममें हम अपनी सेवाओंका एक अच्छा संग्रह ससारके सामने पेश करेंगे।

ऐसा होता है कि लोग शान्ति धारण किये रहते हैं। ऐसी हालतमें जब कि सरकार इस प्रकार चारों ओर दमन करने पर तुल गई है, अगर कोई यह अनुमान करे कि सरकार लोगोंको झगडा फसाद करनेके लिए उसकाना चाहती है, तो कौन आश्चर्य-की बात है ? इन पूर्वोक्त उदाहरणोंमें एक भी ऐसा नहीं है जहा किसीके उन लेख या भाषणोंके कारण कहीं भी हिसाका उद्रेक हुआ हो। इस प्रकार हम देखते हैं कि सरकार खुद अपने ही बनाये कानूनोंका भङ्ग करनेकी गुनहगार हो रही है। और उन पीडित दुखी व्यक्तियोके पास सरकारके खिलाफ कौनसा कानूनी उपाय है ? सचमुच जव किसी नीच उद्देशकी पूर्तिके लिए कोई सरकार अपने बनाये कानूनका खुद ही व्यभिचार करती है तव कानूनमें उसके खिलाफ आवाज उठानेके लिये कोई व्यवस्था नहीं है। इसलिए जव सरकार कानूनकी अवहेलना करके सङ्गठित रूपसे मनमानी करने लगती है तव विशेषत उन लोगोंके लिए सविनय कानून भङ्ग एक पवित्र कर्तव्य हो जाता है जिनका कि हाथ उस सरकारको या उसके कानूनको बनानेमें नहीं था। हा, एक दूसरा भी उपाय है और वह है- -सशस्त्र वलवा। और इस सविनय कानून भङ्गको उसका पूरा, कारगर और शान्तिमय-रक्तपात-हीन स्थान-पूरक समझिए। और यह भी अच्छा ही है कि हमने उदाहरणीय सयम और नियमवद्धताके द्वारा जोकि उनके उन अन्याय-युक्त ही नहीं वल्कि गैरकानूनी हुक्मोका भी पालन करनेमें दिखाई है, ठीक वैसी ही परिस्थिति तैयार कर ली है जो

सविनय कानून भङ्गके लिए आवश्यक है। इसका फल यह हुआ है कि एक ओर तो इस सरकारकी जुल्मी प्रवृत्ति अधिक जाहिर तौर पर दिखाई देने लग गई है और दूसरी ओर खुशी आज्ञापालन न करके हमने स्वय अपनेको सविनय कानून भङ्गके लिए योग्य बना लिया है।

साथ ही यह भी उतनी ही अच्छी बात है कि अब भी सविनय कानून भगका क्षेत्र भरसक मर्यादित ही किया जा रहा है। हा, हमें मानना होगा कि जिस तरह कोई भ्रष्ट और प्रजा निन्दित सरकार किसी सभ्य—समुन्नत समाजमें रोगकी तरह एक अस्वाभाविक वस्तु है उसी प्रकार कानूनका सविनय भंग भी एक असाधारण स्थिति है। इसलिये जिस नागरिकने राज्य के कानूनका स्वेच्छापूर्वक पालन करनेके विषयमें पूरी पूरी तालीम पाई है वही विरले प्रसङ्गोंपर जान—बूझ कर परन्तु विनय पूर्वक कानूनका भङ्ग करके सजा प्राप्त करनेका अधिकारी हो सकता है। इसलिए यदि हमें थोड़ेसे थोड़े समयमें अधिकसे अधिक काम करना हो तो जबतक एक परिमित क्षेत्रमें भयंकरसे भयङ्कर कानून भग चल रहा हो तब तक दूसरे भागोंमें कानूनका पूरा पालन होना चाहिये, जिसमें कि देशकी स्वेच्छापूर्वक आज्ञापालनकी शक्ति और सविनय कानून भंग खूबीकी जाच एक ही साथ हो जाय। इसलिए देशके भी दूसरे भागमें अगर आवश्यक अधिकार और [illegible] बिना कानून भगकी थोडी भी शुरुआत [illegible] तो [illegible]

न्यायको बड़ी हानि पहुँचेगी और सविनय कानून भंगके सिद्धान्तोके सम्बन्धमे हमारा अक्षम्य अज्ञान प्रगट होगा।

हमें यह जरूर ध्यानमें रखना चाहिये कि सरकार अपनी सत्ताके इस भङ्गका, जो कि शीघ्र ही शुरू किया जाने वाला है, दमन करनेके लिए कठोरसे कठोर उपायोंको काममे लावेगी, क्योंकि उसका सारा अस्तित्व उसीपर अवलम्बित है। निरी "आत्मरक्षा" की स्वाभाविक प्रेरणा ही उससे ऐसी दमन नीतिका अवलम्बन करावेगी जो उसके मिटानेके तकके लिए काम देगी और यदि उसने ऐसा न किया तो सरकारका सर्वनाश निश्चित है। अर्थात् या तो उसे देशके लोकमतके सामने सिर झुकाना होगा या विसर्जित हो जाना पड़ेगा। उसकाये जाने पर भी कहीं हिंसाका जरा उद्रेक हो जाय तो यही सबसे बड़ा खतरा है। अगर ऐसा हो तो इससे हमारी अहिंसाकी प्रतिज्ञाका तो भङ्ग निश्चित रूपसे होगा ही, परन्तु इस प्रकार एक बार सोच समझकर इरादे करके जालिमसे लड़ाई ठानकर कठोर से कठोर दमनका आवाहन करनेके बाद उससे उत्तेजित होकर उन्मत्त होजाना केवल अनुचित ही नहीं, बल्कि हमारी मर्दानगीको भी बट्टा लगानेवाला है। शायद मैं गिरफ्तार कर लिया जाऊं और, साथ ही, इस शांतिमय बलवेमें भाग लेनेवाले दूसरे हजारों भाईभी गिरफ्तार किये जाय, जेलखानोंमें डाले जाय और उनको भीषण यातनाएं भी दी जाय, तथापि भारतके दूसरे भागोंको अपनी विचार शक्ति न खो बैठना चाहिये। समय आते

ही वे भी सविनय कानून भङ्ग शुरू करें और गिरफ्तारी, कैद और जुल्मोंका आवहान करें। हमें केवल निरपराध लोगोंका ही बलिदान करना है। केवल ऐसे बलिदान ही परमात्माके यहा मंजूर होंगे।

इसलिये उस भारी जङ्गके पहले जो देशमें शीघ्र ही छिड़नेवाली है कि वह देहलीके प्रस्तावकी हर एक शर्तका अक्षरशः पालन करके सविनय कानून भङ्ग करनेकी योग्यता प्राप्त करें और चारों ओर अहिंसा और शान्तिका वायुमण्डल तैयार कर दें। हमें केवल इतनेपर ही सन्तोष न मानना चाहिये। कि हम व्यक्तिश शान्ति भङ्ग न करेंगे। हम तो यह दावेके साथ कहते हैं कि असहयोग तमाम हिन्दुस्तानमें फैल गया है और हम यह भी कहते हैं कि हमने भारतके उन निरङ्कुश लोगोंके दिलपर भी इतना अधिकार कर लिया है कि उनको भी हम हिंसासे हटा सकते हैं। तो हमें अपनी बात सच्ची कर दिखाना चाहिये।



स्वराज्यकी तयारी

(नवम्बर १०, १६२१)

अगले कुछ सप्ताहोंमें, भारतके किसी न किसी भागमें, सविनय कानून भङ्गका प्रत्यक्ष व्यवहार होता हुआ दिखाई देगा। व्यक्तिगत और आंशिक सविनय कानून भङ्गके उदाहरणोंसे तो देश परिचित हो चुका है। पूर्ण सविनय कानून भङ्गको 'बगावत' कहना चाहिये, पर वह ऐसी बगावत है जिसमे 'हिंसा' या मारकाटका नामोनिशानतक नहीं है। पक्का सविनय कानून भङ्ग करनेवाला व्यक्ति राज्यकी सत्ताकी सिर्फ उपेक्षा करता है वह बागी हो जाता है और राज्यके तमाम नीति विरुद्ध कानूनोंके अनादर करनेका दावा करता है। इस तरह, उदाहरणार्थ, वह कर देनेसे इनकार करदेता है, वह अपने दैनिक व्यवहारोंमें राज्यकी सत्ता माननेसे इनकार कर सकता है।। वह मदाखलत बेजा अनधिकार प्रवेश से राज्यनियमकी अवज्ञा कर सकता है और सैनिकोंसे घातचात करनेके लिये फौजी लाइनोंमें जानेका दावा कर सकता है, 'पहरा' रखनेके विधि सम्बन्धी बन्धनोंको माननेसे वह इनकार कर सकता है और मना किये गये मुकामोंपर जाकर 'पहरा रख सकता है, परन्तु इन सब बातोंको करते हुए वह बल

का प्रयोग कभी नहीं करता और जब उसके खिलाफ बलका प्रयोग किया जाता है तब वह उसका प्रतिकार कभी नहीं करता। सच बात तो यह है कि वह स्वय अपने खिलाफ कैद तथा बलके दूसरे प्रकारोंको निमन्त्रितही करता है। वह ऐसा इसलिये और तभी करता है जब वह देखता है कि मेरी शरीर स्वातन्त्र्य, जिसका उपभोग मैं बाह्यत कर रहा हू, अब एक असह्य बोझ हो गया है। वह अपने दिलके सामने यह दलील पेश करता है कि कोई राज्य सिर्फ वहीतक व्यक्ति विषयक स्वतन्त्रताकी इजाजत दे सका है जहातक कि नागरिक उसके कानून कायदोंके आगे सिर झुकाता है। 'राज्यके कानूनको मानना' यह उस आजादीकी कीमत देना है जो नागरिकको होती है। अतएव किसी पूर्ण या अधिकाश अन्यायी राज्यके अधीन होना, स्वाधीनताके लिये अनीतिसूचक बदला करता है। इस प्रकार जो नागरिक किसी राज्यकी दुष्टवृत्तिको समझ जाता है वह उसकी कृपापर सन्तुष्ट नही रहता और इसलिये उन लोगोंकी दृष्टिमें जो उससे मतभेद रखते हैं, वह समाजके लिये एक व्याधि दिखाई देता है, परन्तु वह बिना नीतिका उल्लङ्घन किये राज्यको मजबूर करता है कि वह उसे गिरफ्तार करे। इस दृष्टिसे सविनय प्रतिकार एक आत्माकी यातना प्रगट करनेका और एक दुष्ट राज्यके अस्तित्वके खिलाफ अपनी ऊची आवाज कारगर तौरपर उठानेका बडा ही जोरदार साधन है। क्या ससारके सारे सुधारकोंका इतिहास ऐसा ही नहीं

है ? क्या उन सुधारकोंने, अपने साथवालोंके त्रस्त हो जानेप
उन बिचारे स्थूल चिन्होंतकको नहीं छोड दिया है जि
सम्बन्ध बुरी प्रथाओंके साथ था ?

जबकि लोगोंका एक समुदाय उस राज्यसे अपना सम्ब
छोड देता है जिसमें कि वे अबतक रहते आये हैं, तो इस
अर्थ यह है कि वे करीब करीब अपनी निजी सरकार स्थापि
करते हैं। मैंने "करीब करीब" शब्दका प्रयोग इसलिए कि
है कि जब राज्यकी ओरसे वे ऐसा करनेके लिए रोके जाते
तब वे बलका प्रयोग करनेकी सीमा तक नहीं पहुंच जाते हैं।

किसी व्यक्तिकी तरह उसका 'काम' तो है कैदखानेकी कं
रियोंमें मुंद जाना या राज्यकी गोलिया खाकर मर जाना, ज
तक कि राज्य उसका पृथक् अस्तित्व स्वीकार न कर ले, या दूस
शब्दोंमें, उसकी इच्छाके आगे सिर न झुका दे। इसी प्रक
१९१४ में दक्षिण आफ्रिकामें ३ हजार हिन्दुस्तानियोंने, ट्रान्सवा
की सरकारको आवश्यक नोटिस देनेके बाद, ट्रासवाल इमि
शन ऐक्टको भङ्ग करनेके लिये ट्रासवालकी सीमाको पार किया
और सरकारको उन्हें गिरफ्तार करने पर बाध्य किया था। ज
सरकार उनको मारकाटके लिए उभाडनेमें या दबानेमें सफ
न हो सकी तब उसने उनकी मागें कुबूल कर ली। इसलि
सविनय कानून-भङ्ग करनेवालोंका समुदाय एक ऐसी सेना
जिसके लिये एक सैनिककी पूरी नियम-बद्धता आवश्यक है औ
जो मामूली सैनिक जीवनमें पाई जानेवाली उत्तेजनासे शून्य होने

के कारण, उससे अधिक कठोर है। और चूंकि इस स
प्रतिकार करनेवाली सेनामें बदला निकालनेके विकारका
है अथवा चाहिए, इसलिए उसे थोडेसे सिपाही भी बस हो
इसमें कोई शक नहीं कि सिर्फ एक अकेला ही—"पूर्ण" स
प्रतिकार करनेवाला व्यक्ति अन्यायके मुकाबिलेमें न्यायकी
युद्ध कर विजय प्राप्त करनेके लिए काफी है।

इसलिए, यद्यपि, अखिल भारतीय महासभा समितिने प्र
प्रान्तकी समितिको खुद उन्हींकी जिम्मेदारी पर सविनय क
भङ्ग करनेकी सत्ता दे दी है, तथापि, मैं आशा करता हु
'जवाबदेही' शब्द पर पूरा ध्यान रखेगी और मामूली बात
झकर सविनय कानून-भङ्ग शुरू न करेगी। हर एक शर्तका
अवश्य पूरी तरह होना चाहिए। हिन्दू-मुसलमान ए
अहिंसा, स्वदेशी और छुआछूतको दूर करनेके उल्लेखके मा
है कि वे अभी हमारे राष्ट्रीय जीवनके अभिन्न भङ्ग नहीं हो
हैं। अगर अब भी किसी व्यक्ति समुदायके दिलमें हिन्दू मु
मान एकताके विषयमें कुछ भी खटका बाकी रहा हो, अगर
भी इसमें शक बाकी हो कि हमारे इस तेहरे ध्येयकी सि
लिए अहिंसाकी आवश्यकता है, अगर अबतक उन्होंने स्वदेश
पूर्ण पालन नहीं किया है, और अगर उस
भी छुआछूतके जहरको अपनाये हुए हों तो
सविनय कानून-भङ्गके लिए तैयार नहीं है। हा,
बहुत अच्छी होगी कि जबतक उसका प्रयोग एक

है ? क्या उन सुधारकोंने, अपने साथवालोंके त्रस्त हो जानेपरभी उन विचारे स्थूल चिन्होंतकको नहीं छोड दिया है जिनका सम्बन्ध बुरी प्रथाओंके साथ था ?

जबकि लोगोंका एक समुदाय उस राज्यसे अपना सम्बन्ध छोड देता है जिसमें कि वे अबतक रहते आये हैं, तो इसका अर्थ यह है कि वे करीब करीब अपनी निजी सरकार स्थापित करते हैं। मैंने "करीब करीब" शब्दका प्रयोग इसलिए किया है कि जब राज्यकी ओरसे वे ऐसा करनेके लिए रोके जाते हैं तब वे बलका प्रयोग करनेकी सीमा तक नहीं पहुंच जाते हैं।

किसी व्यक्तिकी तरह उसका 'काम' तो है कैदखानेकी कोठरियोंमें मुंद जाना या राज्यकी गोलियां खाकर मर जाना, जब तक कि राज्य उसका पृथक् अस्तित्व स्वीकार न कर ले, या दूसरे शब्दोंमें, उसकी इच्छाके आगे सिर न झुका दे। इसी प्रकार १९१४ में दक्षिण आफ्रिकामें ३ हजार हिन्दुस्तानियोंने, ट्रान्सवालकी सरकारको आवश्यक नोटिस देनेके बाद, ट्रासवाल इमिग्रेशन ऐक्टको भङ्ग करनेके लिये ट्रासवालकी सीमाको पार किया था और सरकारको उन्हें गिरफ्तार करने पर बाध्य किया था। जब सरकार उनको मारकाटके लिए उभाडनेमें या दबानेमें सफल न हो सकी तब उसने उनकी मांगें कुबूल कर ली। इसलिए सविनय कानून-भङ्ग करनेवालोंका समुदाय एक ऐसी सेना है, जिसके लिये एक सैनिककी पूरी नियम बद्धता आवश्यक है और जो मामूली सैनिक जीवनमें पाई जानेवाली उत्तेजनासे शून्य होने-

यं, पर ऐसी अवस्थामें भी लोगोंसे बिलकुल अचल, शांत औ
स्थिर रहनेकी उम्मीद की जाती है। हम उनसे यह जरूर उम्मी
करते हैं कि वे हरएक खफा होने लायक अवसर पर ऐस
व्यवहार करेंगे जो देशके लिए अभिमान और गौरवक
कारण हो।

स्वयंसेवक दलपर कुठार

(सितम्बर १, १९२१)

बम्बईने प्रान्तिक सरकारोंको यह मौका दे दिया है कि वे
एक नियमके साथ दमनका जोर दिखावें और असहयोगक
जड़ काटनेकी कोशिश करे। बङ्गाल, संयुक्तप्रान्त, पञ्जा
और देहली सरकारोंने स्वयंसेवक मण्डलियोंको छिन्न भिन्न कर
देनेकी जो सूचनायें प्रकाशित की हैं वह बम्बईको सरकारक
जवाब ही है। मैं अपनी तरफसे तो इन सूचना पत्रोंक
स्वागत ही करता हूं। ये सविनय कानून भङ्गको जोरवे
साथ जारी करनेकी जरूरतको ही रफा किये देते हैं। यदि
हम सरकारके इस आह्वानको स्वीकार करनेके लिये तैयार हैं
तो हम जल्द ही अपनी ताकत आजमा सकते हैं। सत्याग्रही
अपने युद्धका अवसर स्वयं आप ही पसन्द करता है, क्योंकि
जबतक वह अपने लिये कानून भङ्ग करना उचित नहीं समझता

है तबतक वे गौरसे देखते रहें और रास्ता देखें। अगर हम उसी सेनाकी उपमाकी भाषामें कहें तो जो टुकडी रुकी रहती है, गौर और इन्तजार करती रहती है, वह भी लडाईमें उतनी ही सक्रिय सहयोग करती है जितना कि वह टुकडी जो वास्तवमें मुठभेड कर रही है। जबकि एक जगह प्रयोग हो रहा है, तब उसके साथ ही व्यक्तिगत कानून भङ्ग करनेका मौका उसी समय आ सकता है, जबकि सरकार स्वदेशी प्रचारके चुपचाप कार्यमें भी बाधा डाले। इस तरह यदि किसी होशियार सूतकारको यह हुक्म दिया जाय कि चरखेके सङ्गठनका या सूत कातनेकी शिक्षा देनेका कार्य मत करो, तो ऐसी आज्ञाका अनादर उसे तुरन्त ही करके जेल जानेकी अवस्था उत्पन्न कर देनी चाहिए।

परन्तु दूसरी अवस्थाओंमें, जहातक कि मैं मौजूदा हालतमे सोच सकता हूं, दूसरे प्रान्तोंके लिए यह सबसे अच्छा होगा कि जबतक एक प्रात सोच समझ कर उसमें अग्रसर हो रहा है और राज्यके भरसक तमाम नीति विरुद्ध नियमोंको विचार-पूर्वक तोड रहा है वे ठीक ठीक तमाम आज्ञाओ और हिदायतोंको मानते रहें और यह कहनेकी तो आवश्यकता ही नहीं है कि उस समय अगर दूसरे किसी भी भागमें जरा भी हिंसाका उद्रेक हुआ, लोगोंकी तरफसे जरा भी खून खराबी हुई, तो इससे उस प्रयोगकी निस्सन्देह बडी ही हानि होगी और शायद वह बन्द भी हो जाय। प्रत्येक प्रातके लोग चाहे जेल भेजे जाय, उन पर गोलिया झाड़ी जाय या हाकिमों द्वारा तरह तरहसे सताये जा-

य; पर ऐसी अवस्थामें भी लोगोंसे बिलकुल अचल, शांत और स्थिर रहनेकी उम्मीद की जाती है। हम उनसे यह जरूर उम्मीद करते हैं कि वे हरएक खयाल होने लायक अवसर पर ऐसा व्यवहार करेंगे जो देशके लिए अभिमान और गौरवका कारण हो।

स्वयंसेवक दलपर कुठार

(सितम्बर १, १९२१)

बम्बईने प्रान्तिक सरकारोंको यह मौका दे दिया है कि वे एक नियमके साथ दमनका ओर दिखायें और असहयोगकी जड़ काटनेकी कोशिश करे। बङ्गाल, संयुक्तप्रान्त, पञ्जाब और देहली सरकारोंने स्वयंसेवक मण्डलियोंको छिन्न भिन्न कर देनेकी जो सूचनायें प्रकाशित की हैं यह बम्बईको सरकारका जवाब ही है। मैं अपनी तरफसे तो इन सूचना पत्रोंका स्वागत ही करता हूं। ये सविनय कानून भङ्गको जोरके साथ जारी करनेकी जरूरतको ही रफा किये देते हैं। यदि हम सरकारके इस आह्वानको स्वीकार करनेके लिये तैयार हैं, तो हम जल्द ही अपनी ताकत आजमा सकते हैं। सत्याग्रही अपने युद्धका अवसर स्वय आप ही पसन्द करता है, क्योंकि जबतक वह अपने लिये कानून भङ्ग करना उचित नहीं समझता

तबतक उसे ऐसा करनेकी आवश्यकता नहीं। सरकार अपनी तरफसे उसे कितना ही उत्तेजित क्यों न करे, वह उससे सविनय भङ्ग नहीं छेड बैठता। यही तो सविनय भङ्गकी खूबी है।

ऐसी अवस्थामे यदि वे प्रान्त जहा ये विज्ञप्तियां प्रकाशित हुई है, तैयार हैं तो उन्हें सिर्फ अपनी स्वयंसेवक मण्डलिया तोडनेसे इनकार करना काफी है। हर एक स्वयसेवक अपनेको जेलमें पहुंचा दे। लेकिन हमें पहले अपनी बुनियाद अच्छी तरह देख लेनी चाहिये। इन मण्डलियोंपर जो आरोप लगाया गया है वह यह है कि वे ऐसी सस्थायें हैं जो वल प्रयोग करती हैं और शान्तिकी रक्षा नहीं करती। अतएव हमारा पहला फर्ज यह है कि हम इस इल्जामकी जाच करें और अगर वह किसी अंशमें हमपर घटता हो तो अपने दोषको बिलकुल निर्मूल कर डालें। जिन स्वय सेवकोंने जबरदस्ती की हो या अपने वचनो और कार्योंके द्वारा वल प्रयोगकी धमकी दी हो तो उन्हें अवश्य अपने कामसे हटा दिया जाना चाहिए।

दैवयोगसे कार्य्य समितिने भी इसी मौकेपर स्वयसेवक मण्डलिया निर्माण करनेका प्रस्ताव स्वीकृत किया है। मुझे आशा है कि प्रत्येक प्रान्तकी महासभा और खिलाफत समितिया इस कामको तुरन्त उठा लेंगी और तमाम स्वय सेवक मण्डलिया एक सूत्रमें ग्रथित हो जायगी तथा जो स्वय सेवक

अहिंसाके सिद्धान्तका कायल न हो वह उसमें न रहने पावेगा। तब यदि इन सस्थाओंके काममें किसी तरह हाथ डाला गया तो हम लडाई छेड सकते हैं। पर इस मुठभेड़की शर्त यह है कि जब स्वय सेवकोंको सजाये दी जाय तब शेष सब लोग खामोश रहें और शान्ति बनाये रखें। ऐसे आनबानके अवसरपर तो हमें बिना शोरगुलके, बिना भीड भक्कड़के जेलोंको भर देना चाहिये। यदि हम चुपचाप कष्ट सहन करनेके महत्वके कायल हो तो हमें अपनी गिरफ्तारी सरकारके लिए आसान कर देनी चाहिए। जब हर दफा हम उसका प्रदर्शन करते हैं और जलूस निकालते हैं तब सरकारको हमारी गिरफ्तारी करना कठिन हो जाता है। जेलकी सजाये तो हमारे मामूली दैनिक व्यवहारकी बात हो जानी चाहिए। जब हम हवाखोरीको जाते हैं या वनभोजन आदिको जाते हैं तब कहीं भीडभडक्का और समारोह नहीं होता। मैं कहता हू कि ऐसी ही उदासीनता जेल जानेके विषयमें भी हमारे मनमें हो जानी चाहिए। मैं अदालतमे बयान देनेके सम्बन्धमें जयकारके इस नियको बहुत अच्छा समझता हू कि एक मसविदा बना ले और सब लोग वैसा ही बयान दें। अगर बयान देने या न देनेमेंसे किसी बातको पसन्द करना हो तो मैं देनेके विपक्षमें अपना मत बिना हिचकिचाहके दे दूगा। जेल जानेसे किसी तरहकी सनसनी न फैलनी चाहिए, क्योंकि सनसनीसे उत्तेजना बढती है और उत्तेजनासे

दंगे फसादकी नौबत आ सकती है और उपद्रव शुरू हो जानेसे निरपराध लोगोंके लगातार जेल जानेके क्रममें गडबडी होती है।

जेल जानेके बनिस्बत शान्तिमय वायुमण्डल बनाये रखना अधिक 'महत्त्वपूर्ण है। अतएव सरकारी आज्ञाओंका उल्लङ्घन करके उद्रेककी जोखिम उठाना और जेल जानेकी जल्दी मचाना किसी भी प्रान्तके लिए ठीक न होगा। अहिंसाको स्थायी रूप देनेतक यदि हमें देर भी लगे तो उससे अन्तमें हमारी कुछ भी हानि न होगी। हमारी स्वराज्यकी क्षमता इसी बातमें है कि हम उन हरएक तजवीजों और बन्दिशोंको, जो हमसे हिंसाकाण्ड मचानेके लिये की जा रही हों—पहले हीसे ध्यानमें ले आवें और उनकी दाल न गलने दें, फिर वे चाहे खुफिया पुलिसके द्वारा की गई हों, अथवा और किसीकी करामात हो।



असली रंग

पञ्जावमें लाला लाजपतराय, मालिकलाल खान, श्री० सन्तानम् और श्री० गोपीनाथ, आसाममें श्री० फूकन और बरदोलाय, बङ्गालमें बाबू जितेन्द्रलाल बनर्जी, अजमेरमें मौलाना मोहियुद्दीन तथा दूसरे सज्जन और लखनऊमें पण्डित हरकरण नाथ मिश्र तथा अन्य सज्जन, आदिकी गिरफ्तारियोंसे सूचित होता है कि सरकार अब अपना सच्चा रङ्ग दिखा रही है। यह पकड-धकड केवल यही दिखलाता है कि सरकार सरगर्मीसे काम ले रही है, बल्कि यह भी कि अब वह असहयोग आन्दोलनको सहन नहीं कर सकती, अब यह केवल मार काटको दबानेका ही विषय नहीं रह गया है,—बल्कि लोगोंको सहयोगके लिए विवश करनेका प्रयत्न है। ठीक है, ऐसा ही चाहिए भी था। किसी न किसी दिन तो सरकारको अपना असली रूप प्रगट करना लाजिम ही था। युवराजका जैसा स्वागत यह।हो रहा है वैसा किसी युवराजका कहीं न हुआ होगा। और इसलिये चुन चुनकर नेता लोगोंकी स्वाधीनताका हरण किया जा रहा है जिससे लोगोंपर सरकारका रोब गठ जाय, वे उसके बताये ढङ्गसे चलें, और जहा जहा शाहजादा जाय वहा वहा उसके पहुचनेके दिन हडताल न होने पावे।

भारत सरकारको, अपने वर्तमान सङ्गठनके अनुसार, यह सब कुछ करनेका अधिकार है। वह उसका दावा भी करती है और समय समयपर अपने अधिकारोंका प्रयोग भी करती है। और इसलिए हम उसके साथ असहयोग कर रहे हैं उसका वह हक क्या है? यही कि लोगोंको अपनी इच्छाके अनुसार जबरदस्ती चलाना और प्रजाको उसकी इच्छाके अनुसार चलनेसे रोकना। जनताको यह बात मजूर न हो तो वह जेलमें जाकर सड़ा करे। मामला साफ है, और लारेन्स साहबके पुतलेके मामलेने उसे बिल्कुल ही साफ तौरपर प्रगट कर दिया है। यह पुतला लाहौरकी म्युनिसिपलिटीकी सम्पत्ति है। कानूनन् उसपर लोगोंका स्वामित्व है। तो भी सरकार उसे वहांसे उठाकर दूसरी जगह नहीं रखने देती। वह या तो कलमके द्वारा शासन करेगी या तलवार द्वारा। एक बार फर लोगोंको पसन्द करनेका यह निमन्त्रण दिया जाता है। अब लोग अपने मान और गौरवपर कायम रहकर सरकारकी तलवारका स्वागत करेंगे या उसकी कलमके शासनके सामने शिर झुकाकर अपनेको नीचे गिरावेंगे?

लोगोंको असहयोगका पाठ पढ़ते पढ़ते १५ महीने हो गये। इतनेपर भी यदि वे यह न जान पाये हो कि इस समय हमे क्या करना चाहिए तो उन्हें शिकायतके लिए जगह नहीं है। हा सबसे अच्छी बात जो वे कर सकते हैं, वह यह है कि वे कुछ

न करें अर्थात् वे जैसे थे वैसे ही बने रहें और अपने तमाम काम इस तरह करते रहें मानो कोई असाधारण बात हुई ही नहीं है। लार्ड किचनरके मर जानेसे इंग्लैण्डने युद्धसे मुह नहीं मोड लिया। उसका तो यही सिद्धान्त वाक्य था—'जो काम जैसा चल रहा है वैसा ही जारी रहे।' उसका हिसाबल सुसङ्गठित था—इतना कि विना ही सेना नायकके, अथवा लगातार एकके बाद दूसरे सेना नायकको प्राप्त करके अपना काम चला सके। क्या हमारे अहिंसा बलका इतना सङ्गठन हो गया है कि हम विना ही नेताके अर्थात् लगातार एकके बाद दूसरा नेता प्राप्त करके, अपना युद्ध जारी रख सकें।

लाला लाजपतरायको गिरफ्तार क्या किया, सरकारने हमारे एक बडेसे बडे मुखियाको पकड लिया है। उनका नाम भारतके बच्चे बच्चेकी जबानपर है। अपने स्वार्थ त्यागके कारण वे अपने देश भाइयोंके हृदयमें उच्च स्थान प्राप्त कर चुके हैं। अहिंसाके प्रचारके लिये और उसके साथ ही लोकमतको सङ्गठित और प्रगट करनेके लिए उन्होंने जितना परिश्रम किया है उतना बहुत ही थोडे लोगोंने किया है। उनकी गिरफ्तारीसे सरकारकी नीति या वृत्तिका जितना सच्चा पता चलता है उतना दूसरी किसी बातसे नहीं।

पञ्जाबने तुरन्त ही उनकी जगहपर अपना दूसरा नेता चुन लिया। उन्होंने आगा सफदरको अपना अगुआ बनाया है। पञ्जाबी भाइयोंको उनसे अच्छा नेता नहीं मिल सकता था।

वे एक सच्चे मुसलमान और एक वीर हिन्दुस्तानी हैं। उन्होंने जितनी सावायें की हैं वे सब अज्ञात रूपसे की हैं। मुझे इस बातमें जरा भी सन्देह नहीं है कि लोग लालाजीकी तरह ही सच्चे हृदयसे उनका साथ देंगे। पञ्जाबी भाई लालाजीका बड़ेसे बड़ा गौरव जो कर सकते हैं वह यह है कि वे यही समझकर कि लालाजी हमारे साथ ही हैं, उनका काम बराबर आगे बढाते रहें। वह प्रेम जो कि अविनाशी आत्माको धारण करनेवाले इस कलेवरके कुछ दिनोंके लिये अथवा हमेशाके लिए जुदा हो जानेके बाद घट जाता है, अंधा, मूढ और स्वार्थी प्रेम है। सम्भव है, पञ्जाबी भाई हमेशा ही लालाजीकी जगहपर किसी आगा सफदरको अपनी रहनुमाईके लिए न पावें। मुमकिन है कि हमारी धारणासे भी पहले ही वे हम लोगोंसे जुदा कर लिये जाय। जिन सस्थाओंका सङ्गठन अच्छा होता है वहा नेताओंका चुनाव केवल कार्यकी सुविधाके लिए किया जाता है, किसी असाधारण गुणके लिये नहीं। नेता क्या है? अपने बराबरीवालोंमें आगे आगे रहनेवाला आदमी। किसी न किसीको तो आगे रखना ही चाहिए। परन्तु यह कोई जरूरी बात नहीं है कि वह जञ्जीरकी तमाम कमजोरसे कमजोर कडियोंसे अधिक मजबूत हो। परन्तु एक बार चुनाव कर लेनेके बाद हमारे लिए उसका अनुसरण करना लाजिम है, अन्यथा जञ्जीर टूट जायगी और सब कुछ नष्ट हो जायगा।

हमें अपने ध्येयतक पहुंचनेके लिये अब बहुत कुछ करना बाकी नहीं रहा है। मैं अपना यह विश्वास लोगोंके दिलमें पहुंचा देना चाहता हूं। हमारा रास्ता बिलकुल साफ है। आगामी महासभाके निर्वाचित सभापति देशबन्धु दासने उसे असंदिग्ध शब्दोंद्वारा बताया है—"मेरा पहला और आखिरी निवेदन आपसे यही है कि आप लोग शान्तिमय असहयोगके आदर्शसे कभी च्युत न हों। मै जानता हूं कि इस धर्मका पालन करना कठिन है। मैं यह भी जानता हूं कि कभी कभी उत्तेजना इतनी अधिक होती है कि विचार, वाणी और कृतिके द्वारा शान्तिमय बने रहना अत्यन्त कठिन है। तथापि इस आन्दोलनकी सफलता तो इसी महान् सिद्धान्तपर अवलम्बित है।"

इस उच्च तत्वके अनुसार हमें अपना जीवन बनानेकी शक्ति प्राप्त करनेके लिए यह आवश्यक है कि हम उन तमाम मौकोंको टालते रहें जिनसे उत्तेजना फैलनेकी सम्भावना हो। अतएव अब हमें न तो जलूसोंकी जरूरत है, न विराट् सभाओंकी। जो लोग जाग्रत हो गये हैं, बस हम तो उन्हें ऐसा तैयार कर दें कि वे उत्तेजनाके समय भी स्थिर रह सकें, और धुनकना, सूत कातना, बुनना आदि विधायक राष्ट्रीय कार्योंके सङ्गठनमें लग जाय, जिससे राष्ट्रके लाखों बेकार लोगोंको रोजी और उसके साधन मिलते रहें। हिन्दू मुसलमान एकता हमारा अटल सिद्धान्त है। उसके प्राप्त करने या प्रगट करनेका

द्वेष नहीं, प्रेम

प्रयागसे एक तार मिला है कि पण्डित मोतीलाल नेहरू, उनके इकलौते पुत्र पण्डित जवाहरलाल नेहरू, उनके भतीजे पण्डित श्यामलाल नेहरू, पण्डित मोहनलाल नेहरू और प्रयागके अंगरेजी दैनिक पत्र इण्डिपेण्डेण्टके सम्पादक श्री० जार्ज जोसफ आदि गिरफ्तार कर लिये गये हैं। गत ७ ता० की रातको ११ बजे यह तार मुझे मिला। निश्चय ही इस खबरको सुनकर मेरा हृदय सहर्ष फूला न समाया। मैंने इसके लिए परमात्माको धन्यवाद दिया।

मैंने पण्डितजीके पकड़े जानेकी आशा नहीं की थी। हमारी बातचीतमें मैं पण्डितजीसे कहा करता था कि आपकी गिरफ्तारी तो सबके पीछे चाहे हो। सर हारकोर्ट बटलर आपपर हाथ उठानेकी हिम्मत न करेंगे। यदि आप गिरफ्तार हुए तो आपके मित्र, महमूदाबादके राजा साहब, अपने पदपर रहना मंजूर न करेंगे। सर हारकोर्ट बटलरके इस निष्काम साहसको देखकर मुझे ताज्जुब हो रहा है। पण्डितजी बड़े बड़े विघ्नोंसे टक्कर लेते हुए काम कर रहे थे। दमा तो उनका पुराना शत्रु है। वे बराबर उसके साथ युद्ध करते आ रहे हैं। अपने धनी मुवक्किलोंके लिए तथा पीड़ित पञ्जाबके लिए

भी उन्होंने उतना काम नहीं किया जितना कि इस कङ्गाल भारतके लिये उन्होंने जी जानसे किया है। मैंने उनसे कहा था कि आप कुछ दिनतक आराम कीजिए। लेकिन उन्होंने इनकार कर दिया। अब इस खयालसे मुझे बड़ा आनन्द होता है कि अब वे अपनी थकावट दूर कर सकेंगे।

लेकिन इस ख्यालसे कि, बम्बईके पापके कारण मैं इस साल-के पहले ही जिस बातके न होनेसे डरता था वही अब हमारे देशके बड़ेसे बड़े और अच्छेसे अच्छे निरपराध लोगोंके कष्ट सहनके कारण हो रही है, मुझे और भी अधिक हर्ष हुआ। इन बिलकुल निर्दोष लोगोंकी गिरफ्तारी ही सच्चा स्वराज्य है। अब अली भाई तथा उनके साथी जेलमें ही रहें तो कोई शर्मकी बात नहीं है। भारत उनके बलिदानके अयोग्य नहीं निकला।

मेरी तरह हजारों लोग इस आनन्दका अनुभव करते होंगे। पर मेरे इस हर्षकी एक शर्त है। वह यही कि हमारे नेताओंके एक एक करके हमसे छुडा लिये जानेके समय चारों ओर पूरी शान्ति छाई रहे। गिरफ्तारियोंके होते हुए भी यदि सब ओर शांतिका पूरा साम्राज्य रहा तो बस हमारी फतेह बनी बनाई है। पर यदि हम तमाम उपद्रवी लोगोंको अपने काबूमें करके शान्ति रक्षा न कर सके तो निश्चय ही बुरी तरह शिकस्त खानी पड़ेगी। हम तो बिना किसीकी जानपर हाथ उठाये मर मिटने-के लिए कटिबद्ध हुए हैं। हमने तो बिना क्रोध और सतापके

जेल जानेकी शर्त ही की है। अतएव हमें अपनी ही बनाई शर्त पर मुंह फुलानेकी कोई आवश्यता नहीं है।

बल्कि इसके विपरीत, हमारी अहिसा तो कहती है कि अपने शत्रुओं पर भी प्रेम करो। शातिमय असहयोगके द्वारा हम अङ्गरेज़ हाकिमों और उनके सहायकोंके रोषको जीतना चाहते हैं। हमें चाहिये कि हम उनके साथ प्रेम करें और परमात्मासे प्रार्थना करें कि जो गलती उनकी हमें दिखाई देती है, उसे देखनेकी बुद्धि उन्हें दे। पर यह प्रार्थना दुर्बल हृदयकी प्रार्थना न हो, बल्कि एक बलवान की प्रार्थना हो। अपने बलका अनुभव करके हमें उस जगत् पिताके सम्मुख नम्रता धारण करना ही उचित है।

यह काल हमारी परीक्षाका और हमारी विजयका काल है। इस समय मैं यह बताना चाहता हूं कि किन किन बातों पर मेरा विश्वास है। मैं अपने शत्रुओं पर प्रेम करनेका कायल हूं। मैं मानता हू कि भारतके हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, पारसी, ईसाई और यहूदियोंका एक मात्र तरणोपाय अहिसा ही है। मेरा यह विश्वास है कि कडेसे कडे पत्थरके दिलको भी पानी पानी कर देनेकी ताकत कष्ट सहनमे है। इस युद्धका आधार पहली तीन जातियों पर होना चाहिए। पिछली तीन जातिया तो इन अगली तीन जातियोंके सम्मिलनसे डरती हैं। हमें अपने सद्-व्यवहार-के द्वारा उन्हें दिखा देना चाहिए कि हम उन्हें अपना सगा-सम्बन्धी मानते हैं। हमें अपने आचरणके द्वारा प्रत्येक अंगरेज-

भाईको यह दिखा देना चाहिए कि वह भारतके दूरातिदूर कोनेमें भी उतना ही सुरक्षित है जितना कि वह मशीन गनके बल पर अपनेको समझता है।

क्या इस्लाम, क्या हिन्दू धर्म, क्या ईसाई मजहब, क्या जरदोस्ती धर्म और क्या यहूदी, मत—सच पूछिए तो साक्षात् धर्मकी ही यह परीक्षा है। हा तो हम यह दिखावे कि हम ईश्वरको और उसकी न्यायशीलताको मानते हैं या यह प्रगट करें कि नहीं मानते। मुझे बड़े बड़े उच्च हृदय मुसलमान-भाइयोंके सहवासका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उससे मुझे यह मालूम हुआ है कि इस्लामका प्रचार तलवारके बल पर नहीं, बल्कि लगातार एकके बाद एक दरवेशों और फकीरोंके प्रेम और ईश्वर-प्रार्थनाके द्वारा हुआ है। हा, इस्लाममें तलवार खींचनेका भी विधान किया गया है, परन्तु उसके लिए जो शर्तें रखी गई हैं वे इतनी कड़ी हैं कि हरएक आदमी उनका पालन करनेको क्षमता नहीं रखता। क्या हमारे पास कोई ऐसा सेनानायक है जो कभी भूल न करता हो? फिर जेहादका फरमान कौन निकाल सकता है? वह कष्ट सहन, वह प्रेम और वह शुद्धता कहा है, जो तलवार खींचनेकी कल्पना कर लेनेके पहले प्राप्त कर लेना आवश्यक है? भारतके मुसलमानोंकी तरह हिन्दू भी इसी तरहके बन्धनोंसे बधे हुए हैं। सिक्खोंके पास तो उनका ताजा स्वाभिमानपूर्ण इतिहास हईहै जो उन्हें शस्त्र प्रयोग करनेकी चेतावनी दे रहा है। जैसा कि मौलाना शौकत

अली कहा करते थे अभी तो हम इतने अशुद्ध और इतने स्वार्थी हैं कि ईश्वरके कामके लिये सशस्त्र युद्ध करही नहीं सकते और क्या भारत जब आत्मशुद्धि कर चुकेगा, तब तलवार उठानेकी कभी आवश्यकता रहेगी? और आत्मशुद्धिकी रीति तो हमने पिछले साल ही कलकत्ते से शुरू कर दी है।

तो हमें क्या करना लाजिम है? बस पूर्ण शातिमय बने रहें और फिर भी इतने दृढ और अटल रहें कि सरकारी जेलोंके लिये जितने चाहे उतने लोग बलिदानके लिये खुशी २ आगे बढ़ते रहें। हर एक प्रान्त खाली जगहपर अपना नेता चुन ले। तमाम आवश्यक प्रबन्ध करके लालाजीने बडा बढिया उदाहरण पेश कर दिया है। प्रत्येक प्रान्तमें सेनापति और मन्त्रीको साधारण समयके लिये, सब अधिकार दे दिये जायंगे। कार्य्य समिति छोटीसे छोटी हो। प्रत्येक महासभाका सदस्य अवश्य ही स्वय सेवकोंमें अपना नाम लिखावे।

एक ओर जहा गिरफ्तारीको टालना न चाहिये, तहा दूसरी ओर हमे अनावश्यक जुर्म भी न करना चाहिये।

जबतक कि हम अपनी जरूरत भरको तमाम खादी हाथके कते सूतसे तैयार करनेका सङ्गठन और विदेशी कपडेका पूरा बहिष्कार न कर चुकें तबतक हमे स्वदेशी आन्दोलनको जोरशोरके साथ जारी रखना चाहिए।

एक एक करके चाहे हमारे सभी नेता क्यो न गिरफ्तार कर लिये जाय, हमे हर हालतमें महासभाका आगामी अधिवेशन कर-

नाही चाहिए। यदि सरकार बल प्रयोग करके उसे भङ्ग कर दे तो बात दूसरी है। पर यदि हम डरकर दब न जायगे और उत्तेजित होकर खून खराबी कर बैठेंगे, बल्कि अपना राष्ट्रीय कार्य बराबर जारी रखेंगे तो बस फिर स्वराज्यमे कोई सन्देह नहीं, क्योंकि दुनियामे ऐसी कोई ताकत नहीं है जो एक शान्तिमय प्रण पर अडी हुई और दैवी भावसे युक्त प्रजाके बढते हुए कदमको रोक सके।

देशबन्धु दास

लार्ड रेडिङ्गने आखिर अपने वचनको निबाहा। देशके शिरोमणि नेता भी गिरफतारीसे नहीं बचे। लार्ड रोनाल्डसेके भाषणसे लोग यह समझ रहे थे कि देशबन्धु दास महासभाके अधिवेशनके पहले शायद न पकडे जायगे और उसके बाद भी तभी, जब वे उनकी चेतावनीके अनुसार बरताव न करेंगे। लेकिन लार्ड रेडिंगकी धमकी उसके बादकी बात है। और इसलिये लार्ड रोनाल्डशेकी राय उससे कट गई। जब कि सभापति स्वयंसेवकोंके नाम दर्ज कर रहे हैं और उन्होंने घोषणा पत्र भी प्रकाशित किये हैं तब उन्हे भी क्यों आजाद रहने देना चाहिये? कलकत्तेमें शाहजादेके आगमनके दिन हडताल करनेके लिये जो हलचल हो रही थी, वह किसी तरह बन्द नहीं

होती थी। मेरे ख्यालमें ऐसे ही किसी कारण या विचारसे सभापति महोदयकी गिरफ्तारी की गई है। उनके साथही दूसरे कितने ही प्रधान कार्यकर्ता भी पकडे गये हैं। मौलाना अबुल कलाम आजाद, जोकि मुसलमान उलमाओंमें बडे आलिम आदमी हैं, मौलवी अकराम खां, जो कि खिलाफत कमेटीके मंत्री हैं, श्री ससमल, जो कि बङ्गाल प्रान्तिक समितिके मत्री हैं, बाबू पद्मराज जैन, जिनका प्रभाव कलकत्तेके मारवाडी समाज पर है, जेलमें सभापति महाशयके साथी हुए हैं। इससे साफ प्रगट होता है कि ये गिरफ्तारियां हडतालको रोकनेके लिये हुई हैं। इन गिरफ्तारियोंसे नतीजा निकलता है कि नौकरशाही शान्तिके साथ लोगोंको समझाने बुझाने और हडतालके लिये राजी करनेको भी बरदाश्त नहीं कर सकती। वह सचमुच यही चाहती है कि जबरदस्ती दुकानें खुली रखी जाय। वह कर्नल जानसनकी तरह लोगोंको धमका घुडका कर दुकानें खुलवाना और वहा सिपाहियोका पहरा बिठा देना नहीं चाहती; बल्कि नेताओंको पकड पकडकर और जेलमें बांधकर डरपोक दुकानदारोंको भयभीत करके उनपर [illegible]। [illegible]।
सो कलकत्तेके व्यापारियोंके लिये [illegible]
कि वे अपने नेताओंके उनसे अलहद[illegible]
हडताल रखकर अपने निश्चय और [illegible]
दे। अब तो २४ ता० को कलकत्तेमें [illegible]
भी अधिक आवश्यक हो गया है।

विरोध प्रदर्शित करनेकी भावना अब गौण हो गई है। अब तो हमारे नेताओंके गौरव और सम्मानके लिये कलकत्तेके लोगोंको पूरी हडताल करनी आवश्यक हो गयी है। यह इस बातका भी सबूत होगा कि वे अपने नेताको कितना मानते हैं और वे अपने स्वतन्त्र मतके अनुसार किस तरह वरतते हैं। मैं आशा करता हू कि कलकत्तेकी जनता आगामी २४ दिसम्बरको अपने इस स्पष्ट कर्तव्यका पालन करनेमे जरा भी कोर कसर न रक्खेगी। और अब जब कि हमारे नेता जेल जा चुके हैं तब हरएक असहयोगी शान्ति रक्षाके लिये अपनेको ही नेता बना लेगा। वे तो बस २४ ता० के दिन सब अपने अपने घरोंमें रहें, सिर्फ स्वयसेवक लोग ही बाहर रहें। स्वयसेवकोंका कर्तव्य यह होगा कि वे उन लोगोंको किसी तरहकी हानि पहुचनेसे बचावें, जिन्होंने उस दिन दूकान खोल रखना पसन्द किया हो। मैं यह बात माने लेता हू कि महासभा और खिलाफतियोंके नये कर्मचारियोंका चुनाव हो गया होगा। हमारी सच्ची कसौटी का समय तो यही है। आज नेतापन ग्रहण करना वैसा ही है जैसा कि आयर्लैंडके स्वर्गीय शहीद मेक्सिनीका लार्ड मेयरका पद ग्रहण करना था, क्योंकि नेता पदपर प्रतिष्ठित होनेके साथ ही साथ तुरन्त जेल जानेकी पात्रता भी आ जाती है। यदि राष्ट्रका उत्थान सचमुच हो गया होगा तो नेताओंका और उनके अनुगामियोंका प्रवाह बराबर उमडता रहेगा। सरकार जितनी आहुतिया चाहें उतनी ही हम उसे बराबर देते रहें, और ज्यों

ही हम सरकारको माग को पूर्ति कर देनेके लायक अपनी साग जमा देंगे, बस त्योंही विजय हमारे पास है।

बङ्गालका कर्तव्य स्पष्ट है। उसे सभापति महोदय तथा दूसरे चुने चुने नेताओंकी गिरफ्तारीका समुचित जवाब देना है। महासभाके मनोनीत सभापतिकी गिरफ्तारीकी तरह मौलाना अबुलकलाम आजादकी गिरफ्तारी भी एक महत्वपूर्ण घटना है। मौलाना अबुलकलाम आजाद सारे भारतमें मशहूर हैं और मुसलमानोंमें तो उनकी ख्याति विशेष रूपसे है। वे एक पुराने सिपाही हैं और रांचीमें सालोंतक नजरबन्द रह चुके हैं। इसलामके उलमाओंमें उनका बड़ा ऊंचा स्थान है। उनकी गिरफ्तारीसे हिन्दुस्तानके मुसलमानोंके दिलको गहरा सदमा हुए बिना नहीं रह सकता। बङ्गालके हिन्दू और मुसलमान इसका क्या उत्तर देंगे? कार्य्यका उत्तर तो उसके प्रतिकार्यके ही द्वारा हो सकता है। हम जानते हैं कि क्या जवाब देना चाहिये। क्या हजारों बङ्गाली हिन्दू और बङ्गाली मुसलमान स्वयंसेवक दलमें अपना नाम लिखाकर गिरफ्तार हो जायगें? क्या बङ्गाल सिर्फ खादीको ही पहननेका व्रत धारण करेगा? क्या बङ्गाली विद्यार्थी सभापति महोदयकी हृदयस्पर्शिनी अपीलका उत्तर उनकी अपेक्षाके अनुसार ही देंगे?

मैं इस बातको भी गृहीत किये लेता हूं कि कलकत्तेके हिन्दू और मुसलमान विशेष करके और बङ्गाल सामान्यत पूर्ण शान्ति धारण किये रहेगा। यदि वर्तमान शान्ति भावी स्थितिका

सूचक चिह्न हो तो बम्बईका पाप प्राय पूरा धुल गया समझिये। बम्बईकी दुर्घटनासे लोगोंने खूब नसीहत ली है। पर यह हमे शाके लिये पक्की होनी चाहिये। बगालके नवयुवक अपने बचे खुचे नेताओंकी सहायताके लिये दौड पडे। वे आतुर न हों। अपने चित्तको शान्त रखे और उनके हाथ हमेशा चरखोंपर नजर आवे। प्रत्येक असहयोगी फिर वह चाहे पुरुष हो या स्त्री, अपना नाम स्वयंसेवक दलमें अवश्य लिखावे और उनके नामोंकी सूची रोज पत्रोंमें प्रकाशित हुआ करे जिससे सरकारको जिसे वह चाहे उसको गिरफ्तारी करनेमें आसानी हो जाय। बङ्गालकी उज्वल भावुकता, हमारे राष्ट्रीय इतिहासके के इस अत्यन्त नाजुक और कठिन अवसर पर उससे उच्च कोटिकी शान्त कार्य शक्तिमें परिणत हो जाना चाहिये। न हुल्लड हो, न धूम धाम हो, न बहादुरीका दिखावा हो। हो क्या? सिर्फ अपने अङ्गीकृत कार्यके प्रति धार्मिक भावसे श्रद्धा और यह दृढ़ निश्चय कि कार्यं वा साधयामि देह वा पातयामि।



सभापतिको सिर्फ छः महीने

मौलाना आजादको एक सालकी सजा हुई। इस पर खुद मौलाना साहब तथा उनकी बेगम साहबाने इस बातकी शिकायत की है कि बस, एक ही साल। यह तो बहुत ही ना-काफी है। तब महासभाके सभापति और उनके श्रद्धावान् साथी श्री ससमल सहित सिर्फ छ महीनेकी सादी कैदका हुक्म सुनने ,पर क्या मालूम हुआ होगा ? यदि ऐसी ही प्रभावहीन सजा देना अभीष्ट था तो फिर अभियोग चलानेकी और बारबार फैसले मुल्तवी रखनेकी ही क्या आवश्यकता थी ? यह तो सरकार सिर्फ जबानी हुक्म देकर ही कर सकती थी। मुझे तो तारके जरिये यह खबर मिली थी कि सरकार मौलाना और देशबन्धु दोनोंको छोड देनेका कोई मौका ताक रही है। एक और भी खबर मिली थी जोकि विश्वस्त सूत्रसे आई मानी जाती है, पर मै उसे प्रगट नहीं करना चाहता और पाठकोंके लिए उनका जानना भी कोई मार्केकी बात नहीं है। हमें तो जैसा मौका आ पडे उसीका सामना करना चाहिए। कुछ लोग पत्र भेज भेज कर मेरी चुटकिया ले रहे हैं। वे मुझ पर भोलापन, सङ्गदिली, कमजोर्दिली तथा दूसरी कमजोरियोंका इल्जाम लगाते हैं। कुछ सज्जन कहते हैं कि मैंने जेलस्थित देश सेवकोके अङ्गीकृत कार्यको

येन डाला। कुछ लोगोंका कथन है कि मैंने महासभाके सभापति महोदयके साथ बेईमानी की है। परन्तु सौभाग्यवश इस कितने ही वर्षोंकी सार्वजनिक सेवाओंकी बदौलत मेरा कलेवर अच्छा मजबूत हो गया है और ये तीर उसमें घुस नहीं पाते। परन्तु मैं इन तमाम अधीर पत्र प्रेषकोंको यकीन दिलाता हू कि इन प्रस्तावोंके द्वारा असहयोग सिद्धान्तके अणु-मात्रका भी त्याग नहीं किया गया है। बल्कि, इसके विपरीत, प्रकृतिकी ओरसे चेतावनिया होते हुए भी, सामूहिक भङ्ग करनेसे मुह मोडना असहयोगके मूलभूत सिद्धान्तका पूर्णरूपसे त्याग करना होता है। कैदियो को छोड देनेकी बात तो जब कि वह राष्ट्रीय सम्मानका प्रश्न हो गया, मैंने ही जान बूझकर पेश की थी, क्योंकि त्रिविध लक्ष्य, स्वराज्य, खिलाफत और पञ्जाब, की शीघ्र प्राप्तिका प्रश्न बदलकर त्रिविध स्वातन्त्र्य, भाषण, लेखन और सम्मेलन, की शीघ्र प्राप्तिका प्रश्न उपस्थित हो गया था। इससे कैदियोंको छोड देनेकी बात उसका स्वाभाविक परिणाम हो गया। लेकिन चौरी चौराने एक दूसरा ही प्रश्न उपस्थित कर दिया है अर्थात् भयङ्कर प्रायश्चित्त और उग्र रीतिसे आत्मशुद्धि करना और इस प्रायश्चित्तात्मक आत्मशुद्धिके लिए जेलमें स्थित कार्यकर्त्ताओंके बलिदान की तथा कुछ समय तक हमारी कितनी ही हलचलोंके, जिनके बदौलत राष्ट्रमें नवीन जीवनका सचार हो गया है, बलिदान-त्यागकी आवश्यकता है। लेकिन ऐसी बातें तो तमाम युद्धोंमें होती हैं। और आध्यात्मिक युद्धमें तो, जैसा कि हम अपने

आन्दोलनके होनेका दवा करते हैं, और भी अधिक होती हैं। मैं इसे आध्यात्मिक इस भावमें कहता हू कि हमने अपने ध्येयकी सिद्धिके लिए निश्चय पूर्वक शारीरिक बलका प्रयोग न करना स्वीकार किया है। हम अपने लङ्गर आदिको छोडकर वह निकलनेके खतरेमें थे और इसलिए हमें वापस लौटना आवश्यक था। पर वापसीका मतलव केवल इतना ही है कि हम अधिक शुद्ध हो जाय, हमें अधिक ज्ञान हो जाय और हममें अधिक वल आ जाय और यदि असहयोगी लोग इस राष्ट्रीय संग्रामके सिद्धहस्त योद्धा बनना चहाते हो तो वे निस्सन्देह प्रतीक्षा और तैयारीका मूल्य समझेंगे। जो शख्स तैयारी तक अथवा दूसरी कमीके लिए ठहरा रहता है वह भी उतनी ही सहायता करता है जितनी कि वह योद्धा जो मोरचोंमें तीन फीट गहरा खडा रहता है। यदि हम युद्ध शास्त्रके, फिर वह चाहे शारीरिक हो या आध्यात्मिक, इन तत्वोंको न समझें तो हमारा यह सारा वलिदान व्यर्थ चला जायगा।

राउंड टेबल कान्फ्रेन्स



(दिसम्बर २२, १९२१)

भिन्न भिन्न प्रकारके विचारवाले पुरुष जब किसी एक ऐसी बातका निपटारा करनेके लिये बैठते हैं जो सबके लिये आवश्यक होती है तब उसे "राउण्डटेबल कान्फरन्स" कहते हैं।

सरकार क्या सोच रही होगी इस बातकी छानबीनके लिये 'यंग इण्डिया' में बहुत कम लिखा जाता है। उसका विचार करना तो व्यर्थ ही है। किन्तु चूं कि आजकल समाचार पत्र इस कान्फरन्सके विषयमें चर्चा कर रहे हैं तथा उसके विषयमें वाद विवाद करते हुए अपनी अपनी राय जाहिर कर रहे हैं, मुझे भी अब यह उचित मालूम हो रहा है कि भारतमें यह चारों ओर जो नाटक खेला जा रहा है उसके नायककी मानसिक स्थितिका कुछ निरीक्षण 'यंग इण्डिया' मे भी किया जाय। मेरा 'तो ख्याल यह है कि कान्फरेन्सका होना तबतक निरर्थक ही है, जबतक कि बड़े लाटके दिमागसे यह भ्रम दूर नहीं हो जाता कि असहयोग तो कुछ भूले भटके हुए उत्साही लोगोंका खेलमात्र है। यदि उनकी यह इच्छा हो कि उनके साथ सहयोग किया जाय और

देशमें शांति सन्तोष फैले तो उन्हें चाहिये कि वे असहयोगियोंको शांत करें—उनसे सुलह करें। उन्हें यह जान लेना चाहिये कि असहयोग स्वयं कोई रोग नहीं है। यह तो एक रोगका मुख्य लक्षण है। खास रोग तो भारतकी जनतापर जो तीन प्रकारसे मर्माघात किया गया है वही है। और जबतक उस रोगकी जड़ नहीं काटी जायगी तबतक इन ऊपरके सब उपायोंसे रोगीको जरा भी चैन नहीं पड़नेकी। खिलाफत और पञ्जाबके मामलोंका उचित निपटारा और जनताके चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा तैयार की गई योजनाके अनुसार स्वराज्यकी मांग पूरी करना, ये बातें यदि छोड़ दी जायं तो चाहे भले ही दमन किसी प्रकारके निपटारेका एक आसान और सीधा साधन दिखाई दे। हां, मुझे मंजूर है कि कोई भी बड़े लाट ऐसे आन्दोलनको भरसक न बढ़ने देंगे। मैं मानता हूं कि जिस बातके लिये सविनय कानून भंग शुरू किया गया हो उसे मिटानेके लिये यदि वे तैयार नहीं हैं तो उन्हें सशस्त्र बलवेकी तरह सविनय कानून भंगको भी दबाना ही होगा। सत्यके कोरे सिद्धान्तका तबतक कुछ भी महत्व नहीं रहता जबतक वह उन मनुष्योंमें जो उसकी हिमायतके लिये अपने प्राणोंका भी यज्ञ करनेको तैयार रहते हैं, मूर्त स्वरूप नहीं प्राप्त कर लेता। हमपर होनेवाले अन्याय और अत्याचार दुनियामें अभीतक इसीलिये टिके हुए हैं कि हम उस सत्यके सच्चे प्रतिनिधि नहीं हैं। अपने इस दावेको सिद्ध करनेका

एक ही मार्ग है। वह यह कि हम अपने जिम्मे किये गये कामके लिये हर तरहके कष्ट सहनेको तैयार रहें। और हम तो इस उच्च कर्तव्यकी साधनाकी बहुत कुछ मंजिल तय भी कर चुके हैं। किन्तु मैं यह नहीं कह सकता कि हमने इस बताका कोई निश्चायक प्रमाण दिया है। यदि कैदमें कोडोंकी मार पड़े और दूसरी अनेक प्रकारकी यातनायें सहनी पड़ें, तब कौन कह सकता है कि हम जेलसे भी न घबरा उठेंगे? कौन जानता है कि फांसीपर लटक जानेके लिये हममेंसे कितने आदमी तैयार हैं?

इसलिये मेरा तो ख्याल यह है कि ऐसी कान्फरेन्ससे जिसमें कि सरकारके प्रतिनिधि हों, लाभ तभी होगा जब वह पेटभरके असहयोगियोंकी शक्तिको जांच कर चुकेगी और उनकी कड़ी परीक्षा ले चुकेगी।

किन्तु असहयोग लोकमत तैयार करनेका एक उपाय है। इसलिये यदि सहयोगी और असहयोगियोंकी कान्फरेन्स हो तो मैं जरूर उसका स्वागत करूंगा। मुझे यकीन है कि वे भी खिलाफत और पञ्जावके अन्यायों और अत्याचारोंका परिमार्जन चाहते हैं। मैं यह भी जानता हूं कि जैसे असहयोगी देशके लिये स्वतन्त्रता चाहते हैं वैसे ही वे भी चाहते हैं। सरकारकी इस दमन नीतिका निषेध करीब करीब सभी नरमदल वाले सदाचार पत्रोंने किया है। यह देखकर मुझे बड़ा सन्तोष हुआ। इससे कमकी मैंने आशा भी नहीं की

थी। मैं कह सकता हूं कि यदि असहयोगी आत्मसंयमी बने रहें, हिंसासे दूर रहें, अपने विरोधियोंके प्रति कुवचनोंका प्रयोग न करें तो एक एक सहयोगी असहयोगी हुए बिना न रहेगा। यही क्यों अंग्रेज भाई भी असहयोगियोंके दलमें आ मिलेंगे और सरकारको हमारी शरण लेनी होगी। फिर वह इसके सिवा और कर ही क्या सकती है। असहयोग-की इस विधिका परिणाम यही हो सकता है। इसी उद्देशसे वह आरम्भ भी किया गया है और उम्मेद है कि यही होगा भी। इसके बदौलत विरोध और अनबन कम ही होते हैं। और यदि आज उसका परिणाम विपरीत दिखाई दे रहा है तो उसका कारण यही है कि असहयोगी सिर्फ अभी यह मानने लगे हैं कि केवल कार्यमें ही अहिंसा होना काफी नहीं, वाचा और विचारका भी अहिंसामय होना उतना ही आवश्यक है। असहयोगीके लिये तो शत्रुके प्रति भी बुरे भावोंको दिलमें आने देना अनुचित है। हमारे विरोधियोंको सबसे भारी आशंका तो यही है कि इस अहिंसाके आवरणमें हिंसाका उद्भव असयत रूपसे छिपा हुआ है। उन्हें हमारी अर्थात् हममेंसे अधिकतर लोगोंकी हृदय शुद्धिपर विश्वास नहीं है। उन्हें तो उसमें गोलमाल और सर्वनाशके सिवा कुछ दिखाई ही नहीं देता। इसलिये यह दमन तो हमारे लिए ईश्वरीय वरदान रूप होकर ही आया है। यह उनको और हमको दोनोंको दिखा रहा है कि जनना-

पर हमारा इतना असर हो गया है कि उत्तेजना लायक परिस्थितिमें भी वह शान्त बनी रह सकती है। किन्तु हमारे इस संयमकी अभी इतने अधिक समय तक परीक्षा नहीं ली गई है कि जिससे हम यह समझ लें कि यह शांति हमेशा ऐसे ही रह सकेगी। अब भी हमारे दिलमें धुकधुकी लगी ही रहती है। सियालकोटके लोगोंने आखिर रास्ता छोड़ ही दिया, फिर वह चाहे कितना ही थोड़ा क्यों न हो। ऐसी छोटी छोटी कितनी ही गलतियां हमसे हो चुकी हैं जिनसे यह मालूम होता है कि अभीतक हमको इस बातका कि दूसरोंके जान मालकी रक्षा करना कितना आवश्यक है इतना ज्ञान नहीं हो गया है कि जिससे बाहरी आदमीके हृदयपर भी प्रभाव पड़े। और उसके चित्तमें आन्दोलनके प्रति विश्वास और श्रद्धा उत्पन्न हो जाय। अतएव साधारण कारणोंके लिये तथा असहयोगियोंका ठीक ठीक स्वरूप दिखानेके लिये सहयोगियोंसे मिलनेके हरएक प्रसंगका मैं अवश्य स्वागत करूंगा। सरकारने खुद असहयोगको ही दबानेका इरादा जाहिर करके अपने सच्चे स्वरूपको अधिक स्पष्टतया प्रगट कर दिया है। जबतक वह हिंसाके तथा उससे सहानुभूति रखने वालोंके या उसके उत्तेजित करनेवालोंके दमनकी कोशिश कर रही थी तबतक तो उसका करना ठीक था। इसलिये मुझे तो कोई शक ही नहीं है कि सहयोगी भी सरकारके इस पागलपनके विचार प्रकाशनको तथा अपने

दुख दर्दको दूर करनेके उद्देशसे उठाये गये आन्दोलनको दबानेके इस निरर्थक प्रपंचके खिलाफ आवाज उठावेंगे। किन्तु मैं अपने मित्रोंको यह चेतावनी दिये देता हूं कि जबतक वे यह यकीन नहीं कर लेते कि सरकार सचमुच पश्चात्ताप कर रही है और जनताके दुःखोंके साथ सहानुभुति रख रही है तबतक ये ऐसी कान्फरेन्सका खयाल न करें। शाहजादेके स्वागतके बहिष्कार तथा सार्वजनिक सभायें करनेके अधिकार, या स्वयंसेवक दलके संगठनोंके विषयमें यह कान्फरेन्स तबतक न की जानी चाहिये जबतक कि इन संस्थाओंका उद्देश्य हिंसा करना नहीं है। स्वागतका बहिष्कार तो रुक नहीं सकता। और तबतक होना ही चाहिये जबतक कि जनताकी इच्छायें सार्वजनिक सभायें तथा वे संस्थायें पद-दलित की जायँगी जो हमारे ऐसे अत्यन्त साधारण अधिकार हैं जिनके विषयमें किसी प्रकारके वादविवादकी जरूरत ही नहीं। हमें उन अधिकारोंके लिये झगड़ना ही होगा।

साथ ही यह भी ध्यानमें रहे कि असहयोगी अभी उस प्रकारका सविनय कानून भंग नहीं कर रहे हैं जैसा कि वे चाह रहे हैं। सार्वजनिक सभायें करनेके तथा उनके संगठनके लिये वे जो आग्रह दिखा रहे हैं उसे सविनय कानून भंगके नामसे विभूषित न करना चाहिये। असहयोगी तो अभी सिर्फ बचावमें ही लगे हुए हैं। अभी उन्होंने आक्रामक स्वरूप तो

आरम्भ भी नहीं किया है, जो कि पूरी तरहसे अहिंसात्मक परिस्थिति हो जानेपर वे अवश्य धारण करनेवाले हैं। सरकारने उन्हें अपनी शक्तिकी परीक्षाका यह मौका देकर उनपर अनुग्रह ही किया है।

सरकार सुलह करे

(दिसम्बर २२, १९२१)

लार्ड रोनाल्डशे (बङ्गालके लाट) ने धारा सभामें जो भाषण किया है उसे मैंने पढ़ा। उसमें मेल मिलापकी जो बातें कही गई हैं वे तो ठीक हैं। वे मुझे अच्छी लगीं परन्तु मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि वह भ्रमोत्पादक है। उनके भाषणोंके जो अंश खुद ही आलोचनाके योग्य हैं उनपर मैं यहां टीका टिप्पणी नहीं करूंगा। मैं तो सिर्फ यह कह देना चाहता हूं कि यह वर्तमान स्थिति खुद लार्ड रोनाल्डशेकी तथा वाइसरायकी कृतिका फल है। मैं हृदयसे चाहता हूं कि मैं भारत सरकार *तथा प्रांतीय सरकारोंको इस सन्देहकी दृष्टिसे न देखूं कि वे लोगोंके साथ टक्कर लेनेके लिये आतुर हो रहे हैं। परन्तु अबतक मैंने जो कुछ पढ़ा और सुना है उससे मैं इस नतीजेपर पहुंचा हूं कि मेरे सन्देहके लिये अवश्य कारण मौजूद है। हां, मैं इस बातको नहीं छिपाता कि कुछ लोग

थोड़ा बहुत दबाव डालते होंगे और डराते धमकाते भी होंगे, परन्तु मैं यह जोरके साथ अस्वीकार करता हूं कि १७ नवम्बरकी उस अद्भुत हड़तालके दिन कलकत्तेमें वहाकी महासभा या खिलाफत समितियोंके द्वारा अथवा उनकी तरफसे किसी भी प्रकारके डर और दबावकी तैयारी की गई और लोग डराये या धमकाये गये। बल्कि इसके विपरीत मुझे तो निश्चय होता है कि इन संस्थाओंका प्रभाव हर तरहके डर और दबावसे बचनेमें ही काम आता था। हा, उसमें नैतिक दबाव अवश्य था। पर कोई भी महान आन्दोलन उससे बच नहीं सकता। लेकिन यह बात तो साधारण बुद्धि रखनेवालेकी भी समझमें आ जायगी कि ऐसी सोलहों आने हड़ताल—जैसी कि १७ नवम्बरको कलकत्तेमें हुई थी महज डर और दबावसे होना असम्भव है। पर अच्छा मान लीजिये कि डर और दबावसे काम लिया गया था तो इसके लिये स्वयंसेवक दलोंको छिन्न विछिन्न करनेकी, सार्वजनिक सभायें रोकनेकी, और ऐसे ऐसे कानून जारी कर देनेकी क्या जरूरत थी जो मौतकी गोदमें पड़े हुए आखिरी सास ले रहे थे? डर और दबावका कोई सबूत भी दिया होता। मिसाल भी तो दी होती! हा, कसम खानेको बङ्गालके लाट साहबने कलकत्तेमें एक जगह तलवारों और गुप्तियोंका आविष्कार किया है। यह देख कर मुझे बड़ा दुःख हुआ। पर इससे क्या बड़ी बड़ी सार्वजनिक संस्थाओंपर धब्बा लग

सकता है ? पण्डित मोतीलाल नेहरू आदि नेताओंका गिर फ्तारी पर प्रयागमें कैसी घोर हड़ताल हुई थी ? वहा लोगोंको किसने डराया धमकाया था ? बल्कि कहा जाता है कि उलटा सरकारी नौकरोंने ही दूकानदारोंपर दूकानें खोलनेके लिये बेजा दबाव डाला था और गाड़ीवाले भी तङ्ग किये गये थे। फिर भी वहा अद्वितीय हड़ताल हुई। फिर लाट साहब फर्माते है—"यदि हम यह मानें कि इन घटनाओंसे यही सूचित होता है कि लोग सचमुच तहे दिलसे अपनी उन्नति चाहते हैं तो उसके लिये अनुकूल परिस्थिति होना आवश्यक है। दूसरे शब्दोंमें यों कहें कि किसी भी कान्फ्रेन्सके लिये दोनों ओर शाति होना पहली आवश्यक बात है। यह तो सबको मानना पड़ेगा। यदि असहयोगके मुख्य मुख्य नेता यह निश्चय दिलानेके लिये तैयार हों कि हा, यही बात दरअसल है, तब मैं कहूगा कि हमें भी ऐसी स्थिति दिखाई देनी चाहिये थी जिससे कि सरकारको अपनी बातपर पुनर्विचार करना ठीक जँचता। लेकिन एक बात है। कोरी बातें नहीं काम भी वैसा ही होना चाहिये। यदि मुझे इत मिनान हो जाता कि लोग आम तौरपर कान्फ्रेन्स करना चाहते हैं और असहयोगके प्रधान नेता लोग इसके अनुसार बरतनेको तैयार हैं तो मैं अपनी सरकारसे यह सिफारिश करता कि अब इस बदली हुई स्थितिके अनुसार कार्यवाही करना चाहिये।" यह कथन अत्यन्त भ्रमोत्पादक

है। इसमे जहा जहा असहयोगके नेता शब्द आये हैं वहा वहां यदि सरकार शब्द रख दिया जाय और यदि सारा वक्तव्य किसी असहयोगीके मुंहसे निकले तो उससे सच्ची स्थितिका भान हो सकेगा। सच पूछिये तो असहयोगियोंको तो कुछ भी करनेकी जरूरत नहीं है, क्योंकि उन्होंने कोई काम विना सोचे समझे नहीं किया है। वे तो जरूरतसे ज्यादा सावधानीसे काम ले रहे हैं। लोग आक्रामक सविनय कानून भंग शुरू करनेके लिये कितने उत्सुक थे? किन्तु बम्बईके उपद्रवोंके कारण उनकी इच्छाओंको जबरदस्ती दबाना पडा। पर आजकल सविनय कानून भंगका प्रयोग भी बहुत गलत अर्थमें हो रहा है। मैं दावेके साथ कहता हूं कि असहयोगी लोग आजकल जो कर रहे हैं वही सहयोगी भी कल ही ऐसी परिस्थिति प्राप्त होनेपर करने लगेंगे। जब भारत सरकार या प्रांतिक सरकार हमारे राजनैतिक जीवन और आन्दोलनको नष्ट करनेपर तुल जाय फिर वह चाहे कितना ही शान्तिमय क्यों न हो, तब क्या हमें अपनी शक्तिभर ऐसे प्रयत्नका विधिवत् प्रतीकार न करना चाहिये? मुझे तो इससे अधिक विधिवत् कोई वात नही दिखाई देती कि हम अपने स्वयसेवकोंकी प्रवृत्ति हिंसाकी ओरसे हटानेकी कोशिश करते हुए सार्वजनिक सभायें करते रहें और ऐसा करने का जो फल भोगना पडे उसे खुशीसे भोगें। क्या सरकारकी ज्यादतियोंके मुकाबिलेमें अपने प्रारम्भिक अधिकारोंकी रक्षा

करते हुए सैकड़ों जवानोंका तथा बूढ़े आदमियोंका अपने बचाव-के लिये बिना कुछ भी कहे, सुने, बगैर शिकायत किये, सरकारके सजा देनेके भयके होते हुए भी, चुपचाप जेल चला जाना उसकी कानूनका आदर करनेकी प्रवृत्तिका काफी परिचायक नहीं है ? इसलिए अगर किसीको कान्फरेन्सके लिए तथा अन्तिम निपटारेके लिए अपनी सच्ची सच्ची इच्छा जाहिर करनेकी जरूरत है तो वह सरकारको ही है। सरकारके लिए आवश्यक है कि वह अपनेको उस रास्तेसे सभाले, जिसपर कि दमन उसे ले जा रही है। अब तो असहयोगियोंके कान्फरेन्समें शामिल होनेकी आशा करनेके पहले सरकार को ही अपने शुद्ध हेतुके विषयमें अपनी प्रमाणिकता सिद्धकर दिखानी होगी। जब सरकार ऐसा करेगी तब उसे चारों ओर शान्ति ही शांति दिखाई देगी। असहयोग—अहिंसात्मक असहयोगसे जब कि सरकार हिंसाकाण्डके सिवा दूसरी बातोंका प्रतिकार न करती हो, कोई बुराई नहीं हो सकती। भला असहयोगी बन्द किस बातको करे ? क्या लड़कोंको फिरसे कहें कि भाई चलो, जाओ सरकारी विद्यालयों-में पढ़ने ? या वकीलोंसे कहें कि आप वकालत शुरू कर दीजिए ? क्या लोगोंसे कौन्सिलोंके उम्मेदवार होनेकी सिफारिश करें ? उपाधिधारियोंसे कहें कि भाई अपने खिताब और तगमे वापस मांग लो। यह सब तबतक नहीं हो सकता जबतक कोई निपटारा वास्तवमें न हो जाय या उसकी गैरंटी न मिले। इन सब बातोंके देखते हुए यह स्पष्ट ही है कि, असहयोगियोंको

कुछ भी करनेकी आवश्यकता नहीं है। हा, मैं अपनी तरफसे यह जरूर कह सकता हू कि यदि कान्फरेन्स करनेकी सचमुच इच्छा हो तो मैं आक्रामक सविनय कानून भगको तुरन्त आरम्भ कर देनेकी सलाह एकाएक न दूगा। पर यदि ऐसा हुआ तो मैं इरादा कर ही चुका हू कि ज्योंही इस बातका पक्का विश्वास हुआ कि लोग अब अहिंसाका रहस्य समझ गये हैं, आक्रामक सविनय–कानून भग छोड दूं। यहा मुझे यह भी कह देना चाहिए कि इन पिछले १५ दिनोंकी घटनायें यह दिखला रही हैं कि लोग उसकी अकल्पित महिमाको अच्छी तरह समझ गये दिखाई देते हैं। सो यदि सरकार यह मानती हो कि अब असहयोगी खिलवाड नहीं कर रहे हैं, और अपने लक्ष्यकी सिद्धिके लिये वे हर तरहसे अमर्यादिक कष्ट सहनेको प्रस्तुत हैं, तो सरकार बिना किसी शर्तके ठीक रास्ते पर आ जाय, स्वयं सेवक दलोंको भग करनेकी तथा सार्वजनिक सभायें बन्द करनेकी आज्ञाओंको रद्द कर दे और भिन्न भिन्न प्रान्तोंके उन तमाम लोगोंको जिन्हें इस कहने भरके सविनय कानून-भंगके लिए अथवा असहयोगकी व्याख्यामें आनेवाले किसी भी उद्देश्यके लिए, सजायें दी गई हैं, छोड दिया जाय। हा, जिन्होंने हिंसा काड मचाया हो या उसका इरादा किया हो उनकी बात जाने दीजिये। सरकार हिंसा-काडको अथवा उसकी उत्तेजनाको दबानेके लिए खुशीसे अपनी सत्ताका प्रयोग करे, लेकिन हमारे इस हक को कि अपना मत बेधड़क प्रकट किया करे और

म विधिवत् तथा शांतिमय उपायोसे जनताको शिक्षा देकर
क -मत तैयार करे, किसी तरहका जरा भी धक्का न पहुचना
हिये। इसलिए अगर किसीको बिगडी बात बनाना है,
याचारोंका परिमार्जन करना आवश्यक है तो वह सरकार
है। और वह चाहती हो तो वायुमण्डलको अनुकूल बना
कान्फरेन्स करे। हा, जहातक मेरा सम्बन्ध है, मैं यह
देता हू कि असहयोगके साथ पेश आनेके साधनों और
ओंकी चर्चाके लिए मैं कोई कान्फरेन्स नही चाहता। इस
स्थामें यदि किसी कान्फरेन्ससे लाभ हो सकता है तो वह
है कि जिसमें वर्तमान असन्तोष—अर्थात् खिलाफत और
ावके साथ किये गये अन्याय और अत्याचार और स्वराज्यके
रणोंका विचार और उपाय किया जाय। फिर वह ऐसी
जिसमें केवल वही लोग न बुलाये जाय जिन्हें सरकार
है, बल्कि जनताके सच्चे प्रतिनिधियोंकी कान्फरन्स हो।
ी वह सफल हो सकती है—तभी उससे लाभ हो सकता है।



मर्माघात

(दिसम्बर २२, १९२१)

सरकारकी आज्ञाओंका भग करनेवालोंको फिर वे छोटे हों या बड़े कैद करना, उनको साधारण मुजरिमोंकी तरह रखना, उनको कारावासकी सुविधाओंसे भी वञ्चित रखना, ये सब बातें तो इनसानकी समझमे आने लायक हैं। मैं उसे असद्व्यवहार नहीं कहूंगा। अगर हम अपनेसे किसी ऊंचे अधिकारी को अथवा जिसके अधिकारमें हम थोड़ी देरके लिए भी हों, रुष्ट कर बैठें तो हमारे आज्ञा भगके लिए हमें सजा मिलना अनहोनी बात नहीं है। किन्तु अगर वह हमारे बच्चोंको बुरी तरहसे दबावे, ऐसी बातें जबरन् करावे जिन्हें हम और वे दोनों बुरी समझते और जिन्हे करनेके लिये हम कानूनन बाध्य नहीं हैं, या हमारे साथ मिट्टी—कंकड़से भी बुरा बर्ताव करे तो यह हमे कभी बर्दाश्त नहीं हो सकता। कहते हैं कि कोकोनाडामे मजिस्ट्रेटने स्वराज्य और खिलाफतके झंडोंको उखड़वा डाला, उसने यह हुक्म जारी किया कि एक सप्ताह एक ऐसे झंडे न खड़े किये जायं। यह भी सुनते हैं कि एक पाठशालाके लड़कोंसे युनियन जैक (ब्रिटिश झन्डे) को जबरदस्ती सलाम कराया गया। हमने यह भी पढ़ा है कि

कलकत्तेके एक विख्यात प्रोफेसर अपने विश्वविद्यालयका चोगा पहने बाहर जा रहे थे। रास्तेमें उन्होंने कई निरपराध मनुष्यों पर पाशविक अत्याचार होता हुआ देखा। वे अत्याचार बन्द करनेकी इच्छासे फौजी अफसरके पास जा रहे थे कि उनके सिर्फ यह पूछनेपर कि भाई ये पढे लिखे लोग हैं, नौजवान हैं, बहादुर हैं, इन्हें आप जूतोंको ठोकरोंसे क्यों मार रहे हो? आप तो अभी इनके सरपरस्त हैं, वे बिचारे बुरी तरह पीट दिये गये। ये बातें ऐसी हैं जो दिलमें चुभ जाती हैं। इन अत्याचारोंका तो मतलब यही है कि हमारे शासक अभी तक ज्योंके त्यों बने हुए हैं, उनके हमारे प्रति बर्तावमें जरा भी फर्क नहीं पडा। वह ओडायरी ठसक अभी तक नही मरी। फिर लार्ड रोनाल्डशे उन पिटे गये प्रोफेसर साहबको बुलावें, उनसे मीठी मीठो बातें करें, उन्हें यह आश्वासन भी दें कि अब ऐसा न होने पावेगा तो इनसे होना जाना क्या?" फिर ऐसा न होने पावेगा!" क्या न होने पावेगा? क्या प्रोफेसर साहब फिर न पीटे जायगे? हा यह तो मानी हुई बात है कि इस नाजुक समयमें तो फिर उन पर हाथ न उठाया जायगा। खुद प्रोफेसर साहब भी उस विश्व विद्यालयके चोंगेके भरोसे किसी पदाधिकारीको कई दिन तक न छेडेंगे। किन्तु देखिए, उस पदाधिकारीके हृदयमें उन प्रोफेसर साहबके प्रति थोडा भी आदर है। वे खुद अपने लिए तो उसके पास गये ही नहीं थे। वे तो अत्याचार पीडित मनुष्योंकी हिमायत करने गये थे। क्या इन

लाट साहबके उस आश्वासनके कारण भविष्यमें भारतके मनुष्यत्वकी रक्षा होगी ? क्या नौकरशाही भारतीयोंको आदरकी दृष्टिसे देखेगी ? बात यह है कि सिपाहियोंको तालीम ही ऐसी दी जाती है। यही ध्यान देने योग्य है। उसके द्वारा एक सिपाही एक क्रूर पशु बन जाता है और मौका मिलते ही निरपराध मनुष्यों पर छोड दिया जाता है। आज इतने "दास" और "आजाद" इसीलिए जेल गये हैं कि फिर ऐसे तीव्र और पाशविक अत्याचार कहीं नजर न आवें। उन्होने जेलका स्वागत इसीलिए किया है कि बुरेसे बुरे अपराधीकी भी ऐसे निर्घृण अत्याचारोंसे रक्षा हो–उसके भी स्वाभिमानको कहीं धक्का न लगने पाये। सिर्फ एक संस्थाके हाथसे निकल कर किसी दूसरी संस्थाके हाथमें सत्ता चली जाय, इसीलिए वे जेल नहीं गये हैं। वे जो चाहते हैं वह है शासन प्रणालीमें आतरिक परिवर्तन। जिस बातके लिये लालाजी बरसोंसे अपना शरीर सुखा रहे हैं, जो आराम-तलब मोतीलाल जी नेहरूका प्राण स्वरूप बन गई है, और जिसके पीछे वे पूरे फकीर बन गये हैं, वह लार्ड रोनाल्डशेकी क्षमा-प्रार्थना से-- फिर वह चाहे कितनी ही सद्भाव–पूर्ण क्यों न हो, नहीं बन सकती और न खुद लार्ड रेडिंगकी मीठी बातोंसे ही तथा उनकी इस निजी चिन्तासे ही कि अधिकारी गण कानूनकी मर्यादाका उल्लंघन न करें, बन सकती है। उनकी मनोकामना तो आन्तरिक परिवर्तनसे ही पूर्ण हो सकती है। और आन्तरिक परिवर्तनका उपाय बस

एक ही है। वह है कष्ट सहन, जिसके लिए जनता अब परमात्माकी कृपासे तैयार हो गयी है। एक दक्ष मित्रने मेरे आशावादको मर्यादित करनेके हेतुसे मुझे कहा कि कष्ट-सहनेका अभी तो शुरुआत भर हुई है। हमें अपने ध्येयकी सिद्धिके लिये तो इससे भी कई गुना बडी कुरबानियां करनी होगी। वे तो सचमुच यह भी ख्याल करते हैं कि हमें कई "जलियांवाला" की आवृत्ति करनी होगी। हमें उस गलीके कोने तक जो कि पेटके बल रेंगनेके लिए मशहूर हो चुकी है आना होगा, पर डरके मारे कांपते हुए नहीं, अपनी इच्छाके विरुद्ध नहीं, बल्कि आनंदित चित्तसे और मन्द गतिसे। हम पेटके बल हरगिज न रेंगेंगे, पर इनकार करनेके लिये कोडोंकी कडी मार जरूर सहन करनी होगी। हां, ठीक तो है और मैं उनको विश्वास दिलाता हूं कि मेरे आशावादमें इन सब तथा इनसे भी इतनी खराब बातोंके लिये गुंजायश है जिनकी कि उन्हें कल्पना तक न होगी। किन्तु साथ ही मैं यह वचन देता हूं कि अगर भारतने शांति बनाये रखी, चित्तको अविचलित रखा, और दिलमें प्रति हिंसाका विचार भी न आने दिया (जो मैं मानता हूं कि सच्चमुच बडी कठिन बात है, किन्तु साथ ही यह भी कहूंगा कि भारतकी वर्तमान उच्च स्थितिमें उतनी कठिन नहीं है) तो हमारी यह तैयारी ही और साथ ही प्रतिक्रियाके अभावके कारण, पाशविक वृत्ति पोषक द्रव्य न पाकर, अपने आप मर जायगी और लार्ड रेडिंगको भी अपनी लम्बी चौडी बातें अलग

रख कर पश्चात्तापके मानवी उद्गार प्रगट करते हुए भारतीय वायुमण्डलमें किसी नई राज नीतिका अवसर मिलेगा। परन्तु इसके प्रतिकूल अगर हम अपने वचनको और अपनी स्थितिको भूल गये तो हमें हजारों "जलियावाला" के दृश्य देखने होंगे और तमाम देशको एक विशाल बूचडखाना बना हुआ अपनी आंखो देखना होगा। किन्तु राष्ट्रीय महासभाके सभापतिने हमें इस नौबत तक पहुंचनेके लिए पहले ही से तैयार कर दिया है। उन्हें यह यकीन हो गया है कि कैदका डर तो हमारे दिलसे दूर हो गया है। उन्हें अपने पुत्र तथा उसके साथियोंको देख कर यह भी विश्वास हो गया कि हम मार-पीट खानेकी परिक्षाओंमें भी उत्तीर्ण हो सकेंगे। किन्तु वे तो हमारे साक्षात मृत्युका भी डर दूर कर देनेकी आज्ञा दे रहे हैं। अगर वह दिन देखना हमारे नसीबमें बदा होगा तो मुझे उम्मीद है कि तब भारतमें ऐसे काफी शांतिनिष्ठ असहयोगी निकलेंगे जिनके विषयमें सुवर्णाक्षरोंमें यह लिखा जा सकेगा कि—"उन्होंने बिना किसी क्रोधके और अपने मुंहसे उस नादान खूनीके लिये भी प्रार्थना करते हुए बन्दूककी गोलियां खाईं"! हां, जो खबरें मिली हैं वे यदि सच मानी जाय तो दो आसामी स्वयं सेवकोंको कोड़े लगाये गये हैं। लाहोरके स्वयं सेवकोंने उनपर किये गये मनमाने अत्याचारोंको बडी शांतिके साथ सहन किया। यह लड़ाई मजाक नहीं है। हम गत बारह महीनोंसे बराबर तैयारी कर रहे हैं और अन्ततक हमें इसी तरह नियमोंका पालन

करना होगा। याचमे कहीं पीछे फिरनेका नाम तक न लेना चाहिए।

बड़े लाटकी बातें

जून १६, १६२१)

बड़े लाट साहबने प० मदनमोहन मालवीयके नेतृत्वमें गये शिष्ट मण्डलको जो उत्तर दिया उसे पढ़कर मुझे अत्यन्त दुख हुआ। श्रीमान युवराजके भारत आगमनके सम्बन्धमें उन्होंने महासभा और खिलाफतकी मनोदशाको जिस विपरीत रूपमें और मुझे कहना होगा कि कुटिलता पूर्व पेश किया है उसकी मुझे जरा भी आशा न थी। दोनों सस्थाओंमें आज तक उस सम्बन्धमें जितने प्रस्ताव पास हुए हैं तथा जितने वक्ताओंने भाषण किये हैं उन सबने इस बातपर अधिकसे अधिक जोर दिया है कि इसमे शाहजादेके प्रति दुर्भाव प्रगट करने या उनकी तौहीनी करनेकी कोई बात नहीं है। उनके स्वागतका बहिष्कार एक बिलकुल सिद्धान्तकी बात है और उसका उपयोग सिर्फ उसी बातके खिलाफ किया जा रहा है जिसे हम नौकरशाही की अन्धाधुन्ध तौरतरीका मानते हैं। मैं बराबर यह मानता आ रहा हूं और अब भी मानता हूं कि शाहजादा भारतमें इसी गरजसे बुलाया गया है कि वह इस सिविल सर्विस मण्डल

अर्थात् नौकरशाहीके आधिपत्यको, जिसने हिन्दुस्तानको दरिद्रता और राजनैतिक गुलामीकी हालतमें ला छोड़ा है, और भी मजबूत कर दें। यदि मेरा यह ख्याल है कि उनके इस आगमनका यही कुटिल हेतु है, गलत साबित हो जाय तो मैं बड़ी खुशीके साथ मांफी मांग लूगा।

इसी तरह बड़े लाट साहबका यह कहना भी एक दुर्भाग्यकी बात है कि शाहजादेके स्वागतके बहिष्कारका अर्थ है ब्रिटिश जनताकी तौहीनी करना। वाइसराय साहब नहीं जानते कि वे अपने देश भाई और भारतके ब्रिटिश शासकवर्ग दोनोंको एकमें शामिल करके ब्रिटिश जनताके साथ कितना घोर अन्याय कर रहे हैं। क्या वे सच चाहते हैं कि भारत अपना यह ख्याल बनावे कि यहाका ब्रिटिश शासकवर्ग ब्रिटेश जनताकी प्रति मूर्ति है और जो आन्दोलन नौकरशाहीके खिलाफ किया जाता है, और यदि बड़े लाट साहबका यही अभिप्राय है और यदि नौकरशाहीके नीरतरीकाके खिलाफ कोई असली आन्दोलन उठाना उसका सच्चा रंग रूप ज्योंका त्यों प्रगट करना ब्रिटिश जनताकी तौहीन करना है तो मुझे डर है कि मुझे अपनेको अपराधी मानना होगा। परन्तु उस अवस्थामें, मुझे अपनी पूरा नम्रताके साथ यह कहना होगा कि बड़े लाट साहबने भारतमें होने वाली इस महान जागृतिको बिलकुल उलटी आखोंसे देखा और उलटी तरह समझा है।

"मैं सैकड़ो हजारो बार इस बातको दोहराता हूं कि यह

आन्दोलन किसी भी देश या किसी भी मनुष्य समूहके खिलाफ नहीं उठाया गया है जिसके द्वारा आज भारतीय सरकारका परिचालन हो रहा है और यह मैं प्रतिज्ञा पूर्ण कहता हूं कि किसी भी तरहकी धमकीसे अथवा धमकीके साधनोंके अमल-दरामदसे, फिर वह चाहे वाइसराय साहबके तरफसे हो चाहे किसी व्यक्ति समूहकी तरफसे हो, इस आन्दोलनका गला नहीं छुट सकता और इस जागृतिकी ज्योति नहीं बुझ सकती।

मैंने लार्ड रेना ल्डसेके भाषणके उत्तरमें कहा है कि हमने न तो आक्रमण शुरूही नहीं किया है, हम अपनी किस हलचलको बन्द करें! दरअसल तो सरकारको अपनी उग्र और आक्रामक हलचलको बन्द करना चाहिये जो हिंसकांडके खिलाफ नहीं बल्कि बाकानून, नियम बद्ध, कठोर परन्तु पूरी तरह शान्तिमय आन्दोलनके खिलाफ उठाई गई है। शान्तिमय परिस्थिति तो केवल और एकमात्र सरकारको ही यदि वह चाहिती है तो पैदा करना चाहिये। उसने अपनी कृतियोंसे बनाई हुई बारूदमें आग बरसाई। परन्तु लौर या धुआ तक नहीं उठा। अब वह हैरान है कि अरे यह बारूद भी नहीं भभक उठती। वर्तमान प्रश्न अब यह नहीं है कि पञ्जाब, खिलाफत और स्वराज्यकी मागकी गलतिया दुरुस्त की जाय, बल्कि इस समय तो जो सवाल दरपेश है वह सार्वजनिक सभायें करनेका अधिकार और शान्तिमय हेतुसे सभाओंके सङ्गठन करनेका अधिकार है। और इस अधिकारकी रक्षाके लिये हम केवल

असहयोगियोंकी तरफसे लड़ाई नहीं लड़ रहे हैं। बल्कि ठेठ किसानसे लेकर राजातक सारे भारतके लिये और हर तरहके राजनैतिक दलवालोंके लिये हम यह सग्राम ठान रहे हैं। किसी भी सजीव पदार्थकी वृद्धिकी यह शर्त है। लेकिन वाइसरायके उद्गारोंमें इसके विपरीत सिद्धान्तोंपर ज़ोर दिया गया है, जिसकी रचना पूर्वकालके एक स्वाधीनताके पक्षपातीने अपनेको ऐसी हालतमें पाकर की थी, जहा कानून और शान्तिके विषयमें बहुत थोडा आदर भाव था। मैं सिर्फ उन्हीं ये छेडे छाडे हमलोंका जिक्र करता हू जो कहीं एक आध जगह नहीं, एक आदमीपर नहीं बल्कि सारे बङ्गाल, पञ्जाब और संयुक्त प्रान्तमें हो रहे हैं। मुझे इस बातमें शक नहीं है कि यदि यह दमन अपने इसी उन्मत्त रूपमें जारी रहा तो सारा दुखित देश भयके साम्राज्यसे कम्पित हो उठेगा।

परन्तु यदि यह चढाई सभ्यतापूर्वक की जा रही हो अथवा असभ्यतापूर्वक, जहांतक मैं सोच सकता हू मुझे तो असहयोगियोंके लिये नहीं मैं तो यह भी मानता हू कि सारे भारतके लिये, बस, एक ही मार्ग खुला है। इस सार्वजनिक सभायें करनेके अधिकारके विषयमें या सभ्य समाज कायम करनेके विषयमें कभी सिर झुकाया ही नहीं जा सकता। हमने तो अपनी किस्ती दरियामें डाल दी है और जबतक मनुष्य जातिके इस प्रारम्भिक अधिकारकी रक्षा नहीं हो जाती तबतक हमें उसको आगे चलाते ही रहना होगा।

अब मैंने जरा खुद अपनी हालतको साफ तौरपर समझा में निपटारेके लिये बहुत उत्सुक हूं। मैं चाहता हूं कि राउण्ड टेबिल कान्फ्रेंस हो। मैं चाहता हूं कि जो लोग हमारे पक्षको जानना चाहते हों वे हमारी हालतको साफ २ जान जाय। मैं कोई शर्त नहीं लगाना चाहता। लेकिन जब किसी कान्फ्रेन्सके होनेके पहले मुझपर कोई शर्त लगाई जाती है तब मुझे उन शर्तोंके जाचनेका मौका जरूर मिलना चाहिये और यदि ये शर्तें मुझे आत्मघातिनी दिखाई दें तो यदि मैं उन्हे मजूर न करू तो उसके लिये मुझे माफी मिलनी चाहिये। जो खिचाव पड गया है उसे मिटानेकी जिम्मेदार अकेली सरकार ही है क्योंकि आक्रमण पहले उसीने किया है।

बड़े लाटकी उलझन

लार्ड रेडिङ्ग उलझनमें पड गये हैं और उनकी बुद्धि चक्करमें पड गई है। ब्रिटिश इण्डियन एसोसियेशन और बङ्गाल नेशनल चेम्बर आफ कामर्सके अभिनन्दन पत्रोंका उत्तर देते हुये उस दिन बडे लाट साहबने फरमाया कि "हा, जब मैं जनताके एक विशेष समुदायकी हलचल पर विचार करता हू तो मैं आज भी जब मैं यहा भारतमें आया हू तबसे बराबर उसका मनन करते रहनेपर भी उलझनमें

पड जाता हूं। मेरी बुद्धि चकरा जाती है। मैं अपने मनमें कहता हूं कि यों सरकारको चुनौती देनेके उद्देश्यसे तथा उसे गिरफ्तारीसे मजबूर करनेके लिये प्रत्यक्षत कानून भङ्ग करनेसे आखिर हाथ क्या आवेगा।" इसका आंशिक उत्तर तो पं० मोतीलाल नेहरूने अपनी गिरफ्तारीके बाद यह उद्गार प्रगट करके दे दिया है कि "मैं स्वतन्त्रताके मन्दिरमें जा रहा हूं।" हम गिरफ्तारी इसलिये चाहते हैं कि यह नाममात्रकी आजादी वास्तवमें गुलामी ही है। हम इस सरकारकी सत्ताको इसलिये चुनौती देते हैं कि हम उसकी शासन प्रणालीको बिलकुल बुरी मानते हैं। हम इस सरकारको नष्ट कर देना चाहते हैं। हम उसे लोकमतके आगे झुकनेपर मजबूर कर देना चाहते हैं। हम यह दिखाना चाहते हैं कि सरकारका अस्तित्व प्रजाकी सेवाके लिये होता है प्रजा सरकारकी सेवाके लिये नहीं है। इस सरकारके राज्यमें स्वतन्त्रता पूर्वक जीवन व्यतीत करना असह्य हो गया है क्योंकि इस आजादीके लिये हमें जो कीमत अदा करनी पडती है वह बहुत ही जियादह है सो भी इस तरहके लोगोंको उसकी कल्पना तक नहीं हो सकती। हम चाहे अकेले हों चाहे हमारे साथ बहुतेरे लोग हों हम अपने आत्मसम्मान और अपने निश्चित सिद्धान्तोंको बेंच कर आजादी नहीं खरीद सकते। मैंने देखा है कि छोटे छोटे बच्चे भी जब उनके निश्चित उद्देश्यको भंग करनेका प्रयत्न किया जाता है अपने

यहांपर अड़ गये हैं, जरा भी नहीं झुके, फिर उनके मा बापकी दृष्टिमें यह बात चाहे कितनी ही हलकी क्यों न हो।

लार्ड रेडिङ्गको यह बात अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि असहयोगी लोग सरकारके साथ संग्राम कर रहे हैं। और जिस दर्जेतक सरकारने मुसलमानोंके साथ विश्वासघात किया है, पञ्जाबकी बेइज्जती की है और जो लोगोंको अपनी इच्छाके अनुसार चलानेका दुराग्रह कर रही है और अपने किये विश्वासघातका सुधार करने तथा पञ्जाबके अत्याचारोंका प्रायश्चित्त करनेसे मुंह मोड़ रही है, उस दर्जेतक हमने उसके खिलाफ बलवा शुरू किया है।

लोगोंके लिये दो मार्ग खुले थे एक तो सशस्त्र बलवा और दूसरा शान्तिमय बगावत। इनमेंसे असहयोगियोंने—कुछ लोगोंने अपनी कमजोरीके कारण शान्ति मार्ग अर्थात् स्वेच्छापूर्वक कष्ट सहन पसन्द किया है।

यह देश इन कष्ट सहन करनेवाले वीरोंके साथ होगा तो सरकारको या तो झुक जाने या मटियामेट हो जानेके सिवा दूसरी गति नहीं। यदि लोगोंने उसका साथ न दिया तो उन्हें कमसे कम इस बातका सन्तोष होगा कि हमने अपनी आजादी बेंच नहीं डाली। सशस्त्र युद्धमें आम तौरपर विजय ही अधिक खून खराबी करता है। परन्तु शान्ति और कष्ट सहन शीघ्र लोकमत तैयार करनेका सबसे सुगम उपाय है और इसलिये इसके द्वारा प्राप्त की हुई विजय सत्यके खातिर

ाजय कहलाती है। लार्ड रेडिङ्गकी जिन्दगी अदालतोंके ायुमण्डलमें गुजरी है। अतएव उन्हें सत्ताके शांति पूर्वक तिकारकी कदर करना कठिन मालूम हो गया है। परन्तु व यह युद्ध समाप्त हो जायगा तब बड़े लाट साहब इस ातको जाने गे कि इन अदालतोंसे भी बढ़कर कोई न्यायालय और वह है अन्तरात्माकी अदालत। वह दूसरी तमाम दालतोंसे श्रेष्ठ है।

लार्ड रेडिंग चाहें तो इन तमाम कष्ट सहन करनेवाले ोगोंको, अपने हिताहितका कुछ भी ख्याल न रखनेवालोंको पागल मझ सकते हैं। इसलिये उन्हें उन लोगोंको "हानि मार्ग" े हटा देनेका भी अधिकार है। यह व्यवस्था पागलोंके लिये ो बिलकुल ठीक है और यदि सरकारके भी अनुकूल पडती ो फिर तो यह आदर्श अवस्था ही है। हा, यदि असहयोगी ोग खुद ही जेल जानेकी स्थिति प्राप्त करनेपर उसके लिये ाक भौंह चढाते हों, या मुंह फुलाते हों अथवा जैसा कि ालाजीने कहा है— 'सरकारसे दया और कृपाकी भिक्षा' ागते हों, तो अलबत्ते वायसरायको शिकायतका मौका है। असहयोगीका बल तो इसी बातमें है कि बिना किसी तरहकी शिकायत किये जेल चला जाय। यदि खुद ही जेलका आह्वान करके उसका पारितोषिक पाते ही वह कुडकुडाने लगे तो अपनी बाजी हार जाय।

बड़े लाटने जो धमकी दी है वह अनुचित है। यह युद्ध तो

आखिरी फैसला हुए बिना रुक हो नहीं सकता। यह लडाई पशुबलके राज्य और लोकमतके बीच है और जो लोग लोकमतकी ओरसे लड रहे हैं वह पशुबलके सामने छाती खोलकर खडे रहनेका निश्चय कर चुके हैं। वे अपने मतोंको छोड देनेके लिये हरगिज तैयार नहीं हैं।



आगे गोलियोंकी बौछार

"के" नामधारी एक सज्जनने 'यग इंडिया' में "आगे क्या ?" नामके एक लेखमें अमृतसर, आसाम, बुलन्दशहर, काशी आदि स्थानोंमें नौकरशाहीके द्वारा होनेवाले एक नये ही पाशविक और लोमहर्षण दमनका हृदयस्पर्शी वर्णन किया है। हा, यह सम्भव है कि उन घटनाओंके वर्णनमें कुछ अत्युक्तिसे काम लिया गया हो, परन्तु असहयोगियोंकी तरफसे आजतक जितनी रिपोर्ट आई है वे इतनी ठीक ठीक साबित हुई है और उनकी अस्वीकृति इतनी झूठ, कि मैं "के" के द्वारा सुचित्र वर्णनमें कुछ कमीबेशी नहीं कर सकता। "के" ने उन अत्याचारोंका वर्णन मेरे पास आये हुए संवादपत्रों तथा अखबारोंके आधार पर किया है।

पुलिसमें तो ज्यादातर हमारेही देशभाई हैं; परन्तु यह सिद्ध है कि वे अपने आला अफसरोंकी हरकतोंको देख देखकर बेकानूनी कामोंके करने पर आमादा हो जाते हैं। जब कि हुल्लड

थाज लोग निरंकुश हो जाते हैं तब उसके सिवा कोई अच्छी बात उनके दिमागमें हो नहीं आती। पर जब पुलिस निरंकुश हो जाती है तब वह जो कुछ करती है सोच—समझ कर करती है और इसलिए उसका क़ाम अक्षम्य होता है। हुल्लडबाजोंके पागलपनकी तो दवा हो सकती है पर पुलिसकी सनक तो बिचारे बेखबर लोगोंके लिए तबाहीका ही सामान हो जाती है। इतने बरसोंसे तो हम इसके कष्टोंसे कराहते आरहे थे। पर अब ईश्वरको धन्यवाद है, कि आज भारतवर्ष सरकारकी सुव्यवस्थित उन्मत्तताका मुकाबला करनेके लिए तैयार है।

'डराने और धमकाने वाले' कहे जाने वाले लोगोंपर जो कहने भरके 'मामूल कानूनों' का व्यवहार किया जाता है उसके ऊपरका परदा हमें हटा देना चाहिये। इससे तो सीधा फ़ौजी कानून ही अच्छा। हमें उसको निमन्त्रण देना और उसका स्वागत करना चाहिये। ओडायरशाही और डायरशाहीका बचाव चाहे किसी तरह न किया जा सके, पर वह आदर्श है प्रामाणिक। परन्तु आज जो कुछ भारत वर्षमें दिखाई दे रहा है वह तो अवर्णनीय पाखण्डके सिवा और कुछ नहीं।

यदि यह सच है कि कुर्कीके बहाने पुलिस काशीमें हमारे घरोंके अन्दर घुस गई है और घरके दूसरे लोगोंके भी गहने पत्ते उठा ले गई, यदि यह सच है कि बुलन्दशहरमें शान्तिकी रक्षाके नामसे लोगोंके घरोंमें घुसकर उन्होंने उनपर हमला किया है, यदि यह सत्य है कि कुर्कीके लिए उन्होंने मुजरिमोंके कपड़े लत्ते

तक छीन कर उन्हें प्राय नगा कर दिया, तो अब हमारे लिए भयङ्करसे भयकर और उग्रसे उग्र रूपके आक्रामक सविनय, परन्तु साथ ही शान्तिमय, कानून भगका समय आ पहुचा है। हम उस दिन तक के लिए जबकि निरीह और निहत्थे लोगों पर गोलिया झाडी जायं, इन्तजार नहीं कर सकते और महज बचावकी स्थितिमे रहते हुए लोगोंके धैय्य पर अनुचित भार नहीं डाल सकते तथा सरकारके हस्तकोंको हमारे घरोंमे लूटमार नहीं करने दे सकते। हमे अब गोलिया झेलनेके लिये और सो भी जितना जल्दी हो सके उतना जल्दी तैयार हो जाना चाहिये। हम लोग जो कि प्रधान कार्यकर्ता हैं, निरपराध लोगोंपर होनेवाले इन सताप क्रोध कारक दण्ड योग्य हमलोंको निष्काम शान्तिके साथ नही देख सकते, यद्यपि ये लोग स्वय सेनक हैं और उन्होने कष्टोंको खुद व खुद अगीकार किया है।

एक यूरोपियन 'युवक' (क्या युरोपियन युवकोंको हथियार दिये गये हैं?) के द्वारा एक मुसलमान युवकको गोलीसे मार दिया जाना इस बातके लिये कि वह खादी टोपी पहने था या खेंचता था, (जैसी स्थिति रही हो) एक ऐसी घटना है जिसपर चुप नहीं रहा जा सकता। इस अत्याचारका बदला यदि आवश्यक हो तो हमें जरूर चुकाना चाहिये। पर किस तरह? स्वय अपने सिरपर गोलिया खाकर!

सरकार हमको या तो मारकाटके लिये या घृणायोग्य

आत्मसमर्पणके लिये उत्तेजित करना चाहतो हैं। परन्तु हमें दोमेंसे एक भी काम न करना चाहिए। हमें इस ढंगका सविनय कानून भग शुरू करना चाहिये जिससे सरकारको गोलियां चलाने पर मजबूर होना पड़े।

सरकार प्रजाजनोंके बीच युद्ध छिड़ाना चाहती हैं। हमें उसके जालमें फंसकर उसके हाथके खिलौने न हो जाना चाहिये। आन्तरिक संग्रामके लिये सरकारको अपने पक्षका बल बढ़ानेकी खुल्लम खुल्ला तैयारीका नमूना लीजिये। अलीगढ़के मजिस्ट्रेटने अलीगढ़ जिलेके रईसोंके नाम नीचे लिखा हुकमनामा भेजा है—

"आप लोग इस बातको अच्छी तरह जानते ही हैं कि स्थानिक सरकारने घोषणा की है कि खिलाफत और महासभाके स्वय सेवक दल गैरकानून हैं और उनके दमनके लिये हुक्म भी जारी हुए हैं। अलीगढ़में ये लोग बहुत धाधली मचा रहे हैं और किसी दिन शायद हाथरसमें भी ऊधम मचावे, यानी दुकानोंपर पहरा रखें, लोगोंको डरावे धमकावें और लोगोंको तथा सरकारको नुकसान पहुंचावें और दिक करें।

"मेरे मातहत पुलिसकी तादाद थोडी है। और इस तरह के मामलेमें जबतक कि उसके जरिये दर असल शान्ति भंग न हो या दङ्गा फसाद न हो, फौजको मददके लिये बुलाना मेरे मतके बहुत विरुद्ध है।

"इसलिये मैं अपने जिलेके कितने हो बड़े बड़े रईसों तथा दूसरे सज्जनोंसे लिखा पढ़ी कर रहा हूं कि यदि यह झगड़ा

ना फैला कि पुलिस उसे न संभाल सके, वह तंग आजाय
र दिक हो जाय तो आप लोग मुझे सहायता दें। यदि आप
स मामलेमें मुझे मदद देनेके लिये तैयार हों तो मैं आपसे
हता हू कि आप कृपा करके अपने पास ५० हट्टे कट्टे आदमी
र आसामी चुनकर तैयार रखें और जब मैं आपको खबर
रूं तब आप उन्हें मेरे पास भेज दें और वे बतौर स्पेशल
लिसके भरती हो जाय'।

"फिलहाल तो इतना ही जरूरी है कि आदमी चुन भर लिये
ाय और उनके नाम, गाव आदिकी एक फर्द तैयार कर ली
ाय जिससे जब वे बुलाये जायं तो फौरन जमा किये जा
कें।

"आशा है आप समयपर ही इसका उत्तर दीजियेगा।"

(सही) जे० सी० स्मिथ

हमें इस फन्देसे बचना चाहिये। रईस लोग झांसेमें आ
ायं तो उन्हें आने दीजिये। उनका जो जी चाहे सो करें।
हम तो ऐसे ढङ्गका सविनय कानून भंग करें जिससे हमारे ही
भाई बिरादरोंकी मुठभेडका मौका न आवे। फिर वे हमारे देश
भाई चाहे *'सिविल गार्ड' के रूपमें हों, चाहे अब भी मामूली*
गृहस्थकी हैसियतमें हो। यदि अटल साहससे काम लिया
गया और पूर्ण शान्ति रखी गई तो एक महीनेके अन्दर इस
युद्धमें विजय प्राप्त हो सकती है। ईश्वर भारतको ज्ञान और
साहस प्रदान करे

मैंने तो ख्याल किया था कि मृत्युका मुकाबला करनेकी प्रतिज्ञा अभी दूरकी बात है। पर मालूम होता है कि ईश्वर चाहता है, हमारी पूरी और अच्छी तरह परीक्षा ले ली जाय उसीके भरोसे इस युद्धका श्रीगणेश हुआ है। वही हमें उस मेंसे पार होनेका बल देगा।

मालवीय परिषद्

(जनवरी, १६ १९२२)

बम्बईमे श्री मालवीयजी आदिने जिस मध्यस्थ परिषद्का आयोजन किया था वह हो गई। उसमें सफलता हुई भी और नहीं भी हुई। जहातक उसका सम्बन्ध उपस्थित सज्जनोकी इस अभिलाषासे था कि इस वर्तमान झगडेका निपटारा शान्तिके साथ किया जाय, तथा जहातक उसके द्वारा परस्पर भिन्नमत रखनेवाले लोग एक ही छत्रच्छायामे लाये जा सके तहातक तो उसके काममें सफलता हुई है। परन्तु यद्यपि उसमे कुछ प्रस्ताव तो स्वीकृत हुए तथापि वह मेरे चित्तपर यह अङ्कित न कर सकी कि जो लोग यहा एकत्र हुए हैं वे समष्टिरूपसे वास्तविक प्रश्नकी गम्भीरता और गुरुताको अनुभव करते हैं। इस दृष्टिसे यह अनफल हुई। भाषण स्वातन्त्र्य तथा मुद्रण स्वातन्त्र्यके हकों पर जोर देनेकी अपेक्षा, जो कि प्रजाके अधिकार हैं और

जो कि सर्वपक्षीय परिषद्से भी अधिक हैं, परिषद्का चित्त सर्व-पक्षीय परिषद्की आयोजनाकी ही ओर अधिक खिंचता हुआ दिखाई दिया। जो लोग निष्पक्ष हैं उनसे मैंने यह अपेक्षा की थी कि वे अपना यह मत दृढ़ताके साथ प्रगट करेंगे कि असहयोगकी कार्यविधिके सम्बन्धमें हमारा चाहे कितना ही मतभेद क्यों न हो, प्रजाकी स्वतन्त्रता तो हम सबकी एकसी बपौती है और इस स्वत्वकी कायमी स्वराज्यके तीन चौथाईके बराबर है और इस-लिये यदि आवश्कता पड़ेगी तो हम कानूनका सविनय अनादर करके भी उसकी रक्षा करना चाहेंगे।

परन्तु सर्वपक्षीय परिषद्को छोड़कर इस विषयपर परिषद्-का ध्यान आकर्षित न किया जा सका, अतएव इसी बातपर वादविवाद हुआ कि ऐसी परिषद्की आयोजनाके लिये कौन सी बातें परम आवश्यक हैं।

स्वयं मेरी स्थिति तो स्पष्ट थी। एक व्यक्तिकी हैसियतसे बिना किसी शर्तके मैं किसी भी परिषद्में जा सकता हूं मैं तो सुधारक हूं, और सुधारककी हैसियतसे मेरा यह हेतु ही है कि जो लोग मेरा कथन सुननेके लिये तैयार हों उनके पास मैं जाऊं और जिन विचारोंको मैं ठीक समझता हूं उनका कायल उन्हें भी करूं पर जब मुझसे यह कहा गया कि सर्वपक्षीय परि-षद् तभी सफल हो सकती है जब देशका वायुमण्डल उसके अनुकूल हो, अतएव ऐसी अनुकूलताके लिये जिन जिन शर्तोंकी आवश्यकता है वे पेश कीजिये। तब मुझे कुछ शर्तें लिखानी

मैंने तो ख्याल किया था कि मृत्युका मुकाबला करनेकी प्रतिज्ञा अभी दूरकी बात है। पर मालूम होता है कि ईश्वर चाहता है, हमारी पूरी और अच्छी तरह परीक्षा ले ली जाय। उसीके भरोसे इस युद्धका श्रीगणेश हुआ है। वही हमें उस मेंसे पार होनेका बल देगा।

मालवीय परिषद्

(जनवरी, १६ १९२२)

बम्बईमें श्री मालवीयजी आदिने जिस मध्यस्थ परिषद्का आयोजन किया था वह हो गई। उसमें सफलता हुई भी और नहीं भी हुई। जहांतक उसका सम्बन्ध उपस्थित सज्जनोंकी इस अभिलाषासे था कि इस वर्तमान झगडेका निपटारा शान्तिके साथ किया जाय, तथा जहांतक उसके द्वारा परस्पर भिन्नमत रखनेवाले लोग एक ही छत्रच्छायामें लाये जा सके तहांतक तो उसके काममें सफलता हुई है। परन्तु यद्यपि उसमें कुछ प्रस्ताव तो स्वीकृत हुए तथापि वह मेरे चित्तपर यह अङ्कित न कर सकी कि जो लोग यहां एकत्र हुए हैं वे समष्टिरूपसे वास्तविक प्रश्नकी गम्भीरता और गुरुत्वको अनुभव करते हैं। इस दृष्टिसे यह असफल हुई। भाषण स्वातन्त्र्य तथा मुद्रण स्वातन्त्र्यके हकों पर जोर देनेकी अपेक्षा, जो कि प्रजाके अधिकार हैं और

किया कि सरकारके लिए ऐसी अनियन्त्रित सिफारिशोंको मञ्जूर करना कठिन होगा। तब मैं पञ्चायत सिद्धान्तपर राजी हो गया जैसा कि उस प्रस्तावमें ग्रथित किया गया है। दूसरा समझौता हुआ है पहरा रखनेके सम्बन्धमें। मेरा कहना यह था कि यदि सर्वपक्षीय परिषद्के होनेका निश्चय हो तो विरोधक ढङ्गकी जितनी असहयोगकी हलचल है वह सब बन्द रखी जाय तथा जिस शांतिमय पहरेका सद्धेतु सिद्ध है उसको छोड़कर सब तरहका पहरा रखना भी मुल्तवी कर दिया जाय। पर कबतक ? जबतक परिषद्का फल न प्रगट हो। परन्तु विरोधक हलचलोंकी जटिलता मुझे इतनी भय कर मालूम हुई कि यह बात शायद ही मञ्जूर होती। अतएव मैंने खुद अपनी ही तजवीज वापस ले ली और सद्धेतु पूर्ण शांतिमय पहरा रखनेकी बात भी छोड़ दी। यद्यपि ऐसा करते हुए मुझे बहुत अफसोस हुआ। पर मैंने मनमें कहा कि शराबखोरीको मिटानेके उद्देश्यसे जो सज्जन शराबकी दूकानोंके पहरेके काममें लगे हुए हैं वे इस थोड़े दिनकी कार्य्य हानिपर ध्यान न देंगे।

मैंने यह बात भी मञ्जूर कर ली है कि मैं महासभाकी कार्यसमितिको यह सलाह दूंगा कि महासभाके द्वारा स्वीकृत सामान्य सामुदायिक सविनय कानून भङ्ग ३१ जनवरीतक स्थगित कर दिया जाय जिससे समिति और परिषद् सरकारके साथ सुलहकी बातचीत कर सके। अपने उद्देश्यकी सचाई

पड़ीं। और मैं मंजूर करता हू कि प्रस्ताव समितिने मेरी बातोंको अधिकसे अधिक सहानुभूतिके साथ सुना और समझा तथा मुझे शामिल करनेकी हर तरहकी चेष्टा की। परन्तु इसके साथ ही मैंने देखा कि उसने सरकारकी कठिनाइयोंपर भी खूब ध्यान दिया। उसकी यह प्रवृत्ति स्तुत्य ही थी। यदि परिषद्में सरकारकी ओरसे भेजे गये राजप्रतिनिधि उपस्थित होते तो इसमें कोई शक नहीं कि उस अवस्थामें सरकारके पक्षकी बातें इससे अधिक अच्छी तरह नहीं पेश की जा सकती थीं।

इसका फल हुआ समझौता। सरकारका नये हुक्मोंको वापस ले लेना और उनके अनुसार जिन जिन लोगोंको सजायें दी गई हैं उनको तथा फतवा कैदियोंको अर्थात् अली भाईयों तथा दूसरे सज्जनोंको जिन्हें फौजी नौकरी सम्बन्धी फतवेके मामलेमें सजा दी गई है, छोड़ देना, तो हम दोनोंको मञ्जूर था। परन्तु समितिसे यह भी कहा गया था कि कुर्कीके वारट मन्सूख कर दिये जाय, जो जुर्माना लोगोंसे वसूल कर लिया गया है वह लौटा दिया जाय तथा मामूली कानूनकी ओटमें जिन लोगोंको अहिंसात्मक तथा दूसरे सीधे साधे काम करनेके कारण सजायें दी गई हैं वे भी, उनके कार्यों के अहिंसात्मक होनेके प्रमाण मिलनेपर छोड दिये जाय। समितिने देखा कि इस सूचनामें भी सार है। इसके लिये मैंने यह सूचना पेश की कि यह परिषद् एक समिति नियुक्त कर दे और वह समिति इनका फैसला करे। परन्तु प्रस्ताव समितिने यह प्रगट

न फटकने देना चाहिये। जब शक्तिके साथ सयम और शिष्टताका योग हो जाता है तब उसके प्रभावको कोई नहीं रोक सकता। सविनय कानून भङ्ग तो हमारा अनिवार्य स्वत्त्व है। अतएव उसकी तैयारी तो सर्वपक्षीय परिषद्के होते रहनेपर भी जारी ही रहेगी और सविनय कानून भङ्गकी तैयारीमें इतनी बातें शामिल हैं—

१ स्वयंसेवकोंके नाम दर्ज करना,

२ स्वदेशी प्रचार करना,

३ छुआछूतको दूर करना,

४ शब्द, कृति और विचार तकमें अहिंसाका पालन करनेकी तालीम देना और

५ भिन्न भिन्न जातियों और सम्प्रदायोंमें एकता स्थापित करना।

मुझे मालूम हुआ है कि भारतके विभिन्न भागोंमें ऐसे भी कितने ही लोग स्वयसेवक सेनामें भर्ती कर लिये गये हैं जो न तो खादीहि पहिनते हैं और न पूर्ण 'अहिसा' के ही कायल हैं अथवा यदि वे हिन्दू हैं तो यह नहीं मानते हैं कि छुआछूतका कायल न होना मनुष्य जातिका अपराध करना है। मैं बार बार यह बात लोगोंको कहातक समझाऊ कि अपने ही बनाये नियतोंका पालन न करना अपनी प्रगतिकी गाडीको पीछे घिकेलना है। परमेश्वर हमारे कार्य उत्कृष्टतासे खुश होगा उसकी मिकदारसे नहीं। जो लोग केवल जबानसे अपनेको मुसल-

सिद्ध करनेके लिये मुझे यह परम आवश्यक मालूम हुआ। जबतक कि परिषद्की बातचीत जवाबदेह लोगोंद्वारा हो रही है तबतक हम कोई नया काम आक्रामक स्वरूपका शुरू नहीं कर सकते। मैंने कार्यसमितिको यह सलाह देना भी कुबूल कर लिया कि यदि सर्वपक्षीय परिषद् होगी तो जबतक वह होती रहेगी, तमाम हड़तालें बन्द रखी जायगी। इसे मैं अनिवार्य मानता हूं। हड़तालें नौकरशाहीके प्रति अपना विरोध प्रगट करनेका साधन हैं। पर जब हम उसके साथ सुलह करनेपर राजी हैं तो हम हड़तालें जारी नहीं रख सकते कार्य्यकर्ता लोग इस बात पर ध्यान दें कि सामान्य सामुदायिक सविनय कानून भङ्गको छोड़कर अभीतक महासभाकी और कोई हलचल बन्द नहीं की गयी है। बल्कि इसके विपरीत, स्वयंसेवकके नाम दर्ज करना तथा स्वदेशी प्रचारका कार्य बराबर वैसाही जारी रहना चाहिये। जहां जहां पूर्ण शान्तिमय ढङ्गसे काम किया जाता हो वहां शराबकी दुकानोंपर पहरा जारी रखा जा सकता है। जहां जहां अकारण ही पहरा रखनेकी मनाही कर दी गई है वहां वहां भी 'पहरा' अवश्यही जारी रहना चाहिये। इसी प्रकार पाठशालाओं और विदेशी कपड़ोंकी दुकानोंपर भी पहरा जारी रह सकता है। परन्तु एक ओर जहां हमारा कार्य उत्साहपूर्वक चलाया जाय वहां दूसरी ओर हमें अधिकसे अधिक 'संयमसे काम लेना' चाहिये और हिंसा तथा असभ्य या अशिष्टताको लेशमात्र भी हमारे पास

फिर वह चाहे अङ्गरेजी हो या चाहे हिन्दुस्तानी, वापस ला जाय।

(२) महासभाकी उप समितिको सम्मतिके अनुसार पूरा पूरा व्यवहार किया जाय और इसलिये सर मायकल ओडायर जनरल डायर तथा दूसरे अफसरोंकी, जिनकी बरखास्तगीकी राय समितिने दी है, पेन्शन बन्द कर दी जाय।

(३) यदि पूर्वोक्त मांगें मंजूर की जाती हों तो स्वराज्यसे हमारा अभिप्राय है पूरा औपनिवेशिक स्वराज्य। इस स्वराज्यकी योजना उन प्रतिनिधियोंके द्वारा तैयार होनी चाहिये जो महासभाके संगठनके अनुसार निर्वाचित किये गये हों। इसका अर्थ है—चार आनेपर मत देनेका अधिकार। हरएक बालिग हिन्दुस्तानी, स्त्री हो या पुरुष, जो चार आने देता है और जिसने महासभाके ध्येयको स्वीकार किया है, मतदाता होनेका अधिकार रखता है। इन्हीं मतदाताओंके द्वारा स्वराज्य संगठनके लिये प्रतिनिधि चुने जायंगे। इसको कार्य्यरूपमें परिणत करना होगा। ब्रिटिश पार्लिमेण्ट इसमें कुछ भी रद्दोबदल न कर सकेगी।

इसपर टीका टिप्पणी करने वाले लोग पूछते हैं कि यदि महासभाका कार्यक्रम ऐसा पक्का और कठोर है, तो फिर परिषद्की आवश्यकता ही कहां रह जाती है? पर मेरी रायमें आवश्यकता है और रहेगी।

अब इस बातपर विचार करें कि इन मांगोंकी पूर्ति किस रीतिसे की जाय। हो सकता है कि सरकारके पास इन

मान और हिन्दू कहते हैं उन्हें ईश्वरके दरबारमें स्थान नहीं मिल सकता। सच्चे और अच्छेसे अच्छे मुसलमानसे बढ़कर इस्लाममें और क्या शक्ति है? हजारों नाममात्रके हिन्दू-धर्मके अनुयायी, जो अपने विश्वास और श्रद्धाके अनुसार व्यवहार नहीं करते हैं वे उसको कलङ्कित करते हैं। यदि हिन्दू धर्मका एक ही सच्चा और अनुयायी हो तो वह अकेला हमेशाके लिये और सारी दुनियाके मुकाबिलेमें उसकी रक्षाके लिये बस है। उसी प्रकार एक सच्चा और असहयोगी लाखों असहयोगी कहलानेवालोंकी अपेक्षा हमेशाही अच्छा है। सविनय कानून भङ्गकी अच्छीसे अच्छी तैयारी है विनयशीलताको अर्थात् सत्य भक्ति और अहिंसा वृत्तिको स्वय अपने तथा अपने सहवासियोंके अन्दर जाग्रत करना।

इस खयालसे कि 'महासभाकी मागे क्या क्या हैं' यह अच्छी तरहसे जानते हुए सब लोग सर्वपक्षीय परिषदमें शरीक हो सकें, मैंने अपनी तरफकी सब बातें साफ पेश को और खिलाफत, पञ्जाब तथा स्वराज्य सम्बन्धी अपना दावा परिषदमें उपस्थित किया। उसे मैं यहा देता हू।

(१) जहांतक, मैं अपनी याददाश्तके आधार पर लिख सकता हू, कुस्तुन्तुनिया, एड्रियानोपल, अनातोलिया तथा स्मर्ना और थ्रेस तुर्क लोगोंको वापस दे दिये जाय। अरब, मेसोपोटामिया, पैलेस्टाइन, और सीरियासे तमाम गैरमुस्लिम सत्ता हटा ली जाय और इसलिये इन प्रदेशोंसे तमाम ब्रिटिश सेना,

फिर वह चाहे अङ्गरेजो हो चाहे हिन्दुस्तानी, वापस ली जाय।

(२) महासभाकी उप समितिकी सम्मतिके अनुसार पूरा पूरा व्यवहार किया जाय और इसलिये सर मायकल ओडायर जनरल डायर तथा दूसरे अफसरोंकी, जिनकी बरखास्तगीकी राय समितिने दी है, पेन्शन बन्द कर दी जाय।

(३) यदि पूर्वोक्त मांगे मंजूर की जाती हों तो स्वराज्यसे हमारा अभिप्राय है पूरा औपनिवेशिक स्वराज्य। इस स्वराज्यकी योजना उन प्रतिनिधियोंके द्वारा तैयार होनी चाहिये जो महासभाके संगठनके अनुसार निर्वाचित किये गये हों। इसका अर्थ है—चार आनेपर मत देनेका अधिकार। हरएक बालिग हिन्दुस्तानी, स्त्री हो या पुरुष, जो चार आने देता है और जिसने महासभाके ध्येयको स्वीकार किया है, मतदाता होनेका अधिकार रखता है। इन्हीं मतदाताओंके द्वारा स्वराज्य संगठनके लिये प्रतिनिधि चुने जायगे। इसको कार्य्यरूपमें परिणत करना होगा। ब्रिटिश पार्लिमेण्ट इसमें कुछ भी रद्दोबदल न कर सकेगी।

इसपर टीका टिप्पणी करने वाले लोग पूछते हैं कि यदि महासभाका कार्यक्रम एसा पक्का और कठोर है, तो फिर परिषद्की आवश्यकता ही कहा रह जाती है? पर मेरी रायमें आवश्यकता है और रहेगी।

अब इस बातपर विचार करें कि इन मांगोंकी पूर्ति किस रीतिसे की जाय। हो सकता है कि सरकारके पास इन दावोंके

लिये, युक्तिसंगत और विश्वसनीय उत्तर हो। महासभाने यह कमसे कम माग की है, लेकिन कमसे कम मांग करनेका अर्थ यही है कि उसे अपने ध्येयके न्याय मूलक होनेमें जितना विश्वास है उससे अधिक नहीं। इसका यह भी अर्थ है कि इसमें सौदा करनेकी गुंजायश नहीं है। अतएव इनमें किसीकी कमजोरी या असमर्थताकी दोहाई नहीं दी जा सकती। सिर्फ युक्ति और तर्कका ही सहारा लेना होगा। यदि वाइसराय परिषद्की आयोजना करते हों तो इसका मतलब यही है कि या तो वे इन दावोंके न्याय होनेके कायल हैं, या महासभाके लोगोंको तथा दूसरोंको उनकी अन्यायता सिद्ध करनेकी आशा करते हैं। इन दावोंको रद्द करने या कम करनेका जो विचार वे करें उनकी न्यायताके विषयमें तो उन्हें विश्वास होगा ही। यह अर्थ है मेरी उस परिषद्का जिसे मैं 'बराबरी वालोंकी परिषद्' कहता हूं। इसमें बल प्रयोगका कहीं नामों निशा तक न हो और ज्योंही एकको अपने पक्षमें अन्याय देख पड़े त्योंही वह उसको छोड़ दे। मैं श्रीमान् बड़े लाट साहबको तथा उससे सम्बन्ध रखने वाले प्रत्येक व्यक्तिको यकीन दिलाता हूं कि महासभाके लोग तथा असहयोगी दुनियाके या भारतके समझदार लोगोंकी तरह ही समझदार हैं, क्योंकि किसी भी मान्य बातको नामजूर कर देनेके फलस्वरूप जो कष्ट सहन करना पड़ेगा वह उन्हींका कर्त्तव्य होगा।

मैंने यह आग्रहके साथ कहते हुए सुना है कि खिलाफतके

लिये तो साम्राज्य-सरकार कुछ नहीं कर सकती। यह बात तो उसकी शक्तिके बाहर है। मैं चाहता हू कि सरकार मुझे ऐसा विश्वास करा दे। अगर साम्राज्य-सरकार इस मामले को अपना ही काम समझ कर भारतके मुसलमानोंका साथ देनेको तैयार हो तो मुझे बडा सन्तोष होगा और मैं साम्राज्य सरकारकी हार्दिक सहायता लेकर दूसरी शक्तियोंको भी खिला-फतके दावेकी न्यायता जचानेका यत्न करुंगा और दावेकी न्यायताके स्वीकृत होनेपर भी उसकी पूर्तिके विषयमें तो बहुत-कुछ विचार करना बाकी ही रहेगा।

उसी प्रकार पजाबके विषयमें भी। सिद्धान्त मान लेने पर भी छोटी छोटी बाते तय करना बाकी रह गया है। बरखास्त किये गये मुलाजिमोंकी पेन्शन बन्द करनेके विषयमें भी तो अनेक कानूनी कठिनाइया पेश की गई हैं। पाठक शायद यह न जानते होंगे कि मौलाना शौकतअलीको पेन्शन (मेरा ख्याल है कि उनकी स्थिति भी वैसी ही थी जैसी कि सर माय-कल ओडायरकी) तो बगैर किसी प्रकारकी जाचके या बगैर उनको पहले नोटिस दिये ही बन्द कर दी गई थी। मुझे विश्वास है कि सर्विस रेग्युलेशन्समें यह साफ साफ लिखा है कि किसी भी पदाधिकारीका नाम, फिर वह चाहे कितनी ही उच्च क्यो न हो, यह पाये जाने पर कि उसने अपनी कर्त्तव्यकी ओर अवहेलना की है अथवा किसी प्रकारका राजद्रोही काम किया है पेन्शन सूचीमेंसे एक दम निकाल दिया जायगा।

भी तरह सरकार, इन अफसरोंकी पिछली सेवाओंकी दुहाईको छोडकर पञ्जावकी मागोंको ना मंजूर करनेके कारण तो सिद्ध करे। यदि यह भी मान लिया जाय कि भारतकी और साम्राज्यकी सेवा भिन्न भिन्न है तो भी उन्होंने भारतको जो हानि पहुचाई है उसे देखकर मैं यह नहीं मान सकता कि उन्होंनेसाम्राज्यकी कुछ सेवा की है।

स्वराज्य योजना भी निःसन्देह एक ऐसी बात है जिसपर कई प्रकारके भिन्न भिन्न मत होंगे। और यह तो मुख्यत एक ऐसी बात है जिसपर एक सभामें विचार होना आवश्यक है। और वहा भी सबको अपने अपने विचार साफ साफ प्रगट कर देना चाहिये। किसीको कई ब त अपने दिलमें न रख छोडना चाहिये। 'भारतको स्वतन्त्रता' यही एक सर्वोच्च हेतु सबके दिलमें होना चाहिये। ब्रिटिश जनताको चाहे इस तरफ ध्यान देनेकी फुरसत न हो, हाउस आफ कामन्स चाहे इस विषयमें उदासीन हो, हाउस आफ लार्ड्स चाहे विरोध भाव रखता हो, पर इससे इसमें कोई बाधा न होनी चाहिये। भारतका एक भी आदमी जो सच्चा देशभक्त है वह अपने विषयसे बाहरकी इन बातोंके झमेलेमें न पडेगा। उसका ध्यान तो सिर्फ एक ही बातपर रहेगा। वह तो सिर्फ यही सोचेगा कि क्या भारत जो उसके है?, या वह एक बालककी है जिसे पचाना उसकी

शक्तिके बाहर है? इस बातका निश्चय तो केवल भारतीय ही कर सकेंगे, बाहरी लोग नहीं।

इस दृष्टिसे सोचनेपर पूरे स्वराज्यकी योजना तैयार करनेके लिये एक ऐसी सभा करनेके विचारको मैं अवश्यही अपरिपक्व मानता हूं। भारत अपनी ऐसी शक्तिका परिचय अभी नहीं दे पाया है जिसका सामना करना प्रतिपक्षीकी शक्तिके बाहर हो। माना कि उसने भारी कष्ट सहिष्णुता दिखाई है, किन्तु अभी अपने ध्येयके गौरवकी दृष्टिसे उसे और भी कष्ट सहन करना बाकी है। अभी उसे और भी अधिक नियम बद्ध होनेकी आवश्यकता है। परिषद्के प्रस्तावोंसे असहयोगियोंसे अलग रखनेके लिये मुझे खास तौर पर ध्यान रखना पड़ा था, क्योंकि अभी हममें बहुत कमजोरियां हैं। जब भारतमें नियमबद्धताके साथ बलका संचार हो जायगा तब मैं खुद ही वाइसरायका दरवाजा खटखटाऊंगा और कहूंगा कि परिषद् कीजिये। और मुझे मालूम है कि वाइसराय, फिर वे चाहे कोई प्रसिद्ध कानून दां हों चाहे बड़े नामी फौजी पुरुष हों, प्रसन्नताके साथ उस अवसरको गले लगावेंगे। मुझे हमारी कमजोरीका ज्ञान है, इसीलिये मैं सीधा उनके पास नहीं जाता हूं। परन्तु चूंकि मैं विनयशील हूं, इसलिये मैं नरम अथवा दूसरे मित्रोंके द्वारा यह साफ बतला रहा हूं कि मैं प्रामाणिक परिषद् या परामर्शके एक भी अवसरको हाथसे जाने देना नहीं चाहूंगा। और इसलिये मैंने असहयोगियोंको यह सलाह देनेमें आगा पीछा नहीं किया

भी तरह सरकार, इन अफसरोंकी पिछली सेवाओंकी दुहाईको छोड़कर पञ्जाबकी मांगोंको नामंजूर करनेके कारण तो सिद्ध करे। यदि यह भी मान लिया जाय कि भारतकी और साम्राज्यकी सेवा भिन्न भिन्न है तो भी उन्होंने भारतको जो हानि पहुंचाई है उसे देखकर मैं यह नहीं मान सकता कि उन्होंनेसाम्राज्यकी कुछ सेवा की है।

स्वराज्य योजना भी निःसन्देह एक ऐसी बात है जिसपर कई प्रकारके भिन्न भिन्न मत होंगे। और यह तो मुख्यतः एक ऐसी बात है जिसपर एक सभामें विचार होना आवश्यक है। और वहां भी सबको अपने अपने विचार साफ साफ प्रगट कर देना चाहिये। किसीको कुई ब त अपने दिलमें न रख छोड़ना चाहिये। 'भारतको स्वतन्त्रता' यही एक सर्वोच्च हेतु सबके दिलमें होना चाहिये। ब्रिटिश जनताको चाहे इस तरफ ध्यान देनेकी फुरसत न हो, हाउस आफ कामन्स चाहे इस विषयमें उदासीन हो, हाउस आफ लार्ड्स चाहे विरोध भाव रखता हो, पर इनसे इसमें कोई बाधा न होनी चाहिये। भारतका एक भी आदमी जो सच्चा देशभक्त है वह अपने विषयसे बाहरकी इन बातोंके झमेलेमें न पड़ेगा। उसका ध्यान तो सिर्फ एक ही रहेगा। वह तो सिर्फ यही सोचेगा कि क्या भारत जो है उसके लिये तैयार है? या वह एक बालककी ऐसी वस्तुको मांग रहा है जिसे पचाना उसकी

ाकिके बाहर है ? इस बातका निश्चय तो केवल भारतीय ही कर सकेंगे, बाहरी लोग नहीं।

इस दृष्टिसे सोचनेपर पूरे स्वराज्यकी योजना तैयार करनेके लिये एक ऐसी सभा करनेके विचारको मैं अवश्यही अपरिपक्व मानता हूं। भारत अपनी ऐसी शक्तिका परिचय अभी नहीं दे पाया है जिसका सामना करना प्रतिपक्षीकी शक्तिके बाहर हो। माना कि उसने भारी कष्ट सहिष्णुता दिखाई है, किन्तु अभी अपने ध्येयके गौरवकी दृष्टिसे उसे और भी कष्ट सहन करना बाकी है। अभी उसे और भी अधिक नियम बद्ध होनेकी आवश्यकता है। प रपङ्के प्रस्तावोंसे असहयोगियोंसे अलग रखनेके लिये मुझे खास तौर पर ध्यान रखना पड़ा था, क्योंकि अभी हममें बहुत कमजोरियां हैं। जब भारतमें नियमवद्धताके साथ बलका सचार हो जायगा तब मैं खुद ही वाइसरायका दरवाजा खटखटाऊंगा और कहूंगा कि परिषद् कीजिये। और मुझे मालूम है कि वाइसराय, फिर वे चाहे कोई प्रसिद्ध कानून दां हों चाहे बड़े नामी फौजी पुरुष हों, प्रसन्नताके साथ उस अवसरको गले लगावेंगे। मुझे हमारी कमजोरीका ज्ञान है, इसीलिये मैं सीधा उनके पास नहीं जाता हूं। परन्तु चूंकि मैं विनयशील हूं, इसलिये मैं नरम अथवा दूसरे मित्रोंके द्वारा यह साफ बतला रहा हूं कि मैं प्रामाणिक परिषद् या परामर्शके एक भी अवसरको हाथसे जाने देना नहीं चाहूंगा। और इसलिये मैंने असहयोगियोंको यह सलाह देनेमें आगा पीछा नहीं किया

कि निष्पक्ष दलके भाइयोंकी सभामें हमें सधन्यवाद जाना चाहिये और जिस तरह वे उचित बतावें उस तरह अपनेसे जो कुछ बन पड़े वह सेवा करनी चाहिये। और यदि वाइसराय और कोई दूसरे लोग कोई परिषद् करना चाहें तो उसमें जानेसे इनकार करना असहयोगियोंके लिये बेवकूफीकी बात होगी। असहयोगियोंके पक्षकी सफलता लोकमतकी सहायतापर अवलम्बित है। दूसरा कोई बल उनकी सहायताके लिये नहीं है। यदि वे लोकमतसे हाथ धो बैठे तो कहना होगा कि उन्होंने कमसे कम आज तो ईश्वरीय सहायतासे अपनेको वंचित कर लिया है।

इस विषयमें कि स्वराज्य योजना किस तरहसे तैयार की जाय, मैंने सिर्फ वही उपाय सुझाये हैं जो मुझे बहुत ही व्यवहार्य मालूम हुए हैं। न तो महासमितिने और न कार्य समितिने ही उनपर विचार किया है। महासभाके मताधिकारको ही ग्रहण कर लेनेकी सूचना भी मेरी ही है। परन्तु इसमें मैंने जिस मूलभूत सिद्धान्तका आधार लिया है वह वास्तवमें ऐसा है जिस पर कोई आक्षेप नहीं किया जा सकता। स्वराज्य योजना तो वही हो सकती है जो लोकप्रतिनिधियोंके द्वारा तैयार हुई हो। तब शासन-शास्त्रके उन विशेषज्ञों तथा दूसरे लोगोंके विषयमें क्या करना चाहिये, जो लोगोंके द्वारा न निर्वाचित हो सकें? मेरी रायमें तो वे भी उसमें शामिल हों और उन्हें मत देनेका भी अधिकार रहे। पर उनकी संख्या थोड़ी हो। वे अपनी युक्ति-

नगत बातों और सूचनाओंके द्वारा सभाको लाभ पहुंचावे, और बहुमत पर अपना असर डालें। यदि सर्व पक्षीय परिषदुमें परस्पर विश्वास और आदरसे काम लिया गया तो उसके द्वारा सन्तोष-जनक और सम्मान योग्य सन्धि हुए बिना न रहेगी।

— ० —

फौजी कानूनका बावा

(जनवरी १९, १९२२)

जबतक यह जङ्गली दमन जारी है तबतक मुझे उनकी विश्वसनीय कहानियां पाठकोंको सुनानी ही होंगी। हां, जब भारतवर्ष अपने सर्वोपरि बलिदानके द्वारा उसकी 'इति श्री' कर डालेगा, तब यह क्रम अपने आप बन्द हो जायगा। मैं इस दमनको 'जङ्गली' इसलिए कहता हूं, कि इसमें बुद्धिसे काम नहीं लिया जाता है, खून मनमानी की जाती है, इसमें असभ्यता और निर्दयता भरी हुई है। अच्छा, मान लीजिए कि कुछ असहयोगियोंने हड़तालके मौकेपर अथवा दूसरे कामोंमें लोगोंको डराया धमकाया और हिंसाकाण्ड भी मचाया, तो क्या अपराधियोंका पता लगाना और उनको सजा देना कोई कठिन बात है? यदि सरकारको गवाह लोग न मिलते हों तो क्या इससे यह नहीं मालूम होता कि तमाम जनता ऐसे डराने और धमकानेकी मददपर है? कोई काम कितना ही

दूषण योग्य क्यों न हो, जब सारा राष्ट्र उसे करने लगता है तब वह अपराध नहीं रह जाता और उस देशके कानूनके अनुसार उसपर कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती। अतएव वह दमन जो कि एक जवाबदेह सरकारके द्वारा किया जा रहा है, हरगिज लोकप्रिय काम नहीं हो सकता और न वह 'लोगोंकी रक्षाके लिए किया। गया काम' ही हो सकता है। परन्तु आज यहां तो दमन इसलिए किया जा रहा है कि लोगोंका बढता हुआ आन्दोलन ही दबा दिया जाय। वह आन्दोलन जो कि इस सरकारके कृष्ण-कृत्योंके खिलाफ छिडा किया गया है। और इसलिए यह दमन तो दुगुना असह्य है।

अस्तु, परन्तु इस लेखका हेतु यह नहीं है कि इस दमनका समर्थनीय स्वरूप लोगोंको दिखाया जाय, बल्कि यह दिखाना है कि यह कितना पाशविक पाप है, किस तरह फौजी कानूनसे भी बदतर है।

इसके मुकाबलेमें पञ्जाबका फौजी कानून तो एक तरहसे दमनका एक सभ्यतापूर्ण साधन था। उसका नाम चूंकि मार्शल ला था इससे उसके बदौलत कमसे कम लोगोंका दिल धर्र तो उठता था। परन्तु अब मामूली कानूनकी छत्रच्छायाके नीचे, परन्तु वास्तवमें बिना किसी कानून कायदेके, जो जो काम हो रहे हैं, उनकी अंधाधुन्ध गतिको तो कोई रोकने ही वाला नहीं है। भला फौजी कानूनमें कुछ तो सभ्यताका

स्थान है, पर इस मुल्की बेआईनीमें तो इसका भी कहीं ठिकाना नहीं है।

फरीदपुरके जेलखानोंकी मारपीटका हाल सुनिए। डाक्टर मैत्र कलकत्तेके एक सुप्रसिद्ध डाक्टर हैं। उनका सम्बन्ध किसी दलसे नहीं है। वे फरीदपुर जेलको देखने गये थे और उन्होंने वहां कैदियोंको कोड़े लगाये जानेके दृश्यका बड़ा रोचक वर्णन किया है। दो भद्र पुरुष, जिनमें एक हेडमास्टर थे, एक साथ एक कोड़े लगानेके तख्तेसे बांध दिये गये और उन्हें खूब कोड़े लगाये गये। अपराध था जेलके अफसरको सलाम न करना। जब डाक्टर मैत्रने जेलका मुलाहिजा किया तब इस सजाका उल्लेखतक रजिस्टरमें नहीं किया गया था। उन्होंने कितने ही मुलजिमोंको जिनका मुकदमा अभी जेर तजवीज था, सारी रात हथकड़ी पहने हुए देखा। एक कैदीके बराबर तीन दिनतक खड़ी हथकड़ी पड़ी रही। 'कैदकी कोठरियोंमें जितने कैदीकी जगह निश्चित है उससे प्राय दूने एक साथ ठूस दिये गये! जाड़ेका मौसिम! पर न उनके खाने, न ओढ़ने और न बिछौनेकी किसीको पूरा ध्याल था!' इसपर बङ्गालकी सरकार क्या कहेगी? वह इन घटनाओंको तो हजम कर नहीं सकती। बस, 'जेलकी मर्यादाकी रक्षा' ही उसके समर्थनका आधार हो सकता है। सरकारी सूचनापत्रमें कहा गया था है कि 'इन सजाओंका अभीष्ट प्रभाव हुआ है और तबसे जेलकी मर्य्यादाका पालन हो रहा है।'

अच्छा, अब चलिए, प्रयागराजकी सफर करें। संयुक्त प्रान्तकी सरकारने अपने वर्तावके विषयमें श्री महादेव देसाईका एक प्रमाण पत्र पेश किया है। महादेव भाईका कहना यह है कि अब मेरे साथ मनुष्यके जैसा वर्ताव किया जा रहा है। यह सच बात है। पर पाठक जरा महादेव भाई वर्णित नैनी जेलके कैदियोंकी दुर्दशा, कोडोंकी बेदम कर देनेवाली मार और उनके साथ किये जानेवाले दुर्व्यहारकी रोमांचकारी कहानीको पढ़ें।

सीतामढ़ीसे समाचार आये हैं कि वहाके लोगोंपर २५,०००) जुरमाना लाद दिया गया है और प्युनिटिव दण्ड देनेवाली पुलिस नवीनमें बैठा दी गई है। सीतामढ़ी विहारका एक सब-डिवीजन है। इस जुरमाने और प्युनिटिव पुलिसका अर्थ है सीतामढ़ीके लोगोंकी लूट खसोट। "मदरलैण्ड" (श्री० मजहरुल् हक सम्पादित अगरेजी साप्ताहिक पत्र) में सिहुलिया, चन्दरपुर और भरथरा नामके गावोंमें हुई लूट पाटका वर्णन प्रकाशित हुआ है। 'खबर मिली है कि घुड़सवार पुलिस कमाण्डिग अफसर तथा फैक्टरी मेनेजर भी लूट पाटमें शरीक थे। उन ग्रामनिवासियोंका अपराध यह बताया गया है कि उन्होंने 'हर' और 'वेगार देनेसे इनकार किया। अवध विहारीशरण (महासभाके कार्यकर्ता) चारपाईसे बाध दिये गये। फैक्टरीके जमादारने घुड़सवार पुलिससे कहा कि इनको (स्वयंसेवकोंको) बेंतें लगाओ। हरएक

स्वयंसेवकको बेतें लगाई गई, उनकी टोपियां और उनके बिल्ले छीन लिये गये।

सिन्धका हाल भी इससे बेहतर नहीं है। सिन्धकी महा सभा समितिके एक पत्रसे मालूम होता है कि रहमत रसूल नामका पञ्जाब फौजी कानूनका एक कैदी तथा उसके दो साथी हैदराबादकी सेण्ट्रल जेलमें बन्द किये गये हैं। वे पिछले नवम्बरमें अन्दमान जेलसे वहां लाये गये और एक कोठरीमें बन्द कर दिये गये। यह कोठरी उन कैदियोंके लिये थी जिन्हें मौतकी सजा दी जाती है। उन्हें तीन दिनतक किसी तरहका खाना नहीं दिया गया। फिर जब जब सुपरिण्टेण्डेण्ट वहां आता तब तब उनसे कहा जाता कि हाथ उठाकर (जैसा कि मुसलमान लोग नमाज पढते वक्त करते हैं) कहो— "सरकार एक है।" रहमत रसूलने कहा कि मेरे मजहबमें अकेला खुदा ही एक है और मैं अकेले उसीकी इबादत कर सकता हूं। तब सुपरिण्टेण्डेण्टने अकडकर जवाब दिया 'मैं सरकारका प्रतिनिधि हूं। और इसलिए जेलमें मैं ही तुम्हारा खुदा हूं।' फिर भी रहमत रसूल अपने धर्मपथसे विचलित नहीं हुआ। यहांतक कि जेल कमेटीके दबानेपर भी उसने सिर नहीं झुकाया। उसको इस धार्मिकताका इनाम उसे यह मिला कि उसे पांच तरहकी सजायें दी गई—३० कोड़े, छ महीनेतक एकान्तवास, छ महीनेतक टाटके कपडे पहनना और छ छ महीनेतक तरह तरहकी बेडियां डालना।

महासभाके एक कार्यकर्ता श्री हासानन्दसे जब कुछ लोग मिलने गये तो उन्हें सिर्फ पांच मिनिटकी इजाजत दी गई, यद्यपि कानूनमें १५ मिनिटकी आज्ञा है।

पिछली जुलाईमें पुलिसने मतियारीमें गोलियां चलाईं। उससे एक आदमी मरा और कितने ही घायल हुए। और जिस सबइन्स्पेक्टरकी यह सारी करामात है वह अब मजेमें कम्बरमें गुलछर्रे उड़ा रहा है—सर्वसत्ताधारी और निरंकुश बन बैठा है।

हाल हीमें वह जुरमानेकी रकम वसूल करनेके लिये एक असहयोगी मुजरिमके घरमें घुस गया, परदानशीन औरतोंसे, जो घरमें थीं, माल असबाब जबरदस्ती छीन लिया। मुजरिमके भाईकी औरतकी नाकसे सोनेकी नथनक खींच ली। एक भले आदमी उस परदानशीन औरतकी मददके लिए पहुंचे तो वे भी पिट गये। पुलिस अफसर घरमें घुस ही गया और उजडुताके साथ उन औरतों तक जा पहुंचा।

सो इस सरकारकी नजरसे न तो मनुष्य बचे, न उनका माल असबाब, और न पुरुष, न स्त्री। और न जेलोंमें जीवित रहना ही आसान है। केवल शरीरको बन्धनमें रहने देनेसे सरकारकी तृप्ति नहीं हो रही है। लोगोंको तरह तरहकी पीड़ायें दिये और उनका मान भङ्ग किये बिना उसकी आत्माको शान्ति नहीं हो सकती।

इस प्रकार यह जालियांवाला बाग रहित फौजी कानून

ही है। और यह उससे भी खराब है। जलियावाला बाग काण्ड यद्यपि घृणित काण्ड था, तथापि उससे सरकारका इरादा तो साफ साफ मालूम हो जाता था और उससे हमें अभीष्ट धक्का तो पहुंचा। वह एक खुला व्यवहार था। पर अब जो कुछ हो रहा है वह कैदखानोंकी अन्धी कोठरियोंमें अथवा छोटे छोटे अप्रसिद्ध देहातमें और इससे वह किसीको सहसा मालूम भी नहीं होने पाता। इसलिए हमारा स्पष्ट रूपसे यह कर्तव्य है कि हम फौजी कानूनका आवाहन करें, इस "मनहूस वाहियात हरकत" का नहीं और अपने अन्दर ऐसा साहस उत्पन्न करें जिससे हम बन्दूककी गोलियोंका स्वागत कर सकें। १९२१ की तरह अपनी पीठपर नहीं, बल्कि बिना रत्तीभर मलालके, खुशी खुशी अपनी छातिया आगे तानकर!



उत्तर दाखिला

(जनवरी २३, १६२२)

मुझे सरकारकी सच्चाईपर अविश्वास है। इसलिये इस मौकेपर किसी तरहकी शांति परिषद् होनेकी बातपर मुझे भरोसा नहीं होता। उस दिन धारा सभा और राष्ट्र सभामें जो बहस हुई उससे मेरे इस अविश्वासको साफ तौरपर पुष्टि मिलती है। सरकार पक्षका समर्थन करनेवाले लोग महासभाकी मांगोंको असम्भव मानते हैं तथा असहयोगको नष्ट करनेका एक ही उपाय बताते हैं—दमन। यदि मेरी भी ऐसी ही धारणा होती कि महासभाकी मांगें असम्भव हैं और इन असंभवनीय आदर्शोंकी प्राप्तिके उद्योगका नाश करनेके लिये पशुबल ही युक्त उपाय है तो मुझे सरकारके पक्षमें अपना मत देना उचित था। इस दशामें मुझे सरकारके अथवा उसके पृष्ठपोषकोंकी गति विधिको समझनेमें और उसका गुण भी माननेमें कोई कठिनाई नहीं है।

लेकिन मैं तो सरकारकी गति विधिका रहस्य खूब जानता हूं। इसीलिये उसका विरोध करता हूं और उस पर अविश्वास रखता हू। सरकार जिस रास्ते भारतको

ले जाना चाहती है उस रास्ते उसे हरगिज आजादी नहीं मिल सकती ।

आइये, जरा देखें यह किस तरह ठीक है।

खिलाफत सम्बन्धी मांग भला क्यों असंभव है ? महासभा जो कुछ चाहती है वह तो सिर्फ यही कि यदि भारत सरकार और साम्राज्य सरकार यह चाहती हों कि लोगोंका सहयोग उनके साथ कायम रहे तो उन्हें इन मांगोंकी पूर्तिमें लोगोंके साथ काम करना चाहिये। अतएव उन्हें अपने उतने कर्तव्यका अवश्य पालन करना चाहिये जितना स्वयं उन्हींसे संबन्ध रखता है, तथा शेषके साथ प्रयत्न करें । यदि फ्रांस इंग्लैंड से डोवर छीन लेनेका प्रयत्न करे और यदि भारत गुप्तरूपसे फ्रांसको मदद करे, या जाहिरा तौरपर इंग्लैंडके प्रति डोवर पर उसका अधिकार कायम रखनेके प्रयत्नमें उदासीनता अथवा विरोध भाव दिखावे तो उस समय साम्राज्य सरकार क्या करेगी ? सो जब कि खिलाफतके जीते हुए टुकडे टुकडे किये जा रहे हों तब क्या भारतसे खामोश बैठे रहनेकी आशा की जा सकती है ?

अच्छा, 'पञ्जाबकी मांगोंमें कौनसी बात असंभव है ? इस प्रकरणकी कानूनियतोंपर वे क्यों जोर दे रहे हैं ? यदि वे उसके नैतिक बलाबलपर ध्यान देंगे तो कानूनी बलाबल अपना निपटारा आप कर लेगा। लडकपनमें मैंने एक कानूनी सिद्धान्त पढ़ा था कि जब, कानून और न्यायमें विरोध उत्पन्न हो तब

न्यायको प्रधानता दी जानी चाहिये। मेरे लिये वह सिद्धान्त 'पोथीके बैंगन' नहीं हैं? पर मुझसे कहा गया है पेन्शन बन्द कराना अनीति युक्त है, क्योंकि वह तो मुल्तवी किया हुआ वेतन है। फिर सरदार गौहरसिंह क्यों 'मुल्तवी किये हुए वेतन' से वञ्चित रखे गये और क्यों दूसरे पेन्शनरोंको धमकिया दी गई कि यदि वे इस आन्दोलनमें शरीक होंगे तो उनकी पेन्शनें बन्द कर दी जायँगी? क्या जो नौकर अपने मालिकको कलङ्कित करता है उसे कहीं वेतन या पेन्शन मिलती है? क्या सर माइकल ओडायर या जेनरल डायरने अपनी 'समझकी भूल' को कहीं मंजूर किया है? जालियावाला बागमें जिन लोगोंका खून किया गया, या जिन लोगोंको पशुओंकी तरह पीटा गया, या पेटके बल रेंगाया गया, यद्यपि उन्होंने कोई अत्याचार नहीं किया था, उनकी सन्तान क्यों उन लोगोंके वेतनके लिये रुपया दे जो इन तमाम असभ्य कार्यों के लिये जिम्मेवार हे? जो नौकर पश्चात्ताप नहीं करते उनकी पेन्शन जारी रखनेके पक्षमें मुझे एक भी नैतिक सिद्धान्त नहीं दिखाई देता। हां, "जिसकी लाठी उसकी भैंस" के सिद्धान्तकी बात दूसरी है। सो दोनों दलोंके दृष्टि विन्दुओंमें उत्तर और दक्षिण ध्रुवका भेद है। जो बात एकको न्याय और नीतियुक्त दिखाई देती है वही 'दूसरेको अन्याय और अनीति युक्त मालूम होती है। मैं यह दावेके साथ कहता हूं कि महासभाकी पेन्शन बन्द

कर देनेकी माग बिलकुल न्याय है, उसमें बदला चुकानेकी कोई बात नहीं है। वह उनपर मुकदमा चलानेके अपने हकका उपयोग करना नहीं चाहती। वह उन्हें सजा दिलाना भी नहीं चाहती। उन्हें पेन्शन देते रहना अन्याय है। बस, उसमें अब आगे शामिल रहना वह नहीं चाहती। और सच बात तो यह है कि सरकार अब भी उन दोनों अपराधियोंको साम्राज्यके गण्यमान्य पदाधिकारी मानती है। यह प्रवृत्ति बदलनी होगी। तभी पञ्जाब काण्डकी पुनरावृत्ति असम्भव हो सकती है, उसके पहले नहीं।

और जो बात पञ्जाबके विषयमें है वही स्वराज्यके भी विषयमें है। जो चीज भारतकी है वह उसे लौटा देना सरकारको असम्भव मालूम हो रहा है। उसका तो सिद्धान्त वचन है "धीरे धीरे सुधार।" इसके मूलमें जो भाव है वह यह कि जबतक अत्यन्त आवश्यक न हो जाय तबतक कुछ भी न देना। यह मतभेद इतना अधिक है कि खिलाफत और पञ्जाबके दुःखोंके दूर होनेके पहले स्वराज्यका खयाल करते हुए मेरा कलेजा कांपता है। ये दोनों प्रश्न यों तो सीधे सादे जान पड़ते हैं, परन्तु वे स्वराज्यसे कम मुश्किल नहीं हैं, क्योंकि उनका परिशोध करना भारतीय लोकमतके आगे सिर झुकाना है।

यह तो रूखा युक्तिवाद है। इन मांगोंमें कोई बात ऐसी नहीं जो असम्भव हो। असम्भवनीयता और कहीं नहीं, बस

सत्ताधारियोंको अपनी सत्ता—वह सत्ता जो उनके हाथोंमें हरगिज न होनी चाहिये थी—न देनेकी इच्छामें है।

यदि सरकार सिर्फ अपने कर्तव्योंका पालन करती रहे तो दमनकी आवश्यकता ही क्यों रहे? अच्छा मान लीजिये कि यदि सामुदायिक सविनय कानून भंग जल्दीमें शुरू किया गया तो हिंसाकांड मचे बिना न रह सकेगा। तो क्या हिंसा कांडके डरसे लोगोंको अपने हकोंसे दूर रहना चाहिये? जब हमारे सहयोगी भाई सत्याग्रहियोंके मत्थे यह दोष मढते हैं कि वे जल्दी मचाकर बड़ी कठिन और नाजुक स्थिति पैदा कर रहे हैं, तब यह बात उनके ध्यानमें नहीं आती कि ऐसा कह कर हम सत्याग्रहियोंके प्रति अन्याय कर रहे हैं और इतना ही नहीं बल्कि उनका अपमान भी करते हैं। सत्याग्रही नहीं, सरकार ही जान बूझकर कठिन स्थितिको न्योता दे रही है। जिन लोगोंका जनतापर कुछ भी प्रभाव है, जो जनताको शान्तिमय बनाये रख सकते हैं ऐसे हर/एक पुरुषको जेल भेज भेज कर सरकार तो खुद ही हिंसा काडके लिये जल्दी मचा रही है। सहयोगी भाई यह नहीं देखते कि सरकारका यह काय उस आदमीकी तरह है जो भूखेको भोजन देनेसे इनकार करता है और जब वह खुद ही अपनी भूख बुझानेकी कोशिश करता है तो बन्दूकसे उसका प्राण ले लेनेकी धमकी देता है।

भारतका वर्तमान वायुमण्डल मनुष्यको योद्धा बना

देने वाला है। इसमें असहयोगियोंका कर्तव्य उनके सामने स्पष्ट है। उन्हें आदर्श धैर्य रखना चाहिये। किसीके भड़कानेसे उन्हें जल्दीमें कोई काम न कर बैठना चाहिये। जिस जगह वे सामना करनेके लिये तैयार न हों वहां उन्हें सग्राम न छेड़ना चाहिये। हमे शातिमय बनना अथवा शातिमय बने रहनेमें मदद देना सरकारका काम नहीं है। हिंसा-काण्डको रोकनेके उसके उपाय भी इतने हिंसात्मक हैं कि उनपर क्रोध आये विना नहीं रहता। पर हां, एक बातमें हमे अवश्य उसका कृतज्ञ होना चाहिये। सरकार जो कुछ प्रतिवाद करती है अथवा टीका टिप्पणी करती है उसका सार यही है कि हम अर्थात् असहयोगी लोग अपने ध्येयके अनुसार काम करना नहीं जानते तथा यदि हम चाहें भी तो सफलताके साथ हिंसाकाण्डकी अर्थात् शस्त्रास्त्रके प्रयोगकी योग्यता नहीं रखते। हमें ये दोनों दलीलें मान लेनी चाहिये। हमें अपने ध्येय अर्थात् अहिंसापर अटल रहना चाहिये। तब सरकारको भी अपने शस्त्रास्त्र एक ओर रख देने होंगे, क्योंकि शांति तो दोनोंको अभीष्ट है। और जो लोग अहिंसाके कायल नहीं हैं वे कमसे कम यह समझ लें कि भारतवर्ष न तो पशु बलका मुकाबिला पशुबलके द्वारा करनेके लिये तैयार है और न वह ऐसा चाहता ही है। क्या अच्छा हो, यदि वे लोग जो यह मानते हैं कि हथियार उठाये विना भारतको आजादी मिल ही नहीं सकती।

जरा मेरे कथनकी सत्यताको अनुभव करें। वे यह कदापि न सोचें कि हम शस्त्र ग्रहण करनेके लिये तैयार और उत्सुक हैं। इसलिये भारतवर्ष भी उसी तरह तैयार या उत्सुक है। मैं दावेके साथ कहता हू कि भारत इसके लिये तैयार नहीं है, इसलिये नही कि वह दीन और असहाय है, बल्कि इसलिये कि वह चाहता ही नही। इसलिये अहिंसा धर्मकी गति आशासे भी अधिक दिनपर दिन बढ रही है और हिंसा धर्म मानवी स्वभावकी दुहाई दिये जाते हुए भी असफल हो जाता। भारतके जन समाजको प्राचीन समयसे पशुबलके खिलाफ शिक्षा मिलती चली आ रही है। भारतवर्षके मनुष्योंमें मानवी भावकी इतनी अधिक प्रगति हो चुकी है कि यहाके अधिकाश जन समूहके लिये पशुबलकी अपेक्षा अहिंसा धर्म ही अधिक स्वाभाविक हो गया है। हा, हमें यह भी याद रखना चाहिये कि बम्बई और मद्रासके अनुभवोंसे मेरा ही कथन सिद्ध होता है। यदि हत्याकांड भारतके लोगोंका स्वभाव धर्म होता तो बम्बई और मद्रासमें इतनी सामग्री मौजूद थी जिससे ऐसी आग धधक उठती कि किसीके बुझाये न बुझती। गन्दी चीजकी तरह थोडा भी दङ्गा फसाद शातिमय या स्वच्छ स्थानको क्षुब्ध और गन्दा कर देनेके लिये बहुत काफी है। पर दोनो विजातीय वस्तु हैं, अतएव शीघ्र ही दूर कर दी जाती हैं।

देकर फिर शस्त्रास्त्रके द्वारा स्वराज्य

युगोंकी बात है। मैं सचमुच मानता हूं कि आज भारतमें जो आश्चर्यजनक कार्य शक्ति और राष्ट्रीय चैतन्य प्रगट हो रहा है वह केवल अहिंसा धर्मकी प्रगतिका ही फल है। लोगोंने अपनी शक्ति पहचान ली है। अब हमें जल्दीमें ऐसा काम न कर बैठना चाहिये जिससे हमारी प्रगतिकी गति रुक जाय।

लेखन और मुद्रण स्वातन्त्र्य

(जनवरी ५, १९२१)

दिन बदिन परिस्थितिके अनुसार सरकारके वे असत्य आश्वासन कि नये सुधारोंके अनुसार जनताको अधिक स्वतन्त्रता और दे दी गई है और उसके अधिकार बढा दिये गये हैं, खोखले पडते जा रहे हैं। वे सत्य तो तभी साबित हो सकते हैं जब वे कडीसे कडी परीक्षामें भी उत्तीर्ण हो जाय। वाक्स्वातन्त्र्यका मतलब तो यही है कि उसके अधिकसे अधिक मर्म भेदयुक्त होने पर भी उसपर आक्रमण न किया जाय। और मुद्रण स्वातन्त्र्यके सच्चे सम्मानका भी अर्थ यही है कि उससे कडीसे कडी टीका टिप्पणियां की जा सकें तथा यथार्थ बातें भी उलट पुलट तरहसे समझा दी जा सकें। हां, इन बातोंसे रक्षा तो अवश्य होनी चाहिए। किन्तु वह इस तरह नहीं कि ऐसे लेखोंका छापना

कानून द्वारा ही बन्द कर दिया जाय, या छापखाने पर ही वार करके उसे बन्द कर दिया जाय। वह तो मुद्रणालयको स्वतन्त्र रखते हुए सच्चे अपराधीको सजा देकर ही होना चाहिए। इसी प्रकार सम्मेलनके महत्वका सच्चा सम्मान रखना तो उसीको कहा जा सकता है जब आम तौर पर सम्मिलित होकर बड़ी बड़ी क्रान्तिकारक बातोंपर भी विचार कर सकें। सरकारका आधार तो लोकमत और सिविल पुलिस पर ही रहना चाहिए, न कि उन पाशविक सेनाओं पर, जिनके बलपर लोकमतको और उसकी प्रतिनिधि सरकारको चक्रमें डालने वाली किसी क्रान्तिका सचमुच कहीं उद्भव होते ही वह नष्ट कर दी जाय।

भारत सरकार तो अपनी स्वेच्छाचारिता तथा दुर्दमनीयता सिद्ध करनेके लिए अब एक बार और—सौभाग्यसे आखरी बार ही—लोकमतको जाग्रत और सुसंस्कृत बनाने वाले इन तीन शक्तिशाली, और महत्वके साधनोंको नष्ट करने पर तुली हुई है और स्वराज्य, खिलाफत तथा पञ्जाबके दुःख-निवारणके लिए लड़नेका अर्थ यही है कि सबसे पहले इस त्रिविध स्वतन्त्रताके लिए लड़ना।

“इन्डिपेन्डेन्ट” अब छपकर नहीं निकलता। वही हाल “डेमोक्रेट” की है। और अब लाहोरके “केसरी” और “प्रताप” पर भी तलवार उठी है, लालाजीके अपत्य “बन्दे मातरम्” ने तो दो हजारकी जमानत जमा करके फिलहाल वारको टाल दिया है। पहले दो पत्रोंकी एक बार दी हुई जमानत तो जब्त कर ली गई है

और अब उन्हें १० । १० हजारकी जमानतें दाखिल करनेके लिए या पत्र बन्द करनेके लिए दस दिनकी नोटिस दी गई है। मुझे आशा है कि दस दस हजारकी जमानतें दाखिल करनेसे वे इन कार करेंगे।

मुझे मालूम हो रहा है कि यदि जनता कुछ आन्दोलन उठाकर इस रोगके कीटाणुओंको बढ़नेसे न रोकेगी तो जो संयुक्त प्रान्तमें और पञ्जाबमें हो रहा है वही धीरे धीरे और जगह भी होगा!

पहले तो मैं पूर्वोक्त पत्रोंके सम्पादकोंसे यही आग्रह करूंगा कि वे "इन्डिपेन्डेन्ट" की तरह अपने विचार लिखकर ही प्रकाशित करते रहें। मुझे विश्वास है कि जिस सम्पादकके पास कुछ बातें कहने लायक हैं तथा जिसके लेखोंको लोग चावसे पढ़ते हों वह—जबतक उसका शरीर स्वतन्त्र है—तब तक आसानीसे चुप नहीं रखा जा सकता। वह ज्यों जेलमें गया कि उसने अपना सन्देश पूरा दे दिया। स्व० लोकमान्यके शब्द उनके छपे हुये केसरीके द्वारा उतने प्रभावशाली नहीं निकलते थे जितने प्रभावपूर्ण वे मण्डालेकी जेलसे निकलते थे। और जब वे छूटकर आये तब उनके भाषणोंका और लेखनीका प्रभाव पहलेसे, जबकि वे जेल नहीं गये थे, हजार गुना बढ़ गया। और अब उनकी मृत्यु हो जाने पर तो लोगोंने उनके जीवनके ध्येयको प्राप्त करनेका जो पवित्र निश्चय कर लिया है उसके द्वारा बिना भाषण और लेखनीके ही वे अपने पत्रका सम्पादन कर रहे हैं। आज

अगर वे जीवित होते और स्वयं ही अपने मंत्रका प्रचार करते तो भी वे इससे अधिक और क्या कर सकते थे? मुझ जैसे टीकाकार तो अब भी उनके शब्दोंमें दोष निकालते ही रहते। किन्तु आज सब टीकायें बन्द हैं और केवल उनका मन्त्र ही करोड़ों भारतीयोंके हृदयमें बैठकर उनको स्फूर्ति दे रहा है। उन्होंने लोकमान्यके ध्येयको अपने जीवनमें सिद्ध करके उनका अक्षय स्मारक बनानेका निश्चय कर लिया है।

इसलिये पहले तो सीसेके टाइप और यत्ररूपी मूर्तिको हमें फोड़ डालना चाहिए। हमारी कलम ही टाइप बनाने वाली फाऊंडरीका काम देगी और खुशी खुशीसे नकल करने वालोंके हाथ छापनेके यत्रका। हिन्दू-धर्म मूर्तिपूजाको वहीं तक महत्व देता है जबतक कि वह किसी ध्येयको कायम रख सकती हो। किन्तु जब वह मूर्ति ही हमारा ध्येय बन बैठती है तब वह एक पापमय आडम्बर हो जाती है। इसलिए जबतक हम अपने विचारोंका प्रकाशन स्वतन्त्रता-पूर्वक कर सकें तभीतक यन्त्र सामग्रीका उपयोग करें। किन्तु जब कभी वह "प्रजा वत्सल" सरकार-जो बड़ी चिन्तातुर होकर मुद्रण यन्त्र और तरह तरहकी अक्षर रचना पर बड़े गौरसे पहरा देती है और उसपर अंकुश गाड़े हुए है, हमारे हाथसे यन्त्र सामग्रीको निकाल ले तो हमें लाचार और दीन न हो जाना चाहिए

किन्तु मैं कहूंगा कि हस्त लिखित समाचार पत्र भी असाधारण समयके लिए एक असाधारण वीरोचित्त उपाय है। फिल-

ल हम मुद्रणालयसे और कम्पोजीटरकी स्टिकसे इसी प्रकार दासीन होकर बाद उनको फिर स्थापन करके हम हमेशाके लिये नका उपयोग कर सकेंगे।

इसके अतिरिक्त हमें और भी कुछ करना चाहिए। हमें बड़ी डी समस्याओंको हल करनेका विचार करनेके पहले इसी धिकारको पुन प्राप्तिके लिए सविनय कानून भङ्गका उपयोग रना चाहिए। वाक् स्वतन्त्र्य, सम्मेलन स्वातन्त्र्य, और द्रण स्वातन्त्र्य इन तीन अधिकारोंकी पुन प्राप्तिही करीब करीब वराज्यके समान है। इसलिये बम्बईमें पण्डित मालवीयजी ादि प्रमुख देश पुत्रोंके उद्योगसे होने वाली सभासे मैं तो यही ादर-पूर्वक आग्रह करूंगा कि वह खिलाफत, पञ्जाब और वराज्यकी अपेक्षा इन्हीं बाधाओंको दूर करनेके लिये प्रधानतया विचार करे। इन बातोंमें हम सबकी हार्दिक एक वाक्यता ोगी। हमें इन छोटी छोटी बातोंका पहले निपटारा कर डालना चाहिए। इनके हल होने पर वे बड़ी बड़ी जटिल समस्यायें ापही आप हल हो जायगी।

अवश्यही इस युद्धका बहुत बड़ा भाग है, परन्तु यही सब कुछ नहीं है। किसान लोग शान्तिमय तो चाहे बने रहें, पर शायद अछूत लोगोंको अपने भाईके बराबर न मानते हों, वे हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों, यहूदियों और पारसियोंको, जैसा कि मौका हो, अपना भाई न समझते हों, वे चरखे और खादीकी आर्थिक और नैतिक महिमा न जान पाये हों। यदि उन्होंने यह सब न किया हो तो वे स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते। यदि इन बातोंको वे आज नहीं कर रहे हैं तो स्वराज्य प्राप्त नही कर सकते। यदि इन बातोंको वे आज नहीं कर रहे हैं तो स्वराज्य प्राप्त होने पर नहीं करेंगे। उन्हें यह बताना चाहिए कि इन सब राष्ट्रीय गुणोंको प्राप्त करना ही स्वराज्य है।

इस तरह यह सविनय कर न देनेका सौभाग्य उन्हीं लोगोंको प्राप्त हो सकता है जो पूर्वोक्त सब बातोंकी खूब कड़ी शिक्षा पा चुके हैं। और जिस प्रकार उस आदमीके लिए जो राज्यके कानूनोंके खिलाफ गुनाह करनेका आदी है, सविनय कानून-भंग करना कठिन बात है उसी प्रकार सविनय कर न देना भी उन लोगोंके लिए मुश्किल चीज है जिन्हें जरा जरा सी बात पर बार बार रोक कर रखनेका मुहावरा पड़ा हुआ है। इस असहयोग युद्धमें सविनय कर न देना तो आखिरी सीढ़ी है। सो जब तक हम सविनय कानून भंगके दूसरे अंगोंको न आजमा देखें तबतक हमें इस पर न तुल जाना चाहिये। इन आरम्भिक

अवस्थाओंमें बडे बडे तथा बहुतेरे प्रान्तोंमें इसका प्रयोग करना बहुत ही बडी नादानीकी बात होगी।

मै जमींदारोंको भी लगान न अदा करनेकी बातें सुन रहा हू। सो हमें यह बात हरगिज न भुलाना चाहिये कि हम जमींदारोंके साथ, फिर वे चाहे हिन्दुस्तानी हों चाहे विदेशी हों, असहयोग नहीं कर रहे हैं। हम तो इस एक बडे जमींदार—नौकरशाही—से युद्धमें भिडे हुए हैं, जिसने क्या हम और क्या इन जमींदार, सबको अपना गुलाम बना रखा है। हमें ऐसा प्रयत्न करना चाहिये जिससे ये हमारे पक्षमें हो जाय और यह बडा जमींदार अकेला एक तरफ रह जाय। यदि वे लोग हमारी तरफ न हों तो हमें धीरजसे काम लेना चाहिये। हमें उनकी सामाजिक सहायता जैसे धोबी, नाई इत्यादि, बन्द न करना चाहिये। सो जहा 'स्थायी कर-व्यवस्था' हो वहा कर न देनेका आन्दोलन न उठाया जाना चाहिये, हा जहा सीधी सरकारको रुपया अदा किया जाता हो वहा भले ही खडा किया जाय। लेकिन जमींदारोंका उल्लेख तो यहा उन कठिनाइयोंको दिखानेके लिये किया गया है जो कर न देनेके उद्योगमें खडी होती हैं। इसलिये सब बातोंपर विचार करते हुए मेरी तो यही राय है कि महासभाकी उद्देश्य पूर्तिके लिये कर न देनेकी हलचलका भार फिलहाल मुझीपर छोड दिया जाय। इस बीच दूसरे कार्यकर्ता अपने अपने जिलोंमें विधायक ढङ्गके कामोंकी पूर्ति करे। सामुदायिक सविनय कानून भंग करनेके दूसरे अनेक उपाय वे पैदा

कर सकते हैं और फिर जब कि लोग शुद्ध और प्रवुद्ध हो जाय, कर न देनेके लिये आगे कदम बढ़ावें।

पर आन्ध्र देशमें तो बहुत बड़े पैमानेपर पहले हीसे तैयारियां हो चुकी हैं। सो मैं वहांके कार्यकर्ताओंके उत्साहको ढंडा करना नहीं चाहता। यदि उन्हें यह इत्मीनान हो चुका हो कि उन चुने हुए स्थानोंमें देहलीवाली तमाम शर्तों को लोग पूरा कर चुके हैं तो फिर मुझे कुछ भी कहना सुनना नहीं। मैं तो बस यही कहूंगा कि "परमात्मा आन्ध्रके वीरोंको आशीष दे।" पर वे याद रखें कि यदि किसी किस्मकी दुर्घटना हुई तो उसकी जिम्मेदारी उन्ही पर है। हां, यदि वे कर न देनेकी शुरूआत न न करेंगे तो कोई उन्हें बुरा न कहेगा।



बारडोलीका निर्णय

(फरवरी २२, १६२२)

बारडोलीने बड़ा गम्भीर और गुरुतर निर्णय किया है। उसका यह अन्तिम निश्चय है, यह बदला नहीं जा सकता। बारडोली तहसील परिषद्‌की बैठक उस दिन हुई। सभापतिका पद श्री० विट्ठल भाई पटेलने ग्रहण किया था। उन्होंने अपने भाषणमें लोगोंको खूब सावधान किया। इसका असर भी उनपर हुआ। उन्होंने साफ बाते कहीं—कोई बात छिपा कर नहीं रखी। कोई ४ हजार प्रतिनिधि खादी पहने उपस्थित थे। ५०० स्त्रियां भी थीं। उनमें अधिकांश स्त्रियां खादी पहने थीं। उन्होंने सभाके काममें खूब दिलचस्पी ली और बड़ी उत्सुकताके साथ वे सब बातें सुनते थे। समस्त पुरुष और स्त्रियां शांत विचारवान और जवाबदेह थी और सबके चेहरेसे निश्चयका भाव टपकता था।

श्रीविट्ठलभाईके बाद मेरा व्याख्यान हुआ। मैंने महासभा द्वारा निर्धारित प्रत्येक शर्तको समझाया। प्रत्येक शर्तपर मैंने लोगोंसे पृथक् पृथक् राय ली। उन्होंने हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई एकताके तात्पर्यको समझ लिया था। वे अहिंसा तत्वकी महत्ताको जानते थे। उन्होंने 'छुआछूत'

को दूर करनेका मतलब समझ लिया था। वे केवल 'अछूत' लड़कोंको राष्ट्रीय पाठशालाओंमें भरती करनेको ही तैयार नहीं थे, बल्कि उन्हें ला लाकर भरती करनेको भी तैयार थे। अपने गांवके कुओंमेंसे 'अछूतोंके पानी लेनेपर उन्हें कोई एतराज नहीं था। वे जानते थे कि जिस प्रकार हम अपने किसी बीमार सहवासीकी सेवा शुश्रूषा करते हैं उसी प्रकार इन बीमार 'अछूतों' की भी परिचर्या हमें करनी चाहिये। वे जानते थे कि जबतक हम अपनेको मेरे बताये ढङ्गसे शुद्ध न कर लेंगे तबतक वे लगान न देने अथवा सविनय कानून भंगके दूसरे अंगोंको शुरू करनेका सौभाग्य न प्राप्त कर सकेंगे। वे यह भी जानते थे कि अभी हमें बहुत उद्योगी बनना है, अपने लिये आवश्यक तमाम कपड़ा खादी बुनना और सूत कातना है। और आखिरी बात यह कि वे अपनी जंगम सम्पत्ति अपने मवेशी और अपनी जमीन तककी जब्तीके लिये तैयार थे। वे जेल जानेके लिये तथा यदि आवश्यकता पड़ जाय, तो मौततकका सामना करनेके लिये तैयार थे और यह सब वे करना चाहते हैं बिना किसी तरहके मलाल या क्रोधके। हां, 'छुआछूत' के सवाल पर एक बूढ़े आदमीने अपना मतभेद प्रगट किया था। उन्होंने कहा कि हां, सिद्धान्तके रूपमें तो आपका कहना यथार्थ है, पर एक दम इस रिवाजको तोड़ देना कठिन है। मैंने अपना आशय उन्हें खूब स्पष्ट करके समझाया, लेकिन

उपस्थित जन तो उसे दूर करनेका इरादा कर ही चुके थे। इस बड़ी सभाके पहले, मैं कोई ५० प्रत्यक्ष कार्यकर्ताओंसे मिला था। इस मुलाकातके पहले श्रीविट्ठलभाई पटेल, कुछ कार्यकर्ता तथा मैं सबकी यह राय हुई थी कि ऐसा प्रस्ताव किया जाय कि १५ दिनके बाद बारडोली अपना निर्णय प्रगट करे, जिससे इस अवधिमें स्वदेशीकी तैयारी और भी पूरी तरह हो जाय तथा छुआछूतका निवारण अधिक निश्चित हो जाय अर्थात् तमाम साठों राष्ट्रीय पाठशालाओंमें अछूत लड़के दरहकीकत भरती हो जायँ। लेकिन बारडोलीके उन बहादुर और सच्चे उत्साही लोगोंने निर्णयको स्थगित करना पसन्द न किया। उन्हें विश्वास था कि ५० फी सदीसे भी अधिक हिन्दू लोग छुआछूतके सम्बन्धमें बिलकुल तैयार हैं और इस बातका भी यकीन था कि अब आगे हम जितनी जरूरत होगी उतना कपड़ा सब यहीं तैयार कर सकेंगे। वे तो सरकारके साथ आखिरी फैसला करनेकी कोशिशपर तुले हुए थे।

श्रीविट्ठलभाई पटेलने जितने एतराज उठाये उन सबका खण्डन वे करते गये। सफेद दाढ़ी वाले और सर्वदा प्रसन्न-मुख रहनेवाले वृद्ध अब्बास तैयबजीने उन्हें सावधान किया। लेकिन वे अपने निश्चयसे एक इञ्च भी हटना नहीं चाहते थे। इसका फल-स्वरूप नीचे लिखा प्रस्ताव एक मतसे स्वीकार किया गया,—

"सविनय कानून भङ्गको शुरू करनेके लिये आवश्यक शर्तोको अच्छी तरह सोच समझ लेनेके याद बारडोली तहसीलके निवासियोंकी यह परिषद् निश्चय करती है कि वह सामुदायिक सविनय कानून भङ्गके लिये तैयार है।

इस परिषद्की यह राय है कि—

(अ) भारतके कष्टोंको दूर करनेके लिये हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई तथा भारतकी दूसरी जातियोंमें एकता स्थापित करना बिलकुल आवश्यक है।

(आ) इन कष्टोंको दूर करनेके लिये अहिंसा, धैर्य और सहनशीलता ही एकमात्र उपाय है।

(इ) हर एक घरमें चरखा चलाया जाना और हर व्यक्तिको दूसरे कपड़ोंको छोडकर सिर्फ हाथ-कता और हाथ बुना कपड़ा ही पहनना भारतकी स्वतन्त्रताके लिये अनिवार्य है।

(ई) हिन्दुओंके द्वारा पूर्णरूपसे छुआछूत दूर हुए बिना स्वराज्य असम्भव है।

(उ) प्रजाकी उन्नतिके लिये तथा स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिये तमाम स्थावर और जगम सम्पत्तिके बलिदानकी, जेल जानेकी तथा यदि आवश्यकता आ पडे तो अपने प्राणोंतकको न्यौछावर कर देनेकी तैयारी परम आवश्यक है।

"यह परिषद् आशा रखती है कि पूर्वोक्त बलिदानके लिये बारडोली तहसीलको ही यह सौभाग्य सबसे पहले प्राप्त होगा और इस प्रस्तावके द्वारा यह परिषद् कार्य समितिको

सूचित करती है कि यदि कार्य समिति इसके विपरीत फैसला न करे और यदि प्रस्तावित सर्वपक्षीय परिषद्की आयोजना न हो तो यह तहसील श्री गांधीजी तथा इस परिषद्के सभापतिकी सम्मति और संकेतके अनुसार तुरन्त सामुदायिक सविनय कानून भंग शुरू कर देगी।

"यह परिषद् इस बातकी सिफारिश करती है कि इस तहसीलके जो लोग महासभा द्वारा निर्धारित सामुदायिक सविनय कानून भंगकी शर्तोंका पालन करनेपर राजी और तैयार हों वे जबतक दूसरी सूचना न मिले तबतक सरकारी लगान तथा दूसरे कर अदा न करें।"

कौन जानता है, क्या होगा? कौन जानता है कि बारडोली के नर नारी, सरकारके दमन शुरू करनेपर, उसका मुकाबिला कहांतक कर सकेंगे? यह तो अकेला ईश्वर ही जानता है। उसीके नामपर यह युद्ध भार उठाया गया है। वही पार लगावेगा!!

सरकार जबतक बड़े ही आदर्श ढंगसे पेश आ रही है वह इस परिषद्को बन्द कर सकती थी। पर उसने ऐसा नहीं किया। वह कार्यकर्ताओंको भी जानती है। बहुत पहले ही वह उन्हें वहांसे हटा ले जा सकती थी। पर उसने यह भी नहीं किया। उसने उन्हें हर तरहकी तैयारियां करने दीं सरकारके इस व्यौवहारको देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है। उसकी यह रीति प्रशंसनीय है। यह लेख लिखते समय

तक दोनों पक्षके लोग प्राचीन शूर वीर योद्धाओंकी तरह परस्पर व्यवहार कर रहे हैं। यह तो शांति युद्ध है। इसमें इससे भिन्न व्यवहार होना ही नहीं चाहिये। यदि यह युद्ध इसी रीतिसे जारी रहा तो इसका अन्त एक ही तरहसे हो सकता है। विजय उसीकी होगी जिसके पक्षमें बारडोलीके ८७,००० नर नारी होंगे।

लोहेके चने

(फरवरी २२, १६२२)

गुजरातका सविनय कानून भङ्गके लिये सबसे पहले कदम बढाना लोहेके चने चबानेसे भी कठिन है। परन्तु यदि एक भी तहसील इसमेंसे पार हो जाय तो स्वराज्य हस्तामलकवत् है। इसमें मुझे जरा भी सन्देह नहीं। इसका अर्थ यह है कि एक तहसीलमें एक सत्याग्रही सेना तैयार हो जाय। मैं पहले कह चुका हू कि सत्याग्रही सेनामें औरत, मर्द, जवान बूढे, लूले लङ्गडे, दुर्बल सबल, हिन्दू मुसलमान, पारसी ईसाई यहूदी, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, भङ्गी, चमार, सब भरती हो सकते हैं। प्रह्लादकी तरह कोई बालक भी आ जाय तो वह भी दाखिल हो सकता है। और मा-बाप अपने लड़के बालोंको भी भरती करा सकते हैं। यह खासा पचमेल मेला

दी है, पर फिर भी वह सामनेकी सेनाके मुकाबलेमें बहुत ही ज्यादा काम कर सकता है और उसका खर्च भी क्या होगा? इस सेनाके सिपाहियोंमें एक गुण जरूर होना चाहिये—निर्भयता। उनमें मरनेकी शक्ति होनी चहिये अर्थात् उस सिपाहीके पास आस्तिकता होनी चाहिये।

जिन दूसरे गुणोंकी आवश्यकता मैंने बताई है वह हमेशाके लिए नहीं हैं। वे गुण तो सिर्फ आजकी परिस्थितिके ही लिए आवश्यक हैं।

परन्तु यद्यपि इस तरह लिख देना तो आसान है तथापि जबतक मनुष्य उसे समझ नहीं पाता तबतक वह कठिन मालूम होता है। जो तहसील बीड़ा उठावे समें गहरा परिवर्तन अवश्य ही हो जाना चाहिए। उस तहसीलके सिपाही एक पल भी बेकाम न बैठें। इससे जब युद्ध शुरू होगा तब प्रत्येक सत्याग्रही या ग्रहिणी या तो जेल जानेके लिए किसी जगह सविनय भङ्ग करते दिखाई देंगे या सूत कातते हुए, खादी बुनते हुए, या रुई धुनकते और कपास लोढते हुए पाये जाये गे। कोई छिनभर भी बेकाम नहीं बैठ सकता। फिर चाहे वह धनी हो चाहे भिखारी। सिपाहीगिरीमे सधनता और निर्धनताका भेद नहीं रहता। पञ्चम जार्ज जब जहाजमें काम करते थे तब वे भी औरोंकी तरह जमीनपर लेटते और बिना दूधके चाय पीते तथा चोकर मिली मोटी रोटी खाते थे। ऐसा ही होना चाहिये।

शिक्षा देता है कि व्यक्ति कुटुम्बके लिए, कुटुम्ब गांवके लि
गाव तहसीलके लिए, तहसील जिलेके लिए, जिला प्रान्त
लिए, प्रान्त भारतवर्षके लिए, और अन्तको भारतवर्ष स
जगत्‌के लिए मरनेको तैयार हो जाय। इस स्वदेशाभिमान
लिए मैं जी रहा हू, और उसको प्रगट करनेके लिये मिट
मुझे जीवित रहनेके बराबर ही प्रिय है। उसके बिना जीवि
रहना मृत्युके ही समान है। ससारमें अगर कोई सुख
तो वह है पर दु खके लिये दुखी होना और दूसरेकी रक्ष
लिये स्वय मर जाना। ऐसा करनेवाले आसानीसे सुख
उपभोग करते हैं। यह सब करनेके लिये कोई भारी क
करना पड़े, सो बात नहीं। सिर्फ हृदयको बदल देनेकी जरू
है। जरा विचार करनेकी जरूरत है। इसमे देर न हो
चाहिये, क्योंकि अपने पड़ोसीके लिए मरना तो आत्माक
सहज स्वभाव ही है।

तैयार हुई तहसील अगर इस तत्वको समझ गई हो
जो काम लोहेके चने चबानेसे भी कठिन मालूम होता
वह मुझ जैसे बुड्ढेके लिये बनाये मुलायम चने चबानेसे
अधिक आसान मालूम होगा।

परीक्षा

(फरवरी २२, १९२३)

गुजरातकी परीक्षाके दिन नजदीक आ रहे हैं। अब तो गिन्तीके लिए महीने भी नही रहे, सिर्फ हफ्तोंकी बातें हैं। कुछ ही समयमें दिनोंकी बात होने लगेगी और फिर घण्टोंकी गिनती होगी।

एक ओर तो गुजरातकी महासभाका समारोह करना है। हमें यह देखना है कि हम अतिथि-सत्कारमें, व्यवहार कुशलतामें, उदारतामें कम न निकलें।

दूसरी ओर गुजरातने असहयोगमें जो पहले कदम बढाया है, उसको शोभा देने योग्य काम कर दिखाना है। गुजरातकी कमसे कम एक तहसील तो ऐसी तैयार करना चाहिए जो मौतकी गोदमें जानेके लिए तैयार हो और ऐसी सामर्थ्य भी रखती हो।

इसकी शर्तें मैं पहले ही लिख चुका हू। यह कहा जा सकता है कि महासमितिने भी इन्हें स्वीकार कर लिया है। ये शर्तें तो ऐसी हैं जो कार्यके रूपमें परिणत की जा सकती हैं। परन्तु उन बातोंका भी विचार हमें कर रखना चाहिए, जिनके विषयमें प्रस्ताव तो नहीं हो सकता, परन्तु जिनके पाबन्द रहे बिना उन शर्तोंका पालन किये बिना नहीं रह सकता। जो

शख्स रेखागणितके सिद्धान्तको बिना समझे ही रट डालता है वह अगर 'बारह' की जगह 'बारहवा' कह दे तो कौन आश्चर्यकी बात है ? जिसने रटा हो तो 'इसलिए' परन्तु कहा जाय 'क्योंकि' तो फिर उसकी क्या गति हो ? जिस प्रकार उसकी रटाईकी पोल खुल जाती है उसी प्रकार वह शख्स भी जो बिना ही समझे समितिकी शर्तों के पालन करनेका दावा करता है, दरवाजेसे वापस लौटे बिना नहीं रहनेका , क्योंकि वह दरवाजेकी तरफ जाता तो है, पर उसके खोलनेकी तरकीब नहीं जानता ।

यह लडाई तो धर्म की है । इसे चाहे व्यवहार्य्य कहिये, चाहे अव्यवहार्य, राजनैतिक कहिए, अथवा सांसारिक । इसका कुछ भी नाम रख दीजिए, इसका मूल है धर्म । धर्मके खातिर, धर्मके नाम पर, हम यह लडाई लड रहे हैं । अली-भाइयोंने बिलकुल पक्की बात कही है । उन्होंने कहा—"राज्यके कानून और ईश्वरके कानून, पीनल कोड और कुराने पाकमेंसे किसीका चुनाव करना हो तो हम अपने ईश्वरको और हमारे पाक कुरानको ही पसन्द करेंगे ।" यह लडाई तो इस बातकी है कि मुसलमान, हिन्दू, पारसी, ईसाई आदि सब अपने अपने धर्मको जानें और उसके अनुसार बर्तें । सब धर्मके खातिर मरें । जो मरता है वह पार होता है जो मारता है वह मरता है । अगर दूसरोंकी हत्या करके कोई अपने धर्मका पालन कर सकता तो आज लाखों आदमियोंको मुक्ति मिल गई होती ।

इसलिये हमें तो बस सकट समयमें ईश्वरको ही याद करना है। जिसे इतना विश्वास नहीं है उसकी गति अन्तको रुके विना नहीं रह सकती। खोटा रुपया चाहे कितनी ही दूकानों पर क्यों न चक्कर लगा आवें, उससे भला कहीं उसकी कीमत बढ़ सकती है? सराफके यहासे वह लौटे विना रही नहीं सकता। और इस बीच वह जिन जिनकी दूकानोंपर भटका है उन सबको भी उसके स्पर्शसे थोडी बहुत छूत लग गयी होगी। इसी प्रकार हममें जो लोग 'रंगे सियार' होंगे वे जरूर आखिरी मंजिलसे पीछे हटे विना रही नहीं सकते।

जिसकी इच्छा हो वह मैदानमें आवे। जिनसे हो सके वही इसमें कूदें। मैं निमन्त्रण सबको देता हूं। परन्तु जो भूखे हों वही थालीपर बैठें। अगर दूसरे लोग बैठ जायगे तो पछतायगे। जिसे भूख नहीं है, उसे बढ़िया बढ़िया खाने भी अच्छे नहीं लगते। जो भूखा है उसे सूखी सूखी बजड़ेकी रोटी भी मीठी लगती है। इसी प्रकार जो लोग असहयोग का अर्थ समझ चुके हैं, जो धर्मका मर्म जान चुके हैं वही इसमें टिक सकेंगे। जो समझ चुका है उसके लिये सब बातें आसान हैं। जो समझ नहीं पाया है उसके लिये सब बातें कठिन हैं। अंधेके पास आईना किस कामका?

अवसर कठिन है। विना विचारे कदम उठाकर पीछे पछतानेका मौका न आवे। अगर कोई भी तहसील तैयार न हो तो गुजरात भले ही हुण्डी वापस कर दे। परन्तु उसपर सही

कर चुकने बाद तो उसको सिकारे विना गुजर हो नही। अभी गुजरातके लिये मौका है। पर पसन्द कर लेनेके बाद फिर पीठ न दिखानी होगी। अगर शेखीमें आकर बीडा उठा ले और फिर कुछ न बन पडे तो फिर जीते हुए मुर्देके समान हो जायंगे। आज तो गुजरातको जरा भी घबड़ानेका या सकोच-का कारण नहीं है।

अब यह विचार करना चाहिये कि हमारी योग्यता किन किन बातोंपर अवलम्बित है—

(१) शान्ति (२) स्वदेशी

(३) हिन्दू मुसलमान एकता (४) छुआछूतको दूर करना

ये सब बातें तो आसान हैं।

पर कानूनका सविनय भङ्ग ? इससे भी हम लोग अनजान नही हैं। जेल तो उसके साथ हुई हैं। उसे भोग लेंगे। बडे बडे लोग गये हैं, देख आये हैं, तो फिर हम क्यों ऐसा न कर सकेंगे ? अतएव यह तो कोई बडी बात नही।

पर—?

मार्शल ला जारी हो जाय तो ? गुरखोंकी फौज आवे तो ? गोरी सेना चढ़ आवे तो ? और फिर सगीनें भोंके, गोलियां झाडे पेटके बल रेंगावे तो ? अरे भले चली आवे। आने दो पेटके बल चलावे तो ? मर मिटेंगे, पर पेटके बल न रेंगेगे। संगीनें भोकना हो तो भोंक दे। मौत प्लेग और हैजे सही, सगीनोंसे ही सही। और अगर गोलियां भी दागें तो

हम नहीं पीठ दिखानेवाले हैं। अब तो इतना जोर आ गया है कि गिल्ली डंडेके खेलकी तरह, छाती खुली करके गोलियोंको छातियोंपर झेल लेंगे। गुरखोंको अपना भाई बना लेंगे और न हो तो, भाईके हाथों मरने जैसा सुख दूसरा क्या होगा, ऐसा कहते हुए तो जरूर बदनमें खून दौडने लगता है।

मुझे तो विश्वास है कि दक्षू गुजरात इस बार कर दिखावेगा। परन्तु यह बात लिखते हुए कलम मारी पीछे जाती है। गुजरातने बन्दूकोंके धडाके किस दिन सुने? गुजरातने लहूकी नदियां कब देखीं? क्या गुजरातसे यह दृश्य देखा जा सकता है कि पटाखोंकी तरह तडातड बन्दूकें चल रही हैं और मिट्टीके घडोंकी तरह लोगोंके सिर धडाधड कट रहे हैं।

अगर गुजरात औरोंके सिरोंको फूटते हुए देख सके तो वह 'गरीब गुजरात' न रहे। अगर गुजरात अपने ही सिरोंको टूटते हुए देखे तो अमर पदको प्राप्त करे। इसके लिये किस तालीमकी जरूरत है?

विश्वासकी। यह विश्वास समितिके प्रस्तावोंसे नहीं मिल सकता। ईश्वर दीन दुखियोंका मालिक है, ईश्वर हिम्मतका देनेवाला है। "राम राखे तेने कोई न चाखे।" यह देह उसीका दिया हुआ है। वह खुशीसे ले जाय। देहको सुरक्षित रखनेसे कहीं वह चिरस्थायी हो सकता है? रुपयेकी तरह देहका भी विनियोग अच्छे काममें ही करना उचित है। और देह अर्पण

करनेके लिये इस अत्याचारसे मुक्त होने जैसा सुअवसर दूसरा क्या होगा? इस तरह जो सच्चे दिलसे मानता है वह तो मुसकुराते हुए छाती खोलकर बेधड़क और बेफिक्र होकर गोलियोंको गेंदकी तरह झेल लेता है।

इतना अटल विश्वास अगर हो तभी गुजरातकी किसी तहसीलको इस रणमें सामने आना चाहिये।

सब लोगोंको इतना विश्वास न भी हो तो हर्ज नहीं। कमसे कम कितने लोगोंको होना चाहिये इसका अन्दाज मैं बता चुका हूं। दूसरे लोगोंको गोलियोंका स्वागत करनेकी हिम्मत न हो तो भी हानि नहीं। पर उनमें इतनी दृढ़ता तो अवश्य होनी चाहिये कि चाहे उनका सारा घर बार क्यों न लूट लिया जाय, पर वे हरगिज टससे मस न हों। भले ही घर-बार जायँ। जीते रहेंगे तो फिर उन्होंमें जायगे और उनको लेनेका प्रयत्न करते हुए ही मरेंगे। यही स्वराज्य है।

अगर इतना बल किसी एक तहसीलमें भी न हो फिर हम स्वराज्यके योग्य किस तरह हो सकते हैं? परन्तु जिस दिन एक भी तहसील इस परीक्षामें पास हो जायगी बस, उसी दिन अवश्य स्वराज्य है, क्योंकि उसी दिन हिन्दुस्तान दिव्य शस्त्रके उपयोग करनेमें कुशल माना जायगा।

पर इससे यह न समझना चाहिये कि हममें बहुत बल आ गया है। यह तो आत्माका स्वभाव ही है। बोअर लोगोंकी स्त्रियोंने ऐसी वह दुरी दिखाई है। लाखों अगरेज ऐसी वीर-

ताका परिचय दे चुके हैं, और तुर्क स्त्री पुरुष तो आज भी उसको प्रगट कर रहे हैं।

परन्तु भेद है। वे मारते भी हैं और मरते भी हैं। लेकिन हम जानते हैं कि अमरता तो मरनेमें ही है। मारनेका काम छोड़कर मरनेका ही काम सीखनेमें क्या कोई कठिनाई है? मरना सीखनेके लिये तो हिम्मतकी जरूरत हैं। और विश्वास रखनेवालेमें वह निमिषमात्रमें आ जाती है। मरना सीखनेके लिये शरीर ी जरूरत है। बन्दूक चलानेके महावरेकी जरूरत है। ऐसे हजारों ढकोसले जाननेके बाद कहीं मरना सीखनेकी नौबत आती है और फिर भी अन्तको 'खूनी' लोगोंमें ही गिनती होती है।

पर कोई हिन्दू भाई कहेंगे कि ये बातें तो क्षत्रियत्वकी हैं। गुजरातसे क्षत्रियत्वका क्या वास्ता? हम तो एक व्यापारमात्र करना जानते हैं। गुजरात चाहे भले ही ऐसा हो, परन्तु हिन्दुत्व ऐसा नहीं। चारों वर्णों मे चारों गुण अवश्य होना चाहिये। हा, यह सच है कि हरएकमें अपना अपना गुण विशेषरूपसे होता है, परन्तु अगर दूसरे गुण उसमें बिल्कुल न हों तो वह नपुसक है। जो माता अपने बच्चेके लिये मरना जानती है वह क्षत्रियाणी है, और जो पति अपनी पत्नीके लिये प्राण देता है वह भी क्षत्रिय है, परन्तु इन सबका कर्तव्य जगत्की रक्षा करना नहीं है। अतएव हम उन्हें क्षत्रियके रूपमें नहीं पहचानते हैं।

इस समय तो जगत्की -हिन्दुस्तानकी—रक्षा करना हरएक-का धर्म्म है क्योंकि वह धर्म आज किसीका नहीं रहा है। नहीं दिखाई देता है।

यह तो हिन्दुओंकी बात हुई। गुजरातके मुसलमान, पारसी, आदि क्या करें? हिन्दुस्तान उनका भी है, गुजरात उनका भी है। उन्हें भी हिन्दुस्तानको गुलामीसे छुड़ाना है। और वे भी केवल मरकर ही छुड़ा सकते हैं।

अतएव क्या हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई और क्या यहूदी आदि, जो अपनेको हिन्दुस्तानी मानते हैं, उन सबको मरनेका मन्त्र सीखना और उसको साधना करना है। इस पाठको तो केवल वही पढ़ सकता है और वही बरत सकता है जो एकमात्र ईश्वरमें भरोसा रखता है।



आखिरी चेतावनी

—o—

(फरवरी ६, १९२१)

माननीय वाइसराय महोदय,

देहली

महाशय,

बम्बई प्रान्तके सूरत जिलेमें बारडोली नामकी एक छोटीसी तहसील है। उसकी आबादी कुल मिलाकर कोई ८७ ००० है।

गत २९ जनवरीको श्री विट्ठल भाई पटेलके सभापतित्वमें वहा एक सभा हुई थी और उसने सामुदायिक सविनय कानून भग शुरू करनेका प्रस्ताव पास किया। देहलीमें गत नवम्बर मासके प्रथम सप्ताहमें राष्ट्रीय महासभा समिति द्वारा स्वीकृत प्रस्तावमें निर्दिष्ट शर्तों का पालन करनेकी योग्यता इस तहसीलने सिद्ध कर दिखाई है। शायद बारडोलीके इस प्रस्तावके लिये प्रधानत मैं उत्तरदायी हू, इसलिये जिस स्थितिमें यह प्रस्ताव किया गया है उसका खुलासा आपके तथा जनताके सामने कर देना मेरा कर्त्तव्य है।

महा-समितिके लिये बारडोलीको प्रथम पद देनेका विचार था। इस प्रकार सविनय भगके द्वारा यह दिखलाना था कि खिलाफत, पञ्जाब और स्वराज्य सम्बन्धी भारतके निश्चयको

बिलकुल न माननेके सरकारके पक्के दुराग्रहसे प्रजा सन्तप्त हो उठी है।

इसके बाद बम्बईमें १७ नवम्बरको भारतके दुर्भाग्यसे दु ख दायक हुल्लड मच गया और उसका फल यह हुआ कि बारडोलीको अपना पूर्वोक्त विचार स्थगित रखना पडा।

इस बीच भारत सरकारकी सम्मतिसे बङ्गाल, आसाम, संयुक्त प्रान्त, पञ्जाब, देहली और एक तरहसे बिहार, उडीसा आदि जगहोंमें घोर दमन नीति शुरू हुई। उन उन प्रान्तोंमें सत्ताधारियोंने जो जो काम किये हैं उन्हें 'दमन' कहा गया है। मैं जानता हूं कि यह आपको पसन्द नहीं हुआ है। मेरा मत तो यह है कि जब किसी स्थितिका मुकाबला करनेके लिये आवश्यकतासे अधिक तेज उपायोंसे काम लिया जाता है तब वह अवश्य 'दमन नीति कही जाती है। लोगोंका माल असबाब लूट लेना, निरपराध लोगोंको मारना पीटना कैदियोंके साथ घातक रीतिसे बरताव करना, उन्हें कोडे लगाना, ये बातें किसी भी तरहसे न्या कानून न सभ्य अथवा आवश्यक नहीं मानी जा सकती। इस प्रकार जब सत्ताधारी ही मर्यादाका उल्लंघन करते हैं तब उसे अमर्यादित दमन नीति कह सकते हैं। हां, यह माना जा सकता है कि असहयोगियों तथा उनके साथियोंने कुछ हदतक हडतालोंके सम्बन्धमें तथा पहरोंके सम्बन्धमें लोगोंको दबानेकी नीति अख्तियार की है, परन्तु इससे कहीं उस पद्धतिका बचाव किया जा सकता है जिसके द्वारा शान्त स्वय-

सेवक मण्डल अथवा वैसी ही शान्तिमय सभायें भंग की जा रही हैं ? फिर ऐसा करनेके लिये उन असाधारण कानूनोंका दुरुपयोग किया गया है जो उन आन्दोलनोंके लिये तजवीज किये गये हैं जिनमें जान बूझकर हिंसाकाण्डके लिये निश्चित रूपसे स्थान था। फिर हमारे कितने ही लोगोंकी यह धारणा है कि साधारण कानूनका भी बेफायदा उपयोग बेगुनाह लोगोंको दबानेके लिये किया गया है। ऐसे दुरुपयोगके लिये यदि 'दमन नीति' विशेषणका प्रयोग न किया जाय तो फिर दूसरे किसका किया जाय ? फिर जिस कानूनको रद्द करनेका इरादा सरकार जारी कर चुकी है उसकी रूलसे तथा गैर अदालती हुक्मसे समाचार पत्र बन्द किये गये हैं, इसे भी 'दमन' नहीं तो क्या कहें ?

इसलिये इस समय देशके सामने जो कर्त्तव्य उपस्थित हो गया है वह यह है कि भाषण करने, सभा समाजका सञ्चालन करने का जो अधिकार जनताको है उसको न नष्ट होने देना।

सरकारके वर्तमान रुखको देखते हुए तथा ऐसी स्थितिमें जब कि उपद्रव करने वाली शक्तियोंपर अपना अंकुश रखनेके लिये लोग पूरी तरहसे तैयार नहीं है, असहयोगी मालवीय परिषद्से किसी तरहका सम्बन्ध रखना नहीं चाहते थे। और उस परिषद्का उद्देश यह था कि सब पक्षोंका एक सम्मेलन करनेके लिये आपको राजी किया जाय। परन्तु मैं इस बातके लिये उत्सुक था कि जितना कष्ट सहन रोका जा सके उतना

किसी भी दमनकारी कानूनके अन्दर आ जाते हों। इसी प्रकार वर्तमान पत्रोंपर जो अदालती अकुश है वह भी दूर हो जाना चाहिए तथा उनके सम्बन्धमें जो अर्थदण्ड किया गया है और जब्तिया की गई हैं वह रकम वापस दी जानी चाहिए। मेरी यह माग उन देशोंकी प्रथासे अधिक नही है जहा, यह माना जाता है कि, सभ्य राजनीति प्रचलित है। यदि इस घोषणापत्रके प्रकाशित होनेके सात दिनके भीतर आप यह प्रगट कर देंगे कि मेरी मागें स्वीकार की गई हैं, तो मैं तबतक तीव्र सविनय भङ्ग स्थगित करनेकी सलाह देनेके लिए तैयार हू जबतक कि जो देशसेवक आज कैदखानेमें हैं छूटकर नये सिरेसे परिस्थितिका विचार न कर सकें। यदि इस प्रकार सरकार मेरी मागोंको स्वीकार करे तो मैं यह मानूगा कि वह लोकमतका आदर करनेकी शुभेच्छा रखती है और इसलिये मैं लोगोंको यह सलाह दूगा कि आप किसी भी तरफसे अकुश लगाये बिना लोकमत तैयार करनेमें लग जाइए और यह विश्वास रखिए कि उसके द्वारा देशकी निश्चित मागें स्वीकृत हो सकती हैं, और ऐसा होनेपर तभी सविनय कानून भङ्ग शुरू किया जाय जब कि सरकार सम्पूर्णत निष्पक्ष नीतिका त्याग करे अथवा भारतकी जनताके स्पष्टताके साथ प्रगट किये गये बहुमतका आदर करे।

अंगद-कसौटी

(फरवरी ५, १९२२)

सभ्यता पूर्ण युद्धका यह नियम है कि जब योद्धामें सपूर्ण
त्वका विकास हो जाता है तब वह पूरे तौरपर नम्र हो
जाता है। उस अवस्थामें तो वह विनयको छोडता ही नही।
प्रत्येक युद्धके आरम्भमें वह प्रतिस्पर्द्धीको अवश्य चेतावनी
देता है, उसे सावधान करता है और उसे अपनी भूलको
सुधारनेके लिये अथवा युद्धका कारण दूर करनेके लिये अनु-
रोध करता है।

रामने रावणके साथ ऐसा ही विनय दिखलाया था। जब
रामचन्द्र सेतुबन्ध रामेश्वर पहुच गये तब उन्होंने अपनी वानर
सेनाको एकत्र किया और सोचने लगे कि अब रावणको
चेतावनी देनेकेलिये किसे भेजे? कितने ही वानरोंको यह व्यवस्था
आवश्यक न मालूम हुई। कितनेहीको यह कमजोरी दिखाई
दी। कारण जैसे अभिमानीके साथ विनय दिखलाना उसके
अभिमानको उत्तेजना देनेके बराबर है। रामने इन दलीलों
को गौरके साथ सुना और सेनाको समझाया कि रामकी
सेनाको इस चिन्तासे कोई मतलब नहीं कि इस शिष्टाईका
असर रावणपर कुछ होगा या नही। रामकी सेना तो सिर्फ

तो फिर वह स्वेच्छाचारिणी रही न सके। जहां दमननीति बन्द हुई कि बस फिर स्वेच्छाचारिताके बदले लोकमतका राज होने लगेगा।

सद्भाग्यसे सरकारने ही दमननीति शुरू करके इस प्रश्नको उत्पन्न किया है, बस हमें बीड़ा उठा ही लेना चाहिये सरकार जितना जी चाहे हमें कष्ट दे, पर हमारी तीन मांगोंमें यह एक चौथी मांग हो गई। और यह तो सर्वोपरि होनी ही चाहिये। हमें ऐसा समय ला देना चाहिये कि सरकार दमननीति जारी कर ही न सके।

दमननीति क्या है? हमारा मुंह बन्द कर देना, हमारे सभा सम्मेलन भंग कर देना, और हमारे अखबारोंको बन्दकर डालना। वह लालाजीके 'वन्दे मातरम्' का गला घोंट डाले, भला यह कहीं सहन हो सकता है? मजहर-उल हक साहबका 'मदरलैंड' बन्द कर दे, यह कहीं देखा जा सकता है! जाफर अली खांका 'जमीनदार' बन्द, हबीबखानका "सियासत' बन्द, राधाकृष्णका 'प्रताप' बन्द! 'इण्डिपेण्डेण्ट' तो बन्द हुई है। प्रयागका 'सराज्य' भी बन्द ही है। इन सबकी दवा हमारे पास अवश्य होनी चाहिये। यह दमननीति अब न चलने देनी चाहिये।

जो सरकार लोकमतके अधीन नहीं होनी चाहती वह हमेशा प्रजाकी पुकारका दम बन्द कर देनेका प्रयत्न करती है। जब वह ऐसा नहीं कर सकती तब उसकी हार हो

जाती है। इसलिये वारडोलीकी ओरसे जो
है उसमें दमननीति बन्द करनेकी बातको प्रधान पद दिया गया है। जब हमारी जबान खुल जायगी जब हमारे अखबार छपने लगेंगे और हम आजादीके साथ सभा सम्मेलन कर सकेंगे तब हम आजाद जैसे ही हैं।। समझना चाहिये कि तब तीन चौथाई स्वराज्य स्थापित हो गया। प्रजाकी पुकार ही सरकारको बाध्य करनेके लिये बस हो जायगी। स्वराज्यका एक अर्थ यह है कि हम अपनी इच्छाके अनुसार व्यवहार कर सकें। उस समय सिर्फ हत्याकाडपर अकुश रहेगा। हत्या काडका हक तो हमें स्वराज्यमें भी नहीं मिलेगा।

उस वसीठी पत्रमें यह कहा गया है कि यदि सरकार शात कार्योंके लिये गिरफ्तार किये गये कैदियोंको छोड दे और दमन नीति बन्द कर दे तो हम फिलहाल सविनय भङ्ग बन्द कर देंगे। तीव्र सविनय भग उसे कहते हैं कि जिसमें व्यक्ति अथवा समुदाय जान बूझकर सत्ताका अनादर करनेके लिये निर्दोष मनुष्यकृत कानूनोंका भी मर्यादाके साथ भङ्ग करे। जो भङ्ग हम आज सारे देशमें कर रहे हैं वह तो अनिवार्य अतएव शातिमय भग है। उसके बिना तो काम चल ही नहीं सकता। अर्थात् सरकारके द्वारा हमारा मुह बन्द किये जानेपर भी हम बोलें, सभा बन्द किये जानेपर भी सभाय करें, अखबारोंके बन्द कर देनेपर भी हम उन्हें लिख

लिखकर प्रकाशित करें। यह सब शीत सविनय भङ्ग है और जबतक ऐसे बेहूदे हुक्म निकलते रहेंगे तबतक यह भग किया ही जायगा। परन्तु इसके अलावा जो भग बचावके रूपमें नहीं, बल्कि सरकारको छेड़नेके लिये किया जाता है, जो बलवेके रूपमें है, उसे यदि सरकार दमननीतिसे बन्द कर देगी तो हम कर देंगे। मैं समझता हू कि इस शर्तपर हमें यह बन्द कर देना चाहिये, क्योंकि यदि सरकार हमारी वाचा, हमारी कलम और हमारे सभा सम्मेलनको स्वतन्त्र हो जाने दे तो फिर उसे हमारी मागें थोड़े ही दिनोंमें स्वीकार किये बिना छुटकारा नहीं।

अतएव इस समय बारडोलीपर जो भार है वह यही कि हमारे योद्धा लोग छुड़ा लिये जायँ और दमननीति बन्द करा ली जाय। बारडोली यदि इतना कर सके तो कहा जायगा कि उसने अपना काम पूरा कर दिया। पर यदि
८ वायसराय इतना भी न करे तो फिर वह क्या करेगी? और यदि लोकमत प्रगट करनेका हक भी कुबूल न करे तो फिर तीव्र सविनय भग किये बिना कैसे रहा जा सकता है? एक हदतक तो मनुष्य अपना बचाव करता रहता है पर फिर तो उसे चढ़ाई भी करना पड़ती है। तीव्र भग एक प्रकारकी शान्त चढ़ाई ही कही जा सकती है।

यह सब शिष्टाई हम वायसराय महोदयके साथ कर चुके हैं। इतनी शिष्टाई करके हमने पूरी सभ्यता प्रदर्शित

की है। इसका अर्थ यह है कि यदि ११ फरवरी तक बड़े लाट साहब बारडोलीके मार्फत की गई मांगोंको स्वीकार कर लें तो बारडोलीके सविनय भंगकी आवश्यकता बहुत कम रह जायगी। हमारी मांगका दूसरा अर्थ हो ही नहीं सकता। इससे मेरा यह मत है कि वाचा, कलम और संघकी स्वतन्त्रताका स्वीकार किया जाना प्राय असम्भव है।

बारडोलीको जी जानसे अपनी तैयारी करनेकी आवश्यकता है। अभी जो जो खामियां रह गई हों उनकी पूर्ति कर डाले और प्रत्येक नर नारी ईश्वरसे यह प्रार्थना करें कि हे सर्व शक्तिमान् हमें जान और मालके नुकसानको सहन करनेकी पूरी शक्ति दे।



सरकारका जवाब



(१२ फरवरी १९२२)

वसीठी पत्रका उत्तर सरकारने दे दिया। उसे पढकर दु:ख होता है, क्योंकि वह बेशर्मीसे भरा हुआ है, उसमें न तो कहीं पश्चात्ताप दिखाई देता है और न कहीं अपनी भूलोंकी स्वीकृति। बल्कि अथसे इति तक सरकारने उसमें अपनेको निर्दोष बताया है और असहयोगियोंको ही दोषी सिद्ध करनेका प्रयत्न किया है।

इस उत्तरको पढनेके बाद मेरे दिलमें दो विचार उठे या तो जान बूझकर इसमें झूठी बातें लिखी गई हैं या उत्तरका मसविदा बनाने वालों और अधिकारियो पर सरकारको इतना अधिक विश्वास है कि वह इस बातको मानती ही नहीं कि वे लोग कभी भूल कर सकते हैं। मनुष्य-जातिके सम्मानके खातिर मैंने पहले विचारको छोड दिया और दूसरेको कायम रखता हूं।

दोनों बातें भयकर हैं। जान बूझकर झूठ बोलना और करना अथवा अपने दोषको देख ही न पाना और इसी भ्रममें रहना कि मैं तो बेदाग हू, इन दोनो दोषोंसे मनुष्यको बचना चाहिए।

मैं दूसरे दोषको मानता हू, क्योंकि मैं समझता हू कि

मनुष्य अनजानमें बहुत भूलें करता है। असहयोगी जैसे अपनी भूलें नहीं देख पाते हैं वैसे ही सरकारके सम्बन्धमें भी हम क्यों नहीं करें ? हमारा धर्म तो यह है कि हम अपने दोषोंको देखनेके लिए सूक्ष्म दर्शक यन्त्रसे काम लें और दूसरोंके दोष दूरबीनके द्वारा देखें। केवल उसी अवस्थामें हम बड़े प्रयासके बाद अपने दोषको देख सकते हैं। जो नर नारी या समाज इस नीतिके अनुसार व्यवहार करते हैं वे सदा सुखी रहते हैं। जो अपने दोषोंको पर्वतके बराबर मानता है उसे दूसरोंकी भूलें खोजनेके लिए बहुत कम समय रहता है। सो फिर तो मनुष्यको स्वयं अपने ही दोषोंसे दुखी होना रह गया। और दुखी होनेकी इच्छा तो वह स्वभावतः ही नहीं करता। इससे वह अपने पहाड़ जैसे दिखाई देने वाले दोषोंको जल्दी दूर कर डालता है।

मैं इसी नियमका अनुसरण करना चाहता हूं। और सरकारके दोष देखनेके लिए आखोंके सामने दूरबीन रख लेना चाहता हूं। दूरबीनकी एक खूबी पाठकोंको याद रखना चाहिए। दूरबीन हमें केवल दूर की ही वस्तुओंको, सो भी छोटे ही रूपमें, दिखाता है और नजदीककी चीजें तो उससे दिखाई ही नहीं देतीं। मुझे याद है कि मैंने सरकारकी छोटी छोटी भूलों पर तो ध्यान ही नहीं दिया है। पर अब तो सरकारने हद कर दी। उस उत्तरमें सरकारने अपनी कितनी ही भूलोंको गुणके रूपमें दिखाया है और जिन भूलोंको गुण नहीं बताया जा

सकना उनको वह हज़म कर गई है। सभाबन्दी और जगानबन्दी-के जो नोटिस इजरा किये गये हैं उनके विषयमें वह लिखती है कि यह बन्दी तो असहयोगियोंकी बदमाशीके लिए करनी पडी है। पर सच बात यह है कि ऐसा एक भी सुबूत सरकारने पेश नहीं किया है जिससे इस मनाईकी आवश्यकता सिद्ध हो। परन्तु इस मनाईके लिए तो कुछ दलील मिल सकती थी, इसलिये सरकारने गुणके रूपमें उसका परिचय कराया। परन्तु लूट-पाटका, मार-पीटका, खादी जला देनेका, महासभाके दफ्तरों-में चढाई करनेका बचाव किस तरह किया जा सकता है? लोग जो चाहे सो गुनाह करते रहें, पर इससे क्या सरकारी कर्मचारी भी कानूनके खिलाफ लूट या मार पीट कर सकते हैं? इसलिये इस बातको सरकारने टाल ही दिया है। इसी तरह उत्तरमें दूसरी गम्भीर बातोंके विषयमें अत्युक्ति अथवा मौनकी नीतिका अवलम्बन किया गया है। उनकी छानबीनमें मैं पाठकोंको उलझाना नहीं चाहता। उत्तर तो मिलने ही वाला था। मेरा यह भी ख्याल था कि उसमें कोई भारी बात न होगी। परन्तु जो बेशर्मी उसमें मुझे दिखाई देती है उसके लिए मैं तैयार नहीं था। मैं यह सोचता था कि उसमें नरम दलको कुछ तो शान्ति दी जायगी, पर वे सूखे ही रखे गये और असहयोगियोंके लिए तो जो बात पहलेसे चली आ रही है वह हुई है। सरकारकी अस्पृश्यताके सम्बन्धमें समझदार आदमीके लिए इस उत्तरसे बढ़कर और क्या प्रमाण हो सकता है?

श्री गान्धीजीका प्रत्युत्तर



सरकारके पूर्वोक्त पत्रका नीचे लिखा प्रत्युत्तर श्री गान्धीजीने प्रकाशित किया है—

श्रीमान् वाइसरायके नाम मेरे लिखे पत्रका जो उत्तर सरकारने दिया है उसे मैंने बड़े गौरके साथ पढ़ा है। इस उत्तरमें असली बातोंके सम्बन्धमें जो आला वाला बताया गया है उसके लिए मैं तैयार नहीं था। सरकारने जिन जिन बातोंको इन्कार किया है उनमेंसे पहली ही बातको मैं लेता हूं। सरकार उत्तरमें कहती है "वह (सरकार) जोरके साथ इस बातका इनकार करती है कि उसने वे कानूनी दमन नीतिका अवलम्बन किया है और वह इस बातको भी नामंजूर करती है कि वर्तमान सविनय कानून भंगका आन्दोलन असहयोग दलको लेख स्वातन्त्र्य भाषण स्वातन्त्र्य और संघ स्वातन्त्र्यके प्रारम्भिक हकोंकी प्राप्तिके लिए मजबूरन उठाना पड़ा।" मेरे पत्रको सरसरी तौर पर ही देखनेसे यह मालूम हो जाता है कि यद्यपि देहलीमें महासमितिने सविनय कानून भंगको सत्ता दे दी थी तो भी वह शुरु नहीं हुआ था। मैंने अपने पत्रमें यह बात भी साफ साफ प्रगट कर दी थी कि बम्बईकी दुःखप्रद दुर्घटनाके कारण प्रस्तावित समुदायिक सविनय कानून भंग अनिश्चित समय तक स्थगित कर

दिया था। यह निर्णय यथासमय प्रकाशित कर दिया था और सरकार तथा जनता दोनोको यह बात मालूम है कि अब भी लोगोमें जो कुछ हिंसाकी प्रवृत्ति बाकी रह गई है उसको परास्त करनेके लिए भगीरथ प्रयत्न किया जा रहा था। यह बात भी सरकार और जनता दोनोको मालूम है कि स्वयसेवकोसे एक खास किस्मके प्रतिज्ञा पत्र पर दस्तखत कराये जानेकी तजवीज की गई है, जिसका उद्देश्य यही है कि शुद्ध चरित्र लोग ही भरती होने पावें। दूसरे सब लोग अलग रह जाय। इस स्वय-सेवक दलका मूल उद्देश्य यह था कि वह जनताको अहिंसाके सिद्धान्तकी शिक्षा दे और असहयोगके कार्यों के समय शान्ति कायम रखे। दुर्भाग्यवश बम्बईकी दुर्घटना पर, और उससे भी अधिक शायद उसी दिनकी कलकत्तेवाली पूर्ण हडताल पर, भारत सरकार अपने आपसे बाहर हो गई। मैं इस बातसे इनकार नहीं करता कि कलकत्तेमे थोडा बहुत डराने धमकानेकी नीतिसे काम लिया गया होगा, परन्तु मैं यह कहनेकी धृष्टता करता हू कि इस डराने धमकानेकी वजहसे नहीं, बल्कि कलकत्तेकी पूर्ण हडतालसे उत्पन्न सन्तापके बदौलत भारत सरकार और बङ्गाल सरकारका दिमाग खौल उठा। दमन तो इसके भी पहलेसे शुरू था ही, पर उसके खिलाफ न तो कुछ कहा ही जाता था और न कुछ लिखा ही जाता था। परन्तु स्वयंसेवक दलके विच्छेद और सभाबन्दीके नोटिसोंके रूपमें जो दमन शुरू हुआ वह तो असहयोगी समाजमें बमके गोलेकी तरह फट पड़ा। तब

भी, मैं फिर कहता हू कि इन नोटिसोंने तथा बङ्गालमें देशबन्धु दास, मौलाना अबुल कलाम आजाद, सयुक्त प्रान्तमें पण्डित मोतीलाल नेहरू तथा उनके साथी और पञ्जाबमे लाला लाजपत राय तथा दूसरे सज्जन, इनकी गिरफ्तारियोंने यह आवश्यकता पैदा कर दी कि आक्रामक तो अभी नहीं, पर बचावके स्वरूपका सविनय भङ्ग अर्थात् निष्क्रय प्रतिरोध किया जाय। यहातक कि सर होरमसजी वाडियाको भी यह कहना पडा कि यदि बम्बईकी सरकारने भी बङ्गाल, संयुक्तप्रान्त और पञ्जाबकी सरकारका पदानुसरण किया तो मुझे ऐसी आज्ञाओंका अवश्य प्रतिकार करना पडेगा अर्थात् अपना नाम स्वयसेवकोंमें लिखावेंगे या सरकारकी ऐसी आज्ञाको भङ्ग करनेके लिये जो सभायें की जायगी उनमे सम्मिलित होंगे। इस तरह, यदि सरकार अपनी इस नीतिको न बदले, जिसके बदौलत भारतके कितने ही भागोंमें सार्वजनिक सभाये, सार्वजनिक सस्थायें तथा असहयोगी अखबार बन्द हो गये हैं, तो सविनय कानून भगकी बुनियाद पूरी तरह तैयार हो चुकी है।

अब इस कथनपर विचार करता हू कि सरकारने "बे कानूनी दमननीति अख्त्यार नहीं की है।" 'कानून और शान्ति' के नामपर सरकारी अधिकारियों द्वारा होने वाले जङ्गली कामों पर अफसोस प्रगट करने या क्षमा मागनेके बजाय, खेद है कि सरकार अपने उत्तरमें बे कानूनी दमनको स्पष्ट इनकार करती है। इस सम्बन्धमें मैं सरकार और जनता दोनोंसे ७।

करता हूं कि वे नीचे लिखी बातोंपर गौरके साथ विचार करें, जिनकी सारभूत बातोंपर कोई सवाल नहीं उठाया जा सकता—

(१) कलकत्तेमें इण्टाली मुकामपर सरकारी अधिकारियोंका गोली चलाना और यहातक कि मुर्देके साथ भी घृणित बर्ताव करना ,

(२) सिविल गार्डसके पाशविक अत्याचार, जो स्वीकार किए जा चुके हैं ,

(३) ढाकामें एक सभाका बलपूर्वक भंग किया जाना और बेगुनाह लोगोंका टाग पकडकर खींचा जाना, यद्यपि उन्होंने किसीको हानि नहीं पहुचायो थी और न उसके कारण ही पैदा किये थे।

(४) इसी प्रकारका सलूक अलीगढ़के स्वयसेवकोंके साथ किया जाना ,

(५) लाहोरमें सर्वसाधारणपर, तथा स्वयसेवकोंपर जो पाशविक और अकारण आक्रमण किया गया था उसके सम्बन्धमें डाक्टर गोकुलचन्द नारङ्गकी अध्यक्षतामें हुई कमिटीकी तहकीकातका फल ,

(६) जालन्धरमें स्वय सेवकों तथा सर्वसाधारणके साथ निर्दय और दुष्ट व्यवहार किया जाना ,

(७) देहरादूनमें एक बालक पर गोली चलाया जाना और बेरहमीके साथ सार्वजनिक सभाको बलपूर्वक भङ्ग कर देना ,

(८) एक अफसरका और उसके सिपाहियोंका बिना किसी-

की इजाजतसे विहारके गावोंको लूट लेना, जिसे विहारकी सरकारने कुबूल किया है, मगर जिसके सम्बन्धमें असहयोगी कहते हैं कि एक प्लैण्टरके इशारेपर किया गया, तथा सोनपुरमें महासभाकी खादी तथा कागजोंको जला डालना और स्वय-सेवकोंपर हमला करना,

(६) महासभा और खिलाफतके दफ्तरोंमें आधी रातको तलाशी लेना और गिरफ्तारी करना।

सरकारी अधिकारियोंकी बे कानूनी और जङ्गली करतूतोंके ऐसे कितने ही 'अचूक सबूत' हैं। यहा तो उनमेंसे कुछ ही पेश किये गये हैं। यह तो उन सब बातोंका दसवा हिस्सा भी नहीं है जो कि सारे भारतमें हो रहा है, और मैं यह बिना किसी खण्डनकी आशाकाके बताना चाहता हू कि भारतके इन सब भिन्न भिन्न प्रान्तोंमें जो बे कानूनी करतूतें हो रही हैं उन्हें यदि हम मानें तो जलियावाला बागके हत्या काण्ड और पेटके बल चलनेके हुक्मोंकी बात पञ्जाबके अमानुषिक अत्याचारोंको भी फीका कर देती है। यह मेरा निश्चित विश्वास है कि पूर्वोक्त गंदे व्यवहारके मुकाबिलेमें तो जलियावाला बागका हत्याकांड स्वच्छ व्यवहार था और इसमें भी दुःख और तरसकी बात यह है कि चूंकि इस वक्त लोगोंपर गोलिया नहीं झाडी जा रही हैं और उनको गर्दनें नहीं मारी जा रही हैं, ये हजारों निरपराध मनुष्यों की यन्त्रणायें हमारे दिलको हिला नहीं पातीं जिससे देशका हर आदमी इस सरकारके खिलाफ उठ खड़ा हो। परन्तु मानों

इन वे गुनाहोंके साथ पुकारा गया यह जद्ध काफी नहीं था, जेलोंमें भी वागडोर खींची जा रही है। हम कुछ नहीं जानते कि आज कराची जेल्में क्या हो रहा है, सावरमती जेल्में उस अकेले कैदीका क्या हाल हो रहा है और बनारस जेलमें एक दलपर क्या बीत रही है। ये सब लोग उतने ही वे गुनाह होनेका दावा रखते हैं जितना कि मैं रखता हूं। उनका जुर्म यही है कि उन्होंने अपनेको अपने राष्ट्रीय सम्मान और गौरवका ट्रस्टी बनाया। मै आशा कर रहा हू कि वे स्वाभिमानी और तेजस्वी आत्माएं अधिकारियोंका स्वाँग बनाने वाले इन गुस्ताख लोगोंके आगे झुक न जायगी। मै कहता हूं कि इस सत्ता-धारियोंको कोई हक नहीं है कि वे इन उच्च आत्माओंको अपने सामने प्राय नङ्गा हाजिर होनेपर मजबूर करे, या किसी गुलामकी तरह हाथ जोडकर सलाम करावे या यह कहकर कि 'सरकार एक है' अपना अदब करावें। ईश्वरसे डरनेवाला कोई भी शख्स यह दूसरा काम नहीं करेगा, फिर चाहे उसे काठमें लगाकर कितने ही दिनोंतक चौबीसो घण्टे क्यों न खड़ा किया जाय, जैसे कि बगालके एक स्कूल मास्टरके विषयमें खबर आई है।

मनुष्य जातिके गौरवकी रक्षाके लिये, मैं यह विश्वास करता हू कि लार्ड रेडिङ्ग और उनके पत्रका मसविदा बनानेवाले उन वातोंको नहीं जानते हैं जिन्हें मैंने उपस्थित किया है, ... वे इस बातके कायल हैं कि हमारे कर्मचारी तो गल्ती करते

ही नहीं, और इसलिये वे उन बातोंको
हैं जिन्हें लोग 'ईश्वरीय सत्य' मानते हैं।
जरा भी अत्युक्ति हो तो मैं उन्हें
ले लूंगा और क्षमा याचना करूंगा
उन्हें कह रहा हूं। परन्तु मैं तो इन
बातोंको न कि प्रत्येक अक्षरको किसी
सामने जिनसे सरकारका कोई
लिये तैयार हूं। मैं श्री मालवीयजी तथा
जो कि सर्वपक्षीय परिषद्के लिये कोरा
रोध करता हूं कि वे इन आरोपोंकी
कमीशन बैठावे जिसके निर्णयके
जीत हो।

मनुष्य जातिके साथ यह जो
रिक कष्ट किया जा रहा है, इसीके
ही साथियोंको जीवन धारण किये
और इन बातोंके होते हुए मैं
की तफसीलमें नहीं खर्च करना कि
है देशके साधारण कानूनका दुरुपयोग लग-
सरजनमें लोगोंका एक गलत ख्याल जरियों
अतएव उसका संशोधन किये बिना कानूनी
यह घटना लज्जाजनक और निन्दनीय ही अपने
रखना चाहिये कि जिन

उनमेंसे ४५ से अधिक आदमी असहयोगी या उसस सहानुभूति रखनेवाले हुल्लडबाज थे और जिन ४०० आदमियोंको चोटें पहुंची हैं उनमें ३५० से ऊपर आदमी इसी जमातके थे। मैं शिकायत नहीं करता। उन असहयोगियोंकी तथा उनके हिमायती हुल्लडबाजोंकी वही गत हुई जिसके लायक कि वे थे। उन्होंने हिसाकाण्ड शुरू किया उसका फल उन्होंने पाया। और यह बात भी भूल न जाना चाहिये कि, बम्बई सरकारकी रायके खिलाफ असहयोगी लोगोने ही सहयोगी और निष्पक्ष दलके लोगोंकी समुचित सहायतासे उस गोलमालको ठढा करके शान्ति स्थापित की थी।

सरकार यह आरोप करती है कि "क्रिमिनल ला अमेंडमेंट ऐक्ट सिर्फ उन्ही सस्थाओपर लागू किया गया है जिनके बहु सख्यक सभासद स्वभावत हिंसा कार्य करते और डराते धम काते थे।" यह आरोप सत्य है। भारतके जेलखानोंमें आज कुछ लोग नो ऐसे हैं जिन्होने किसीका कुछ नहीं बिगाडा है और शायद ही कोई ऐसा शख्स हो जिसने हिंसा-वृत्तिका या डराने धमकानेकी नीतिका अवलम्बन किया हो और जिनको उस कानूनकी रूसे दी गई हो। इस कथनको प्रमाणित करनेके लिये अनेक सबूत दिये जा सकते हैं और इस बातके लिये भी कि प्राय जहा जहां सभाए भंग की गई हैं वहा हिंसा-कांड होनेका कोई डर नहीं था।

भारत-सरकार इस बातको अस्वीकार करती है कि अली

भाइयोंकी माफीपर वायसरायने यह सभ्य नीति अख्त्यार की थी कि जबतक असहयोग आन्दोलन शान्तिमय बना रहेगा तब तक सरकार उसमें दखल न देगी। सरकारकी इस अस्वीकृति पर मुझे हद दर्जेका दुःख हो रहा है। सरकारने अपने उत्तरमें उस कम्यूनिकका जो अंश उद्धृत किया है वही मेरी रायमें इस बातका काफी प्रमाण है कि सरकार ऐसी हलचलोंमें हस्तक्षेप करना नहीं चाहती थी। सरकार उससे यह अनुमान कर लेने देना नहीं चाहती थी। "वे भाषण जिनसे राजद्रोह फैलता हो और हिंसाकी प्रेरणा कम होती हो कानूनके अनुसार गुनाहमें दाखिल नहीं हो सकते।" मैंने यह कभी नहीं कहा कि किसी भी कानूनका भंग करना कानूनकी रूसे गुनाह नही है। बल्कि मैंने तो यह कहा है, और अब भी कहता हूं कि उस समय सरकारका यह विचार नही था कि शान्तिमय हलचलोंके लिये अभियोग चलाये जाय, यद्यपि कानूनकी भाषामें उनके द्वारा कानूनका भंग होता हो।

सर्वपक्षीय परिषद्के सम्बन्धमें सरकार अपने उत्तरमें मेरे पत्रके इन शब्दोंको 'तथा दूसरे जरियोंसे' जो 'कलकत्तेके भाषण' के बाद आये हैं, बिल्कुल उड़ा देती है। मैं फिर कहता हूं कि वे शर्तें जो कि मालवीय परिषद्के प्रस्तावोंमें रखी गई थीं लगभग वह थीं जिन्हें कि मैं 'कलकत्तेके भाषणसे तथा दूसरे जरियों से' जान पाया था। असहयोग दल की जो हलचलें गैर कानूनी कही जाती हैं वे तो उन नोटिसोंको उठा लिये जाते ही अपने

आप बन्द हो जातीं, क्योंकि उन क्रोध कारक नोटिसोंके रद किये जाते ही स्वयसेवक दलका सगठन और सार्वजनिक सभायें करना खिलाफ कानून रही नहीं सकता था। जबकि कलकत्तेमें सुलहकी बाते हो रही थीं तब भी फतवा कैदियोकी रिहाईकी बात पेश की गयी थी और मैं यहा फिर वही बात कहता हू जिसे मैं पहले कई जगह कह चुका हू कि यदि यह कहना राजद्रोह है कि वर्तमान शासन प्रणालीमें फौजी अथवा दूसरी नौकरी करना ईश्वर के और मनुष्य जातिके सामने पाप है, तो मुझे कहना होगा कि ऐसा राजद्रोह तो अवश्य होना चाहिये।

सरकारने इस कम्यूनिकमें मुझ पर यह आरोप किया है कि मैं प्रस्तावित सर्वपक्षीय परिषद् केवल अपने निर्णयको स्वीकार करानेके लिए चाहता हू। यह कह कर सरकारने मेरे साथ बडी निष्ठुरता पूर्वक अन्याय किया है। हा, मैंने महासभाकी मागे जितने स्पष्ट शब्दोंमें हो सकी, जरूर पेश कीं, जिससे कि किसी तरहकी गलत फहमी न होने पावे और यह मेरा फर्ज भी था। अपनी बात साफ साफ कहे बिना कोई महासभावादी किसी परिषद्में नहीं जा सकता था। मैंने तो यह आशा की थी कि मैं या कोई भी महासभावादी तर्क और दलीलके अयोग्य न समझे जायंगे। यह मामूली शिष्टता तो हमारे साथ की जायगी। कोई भी आदमी आकर मुझे विश्वास दिला सकता है कि खिलाफत, पजाब और स्वराज्य विषयक महासभाकी मागें अनुचित हैं, मैं अवश्य ही अपना कदम पीछे हटा लूगा। भारत-सरकार

इस बातको जाननी है कि मेरी सदासे यही वृत्ति रही है।

कम्यूनिकमे काफी जोरके साथ कहा गया है कि मेरे घोषणापत्रमें जो मार्ग की गई हैं वे कार्य—समितिकी मागोंसे भी बहुत कम हैं, क्योंकि आज तो मैं आक्रामक ढगके सविनय कानून-भगको बन्द कर देनेके बदलेमें सिर्फ इतना ही चाहता हू कि यह वाहियात दमन बन्द कर दिया जाय, उसके अनुसार जिन लोगोंको सजायें दी गई हैं वे छोड दिये जाय और इस नीतिकी साफ साफ घोषणा कर दी जाय। कार्य—समितिने तो सर्वपक्षीय परिषद्को भी चाहा था। मैंने अपने पत्रमें सर्व पक्षीय परिषद्की चाह नहीं की है। यह सच है कि सर्वपक्षीय परिषद्की बात प्राप्त अवसरसे लाभ उठानेके ख्यालसे नहीं उठाई गई है, बल्कि यह तो हमारी वर्तमान कमजोरीकी स्वीकृति है। मैं विना सकोचके इस बातको मानता हू कि जबतक भारतकी रग रगमें अहिंसाकी भावना पैवस्त न हो जायगी और नियमबद्धताके साथ बलका सचार न होगा, जो कि केवल अहिंसाके ही द्वारा प्राप्त हो सकता है, वह अपनी मागे पूरी नहीं करा सकता। यही कारण है जो अब मैं कहता हू कि लोगोंका सबसे पहला काम यह है कि वे इस अन्ध दमनको दूर करावें और फिर अधिक पूर्ण सगठन और अधिक विधायक कार्यों मे अपनी शक्ति एकाग्र करे। और यदि फिर सरकारने सिर्फ यह कह कर कि "आक्रामक ढङ्गका सविनय भङ्ग तबतक मुल्तवी कर दिया जायगा जबतक कि जेलवाले

नेता छूटकर सारी स्थितिपर नये सिरेसे विचार न कर लें" और मेरे पत्रका नीचे लिखा आखिरी भाग छोडकर मेरे साथ अन्याय किया है—

"यदि सरकार ऐसी घोषणा कर दे तो मैं उससे यह समझूंगा कि वह लोकमतका आदर करनेकी शुभ कामना रखती है और इसलिए बिना हिचकिचाहटके लोगोंको यह सलाह दूंगा कि वे बिना किसी भी तरफसे अंकुश लगाये लोकमत तैयार करनेमें लग जाय और विश्वास रखें कि इसके द्वारा अपनी मांगें पूरी हो जायंगी तथा आक्रामक सविनय भङ्ग केवल उसी अवस्थामें शुरू किया जाय जब सरकार अपनी पूर्ण निष्पक्ष नीतिका त्याग कर दे या देशको स्पष्ट प्रकाशित लोकमतका आदर न करे।

मैं यह दावा करनेकी धृष्टता करता हू कि पूर्वोक्त बातोंके प्रतिपादनमें मैंने हद दर्जेकी युक्ति सगतता और नरमीसे काम लिया है।

सो, अब लोगोंके सामने, यह सवाल नहीं है जैसा कि सरकारी कम्यूनिकमें बताया गया है—अर्थात् वे आईनी अच्छी है, जिसका कि फल ऐसा घातक है, या उन सिद्धान्तोंकी रक्षा करना अच्छा है जो हरएक सभ्य सरकारके आधार भूत है? सरकार आगे कहती है—"सामुदायिक भङ्ग राज्यके लिये इतना खतरनाक है कि उसका सामना कठोरता और दृढ़ताके साथ किया जायगा।" बल्कि लोगोंके सामने यह

सवाल है कि खतरनाक होते हुए भी सामुदायिक सविनय भङ्ग शुरू किया जाय या प्रजाकी बाकायदा हलचलोंका बे कानूनी दमन जारी रहने दिया जाय? मेरी तो यह धारणा है कि किसी भी स्वाभिमानी पुरुषके लिए यह असम्भव है कि वह भावी अज्ञात खतरोंकी आशंकासे चुपचाप बैठा रहे और सारे देशमें 'कानून और शान्ति'के नामपर जो बे गुनाह लोगोंका माल असबाब लूटा जा रहा है और उनपर हमला किया जा रहा है, इसका कोई अकसीर इलाज न करे।

चक्करमें

(फरवरी ६, १९२२)

उस दिन बङ्गालकी धारा सभाकी बैठकमें एक प्रस्ताव इस आशयका पेश हुआ था कि सरकार अपने तमाम दमनकारी नोटिसोंको उठा ले और उनकी रू से जितने लोग कैद किये हैं उन्हें छोड़ दे। इस प्रस्ताव पर बहस होते समय सर हेनरी व्हीलरने कहा, यह तो 'अत्यन्त अवास्तव बात है।' ऐसा कह कर सर हेनरी व्हीलरने हमें बङ्गाल सरकार की और इसलिए भारत सरकार की भी स्थितिका वर्णन करनेके लिए बहुत मौजू साधन दे दिया गया है। वे खुद तो शायद ही यह बात जानते होंगे कि बङ्गालमें क्या हो रहा है, हां, उनके मातहत लोग जो

नेता छूटकर सारी स्थितिपर नये सिरेसे विचार न कर लें" और मेरे पत्रका नीचे लिखा आखिरी भाग छोडकर मेरे साथ अन्याय किया है—

"यदि सरकार ऐसी घोषणा कर दे तो मैं उससे यह समझूंगा कि वह लोकमतका आदर करनेकी शुभ कामना रखती है और इसलिए बिना हिचकिचाहटके लोगोंको यह सलाह दूंगा कि वे बिना किसी भी तरफसे अंकुश लगाये लोकमत तैयार करनेमें लग जाय और विश्वास रखें कि इसके द्वारा अपनी मांगें पूरी हो जायगी तथा आक्रामक सविनय भङ्ग केवल उसी अवस्थामें शुरू किया जाय जब सरकार अपनी पूर्ण निष्पक्ष नीतिका त्याग कर दे या देशको स्पष्ट प्रकाशित लोकमतका आदर न करे।

मैं यह दावा करनेकी धृष्टता करता हूं कि पूर्वोक्त बातोंके प्रतिपादनमें मैंने हद दर्जेकी युक्ति सगतता और नरमीसे काम लिया है।

सो, अब लोगोंके सामने, यह सवाल नहीं है जैसा कि सरकारी कम्यूनिकमें बताया गया है—अर्थात् ये आईनी अच्छी हैं, जिसका कि फल ऐसा घातक है, या उन सिद्धान्तोंकी रक्षा करना अच्छा है जो हरएक सभ्य सरकारके आधार भूत हैं? सरकार आगे कहती है—"सामुदायिक भङ्ग राज्यके लिये इतना खतरनाक है कि उसका सामना कठोरता और दृढ़ताके साथ किया जायगा।" बल्कि लोगोंके सामने यह

जिससे वे उस प्रस्तावको नामंजूर कर देते। राय जाहिर करनेकी आजादीके लिए बङ्गाल-धारा सभाके इन सदस्योंने जो साहस दिखलाया है उसके लिए वे धन्यवादके पात्र हैं। क्योंकि जिन वे ईमानोंकी शिकायत सर हेनरी व्हीलरने की है वह और कुछ नहीं, सरकारके मनाई हुक्मोंका अनादर करते हुए भाषण स्वातन्त्र्य और सभा स्वातन्त्र्यके अपने हकके अनुसार व्यवहार करनेका आग्रह है।

शान्तिमय सभाओंको बल-पूर्वक भंग कर देना, महासभा और खिलाफतवादी समाचार पत्रोंकी तलाशियां लेना और चीजों को जबरदस्ती उठा ले जाना, तथा सर्वसाधारण पर आक्रमण करना और मार-पीट करना ये बातें सभासदोंके लिए तो इतनी भयंकर सत्य थीं कि उस प्रस्तावका समर्थन करनेके सिवा उनका कोई चारा ही नहीं था। फिर यह बात ध्यान देने योग्य है कि सर हेनरी व्हीलरने उस प्रस्तावमें जो तरमीम पेश की थी वह किसी तरह ऐसी नहीं थी जिसपर कोई समझौता न हो सकता था। उन्होंने एक गैर सरकारी कमिटीकी तजवीज करना चाहा था, जो इस मामलेका निपटारा कर दे, परन्तु सभासदोंने इस समझौतेसे बिलकुल मुंह मोड लिया और यह उन्होंने ठीक ही किया। वे इस बातके लिए तैयार नहीं थे कि उनकी बुद्धि और ज्ञान जो गवाही दे रहे हैं उसकी नाप-जोख कोई कमेटी करे। अब बङ्गाल सरकार जरूर चक्करमें पड गई होगी। यदि वह उन निरपराध कैदियोंको छोडती है और

कुछ खबरें उनतक पहुंचा देना पसन्द करते हैं उतनी ही बातें चाहे वे भले ही जान पाते हों। ऐसोंके ख्यालमें चाहे धारा-सभाकी यह चर्चा 'अत्यन्त अवास्तव बात' हो। परन्तु उन पचास सभासदोंको तो स्थितिका प्रत्यक्ष ज्ञान था। वे सर हेनरीकी वक्तृतासे कैसे गुमराह हो सकते थे? उनकी दृष्टि मे तो बङ्गाल-सरकारने जो गति विधि अख्तियार की है वही 'अत्यन्त अवास्तव बात' है। सर हेनरी व्हीलरने देशमें जिस बे आईनी के होनेका वर्णन किया है वह उनकी कल्पना सृष्टिमें भले ही हो। पर सभासदोंकी रायमें तो बङ्गालमें दर-असल जो कुछ हो रहा था उसके लिए बङ्गाल सरकारको उग्र उपायोंसे काम लेनेकी आवश्यकता नहीं थी। वे लोग जानते थे कि बङ्गालमें जो बे-आईनी कही जाती है वह मर्यादाबद्ध, सविनय और शान्ति मय थी तथा खुद नौकरशाहीके ही अविचार पूर्ण कृत्योंने उसकी आवश्यकता उत्पन्न कर दी हैं। सर हेनरी व्हीलर सभासदोंको यह न समझा पाये कि देशबन्धु चित्तरञ्जन दास, मौलाना अबुल कलाम आजाद, बाबू श्यामसुन्दर चक्रवर्ती और नये शिकार बाबू हरदयाल नाग, बङ्गाल प्रान्तीय समितिके वृद्ध सभापति का कोई दुष्ट हेतु था। इन विश्वस्त नेताओं के तथा कितने ही बे गुनाह कार्यकर्त्ताओंके कैद किये जानेका चित्र उनके दिमागमें था। इससे सर हेनरी व्हीलरने स्थितिका जो डरावना खाका खींचा वह सभासदोंको उतनाही अवास्तव दिखाई दिया जितना कि शायद वह था और न वह उन्हें भयभीत ही कर सका

जिससे वे उस प्रस्तावको नामंजूर कर देते। राय जाहिर करनेकी आजादीके लिए बङ्गाल-धारा सभाके इन सदस्योंने जो साहस दिखलाया है उसके लिए वे धन्यवादके पात्र हैं। क्योंकि जिन वे ईमानोंकी शिकायत सर हेनरी व्हीलरने की है वह और कुछ नहीं, सरकारके मनाई हुक्मोंका अनादर करते हुए भाषण स्वातन्त्र्य और संघ स्वातन्त्र्यके अपने हकके अनुसार व्यवहार करनेका आग्रह है।

शान्तिमय सभाओंको बल-पूर्वक भंग कर देना, महासभा और खिलाफतवादी समाचार पत्रोंकी तलाशिया लेना और चीजो को जबरदस्ती उठा ले जाना, तथा सर्वसाधारण पर आक्रमण करना और मार-पीट करना ये बातें सभासदोंके लिए तो इतनी भयकर सत्य थीं कि उस प्रस्तावका समर्थन करनेके सिवा उनका कोई चारा ही नहीं था। फिर यह बात ध्यान देने योग्य है कि सर हेनरी व्हीलरने उस प्रस्तावमें जो तरमीम पेश की थी वह किसी तरह ऐसी नही थी जिसपर कोई समझौता न हो सकता था। उन्होंने एक गैर सरकारी कमिटीकी तजवीज करना चाहा था, जो इस मामलेका निपटारा कर दे, परन्तु सभासदोंने, इस समझौतेसे बिलकुल मुह मोड लिया और यह उन्होंने ठीक ही किया। वे इस बातके लिए तैयार नहीं थे कि उनकी बुद्धि और ज्ञान जो गवाही दे रहे हैं उसकी नाप-जोख कोई कमेटी करे। अब बङ्गाल-सरकार जरूर चक्करमें पड गई होगी। यदि वह उन निरपराध कैदियोंको छोडती है और अपनेहु घमोल

नोटिसोंको उठाती है तो महासभा और खिलाफत समितियां दूने वेगसे अपना काम बढ़ाये बिना मानेंगी नहीं। यदि वह उस प्रस्तावके अनुसार कार्य करनेसे इनकार करती है तो वह कितने ही नरमदल वालोंकी सहायतासे विमुख रहे बिना न रहेगी। हां, निस्सन्देह वह उनकी सहायताके बिना भी रह सकती है, जैसीकी बरसोंसे आजतक चली आई है। पर वह जरूर जानती होगी कि भारतमें नवीन युगका अरुणोदय हो चुका है। लोग अब दमनको किसी तरह सहन नहीं कर सकते। अब उन्हें दिनपर दिन अपने बल और सामर्थ्यका अधिकाधिक ज्ञान होता जाता है। कष्ट सहनके वे अधिकाधिक आदी होते जा रहे हैं। दुनियामें कोई सरकार ऐसी नहीं है जो दमनके द्वारा उन लोगोंको झुका सके जो कष्ट सहनकी शक्ति और इच्छा रखते हैं।

जो बात बङ्गालमें हुई वही बिहारमें भी हुई। बिहारकी धारा सभाने भी साफ साफ बातें कहीं। संयुक्तप्रान्तकी धारा सभाने समझौता कर लिया। पर वहा भी सरकारका पक्ष गिरा ही है। भारतके प्राय कोने कोनेसे रोमाञ्चकारी दमनकी इतनी खबरें आ रही हैं कि उन सबके लिए मेरे पत्रोंमें स्थान ही नहीं रहता। अब बात केवल जेल और कैद तक नहीं रही है। यह तो दमनकारी कानूनोंकी भी बडी लज्जाजनक अवहेलना और तोड मरोड रही है।

सर हेनरी व्हीलरने हमें एक और भी अच्छा भाव प्रगट

करनेका साधन दे दिया है-"शब्दों और पदोंका जुल्म"। 'दमन' शब्द को सुनकर वे चौंक उठना नहीं चाहते। वे फरमाते हैं कि कानून तो सभी दमनकारी हैं। लोग इस शब्द को सुनकर भयभीत न हों। बल्कि उन्हें असलियत पर ध्यान देना चाहिये। तो, आइये, हम असलियत का ही मुकाबला करें और "कानून और शान्ति" इस पद के अत्याचार की नस को परखें। सर होरमसजी वाडिया ने मालवीय परिषद् में प्रभावशाली शब्दों में कहा था कि "कानून और शान्ति" के पवित्र नाम पर फ्रान्स में बोरबन्स के जमाने में (फ्रान्स राज्यक्रान्ति के समय) और दूसरी जगह भी कितने हो कृष्ण कृत्य किये गये हैं। यदि हम इन दो शब्दोंके मोहन मन्त्र से अपना पीछा छुडा लें तो हमें पता लगेगा कि इस 'कानून और शांति' के रक्षकों ने अपनी करतूतों के द्वारा भारत के जान और माल को अरक्षित कर दिया है। अब लोग और यहातक कि धारासभाके सभासद भी, 'शब्दों और पदों के अत्याचार' में रहना नहीं चाहते और न सरकार की अत्यन्त अवास्तविक स्थिति से धोखा ही खा जाना चाहते हैं। यह समय की महिमा है। यह असहयोग इस समस्या को हल करने का बडा तेज साधन है। और हम शीघ्र ही देखेंगे कि सरकार और प्रजा दोनों आशापूर्ण वास्तविक बातोंके साथ परस्पर गले मिल रहे हैं और उन अत्यन्त अवास्तविक बातों के झमेले से मुक्त हो गये हैं जिनमें दोनों आजतक फसे हुए हैं।

आन्ध्रमें जागृति

(फरवरी २, १९२२)

नीचे लिखा लेख लिखनेके पहलेतक आन्ध्रसे दो तार आये थे। उनका सार नीचे दिया जाता है —

१—"आन्ध्र प्रान्तिक कार्यकारिणी समितिकी बैठक कल हुई थी। उसमें उपस्थित प्रतिनिधियोंने अपने अपने स्थानकी स्थितिका वर्णन किया और इस आशयका प्रस्ताव पास किया कि कर न देना सब दूर एकदम शुरू न किया जाय। इसके लिए प्रथम तो योग्य स्थान चुने जाय और उनमें भी यह देख लिया जाय कि देहलीवाली शर्तोंका पूरी तरहसे पालन उन उन स्थानोंमें किया जा रहा है या नही। इस जांचके अनुसार, जो जो स्थान योग्य समझे जायं वहींपर "कर न देना शुरू किया जाय।"

२—"परसों और कल गन्तूर महासभा समितिकी बैठक हुई थी। प्रतिनिधियोंने अपने हलकेकी तैयारीका वर्णन किया। कई जगह लोगोंकी तैयारी बहुत अच्छी बताई गई, कई स्थानोंपरअस्पृश्यता पूरी नहीं मिटी। और कई जगह पूर्ण अहिसा युक्त परिस्थितिकी आवश्यकता है। श्री० प्रकाशम्ने सभाका ध्यान इस ओर खीचा कि वह इस महत्वपूर्ण

कामको हाथमे लेनेके पहले अपनी जवावदेहीको पूरी तरह समझ ले। इसके बाद श्री गाधीजीका वह पत्र जो २५ तारीखके "वाम्बे क्रानिकल" में प्रकाशि। हुआ था पढकर सुनाया गया, और हरएक स्थानमें कितनी तैयारी हुई है यह देखनेके लिए एक समितिका सङ्गठन किया गया, फिर सभा समाप्त की गई।

गन्तूरमे सरकारकी ओरसे दमनकी खूब सशस्त्र तैयारिया हो रही हैं। मेरे ख्यालमे तो सरकारको दमनके इन सब उपायोंसे काम लेनेका पूरा हक है। उसे तो यह भी अधिकार है कि यदि उसको कहीं कर देना बन्द होनेकी भीति हो तो वह साधारण कानूनोको भी स्थगित कर दे। हां, यह तो सत्य हो है कि कोई भी समझदार सरकार लोकमतको यहातक तो कभी क्षुब्ध नही करेगी कि जनता कर देनेसे भी इन्कार करने लग जांय। किन्तु हमें ऐसी आशा न करनी चाहिए कि जो सरकार लोकमतकी इतनी अवमानना करती है वह वगैर कठिन प्रयत्न हो नष्ट कर दी जा सकेगी। वह कमसे कम अपने कर लेनेका बन्दोवस्त तो अवश्य करेगी। और कर न देनेवाली जनताकी जमीनको वह जो पतित जातियोंको दे देनेकी आयोजना कर रही है उसमें भी उसे दोष देने लायक कोई वात नही दिखाई देती। यह तजवीज तो दोनों पक्षोंको ठीक मालूम होनी चाहिए। असहयोगियोंने तो अहिसाका व्रत ही धारण कर लिया है। उन्होंने तो अपने ध्येयको

सिद्धिके लिए अपने सर्वस्वतकका त्याग करनेपर कमर कस ली है। अत: वे तो अपनी जायदाद खुशी खुशीसे नीलाम होने देंगे। और विपक्षमें सरकार, यदि कर पावे, तो इस कर न देनेकी हलचलको नष्ट भ्रष्ट कर देनेका तथा कर वसूल करनेके लिए हर तरहके उद्योग करनेका प्रयत्न अवश्य करेगी। जब्त की गई जमीनें अछूत जातियोंको दे दी जाने और उनके खरीदी जानेका प्रस्ताव है तो एक आदर्श बात। इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है कि जिन लोगोंको हम बुरी स्थितिसे उठाकर उन्मत्त बनानेका यत्न कर रहे हैं, ये जब्त की गई जमीनें कुछ समयके लिए उन्हींके कब्जेमें रहें ?

मैं "कुछ समय"के लिए इसलिए कह रहा हूं कि उन जमीनोंपर अभी जिनका अधिकार है उनको अपने अङ्गीकृत कार्यमें पूरा विश्वास होना चाहिए कि हर हालतमें हमें स्वराज्य लेना है। और स्वराज्य मिलनेपर उन्हें फिर अपना पद सम्मानसे भूपित करके सौंप दिया जायगा। और अगर पुराने मालिकोंको उनकी जमीन फिर लौटा दी गई तो इससे उन पतित जातियोंको जिनका कि सरकार इस समय शतरञ्जकी प्यादियोंकासा उपयोग मात्र कर रही है, कुछ भी बुरा न मालूम होगा। क्योंकि स्वराज्य होते ही पहले उनको आबाद और सुखी और सन्तुष्ट करना सरकारका प्रथम कर्त्तव्य होगा।

सरकार जो दमनकी नई आयोजनायें कर रही हैं उसके लिए

इतना ही कहना काफी होगा। किन्तु इन उपायोंके करनेमें उसे जो डर और घबराहट मालूम हो रही है यह उसके दिलके पापका ही दृश्य स्वरूप है। कर वसूल करनेके लिए उसे अपनी लोकप्रियतापर तो जरा भी विश्वास नहीं। इसके लिए तो उसे सङ्गीनकी नोक तथा ऐसे ही दूसरे उपायोंका आश्रय लेना पडता है। वह लोकमान्य नेताओंको गिरफ्तार कर रही है और इस प्रकार लोगोंको हिंसाकाण्डके लिए भडका रही है जिससे उसे अपने इन 'खूनी' उपायोंके समर्थन करनेका मौका मिले।

और इसीमें आन्ध्रकी परीक्षा है। वे अभीतक तो बडी बहादुरीके साथ काम करते आये हैं। त्याग भी उन्होंने खूब बताया है। उनके चुने चुने सब नेता जेल चले गये हैं। उनके मवेशी भी उनसे छीन लिये गये हैं। किन्तु अब भी वे शान्त हैं पर सबसे बुरा दृश्य तो अभी देखना ही बाकी है। जब सरकारकी फौज उनपर गोलियोंकी बौछार शुरू करेगी तब वे उसे कैसे झेलेंगे? धैर्य और हर्षके साथ अपनी आगे बढी हुई छातियोंपर, न कि कायरोंकी तरह अनिच्छासे अपनी पीठपर और यह भी प्रतिहिंसाकी अथवा रोषकी छायातक अपने दिलमें न आने देते हुए। उन्हें चाहिए कि वे अपनी थालियां, लोटे, आदि खुशीसे ले जाने दें और खुद द्रौपदी और प्रहूलादकी तरह उस परमात्माकी प्रार्थना करते रहें और उसके प्रति अपनी श्रद्धाको अटल सिद्ध करते रहें।

कर न देना हमारा स्वत्व है। इसका उद्देश्य यह नहीं है कि उससे असहयोगी श्रीमान् हो जाय। बल्कि उसका उद्देश तो इच्छापूर्वक स्वयं गरीब बनकर देशको धनवान् करना है। और वे इस अधिकारके पात्र तो आत्मशुद्धि करनेसे ही हो सकते हैं, यह सौभाग्य पानेकी पात्रता तो विदेशी कपडा छोडकर हाथसे कता-बुनी खादी पहननेसे और अस्पृश्यताका धब्बा धोकर पतित भाइयोंको अपने भाई बनानेसे ही आ सकती है। हमें किसी पतित भाईको अनिच्छासे नहीं छूना चाहिए। उसे तो प्रेमसे अपनाकर आलिङ्गन देना चाहिये और उसकी सेवा करनी चाहिए और यह भी उसके प्रति अपने पिछले व्यवहारके हृदयसे प्रायश्चित्त करते हुए, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि हम सरकारसे उसके द्वारा हमपर किये गये अत्याचारोंके लिए चाहते हैं। आवश्यक कर्तव्यका अनिच्छापूर्वक पालन करनेसे परमेश्वर प्रसन्न नहीं होता। हमें तो अपने हृदयमें ही पूरा परिवर्तन करना चाहिए। हमें उनके साथ पाठशालाओंमे सम्मिलित होना चाहिए और सार्वजनिक स्थानोंमें भी उन्हें भाग लेने देना चाहिए। उनकी रुग्णावस्थामें हमें अपने भाईकी तरह उनकी सेवा करनी चाहिए। हमें अपनेको उनका आश्रयदाता, अन्नदाता नहीं समझना चाहिए। हमें उनके खिलाफ अपने धार्मिक ग्रन्थोंकी दुहाई न देना चाहिए। जिन प्राचीन ग्रन्थोंके, रचयिताका ठीक ठीक पता न हो, तथा जिनका अर्थ पतित जातियोंके

मनुष्योचित स्वत्वोंके खिलाफ लगाये जा सकते हो उन सबका सशोधन कर डालना चाहिए। ऐसी प्रथाओंको भी प्रसन्नता-पूर्वक उठा देना चाहिये चाहिए जो युक्तियुक्त, न्याय और मानवी हृदयके स्वाभाविक धर्मके खिलाफ हो। हमें किसी भी कुप्रथाका इतना गुलाम न बन जाना चाहिए कि आखिरको जब हमें किसी दबावके कारण अथवा अनिवार्य प्रसङ्गके उप-स्थित होनेपर उसे छोडनेके लिये मजबूर होना पडे तभी, एक कृपणकी तरह, अपनी बुरी कमाईके धनको लाचार होकर छोडे फिर चाहे वह अज्ञान पूर्वक हो या किसी अन्य भ्रममूलक विचारसे हो।

अस्पृश्यताके सम्बन्धमें मुझे यहा इतना इसलिये लिखना पडा कि मुझे "आपको यहाकी महासभा समितिके अस्पृश्यता-विषयक आश्वासनोंपर विश्वास न रखना चाहिए" इस आशयके कई तार मिले हैं। वे मुझे यह कह रहे हैं कि आन्ध्र अभी अस्पृश्यताको छोडनेके लिये तैयार नहीं है। मैं वहाके नेता-ओंसे यह आग्रह करता हू कि आप इस बातका पूरा ख्याल रक्खें। महासभाके आज्ञानुसार आपके कर्तव्यमें जरा भी गलती न रहने पावे। उसके बनाये हुए सीधे रास्तेको जरा भी छोडनेसे हम अपने स्वीकृत कार्यमें इतनी भयकर हानि पहुंचावेंगे कि जिसे हम फिर कभी सुधार ही न सकेंगे। अत्यन्त पवित्र बलिदान ही परमात्माको प्रसन्न कर सकता है। ईसाई धर्म तथा इसलामके साथ साथ हिन्दू धर्मकी भी परीक्षाका

यह समय है। हिन्दू लोग अपने धर्म और उपनिषदोंके झूठे प्रतिनिधि कहे जायगे, क्योंकि वे तो मनुष्यकी योग्यताको छोड़कर दूसरे अधिकारको स्वीकार ही नहीं करते और जो बात हृदय तथा बुद्धिको युक्तियुक्त नजर नहीं आती उसे मानते ही नहीं।

आन्ध्रके लोग बहादुर और अपने प्राचीन गौरवके अभिमानी हैं। वे बड़े धार्मिक हैं और बलिदानकी क्षमता रखते हैं। देश उनसे बहुत भारी उम्मीद रखता है। और मुझे विश्वास है कि वे उसे अवश्य पूरा करेंगे। अगर उन शर्तोंका पूरी तरह पालन करनेको वे अभी पूर्णतया तैयार न हों तो जरा ठहर जानेमें उनकी कुछ भी हानि न होगी। किन्तु अगर वे पूरी तरह तैयार न होनेपर भी लड़ाई छेड़ बैठेंगे तो अपना सर्वस्व खो बैठेंगे और देशको हानि पहुंचावेंगे।



सामूहिक आन्दोलन आतंक

(फरवरी २, १९२२)

जनतामें जितनी अधिक जागृति उत्पन्न होगी उतना ही अधिक सन्तोष लोगोंको होगा पर इससे इसकी आपत्तिकी सम्भावनाको नहीं भूल जाना चाहिये। मुझे समाचार पत्रोंसे अभी सूचना मिली है कि कोई लडकी मेरी पुत्री बनकर लोगोंसे पूजा करवाती फिरती है। इसके लिये मुझे खेद नहीं है यदि उदार और आत्मसंयम रखनेवाली हजारों बालिकायें मेरी पुत्री होना स्वीकार करें तो इस बातसे मैं अत्यन्त प्रसन्न हूं। क्योंकि इनसे देशकी मर्यादा बढेगी और मेरी भी इज्जत होगी। उस अवस्थामें संसारही उन्हें विस्तृत परिवारका सदस्य समझने लगेगा। पर वास्तिव समझनेबात यह है कि मुझे कोई भी कन्या नहीं है। इस दुनियामें एक अछूत जातिकी छोटी बालिका है जिसपर मेरा कन्याकासा स्नेह है। उससे मुझे बडा सुख मिलता है और मुझे पूर्ण आशा है कि बडी होनेपर अपनी सच्ची और नम्रसेवासे संसारका पथ विस्तृत करेगी। अभी तो यह दिन रात खेलना ही पसन्द करती है। यह लडकी मुझे "बापू" कहकर पुकारती है। अन्य भी अनेक बालिकायें हैं जो मुझे पिताके समान मानती हैं पर मैं उनके प्रति उस भावको उस

मात्रामें नहीं दर्शा सकता जितनेकी वे इच्छा करती हैं। पर मैं भारतवर्षकी सभी कन्याओंसे यह बात कह देना चाहता हू कि मैं किसी भी अवस्थामें अपने अपमानके लिये उनके पिताका पद नहीं ग्रहण कर सकता। नहीं तो मुझे इस देशकी प्रत्येक कन्यासे वही स्नेह है जो मुझे अपनी स्वकीय पुत्रीसे हो सकता है।

पर जिस लडकीका समाचार मिला है वह तो एक तरह का धन्धासा हो गया है। मुझे समाचार मिला है कि उदय पूर राज्यमें मोतीलाल पञ्चोली नामके कोई व्यक्ति रहते हैं। उन्होंने घोषित किया है कि वे मेरे शागिर्द हैं और उसी हैसियतसे शराबखोरी तथा अन्य बातोंके विरुद्ध आन्दोलन चला रहे हैं। मैंने सुना है कि जहा कहीं वे जाते हैं हजारों आदमी उन्हें घेर लेते हैं। उनमें आश्चर्यजनक शक्ति है। मैंने सुना है कि वे तथा उनके साथियोंने कुछ निषेधात्मक कार्यभी किया है। लोगोंको समझ लेना चाहिये कि मेरे एक भी शिष्य नहीं हैं। खिलाफत तथा काग्रेस कमिटीके अतिरिक्त सम्प्रति ससार में मेरा और किसीसे सम्बन्ध नहीं है। जो कुछ काम मैं सम्प्रति करता हू इन्हीं दोनों सस्थाओंके नामपर तथा इन्हीके निमित्त करता हू। मेरे नामपर काम न तो कोई करता है और न किसी को ऐसा करनेका अधिकार ही हे। केवल काग्रेस और खिलाफतके काम मेरे नामपर किये जा सकते हैं।।

मैंने सुना है कि उपरोक्त सज्जनने उस राज्यके (उदयपुर राज्यके)

किसानोंको राज कर देनेसे रोक दिया है। उनसे यह भी कहा गया है कि मेरी (गांधीजीकी) आज्ञा है कि सिरोही राजकी रिआया सवा रुपयासे अधिक मालगुजारी राजाको न दे। पर मैं इन सब बातोंके बारेमें कुछ नहीं जानता। इस विषयमें अभी किसीने मुझसे पूछा तक नहीं। उदयपुर राज्यके प्रधानमन्त्री पण्डित रमाकान्त मालवीयने ये सब समाचार मेरे पास भेजे हैं और लिखा है कि आपके नामपर अनेक तरहका अनर्थ किया जा रहा है। यदि मेरी आवाज उन रैयतोंतक पहुंच सकती है तो मैं उनसे सविनय अनुरोध करूंगा कि उन्हें उचित है कि अपना सारा दुःख राज्यके पास निवेदन करें और स्वयं आप अपने मनसे कोई कार्रवाई न करें। यदि करको वे अधिक समझते हैं और उसे देना नहीं चाहते तो यह उनका अधिकार है। पर इस अधिकारका प्रयोग सावधानीसे सोच विचारकर करना चाहिये। उन्हें लोकमतको अपने पक्षमें कर लेना चाहिये और अपनी दुःख कहानीको संसारके सामने रखना चाहिये। यदि वे लोग इस तरह सतर्क होकर काम नहीं करेंगे तो वे देखेंगे कि सबकोई उनका विरोधी हो जायगा और अन्तमें उन्हें घोर क्षति उठानी पड़ेगी।



बंगालसे एक आवाज़

(फरवरी २, १६२२)

वङ्गालमें मेरे एक मित्र हैं। वे देशके सच्चे हितैपी हैं। वे वङ्गालके क्षितिजपर काली घटा की जब कभी सम्भावना देखत हैं तो मुझे सूचना दिये बिना नहीं रहते। इस समय वे मुझे कर देनेके प्रश्नपर चेतावनी दे रहे हैं। उन्होंने लिखा है कि वङ्गालके सारे नेता जेलमें हैं इससे संभव है कि यह भीषण कार्य्य आरंभ कर दिया जाय। नेताओंकी जेलयात्रापर मैं कोई दु ख नहीं प्रगट कर सकता पर मैं यह भी कहे बिना नहीं रह सकता कि इसकी सारी जिम्मेदारी सरकारकी बेवकूफी पर है कि जिसने इन शान्तिमय कार्यकर्ताओंको शान्ति भङ्ग करनेवालोंमें मान लिया है। सरकार स्वय शान्ति भङ्ग करवाना चाहती है। उसकी कार्रवाईसे यही पता चलता है मानो वह देशको हिंसाके लिये निश्चितरूपसे तैयार कर रही है। पर इसकी भी मैं निन्दा नहीं करता मैं तो इस बातको स्वीकार करता हू कि हम लोगोंने उससे अधिककी आशा की थी। इतनेपर भी मुझे साहसके साथ आगे बढ़ना है। हमें केवल मात्र ईश्वरपर भरोसा रखकर चलना चाहिये।

पर हमें इस बातसे सदा सावधान रहना चाहिये कि हम लोग

के कारण कोई विपत्ति या सङ्कट नहीं उपस्थित हो जाता। इसलिये मैं लगातार इस बातको लिखता आ रहा हू कि समस्त भारतको मेरी प्रतीक्षा करनी चाहिये और देखना चाहिये कि जो तजर्वा मै करना चाहता हूं उसका क्या फल निकलता है। बङ्गालने बहुत काम किया है। उसने कष्ट भी खूब झेला है और विस्मयजनक काम किया है। उसके कष्टके दिन अभी पूरे नहीं हुए हैं फिर भी वह पूर्ण आत्मसयमसे काम कर रहा है। मैं बङ्गालके सभी नेताओंसे प्रार्थना करूंगा कि वे अपने स्थानपर ही अड़े रहें। आगे एक भी कदम न बढावें। हा मिलने जुलने तथा भाषण करनेकी स्वतन्त्रताका वे अवश्य प्रयोग करते रहें। पर सामूहिक सविनय अवज्ञा आरम्भ करने या कर न देनेका अभी समय नहीं आया है। यदि कार्यकर्ता रैयतोको यह सलाह दें कि बाकी मालगुजारीको वे बेबाक कर दें तो मेरी समझमे वे इस आन्दोलनका बहुत उपकार करेंगे।



सविनय भंगमें सावधानी

(फरवरी १२, १९२२)

रोहतकसे लाला श्यामलाल पूछते हैं कि उन जिलोंमें जहा कि सरकार गिरफ्तारियां नहीं कर रही हैं लोग आप हो कर गिरफ्तार हों या नहीं? मेरा तो ख्याल था कि मैंने पिछले अंकोंमें इस वातको अच्छी तरह साफ साफ समझा दिया है। हां, अपने कर्तव्यका पालन करते हुए यदि गिरफ्तार होनेका मौका आये तो हमें उसे न टालना चाहिये, पर हमें अपना काम छोडकर सरकारको अपनी गिरफ्तारी पर मजबूर न करना चाहिये। ऐसा करना या तो आक्रामक सविनय कानून भङ्ग समझा जायगा, या अविनीत कानून भङ्ग कहा जायगा। इस दूसरेकी तो हमें वात भी न करनी चाहिये। किन्तु आक्रामक सविनय भङ्ग तो एक ऐसा अधिकार है जिसका उपयोग हम आवश्यकताके अनुसार, अपनी पूरी तैयारी होनेपर ही कर सकते हैं। इतना ही नहीं, किन्तु अगर परिस्थिति वैसी ही विकट हो और साथ ही हमारी तैयारी भी हो, तव तो इस अधिकारका उपयोग करना हमारा कर्तव्य हो जाता है। पर यह आक्रामक सविनय कानून भङ्ग फिर वह चाहे वैयाक्तिक हो या सामुदायिक

हमारे पासके तमाम शान्तिमय उपायोंमें है तो सबसे अधिक भयङ्कर और साथ ही सबसे अधिक परिणामकारक शस्त्र। मैं स्वयं तो जानता हूं कि देश सामुदायिक रूपसे अभी इस प्रकार अपने स्वत्वोंके लिये भड़नेको तैयार नहीं हुआ है। इसके लिये तो हमें इससे भी महान् और कड़ी नियमबद्धताकी जरूरत है। कष्टकर और घृणित मालूम होनेवाले कानून और नियमोंका भी ठीक ठीक महत्व—नहीं मैं तो आध्यात्मिक महत्व कहनेवाला था—हमें समझ लेना चाहिये। आक्रामक सविनय भङ्ग तो एक ऐसा अधिकार है जो कठिन तपस्या करनेपर ही प्राप्त हो सकता है। हमारी तपस्या अभी इतनी उच्च नहीं हो पाई। इसलिये यदि अधूरी तैयारी पर ही हम आक्रामक सविनय भङ्ग शुरू कर बैठे तो हम एक ऐसी क्रान्ति कर डालेंगे जिसकी न तो हम आशा करते और न इच्छा ही। इतना ही नहीं, बल्कि ऐसी क्रान्तिसे तो हमें हर प्रकारसे बचनेकी ही कोशिश करनी चाहिये। अतएव हमें कमसे कम इतना तो अवश्य करना चाहिये कि हम तबतक ठहरे रहें जबतक कि मैं खुद इस प्रयोगको करके उसका फल न देख लूं।

मुझे अभी यह सन्देह है कि देशमें कई स्थानोंमें हाथ कती और हाथ बुनी खादी पहननेकी शर्तका पालन अच्छी तरह नहीं हो रहा है। इसी प्रकार अस्पृश्यताके रोगसे भी हम बहुतसी जगह मुक्त नहीं हुए हैं। मेरा तो ख्याल यह है

कि सिर्फ जेल जानेका सामर्थ्य उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि हिन्दू, मुस्लिम, सिख, पारसी, ईसाई एकता, अस्पृश्यताको धोना और हाथ कती और हाथ बुनी खादी पहनना आदि शर्तों के पालन करनेकी तैयारी तथा सामर्थ्य है। यदि हम इन बातोंको पूरा किये बिना ही जेल चले जायें तो उससे कोई लाभ नहीं। वह तो खाली बहादुरी बताना है और अपनी शक्तिको व्यर्थ गवाना है। जेल जानेका खास हेतु यह नहीं कि सरकारको दिक किया जाय। उसका मूलभूत उद्देश्य तो आत्मशुद्धि है। सरकारको दिक करना तो गौण बात है। इस बातका तो मुझे पूरा पूरा यकीन है कि सरकार किसी निरपराध, अज्ञात और शुद्ध पुरुषपर अत्याचार करनेसे या उसे जानसे मार डालनेसे चाहे किसी प्रकार न घबरावे, पर उसका अन्त तो उसी समय हो चुका समझिये। गहरेसे गहरे अन्धकारको केवल एक ही दीपक नष्ट कर देता है। इसलिये मेरी इच्छा है कि हर जगह असहयोगी लोग सविनय कानून भङ्गकी तमाम शर्तों को पूरा करनेपर जोर दें। सविनय कानून-भङ्ग तो हर एक शख्स कर सकता है, यदि वह काया, वाचा, मनसा अहिंसाका पालन करता हो, हाथ कती और हाथ बुनी खादीको अपना पवित्र कर्तव्य समझकर पहनता हो, अस्पृश्यताको एक असहनीय बुराई समझकर उससे दूर रहता हो और यह सच्चे दिलसे मानता हो कि भारतकी तमाम कौमों और जातियोंमें

एकता होना भारतमें स्वराज्य स्थापित करने तथा उसे चिरस्थायी रखनेके लिये सदैव आवश्यक है। हां, ऐसा कोई भी शख्स सविनय कानून भंग कर सकता है, फिर वह चाहे वकील हो, उपाधिधारी हो या कौंसिलका सभ्य भी क्यों न हो।

— o —

गर्जन-तर्जन

(फरवरी २६, १९२२)

जब कि ब्रिटिश सिंह अपना खूनी पञ्जा फैला कर हमारे मुंहपर टपकता है तब कोई समझौता हो ही कैसे सकता है। लार्ड बरकनहेड हमें याद दिलाते हैं कि ब्रिटेनका 'कठिन भुजबल' जरा भी कम नहीं हो गया है। माण्टेगू साहब साफ साफ जबानमें फरमाते हैं कि ब्रिटिश लोग संसारभरमें अपने निश्चयके बड़े पक्के हैं। वे अपने उद्देशमें बाधा डालना कभी गवारा नहीं कर सकते। रूटरने आपके कथनको इन शब्दोंमें प्रगट किया है—

"यदि हमारे साम्राज्यके अस्तित्वको ललकारा जाय, यदि भारतके प्रति ब्रिटिश सरकारको जो जवाबदेहियां हैं, उनके अनुसार काम करनेमें रुकावट डाली जाय और यदि इस गलत भरोसे पर कि हम लोग चुपचाप भारतसे चल देंगे मांगे की जायँ, तो भारत ऐसे आह्वानमें संसारके अत्यन्त निश्चयी लोगोंको ललकारनेमें—सफल मनोरथ नहीं हो सकता। ब्रि-

लोग ऐसे आह्वानका जवाव अपने पूरे वल वीर्य और निश्चयके साथ दिये विना न रहेंगे।"

लार्ड वरकनहेड और माटेगू साहव दोनों इस वातको वहुत कम जानते हैं कि भारतवर्ष उस तमाम "कठिन भुजवल" के मुकाविलेके लिये तयार है जो कि सात समुद्र पारसे यहा लाया जा सकता है और उसने तो सितम्बर १९२० में ही कलकत्तेसे अपना आह्वान शुरू कर दिया है। एवं वह स्वराज्यसे रत्तीभर कममें तथा विना खिलाफत और पञ्जावका पूरा दुःख दूर हुए किसी तरह सन्तुष्ट नही हो सकता। इसमें अवश्य ही ब्रिटिश साम्राज्यको ललकारनेका समावेश हो जाता है, और यदि ब्रिटिश साम्राज्यके वर्तमान रक्षक लोग उसे शातिके साथ स्वतन्त्र राष्ट्रोंके सच्चे प्रजा सङ्घके रूपमें जिसमें सबके वरावर हक हो और इच्छा होनेपर अलहदा हो जानेका अधिकार हो, परिणत करनेसे सन्तुष्ट न हों तो 'ससारके उन अत्यन्त निश्चयी लोगों' का तमाम वल वीर्य और निश्चय तथा 'कठिन भुजवल' उन्हें भारतमें खर्च करना पड़ेगा। पर भारतमें जो आत्मतेज जाग्रत हो चुका है उसे मटियामेट करनेका प्रयत्न करना निष्फल होगा। उस आत्म-तेजको न तो कोई दवा ही सकता है, न भंग ही कर सकता है। हा, यह सच है हम भारतवासियोंके पास 'कठिन भुज-वल' नहीं है। भारतके लोग तो भात खानेवाले छोटे नाटे और दुवले-पतले हैं। परन्तु उन लाखों लोगोंने अव अपने

भाग्यका फैसला अपने आप करनेका दृढ़ निश्चय कर लिया है। उन्हें न तो अब किसीकी संरक्षकता दरकार है और न वे शस्त्रास्त्रको ही छूना चाहते हैं। स्वर्गीय लोकमान्यके शब्दोंमें यह उनका 'जन्मसिद्ध अधिकार' है और वे उसे प्राप्त किये रहेंगे फिर चाहे उसके लिये कितने ही 'कठिन भुजबल' का प्रयोग उनपर किया जाय और वह चाहे कितने ही बल वीर्य और निश्चयके साथ किया जाय। भारतवर्ष इस गुस्ताखीका जवाब गुस्ताखीके साथ नहीं दे सकता और न देगा ही। परन्तु यदि वह अपनी प्रतिज्ञापर अटल रहा तो उसकी यह प्रार्थना कि हे ईश्वर, इस बलासे हमारा छुटकारा कर, कभी व्यर्थ न जायगी। इस पृथिवी पटलपर ऐसा कोई साम्राज्य अधिक दिनोंतक नहीं टिका है जो अपनी सत्ता और दुर्बल जातियोंकी लूट पाटके मदमें उन्मत्त हो गया हो। और यदि इस विश्वका शासन कर्ता कोई न्यायी ईश्वर हो तो यह ब्रिटिश साम्राज्य जो संसारकी दुर्बल जातियोंकी सुसंगठित आर्थिक लूटपर तथा पशुबलके निरन्तर प्रयोगपर अपनी हस्ती रखता है, कभी जीवित नहीं रह सकता। ब्रिटिश राष्ट्रके प्रतिनिधि कहलानेवाले ये लोग इस बातको भी कम जानते हैं कि भारतने तो पहले ही अपने कितने ही अच्छेसे अच्छे आदमी ब्रिटिश सरकारके हवाले कर दिये हैं कि लीजिए शौकसे अपने 'कठिन भुजबल' को अपनाइये। राष्ट्रीय बलिदानके इस समान प्रवाहमें यदि चौरीचौराने बाधा न डाली होती तो इस सिंहके

लोग ऐसे आह्वानका जवाव अपने पूरे वल वीर्य और निश्चयके साथ दिये विना न रहेंगे।"

लार्ड वरकनहेड और माटेगू साहव दोनों इस बातको बहुत कम जानते हैं कि भारतवर्ष उस तमाम "कठिन भुजवल" के मुकाविलेके लिये तयार है जो कि सात समुद्र पारसे यहां लाया जा सकता है और उसने तो सितम्बर १९२० में ही कलकत्तेसे अपना आह्वान शुरू कर दिया है। एवं वह स्वराज्यसे रत्तीभर कममें तथा विना खिलाफत और पञ्जावका पूरा दुःख दूर हुए किसी तरह सन्तुष्ट नहीं हो सकता। इसमें अवश्य ही ब्रिटिश साम्राज्यको ललकारनेका समावेश हो जाता है, और यदि ब्रिटिश साम्राज्यके वर्तमान रक्षक लोग उसे शातिके साथ स्वतन्त्र राष्ट्रोंके सच्चे प्रजा सङ्घके रूपमें जिसमें सवके वरावर हक हो और इच्छा होनेपर अलहदा हो जानेका अधिकार हो परिणत करनेसे सन्तुष्ट न हों तो 'ससारके उन अत्यन्त निश्चयी लोगों' का तमाम वल वार्य और निश्चय तथा 'कठिन भुजवल' उन्हें भारतमें खर्च करना पडेगा। पर भारतमें जो आत्मतेज जाग्रत हो चुका है उसे मटियामेट करनेका प्रयत्न करना निष्फल होगा। उस आत्मतेजको न तो कोई दवा ही सकता है, न भंग ही कर सकता है। हां, यह सच है हम भारतवासियोंके पास 'कठिन भुजवल' नहीं है। भारतके लोग तो भात खानेवाले छोटे नाटे और दुवले-पतले हैं। परन्तु उन लाखों लोगोंने अब अपने

घरका वार



परमात्मा मुझपरअसीम दया करता आया है। उसने मुझे तीसरी बार चेतावनी दी है कि भारत अभी तक उतना सत्यव्रत और अहिंसापरायण नहीं हुआ है जितना कि उसे होना चाहिये। वह तभी सविनय भङ्गके योग्य कहा जा सकेगा जब वह पूरी तरह सत्य और अहिंसापरायण हो जायगा। सविनय भङ्गकी हालतमें तो उसे विनयशील, सत्यव्रत, नम्र और सज्ञान होना चाहिये। यद्यपि वह हरएक काम जानबूझकर करे तथापि उन प्रत्येक काममें प्रेम टपकना चाहिये। अपराध और द्वेषका नामोनिशानतक न हो।

उसने पहले पहल मुझे १९१९ में चेताया, जब कि रौलट एक्टका विरोध करनेके लिये आन्दोलन उठाया गया था। अहमदाबाद, वारमगाव और खेडाने गलती की। वही गलती अमृतसर और कासूरने दोहराई। और मैंने अपना पैर पीछे हटा लिया। मेरे हाथसे हिमालय जैसी भारी गलती हो गई, यह मैंने कबूल किया। परमात्मा और मानव जातिके सामने विनम्र होकर अपना सिर झुकाया और न केवल समुदायिक सविनय कानून भङ्ग स्थगित कर दिया, बल्कि अपना वैयक्तिक कानून भङ्ग भी जो कि सविनय और अहिंसात्मक ही होनेवाला था, स्थगित कर दिया।

सामने और भी अधिक तथा रुचिकर शिकार पेश किये जाते, परन्तु ईश्वर कुछ और ही चाहता था। पर फिर भी डाउनिग स्ट्रीट और हाउटहालवाले ये प्रतिनिधि शौकसे जो बुरेसे बुरा कर सकते हों करें। कोई उनको रोकनेवाला नहीं है। मैं जानता हु' कि समुद्र पारसे जो धमकी गुस्ताखोके साथ आई है उसके विषयमें मैं बहुत कडी बात लिख रहा हूं। लेकिन ब्रिटिश लोगोंको यह बात एकबार समझ लेना चाहिये कि १६२० में जो सग्राम आरम्भ हुआ है वह अब रुक नहीं सकता—वह तो आखिरी फैसला करके ही शात होगा—फिर चाहे इसमें एक मास लगे या एक साल अथवा कितने ही माह लगें या कितने ही साल और चाहे ब्रिटेनके प्रतिनिधि गदरके जमानेके तमाम भीषण शस्त्रास्त्रोंको तथा दूसरे अवर्णनीय साधनोंकी दूने बलके साथ काममें लावें अथवा न लावें। मैं तो सिर्फ यही आशा और प्रार्थना करूगा कि परमात्मा भारतको काफी नम्रता और बल प्रदान करे जिससे वह अन्ततक शान्तिमय बना रहे। पर अब ऐसी गुस्ताख ललकारोंके अधीन हो जाना जैसी कि समुद्र पारसे यथा समय आया करती हैं किसी तरह सभ-वनीय नहीं।

इसपर वे पीछे रहनेवाले महायताके लिये चिल्लाये और सारा जनसमूहका समूह पीछे उमड पडा। यह देख पुलिसने गोली चला दी। किन्तु उनके पास मसाला अधिक न था। वह शीघ्र ही खतम हो गया और वे बचावके लिये भागकर थानेमें घुस गये। ऐसा मेरे सवाददाताका कहना है। पर जनताने इसपर थाने ही में आग लगा दी। सिपाहियोंको जिन्होंने अपनेको अन्दर बन्द कर लिया था, लाचार हो जान लेकर बाहर भागना पडा और ज्योंही वे बाहर आये त्योंही उनके टुकडे टुकडे करके वे आगकी धधकती हुई भीषण ज्वालाओंमें फेंक दिये गये। यह भी कहा जा रहा है कि इस पाशविक कृत्यमें असहयोगी स्वयंसेवकोंका भी हाथ था। और जनता भी केवल उसी घटनासे उत्तेजित न हो उठी थी बल्कि उस जिलेमें जनतापर किये गये पुलिसके बहुतसे अत्याचारोंसे परिचित थी। पर कुछ भी हो, उन निराश्रित और लाचार होकर जनताकी शरण आये हुए मनुष्योंकी इस तरह हत्या होना तो किसी हालतमें ठीक नहीं कहा जा सकता, फिर जनता चाहें कितनी ही क्यों न उकसाई गई हो। और जनताका यह खून खराबी कर बैठना उस हालतमें तो और भी भारी अपशकुन है। जब हम यह दावा कर रहे हैं कि उसने अहिंसाव्रत धारण किया है और अहिंसा द्वारा हम भारतको स्वतन्त्रता देवीके सिंहासनपर बैठाने जा रहे हैं। मान लीजिये कि परमात्मा बारडोलीके सविनय भङ्गमें

इसके बाद दूसरी चेतावनी मुझे बम्बईमें मिली, जब कि परमात्माने मुझे बड़ी डरावनी तरहसे सचेत किया। इस बार तो उसने १७ नवम्बरके दिन बम्बईके हुल्लड़बाजोंकी करतूतें अपनी आखों दिखाई। हुल्लड़बाजोंने तो ऐसा करनेमें अल-हयोंकी भलाई सोची। किन्तु उसका फल यह हुआ कि शीघ्र ही बारडोलीमें जो समुदायिक सविनय कानून भङ्ग शुरू होनेवाला था उसे आगे ढकेलनेका विचार मुझे जाहिर करना पडा। इस बार मेरी भद १९१९ से कई गुना अधिक उडी। किन्तु उससे मेरा भला ही हुआ। और मुझे तो यकीन है कि उस समय उस आन्दोलनको स्थगित कर देनेसे राष्ट्रका भी भला ही हुआ। उस समय अपना कदम पीछे हटाकर भारतने ससारको यह दिखा दिया कि वह सत्य और अहिंसाको सबसे अधिक चाहता है।

पर तब भी मेरी बुरीसे बुरी फजीहत न हुई थी। वह तो अभी होनेवाली थी। मदरासने आवाज दी, पर मैंने उसे सुनी अनसुनी की। पर परमात्माने चौरी चौरासे और भी जोरसे आवाज लगाई। मुझे मालूम हुआ है कि जनता उन पुलिसके जवानों द्वारा, जो बुरी तरह नोंच काटकर मारे गये थे बहुत उकसाई गई थी। उनके इन्सपेक्टरने यह वचन दिया था कि पुलिस लोगोंको तङ्ग न करेगी। उसका भङ्ग उन्होंने किया। किन्तु जब जुलूस निकल चुका तब कुछ पीछे रहने-वालोंसे उन पुलिसके जवानोंने छेडछाड और गाली गलौज किया

सत्य, धर्म अतएव परमात्मासे भी मुह मोड लेनेके लिये शैतान बुला रहा है। मैंने तो अपनी शङ्काए कुशङ्काए' और कठिनाइया कार्यकारिणी समिति तथा दूसरे साथियोंके सामने जो कि उस समय उपस्थित थे, रख दी। पहले पहल वे सब मुझसे सहमत नहीं हुए। और कोई २ तो अब भी शायद मुझसे सहमत नहीं हैं। पर मैं तो यही कहूगा कि वैसे विचारशील और क्षमावान साथी पानेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है ऐसा शायद ही कभी किसीको मिला हो। वे मेरी कठिनाइयोंको समझ गये और मेरे विचारोंको शान्तिके साथ सुनते रहे। उसका फल आज कार्यकारिणी समितिके प्रस्तावोंके रूपमें जनताके सामने उपस्थित है। करीब करीब तमाम आक्रामक कार्यक्रमका एकदम पीछे ले लिया जाना राजनैतिक दृष्टिसे भले ही अदूरदर्शिता तथा बुद्धिमत्ता शून्य काम समझा जाय। पर यह तो निःसन्देह सत्य है कि वह धार्मिक दृष्टिसे बडा ही अच्छा और विचारपूर्ण काम हुआ। और जिनके दिलमें इस विषयमें जरा भी सन्देह है उन्हें मैं यकीन दिलाकर कहता हू कि हा, मेरी यह फजीहत तो हुई और मुझे अपनी भूल कबूल करनी पडी, पर देशका इससे भला ही होगा।

मैं अगर किसी सद्गुणका दावा करना चाहता हू तो वह सत्य और अहिंसा परायणता ही है। मैं अपनेमें किसी दैवी [illegible] दावा नहीं करता। और न मुझे वह

विभूषित कर दे, और यह भी मान लीजिये कि सरकार भी बारडोलीके विजयी वीरोंके पक्षमें देशके शासनसे अपना हाथ निकाल ले, तो इस निरंकुश जनसमूहको, जो अच्छी तरह उकसाये जानेपर ऐसे अमानुष कृत्य कर बैठता है, सभालकर शान्त रखनेका भार किसपर जा गिरेगा? अहिंसात्मक स्वराज्यका मार्ग भी अहिंसात्मक ही होगा। अत एव जनताके निरङ्कुश हिस्सेको भी अहिंसा द्वारा ही हमें अपने वशमें लाना है। अहिंसात्मक असहयोगी तो तभी विजयी कहे जायगे जब वे देशके हुलडबाजोंको अपने वशमें कर ले। अथवा दूसरे शब्दोंमें यह कहिए कि जब वे भी कमसे कम तबतक तो देशसेवाकी दृष्टिसे या धार्मिक भावसे अपने अहिंसात्मक कृत्योंसे बाज आना सीख जायं जबतक असहयोगका जङ्ग चल रहा है। इसलिये चौरीचौराकी दुर्घटनाने तो मेरी आखें पूरी तरह खोल दी।

पर शैतानकी आवाजने मेरे कानोंमें कहा "जनाब आपने बड़े लाटको आखिरी चेतावनी दी और उनका उत्तर मिलनेपर फिर बड़ा लम्बा चौड़ा प्रत्युत्तर दिया उसका क्या करोगे? बस हो चुका सब" इस फजीहतको बरदाश्त करना सबसे अधिक कठिन बात है। सचमुच, बड़े जोश और रौबके साथ सरकारको धमकिया देकर दूसरे ही दिन तथा बारडोलीके लोगोंको बड़े अश्वासन देकर, दूसरे ही दिन पीछे कदम हटा लेना कायरता तो जरूर कही जा सकती है। इस समय तो

एक अत्यन्त छोटा सा हिस्सा है न? जब तक दूसरे भागोंसे उसे पूरा सहयोग न मिलेगा तबतक वह अपने प्रयत्नमें कैसे सफल हो सकता है। बारडोलीका कानून भंग तो तभी सविनय और शान्तिमय रह सकता है—जब उस समय अन्य प्रान्तोंमें भी पूर्ण शान्ति हो। नमककी एक छोटी कली तमाम दूधको कैसे बेकाम कर देती है? ठीक उसी प्रकार बारडोली चाहे कितनी ही शान्तिसे क्यों न काम करे चौरी चौराका विष उसके तमाम कामको मिट्टीमें मिला देगा। क्योंकि जैसे बारडोली भारतके भावोंको जाहिर करता है वैसे ही चौरी चौरा भारतका ही एक हिस्सा है न। वह भी तो उसके उद्दण्ड भावोंको दर्शाता है। चौरीचौरा तो देशकी हिंसा वृत्तिका एक परिणत चिन्हमात्र है मेरा भी तो यह ख्याल अभीतक नहीं था कि जहा जहा दमन जारी है वहा वहा हिंसा, मानसिक या कार्यमें हुई न होगी या होती ही न होगी। मेरा तो यह विश्वास था और अब भी है कि जिस तरहसे दमन हो रहा है वह सीमासे बहुत बाहर है और वहा जनताकी ओरसे जो कुछ हिंसा हुई होगी वह अत्यन्त थोड़ी और दमनके मुकाबलेमें नगण्य होगी। जहा सभायें करनेकी मुमानियत है वहा निश्चय करके सभायें करना इसको मैं हिंसा नहीं कहता। हिंसा तो मैं जहा कहीं ईंट पत्थर फेंके गये, जनताको धमकियां दी गई, कहीं २ लोगोंपर जबर्दस्ती की गई उसको कहता हूं। सच पूछिये तो सविनय भङ्गमें उत्तेजना होनी ही न चाहिये। सविनय भंग तो चुपचाप कष्ट सहनकी

दरकार ही है। मेरा शरीर भी उसी एक दिन नाश पानेवाली मिट्टीका बना हुआ है जिसका कि मेरे एक कमजोरसे कमजोर भाईका बना हुआ है। और इसलिए मेरे हाथसे भी वे सब गलतियां होनेकी संभावना है जो कि उसके हाथसे हो सकती हैं। मेरी सेवायें अत्यन्त परिमित और अपूर्ण हैं। किन्तु उन अपूर्णताओंके होते हुए भी अभी तक उन्हें परमात्माने अपना कर मुझ पर असीम कृपा की है।

क्योंकि अपनी गलतीको स्वीकार करना एक बड़ी अच्छी बात है। वह एक झाड़ूका काम करता है। जिस प्रकार झाड़ू तमाम गंदगी हटाकर जमीनको पहलेसे भी अधिक साफ कर देता है उसी प्रकार अपनी गलतीको स्वीकार करनेसे हृदय हलका और दिल साफ हो जाता है। इसलिये अपनी गलतीको स्वीकार करनेसे ऐसा अनुभव कर रहा हूं और मुझमें अधिक बल आ गया है। इसे पीछे हटनेसे हमारे कार्य की भी उन्नति ही होगी। सीधी राहको छोड़ देनेसे मनुष्य अपने उद्दिष्ट स्थान को कभी नहीं पहुंच सकता।

कोई २ यह भी कहते हैं कि चौरी चौराका असर बारडोली पर नहीं गिर सकता। वे कहते हैं कि "अगर बारडोली स्वयं अपनी कमजोरीके कारण चौरी चौराकी घटनासे विचलित होकर कहीं हिंसामें प्रवृत्त हो जाय तभी खतरेकी बात है।" बारडोली-का तो मुझे पूरा विश्वास है। मेरे ख्यालमें तो बारडोलीके लोग भारतमें सबसे अधिक शान्त हैं। पर बारडोली तो भारतका

वे प्रान्त बीचमें ही सविनय कानून भंग शुरू न कर बैठें जिन्होंने उनकी शर्तें पूरी करके पहले योग्यता और आज्ञा प्राप्त न कर ली है।

अभी तो कांग्रेस रचना भी अपूर्ण ही है और उसकी आज्ञाओंका पालन भी ऊपर ऊपर हो रहा है। हमने अभी हर एक गावमें और मौजे मौजेमें कहा महासभाकी शाखाएं खोली हैं? और जहा जहा वे खुल भी गई हैं वे सब कांग्रेसकी आज्ञाओंका कहा अच्छी तरह पालन कर रही हैं? अभीतक एक करोडसे अधिक सदस्योंके नाम भी तो हमारे महासभाके रजिस्टरमें दर्ज नहीं हुए हैं। अभी फरवरी महीना चल रहा है, पर अभी बहुतोंने इस सालके वार्षिक चन्देके चार आने भी नहीं दिये हैं। स्वयंसेवकोंके नाम दर्ज करते समय भी उचित ध्यान नहीं रखा जाता। वे अपने प्रतिज्ञापत्रकी तमाम शर्तोंका पालन नहीं करते। वे हाथ कती बुनी खादी भी तो नहीं पहनते हैं। सब हिन्दू स्वयंसेवकोंने अहिंसाका पाप अभी कहा धो डाला है? इस प्रकार वे सब अभी पूरी तरह अहिंसापरायण कहा हो गये हैं? केवल उनके जेल जानेसे ही कहीं हम स्वराज्य थोडे ही प्राप्त कर सकते हैं। न उससे खिलाफत ऐसे पवित्र कार्यकी सेवा कर सकते हैं या बेईमान नौकरोंकी पेन्शन बन्द कर देनेकी योग्यता ही प्राप्त कर सकते हैं? कई तो लाचारीसे भूले कर बैठते हैं। पर कई ऐसे हैं जो जान बूझकर पाप करते हैं। वे जानते हैं कि अहिंसाका पालन वे नहीं कर रहे हैं और न करना ही

तैयारी मात्र है। उसका प्रभाव धीरे धीरे हो और एक दम न दिखाई दे तो क्या हुआ? यह प्रभाव तो आश्चर्यजनक होता है। किन्तु मेरा यह भी ख्याल है कि कुछ उत्तेजना तो रहेगी, वह बिलकुल नहीं निकाल दी जा सकती। मेरा यह भी ख्याल था कि कहीं कहीं हिंसा भी होगी ही, किन्तु जान बूझकर नहीं, अर्थात् कुछ कुछ अपूर्ण स्थितिमें सविनय कानून भङ्गका होना मुझे असम्भव नहीं नजर आया। क्योंकि पूर्ण तैयारी होनेपर तो सविनय भंग मालूम ही नहीं होता है। पर अभी इतनी प्रतिकूल परिस्थितिमें इस आन्दोलनका छोडना तो सचमुच महा भीषण प्रयोग होगा।

सचमुच, चौरीचौराकी दुर्घटना एक भारी सकेत चिन्ह है। वह दिखा रहा है कि अगर शीघ्र ही कोई खास प्रतिबन्धक उपाय न किया जाय तो देश किस ओर बडी आसानीसे झुक सकता है। अगर हमें अहिंसामेंसे हिंसाका विकास नहीं करना है तो यह साफ है कि हमें अपने कदम तेजीसे पीछे हटा लेना चाहिये, और फिर शान्ति स्थापित कर देनी चाहिये फिर अपना नया कार्यक्रम बना लेना चाहिये और तबतक समुदायिक सविनय कानून भङ्ग शुरू करनेका ख्याल भी न करना चाहिये जबतक कि हमें यह पूरा विश्वास और निश्चय न हो कि समुदायिक सविनय कानून-भङ्ग शुरू होनेपर तथा सरकारके जनताको हजार उकसानेपर भी हम जनताकी शांति भंग न होने देंगे। सिवा इसके हमें यह भी विश्वास होना चाहिये कि

और जोश घना रहता, स्थगित कर देना मेरे प्रायश्चितके लिये काफी नहीं है। क्योंकि चौरीचौराको दुर्घटनाका, चाहे कितना ही अप्रत्यक्ष रीतिसे क्यों न हो, मैं नियमित कारण जरूर हुआ हू।

इसलिये मुझे किसी प्रकार काफी प्रायश्चित जरूर करना चाहिये। मुझे एक ऐसा यत्र बन जाना चाहिये कि जिसमें अपने आसपासके नैतिक वातावरणमें कहीं भी जरा फरक हो तो उसका असर मेरे हृदय पर फौरन दीख पडे। मेरी प्रार्थना और भी अधिक सत्यपूर्ण तथा विनम्र होनी चाहिए। और मेरे लिए तो निरश्व और उसके साथ ही साथ आवश्यक मानसिक सहयोगके जैसा उपयोगी और हृदयको शुद्ध करनेवाला दूसरा उपाय ही नहीं।

मैं जानता हू कि मानसिक अवस्था ही सब कुछ है। क्योंकि जैसे प्रार्थना किसी पक्षीके कलरवकी तरह भक्तिशून्य हो सकती है वैसे ही उपवास भी शारीरिके कष्टके अतिरिक्त कुछ नही हो सकता। इन ऊपरी उपायोंका महत्व हृदय शुद्धिके लिए कुछ भी नहीं है। उसी प्रकार जैसे प्रार्थनाके केवल गायनसे कठ अच्छा हो सकता है। वैसे ही उपवाससे भी देह शुद्ध हो सकती है। किन्तु आत्मा पर तो दोनोंका असर कुछ नहीं होगा।

किन्तु जब पूर्ण आत्म प्रकाशनके हेतुसे उपवास किया जाता है, जब शरीर पर आत्माका प्रभुत्व प्रस्थापित करनेके

चाहते हैं पर तो भी वे स्वयंसेवकोंमें अपना नाम लिखा देते हैं। इस प्रकार जैसे हम सरकारको झूठी कह रहे हैं ठीक वैसे ही हम भी हैं। केवल मुंहके ऊपर सत्य और अहिंसाकी जय जयकार करनेसे हम स्वतन्त्रता देवीके साम्राज्यके अन्दर कभी नहीं दाखिल हो सकते।

समुदायिक कानून भङ्गका स्थगित होना और व्यर्थ उत्तेजना का रोकना हमारी प्रगतिके लिये अत्यन्त आवश्यक है। सिर्फ यही नहीं बल्कि हम यह न करते तो अभीतक जो कुछ हमने किया था वह सब व्यर्थ होनेकी भारी सम्भावना थी। इसलिये मैं आशा करता हूं कि महासभाका हर एक कार्यकर्ता इससे हताश न होगा। इतना ही नहीं, बल्कि वह इसलिये समाधान ही मानेगा कि राष्ट्रीय पातक और असत्यताका भार हमारे हृदयसे दूर हो गया।

हमारे प्रतिपक्षी तो हमारी इस फजीहत और पराजयको देख कर फूले न समायेंगे। वे तो बड़े प्रसन्न हो रहे होंगे। होने दो। अपनी प्रतिज्ञाको झूठी सिद्ध करके परमात्माके सामने पापी ठहरनेसे यह बहुत अच्छा है। दुनिया इसे कायरता और कमजोरी कहे तो भले ही कहने दो। अंतर्देवताके प्रति असत्य होनेके बनिस्बत दुनियाको हम असत्य दिखाई दें वह लाख गुना अच्छा है।

इसलिये समुदायिक सविनय कानून-भङ्गका तथा दूसरी ख्रिरेक हलचलोंका जिनके शुरू रहनेसे जनतामें उत्तेजना

से कई गुना अधिक सच्चा और उपयोगी हो सकता है। सचमुच अहिंसाकी प्रतिज्ञाका खूब बड़े पैमानेमें कार्यमें परिणत होने तथा उस सिद्धान्तका अच्छी तरह प्रचार होनेसे बढ़कर उपयोगी और क्या बात हो सकती है। इसलिए यह देखकर कि मेरे सब सहयोगी व्यर्थ वाद विवादमें समय न खोकर चुपचाप कार्य कारिणीसमितिके निर्दिष्ट किये हुए विधायक कार्यक्रमको पूरा करनेमें लगे हुए हैं, मुझे वैसी ही तृप्ति हो सकती है जो अन्न खाने पर होगी। इसी प्रकार मुझे यह देखकर भी प्रसन्नता होगी कि वे यकीन कर करके ऐसे ही स्त्री पुरुषोंके नाम महासभाके सदस्यों-में दर्ज कर रहे हैं, जो यह भली भांति समझते हैं कि महासभा-का ध्येय सत्य और अहिंसा द्वारा ही स्वराज्य प्राप्त करना है, अपना धर्म समझ कर रोज नियत समय तक चरखा कात रहे हैं उसी प्रकार उस सुख समृद्धि तथा स्वतन्त्रताके देनेवाले चक्रका घर २ प्रचार कर रहे हैं, वे अपने अस्पृश्य भाइयोंके घर जाकर उनकी खबर लेते हैं तथा उनसे पूछते हैं कि उनकी आवश्यकतायें क्या २ हैं। वे राष्ट्रीय पाठशालाओं में जाकर अस्पृश्यवर्गके बालकोंको उनमें पढ़ाने के लिये आग्रह कर रहे हैं, उसी प्रकार, वे किसी ऐसी समाज सेवा करने की योजना कर रहे हैं जिसमें हर एक वर्ग के दर्जे के स्त्री पुरुषोंको काम करनेका मौका मिल सकता हो, वैसेही जिन गृहोंको भी शराब से जा रही हो वहा आजाकर उन शराबी भाइयों को प्रेम से शराबको हानि समझा रहे हैं, तथा सच्ची पञ्चायतोंकी और राष्ट्रीय

घास काममें लाया जाता है तब मनुष्यकी प्रगतिमें वह अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग हो जाता है। इसलिए पूरी तरह विचार कर लेने पर मैंने पांच दिनका सतत उपवास-निरशन व्रत शुरू किया था। मैं सिर्फ पानी पीता रहा। यह रविवारके सुबहसे शुरू किया और शुक्रवार शामको खतम हो गया। कमसे कम इतना तो मुझे करना ही चाहिए था।

शीघ्र ही अखिल भारतवर्षीय महासभा समिति की बैठक होने वाली है। यह मेरे ध्यानमें है। मैं जानता हूं कि कितने ही मित्रोंको इस मेरे पांच दिनके उपवाससे भी बड़ा दुःख होगा पर मैं अब इसे आगे न ढकेल सका और न कम ही कर सका।

मैं अपने सहयोगियोंसे आग्रह करता हू कि वे मेरा अनुकरण न करें। उन्हें उपवास करनेका कोई कारण नहीं। सविनय कानून भंगके उत्पादक वे थोडे ही हैं। एक वैद्यको जैसे किसी कठिन, असाध्य रोगकी चिकित्सा करते २ किंकर्तव्यमूढ होकर अपनी लाचारी पर दुःख होता है ठीक वैसेही दुःखद अवस्था मेरी हुई है। इस समय मुझे या तो इसे छोड देना चाहिये या अधिक कौशल प्राप्त करना चाहिये। इसलिए यह वैयक्तिक प्रायश्चित मेरे लिए केवल आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य भी था। साथ ही कार्य कारिणी समितिने देशके लिए जिस आत्म संयमकी सिफारिश की है वह देशके हर एक पुत्र और पुत्रीके लिये निःसन्देह काफी प्रायश्चित्त है। वह कुछ थोडा प्रायश्चित्त नहीं है। वह तो अगर दिलके साथ किया जाय तो उपवास

से कई गुना अधिक सच्चा और उपयोगी हो सकता है। सचमुच अहिंसाकी प्रतिज्ञाका खूब बड़े पैमानेमें कार्यमें परिणत होने तथा उस सिद्धान्तका अच्छी तरह प्रचार होनेसे बढ़कर उपयोगी और क्या बात हो सकती है। इसलिए यह देखकर कि मेरे सब सहयोगी व्यर्थ वाद विवादमें समय न खोकर चुपचाप कार्य-कारिणीसमितिके निर्दिष्ट किये हुए विधायक कार्यक्रमको पूरा करनेमें लगे हुए हैं, मुझे वैसी ही तृप्ति हो सकती है जो अन्न खाने पर होगी। इसी प्रकार मुझे यह देखकर भी प्रसन्नता होगी कि वे यकीन कर करके ऐसे ही स्त्री पुरुषोंके नाम महासभाके सदस्यों-में दर्ज कर रहे हैं, जो यह भली भांति समझते हैं कि महासभा-का ध्येय सत्य और अहिंसा द्वारा ही स्वराज्य प्राप्त करना है, अपना धर्म समझ कर रोज नियत समय तक चरखा कात रहे हैं उसी प्रकार उस सुख समृद्धि तथा स्वतन्त्रताके देनेवाले चक्रका घर २ प्रचार कर रहे हैं, वे अपने अस्पृश्य भाइयोंके घर जाकर उनकी खबर लेते हैं तथा उनसे पूछते हैं कि उनकी आवश्यकतायें क्या २ हैं। वे राष्ट्रीय पाठशालाओं में जाकर अस्पृश्यवर्गके बालकोंको उनमें पढ़ाने के लिये आग्रह कर रहे हैं, उसी प्रकार, वे किसी ऐसी समाज सेवा करने की योजना कर रहे हैं जिसमें हर एक वर्ग के दर्जे के स्त्री पुरुषोंको काम करनेका मौका मिल सकता हो, वैसेही जिन गृहोंको श्री शराब से जा रही हो वहा आजाकर उन शराबी भाइयों को प्रेम से शराबकी हानि समझा रहे हैं, तथा सच्ची पञ्चायतोंकी और राष्ट्रीय

विद्यालयोंकी गांव गाव में अच्छी तरह स्थापना कर रहे हैं, आदि देखकर मुझे जो सन्तोष और सुख होगा वह मेरे अन्न ग्रहण से किसी प्रकार कम नहीं, बल्कि अधिक ही होगा। उपवास करने की बनिस्बत कार्यकर्ता इससे अधिक देशसेवा करके उसका भला करेंगे। इसलिए मैं आशा करता हूं कि मिथ्या सहानुभूति से अथवा उसके आध्यात्मिक लाभ के गलत ख्याल से कोई भी बुरी तरह उपवास न करें।

सब प्रकारके उपवास और तपस्या जहांतक हो सके गुप्त ही रहना चाहिये। किन्तु मेरा यह निरशन वृत्त तो तपस्या भी है और सजा। और सजा तो जाहिरा तौर पर होनी चाहिये। वह तपस्या तो मेरे लिये है और सजा उनके लिये, जिनकी सेवा करने की मैं कोशिश कर रहा हूं, जिनके लिये मैं जीना और मरना भी चाहता हूं। उन्होंने महासभा के नियमों के खिलाफ भूलसे पाप किया है। वे यद्यपि महासभा के प्रत्यक्ष अनुयायी न हों तथापि उससे वे सहानुभूति रखते थे। शायद उन्होंने मेरा ही जय जयकार करते हुए उन कान्स्टेबलों, पुलिसके सिपाहियों, अपने ही देश भाइयों को काट काटकर मारा हो। अपने प्रिय जनोंको दण्ड देनेका एकमात्र उपाय खुद ही कष्ट सहन करना है। मैं यह भी इच्छा नहीं कर सकता कि वे गिरफ्तार किये जाय। किन्तु मैं उन्हें यह कह देना चाहता हूं कि उन्होंने महासभाके नियमों को भङ्ग किया है, सो उनके लिये मुझे प्रायश्चित्त करना होगा। मेरी तो उन लोगोंको जिन्हें यह मालूम हो रहा हो

कि हमसे अपराध हो चुका है और अब पछतावा भी हो रहा हो यही सलाह है कि वे सब सजा पानेके लिये स्वेच्छासे अपने को सरकारके आधीन करदें और जो कुछ किया हो सब साफ साफ कबूल कर लें।

मैं आशा करता हूं कि गोरखपुरके तमाम कार्यकर्ता सच्चे अपराधियोंका पता लगाने में कुछ भी उठा न रखेंगे और उनसे आग्रह करेंगे कि वे आगे होकर सरकारके हवाले हो जाय। पर उन हत्यारोंको मेरी सलाह पसन्द हो या न हो, किन्तु मैं उन्हें यह जता देना चाहता हू कि उन्होंने स्वराज्य आन्दोलनमे बड़ा भारी विघ्न डाल दिया है। बारडोलीके सविनय कानून-भङ्ग के आगे ढकेले जाने का मूल कारण बनकर उन्होंने उस कार्यको गहरी हानि पहुंचाई जिसकी कि शायद वे सहायता करना चाहते थे। मैं यह भी चाहता हू कि वे यह भी जानलें कि यह आन्दोलन हिंसाको न तो छिपाने के लिये उठाया गया है और न यह उसकी पूर्व तैयारी ही है। मैं हर हालत में हर तरह से अपनी बदनामी को, हर तरहकी यन्त्रणाओं को सहलूंगा, जाति समाजसे बहिष्कृत होना और मृत्युतक को अपना लेना कबूल कर लूंगा, पर इस आन्दोलनको हिंसावृत्ति से या उसके हिंसा के साधनीभूत होनेसे बचाये बिना न रहूंगा।

मैं अपने इस प्रायश्चित्तको सबके सामने प्रगट इसलिये भी करता हूं कि अबभी जेलमें रहने वाले देश भाइयोंके साथ जेलमें रहनेका अवसर मैं गवा रहा हूं। मौका फिर हाथसे निकल

"मेरी इज्जत चली गई"

(फरवरी २६, १६२२)

लाहौर से एक सज्जनने एक गुमनाम पत्र भेजा है, जिसको पढ़कर मानो दिल दहल उठता है। वे लिखते हैं कि सविनय-भङ्ग मुल्तवी होनेकी खबर पाते ही एक मित्रने मुझसे कहा कि महात्माजी इस आन्दोलनसे अलग हो जाना चाहते हैं। उन्होंने प्रान्तिक समितियों को सलाह दी है कि आगे स्वयंसेवकों की भरती न की जाय। पहरा रखना भी तबतक बन्द कर दिया जाय जबतक महासमिति कोई निर्णय न कर दे। लोगों की यह राय हैं कि अब आपने अपना मुंह मोड़ लिया है। आपका चित्त डावाडोल हो गया है। अब वे बिना हिचकिचाहट के सरकार के साथ सहयोग करेंगे और शाहजादे के स्वागत समारम्भोंमें शरीक होंगे। कुछ लोग तो कहते हैं कि हम हड़ताल भी नहीं करेंगे और दिल के साथ लाहौरमें शाहजादे का स्वागत करेंगे। कुछ व्यापारियों का यह खयाल हो गया है कि आपने शराब की दुकानों तथा विदेशी कपड़ों की तमाम कैदें उठा ली हैं। सच कहें तो लाहौर में तमाम लोग बाजारोंमें और अपने अपने घरोंमें एकत्र हो हो कर चर्चा कर रहे हैं और वे महासमिति के इस निर्णय की निन्दा कर रहे हैं। इस सम्बन्धमें मैं आपसे नीचे लिखे सवाल पूछता हूं—

गया है। अब हम मनाईके हुक्मोंको रद्द कर देनेपर, कैदियोंको छोड देने पर जोर नहीं दे सकते। चौरी चौरा के इस अपराधका फल उन्हें और हमें भोगे बिना छुटकारा नहीं। हम मानें चाहे न माने यह दुर्घटना अद्भुत रीतिसे मनुष्य जातिकी एकता को सिद्ध करती है। सब लोगोंको, यहांतक कि शासकवर्गको भी इसका फल भोगना होगा। इसके बदौलत सरकार अकड जायगी, पुलिस और अन्धाधुन्धी मचावेगी, और इनसे लोगोंको कष्ट और दुःख होगा उससे वे अधिकाधिक कर्तव्यभ्रष्ट होंगे। कानून-भग स्थगित कर देने तथा मेरे इस प्रायश्चित के कारण हम फिर उसी स्थिति को जा पहुंचेंगे जिसमे कि इस दुःखान्तक घटना के पहले हम थे। कडाईके साथ नियमोंके तथा मर्य्यादाके पालनसे एवं आत्म शुद्धिसे हमें उस नैतिक विश्वास की प्राप्ति होगी जिसके द्वारा हम इन नोटिसोंको रद्द करा सकेंगे और अपने देश-भाइयोंको जेलोंसे छुड़ा सकेगे।

इस शापान्तक घटनासे यदि हम पूरी पूरी नसीहत लेंगे तो हम इस शापको आशीर्वादके रूपमें परिणत कर सकेंगे। क्या भावना और क्या वृत्तिके द्वारा सत्यव्रत और अहिंसापरायण होते हुए, और स्वदेशी अर्थात् खादी प्रचार के कार्यक्रमको पूरा करते हुए हम बिना किसी एक भी आदमीके सविनय भंग किये स्वराज्य की स्थापना कर सकते हैं तथा खिलाफत और पञ्जाब के दुःखोंको निवारण कर सकते हैं।

"मेरी इज्जत चली गई"

(फरवरी २६, १६२२)

लाहौर से एक सज्जनने एक गुमनाम पत्र भेजा है, जिसको पढ़कर मानो दिल दहल उठता है। वे लिखते हैं कि सविनय भङ्ग मुल्तवी होनेकी खबर पाते ही एक मित्रने मुझसे कहा कि महात्माजी इस आन्दोलनसे अलग हो जाना चाहते हैं। उन्होंने प्रान्तिक समितियों को सलाह दी है कि आगे स्वयंसेवकों की भरती न की जाय। पहरा रखना भी तबतक बन्द कर दिया जाय जबतक महासमिति कोई निर्णय न कर दे। लोगों की यह राय है कि अब आपने अपना मुंह मोड़ लिया है। आपका चित्त डावाडोल हो गया है। अब वे बिना हिचकिचाहट के सरकार के साथ सहयोग करेंगे और शाहजादे के स्वागत समारम्भोंमें शरीक होंगे। कुछ लोग तो कहते हैं कि हम हड़ताल भी नहीं करेंगे और दिल के साथ लाहौरमें शाहजादे का स्वागत करेंगे। कुछ व्यापारियों का यह खयाल हो गया है कि आपने शराब की दुकानों तथा विदेशी कपड़ों की तमाम कैदें उठा ली हैं। सच कहें तो लाहौर में तमाम लोग बाजारोंमें और अपने अपने घरोंमें एकत्र हो हो कर चर्चा कर रहे हैं और वे महासमिति के इस निर्णय की निन्दा कर रहे हैं। इस सम्बन्धमें मैं आपसे नीचे लिखे सवाल पूछता हूं—

(१) क्या आप इस आन्दोलनका नेतृत्व छोड़ देंगे ? यदि हां, तो क्यों ?

(२) कृपया बताइये कि आपने तमाम प्रान्तीय समितियोंको ऐसी सूचनायें क्यों दी हैं? क्या आपने श्री मालवीय जी को सर्वपक्षीय परिषद् के लिये यह मौका दिया है, जिससे कोई निपटारा हो जाय या पण्डित जी इस बात पर तैयार हो गये हैं कि यदि सरकार अपना वचन पूरा न करे, तो वे इस आन्दोलन में शामिल हो जायंगे ?

(३) मान लीजिए कि कोई ऐसा समझौता होता हो कि पञ्जाब और खिलाफत के दुःख दूर कर दिये जाय और स्वराज्यके सम्बन्ध में सरकार सिर्फ और अधिक शासन-सुधार कर दे तो क्या इससे आप सन्तुष्ट हो जायेंगे अथवा जबतक पूरा औपनिवेशिक स्वराज्य न मिले, आप अपनी हलचलें जारी रखेंगे ?

(४) फर्ज कीजिये, कोई फैसला न हो पाया। तो क्या श्री मालवीय जी तथा दूसरे तमाम सज्जन जो इस परिषद्से सम्बन्ध रखते हों, आपके पक्ष में मिल जायंगे या इसी तरह बीच में रुके रहेंगे ?

(५) यदि कोई फैसला न हो पाया तो क्या आप, यदि हिंसाकाण्ड का भय हो तो सविनय भङ्गका खयाल छोड देंगे ?

(६) क्या अब आपका यह इरादा है कि स्वयं सेवक सेना

तोड दी जाय और सिर्फ वही लोग भरती किये जायं जो सूत कातना जानते हों और हाथ-कती तथा हाथ-बुनी खादी पहनते हों।

(७) कल्पना कीजिए कि आपके सविनय भङ्ग शुरू कर देने पर कहीं हिंसाकाण्ड का उद्रेक हो गया, तो उस समय आप क्या करेंगे ? क्या आप उसी दम अपनी हलचल बन्द कर देंगे' ?

इस पत्र में इससे भी बहुत अधिक आलोचना की गई है। पत्र लेखक महाशय कहते हैं कि लोग इतने दिक हो गये हैं कि अब वे सहयोगी होने की धमकी देते हैं और यह खयाल करते हैं कि मैंने लाला लाजपतराय, देशबन्धु चित्तरञ्जन दास, पण्डित मोतीलाल नेहरू और अली बन्धु आदिको बेच डाला है और यदि मैं नेतापन छोड दूंगा तो हजारों आदमी आत्महत्या कर डालेंगे। सो मैं खास तौर पर लाहोर के और आम तौर पर पञ्जाब के लोगों को यह यकीन दिलाता हूं कि मैं उस पर भरोसा नहीं करता हूं जो कि उनके विषय मे कहा गया है। फौजी कानून के जमाने में भी, सविनय भङ्ग बन्द कर देने के कारण, मेरे पास ऐसे ही पत्र आया करते थे; पर मैं उन तमाम खबरों के बहुत थोडे अंशको सच मानता रहा और जब अक्तूबर मे मैं पञ्जाब पहुंचा तो मैंने देखा कि पञ्जाब के लोगों की चित्त वृत्ति का जो अनुमान मैंने किया था वह ठीक था और मुझे मालूम हुआ कि मेरे उस कार्यके औचित्यपर किसीने सवाल

खुद पहले ही से ऐसा निश्चय कर लिया है, पर कार्य समितिके सदस्योंसे भी इसकी पूरी चर्चा कर लेना चाहता हूं। सर्वपक्षीय परिषद् अथवा किसी निपटारेकी कोई बात इस वन्दीसे सम्बन्ध नहीं रखती। मेरी रायमें तो सर्वपक्षीय परिषद् निष्फल ही सिद्ध हो कर रहेगी। उसके लिये तो लार्ड रीडिङ्ग से बहुत ज्यादा मजबूत दिल के वाइसरायकी जरूरत है, जो स्थिति को अच्छी तरह समझ सके और उसे ठीक ठीक प्रगट कर सके। मैं तो अवश्य ही यह अनुभव करता हूं कि श्री मालवीयजी पहले ही से इस आन्दोलनमें शामिल हो गये हैं। उनके लिये अपने को महासभा से अथवा खतरे से दूर रखना सम्भवनीय नहीं है, परन्तु बारडोलीका निर्णय तो इस नवीन परिस्थितिका ही फल है और यदि चौरी चौरा की इस दुर्घटनाने जिसने कि पूर्णाहुति का काम किया है, मेरी हिम्मत पस्त न की होती तो मैं अपने पहले विचार से कभी नहीं डिगता।

(३) खुद मुझे तो पूर्ण औपनिवेशिक स्वराज्य से जरा भी कम में सन्तोष नहीं हो सकता। और यदि खिलाफत और पञ्जाब के अन्यायोंका परिमार्जन नहीं किया गया तो पूर्ण सम्बन्धविच्छेद से कम में मैं सन्तुष्ट नहीं हो सकता। लेकिन उसका यथार्थ स्वरूप मुझ पर अवलम्बित नहीं है। मैंने कोई पूर्ण और निश्चित योजना नहीं तैयारकी है। वह तो जनता के प्रतिनिधियों के द्वारा तैयार की जायगी।

(४) इस वर्तमान अवस्था में तो निपटारे का कोई सवाल

ही नहीं है। अतएव यह सवाल कि पण्डित जी अथवा दूसरे सज्जन क्या करेंगे, यदि प्रसग विरुद्ध नहीं तो समयके पहले अवश्य किया गया है। पर मान लीजिए कि पण्डित जी ने ऐसी किसी परिषद् की आयोजना की और उनके प्रस्ताव पर सरकार ने ध्यान न दिया तो पण्डित जी तथा दूसरे सज्जन ऐसा ही कार्य करेंगे जैसा कि ऐसी स्थिति में स्वाभिमानी पुरुष करते हैं।

(५) मैं सविनय भग का ख्याल तो नहीं छोड सकता फिर हिंसाकाण्ड का चाहे कितना ही खतरा क्यों न हो, पर जबतक हिंसा काण्ड का भय निश्चित रूप से है तबतक सविनय भग शुरू करने का ख्याल अलबत्ते मैं छोड दूंगा।

(६) किसी भी स्वयसेवक दल को तोड देने की कोई बात नहीं है। हा जो लोग महासभाकी निश्चित प्रतिज्ञाका पालन नही करते हैं उनके नाम अवश्य ही निकाल दिये जाय। तभी हम प्रामाणिक बने रह सकते हैं।

(७) यदि हम अहिंसा के परम आवश्यक अगों को अच्छी तरह समझ गये हों तो हम सिर्फ एक ही नतीजे पर पहुच सकते हैं। वह यह कि यदि कहीं भी व्यापक हिंसाकाण्ड हो— और मैं इसीलिए चौरीचौरा की दुर्घटना को व्यापक कहता हू— तो सामूहिक सविनय भङ्ग अपने आप बन्द हो जायगा। हा, देशके दूसरे कितने ही भागोंने अहिंसाके रहस्य को समझ लिया है, पर यह इतना काफी नहीं है कि सामुदायिक भग जारी रह सके। क्योंकि यदि एक आदमी भी उपद्रव खडा कर दे या

हिंसा कार्य कर बैठे तो सारी अत्यन्त शान्तिमय सभा में गोलमाल हो उठता है। यही हाल सामुदायिक भंग का है। वह तभी सफल हो सकता है जब चारोंओर पूर्ण शान्तिमय वायुमडल हो। एक ही छोटे से स्थान में उसे शुरू करनेका कारण यही है कि जिससे दूसरी किसी जगह हिंसाका उद्रेक न होने पावे। अतएव, इससे यही अर्थ निकलता है कि किसी विशेष स्थानमें सामूहिक भग उसी दशामें सम्भवनीय है जब दूसरे तमाम स्थानोंके लोग पूर्ण शातिमय बने रहें और इस तरह निष्क्रिय रूप से उसके साथ सहयोग करें।

महा-समिति

(मार्च ५, १९२२)

देहलीमें उस दिन महासमितिकी बैठक हो गई। कुछ बातोंमें तो वह खुद महासभासे भी बढ़कर याद रखने लायक हुई। देशमें भीतर ही भीतर ज्ञानत और अज्ञानत, इतना हिंसाका प्रवाह बह रहा है कि मैं वास्तवमें ईश्वरसे यह प्रार्थना कर रहा था कि इस बार मेरी गहरी हार हो जाय। मेरे साथ हमेशा ही बहुत थोड़े लोग रहे हैं। पाठक इस बातको नहीं जानते हैं कि दक्षिण अफ्रीकामें जब मैंने लडाई छेडी, सब लोग मुझसे सहमत थे, पर पीछे केवल ६४ आदमी

और आगे चलकर तो अकेले १६ सज्जन मेरे साथ रह गये, पर फिर भी बहुमत मेरी ओर हो गया। उन्हीं दिनोंमें जब कि अल्प मत मेरी तरफ था, अच्छेसे अच्छा और पुख्ता काम वहा हो पाया था।

सरकार अगर किसी बातसे डरती है तो इसी बड़े भारी बहुमतसे जो मेरी ओर दिखाई देता है। पर शायद वह नहीं जानती कि मैं तो उससे भी अधिक इस बहुमतसे डरता हू। झुण्डके झुण्ड लोग बिना सोचे विचारे जहा मैं जाता हूं वहां उमड पडते हैं। मैं तो इससे सचमुच तङ्ग हो गया हू। अच्छा होता यदि वे लोग मुझे छी थू! कर दिया करते इससे मुझे अपनी स्थितिका तो निश्चय हो जाता। उस अवस्थामें न तो हिमालयके जैसी अथवा दूसरी गलत अन्दाजी कुबूल करनेकी आवश्यकता पडती, न पीछे कदम हटाना पड़ते, न फिरसे व्यवस्था करनी पडती।

परन्तु होनहार ऐसा नही था।

एक मित्रने मुझे सावधान किया कि कहीं आप अपने 'सर्वाधिकारीपन' का दुरुपयोग न कर बैठियेगा। पर वे नहीं जानते हैं कि मैंने उस अधिकारका उपयोग आजतक नहीं किया है, क्योंकि उसके उपयोग करनेका बाकायदा मौका ही अबतक पेश नहीं आया। इस 'सर्वाधिकारीपन' का उपयोग तो सिर्फ उस समय किया जा सकता है जब सरकार

की ओरसे महासभाके हाथ पांव तोड दिये जाय और वह बेकार कर दी जाय।

पर अपने 'सर्वाधिकारोपन' का दुरुपयोग करना तो दूर रहा, मुझे तो आश्चर्य होता है कि कहीं मेरे अनजानमें खुद मेरा ही 'दुरुपयोग' न किया जा रहा हो। मुझे अब इस बातका इतना डर मालूम होने लगा है जितना पहले कभी नहीं हुआ था। पर मेरी ढाल तो सिर्फ मेरी निर्लज्जता है। मैंने महा-समितिवाले मित्रोंको जता जता कर कह दिया है कि मुझे एक खास बीमारी है। उसका कोई इलाज नहीं। वह यह कि जब जब लोगोंसे भूल होगी तब तब उसे कबूल किये बिना मुझसे नहीं रहा जाता। मैं इस दुनियामें अगर किसी जालिमके आगे सिर झुकाता हूं तो वह है 'अपना अन्तर नाद'। और यद्यपि मेरा साथ देनेवालोंकी संख्या घटते घटते मेरे अकेले ही रह जानेकी सम्भावना हो तो भी मुझे विश्वास है कि उस अवस्थामें भी रह सकनेका साहस मुझमें है। मेरे लिये तो सत्य स्थिति केवल यही हो सकती है।

पर आज मैं पहलेसे अधिक दुखी और, मैं समझता हूं अधिक समझदार हूं। मैं देखता हूं कि हमारी अहिंसा ऊपरी है। हम मारे क्रोधके जल रहे हैं। सरकार अपने नादान कृत्योंके द्वारा उसमें घी डालनेका काम कर रही है, प्राय ऐसा मालूम होता है कि सरकार भारत भूमिको खूनसे लथपथ, आगकी ज्वालाओंसे भभकती हुई और लूट मारसे

सन्त्रस्त देखना चाहती है जिससे कि उसे लोगोंको दबा डाल-नेकी अपनी पूरी और केवल अपनी ही योग्यताका दावा करनेका फिर मौका मिले।

अतएव ऐसा मालूम होता है कि हम केवल असहाय अवस्थाके कारण अहिंसाको अपना रहे हे। प्राय ऐसा दिखाई देता हे कि हम अपने दिलोंमें इस अभिलाषाको स्थान दे रहे हैं कि मौका मिलते ही सबसे पहले बदला निकाले'।

क्या इस निर्बलकी जबरदस्ती मानी जाने वाली और दिखाऊ अहिसाके अन्दरसे सची और स्वेच्छा पूर्वक अहिंसा उत्पन्न हो सकती है? तो क्या वह प्रयाग जिसे मैं कर रहा हूं बेकार नहीं है? यदि लोग कोपसे आग बबूला हो उठे, किसी भी स्त्री, पुरुष और बालककी जान महफूज न हो और एक भाईका हाथ दूसरे भाईकी गर्दनपर उठने लगे, तो क्या हो? ऐसी आफत खडी हो जानेपर यदि मैं उपवास करते करते मर भी जाऊ तो उससे क्या लाभ होगा?

ता इसका उपाय क्या है? झूठ बोलना और उस बातको अच्छा कहना जिसे मैं बुराई समझू? यह कहना कि बना-वटी और जबरदस्तीके सहयोगके अन्दरसे सच्चा और स्वेच्छा पूर्वक सहयोग पैदा होगा, ऐसा कहनेके बराबर है कि अंधेरेमेंसे प्रकाश उत्पन्न होगा।

सरकारसे असहयोग करना उतनी ही दुर्बलता और उतना

ही पाप है जितना कि व्यवहार नियमके तौरपर स्थगित रखी गई हिंसाको अपनाना।

यह कठिनाई तो ऐसी है जिसको पार करना असम्भव है। ऐसी दशामें ज्यों ज्यों इस बातका ज्ञान बढ़ता जाता है कि यह अहिंसा तो केवल दिखाऊ है त्यों त्यों मुझसे बराबर गलतियां होंगी और मुझे बार बार पीछे लौटना होगा, जैसे कि कोई मनुष्य ऐसे जङ्गलसे जहां रास्तेका पता नहीं है, अपना रास्ता खोजते हुये ठहरता जाता है, पीछे हटता जाता है, ठोंकरें खाता जाताहै, उसके पैर छिल जाते हैं और खून भी बहने लगता है।

मैंने सोचा था कि हां, लोग थोड़े बहुत उत्साह हीन, निराश और नाराज होंगे, पर इतने भीषण विरोधका तो मैंने अनुमान भी नहीं किया था। यह साफ साफ मालूम हो गया कि कार्यकर्ता लोग कोई भी गम्भीर विधायक कार्य करनेको तैयार नहीं थे। विधायक कार्यक्रम उनको चित्ताकर्षक न मालूम हुआ। वे समझते थे कि हम सामाजिक सुधारके किसी सङ्घमें थोड़े ही हैं। वे इस मनहूस सामाजिक सुधारके द्वारा सरकारसे सत्ता नहीं छीन सकते थे। वे तो 'अहिंसामय' घूंसा जमाना चाहते थे! यह सब बहुत थोथा मालूम होता था। वे इस बातको सोचना भी नहीं चाहते थे कि हम इस प्रकार बच्चोंकी तरह गुस्सा दिखाकर चाहे सरकारको परास्त भले ही कर दें, पर बिना गम्भीरता और

परिश्रमके साथ सङ्गठन और विधायक कार्य किये देशका शासन सचालन एक दिनके लिये भी नहीं कर सकते।

हमें जलोंमें जैसा कि मौ० महम्मद अली कहा करते थे 'गलत खयाल बनाकर' न जाना चाहिये। इस तरहसे जेल जानेसे स्वराज्य नहीं मिल सकता। हरबारके कानून भंगसे भी हममें आज्ञा पालन और मर्यादा पालनकी भावना नहीं उद्दीप्त हो सकती। पक्के मुजरिमोंके लिये जेल 'स्वाधीनताका द्वार' नहीं है। वे तो केवल निर्दोष मूर्तिके ही लिये 'स्वतन्त्रताके मन्दिर' हैं। सुकरातकी फासीने हमारे लिये अमरताको प्रत्यक्ष प्रमाणित कर दिया। पर यों तो आज तक अगणित खूनी फासी पर लटक चुके। भला कहीं हम ऐसे हजारों लोगोंको जो नाममात्रके लिये शातिपरायण हैं पर जिनके दिलोंमें तो द्वेष, वैर, और अहिसा भाव भरे हुए हैं, जेल भेजकर स्वराज्यको चुरा सकते हैं?

हा, यदि हम शस्त्र लेकर लडते होते और प्रहार करते तथा प्रहार सहते होते तो बात दूसरी थी। डरा धमकाकर, हमला कर और खून करके जेल जानेसे अवश्य ही सरकार परेशान होगी। और जब वह थक जायगी तब सिर भी झुका देगी, जैसा कि दूसरी जगह उसने किया है। पर आज जो लडाई हम लड रहे हैं वह तो ऐसी नहीं है। हमें तो सत्य-पर अटल रहना चाहिये। पर यदि स्वराज्य 'बल दिखाने' से आ सकता है तो हमें 'अहिंसा' का त्याग कर देना चाहिये

ौर हम जैसा बन पड़े वैसा हिंसाकाण्ड मचावें । तब तो
ह हमारा कार्य पुरुषोचित प्रामाणिक और विचार पूर्ण होगा
सा कि ससारमें आजतक होता चला आया है। उस अव
ामें हमपर कोई ढोंग और पाखण्डका भीषण इल्जाम
ो नहीं लगा सकता।

लेकिन अधिकांश लोगोंने मेरी बातको न सुना। मैंने उन्हें
ब सावधान किया, सच्चे दिलसे कहा कि यदि आप अपने
ध्येयकी प्राप्तिके लिये 'अहिंसा' को अनिवार्य न मानते हों तो
रे प्रस्तावको नामजूर कर दीजिये । तिसपर भी उन्होंने
समें कोई सुधार किये विना ही उसे स्वीकार किया है।
ो मैं कहता हूं कि उन्हें अपनी जवाबदेहीको पहचान लेना
ाहिये। वे घर जाते ही सविनय भग शुरू करनेके लिये बँधे
ए नहीं हैं। बल्कि उन्हें चुपचाप विधायक काममें लग जाना
चित है। मैं उनसे आग्रह करता हू कि आप फौरन काम
रनेके कोहरामकी ओर ध्यान न दें। अभी जो काम करना
वह जेल जाना नहीं, और न भाषण लेखन और सम्मेलन
ातन्त्र्य ही है, बलिक क्या है? आत्म शुद्धि आत्म निरीक्षण
ुपचाप संगठन। हमारे पाल छूट गये हैं। यदि हम इसकी
चिन्ता न करेंगे तो हम इस अगाध सागरमें न जाने कहां जा
कर डूब जायगे।

जेल स्थित देश सेवकोंको चिन्ता करनेसे कोई लाभ नहीं।
ैंने तो ज्योंही चौरीचौराका हाल सुना, कुछ समयके लिये

उन्हे अपनी उद्देश सिद्धिपर न्योछावर कर दिया। मैंने इसे सबसे पहला प्रायश्चित माना। वे जेलमें इसलिये गये हैं कि जनताके सामर्थ्यसे छूटें। निस्सन्देह वे इसी आशासे गये हैं कि स्वराज्य पार्लियामेंटका पहला काम होगा जेलोंके फाटक खोलना। किंतु परमात्माने कुछ और ही ठान रखा था। हम बाहर रह जानेवालोंने कोशिश तो की, लेकिन नाकामयाब हुए। अब तो उन्हें पूरी सजा भोगनेसे ही लाभ होगा। जो लोग भूलसे, भ्रमसे अथवा इस आन्दोलनके सम्बन्धमें किसी गलत ख्यालसे जेल चले गये हों वे माफी मांगकर या दरख्वास्त देकर रिहा हो सकते हैं। इस जुलाबसे इस आन्दोलनका बल ही बढ़ेगा, घटेगा नहीं। जिन लोगोंका दिल मजबूत हैं वे तो अनायास प्राप्त अधिक कष्ट सहनेसे आनन्दित ही होंगे। हजारों रूसी कैदी बरसोंसे रूसके जेलखानोंमें आजतक सड़ रहे हैं। बेचारे आजतक आजाद नहीं हो पाये। स्वाधीनता बड़ी मानिनी है। उसे राजी और प्रसन्न कर लेना बड़ा ही कठिन है। हमने कष्ट सहनके सामर्थ्यका तो परिचय दे दिया है। पर हमने अभी काफी कष्ट सहन नहीं किया है। यदि आमतौरपर लोग अप्रत्यक्ष रूपसे शान्त बने रहे और कुछ थोड़े ही लोग प्रत्यक्ष रूपसे सच्चाईके साथ जानते बूझते हुए मन, वचन और काया से शान्तिमय बने रहें तो हम जल्दीसे जल्दी और कमसे कम कष्ट सहन करते हुए अपने ध्येय तक पहुंच सकते हैं। परन्तु यदि हम ऐसे लोगोंको जेल भेजेंगे जो अपने दिलोंमें हिंसाको

अपनाये हों तो हम अपने ध्येयसे न जाने कबतक दूर ही दूर रहते रहेंगे।

अतएव बहुमतवालोंका अब यह कर्तव्य है कि वे अपने अपने प्रान्तोंमें लागोंके ताने उलहनेका ख्याल न करें अपमानको सहन करें और साथी लोग छोड़कर चले जायं तो उसे भी बरदाश्त करें पर सत्य मार्गसे एक इञ्च भी न हटते हुए निश्चय के साथ अपने लक्ष्यको ओर बढ़ते चले जायं। नौकरशाही भूलसे इसे हमारी कमजोरी समझकर चाहे भले ही हमें आर अधिक पीड़ित क्यों न करे हमे उसे सहना चाहि। यहा तक कि हमें बचावके लड़ाका सविनय भग भी छोड देना चाहिये और आर्थिक तथा सामाजिक सुधारमें अपनी सारी शक्ति लगा देना चाहिये। यह सुधार कार्य चाहे अरुचिकर हो पर है बलिदायी। हमें अत्यन्त विनय पूर्वक अपने नरम दलवाले भाइयोंको यकीन दिला देना चाहिये कि वे हमसे जरा भी भय न खाय, हमसे उन्हें जरा भी नुकसान न पहुचेगा। हमें जमींदार भाइयोंको भी निश्चय दिला देना चाहिये कि हमारे दिलमें आपके लिये जरा भी बदी नही है।

औसत दर्जेके अङ्गरेज घमण्डी होते हैं। वे हमको नहीं पहचानते। वे अपनेको उच्च और श्रेष्ठ जीव मानते हैं। वे समझते हैं कि हम भारतवासियोंपर राज्य करनेके लिये पैदा हुए हैं। उनको अपने किलों और तोपोंका भरोसा है उन्हींको वे अपनी रक्षाका साधन मानते हैं। वे हमको तुच्छ समझते

हैं वे हमसे जबर्दस्ती सहयोग अर्थात् गुलामी कराना चाहते हैं। उन्हें भी हमें जीतना है पर उनके आगे घुटने टेककर नहीं बल्कि उनसे अलग रहकर परन्तु साथ ही न तो उनसे द्वेष करते हुए और न उन्हें हानि पहुचाते हुए । उन्हें दिक करना सताना कायरता है। चूहेकी खैर तो बिल्लीसे दूर रहनेमें है। उस समयतक जब बिल्ली उसे अपने पंजे और दांतोंमें धर न दबा ले चूहा उसके साथ रही नहीं सकता इसके साथ ही हमें उन अङ्गरेज भाइयोंका ख्याल रखना चाहिये जो जाति अभिमानके रोगसे खुद अपनी तथा अपने अङ्गरेज भाइयोंकी मुक्ति करना चाहते हैं।

अल्पमतवालोंका आदर्श दूसरा है। उन्हें इस कार्यक्रममें विश्वास नहीं है। क्या उनके लिये यह उचित और देशभक्तिकी बात नहीं है कि वे एक नये दल और नवीन सगठनकी सृष्टि करे ? उसी अवस्थामें वे देशको वास्तवमें अपने मतकी शिक्षा देसकते हैं। जिन्हें महासभाके ध्येयमें विश्वास न हो उन्हें अवश्य ही महासभासे अलग हो जाना चाहिये। राष्ट्रीय सस्था का भी कोई ध्येय तो होना चाहिये। उदाहरणके लिये जो स्वराज्यका कायल नहीं है उसके लिये महासभामें जगह नहीं। उसी तरह जो *शान्तिमय और जायज तरीकों* को नहीं मानता वह भी महासभामें नहीं रह सकता। महासभावादी असहयोगका कायल न होते हुए तो उसके अन्दर रह सकता है, परन्तु हिंसा और असत्यको मानते हुए वह महासभावादी

अपनाये हों तो हम अपने ध्येयसे न जाने कबतक दूर ही दूर रहते रहेंगे।

अतएव बहुमतवालोंका अब यह कर्तव्य है कि वे अपने अपने प्रान्तोंमें लोगोंके ताने उलहनेका ख्याल न करें अपमानको सहन करें और साथी लोग छोड़कर चले जायं तो उसे भी बरदास्त करें पर सत्य मार्गसे एक इञ्च भी न हटते हुए निश्चय के साथ अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ते चले जायं। नौकरशाही भूलसे इसे हमारी कमजोरी समझकर चाहे भले ही हमें और अधिक पीडित क्यों न करे हमे उसे सहना चाहिए। यहां तक कि हमें बचावके स्वरूपका सविनय भग भी छोड़ देना चाहिये और आर्थिक तथा सामाजिक सुधारमें अपनी सारी शक्ति लगा देना चाहिये। यह सुधार कार्य चाहे अरुचिकर हो पर है बलिदायी। हमें अत्यन्त विनय पूर्वक अपने नरम दलवाले भाइयोंको यकीन दिला देना चाहिये कि वे हमसे जरा भी भय न खायं, हमसे उन्हें जरा भी नुकसान न पहुचेगा। हमें जमींदार भाइयोंको भी निश्चय दिला देना चाहिये कि हमारे दिलमें आपके लिये जरा भी बदी नहीं है।

अलग अलग काम करें? क्या इससे देशके समय शक्ति आदिकी बचत न होगी? उस अवस्थामें जो आदर्श अधिकसे अधिक लोकप्रिय होगा उसका बोलबाला अपने आप होगा। यदि हम प्रजासत्ताके सच्चे भावोंका विकास चाहते हों तो हम बाधक नीतिके द्वारा नहीं, बल्कि अलग रहनेकी नीतिके ही द्वारा ऐसा कर सकते हैं।

महासमितिकी यह बैठक इस बातका जबरदस्त उदाहरण था कि सरकार नहीं, बल्कि हमी देशके स्वराज्यतक पहुंचनेमें विलम्ब कर रहे हैं। सरकारकी हरएक गलतीसे हमें सहायता मिलती है। पर जब हम अपने कर्तव्यकी अवहेलना करते हैं तभी उससे हमारी प्रगति रुकती है।

स्वराज्य जल्दी किस तरह आये ?



श्री गांधीजीने "नवजीवन" में बारडोली और आनन्द तहसीलके लोगोंके नाम एक पत्र लिखा है उसका कुछ अंश यहां दिया जाता है —मैं जानता हूं कि आपके दुःखकी सीमा नहीं रही। आपने बड़ी आशा की थी। आपने इसी वर्ष अपनी यज्ञ कुरबानी-के द्वारा स्वाराज्य प्राप्त करनेका, मुसलमान भाइयोंके और पञ्जाबके घावोंको सुखानेका और अली भाई इत्यादि कैदियोंको छुड़ानेका जुम्मा लिया था।

पर ईश्वरने कुछ और ही सोचा था। सच कहा है कि 'मनुष्य यदि कुछ निर्माण कर सके तो संसारमें कोई दुखी न रहे'। हममें निर्माण करनेकी शक्ति ही नहीं। हमें तो इच्छा करनी चाहिए और उसके लिए परिश्रम करना चाहिये। जब श्रीरामचन्द्र जैसेको राजगद्दी मिलनेके समय वनोवास मिला तो फिर हमारी क्या कथा ? कुछ बिगड़ नहीं गया है। हम बाजी हार नहीं गये हैं। हम तो दुखमेंसे सुख पैदा कर सके हैं। अशान्ति हो गई थी, परन्तु ऐसा मालूम होता है कि उसमेंसे हमने शान्ति हस्तगत कर ली है। ईश्वरने छोटा सा दुःख देकर हमें बड़े दुखसे बचा लिया है।

आपसे मैं शुद्ध यज्ञकी इच्छा करता हूं। ईश्वरके दरबारमें

शुद्ध बलिदान ही मंजूर होता है बिना मांगे जो अवसर हाथ लगा है उसमें अपने तमाम ऐबोंको ढूढ २ कर निकाल दो। सब चर्खा धर्मका खूब पालन करो। ऐसी तजवीज करो कि हर घर घरमें अच्छा, मजबूत, बिना गर्दका सूत रोज कते, कोई भूखों न मरे, किसीके घरमें विदेशी कपड़ेका मैल न रहे। मेरे बताये नकशेकी खानापुरी करके तैयार करो।

अगर किसीके जबरदस्ती कपड़े छीने हों तो उससे माफी मागो। सहयोगियोंके प्रति मनमें जरा गुस्सा न रखो। उनके दुःखोंमें उनकी सेवा करो। सरकारी कर्मचारियोंकी खुशामद न करो। पर उनसे डरो भी नहीं। पुलिसका डर छोड दो। उन्हें भी अपना भाई समझकर उनपर प्रेम करो अब भी अगर आपके लडके लडकी सरकारी मदर्सोंमें जाते हों तो उन्हे उठा लो। और असहयोगको बढाते हुए बल प्रयोग न करो। आपके गावमें अगर एक सहयोगी हो तो उसके साथ वैर भाव न रखो, बल्कि यह समझो कि हमें अपने मत रखनेका जितना हक है उतना ही उन्हें भी अपने मत रखनेका है।

आपके गावोंमें आपसमें दुश्मनी हो तो हटा दो। सत्याग्रही गावोंमें वैर भावके लिये जगह है नहीं। आपके मनमें अगर भङ्गी, चमारोंके प्रति तिरस्कारकी भावना रही हो तो उसे निकाल दो। उनके लडकोंको अपने मदर्सोंमें प्रेमके साथ रखो,

बुलाओ। उनके रहनेके स्थानोंकी देख भाल करो। पानी आदिकी सुविधा न हो तो करो, उन्हे जूठनकी भिक्षा न दो., पर उसके बदले या तो वेतन बढ़ा दो या कच्चा अथवा पका हुआ अन्न दिया करो।

आपके गावमें जो लोग शराब पीते हो, उन्हें प्रेमपूर्वक कह सुनकर समझा-बुझाकर, इस बुरी आदतसे छुडाओ। न मानें तो भले ही पिया करें। शराबकी दूकान हो तो दूकानदारको भी नम्रतापूर्वक समझाओ। उसपर रोष न करो। उसपर रहम करो। आपके गावमें कोई बदमाश, उपद्रवी या चोर डाकू रहता हो तो उससे न तो खुद डरो और न उसे डराओ। उसे भी अपना भाई समझकर मिलो और उसे उसकी हालत समझाकर उसकी आदत छुडाओ। ऐसे चोर डाकुओंके दिल को बदलनेका प्रयत करो और साथ ही उसके जोर जुल्मसे बचने और अपने बाल बच्चेको बचाने, तथा अपने धन मालकी रक्षा करनेकी शक्ति प्राप्त करो। यह शक्ति प्राप्त करनेके लिये आप अपने ही चौकीदार रक्खें। उन्हे चोरोंके साथ लड़नेकी जरूरत न पडे। चौकी होनेपर चोर नहीं आ सकते। तो भी सम्भव है कि कोई हाथ मार जाय। तो उससे निडर रहना चाहिये। अपनी तहसालके बदमाश लोगोंका हाल आपको अवश्य मालूम होना चाहिये।

आप निश्चय रखिये यदि असहयोगी सच्चे हो जाय, उनमे प्रेम उत्पन्न हो जाय तो सब लोग उस प्रेमके वशमें अवश्य हो

जाय गे। मैं प्रतिज्ञा करके कहता हू कि जो आपकी दोनों तहसीलें असहयोगके समस्त अङ्गोंका सर्वांशमें अब भी पालन कर सकें तो इसी वर्षमें स्वराज्य लाजिए। और अगर आप सोचें तो यह जरा भी कठिन नहीं। अगर आप सब लोगोंके दिलपर चोट पहुंची हो तो यह बिलकुल आसान है। अगर आप बिना समझे और द्वेष भावसे काम कर रहे होंगे तो फिर कठिन है।

मैं कितनी ही बार कह चुका हू कि असहयोगका मूल प्रेम है, वैर नहीं। आत्म बल प्रेम बल है। और जगत इस बलके अधीन है। आपको अपने बलसे भारतको मुक्त करना हो तो आप प्रेम बरसाओ। आपको पर दुःख भंजन कहलाना हो तो आपके अन्दर सहनशीलता, धैर्य, सत्य इत्यादि मूर्त्तिमान होना चाहिये। केवल दिखानेसे स्वराज्य नहीं मिलनेका।

बम्बईमें जो खराबी दिखाई दी उसके रहते हुए भी अगर आपको इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना है तो आपको जितनी है उससे अधिक आत्मशुद्धि करनी पड़ेगी। अर्थात् आपको सच्चा हिन्दू, सच्चा मुसलमान सच्चा पारसी और सच्चा ईसाई होना पड़ेगा।

कहीं भूल न जाना। अपने यहांके पारसियों और ईसाइयोंसे मिलना। उन्हें अपने प्रेमके बलपर निर्भय कर देना। मेरी आशा आप न छोड़ना। और ऐसा जरूर करना जिससे मुझे आपकी आशा न छोड़नी पड़े।

हृदयका सुधार—

जिस सुधारकी मुझे जरूरत है, जिस सुधारसे आनन्द—बारडोली विजय प्राप्त कर सकते हैं, वह सुधार यदि ऊपरी होगा तो व्यर्थ जायगा। वह अन्दर पैठना चाहिये। लोगों का हृदय बदल जाना चाहिये। भीतियुक्त शान्तिका स्वाग नहीं, बल्कि ज्ञानपूर्वक उसका पालन होना चाहिये। खादीका दिखावा नहीं, बल्कि उसका शौक पैदा होना चाहिए। चर्खेकी पूजा नहीं, बल्कि हर घरमें धर्म मान कर उसका उपयोग होना चाहिये। तभी हमारी जीत होगी। मनमें गुलामीका सेवन करते रहेंगे तो स्वतन्त्रता कभी नहीं मिलने की।

अनोखी लड़ाई—

यह सत्याग्रहकी अर्थात् सत्यके आग्रहकी कसौटी है। जगतमें किसी राष्ट्रने आजतक सत्यका दावा करके स्वतन्त्रता नहीं प्राप्त की है। जिस तरह बन पड़ा उसी तरह स्वतन्त्रता, नहीं दूसरोंपर अपनी सत्ता, प्राप्त कर ली है। इङ्गलैण्ड स्वतन्त्र नहीं। वह तो सत्यवान है। उसने हमें गुलाम बनाया है। गुलामको अपना मालिक स्वतन्त्रसा ही मालूम होता है और वह गुलाम भी उसीके जैसा होनेका प्रयत्न करता है अर्थात् दूसरों को गुलाम बनानेमें दिलचस्पी लेता है। यह गुलाम स्वतन्त्र नहीं हो सकता। बल्कि हमेशा अपनेसे जबरदस्तका गुलाम बनता है।

सत्यका अर्थ सत्य—

लेकिन मैं पाठकोंको इतना गहरा नहीं ले जाना चाहता। जैसे हो वैसे ही स्वतन्त्रता सत्याग्रहके द्वारा प्राप्त करनेका बीड़ा हमने उठाया है। अतएव बनावटसे तो वह मिलनेकी ही नहीं। और जो लोग बिना समझे अथवा समझते हुए कपटसे सत्याग्रहमें शामिल हुए होंगे, वे न तो खुद ही सन्तुष्ट रहेंगे न जनताको सन्तोष दे सकेंगे और अन्तको खाली हाथ नजर आवेंगे और रहेंगे।

क्या भङ्गी चमारोंका हृदयसे तो तिरस्कार करते हुए परन्तु उनसे छूनेका केवल ढोंग रचकर हम छुआछूतके पापसे मुक्त हो सकते हैं? जबतक हम अपने मनका मैल धोकर उन्हें अपने भाई बहिन न समझेंगे और उनके दुःखसे दुखी न होंगे तबतक हम आजाद ही नहीं हो सकते। क्योंकि तब हम आजादीके लायक ही न होंगे, वही लोग हमारी प्रगतिको रोकेंगे। बुखारके न होनेका स्वांग बनाकर शक्ति होनेका विश्वास दिलाकर मनुष्य कितने कदम चल सकेगा? यदि हम भयके कारण हिन्दू मुसलमानकी एकताका ढोंग बनाकर रहे होंगे तो हम आखिरी दम तक कभी साथ नहीं रह सकते। और सच्चे वक्तपर हमारे दिलका मैल ऊपर तैर आवेगा। पूरे कसौटीपर उतरे बिना स्वराज्य कैसे मिलेगा? शायद अंग्रेज अधिकारी धोखा खा भी जाय, परन्तु ऐसी हालतमें हिन्दू मुसलमान आपसमें ही लड़ पड़ेंगे। स्वराज्यका श्री गणेश ही

न कर सकेंगे। आरम्भमें ही एक दूसरेका द्वेष करने लगेंगे और डरने लगेंगे। अतएव यह मित्रता सच्ची होगी तभी हमारा कदम आगे बढ़ सकेगा।

हमारी स्थिति—

मैं स्वयम् स्वराज्य लेनेके लिये जितना अधीर हूं उतना ही धीरजवान भी हूं। और हर एक को यही सलाह देता हूं कि वे भी मुझ जैसे ही हो जायं। जो उपाय हमने निश्चित किये हैं यदि उनका अवलम्बन हम ठीक २ करें तो स्वराज्य प्राप्त करना सहल है। उन उपायोंके बिना इस वर्षमें तो क्या, पर इस जमाने भी, स्वराज्य प्राप्त करना मैं बिलकुल असम्भव मानता हूं।

हमारी स्थिति तमाम राष्ट्रोंसे विचित्र है यह बात हमें बरजबान याद कर रखना चाहिये। हमारी यह इतनी 'संख्या' ही हमारा बल है और यही हमारी निर्बलता भी है। किसी भी देशमें हिन्दुस्तानकी तरह ऐसे भिन्न २ धर्म नहीं हैं जो आज तक एक दूसरेको अपना दुश्मन मानते हैं। किसी भी देशका इतना बडा भाग शस्त्र विद्याका अनभ्यासी नहीं है। किसी भी देशमें हिन्दुस्तानके भङ्गी चमारोंकी तरह मनुष्य जातिका तिरस्कार नहीं किया जाता। अतएव हमारे देशके दुःख दर्दका इलाज भी जुदा ही होना चाहिये।

कहीं भूल न हो—

मैं चाहता हूं कि हिन्दुस्तान कहीं भूलमें न रहे। लकडी की तलवारसे हमारा काम नहीं सधनेका। सत्याग्रहकी तल-

धार फौलादकी तलवारसे भी अधिक मजबूत और तेज होती है यह लडकोंका खिलवाड नहीं बल्कि सच्चा खेल है। इसमें बनावटके लिये कहीं गुञ्जायश नहीं है। यदि हम सच्चे बन जाय गे तो इस वर्ष स्वराज्य पा ले गे। परन्तु स्वराज्य मिल जानेसे कहीं हमारा व्यवहार थोडा ही बदल जायगा ? हमारी कठिनाइया कम नहीं हो जाय गी। आज तो हमारा अधिकाश भाग लडनेमें अर्थात् चोटें खानेमें जाता है। परन्तु फिर तो हमें रचना करनी होगी, सूक्ष्म बातोंका निपटारा करना होगा, शासन कार्यका सचालन करना होगा। क्या तब हम छुआ छूतको फिरसे रायज कर दें गे ? तब हम खादी कम पहनें गे या अधिक पहनने लगें गे। तब हम चरखोंको जला डाले गे या अधिक चलाना पडे गे। क्या तब हिन्दू मुसलमानोंको और मुसलमान हिन्दूको तथा दोनों ईसाई पारसीको भूल जायंगे और ऐसे हो जाय गे कि मानो एक दूसरेको पहचानते ही नहीं ? क्या उस समय हमे शिक्षालयोंका सचालन छोड देना होगा। या आज सरकारी कही जानेवाली शिक्षा सस्थाओंका कभी काम चलाना पडेगा ? क्या तब हम अदालतोंमें इसी तरह जमघट लगाये रहेंगे या वकालतके तरीकेको बदलकर आजकी अदालतोंकी रचनामें मार्केके फेरबदल होंगे ? कोइ अपने दिलमें यह भरोसा तक न रखे कि फिर तो हमारे पास कार्यदक्ष मनुष्योंकी झडी लग जायगी। यदि आज उनका अभाव है तो उस समय और भी अभाव होगा। काम हमींको

चलाना होगा। उसका बीज तो हमने नागपुरमें ही बो दिया है और जैसा बोया है वैसा ही काटना होगा।

सालक बाद—

इसलिए जो हम ऐसा मानते हों कि दिसम्बरके बाद तो हम सैरको चल निकलेंगे तो इससे बढकर भूल दूसरी नहीं हो सकती। स्वराज्य चाहे अभी मिले अथवा पीछेसे, हमारे व्यवहारमें बहुत कम परिवर्तन होगा। फिर भी शुद्धि तो ज़ारी ही रहेगी। आज जो अधूरा रह गया है उसे उस समय पूरा किये बिना छुट्टी नहीं। अतएव भारतके जो जो भाग लडना चाहते हों कि एक बार मैदानमें उतरे बाद चाहे एक साल हो, अथवा सालों लग जाय' पर वे पीछे पाव न रक्खेंगे। और जब वे सामने पर आवेंगे तब जिस प्रकार उन्हें जय प्राप्त होने की सम्भावना हो उस प्रकार आज विपत्तियां सहन करनेका निश्चय करना होगा। वे पैर न रक्खेंगे तो कोई कुछ कहनेका नहीं। पर यदि पैर रख दिया तो फिर जहां रख दिया वहांसे या तो मर मिटने पर या विजय मिलने पर ही छुटकारा हो सकता है। इतना शौर्य्य और धैर्य्य तो आवश्यक ही है।

निराशा नहीं—

यह बातें मैं लोगोंको निराश करनेके लिये नहीं लिख रहा हूं। बल्कि यह बतानेके लिये लिखता हूं कि उनका कर्त्तव्य क्या है और उनकी ज़िम्मेदारी क्या है? कहीं ऐसा न हो कि

लोग गफलतमें रह जायं, यह समझ कर कि अजी, इसमें क्या है, मैदानमें आ डटें और फिर पीठ दिखाकर हसीके पात्र बनें, इस ख्यालसे लिखता हू जो इस युद्धका रहस्य समझ चुके हैं जो सत्य और शान्तिका सेवन कर रहे हैं। वे मेरी इस बातने समझ नहीं सकते। पर जो इसका मर्म न समझे हु उन्हें पूरी तरहसे समझानेके उद्देशसे मैंने स्पष्टसे स्पष्ट शब्दोंमें यह चेतावनी दी है।

ज्वार-भाटा

प्रिय भाई,

मुझे आपके पत्रमें कुछ निराशा सी नजर आई है, पिछले साल आप इस आन्दोलनमें बिलकुल नये ही नये शरीक हुए थे। आपमें अकारण उत्साह बहुत था। आपको अपना आत्मोत्सर्ग कुछ अपूर्व सा दिखाई दे रहा था। मानों यही मालूम हो रहा था कि केवल आपके ही आत्म बलिदानसे स्वराज्य मिल जायगा। आज आप जो इतने निरुत्साह दिखाई दे रहे हैं, यह भी अकारण ही है। राजनैतिक आन्दोलनके ज्यादह नहीं तो कमसे कम तीन ज्वार भाटे मैंने अपनी आखोंसे देखे हैं। उस ज्वार और भाटा दोनोंका विचार करके देखा जाय तो हम इसी नतीजे पर पहुंचते हैं कि औसतन हमारी प्रगति हो ही रही है।

एक और भी सिद्धान्त मैंने अपने मनमें निश्चित कर रक्खा है। वह यह कि स्वराज्यकी कुञ्जी तो है, शिक्षा। इसी लिये मैं तबसे दूसरी सब बातें छोड़ कर केवल शिक्षामें ही अधिक ध्यान देने लग गया हूं। आज स्वदेशीको सर्वोच्च स्थान दिया गया है। यह भी ठीक ही है। खादी और स्वदेशीके बिना राष्ट्रीय शिक्षाका स्वीकार होना भी कठिन है, फिर उसका प्रचार तो दूरकी बात है। जहां स्वदेशी नहीं वहां अगर शिक्षाके पीछे "राष्ट्रीय" विशेषण लगाया जाय तो भी वह अराष्ट्रीय ही है।

यह तो मुझे ख्याल भी न था, कि देशमें खून खराबी होगी और उसका असर इतना गहरा होगा। क्योंकि मैं पिछले साल अहिंसाका महत्व भली भांति जानता ही न था। तथापि मैं यह तो जानता ही था कि इतने उत्साहके ज्वारके बाद उसका भाटा भी अवश्य ही आयेगा। मैं इस आशासे इस आन्दोलनमें शरीक नहीं हुआ कि स्वराज्य तो एक ही सालमें मिल जायगा। और इसी लिये मुझे इस बात पर जरा भी आश्चर्य न हुआ कि स्वराज्य एक सालमें क्यों नहीं मिला? हां, यह विश्वास तो मुझे अब भी है कि एक सालमें स्वराज्य मिल सकता है। पर हम अभी तक अपने परावलम्बनको कहां छोड़ते हैं? स्वराज्यका तो अर्थ है स्वावलम्बन। जिस दिन उसका अवलम्बन करेंगे उसी दिनसे हमारी स्वराज्य-साधना शुरू हो जायगी।

"स्वराज्य मिला कि बस, फिर तो आराम ही आराम है।

एक साल तक खूब परिश्रम करके फिर तो सुखकी नींद सोवेंगे। अथवा कहानियोंके राजा रानीकी तरह खा पीकार मौजसे राज्य करेंगे," यह कल्पना जबतक हमारे दिमागमें ठसी रहेगी तबतक न तो स्वराज्यकी सच्ची भावना हमारे हृदयमें जम सकती न हमारी ऐसी मनोदशा ही हो सकती है। इसमें तो कोई शक नहीं कि हमारी स्वराज्य स्थिति उन्नत, कल्याण प्रद और सम्मान पूर्ण होगी। पर हमें यह तो जरा भी ख्याल न करना चाहिये कि उनमें हमें आजसे अधिक सुख चैन मिलेगा। महात्वाकाक्षाका विचार छोड़ दिया जाय, मानापमानका ख्याल भी न किया जाय, तो आज भी हम अपनी इसी अवस्थामें अपनेको सुखी मान सकते हैं। हम तो आज दो हजार सालसे यही अभ्यास करते आ रहे हैं, कि बुरीसे बुरी अवस्थामें सुख मानना चाहिये। इससे अधिक सुख हमें और कहा मिल सकता है? आज दीनहीनोचित सुख तो हमें काफी है। स्वराज्यमें इस सुखसे हम जरूर वञ्चित हो जायगे, और इसी लिये तो कितने ही लोग स्वराज्य प्राप्त करनेमें स्वराज्यसे डरते हैं। उन्हें तो यही डर मालूम होता है कि स्वराज्यके आते ही हमारे पीछे न जाने कितनी उपाधिया लग जाय गी। हमें खुद ही उनका सामना करना होगा, कुछ पुरुषार्थ भी कर दिखाना होगा, देशकी रक्षाका प्रबन्ध करना होगा, प्रयत्न पूर्वक हर एक कठिनाईका सामना करना होगा और सदा कार्य शील बने रहना पड़ेगा।

पर जब वीराङ्गना किसी वीर पुरुषके साथ शादी करती

है तब वह इस बातको भलीभांति सोच विचारके ही शादी करती है कि मेरे लिये अब भोग विलासके दिन इने-गिने ही हैं, मैं तो मौतसे ही नाता जोड रही हूं। पर उसे उसीमें आनन्द होता है।

मौतसे दोस्ती —सङ्कटका पत्र दर्शन —यही तो जीवन सार है। बिना मौतका जीवन— सङ्कट — साहस — शून्य जीवन व्यर्थ है।

क्या आप नहीं देख सकते कि भारत अब धीरे धीरे उद्यम शील— मौतसे बे परवाह होता जा रहा है। आप अपने आत्मोत्सर्ग से आशान्वित हुए थे। पर उसकी अब हद आ गई, इसी लिये फिर निराशाने आपको आघेरा है। आप जब खूब उत्साहमें थे तब मैं आपकी इस भावी निराशाका चित्र आपके हृदयमें देख सकता था। आज जब आप निराश हो रहे हैं तब मुझे विजय का सुदिन नज़र आ रहा है। लोकमान्यने सारी जिन्दगी स्वराज्य का जप करते हुये बिताई। वृद्ध दादा भाई अपने अन्तकालतक उसी की आराधना करते रहे। असंख्य लोग स्वराज्य के लिये सालों जेलमें बिता रहे हैं। लाला लाजपतराय और देशबन्धुदास तो कभी के स्वराज्यमय हो गये हैं। अली भाई स्वराज्यका दर्शन कर रहे हैं। महात्मा जी ऐसे पुण्यश्लोक नर वीरका यह अपूर्व आत्मोत्सर्ग भी स्वराज्यही के लिये है। जब मेरी आंखोंके सामने इतने शुद्ध सात्विक आत्म-बलिदानके इतने समुज्वल उदाहरण हैं, तब मेरे अन्तःकरणमें निराशा का प्रवेश

कैसे हो सकता है ? दूसरे, यह देख रहा हू, कि आज करीब 'पन्द्रह सालसे सरकारको राज्य नीति दिन ब दिन अधिकाधिक चारित्र्य शून्य होती जा रही है। यह भी स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि सरकार का पुण्याश अधिकाधिक क्षीण होता जा रहा है। फिर मैं स्वराज्यके विषयमें निराश क्यों होऊ ? कितने ही नौ—जवानों ने भोग विलास छोडकर सादगी को अपनाया है। कितने ही भाइयोंने जबतक स्वराज्य प्राप्त नहीं होता ब्रह्मचर्य व्रत धारण करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की है। यह जानते हुए भी मैं निराश कैसे हो सकता हू ? दिन रात धन की ही उपासना करनेवाले धनिकोंने देशसेवाका पुण्यव्रत धारण किया है। क्या यह कम आशा प्रद है ? कितने ही वयोवृद्ध महानुभाव मान प्रतिष्ठा के घमण्ड को अलग रखकर नौजवानों के साथ इन्हीं की तरह नवोत्साहसे देशसेवा करने लग गये है। क्या फिरभी मैं स्वराज्य के विषयमें निराश होऊ ? क्या मैं यह ख्याल करू कि इतने वीरोंकी तपस्या, यह विशुद्ध आत्म त न ै, व्यर्थ ही सिद्ध होगा ? अगर मैं सचमुच ऐसा सोचू तब तो उसे पूर नास्तिकता ही कहना होगा। कर्म के सिद्धान्त में मेरा विश्वास है। मैं दैववादी नहीं हू। पानीके बर्तन के नीचे अग्नि रखने से जैसे पानी का गरम होना आप निश्चित मानते हैं वैसे ही मुझे इसमें जरा सन्देह नहीं कि इतने त्याग और तपस्याके बाद स्वराज्य जरूर मिलेगा। पहले पहल अगर आरम्भ में मुझे उसका कुछ तत्कालिक फल दिखाई देता तो मेरा निराश होना स्वाभाविक था। मैं सोचता

कि राम राम ! इतना सब त्याग व्यर्थ सिद्ध हुआ। पर यहां तो मैंने तीन बार देखा जो तपस्या एक आन्दोलन के समय प्राप्त नहीं होती वही दूसरे आन्दोलन के समय प्राप्त हो जाती है।

कितनी बार तो स्वराज्य साधना अज्ञात दशामें ही करना पडती है। शायद् आप की सेवाओं की कदर आज उचित रीति से न हो। पर भावी सन्तति—स्वराज्यका उपभोग करनेवाली संतति-हमारी इस तपस्या को बराबर यथोचित आदर की दृष्टिसे देखेगी। वह जरूर कहेगी कि हम स्वराज्य का उपभोग तो कर रहे हैं पर उस को प्राप्त करनेका पुण्य कार्य करने का सौभाग्य हमें न मिला। स्वराज्य तो मीठा ही होता है। पर स्वराज्य साधना उससे भी अधिक स्वादिष्ट होती है। हम तो अब स्वराज्य देवता की वेदी पर अपने को चढा चुके हैं। अब हमें स्वराज्य के सिवा दुसरी किस बात की चिन्ता होनी चाहिये।

आपका—

गुरुभाई।



अनावश्यक घबराहट

मैं अहिंसा का पूरा कायल हूं। मैं जोर शोर से इसका प्रचार कर रहा हूं। इनके सम्बन्ध में मैं किसी से समझौता नही करता। यह देखकर कुछ हिन्दू मुसल्मान दोनों घबड़ा रहे हैं। उनका ख्याल हो गया हैं कि मैं तो उनके धर्म मतों की जड़ में सुरंग लगा रहा हूं और इस अहिंसा प्रचार से भारत को ऐसी हानि पहुंचा रहा हूं कि फिर उसकी पूर्ति होना असम्भव है। मालूम होता है कि वे हिंसाको अपना धर्म मान रहे हैं। यदि मैं उनके सामने पूर्ण अहिंसा की बात करता हूं तो उनके कोमल भावोंको आघात पहुंचता है। वे धड़ाधड़ महाभारत और कुरान के वचन पेश करने लगते हैं कि देखिये इन में हिंसा को जायज माना गया है और उस को आज्ञा दी हुई है। महाभारत के सम्बन्ध में मैं तो बिना हिचकिचाहट के राय जाहिर कर सकता हूं लेकिन मै समझता हूं श्रद्धावान् मुसलान भाई भी इस बातको अस्वीकार न करेंगे कि हजरत पैगम्बर के सन्देश को समझनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त है। मै यह साहसके साथ कहता हूं कि हिंसा किसी भी सम्प्रदायका धर्म नहीं है। बल्कि समस्त धर्मोंमें अहिंसाका पालन ही बहुत बातोंमें आवश्यक धर्मरूप माना गया है और हिंसाको तो महज कुछ कुछ

घातोंमें जायज बताया गया है। लेकिन मैंने तो भारतवर्ष के सामने अहिंसा का अनिम रूप रक्खा ही नहीं है। महाभारतके मन्त्रसे जिस अहिंसाका प्रचार मैं करता हूं, वह तो बतौर एक व्यवहार-नियम है लेकिन व्यवहार-नियम पर भी तो मन, वचन और काया से दृढ़ रहने को आवश्यकता है। यदि मैं इस बात को मानता हूं कि प्रामाणिकता सर्वश्रेष्ठ व्यवहार-नियम है तो जबतक मैं ऐसा मानता हूं तबतक मन, वचन और काया से प्रमाणिक रहना मुझे उचित है, अन्यथा मैं पाखण्डी रहूंगा। अहिंसा व्यवहार नियम है। अतएव जब वह असफल या बेकार सिद्ध हो जाय तब यथा समय सूचना देकर उस का त्याग किया जा सकता है। लेकिन यह तो एक साधारण नीति नियम है कि जब तक हम एक व्यवहार नियम को मानते हैं तबतक सच्चे दिल से उसके अनुसार हमे चलना चाहिये। एक निश्चित मार्ग से जाना तो एक साधारण व्यवहार नियम हुआ। पर जो सिपाही बराबर कदम रखकर नहीं चलता है वह तुरन्तही निकाल देनेके लायक होता है। तो जब लोग मुझसे अहिंसाके सम्बन्धमें सन्दिग्ध चित्तसे बातचीत करते हैं या अहिंसा शब्द का उच्चार करते ही घबड़ाने लगते हैं तब मेरे दिलमें अविश्वास होने लगता है। यदि उनका यह विश्वास है कि अहिंसासे हमारा काम नहीं [illegible] उसका त्याग कर देना [illegible] नहीं [illegible] प्रा[illegible] होते हुए [illegible]

यदि मैं हिंसामें, शस्त्र प्रयोगमें यहांतक कि उसके समयानुकूल होनेमें भी विश्वास न रखते हुए, मान लीजिये कि हिंसक दलमें ही शामिल हो गया और एक तोपके सामने खड़ा हो गया मगर मेरा दिल तो डावाडोल हो रहा है, तो बताइये यह कितनी घातक बात है ? यदि मैं कहूं कि मैं एक मक्खीको मार सकता हूं तो पाठक इस बातको अवश्य मान लेंगे। पर मैंतो मक्खी तकके मारनेका कायल नहीं हूं। अब, फर्ज कीजिये, मैं मक्खी मारनेकी चढ़ाईमें उसको उपयोगी समझकर शामिल हो गया। तो क्या सके धावेमें अनुमति मिलनेके पहले मुझसे यह आशा की जायगी कि जबतक मैं उस मक्खी मारनेवाली सेनामें शामिल हूं तबतक विनाशकी तमाम उपलब्ध शस्त्र सामग्रीका उपयोग करूंगा ? यदि वे लोग जो महासभा और खिलाफत समितियोंमें हैं इस साधारण सत्य सिद्धान्तको समझ जायं तो हम निश्चय पूर्वक यातो इसी वर्ष इस युद्धमें विजय प्राप्त कर लेंगे या अहिंसासे हमारा जी इतना ऊब उठेगा कि हम उसका पीछा छोड़ देंगे और किसी दूसरे कार्यक्रमकी योजना करेंगे।

मेरा मत है कि स्वामी श्रद्धानन्दजीपर उनके उस प्रस्तावके लिये जो वे उपस्थित करना चाहते थे, व्यर्थ ही टीका टिप्पणी की गई। उनकी दलील बिल्कुल उचित थी। वे ख्याल करते हैं कि हम सामूहिक रूपसे व्यवहार नियमके तौरपर,

अहिंसाको दरहकीकत नहीं मानते हैं। अतएव हम अहिंसाके कार्यक्रमकी पूर्ति हरगिज नहीं कर सकते। इससे उनका कहना था कि चलो कौंसिलोंमे ही चलें और वहासे जो कुछ टुकडे मिल जायँ उन्हींको ले लें। वे उन लोगोंकी स्थितिकी अयथार्थता बताना चाहते थे जो अहिंसाको केवल जवानसे मानते हैं, पर वास्तवमें जो अन्तिम छुटकारेके लिये हिंसा काण्डको आशा लगाये बैठे हैं। मैं जोर देकर कहता हू कि यदि महासभावादी इस व्यवहार नियमको पूरी तरह नहीं मानते हैं तो अपनेको उनका अनुयायी बताकर वे देशको हानि पहुचा रहे हैं। यदि भावी सरकारकी नींव हिंसापर रखी जानेवाली हो तो कौंसिलर लोग निस्सन्देह सबसे अधिक चतुर हैं क्योंकि इन कौंसिलोंकी मार्फत उन्हीं साधनो और तजवीज मे जिनके द्वारा हमारे वर्तमान शासक हमपर राज्य कर रहे हैं कौंसिलर लोग उनके छीन लेनेकी आशा करते हैं।

मुझे इस बातमें कोई शक नहीं है कि जो कोई लोग अपने दिलमें हिंसाका पोषण करते रहते है वे देखेंगे कि अहिंसा की कोरी बातें बनानेसे कोई लाभ नहीं हो सकता। इसलिए मैं अपने पूरे बलके साथ आग्रह करता हू कि जो लोग अहिंसा के कायल नहीं हैं उन्हें महासभा और असहयोगसे अपना नाता तोड लेना चाहिये और कौंसिलोंके लिए उम्मेदवार हो जाना चाहिये, अथवा फिरसे अदालतों सरकारी कालेज स्कूलमें दाखिल हो जाना चाहिए जैसी कि हालत हो। हा, इस बातमें कोई

जरा भी सन्देह न करें कि 'अहिंसा' के द्वारा जिस स्वराज्यकी स्थापना होगी वह उस स्वराज्यसे अवश्यही भिन्न होगा जो सशस्त्र बलके द्वारा स्थापित किया जायगा। स्वराज्य हो जाने पर पुलिस और दण्ड तो रहेगा ही। पर उस समय न तो सरकार हो और न लोग ही ऐसे पाशविक अत्याचार कर पावेंगे जैसे कि आज हम अपनी आखोंसे देख रहे हैं। और फिर वे लोग जो चाहे अपनेको हिन्दू बताते हों या मुसलमान अहिंसा को व्यवहार नियमके तौर पर पूरी तरह नहीं मानते हैं उन्हें असहयोग और अहिंसा दोनोंका त्याग कर देना चाहिए।

मेरी दृष्टिमें तो मुझे निश्चय है कि न तो कुरानमें और न महाभारतमें कही भी हिंसाका प्रधान पद दिया गया है। यद्यपि कुदरतमें हमको काफी आकर्षण दिखाई देता है तथापि यह आकर्षणके ही सहारे जीवित रहती है। पारस्परिक प्रेमके ही बदौलत कुदरतका काम चलता है। मनुष्य संहार पर अपना निर्वाह नहीं करते हैं। आत्मप्रेमके बदौलत औरोंके प्रति आदर भाव अवश्य ही उत्पन्न होता है। राष्ट्रोंमें एकता इसलिए होती है कि राष्ट्रोंमें अगभूत लोग परस्पर आदर भाव रखते हैं। उसी दिन हमारा राष्ट्रीय न्याय हमें सारे विश्व तक व्याप्त करना पड़ेगा, जैसा कि हमने अपने कौटुम्बिक न्यायको राष्ट्रोंके एक विस्तृत कुटुम्बके निर्माणमें व्याप्त किया है। ईश्वरका यह आदेश है कि भारतको ऐसा ही राष्ट्र होना चाहिये। क्योंकि जहातक युक्ति और तर्क की गति पहुंच सकती है, भारत सशस्त्र घगा-

बलके द्वारा पुश्तों तक आजाद नहीं हो सकता। भारत तो सिर्फ राष्ट्रीय हिंसासे दूर रह कर ही आजाद हो सकता है। भारत अब ऐसे शासनसे थक गया है जो हिंसाकाण्ड पर अपना आधार रखता है। मेरे लिए तो मैदानमें रहनेवालोंका यही सन्देश है। मैदानके लोग नहीं जानते कि संगठित सशस्त्र युद्ध करना क्या चीज है? और उन्हें आजाद तो जरूर होना चाहिए, क्योंकि वे आजादी चाहते हैं। उन्हें यह अच्छी तरह मालूम हो गया है कि हिंसाकाण्डके द्वारा प्राप्त अधिकारका फल यही होगा कि हम और अधिक पीसे जायगे।

इसी कारण परम्पराके द्वारा इस अहिंसा धर्मकी नही, पर व्यवहार नियमकी उत्पत्ति हुई है और जिस प्रकार एक मुसलमान या हिन्दू हिंसामें विश्वास रखता हुआ भी अपने परिवारके लिए अहिंसा धर्मका ही व्यवहार करता है उसी प्रकार उन दोनों से कहा जाता है कि इस अहिंसाके व्यवहार नियमको आप लोग अपने पारस्परिक व्यवहारमें तथा भिन्न २ जातियोंमें (जिनमें अंग्रेज भाई भी शामिल हों) और श्रेणियोंके व्यवहारमें अपनाइये। जो लोग इस व्यवहार नियमके कायल न हों और जो उसके अनुसार पूरा पूरा वर्ताव न करना चाहते हों उनका इस आन्दोलनमें रहना इसकी गतिको कुंठित करना है।

प्रांतीय समितियोंको सलाह

इसमें यह स्पष्ट है कि मैं प्रान्तीय संस्थाओंसे क्या बात चाहता हूं। फिल हाल उन्हें जहांतक मुमकिन हो सरकारके कानूनोंका भंग न करना चाहिये। जबतक वे अपने हृदयकी खोज न कर लें तब तक उन्हें कोई कदम आगे न बढ़ाना चाहिये। बल्कि पूर्ण शान्तिमय वायुमण्डल तैयार करना चाहिये। क्रोधके आवेशमें जो लोग जेल गये हैं उनसे हमें कोई लाभ नहीं हुआ है। मैं मुसलमानोंके इस विचारसे जो कि हिन्दुओंका भी विचार है कि महज जेल जानेके लिये ही जेल न जाना चाहिये, सहमत हूं। जेलोंमें जाना तो तभी उपयोगी हो सकता है जब धर्म या देशके लिये वहां जाय और जब वह लोग जाय जो खादी पहने हों और जिनके दिलसे हिंसा और क्रोधका भाव निकल गया हो। यदि प्रान्तोंमें ऐसे स्त्री पुरुष न हों तो उन्हें सविनय भंग मुतल्लक शुरू ही न करना चाहिये।

— o —

विधायक कार्यक्रम

इसलिये इस विधायक कार्यक्रमकी रचना की गई है। इससे हमारा चित्त स्थिर और शान्त होगा। इससे हमारी सगठन शक्ति जाग्रत होगी, हम परिश्रमी और उद्योगी बनेंगे, हम स्वराज्यके योग्य होंगे, और हमारा उबलता हुआ खून शान्त होगा। हां सम्भव है कि लोग हम पर छी थू करें, हसें, कसके ठोंकरें मारें और बुरी तरह कोसें। हमें इन बातोंको तो उस हद तक अवश्य सहन करना चाहिये जिस हद तक हमने अहिंसाकी प्रतिज्ञा धारण करनेके उपरान्त भी अपने हृदयमें हिंसा भावको कायम रखा हो। मुझे यह बात साफ २ कह देनी चाहिए कि जबतक हम जान बूझकर अपने कार्यको न सुधारेंगे, अहिंसा वृतिको जाग्रत और खादी तैयार न करेंगे तब तक हम न तो खिलाफतकी अच्छी सेवा कर सकते है न पञ्जाबके, अन्या योंका परिमार्जन करा सकते हैं और न स्वराज्य ही प्राप्त कर सकते हैं। यदि मैं अपने साथियों तथा सर्वसाधारणको इस बातका निश्चय न करा सकूं कि इस विधायक कार्यक्रमके अनुसार जोर शोरसे कार्य करनेकी अत्यन्त और तुरन्त आवश्यकता है तो मेरा नेतापन बिल्कुल बेकार है

हमको यह देखना चाहिये कि हमें सारे भारतसे १ करोड

नर नारी मिल सकते हैं या नहीं जो इस बातको मानते हों कि हमें शान्तिमय सत्य साधनोंके द्वारा स्वराज्य प्राप्त करना है।

हमें स्वदेशी प्रचारके लिये रुपये अवश्य एकत्रित करना चाहिये और हमें यह जानना चाहिये कि भारतमें ऐसे कितने लोग हैं जो सच्चाईके साथ तिलक स्वराज्य फण्डमें अपने पिछले सालकी आमदनीमेंसे १) फी सैकड़ा रकम देनेके लिये तैयार हैं। इस चन्दाकी उम्मीद समिति महासभावादी तथा उनके साथ सहानुभूति रखनेवाले लोगोंसे करती है।

हमें पानीकी तरह रुपया बहाकर चरखेका प्रचार घर घरमें करना होगा तथा खादी तैयार करना और जहा जहा जरूरत हो तहा तहा उसे भेजना चाहिये।

हम अपने 'अछूत' भाइयोंकी अपेक्षा तो वास्तवमें बहुत समयसे कर रहे हैं। वे कितने वर्षों से हमारी गुलामी करते आये हैं। अब हमें उनकी सेवा अवश्य करनी होगी।

शराबखानोंके पहरेसे कुछ लाभ जरूर हुआ है, पर वह पक्का नहीं। हम तब तक इस विषयमें सच्ची प्रगति नहीं कर सकते जब तक कि हम हर एक शराब पीनेवालेके घर पर न जायगे। हमें यह जानना चाहिये कि वह क्यों शराब पीता है? उसके बजाय हम दूसरी कौनसी वस्तु उसे दे सकते हैं? हमें भारतके तमाम शराब पीनेवालोंकी गणना करनी होगी।

समाज सेवा विभागको लोगोंने बड़ी प्रेम दृष्टिसे देखा है। यदि असहयोग आन्दोलनका कोई दुष्ट उद्देश्य नहीं है तो इस

विभागकी अत्यन्त आवश्यकता है। हम तकलीफ और मुसीबतके मौकेपर हर एककी शत्रु और मित्र दोनोंकी समान भावसे सेवा करना चाहते हैं। इसके द्वारा हम अपने राजनैतिक मत-भेद और कार्य भेदके रहते हुए परस्पर मीठा सम्बन्ध रख पावेंगे।

लोग हसते हैं—

समाज सेवा तथा शराबखोरी छुडानेको स्वराज्य युद्धका अंग बतानेपर लोग हंसते हैं। इससे यह दिखाई दिया कि स्वराज्यके आवश्यक बातोंके सम्बन्धमें कितना दुखदायक अज्ञान भरा हुआ है। मैं दावेके साथ कहता हूं कि मानवी स्वभाव और मानवी समाजके सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक विभागोंके बीचमें ऐसी लोहेकी कठिन दीवारें नहीं हैं कि जिनमेंसे पानीकी बूंद भी इधरसे उधर न जा सके। हरएकका घात प्रतिघात एक दूसरेपर होता है। अधिक क्या, ये हिन्दू और मुसलमानोंके ही बहुसंख्यक लोग इस युद्धको धार्मिक समझकर शामिल हुए हैं। जनता इसमें इस लिये शरीक हुई है कि वह खिलाफत और गायकी रक्षा करना चाहती है। मुसलमानोंकी खिलाफतको सहायता करनेकी आशा तोड़ दीजिये, वे महासभासे अलग हो जायंगे। हिन्दुओंसे कहिये कि आप महासभामें रहकर गोरक्षा नहीं कर सकते, एक भी हिन्दू उसमें न ठहरेगा। नैतिक सुधारोंपर तथा समाज सेवापर हंसना मानो स्वराज्य, खिलाफत और पञ्जाबपर हंसना है।

यहांतक कि पाठशालोंके संगठनपर भी लोग हंसे। आइये

जरा सोचें इसका मतलब क्या है? हमने सरकारी विद्यालयोंकी शान तो मिट्टीमें मिला दी है। पहरा रखना तथा लडकोंको पढाईपर ध्यान न देना १९२० में तो कदाचित आवश्यक था, पर अब तो सरकारी विद्यालयोंपर पहरा रखना तथा राष्ट्रीय शिक्षा संस्थाओंकी उपेक्षा करना अपराध है। अब तो हम उसी अवस्थामें अधिक लडके लडकी अपनी ओर खींच सकते हैं जब हमारे वर्तमान राष्ट्रीय विद्यालय सरकारी स्कूलोंसे बेहतर हालतमें हों। उन्हें उन संस्थाओंमें तो रहनेका लोभ प्राप्त हो रहा है जहांका वायुमण्डल स्वतन्त्र है और जहां उनकी शक्तियां दबा नहीं दी जाती हैं। परन्तु इसके साथ धुनकने, सूत कातने और बुननेकी क्रिया तथा देशकी आवश्यकताओंके अनुकूल बौद्धिक शिक्षाकी भी व्यवस्था होनी चाहिये। हम अपने प्रयोगमें सफलता प्राप्त करके यह दिखा सकेंगे कि राष्ट्रीय विद्यालयोंमें अधिक अच्छी शिक्षा दी जाती है।

और पञ्चायतोंको भी लोगोंने उपहास्य समझा। वे लोग शायद इस बातको जानते ही न थे कि भारतके कितने ही भागोंमें सर्वसाधारणने अदालतोंमें जाना छोड दिया है। यदि हम प्रामाणिक पञ्चायतोंकी स्थापना न करेंगे तो वे अवश्य ही फिरसे उन्हीं सरकारी अदालतोंकी शरण लेंगे।

राजनैतिक परिणाम—

इनमेंसे कोई बात ऐसी नहीं है जिसका राजनैतिक परिणाम बहुव्यापक न हो। खादीके कामिल तौरपर तयार

होने और उसके सर्वत्र उपयोग होनेसे एक तो विदेशी कपडेका बहिष्कार सदाके लिये हो जायगा और दूसरे ६० करोड रुपये हर साल गरीब लोगोंमें बट जायंगे। शराब और अफीमके दुर्व्यसनोंसे सदाके लिये लोप हो जानेसे लोगोंके १७ करोड रुपये बचेंगे और सरकारकी इतनी आमदनी कम होगी। अछूतोंके लिये रचनात्मक कार्य करनेमें महासभाको ७ करोड नर नारियोंका लाभ होगा जिनका चिरसम्बन्ध महासभासे बना रहेगा। यदि लोक समाज सेवा संघकी स्थापना हो गई और वह जीवित रहा तो उसके बदौलत सहयोगियों (चाहे भारतीय हों या अंग्रेज) और असहयोगियोंकी अनबन दूर हो जायगी। अतएव इस पूरे विधायक कार्यक्रमके अनुसार काम करना मानो अपना अभीष्ट प्राप्त कर लेना है। इसमें गफलत करना मानो सविनय भंगकी तमाम आशाओंको दूर ही दूर हटाना है।



यदि मैं पकड़ा जाऊँ—



यह अफवाह फिर जोरोंप॰ ~~ ̄ है कि मेरी गिरफ्तारी बस होने ही वाली है। कहा जाता है कि कुछ अधिकारी लोग कहते हैं, भूल हुई, गान्धीको तो ११ या १२ फरवरीको ही पकड़ लेना चाहिये था, बारडोलीके निर्णयको देखकर सरकारको अपना कार्यक्रम न बदलना चाहिए था। यह भी कहा जाता है कि अब सरकारके लिये उस आन्दोलनको सहन करते रहना असम्भव है जो कि लन्दनमें मेरी गिरफ्तारी और देश निकालेके लिये दिनपर दिन बढ़ता जाता है। मै खुद भी नहीं देख सकता कि यदि सरकार व्यक्तिगत अथवा सामूहिक सविनय भङ्गको हमेशाके लिये बन्द कर देना चाहता है तो मेरी गिरफ्तारीको किस तरह टाल सकती है।

मैंने जो कार्यसमितिको यह सलाह दी थी कि बारडोलीमें सामुदायिक भ बन्द कर दिया जाय सो उसका कारण यह था कि वह भङ्ग सविनय न हो पाता, और आज जो मैं तमाम प्रान्तिक कार्यकर्ताओंको सलाह दे रहा हू कि व्यक्तिगत कानून भङ्ग भी बन्द ही रखा जाय तो इसका सबब यह है कि मैं जानता हू, इस अवस्थामें वह सविनय नहीं बल्कि उद्धत होगा। सविनय-भ गके लिये शान्तिमय वायुमण्डलका होना अनिवार्य

शर्त है। भारतमें आज जगह जगह हिंसाके भाव भरे हुए हैं तथा संयुक्त प्रान्तकी सरकारको ईजाद पुलिस भरती करना पड़ी है जिससे कि चौरीचौरा काण्डकी पुनरावृत्ति कहीं न होने पावे इन बातोंको देखकर मेरा सिर नीचा झुक जाता है। मैं यह नहीं कहता कि वहां वे सब बातें हुई हैं जो कि बयान की जाती हैं पर उन सब प्रमाणोंको न मानना भी असम्भव है जो कि यह बता रहे हैं कि उस-प्रान्तके कुछ हिस्सोंमें हिंसाके भाव बराबर बढ़ते जा रहे हैं। पण्डित हृदयनाथ कुञ्जरूसे राजनैतिक बातोंमें मेरा मतभेद है। तथापि मैं यह मानता हूं कि वे जानबूझकर सत्यका अपलाप करनेवाले आदमी नहीं हैं। मैं उन्हें एक अत्यन्त योग्य देशसेवक मानता हूं। वे ऐसे शख्स नहीं हैं कि आसानीसे किसीके कहनेमें आ जाय। ऐसी अवस्थामें जब खुद वे किसी बातपर अपनी राय जाहिर करते हैं तो तुरन्त उसपर मेरा ध्यान जाता है। उनका रुख सरकारकी तरफ रहा करता है, इसलिये चौरीचौरा सम्बन्धी उनके फैसलेका कुछ अंश नमक मिर्च समझकर छोड़ दें तो भी उनकी रिपोर्ट ऐसी नहीं समझी जा सकती कि उसपर विचार ही न किया जाय। और न उन चिट्ठी पत्रियोंकी ही उपेक्षा की जा सकती है जो जमींदारों तथा दूसरे लोगोंकी तरफसे मेरे पास भेजी गई हैं जिनमें यह दिखलाया गया है कि संयुक्त प्रान्तके लोगोंके विचार किस तरह हिंसामय हो रहे हैं तथा वहांके नासमझ लोगोंमें किस तरह अधाधुन्धगर्दी फैल रही है। मेरे सामने

लीकी रिपोर्ट भी रखी हुई है जिसपर वहाके महासभाके म
ोकी सही है । हा एक ओर जहा हाकिम लोगोंने पागलोंकासा
म किया है और क्रोधावेगमें अपनेको भुला दिया है तहा हम
, यदिरिपोर्टको वातें सच मानी जाय, तो दोपसे खाली नहीं
। यह स्वयंसेवकोंका जुलूस कोई सविनय द्वश्य नहीं था ।
द हमारे ही घरमें तीव्र मतभेद होनेपर भी जलूस निकालनेकी
ाद की गई । यद्यपि जो लोग वहा एकत्र हुए थे उन्होंने कोई
सा-कार्य नहीं किया तथापि इस जलूसके भाव निस्सन्देह
ंसात्मक थे । वह अपने सामर्थ्यका एक निष्फल प्रदर्शन
ा, जिसकी हमारे उद्देशकी सिद्धिके लिये कोई आवश्यकता
ीं थी और जो सविनय भगका शुभशकुन भी मुश्किलसे था ।
', यह वहुत सच है कि अधिकारी लोग जलूसके साथ इससे
च्छी तरह पेश आ सकते थे , उन्हें स्वराज्य भण्डेसे छेडछाड
करनी चाहिये थी, उन्हें टाउन हालके उपयोगमें बाधा न
ालनी चाहिए थी क्योंकि टाउन हालमें महासभाके दफ्तर
और वह कस्बेकी चीज थी और टाउन कौन्सिलकी इजाजत
महीनोंसे उसमें वे दफ्तर थे । लेकिन हमने तो अधिकारि-
ोंसे सामान्य बुद्धि और विवेकके उपयोग करनेका खयाल ही
ोड दिया है । वल्कि इसके प्रतिकूल हम तो उनसे विवेक
ीनता और हिंसाकी आशा रखते हैं और इस लिये हम उनकी
खालिफतके लिये खडे हो उठे हैं । सो हम तो यह जानते
 थे कि वे इससे अच्छा सलूक कर ही नहीं सकते, अतएव

हमें इस जलूसके झगडेसे बाज आ जाना चाहिए था। यह बात कोई नई नहीं है कि युक्तप्रान्तकी सरकार तिलका ताड़ बना रही है और वह अपनी तथा उन चौरीचौराके मार डाले गये लोगोंकी तरफसे दी गई उत्तेजनाको गिनतीमें ही नहीं लेती। मैं जो कहना चाहता हूं वह यह कि हम इस बातका दावा नहीं कर सकते, कि हमने उन्हें किसी तरहका मौका नहीं दिया है। अतएव यह सविनय भंग केवल प्रायश्चित्तके लिये बन्द किया गया है। पर यदि वायुमण्डल साफ हो जाय, लोग 'सविनय' पदका पूरा पूरा महत्व समझ जायं, और उनके भाव तथा कार्य दोनों वास्तवमें अहिंसात्मक हो जाय, और यदि मैं देखूंगा कि अब भी सरकार लोकमतके आगे झुकना नहीं चाहती तो अवश्य ही मैं ही सबसे पहले व्यक्तिगत या सामुदायिक भंगकी, जैसी कि उस समय आवश्यकता होगी, घोषणा किये बिना न रहूंगा। जबतक लोग अपने जन्मसिद्ध अधिकारको छोड देनेके लिये तैयार न हों तबतक इस कर्त्तव्यका पालन किये बिना छुटकारा नहीं।

अंग्रेज लोग जोकि जन्मजात योद्धा हैं, जब सविनयभङ्गके खिलाफ ऊंची आवाज उठाते हैं, मानो वह कोई ऐसा आसुरी अपराध हो जिसके लिये कडेसे कडा दण्ड दिया जाय, तब मुझे उनकी सचाईपर सन्देह होने लगता है। जब कि वे सशस्त्र बलवेका गुणगान किया करते हैं और उन्होंने समय समयपर उनका अवलम्बन किया भी है, तब सविनय प्रतिरोधके खयाल

मात्रसे बहुतेरे लोग क्यों तलवार खींचने लगते हैं? हां, उनके इस कथनको तो मैं समझ सकता हूं कि भारतमें अहिंसामय वायुमण्डल होना वस्तुतः असम्भव है। मैं इस बातको मानता तो नहीं हूं पर ऐसे ऐतराजकी कद्र जरूर कर सकता हूं। पर जो बात मेरे खयालमें नहीं आती है वह यह कि सविनयभङ्गके सिद्धान्तके खिलाफ, मान वह कोई नीति विरुद्ध बात हो, यह मृत्युका मुकाबला करनेके सदृश तैयारी क्यों? मुझसे यह आशा करना कि मैं सविनय भङ्गका प्रचार करना छोड़ दूंगा मानों मुझे शांतिका प्रचार करना छोड़नेके लिये कहना है, जो मुझे आत्म हत्या करनेके लिये कहनेके बराबर है।

अबकी बार, कहते हैं, सरकार मेरे "यंग इण्डिया" गुजराती 'नवजीवन' और हिन्दी 'नवजीवन' इन तीनों साप्ताहिक पत्रोंका गला घोंट देनेकी फिराकमें हैं। मुझे आशा है कि इस अफवाहमें कुछ दम नहीं है। मैं दावेके साथ कहता हूं कि मेरे इन तीन पत्रोंने लगातार सिवा शांति और सद्भावके दूसरी किसी बातका प्रचार नहीं किया है। इस बातका असाधारण खयाल रखा जाता है कि सिवा सत्यके जैसा कि मैं उसको समझता हूं, दूसरी कोई बात पाठकोंको न पहुंचाई जाय। जब कभी कोई गलत बात असावधानीसे छप जाती है, फौरन मान ली जाती है और उसका सुधार कर दिया जाता है। तीनों पत्रोंकी ग्राहक संख्या प्रतिदिन बढ़ रही है। उनके सचा-

क लोग स्वेच्छासे काम कर रहे हैं; कुछ लोग वेतन मुल्क ही' लेते हैं। जो कुछ मुनाफा होता है वह पाठकोंको किसी किसी रूपमें लौटा दिया जाता है या किसी विधायक ष्ट्रीय अथवा दूसरे सत् कार्योंमें लगा दिया जाता है। मैं ही कह सकता कि यदि ये तीनो पत्र बन्द हो गये तो मेरे दयको व्यथा न होगी। लेकिन सरकारके लिये तो उनकी ान ले डालना बायें हाथका खेल है। उनके प्रकाशक और द्रक सब लोग मेरे मित्र और साथी हैं। मेरा ठहरव उनके ाथ यह है कि जिस घडी सरकार उनसे जमानत माग ें उसी घडी ये पत्र बन्द हो जायँगे। मैं उन्हें इसी ारणा पर चला रहा हू' कि सरकार मेरे कार्यो को चाहे किसी दृष्टिसे देखती हो, पर वह कमसे कम मुझे इस बातका ्रेय अवश्य देगी कि इन पत्रोंके द्वारा मैंने सिवा शुद्धसे शुद्ध अहिंसा और सत्यके जैसा कि मैं इन्हें अपने विचारमें समझता , दूसरी किसी बातका प्रचार नहीं किया है।

इतना होनेपर भी मैं आशा करता हू कि, चाहे सरकार मुझे गिरफ्तार कर ले या चाहे वह मेरे इन प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष साधनों तीनों पत्रोंको बन्द कर दे, लोग इससे विच-लित न होंगे। सरकारका इस डरसे मुझे न गिरफ्तार करना कि इससे सारे देशमें उपद्रव खड़ा हो जायगा, और इस अवस्थामें भीषण हत्या-काड मचेगा, मेरे लिये तो अभि-मानकी, न खुशीकी बात है, बल्कि इससे तो उल्टा मेरा शिर

नीचा हो जाता है। यदि मेरा कैद हो जाना इस बातका चिह्न हो जाय कि सारे देशमें तूफान उठ खडा हो तो यह मेरे अहिंसाके उपदेशपर पानी फेर देगा और महासभा तथा खिलाफतकी अहिंसाकी प्रतिज्ञा मिट्टीमें मिल जायगी। निश्चय ही यह इस बातका प्रमाण होगा कि भारत शातिमय बलवेके लिये तैयार नहीं है। वह नौकरशाहीके विजयका दिन होगा और इस बातका प्राय अन्तिम प्रमाण होगा कि नरम दलवाले मित्रोंकी ही बात ठीक है अर्थात् यह कि भारत कभी अहिसात्मक अवज्ञाके लिये तैयार नहीं किया जा सकता। इसलिये मैं आशा करता हू कि महासभा तथा खिलाफतके कार्यकर्तागण यह दिखलानेके लिये कोई उपाय बाकी न रख छोडेंगे। कि सरकारके तथा उसके सहायकोंके दिलमें जो डर है वह बिलकुल अकारण है। मैं प्रतिज्ञा करके कहता हू कि इस आत्मसंयमके द्वारा हम अपने त्रिविध लक्ष्यकी ओर मीलों आगे बढ जायंगे।

अतएव मेरे पकडे जानेपर न तो हडतालें हों, न बडी बडी सभायें की जाय, न जुलूस निकाले जायं, न शोरगुल मचाया जाय। उस अवस्थामें पूर्ण शान्ति धारण किये रहनेको मैं अपनी बडीसे बडी इज्जत समझूंगा। और इस बातको बडे प्रेमके साथ निहारूंगा कि महासभाका विधायक काम घडीकी तरह नियमके साथ बराबर और पञ्जाब एक्सप्रेसकी चालसे चल रहा है। हां, मैं इस बातको भी बडे चावसे देखूंगा कि जो

लोग आजतक पीछे रह रहे हैं वे आगे बढ़ रहे हैं, अपने विदेशी कपडोंका त्याग कर रहे हैं और उनकी होलिया जला रहे हैं। जहा उन्होंने बारडोलीका निश्चित रचनात्मक कार्यक्रम पूरा किया कि वे न केवल मुझे तथा दूसरे कैदी भाइयोंको भी छुडा लावेंगे, बल्कि स्वराज्यका भी महोत्सव मनावेंगे, और खिलाफत और पञ्जाबके अन्यायोंका भी परिमार्जन करा लेंगे। वे स्वराज्यके इन चार स्तम्भोंको जरूर याद रखें—अहिसा, हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई, यहूदी एकता, छुआछूतका पूर्ण त्याग और विदेशी कपडेका बहिष्कार तथा उसके स्थानपर हाथ कती और हाथबुनी खादी तैयार करना।

मैं नहीं कह सकता कि लोगोंके बीचसे मेरे अलहदा किये जानेसे लोगोंको लाभ न होगा। इससे एक तो लोगोंका यह अन्धविश्वास दूर हो जायगा कि मुझमें कोई दैवी शक्ति है। दूसरे यह विश्वास कि लोगोंने असहयोगका कार्यक्रम महज मेरे प्रभावमें आकर मजूर किया है, खुद उन्हें इसमें विश्वास नहीं है, असत्य सिद्ध हो जायगा। तीसरे इस कार्यक्रमके खास उत्पादकके भी हमसे अलहदा हो जाते हुए हम अपने कार्यों को योग्यताके साथ चलाते हुए यह सिद्ध कर पावेंगे कि स्वराज्यकी क्षमता हममें है। चौथे और मेरे स्वार्थकी दृष्टिसे मेरे शरीरको आराम और चित्तको शांति मिलेगी, जिसका कि अधिकारी मैं हू।

मृत्युका भय ।

(अक्टूबर १३, १९२१)

स्वराज्यकी बहुत सी व्याख्यायें मैं एकत्र कर रहा हू। उनमें एक व्याख्या यह भी है—मृत्युके भयका त्याग। जिस देशके लोग मौतके डरसे घबराये रहते हैं वह न तो स्वराज्य प्राप्त कर सकता है और न उसे सँभाल ही सकता है। अँगरेज लोग तो मौतको जेबमें लिये घूमते हैं, अरबी और काबली मरणको एक मामूली बीमारी समझते हैं। जब उनके यहा कोई मर जाता है तब वे रोते पीटते नहीं। बोअर स्त्रिया तो जानती ही नहीं थीं कि मरण भय क्या चीज है। बोअर युद्धके समय हजारों बोअर युवतिया विधवा हो गई। पर उन्होंने इसकी कुछ परवा न की। उन्होंने अपने दिलको समझाया कि, "मेरे पति या पुत्र मर गये तो क्या हुआ, मेरे देशकी इज्जत तो कायम रही। यदि देश गुलाम हो जाता तो पतिके रहनेसे भी क्या होता ? अपने गुलाम बेटेकी पर्वरिश करनेकी अपेक्षा तो उस की लाशको कब्रमें दफना देना और उसकी आत्माको याद करते रहना ही अच्छा है।" इस तरह धीरज रखकर असंख्य बोअर-रमणियोंने अपने प्रियजनोंको बिछुड़ने दिया।

ये तो उन लोगोंके उदाहरण हैं जो खुद तो मरते ही हैं, पर

दूसरोंको मारते भी हैं। परन्तु जो लोग मारते नहीं, सिर्फ मरते ही हैं, उनका क्या पूछना। ऐसोंकी तो संसार पूजा करता है। ऐसोंके बदौलत देशका उत्कर्ष होता है। यूरोपीय महाभारतमें अङ्गरेज और जर्मन दोनों आपसमें लड़े। दोनोंने दूसरोंको मारा भी और खुद मरे भी। फल यह हुआ कि शत्रुता बढ़ गई, अशान्ति बढ़ गई और आज यूरोपकी दशा दया-जनक हो गई है, पाखण्डकी वृद्धि हुई है और एक दूसरेको फासनेकी पेश-बन्दी कर रहे हैं। परन्तु जिस मृत्यु-भयको छोड़नेका दीर्घ प्रयत्न हम कर रहे हैं वह तो एक शुद्ध यज्ञ है और उसके द्वारा हम, थोड़े ही समयमें, बड़ी भारी विजय प्राप्त करनेकी आशा रखते हैं।

जब हमें स्वराज्य मिल जायगा तब या तो हममेंसे अधिकतर लोगोंने मौतका डर छोड़ दिया होगा या—यह कहना चाहिये कि—स्वराज्य मिला ही न होगा। अभी तक तो देशके ज्यादातर नौजवान लोग ही मरे हैं। अलीगढ़में जितने लोगोंकी जानें गई हैं वे सब २१ वर्षसे कम अवस्थावाले थे। उन्हें तो कोई जानता भी नहीं था। पर, अब भी यदि सरकारको खून-खराबीकी हवस हो तो मैं आशा करता हूँ कि उस समय देशका कोई पहली श्रेणीका मनुष्य उसकी गोलियोंका ग्रास होगा।

बालक मरें, चाहे जवान या बूढ़े मरें, हम इनसे भयभीत क्यों हों? कोई पल ऐसा नहीं जाता जब इस जगत्में कहीं किसीका जन्म और कहीं किसीकी मृत्यु न होती हो। पैदा

होने पर खुशिया मनाना और मौतसे डरना बडी मूर्खता है। यह बात हमें अवश्य सदा अनुभव करनी चाहिए। जो लोग आत्मवादी हैं—और हममें कौन हिन्दू, मुसलमान या पारसी ऐसा होगा जो आत्माके अस्तित्वको न मानता होगा ?—वे जानते हैं कि आत्मा कभी मरता नहीं। यही नहीं, बल्कि जीवित और मृत समस्त प्राणी, एक ही हैं, उनके गुण भी एक ही हैं। इस दशामें, जब कि जगत्में उत्पत्ति और लय पल पल पर होता ही रहता है, हम क्यों खुशिया मनावें ? और किस लिए शोक करें ? सारे देशको यदि हम अपना परिवार मानें—यदि हमारी भावना इतनी व्यापक हो जाय—और देशमें जहां कहीं किसीका जन्म हुआ हो उसे अपने यहा ही हुआ मानें तो कितने जन्मोत्सव मनाइएगा ? देशमें जहा जहा मौतें हों उन सबके लिए यदि हम रोते रहें तो हमारी आखोंके आसूँ कभी बन्द ही न हों। यह सोच कर हमें मृत्युका डर छोड ही देना चाहिए।

और देशके लोगोंकी अपेक्षा प्रत्येक भारतवासी अधिक ज्ञानी, अधिक आत्मवादी होनेका दावा रखता है। तिस पर भी मौतके सामने जितने दीन हम हो जाते है उतने और लोग शायद ही होते हों। और उसमें भी मेरा खयाल है कि हिन्दू लोग जितने अधीर हो जाते हैं उतने भारतके दूसरे लोग नहीं। अपने यहा किसीका जन्म होते ही हमारे घरोंमें आनन्द मङ्गल उमड पडता है और जब कोई मर जाता है तब इतना रोना-

पीटना मचता है कि आस-पासके लोग भी हैरान हो जाते हैं। यदि हम स्वराज्य लेना चाहते हैं और अपनेको उसके योग्य सिद्ध करना चाहते हैं तो हमें मृत्युका भय बिल्कुल छोड ही देना चाहिए।

और जो मनुष्य मृत्युका भय छोड देगा उसे जेलका भय क्यों कर होगा? पाठक यदि विचार करेंगे तो उन्हें मालूम हो जायगा कि स्वराज्य प्राप्तिमें हमें जो विलम्ब हो रहा है उस का एकमात्र कारण है—हम लोगोंमें मृत्यु तथा उससे भी नीचे दरजेके दु खोंको सहनेकी शक्तिका अभाव।

ज्यों ज्यों अधिकाधिक निरपराध मनुष्य जान बूझकर मौत की भेंटके लिए तैयार होते जायँगे त्यों त्यो दूसरे लोगोंका बचाव होता जायगा और दु ख भी कमसे कम होगा। जो दु.ख खुशीके साथ सहन किया जाता है वह दु.ख नहीं रहता, बल्कि सुख हो जाता है। जो दु खसे जी चुराता है वह बहुत कष्ट उठाता है और सङ्कटके उपस्थित होने पर निर्जीव सा हो जाता है। जो आनन्दके साथ दु खका स्वागत करनेके लिए पैर बढ़ाता है उसे वह आरम्भिक दु ख हो ही कैसे सकता है, जो केवल दु खकी कल्पनासे ही उत्पन्न होता है? और उसका आनन्द तो क्लोरोफार्मका काम करता है।

इस विषय पर इस समय जो मुझे इतना लिखना पड़ा वह इसलिए कि यदि हमें इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त कर लेना है तो मृत्युका विचार भी कर लेना होगा। जो लोग पहलेसे तैयारी

कर रखते हैं वे आपत्तिसे बच जाते हैं। हमारे विषयमें भी चाहे ऐसा हो जाय। मेरा दृढ़ विश्वास है कि "स्वदेशी-आन्दोलन" हमारी पेशबन्दी है। यदि इसमें हमारी फतेह हो गई तो, मैं समझता हूं, सरकारको अथवा और किसीको हमारी "अग्नि परीक्षा" की आवश्यकता ही न रहेगी।

परन्तु, इतना होने पर भी, यह आवश्यक है कि हम गफलतमें न रहें। सत्ता अन्धी और बहरी होती है। वह अपने पासकी घटनाओंको भी नहीं देख सकती। अपने कानके पास का कोलाहल भी वह नहीं सुन सकती। अतएव नहीं कह सकते कि जो सरकार मदोन्मत्त है वह क्या न कर बैठेगी? इस लिए मेरे मनमें यह खयाल उठा कि अब देश सेवकोंकी मृत्यु, जेल अथवा दूसरी आपत्तियोंके स्वागत—एक मित्रकी तरह स्वागत—करनेकी तैयारी कर रखनी चाहिए।

एक शूर वीर जिस प्रकार हंसते हुए मृत्युका स्वागत करता है उसी प्रकार वह सावधान भी रहता है। शान्तिमय संग्राममें तो गफलतके लिए जगह ही नहीं। हम ऐसे अपराध करके कि जो नीति और सदाचारके विरुद्ध हैं, जेल नहीं जाना चाहते, न फांसी पर ही लटकना चाहते हैं। हमें तो सरकारके अन्याय-मूलक कानूनोंका सामना करते हुए 'बलिदान' होना है।



मोपलाओंमें अशांति



मालावारमें एकाएक जो अशान्ति फैल गई है उसकी थोडी बहुत खबरें यहा ठेठ ईशानकोणमें भी मुझे मालूम हुई हैं। यह लेख मैं जन्माष्टमीके दिन रेलगाडीमें बैठे हुए लिख रहा हूं। जब तक यह पाठकोंके हाथमें पहुचेगा तब तक और भी बातें प्रकट हो जायंगी, तो भी जो खबरें अबतक मालूम हुई हैं उनसे निकलने वाले सिद्धान्तोंका विचार तो अगले समाचारोंमें कमोवेशी होने पर भी, हम कर सकते हैं।

मोपला लोग मुसलमान हैं। उनकी नसोंमें अरब लोगोंका खून बहता है। कहते हैं कि उनके बापदादे, कितने ही वर्ष पहले अरबस्तानसे आकर मालावारमें बस गये थे। मिजाज उनका बडा तेज है। मजहबके बडे कट्टर माने जाते हैं। जरा सी बातमें बिगडकर लड पडते हैं। बडे बडे खून उनके हाथों हुए हैं। उनको वशमें करनेके लिए, बहुत वर्ष पहले, एक खास कानून भी बनाया गया था। उनकी आबादी दस लाख गिनी जाती है। यह जाति अपढ किन्तु बहादुर है। मौतका तो उन्हें डर ही नहीं। जब लडाई पर निकलते हैं तब पीछे पांव न हटानेकी कसम खाकर ही निकलते हैं।

इससे कहा जाता है कि वे मारते या खून करते जरा भी नहीं हिचकते। उनके लड़ पडनेके डरसे जनाब य कुब हसन

रोके गये थे और फिर पीछेसे कैद भी कर दिये गये थे। इस बार वे क्यों बिगड खडे हुए यह बात अभी तो साफ नहीं मालूम हुई है। कहते हैं कि उन्होंने सरकारी नौकरोंको मार डाला है। खुद उनमेंसे कोई ५०० आदमी मारे गये हैं। यह भी सुनते हैं कि उन्होंने कितने ही मकानोंको जला डाला और लूट भी लिया। कालीकट तथा उसके ऊपरके हिस्सेमें आजकल फौजी कानून जारी है।

इस तरह अभी मालाबारमें प्रगति बन्द है और सरकारकी बन बैठी है। सरकार तो ऐसे बलवोंको दबानेकी कला खूब जानती है। कितने ही बे-गुनाह लोग मर चुके होंगे और मरेंगे। सरकारको बुरा कौन कहेगा ? और कहे भी तो सरकार उसे सुनने क्यों लगी !

जो अशान्तिको रोके अथवा शासन कर सके वही सरकार है। मालाबारने दिखा दिया कि हम असहयोगियोंका प्रभाव अभी पूरा २ नहीं जमा। जो लोगोंको अपने वश कर सके वही सरकार है। हम तो लोगोंको एक ही रीतिसे वश कर सकते हैं और वह है शान्ति।

अशान्तिके अथवा मार काटके द्वारा हम विजय प्राप्त करना चाहें तो भी इच्छित काम करने की ताकत हममें होने चाहिये। उस शक्तिको प्राप्त करनेके लिए हमें क्या करना चाहिये, यह सोचना फजूल है, क्योंकि इस उपायसे फतेह हासिल करना हमारी बुद्धि और अनुमानके बाहरकी बात है।

पर यह तो साफ दिखाई देता है कि हमारी शान्ति भंग हो गई। दो प्रतिकूल वस्तुयें एक दूसरीके साथ नहीं चल सकतीं। एक तरफसे शान्ति और दूसरी तरफसे अशान्ति हो तो इसमें किसीकी भी जीत नहीं हो सकती।

यह तो पक्की बात है कि हम मोपलाओंके ऊपर असर न डाल सके। उनके दिलका इतना बहलाव नहीं हुआ कि जिससे वे कभी अशान्त न हों। उनकी अशान्ति तो हमको मौका देने वाली है, हमारी प्रगतिको रोकती है।

अब जो लोग यह मानते हैं कि हमारी फतेह तो शान्तिके ही द्वारा हो सकती है, उन्हें यही समझना चाहिये कि अशान्तिको हमें अपने दिलकी तहमें भी स्थान नहीं देना है।

दूसरे प्रान्तोंको भी अपने कर्तव्यके पालनमें एक दिलसे जुट जाना चाहिये। एक प्रान्त भी अगर पूरी कोशिश करे तो इसी सालमें स्वराज्य स्थापित करना नामुमकीन नहीं। अगर दूसरे पिछड जाय और सिर्फ एकही प्रान्त पूरी तरहसे असहयोग करे तो भी इसी सालमें स्वराज्य प्राप्त करना बिल्कुल सम्भवनीय मालूम होता है। परन्तु हां, दूसरे प्रान्तोंमें अथवा किसी एकही प्रान्तमें अशान्तिके जारी रहने पर भी एक ही प्रान्तके शान्त साहससे, मैं यह दावेके साथ कहनेकी हिम्मत नही करता कि स्वराज्य मिल ही जायगा। विघ्न तो मैं बहुतेरे देखा करता हूं परन्तु फिर भी अपने कर्तव्य पर बिलकुल पक्के तौरसे मेरी नजर है। हम अधिक संयम रक्खें, अधिक शुद्ध हों अधिक जागृति

या सचेत रहें, अधिक कुरबानियां करें। दोनों शक्तियोंकी दिशायें जुदी जुदी हैं। इसलिये जब हमारी शान्तिका बल अधिक होगा तभी हमारी गाड़ी आगे चल सकती है। एक लढियाके चार बैल हों और उनमेंसे एक मर जाय या छूट निकले तो उसका बोझ बाकीके तीन बैलोंको उठाना पडता है। परन्तु अगर चारमेंसे एक छूट या मर तो नहीं जाय बल्कि उलटा घूम जाय, उलटे रास्ते जाने लगे, तो फिर बाकी तीन बैलोंका काम केवल इतना ही नहीं रहेगा कि एक बोझा उठावे वरन् उस उलटा चलनेवालेके उपद्रवको रोकनेकी शक्ति भी प्राप्त करे, इस तरह सच्चे असहयोगियोंका बोझ अब और भी बढ गया है।

मैं तो यह बराबर देखता हूं कि हमारे रास्तेमें भारी से भारी विघ्न सरकारकी तरफसे नहीं बल्कि खुद हमारी ही तरफसे आते हैं। हमारी उलटी गति, हमारी नासमझी हमारे काममें जितनी रुकावट डालती है उतनी सरकारकी उलटी गति हमें नहीं रोकती है। यदि सरकारके विपरीत गतिको हम समझ लेंगे तो हम आगे बढ जायगे। परन्तु स्वयम् अपनी कमजोरी और उलटी गतिकी बदौलत हम पीछे हटेंगे। सच है आत्मा ही हमारा शत्रु है और मित्र भी है। इस शत्रुको जीतनेमें ही शान्तिमय असहयोगकी पूरी विजय है।



मोपला-उत्पातका अर्थ



(अक्तूबर २०, १९२१)

स्काटलैण्डसे एक सज्जन मुझसे जवाब तलब करते हैं कि अभीतक आपने अपने अखबारमें मोपला—उत्पातके सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट क्यों नहीं किये। इसका फल यह हुआ है कि इंग्लैण्डमें जो लोग भारतीय प्रश्नोंके मनन करनेके प्रेमी हैं उनका यह खयाल होता चला है कि हिन्दुस्तानमें तो मुसल्मानोंकी बादशाहत कायम हो गई है। हां, यह फटकार बिलकुल ही बेजा नहीं है, लेकिन मैंने अपनी तरफसे अपना फर्ज अदा करनेमें किसी तरह मुंह नहीं मोड़ा है। मेरा तो इसमें कोई चारा ही नहीं रहा। मैंने खुद कालीकट जाकर इस उपद्रवकी असलियतको जानना चाहा था, और मुझे विश्वास था कि मैं उसमें अवश्य सफल होता। लेकिन सरकारकी इच्छा कुछ और ही थी। मुझे यह विश्वास करते दुःख होता है किन्तु यह मेरा विश्वास है कि वहाके अधिकारी इस उपद्रवका अन्त नहीं करना चाहते। और यह तो उन्हें अवश्य ही अभीष्ट नहीं है कि इस उपद्रवका अन्त शान्तिके साथ करनेका श्रेय असहयोगियों को मिले। वे तो फिर एक बार यह दिखानेके लिये लालायित हो रहे हैं कि केवल अंग्रेजी फौज ही हिन्दुस्तानमें शांति कायम

रख सकती है। इस दशामें मैं सरकारके इस फरमानका अवज्ञा करके कि आप मलाबार न जाइये सरकारसे मुठभेड न कर सका।

मैं वहांके हाकिमोंकी निस्बत अपना ख्याल अच्छा बनाना पसन्द करता हूं। यह मानना तो मेरे स्वभावके विपरीत है कि मनुष्य जाति स्वभावत नीच है। किन्तु नौकरशाहीकी नीचताके तो इतने सबूत मेरे आसपास हैं कि वह अपना मतलब गाठनेके लिये चाहें जा कर बैठनेमें कभी न हिचपिचायेगी। मेरे चम्पारन जानेके पहले चम्पारनके किसानोंपर किये गये अत्याचारोंकी जो कथायें मैंने सुनी थीं, उनपर मुझे विश्वास नहीं होता था। मेरा यह कथन अक्षरश सत्य है। परन्तु जब मैं वहा पहुचा तो मैंने देखा कि वहाकी हालत जो मैंने सुनी थी उससे भी अधिक खराब है। मैं इस बातको नहीं मानता था कि जलियांवाला बागकी तरह बे गुनाह लोग कहीं बिना ही हिदायत दिये जानबूझकर कत्ल किये जाते होंगे। मुझे यह विश्वास हो नहीं होता था कि मनुष्य भी कहीं जबरदस्ती पेट के बलपर रेंगाया जाता होगा। किन्तु जब मै पञ्जाब पहुंचा तब वहाकी हालत देखकर भौंचक रह गया कि ओफ! इतना तो मैंने सुना भी नहीं था। और यह सब किया तो गया कहनेके लिये शान्ति और व्यवस्थाके नामपर परन्तु दर असल एक झूठी प्रतिष्ठाकी दोषमय शासन प्रणालीकी और अस्वाभाविक व्यापारकी जड मजबूत करनेके लिये। हा, यह सच है कि

मोपलोंके ऊपर किसी तरहका दोषारोपण नहीं किया जा सकता। धर्म और सदाचारका यह परिच्छिन्न रूप है। पर मौलाना हसरत मोहानीकी दृष्टिमें धर्मके नामपर अधर्माचरण भी धार्मिक है। जहांतक मैं जानता हूं इस्लाम धर्म इस तरहकी बातोंका प्रतिपादक नहीं है। इस सम्बन्धमें मैंने अनेक मुसलमानोंसे भी बात चीत की है। वे भी मौलाना साहबके मतसे सहमत नहीं हैं।

मैं अपने मलाबारके साथियोंसे यही कहूंगा कि वे मौलानाकी बात न सुनें। यद्यपि धर्मके बारेमें उनका इस तरहका विचित्र मत है तथापि मैं जानता हूं कि हिन्दू मुस्लिम एकता और राष्ट्रीयताका उनसे बढ़कर कट्टर समर्थक दूसरा नहीं है। उनका हृदय उनकी बुद्धिसे कहीं उत्तम है। पर इस समय वह गलत मार्ग पर जा रहा है।

मलाबारवालोंकी यह धारणा भ्रान्त है कि मोपलोंके अत्याचारकी निन्दा भारतके अन्य मुसलमानोंने नहीं की है और उलटा उसका प्रतिपादन किया है। इस्लाम धर्मका कहना है कि संग्राममें भी औरतें, बच्चों और बूढ़ोंकी रक्षा करो। उन्हें किसी तरहका संकट न सहना पड़े। इस्लाम धर्म प्रतिकूल अवस्थामें जेहादका समर्थन नहीं करता। इस्लाम धर्मकी जो जानकारी मुझे है उसके अनुसार मैं तो यहां कहसकता हूं कि अपनी प्रेरणासे मोपले जेहाद कभी भी नहीं कर सकते थे। मौलाना अब्दुलबारीने मोपलोंके अत्याचारोंकी कड़ी निन्दा की है।

पर यदि मुसलमान उन अत्याचारोंकी निन्दा न भी करें तो "हिन्दुओंने मोदेके तौरपर तो मुसलमानोंके साथ मैत्रीकी नहीं है? मैत्री शब्दसे ही प्रगट होता है कि इस तरहकी कोई बात नहीं है। यदि हमलोगोंने राष्ट्रीय आदर्श प्राप्त की होती तो मोपला भी हिन्दू ही हो सकते हैं। मोपलोंकी कट्टरता पर हिन्दुओंको उतना विचार नहीं करना चाहिये जब वे अपनी कट्टरतापर उतना विचार नहीं करते। यदि मोपलोंके बजाय आज हिन्दुओंने हिन्दुओंको लूटा होता तो क्या उनके ऊपर मुकदमा चलाया जाता। इस तरहकी घटनाओंके प्रतिकारके ढूंढ निकालनेकी जितनी जिम्मेदारी हिन्दुओंके ऊपर है उतनी ही मुसलमानोंके ऊपर है। यदि कोई मुसलमान हिन्दूके ऊपर या हिन्दू मुसलमानके ऊपर अत्याचार करता है तो वह अत्याचार एक भारतीय द्वारा दूसरे भारतीय पर समझना चाहिये और उसकी जिम्मेदारी हम सबको ओढनी चाहिये। तथा उस बुराईको दूर करनेका यत्न करना चाहिये। हिन्दू मुस्लिम एकताका यही अभिप्राय है। जिस राष्ट्रीयतामें ये भाव न हों वह राष्ट्रीयता किसी कामकी नहीं। राष्ट्रीयता क्षेत्र जातीयताके क्षेत्रसे विस्तृत है। इस अभिप्रायसे हम लोग प्रथम भारतीय हैं और पीछे हिन्दू, मुसलमान, पारसी, और ईसाई हैं।

इसलिये मोपलोंके अत्याचारोंके सबन्धमें मौलाना हसरत मोहानीने जो मत प्रगट किया है उसके लिये खेद प्रगट करते

हुए भी हमें समस्त मुसलमानोंके ऊपर दोषारोपण नहीं करन चाहिये और न मौलानाको मुसलमानोंकी हैसियतसे दो देना चाहिये हमें यह भाव रखकर दुःख प्रगट करना चाहि कि हमारा एक हिन्दुस्तानी भाई यह नहीं देखता कि हमार दूसरा हिन्दुस्तानी भाई अत्याचार कर रहा है। यदि हम लोग इस तरहकी घटनाओंका सवन्ध जातिसे रखेंगे तो हमर्मे एकता नहीं स्थापित हो सकती।

हमारे विरोधी कह सकते हैं कि ये सब वाहियात बातें हैं क्योंकि इनमें वास्तविकता नही है। यह केवल ख्याली हैं। पर मेरा कहना है कि जबतक सिद्धान्तोंके अनुकूल अवस्था न बना लेंगे और जबतक सिद्धान्तोंको वर्तमान अवस्थाके उपयोगी नही बना लेंगे हममें दृढता नहीं आ सकती। भारतीयकी हैसियतसे हिन्दू भारतीय मोपलोंकी बुराई दूर करनेकी चेष्टा करें तो इसमें असभव बात क्या है? यदि हिन्दुओंसे कहा जाय कि आप साहस ग्रहण कीजिये, दृढ़ बनिये और मरते दमतक जबर्दस्ती किसी मतको न स्वीकार कीजिये तो इसमें हानि क्या है। मुझे यह सुनकर प्रसन्नता हुई कि अनेक हिन्दू ऐसे थे जिन्होंने मोपलोंकी जबर्दस्तीके बनिस्बत प्राण दे देना ही उचित समझा। यदि ये लोग बिना किसी राग या द्वेषके मरे हैं तो उन्होंने सच्चे हिन्दूकी हैसियतसे प्राण दिया है उस कुलके सच्चे भारतीय अथवा हैं

है। यदि इनके प्राण लेने वाले मुसलमान न होकर हिन्दू ही होते तो भी वे इसी तरह अपना प्राण दे दिये होते। यदि हिन्दू मुस्लिम एकता परस्परके बदलौन या सौदे पर ही ठहर सकती है तो वही ही वाहियात चीज है। क्या पति पत्नीका सम्बन्ध केवल दोनोंके सद्भाव पर ही निर्भर करता है? क्या पति खराब है या पत्नी बुरी है इसलिये दोनोंका सम्बन्ध नहीं रह सकता। यदि पत्नी पति वैवाहिक सम्बन्धको इसी तरहका बदलौन समझने लगेंगे तो विवाहकी कोई मर्यादा नहीं रह जायगी। यदि पत्नीका आचरण उसे पतनकी ओर ले जाता हो तो पतिका कर्तव्य है कि वह उसे और नजदीक घसीट ले। उस समय पतिका स्नेह दूना हो जाना चाहिये। इसलिये जिस समय मुसल्मान या मोपलोंसे विपत्तिकी अधिक सम्भावना हो या विपत्ति आ चुकी हो उस समय हिन्दूको उनके प्रति और भी घनिष्ठता दिखलानी चाहिये। यदि मेल सच्चा है तो कड़ेसे कड़े आघात पर भी उसे नहीं टूटना चाहिये। यह बन्धन अटूट होना चाहिये।

जो कुछ मैंने ऊपर कहा है सब स्वार्थसे भरा है। क्या एक हिन्दू अपने शरीरसे अपने धर्म और देशकी अधिक परवा करता है। यदि इसका उत्तर 'हां' है तो उस हिन्दूको इस मूर्ख तथा अनजानकार मुसलमानसे कभी नहीं लड़ना चाहिये जिसे न देशका ख्याल है न धर्म का। ये सब बातें ठीक उस सौतकीसी है जिसने लड़केके दो टुकड़े न करके, साराका सारा अपनी सौतको दे दिया।

थोडी देरके लिये मान लीजिये—यद्यपि यह सच नहीं है—कि मोपलोंके अत्याचारोंका सभी मुसलमान समर्थन करते हैं। तो क्या इससे हिन्दू मुसलमान एकता टूट जायगी। यदि यह एकता इस तरह टूट गई तो—क्या इससे, हिन्दुओंकी अवस्था किसी भी तरह अच्छी हो सकती है या सुधर सकती है। क्या वे लोग अपने शत्रु मोपलों और मुसलमानोंसे बदला लेनेके लिये विदेशी शक्तियोंकी सहायता लेंगे और इस तरह उनका नाश करा कर अपनी दासताकी बेडी और भी मजबूत करावेंगे?

असहयोगका सिद्धान्त सर्वव्यापी है। जिस तरह यह एक घरके लिये पूरी तरहसे लागू है उसी तरह वह विश्वभरमें पूरी तरह लागू है। शक्ति और आत्मसंयम प्राप्त करनेका यह एक तरीका है। हिन्दू और मुसलमानोंको आपसमें मिल जानेके पहले संसारभरके मुकाबिलेमें अकेले खडा होनेकी शक्ति और योग्यता प्राप्त कर लेना चाहिये। यह मेल कमजोर शक्तियोंके बीच नहीं होना चाहिये। बल्कि उन लोगोंके बीच होना चाहिये जिन्हें अपनी शक्ति पर भरोसा है। मुसलमानों या हिन्दुओंकी यह दुर्बलता होगी यदि वे उन स्थानोंमें जहां उनकी संख्या नितान्त कम है,—अपने धर्मकी रक्षाके लिये हिन्दू या मुसलमानों पर भरोसा करेंगे। असहयोग आत्म-विकासका सिद्धान्त है। पर यदि बलिष्ठ शक्ति पशुवत आचरण करे और दुर्बलको सतावे तो यह सिद्धान्त किसी भी प्रकार उपयोगी नहीं हो सकता। क्योंकि उस अवस्थामें जो उनसे बलवान होगा वह उन्हें

भी कुचल देगा। इसलिये यदि मुसलमान धार्मिक जीव बनकर रहना चाहते हैं तो उन्हें अपने भीतर शक्तिका सञ्चय करना चाहिये। उन्हें शक्तिवान और साथ ही नम्र होना चाहिये। हिन्दुओंको उचित है कि वे मोपलोंकी इस क्रूरताका पता लगावें। उस समय उन्हें विदित होगा कि वे निर्दोष नहीं हैं। आज तक उन्होंने मोपलोंकी फिकर नहीं की थी। आजतक यातो वे उन्हें कृषक दास समझते रहे या उनसे भय खाते रहे। उन्होंने मित्र अथवा पड़ोसीकी तरह उन्हें नहीं देखा है। और न उनका सुधार किया है, और न उनकी मर्यादा रखी है। इस समय मोपलों या मुसलमानोंको दोष देना उचित नहीं है। यह मैं स्वीकार करता हूं कि प्रत्येक हिन्दू मुसलमानोंकी सहायता और सहानुभूतिकी आशा करता है फिर भी उसे अपने अन्दर शक्तिका समुच्चय कर अपने आप अपनी सहायता करनी चाहिये। यदि मुसलमान खिलाफतकी रक्षाके लिये हिन्दुओंकी मददका भरोसा करें तो इस्लामके लिये इससे दुखद बात और क्या हो सकती है। हिन्दुओंसे मुसलमानोंको इसलिये सहायता मिल रही है क्योंकि हिन्दुओंका यह धर्म है। मुसलमान बिना किसी बाधाके हिन्दुओंकी सहायता स्वीकार करें पर उनका अन्तिम विश्वास ईश्वरके सहारे ही रहना चाहिये। क्योंकि निःसहायों का वही एकमात्र सहायक है। मालाबारके हिन्दुओंको भी यही भाव ग्रहण करना चाहिये।

परेशान करनेवाला परीक्षक



असहयोगकी युनिवर्सिटीका मैं ग्रजुएट होता तो बहुत अच्छा होता। पर मेरे परीक्षक यह बतलाते हैं कि मैंने अभी इस युनिवर्सिटीकी मैट्रिकुलेशन परीक्षा तो पास की है, पर कालेजमें अभी बहुत कालतक पढ़ना बाकी है। मेरे साथ पत्र व्यवहार करनेवालोंमें मेरे सिन्धी मित्रही सबसे अधिक खोजके प्रश्न करते हैं और कभी कभी ये प्रश्न चिढ़ानेवाले भी होते हैं। "यङ्ग इण्डिया" के पाठकोंको मैं जो कुछ सुनाता हूं वह इन्हीं परीक्षा पत्रोका नमूना होता है। ऐसा ही एक पत्र सिन्धसे है आया है जो नीचे दिया जाता है—

१ क्या आप समझते हैं कि आपके असहयोग आन्दोलनसे हिंसा (खूनखराबी) न होगी ?

यदि मैं यह समझता तो इसकी सलाह ही न देता।

(२) अहिंसाके सिद्धान्तका पूरा पूरा विवेचन कीजिये।

अहिंसा स्वेच्छासे किसीके जान या मालका नुकसान नहीं कर रही है। इसी सिद्धान्तसे, मैं जेनरल डायरको भी सजा देना या दिलाना नहीं चाहता। पर उसे पेन्शन देनेसे इन्कार करना या उचित शब्दोंमें उसे फटकार बताना यह स्वेच्छा पूर्वक उसे चोट पहुंचाना नहीं है। खूनीको रक्षा

करना मेरा काम नहीं है, चाहे वह मेरा बाप हो या बेटा। उसे सहारा देनेसे हाथ खींच लेना ही कर्तव्य है। मैं सांपको न मारूंगा पर उसे पालूंगा भी नहीं।

यदि आपके आन्दोलनसे हिंसा य खूनखराब आरम्भ हुई तो क्या आप पहाड़ोंमें चले जायेंगे?

यदि असहयोगसे खून खराबा हुई या असहयोगियोंने हिंसाकी शरण ली अर्थात् यदि हिन्दुस्तानने हिंसाका सिद्धान्त स्वीकार किया और मैं जीता रहा तो मैं हिन्दुस्तानमें रहकर जीना न चाहूंगा। वह हिन्दुस्तान मेरे लिये गौरवका स्थान न होगा। मेरी देशभक्ति मेरे धर्मको दासी है। मैं हिन्दुस्तान की गोदमें बैठा हुआ हूं जैसे एक शिशु अपनी माताकी गोदमें बैठता है, कारण मैं समझता हूं कि भारत माता मुझे वह आध्यात्मिक आहार देती है जिसका मुझे आवश्यकता है, हिन्दुस्तानकी परिस्थिति ऐसी है कि उससे मेरी अत्यन्त उच्च आकांक्षाओंको सहारा मिलता है। जब यह श्रद्धा चली जायगी तब मेरी अवस्था एक अनाथ बच्चेकी सी होगी और कोई पालक मिलनेकी कोई आशा न रहेगी। तब हिमालयका हिमाच्छादित एकान्त स्थान अवश्य ही मेरी आहत रक्तस्रावी आत्माको अपनी शक्तिभर शान्ति देगा। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि जो हिंसा मुझे हिमालयमें भगा देगी वह हिंसा भाषा या हुल्लडकी हिंसा नहीं है जिससे प्रतिवादी टोका कर मुझे हिमालयका स्मरण कराते हुए प्राय. ताना मारा

करते है। यह हिंसा असहयोगके कारण नहीं होती, न असहयोगवादियोंकी तरफसे होती है। पहलेसे जो अमर्यादा चली आती है उसीके कारणसे ये उद्रेक होते हैं। दिन दिन इसका भी नियन्त्रण होता जा रहा है। यह इतनी जरासी बात है कि इससे यह भली भांति प्रत्यक्ष हो जाता है कि आज हिन्दुस्थानमें पूर्ण शान्ति विराज रही है। यह शांति, यदि सरकारी अफसरोंके जान कर या बेजाने चिढ़ाने पर भी, उनके क्लेशदायक और प्राय बेकानूनी नोटिसोंकी हालतमें भी, बनी रही तो इससे यह निष्कर्ष समझिये कि वर्ष समाप्त होनेके पहले ही स्वराज्य मिल जायगा। कारण इससे सब लोगोंका मतैक्य और दृढ़ निश्चय प्रकट होता है।

(४) यदि खून खराबी हुई तो और असहयोगवादियोंको क्या करना चाहिए? क्या असहयोगका उपदेश उन्हें बन्द कर देना चाहिए?

जब कभी यह तूफानी खून खराबी पैदा होगी तब सच्चे असहयोगवादी उस खून खराबीको रोकनेके प्रयत्नमें अपनी जान दे देंगे। तृतीय प्रश्नमें केवल मेरे बचे रहनेकी बात मानी गई है। पर मान लीजिए कि मैं हिमालयमें चला गया (मौतसे बचनेके लिये), तो बाकीके असहयोगवादी मेरी इस कायरताकी परवा न कर अपने सिद्धान्त पर डटे रहेंगे और मरते दमतक अपना प्राण न छोड़ेंगे। तब रक्तके तेज प्रवाहमें उपदेशककी आवाज भी निःशेष हो जायगी।

(५) यदि आप पहाडोंपर चले जायँ तो उन बेचारे विद्यार्थियोंकी क्या दशा होगी जिन्होंने एडेड या सरकारी विद्यालयोंका बहिष्कार किया है ?

प्रश्न करनेवाला इस बातको भूल गया है कि जब भारतमें खून खराबीका ही साम्राज्य फैलेगा तब विद्यार्थियोंके लिये क्या सरकारी और क्या स्वतन्त्र कोई विद्यालय ही न रह जायगा। केवल उन्हीं विद्यार्थियोंसे सरकारी स्कूल छोडनेको कहा जा रहा है जो यह समझते हैं कि उन स्कूलोंमें पढना पाप है। उन स्कूलोंमें फिरसे जानेका सवाल ऐसे विद्यार्थियोंके बारेमें उठता ही नहीं। और मेरे पहाडोंमें चले जानेके साथ विद्यार्थियोंके सरकारी विद्यालयोंके बहिष्कारका सम्बन्ध ही क्या है ? प्रत्येक विद्यार्थी इस बातको समझ सकता है कि अपने और अपने देशके लिये क्या करना चाहिए। स्वराज्यका आन्दोलन एक आदमी पर निर्भर नहीं कर सकता—नहीं करना चाहिए। मैंने हिन्दुस्तानको केवल एक नया और अप्रतिम शस्त्र भेंट किया है या यह कहिये कि एक प्राचीन और आजमाये हुए शस्त्रका व्यापक रूपसे प्रयोग करना बतलाया है। हिन्दुस्तान चाहे इसे ले या फेंक दे। उसके लिये मैं इसका प्रयोग नहीं कर सकता। अपने लिये कर सकता हूं, किया है और उससे मैं स्वतन्त्रता अनुभव करता हूं। और लोगोंने भी इसका प्रयोग किया है और उन्हें भी यही अनुभव हुआ है। यदि राष्ट्र इस शस्त्रका प्रयोग करे तो वह स्वतन्त्र हो जाय।

(६) आपके असहयोग आन्दोलनने कहा तक तरक्की की?

यहा तक कि मैं इस बातका अनुभव कर रहा हू कि स्वराज्य दौड़ा आ रहा है। यदि हम इसी गतिको कायम रक्खें तो इसी वर्षके अन्दर हम लोग स्वतन्त्र हो जाय।

(७) क्या आपको मालूम है कि बहुतसे असहयोगवादी कार्यकर्त्ता बे-जिम्मेदार हैं? क्या आपने कभी उनका निषेध किया है?

नहीं, मुझे नहीं मालूम। बल्कि मुझे यह मालूम है कि बहुतसे असहयोगवादी जिम्मेदार, शान्त, सच्चे और वीर पुरुष हैं। जहा मैंने बे जिम्मेदारीकी कोई बात देखी है वहा मैंने उसका निषेध भी किया है।

(८) किस हालतमें आप अक्टूबरमें स्वराज्य पानेकी आशा रखते हैं।

स्वराज्यकी शर्तें मैं इस पत्रमें पहले लिख चुका हू। पिछले अङ्क उलट कर देख लीजिये।

(९) क्या चरखेसे हिन्दुस्तानकी दरिद्रताका प्रश्न हल हो जायगा? यदि हा, तो कैसे?

मेरा अब पहलेसे भी अधिक दृढ विश्वास हो गया है कि चरखेके बिना हिन्दुस्तानकी दरिद्रताका प्रश्न हल हो नहीं सकता। कोई ऊपरी काम काज न मिलनेसे हिन्दुस्तानके लाखों किसान भूखों मरते हैं। उनकी आयका जो कुछ थोडासा साधन है उसमें यदि चरखा भी आ-

जाय तो वे दरिद्रता और दुर्भिक्षसे अच्छी तरह सामना कर सकते हैं। मिलोंसे यह प्रश्न हल नहीं हो सकता। केवल चरखे से हो सकता है और किसी चीजसे नहीं। जब हिन्दुस्तान चरखेसे सूत कातना छोडनेके लिये मजबूर किया गया तब इस कामके बदले कोई दूसरा धन्धा उसे न मिला। जरा सोचिये तो सही कि उस आदमीकी क्या हालत होगी जिसके महज गुजारे भरकी आमदनीका चौथा हिस्सा एकाएक छिन जाय। हिन्दुस्तानके सैकडे ८५ से अधिक आदमियोंको अपने समयका चौथाईसे अधिक हिस्सा बेकार बिताना पडता है। और भारतके वृद्ध तपस्वीने देशके जिस भयानक दोहनकी बात कही है उसके अतिरिक्त इस मजबूरीकी बेकारीसे भी हिन्दुस्तानकी दरिद्रता बराबर बढ़ती हो जा रही है। अब प्रश्न यह है कि हिन्दुस्तान के इन करोडों आदमियोंका अरबों घण्टे समय किस प्रकार काममें लाया जाय जिससे कुछ काम भी हो और उनके धन्धेमें कोई बाधा न पडे। चरखोंका जीर्णोद्धार ही इसका एक मात्र उत्तर है। कल कारखानोंके सम्बन्धमें मेरे जो अपने विचार हैं अथवा सभी विदेशी मालका बहिष्कार करनेकी जो बात है उससे इस बातका कोई सम्बन्ध नहीं है। हिन्दुस्तानका इसी वर्ष यह उत्तर पूर्ण रूपसे स्वीकार करना होगा। टालमटोल करना पागलपन है। मैं यह लेख पुरीमें लिख रहा हूं। साक्षात् जगन्नाथजीकी छायामें स्त्री पुरुषों और बच्चोंकी यह हालत है कि उनकी हड्डियों पर मांस तक नहीं है। यह दृश्य मैं सह

नहीं सकता। यदि मेरा बस चलता तो मैं स्कूल, कालेज तथा अन्य संस्थाओंके सब काम बन्दकर चरखेका काम वहा जारी करता, इन बालक बालिकाओंको सिखाकर चरखेका उस्ताद बनाओ, हर एक बढ़ईको चरखे तैयार करनेके काममें लगा दो और शिक्षकोंसे कहो कि प्राण देनेवाले इन यन्त्रोंको घर घर पहुंचाओ और उन्हें सूत कातना सिखलाओ। यदि मेरा बस चलता तो कपासका विदेश जाना एकदम बन्द कर देता और इन घरोंमें उससे सूत कतवाता। देश भरमे इस सूतके आढ़ते खोल देता जहासे यह सूत जुलाहोंको मिलता। यदि काफी मुस्तैद और तालीम पाये हुए काम करनेवाले मिल जायं तो मैं इसी वर्षके अन्दर हिन्दुस्तानसे दरिद्रता भगा दूं। इसमें अवश्य ही लोगोंको अपना दृष्टि कोण और रुचि बदलनी पड़ेगी। मैं रिफार्म आदिको वह दवा समझता हू जो जागतेको सुलाकर फिर उसकी विवेक बुद्धि मार डाले। जिस बातकी व्यग्रता दिन दिन बढ़ती ही जा रही है, उसमें सब्र नहीं किया जा सकता। प्रकृति बड़ी ही न्याय निष्ठुर है, वह किसी पर दया नहीं करती। यदि हम जल्द ही न जाग उठें तो हमारा अस्तित्व ही मिट जायगा। जिन्हें विश्वास न हो वे काम छोड़कर आवें, ग्रामोंमें घूमें और अपनी आंखों हिन्दुस्तानकी हालत देख ले तब उन्हें विश्वास हो जायगा कि विदेशी कपड़ेकी एक धज्जी भी अपने बदनपर या अपने पास रखना हिन्दुस्तान और मानव-जातिका अपराध करना है।" मैं मूर्खो रहकर आत्महत्या नहीं

कर डालता। इसका कारण यह है कि मुझे विश्वास है कि हिन्दुस्तान जाग उठेगा और इस सत्यानासी दरिद्रतासे स्वाधीनताके मार्ग पर चलनेमें समर्थ होगा। इस बातका यदि मुझे विश्वास न होता तो मैं जीना न चाहता। मैं प्रश्न करनेवालेसे तथा देशके प्रत्येक समझदार भक्तसे यह कहता हू कि राष्ट्रकी यह सेवा करो कि घर घर चरखेका प्रचार करो और इस वर्षके अन्दर विदेशी कपडेका पूर्ण बहिष्कार कराके राष्ट्रको इस चरखे से लाभ पहुचाओ।

सब प्रश्न मैं खतम कर चुका और उनके उत्तर भी यथामति दे चुका। प्रकृत व्यवहारकी दृष्टिसे सबसे महत्त्वका प्रश्न चरखेके सम्बन्धका था। मैं समझता हू, भारतकी दरिद्रता दूर करनेका एक मात्र उपाय घर घर चरखा चलाना है, यह बात मैंने समझा दी है। मैं यह भी जानता हू कि जब आदमी काम करने जाता है तो उसके सामने अनगिनती कठिनाइया उपस्थित होती हैं। सबसे बडी कठिनाई शायद यही है कि चरखा अच्छा नहीं मिलता। पञ्जाबमें यह कला अभी तक जीवित है और इसलिये यहा अच्छे चरखे मिल जाते हैं, पर और जगह सचमुच बडी कठिनाई पडती है। इसलिये काम करनेवालेको सबसे पहले यह कला जान लेनी चाहिए और चरखा चलाना सीख लेना चाहिए।

चरखा ठीक है या नहीं यह जाननेके लिये मैं कुछ सीधी सादी पहचानकी बातें यहा लिख देता हू। जिस यन्त्रमें ये

बातें न मिलें वह लेना न चाहिए, न उसका प्रचार करना चाहिए।

(१) चरखा आसानी और आजादीसे चले, कर्कश आवाज न हो।

(२) चक्र चलानेकी मुठिया बीचके डण्डेमें मजबूतीसे बैठी हुई हो।

(३) चरखेके खम्भे मजबूतीसे बैठाये हुए हों और जोड भी।

(४) सूईके चलनेमें आवाज न हो और उसके हत्थोंमें धक्का न लगे।

(५) वह यन्त्र ठीक नहीं है जिसमें मॅजे हुए हाथसे एक घण्टेमें कमसे कम ढाई तोला ६ नम्बरी सूत न निकले। एक लडकेको मैंने देखा जिसका अभ्यास केवल तीन मासका था और ६ नम्बरी सूत, ३५ मिनटोंमें ढाई तोला निकालता था। कमसे कम एक घण्टा चलाकर चरखेको खूब परख लेना चाहिये और परखकर तब वह किसीको देना चाहिये।



न तपस्वी न राजनीतिज्ञ

(मई १२, १६२०)

एक सम्मानित मित्रने 'ईस्ट एण्ड वेस्ट' नामी पत्रके किसी अंकसे निम्नलिखित अवतरण भेजा है —

"मिस्टर गांधीको लोग तपस्वी कहते हैं पर उनके आचरणोंसे यही पता लगता है कि उनमें राजनीतिज्ञकी मात्रा अधिक है। वे हड़तालोंका अधिकाधिक प्रयोग करते जा रहे हैं और यह कहना सदोष या अत्युक्तिपूर्ण न होगा कि उनकी देखरेखमें हड़तालोंका प्रयोग वर्तमान राजनीतिक प्रश्नपर शिक्षितों और अशिक्षितोंके सबन्ध स्थापित करनेका जबर्दस्त साधन हो रहा है। हड़तालोंमें हानि अवश्य है। यह सीधे आघातकी शिक्षा देती हैं और सीधा आघात कितना भी भीषण क्यों न हो एकताका साधक नहीं है। क्या महात्माजी निश्चय पूर्वक कह सकते हैं कि अहिंसाके ही मार्गका हर तरहसे अवलम्बन कर रहे हैं। क्या जालियांवाला बागके स्मारक बनानेसे घृणाके भाव बढ़ नहीं सकते हैं। मैं इस बातको स्वीकार करता हूं कि इस दुर्घटनामें ब्रिटिश सरकारको धोखा खाना पड़ा पर क्या उसका स्मारक बनाना घृणाके भावको बढ़ाना नहीं है? क्या हमलोग शांति देवीके मन्दिरका

निर्माण करके उस स्मृतिको नहीं कायम कर सकते, जिसमें हमलोग विधवाओं और अनाथोंके पालन पोषणकी व्यवस्था करते और उनकी आत्माके लिये प्रार्थना करते जिन्होंने बिना कारण जाने ही अपने प्राणोंको दिया था। इस संसारमें राजनीतिज्ञ भरे पड़े हैं जो देश भक्तिके नामपर मनुष्यकी अन्तरात्माका नाश कर डालते हैं। इसीका परिणाम युद्ध और कलह तथा जलियावाला बागकी तरह घटनायें उपस्थित करता है। क्या हमलोगोंका यह धर्म नहीं है कि हमलोग अब उस तत्वको ढूढ निकालनेकी चेष्टा करें जिसका प्रचार ईसा मसीह और बुद्धने किया था। लक्षणोंसे मालूम होता है कि महात्मा गाधी इसी तरहके आन्दोलनके प्रवर्तक हो सकते हैं पर अवस्थायें उन्हें मजबूर कर रहे हैं कि वे विरोधाभास या वर्गका संगठन करें। क्या वे विश्वको एक करनेका काम नहीं उठा सकते।"

मैंने पूरे अवतरणको ज्योंका त्यों उद्धृत कर दिया है। मैं अपनी तथा अपने सिद्धान्तोंकी आलोचनापर तबतक किसी तरहका ध्यान नहीं देता, तबतक मुझे अपनी भूल स्वीकार न करनी हो या उस सिद्धान्तका प्रचार और आगे न बढ़ाना हो। उक्त अवतरणपर ध्यान देनेके मेरे पास दो कारण हैं। इसके द्वारा पहले तो मैं उस सिद्धान्तको और भी स्पष्ट करना चाहता हूं और दूसरे मैं इसके लेखकके प्रति अपनी श्रद्धा और भक्ति प्रगट करना चाहता हूं जिसे मैं बहुत दिनोंसे जानता

हू और जिसके प्रति मेरी असीम भक्ति है। यह आलोचक मुझे राजनीतिज्ञका रूप धारण किये हुए देखता है जब कि उसकी आशा थी कि मैं तपस्वी हू। मेरी समझमें वर्तमान जीवनमेंसे "तपस्वी" शब्द उठा देना चाहिये। तपस्वी शब्द अति पवित्र है। इसका प्रयोग यों सहजमें किसीके लिये नहीं होना चाहिये। और मेरे लिये तो उसका प्रयोग और भी अनुचित है क्योंकि मैं तो बहुत ही साधारण जीव हू जो सत्यकी खोजमें अनवरत लगा रहता हू। वह अपनी सीमायें जानता है, भूलें करता है पर भूल करनेपर उन्हें स्वीकार करनेसे भी नहीं हिचकता, और इस बातको स्पष्ट स्वीकार करता है कि वह वैज्ञानिककी भांति जीवनकी समस्याओंका अनुसन्धान कर रहा है। वह अपनेको निपुण वैज्ञानिक भी नहीं कह सकता क्योंकि उसके तरीकोंमें वैज्ञानिक निपुणता भी नहीं है। और न तो उसका ऐसा परिणाम ही निकल सकता है जो कि विज्ञानके सिद्धान्तों द्वारा होता है। मैंने लिखा है कि मैं तपस्वी नहीं हू। इससे उपरोक्त अवतरणके लिखनेवालेकी आशायें मुरझा गई होंगी। फिर भी मैं उसमें यह बात स्पष्ट कह देना चाहता हू कि मेरे किसी भी निर्णयमें राजनीतिज्ञता-की मात्रा प्रधान नहीं है। मैं राजनीतिमें भाग केवल इसीलिये लेता हू कि राजनीति हमलोगोंको आज सांपकी तरह घेरे है जिसके बाहर निकल भागना कठिन है चाहे हम कितना भी यत्न क्यों न करें। अब मैं उस सांपके साथ युद्ध करना चाहता

निर्माण करके उस स्मृतिको नहीं कायम कर सकते, जिसमें हमलोग विधवाओं और अनाथोंके पालन पोषणकी व्यवस्था करते और उनकी आत्माके लिये प्रार्थना करते जिन्होंने विना कारण जाने ही अपने प्राणोंको दिया था। इस संसारमें राजनीतिज्ञ भरे पड़े हैं जो देश भक्तिके नामपर मनुष्यकी अन्तरात्माका नाश कर डालते हैं। इसीका परिणाम युद्ध और कलह तथा जलियांवाला बागकी तरह घटनायें उपस्थित करता है। क्या हमलोगोंका यह धर्म नहीं है कि हमलोग अब उस तत्वको ढूंढ निकालनेकी चेष्टा करें जिसका प्रचार ईसा मसीह और बुद्धने किया था। लक्षणोंसे मालूम होता है कि महात्मा गांधी इसी तरहके आन्दोलनके प्रवर्तक हो सकते हैं पर अवस्थायें उन्हें मजबूर कर रहे हैं कि वे विरोधाभास या वर्गका संगठन करें। क्या वे विश्वको एक करनेका काम नहीं उठा सकते।"

मैंने पूरे अवतरणको ज्योंका त्यों उद्धृत कर दिया है। मैं अपनी तथा अपने सिद्धान्तोंकी आलोचनापर तबतक किसी तरहका ध्यान नहीं देता तबतक मुझे अपनी भूल स्वीकार न करनी हो या उस सिद्धान्तका प्रचार और आगे न बढ़ाना हो। उक्त अवतरणपर ध्यान देनेके मेरे पास दो कारण हैं। इसके द्वारा पहले तो मैं उस सिद्धान्तको और भी स्पष्ट करना चाहता हूं और दूसरे मैं इसके लेखकके प्रति अपनी श्रद्धा और भक्ति प्रगट करना चाहता हूं जिसे मैं बहुत दिनोंसे जानता

हूं और जिसके प्रति मेरी असीम भक्ति है। यह आलोचक मुझे राजनीतिज्ञका रूप धारण किये हुए देखता है जब कि उसकी आशा थी कि मैं तपस्वी हूं। मेरी समझमें वर्तमान जीवनमेंसे "तपस्वी" शब्द उठा देना चाहिये। तपस्वी शब्द अति पवित्र है। इसका प्रयोग यों सहजमें किसीके लिये नहीं होना चाहिये। और मेरे लिये तो उसका प्रयोग और भी अनुचित है क्योंकि मैं तो बहुत ही साधारण जीव हूं जो सत्यकी खोजमें अनवरत लगा रहता हूं। वह अपनी सीमायें जानता है, भूलें करता है पर भूल करनेपर उन्हें स्वीकार करनेसे भी नहीं हिचकता, और इस बातको स्पष्ट स्वीकार करता है कि वह वैज्ञानिककी भांति जीवनकी समस्याओंका अनुसन्धान कर रहा है। वह अपनेको निपुण वैज्ञानिक भी नहीं कह सकता क्योंकि उसके तरीकोंमें वैज्ञानिक निपुणता भी नहीं है। और न तो उसका ऐसा परिणाम ही निकल सकता है जो कि विज्ञानके सिद्धान्तों द्वारा होता है। मैंने लिखा है कि मैं तपस्वी नहीं हूं। इससे उपरोक्त अवतरणके लिखनेवालेकी आशायें मुरझा गई होंगी। फिर भी मैं उनसे यह बात स्पष्ट कह देना चाहता हूं कि मेरे किसी भी निर्णयमें राजनीतिज्ञता-की मात्रा प्रधान नहीं है। मैं राजनीतिमें भाग केवल इसीलिये लेता हूं कि राजनीति हमलोगोंको आज सांपकी तरह घेरे है जिसके बाहर निकल भागना कठिन है चाहे हम कितना भी यत्न क्यों न करें। अब मैं उस सांपके साथ युद्ध करना चाहता

हू जैसा कि मैं १८६४ से करता आ रहा हूं। अपने स्वार्थ साधनके लिये मैं जिस शांतिका जीवन व्यतीत करना चाहता हू उसके लिये इस झंझावातके युगमें भी क्षेत्र तैयार करनेके लिये मैं राजनीतिमें .धर्मके प्रवेश करानेका यत्न कर रहा हूं। मैं यहीं पर यह भी बतला देना चाहता हू कि धर्मसे मेरा क्या अभिप्राय है। मैं हिन्दू धर्मको ही सब धर्मोंके ऊपर नहीं मानता। मेरी आस्था उस धर्ममें है जो हिन्दू धर्मसे भी ऊपर हैं। जो जीवको अन्तरात्माके सत् ज्ञानसे बांधता है और जो सदा पवित्र करता रहता है।

उसी तरहके धार्मिक भावसे प्रेरित होकर मैंने हड़तालोंकी योजना की। मैं यह दिखलाना चाहता था कि अक्षर ज्ञानसे न तो भारतमें जागृति हो सकती है और न शिक्षित समुदाय एकताके वन्धनमें बंध सकते हैं। अप्रेल ६, १९१९ को भारतमें सर्वव्यापी हड़ताल हुई और यदि अप्रेल १० की इस शैतानी सरकारकी प्रेरणायें—जो अपने पापाचारको भली भांति समझती थी और जिसने उन नागरिकोंको उत्तेजित करना चाहा जो उस सरकारमें विश्वास न रखनेके कारण उत्तेजित किये जा सकते थे—बाधा न उपस्थित करतीं तो आज भारत कहीं ऊंचे स्थानपर पहुंचा होता। जनताने हड़तालोंको केवल धार्मिक ही समझकर नहीं अपनाया था बल्कि उसके कार्यका यह आरम्भ था।

पर मेरे समालोचकको प्रत्यक्ष कामसे घृणा है। क्योंकि

उनके मतसे 'उसके द्वारा एकताका बीजारोपण नहीं होता। मैं उनके मतको नहीं स्वीकार करता हूं'। पर क्या इस संसारमें बिना प्रत्यक्ष कामके कुछ भी हो सकता है? मैंने निष्क्रिय प्रतिरोध शब्दको इसलिये हटाया कि उसमें पूरी क्षमता नहीं थी और लोग उसे दुर्बलोंका शस्त्र समझते थे। दक्षिण अफ्रीकामें निष्क्रिय प्रतिरोध प्रत्यक्ष आचरण था जिसका प्रभाव इतना प्रबल पडा कि जेनरल स्मट भी पागल हो गये। १९०६ में भारतीयोंकी आकांक्षाओंके वे सबसे प्रबल शत्रु थे। पर १९१४ में उन्होंने अफ्रीका राज्यके विधानमेंसे उस कानूनको उठाकर भारतीयोंके साथ न्याय करना चाहा जिसके संबन्धमें १९०९ में उन्होंने लार्ड मार्लेसे स्पष्ट शब्दोंमें कह दिया था कि वे किसी भी तरह नहीं उठाये जा सकते। उन्होंने साफ साफ कह दिया था कि जिस कानूनको ट्रांसवालकी व्यवस्थापक सभाने दो बार पास किया उसे तोडना दक्षिण अफ्रीकाके लिये कठिन है। इससे भी बढ़कर बात तो यह है कि जिस प्रत्यक्ष संग्रामको दक्षिण अफ्रिकामें ८ वर्षतक चलाया गया, उससे किसी तरहका वैमनस्य नहीं उपस्थित हुआ बल्कि जिस जेनरल स्मट्सके प्रतिकूल संग्राम चलाया गया था, आवश्यकता पडनेपर १९१५ में उन्हींके झण्डेके नीचे पूर्वीय अफ्रिकामें भारतीयोंने संग्राम किया। चम्पारनमें जमानेसे चली आई बुराईका नाश इसी प्रत्यक्ष आचरणने ही किया। जब कभी कोई व्यक्ति अयोग्यताके कारण किसी तर-

विधवायें और अनाथ सहायता प्राप्त कर रहे हैं पर हमलोग उनकी आत्माको किस तरह शान्ति दे सकते हैं जो बिना यह जाने ही मर गये कि मैं क्यों मर रहा हू। इसके लिये उस जमीनको प्राप्त करना तथा उसमें मन्दिर बनवाना नितान्त आवश्यक है, जहा बेगुनाहोंका इस तरह रक्तपात हुआ है। इससे उस अपवित्र स्मृतिकी याददाश्त मै नही कायम कराना चाहता पर इससे राष्ट्रको उत्साह मिलेगा कि लाचार और निरस्त्र होकर जालिमका शिकार बनकर मरजाना अच्छा है पर स्वयं जालिम बनना अच्छा नही है। हम भावीसन्तानोंके लिये यह सबूत छोडना चाहते हैं कि जो लोग अकारण इस तरह मारे गये उनकी स्मृतिको स्थायी रूप देनेमें हमलोगोंने उदासनता नही दिखलायी। श्रीमती जिन्नाने इस फण्डके लिये दान देते समय कहा कि इसका इतना फल तो अवश्य होगा कि हमें मरनेके लिये बहाना मिल जायगा। इस स्मारकका रूप क्या होगा, इसका निर्णय तो इसके निर्माणकी प्रेरणा ही तय करेगा।

बुद्ध और ईसामसीहने किस उच्च आदर्शकी शिक्षा दी। बुद्धने निडर होकर शत्रुओंसे सग्राम किया और उद्दण्ड पुरोहितको दण्डित किया। और ईसाने क्या किया। धनके लोभियोंको जरूजलमके मन्दिरसे निकाला और सकुचित विचारवालों तथा फरासीज पर ईश्वरके कोपको वर्षा की। क्या ये दोनों आचरण प्रत्यक्ष नही थ। बुद्ध और ईसामसीह दोनों

एक तरफ तो इस तरह दण्डकी योजना कर रहे थे पर दूसरी ओर अतुल प्रेम और दयाके सागरको फैला देते थे। अपने शत्रुओंपर वे अंगुली भी नहीं उठाते थे और वे लोग जिस सच्चाईके सिद्धान्तको लेकर चल रहे थे उसकी हत्या होते देख वे अपना प्राण तक गँवा सकते थे। यदि अपने प्रेमके प्रतापसे बुद्ध पुरोहितोंको अपने वश न कर सके होते तो उस प्रयासमें अपना प्राण अवश्य खो दिये होते। ईसामसीह सम्राटकी शक्तिकी परवा न करके खुशी खुशी फांसीपर लटक गये। इसलिये यदि मैं शान्तिमय और अहिंसात्मक आन्दोलनको जन्म दे रहा हूं तो मेरी समझमें मैं उन्हीं महात्माओंका अनुसरण कर रहा हूं जिनकी चर्चा मेरे समालोचकोंने की है।

हिन्दू-धर्म

यों तो मैंने कई दफा अपनेको सनातनी हिन्दू कहा है, परन्तु इस मद्रासकी मुसाफिरीमें, छुआ छूत प्रश्नकी चर्चा करते समय मैंने पहलेसे भी ज्यादह जोर और दावेके साथ कहा कि मैं सनातनी हिन्दू हूं। परन्तु मैं देखता हूं कि लोग हिन्दू धर्मके नाम पर कितनी ही ऐसी बातें आम तौर पर करते हैं जिनका कायल मैं नहीं हूं। अगर मैं सनातनी हिन्दू नहीं हूं तो मैं नहीं चाहता कि सनातनी हिन्दू कहलाऊँ। और यह अभिलाषा तो मुझे

बिलकुल ही नहीं है कि किसी महान् धर्म्म मतकी ओट ले चुपके चुपके कोई सुधार या बिगाड़ करूँ ।

अतएव यह मेरे लिए आवश्यक हो गया है कि मैं अपने सनातन हिन्दू धर्मका मतलब एक बारगी साफ साफ समझा दूँ । "सनातन" शब्दका प्रयोग मैंने उसके स्वाभाविक अर्थमें ही किया है ।

मैं नीचे लिखे कारणोंसे अपनेको सनातनी हिन्दू कहता हूँ —

(१) मै वेदोंको, उपनिषदोंको, पुराणोंको और उन सब वस्तुओंको मानता हू जो हिन्दू शास्त्रके नामसे विख्यात हैं । इसलिए मै अवतारों और पुनर्जन्मको भी मानता हू ।

(२) मै वर्णाश्रम-धर्मको मानता हूँ—परन्तु अपनी समझके अनुसार ठीक वैदिक अर्थमें, आजकलके प्रचलित और अपूर्ण अर्थमें नहीं ।

(३) मैं गो रक्षाको मानता हू, परन्तु वर्तमान प्रचलित अर्थसे बहुत ही व्यापक अर्थमें ।

(४) मैं मूर्ति पूजामें अविश्वास नहीं करता ।

पाठक इस बात पर ध्यान रक्खे कि मैंने वेदों अथवा किसी शास्त्रके सम्बन्धमें 'अपौरुषेय' शब्दका प्रयोग जान बूझ कर नहीं किया है । क्योंकि मै तो सिर्फ वेदोंको ही अपौरुषेय नहीं मानता हू । मैं तो बाईबल कुरान और जेन्दा अवस्थाको भी, वेदोंकी तरह, ईश्वरी प्रेरणाका फल मानता हूँ । हिन्दू धर्म्म ग्रन्थों पर जो मेरी श्रद्धा है उसके लिए यह कोई आवश्यक बात नहीं

है कि मैं उनके प्रत्येक शब्द और प्रत्येक श्लोकोंको अ पौरुषेय मानूँ। और न मैं इस बातका दावा ही रखता हूँ कि इन अद्भुत ग्रन्थोका विशुद्ध ज्ञान मुझे है। परन्तु हाँ, मैं उन धर्म्म ग्रन्थके अत्यन्त आवश्यक उपदेशोंको सत्यताके ज्ञानका और उसको अनुभव करनेका दावा जरूर करता हूँ। मैं उस अर्थको माननेके लिए तैयार नहीं जो तर्क और नीतिके विरुद्ध हो, फिर वह चाहे कितना ही विद्वत्ता पूर्ण क्यों न हो। और मैं बड़े जोरके साथ आजकलके इन शङ्कराचार्यों और शास्त्री पण्डितोंके इस दावे (अगर वे कोई ऐसा दावा पेश करें) के खिलाफ अपनी आवाज उठाता हूँ कि हिन्दू धर्म्म शास्त्रोंका वास्तविक अर्थ वही है जो हम बताते हैं। बल्कि, इसके विपरीत, मेरा तो यह विश्वास है इन ग्रन्थोंका जो ज्ञान इस समय लोगोंको है, वह अत्यन्त अव्यवस्थित दशामे है। मैं हि दू शास्त्रके इस वचनका सोलहों आना कायल हूँ कि जिसने अहिसा, सत्य और ब्रह्मचर्यका पूर्ण पालन नहीं किया और जिसने सम्पत्तिके अधिकार और उपार्जनका त्याग नहीं कर दिया है वह वस्तुत शास्त्रोंका मर्म नहीं समझ सकता। हा, मैं 'गुरु' की प्रणालीको मानता हू, परन्तु इस वर्तमान युगमें तो लाखों लोगोंको विना गुरुके ही काम चलाना पड़ेगा, क्योंकि पूर्ण शुद्धता और पूर्ण विद्वत्ताका सयोग वहुत ही कम जगह पाया जाता है। परन्तु इससे किसीको यह समझ कर निराश होनेकीजरूरत नहीं है कि हमारे धर्म्मका सत्य ज्ञान तो कभी होगा ही नहीं, क्योंकि हिन्दू धर्म्मके मूलभूत सिद्धान्त

तो, प्रत्येक महान् धर्मकी तरह, त्रिकालाबाधित हैं और आसानी से समझमें आजाते हैं। प्रत्येक हिन्दू यह मानता है कि ईश्वर है और वह अद्वैत है। वह पुनर्जन्म और मुक्तिको भी मानता है। परन्तु हिन्दू धर्ममें और दूसरे धर्मों में अगर कोई भिन्नता दर्शक बात है तो वह हिन्दू धर्मको गो रक्षा है। वर्णाश्रम व्यवस्था भी इतनी भिन्नता दर्शक नहीं है।

मेरी रायमें तो वर्णाश्रम व्यवस्था मनुष्यकी प्रकृतिके लिए स्वाभाविक है। हिन्दू धर्मने तो सिर्फ उसे एक शास्त्रके रूपमें परिणत भर कर दिया है। जन्मके साथ उसका सम्बन्ध अवश्य ही है। कोई मनुष्य अपनी इच्छाके अनुसार अपना 'वर्ण' नहीं बदल सकता। अपने 'वर्ण' के मोताबिक न चलना गोत्रत्वके नियमको न मानना है। हा, जो ये हजारों छोटी २ जातिया बन गई हैं, यह तो उस सिद्धान्तका अनावश्यक और मनमाना व्यवहार करना है। सिर्फ चार वर्ण ही सब तरहसे काफी हैं।

मैं इस बातको नहीं मानता कि सहभोज और अन्तर्विवाह से किसी मनुष्यका जन्म जात दर्जा अवश्य ही छिन जाता है। ये चार विभाग मनुष्यके व्यवसायके सूचक हैं। वे सामाजिक व्यवहारकी मर्य्यादा नही बाधते वा उसका नियम नहीं बनाते। ये चार वर्ण तो कर्तव्यका निर्णय करते हैं, किसीको किसी तरहकी रियायतका अधिकार नही देते। मेरी राय में तो यह बात हिन्दू धर्म्मके सनातन तत्त्वके विपरीत है कि एकको तो श्रेष्ठता

दी जाय और दूसरेको कनिष्ठ बनाया जाय। सब लोग ईश्वर की इस सृष्टिकी सेवा करनेके लिए उत्पन्न हुए हैं। ब्राह्मण अपने ज्ञानके द्वारा, क्षत्रिय अपने रक्षा बलके द्वारा, वैश्य अपनी व्यापारिक योग्यताके द्वारा और शूद्र अपने शारीरिक परिश्रमके द्वारा। परन्तु इसका अर्थ यह नही है कि कोई ब्राह्मण शारीरिक श्रम या अपनी तथा दूसरेकी रक्षाके कर्तव्यसे मुक्त हो। ब्राह्मण कुलमें जन्म होनेके कारण वह प्रधानत ज्ञानशील है, आनुवशिक रूपसे तथा शिक्षा और अभ्यासके कारण वह दूसरोंको ज्ञान दान देनेके लिये सबसे अधिक पात्र है। फिर ऐसी कोई बात नहीं है जो किसी शूद्रको यथेच्छ ज्ञान प्राप्त करनेसे रोक सके। बात सिर्फ यही है कि वह अपने शरीरके द्वारा उत्कृष्ट सेवा कर सकेगा आर उसे दूसरोंकी सेवा करनेके विशेष गुणों-की ईर्षा करनेकी जरूरत नही। लेकिन जो ब्राह्मण अपने ज्ञान-के अधिकारके बल पर अपने उच्च और श्रेष्ठ होनेका दावा करता है उसका पतन हो जाता है और वह वास्तवमें ज्ञान हीन ही है। और यही बात दूसरे लोगों पर भी घटती है जो अपने विशेष गुणोंका घमण्ड दिखाते हैं। वर्णाश्रमका अर्थ है—आत्म-सयम और कार्य शक्तिका सङ्ग्रय तथा रक्षण।

इस प्रकार यद्यपि सहभोज और अन्तर्विवाहसे वर्णाश्रममें बाधा नहीं होती तथापि हिन्दू धर्म्म सहभोज और एक वर्णके साथ दूसरे वर्णके अन्तर्विवाहको रोकनेका प्रयत्न करता है। हिन्दू धर्म्म आत्म सयमकी चरम सीमा तक पहुच गया है।

इस धर्मका मूलाधार तो निस्सन्देह भौतिक बातोंका निवृत्ति पर है, और उसका लक्ष्य हैं आत्म-स्वातन्त्र्य। हिन्दुओंके यहां तो उनके पुत्रके भी साथ भोजन करना उनके कर्तव्यका अङ्ग नहीं है। और अमुक ही जातिकी कन्यासे विवाह करनेका नियम बनाकर हिन्दू लोग असाधारण आत्म संयमका पालन करते हैं। हिन्दू धर्म विवाहित अवस्थाको किसी भी दशामें मुक्तिके लिए आवश्यक नहीं बताता। 'जन्म' की तरह 'विवाह' भी आत्माका अधःपात ही है। मुक्तिका अर्थ है—जन्मसे, अतएव मृत्युसे भी, छुटकारा पाना। अतएव अन्तर्विवाहका और सहभोजनका निषेध आत्माके द्रुत विकासके लिये परम आवश्यक है। परन्तु यह निवृत्ति या विरक्ति 'वर्ण' की कसौटी नहीं है। ब्राह्मणने यदि ज्ञानके द्वारा सेवा करनेके अपने कर्तव्यका त्याग नहीं किया है तो, वह अपने शूद्र भाईके साथ भोजन-पान करने पर भी, ब्राह्मण बना रह सकता है। अब तक मैंने जो कुछ कहा, उससे यह नतीजा निकलता है कि भोजन पान और विवाहके विषयमें जो संयम रक्खा गया है उसका आधार श्रेष्ठता या कनिष्ठताके भाव पर नहीं है। जो हिन्दू अपनेको श्रेष्ठ समझ कर किसी दूसरेके साथ भोजन-पान करनेसे इनकार करता है वह अपने धर्मका आदर्श बिलकुल उलटा दिखाता है।

यह दुर्भाग्यकी बात है कि आज हिन्दू धर्म अकेले चूल्हे-चौकेमें ही माना जाता है। मैंने एक बार एक मुसलमान भाईके

यहां कुछ खाया। यह देखकर एक धर्मनिष्ठ हिन्दू हैरान हो गये। मैंने मुसलमान भाईके दिये प्यालेमें दूध उँडेला। उन्हें देख कर बड़ा दुःख हुआ और जब उन्होने देखा कि मैं मुसलमानकी दी हुई डबल रोटी खाने लगा तब तो उनके दुःखकी सीमा न रही। अगर हिन्दू धर्म्म केवल क्या खावें और किसके साथ खावें, इसके परिश्रम-साध्य नियमोंके सम्बन्धमें ही मन्तव्य करने लगे तो उसके प्राणोंके सङ्कटमें आ पड़नेका अन्देशा है। हां, मादक और पेय पदार्थों का तथा हर तरहके खाद्य पदार्थों का विशेष करके मासका सेवन न करनेसे निस्सन्देह आत्मोन्नतिमें सहायता मिलती है, परन्तु केवल यही हमारा लक्ष्य किसी तरह नहीं। बहुतसे मनुष्य ऐसे हैं जो मास भोजन करते हैं और सब लोगोंके साथ खाते पीते हैं, परन्तु ईश्वरसे डरते हैं। ऐसे लोग उस मनुष्यकी अपेक्षा मुक्तिके अधिक नजदीक हैं जो धार्मिक दृष्टिसे मद्य मास आदिका तो सेवन नहीं करता, परन्तु अपने हर एक कार्य्यके द्वारा ईश्वरका तिरस्कार करता है।

तथापि हिन्दू धर्मका मध्यवर्ती प्रधान अङ्ग है—गो रक्षा। मेरी दृष्टिमें तो गो रक्षा मनुष्य जातिके विकासमें एक अद्भुत चमत्कार-पूर्ण घटना है। यह मनुष्य प्राणीको उसकी स्वाभाविक मर्यादाके ऊपर ले जाती है। मुझे तो गाय मानों मनुष्य-जातिसे नीचेकी सम्पूर्ण सृष्टि नजर आती है। गायके द्वारा मनुष्य-प्राणिमात्रके साथ अपने तादात्म्यके अनुभवका अधिकारी होता

है। मुझे तो यह स्पष्ट दिखाई देता है कि गाय ही अकेली क्यों देवता मानी गई है। हिन्दुस्तानमे गायसे बढ़कर मनुष्योंका साथी दूसरा कोई नहीं। उसने बहुतेरी वस्तुएं हमें दी हैं। उसने हमें केवल दूध ही नहीं दिया है, बल्कि हमारी खेतीका भी सारा आधार उसी पर है। गाय तो एक मूर्तिमती करुणामयी कविता है। इस नम्र प्राणीमें करुणा ही करुणा दिखाई देती है। भारतके लाखों मनुष्योंकी वह माता है। गो रक्षा का अर्थ है—ईश्वरकी सम्पूर्ण मूक सृष्टिकी रक्षा। लेकिन प्राचीन ऋषियोंने, फिर वे चाहे कोई हो, गायसे ही श्री गणेश किया। सृष्टिकी नीची श्रेणीके प्राणियोंको वाक्शक्ति नहीं है। इसलिए उनकी अपीलमें सबसे अधिक बल है। गो रक्षा संसारको हिन्दू धर्म्मका दिया हुआ प्रसाद है। और तब तक हिन्दूधर्म्म बराबर जीवित रहेगा जब तक हिन्दू लोग गो रक्षा करनेके लिए मौजूद हैं।

गो रक्षा करनेका मार्ग है—उसके लिए स्वयं मर मिटना। हिन्दू धर्म्म और अहिंसा यह आज्ञा नहीं देते कि गो रक्षाके लिए किसी मनुष्य प्राणीका वध करो। हिन्दुओंको तो तपस्या, आत्मशुद्धि और स्वार्थत्यागके द्वारा गो रक्षा करनेका आदेश दिया गया है। आज कलकी इस गो रक्षाने मुसलमानोंके साथ एक चिरस्थायी शत्रुताका रूप धारण कर लिया है, हाला कि गो रक्षाका अर्थ तो है मुसलमानोंको प्रेमसे अपने · ि करना। एक मुसलमान मित्रने, कुछ समय पहले, मुझे

पुस्तक भेजी थी। उसमें सविस्तर रूपसे यह बताया गया था कि हम लोग गायके और उसकी सन्तानके साथ कैसा अमानुष व्यवहार करते हैं। हम किस बेरहमीके साथ खून टपकने तक उसे दुहते हैं—एक बूँद तक दूध उसके थनमें नहीं रहने देते। किस तरह हम उसे भूखों मार मारकर सुखा देते हैं। उसके बछड़ोंके साथ कैसा दुर्व्यवहार करते हैं। किस तरह हम उसके हिस्सेका दूध उसके पल्ले नहीं पड़ने देते। बैलोंके साथ किस निष्ठुरतासे पेश आते हैं। किस तरह हम उन्हें बधिया करते हैं। किस तरह हम उन्हें पीटते हैं और कितना सारा बोझ उन पर लादते हैं। अगर उन्हें बोलनेकी शक्ति होती तो वे उनके प्रति किये हमारे अपराधोंका बयान इस तरह अपने मुँहसे करते कि सारी दुनिया दहल उठती। अपने चौपायोंके प्रति अपने एक एक निर्दयता-पूर्ण कार्य्यके द्वारा मानो हम ईश्वरका और हिन्दू-धर्मका त्याग कर रहे हैं। इस अभागे भारतवर्षमें चौपायोंकी जितनी बुरी दशा है उतनी मैं नहीं जानता कि दुनियाके किसी दूसरे देशमें होगी। हम अङ्गरेजोंको इसके लिए दोषी नहीं बता सकते। अपने इस अपराधके लिए हम दरिद्रताकी दुहाई नहीं दे सकते। हमारे चौपायोंकी दुर्दशाका एक मात्र कारण है हमारी अक्षम्य ला-परवाही। हां, हमारे 'पिञ्जरापोलें' हैं। वे हमारे दया-भावकी तृप्तिका साधन भी हैं, परन्तु हैं वे उन दयायुक्त कार्य्योंके भद्दे से प्रदर्शन ही। वे नमूना रूप दुग्ध-शाला और महान् लाभदायक राष्ट्रीय संस्था

होनेके बजाय केवल अपाहिज और निर्बल गायोंका एक संग्रह स्थान भर है ।

हिन्दुओंकी पहचान न तो उनके तिलकोंसे होगी, न उनके मन्त्रोंके शुद्ध घोषसे, न उनके तीर्थाटनसे और न जाति-बन्धनके नियमोंके अत्यन्त शिष्टाचार युक्त पालनसे ही होगी । बल्कि उनकी पहचान तो उनके गो-रक्षाके सामर्थ्यसे होगी । हम गो रक्षाको अपना धर्म माननेका दावा तो बड़ा करते हैं, लेकिन वास्तवमें तो हमने गायको और उसकी सततिको अपना गुलाम बना डाला है और खुद भी गुलाम हो गये हैं ।

अब यह बात समझमें आ जायगी कि मैं क्यों अपनेको सनातनी हिन्दू समझता हू । गौके प्रति जो मेरी श्रद्धा है उसमें मैं किसीसे हारनेवाला नहीं । मैंने खिलाफतके कार्य्यको जो अपना कार्य्य बनाया है उसका सबब यही है कि उसकी रक्षाके द्वारा मुझे गायकी पूरी तरह रक्षा होनेकी सम्भावना दिखाई देती है । मैं मुसलमान भाइयोंसे यह नहीं कहता कि मेरी इस सेवाके खातिर वे गायकी रक्षा करें । मैं तो उस सर्व शक्तिमान् परमात्मासे हो नित्य यह प्रार्थना करता हू कि जिस कार्य्यको मैंने न्याय समझा है उसके निमित्त की गई मेरी सेवा तेरी इतनी प्रसन्नताका कारण हो कि जिससे तू मुसलमानोंके हृदयोंको बदल दे, उन्हें अपने हिन्दू भाइयोंके प्रति दया भावसे परिपूर्ण कर दे और उनके द्वारा उस प्राणीकी रक्षा करा जिसे हिन्दू लोग अपने प्राणोंकी तरह प्यारा मानते हैं ।

हिन्दु धर्मके प्रति मेरी जो भावना हैं उसका वर्णन मैं अपनी धर्मपत्नीके प्रति मेरी भावनासे बढ़ कर नहीं कर सकता। वह मेरे हृदय पर जितना अधिकार कर सकती है उतना दुनियाकी कोई स्त्री नहीं कर सकती। इसका कारण यह नहीं कि वह निर्दोष है। मैं कह सकता हू कि जितने दोष मैंने उसमें पाये हैं उससे भी अधिक दोष उसमें होंगे। लेकिन उसके हृदयमें एक अटूट बन्धनकी भावना है। इसी प्रकार हिन्दू धर्मके लिए और उसके विषयमें उसके तमाम दोषों और कमियोंके होते हुए भी, मेरे हृदयमें प्रेमकी भावना है। गीता और तुलसीदासकी रामायणके सगीतसे जो स्फूर्ति और उत्तेजना मुझे मिलती है वैसी और किसीसे नहीं मिलती। हिन्दू-धर्ममें यही दो ग्रन्थ ऐसे हैं जिनके विषयमे कहा जा सकता है कि मैंने देखे हैं। जब मैंने देखा था कि अब मेरे अन्तकी घड़ी आ पहुची है, बस एक मात्र गीता ही मेरी शान्तिका—सात्वनाका साधन थी। आज तमाम बड़े बड़े हिन्दु धर्म मन्दिरोंमें जो पापाचार हो रहा है उसे मैं जानता हू, लेकिन उनकी इन अवर्णनीय त्रुटियोंके होते हुए भी मेरा प्रेम उन पर है। उनके अन्दर मुझे एक ऐसी दिलचस्पी होती है जो और कहीं नहीं मिलती। मैं शुरूसे अखीर तक सुधारक हूं। लेकिन यह मेरी उत्सुकता मुझसे यह नहीं कहती कि हिन्दू-धर्मकी किसी भी आवश्यक बातको रद्द कर दो। मै ऊपर कही चुका हू कि मैं मूर्ति पूजामें अविश्वास नहीं रखता। हां, किसी मूर्तिको देख

कर मेरे हृदयमें तो किसी प्रकारकी आदरकी भावना जाग्रत नही होता। लेकिन मेरा खयाल है कि मूर्ति पूजा मानवी स्वभावका एक अङ्ग है। हमें स्थूल उपकरणका सहारा लेना पड़ता है। गिरजामें चित्त जितना एकाग्र हो जाता है उतना दूसरी जगह क्यों नही होता? क्या यह मूर्ति पूजा ही का एक भद नही है? प्रतिमाओंसे पूजा आराधनामें सहायता मिलती है। कोई हिन्दू प्रतिमाको ही स्वय ईश्वर नहीं मानता। मैं मूर्ति पूजाको पाप नहीं समझता।

ऊपरकी बातोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि हन्दू धर्म सङ्कुचित धर्म नहीं है। उसमे ससारके समस्त पैगम्बरोकी पूजाके लिये गुंजायश है। यह कोई मिशनरी—किसी धर्म-मतका प्रचार करनेवाला—धर्म नहीं है। हां, इसमे कितनी ही भिन्न भिन्न जातियोंका समावेश हुआ है, परन्तु उनकी यह तद्रूपता विकासात्मक और अत्यन्त सूक्ष्म है। हिन्दू-धर्म तो हरएक मनुष्यसे यह कहता है कि तुम अपने विश्वास या 'धर्म' के अनुसार ईश्वरका भजन पूजन करो और, इस प्रकार यह दूसरे समस्त धर्मो के साथ मेल जोलसे रहता है।

हिन्दू धर्म के सम्बन्धमें मेरा यह मत है। और इसी लिये छुआछूतके विषयमें मेरा मत अनुकूल नहीं रहा है। मैं इसे सदासे एक अनावश्यक बात मानता आ रहा हू। हाँ, यह सच है कि यह प्रथा हमारे यहा परम्परासे चली आ रही है। और दूसरी भी ऐसी कितनी ही प्रथायें आजतक प्रचलित हैं।

बड़ी शरमकी बात होगी अगर मैं यह खयाल करने लगूं कि लड़कियोंको वस्तुतः वेश्या वृत्तिके लिये समर्पित कर देना हिन्दू धर्मका एक अंग है। परन्तु मैं तो देखता हूं कि हिन्दुस्तानके कितने ही भागोंके हिन्दू लोगोंमें यह बात प्रचलित है। काली को बकरेका बलिदान करना मैं बिलकुल अधर्म मानता हूं और इसे मैं हिन्दू-धर्मका अंग नहीं मानता। हिन्दू धर्म तो कई युगोंके विकाशका फल है। 'हिन्दू धर्म' नाम तो हिन्दुस्तानके रहनेवाले लोगोंके धर्मका विदेशियों द्वारा रखा हुआ नाम है। हां, इसमें कोई शक नहीं कि किसी जमानेमें, धर्मके नामपर जीवोंका बलिदान हुआ करता था। पर वह धर्म नहीं है और हिन्दू धर्म तो और भी नहीं है। और इसी तरह मुझे तो यह भी जान पड़ता है कि जब हमारे पूर्वजोंने गो-रक्षाको एक अटल सिद्धान्त बना लिया तब जिन लोगोंने गोमांस खाना नहीं छोड़ा उनके साथ व्यवहार करना बन्द कर दिया गया। यह झगड़ा खूब ही बढ़ा होगा। जो लोग उस नियमको न मानते थे, न केवल उन्हींका बहिष्कार किया गया, बल्कि उनके पापका फल उनकी सतानको भी भोगना पड़ा। इस तरह यह क्रम जो कि बहुत करके अच्छे ही हेतुसे शुरू हुआ था, जारी रहा और अन्त-को प्रथाके रूपमें द्रढ हो गया—यहांतक कि हमारे धर्मग्रन्थोंमें भी ऐसे ऐसे श्लोकोंका प्रवेश हो गया जिनके बलपर यह प्रथा चिरस्थायी हो गई। पर वास्तवमें यह योग्य नहीं था और समर्थनीय तो उससे भी कम था। मेरा यह अनुमान चाहे

ठीक हो या न हो, अस्पृश्यता तर्कके और दया, करुणा और प्रेम भावके विरुद्ध तो अवश्य है। जो धर्म गो पूजाकी स्थापना करता है वह भूलकर भी मनुष्य प्राणीके निर्दयतापूर्ण और अमानुष बहिष्कारको न तो आवश्यक मान सकता है और न उसे जारी ही रख सकता है। और मैं तो अछूत जातियोंको अपनेसे अलग रखनेकी अपेक्षा अपने शरीरके टुकडे टुकडे कर दिये जानेसे अधिक सन्तुष्ट रहूंगा। अगर हिन्दू लोग अपने उच्च और उदात्त धर्मको, अस्पृश्यताके कलकको कायम रखते हुए, निन्दनीय बनावेंगे तो वे अवश्य ही कभी न तो स्वतन्त्रता के योग्य होंगे और न उसे प्राप्त ही कर सकेंगे। और चूंकि मैं हिन्दू धर्मको अपने प्राणसे भी अधिक प्यार करता हूं, यह कलक मेरे लिये एक असह्य भार हो गया है। अपनी जातिके पञ्चमांश मनुष्योंको बराबरीके साथ रहने धरनेका अधिकार देनेसे इनकार करके हम ईश्वरसे मुंह न मोड़ें।

स्त्रियोंकी अवस्था

(जुलाई १, १६२१)

कटकसे श्रीमती सरला देवीने लिखा है :—"क्या आप इस बातको नहीं स्वीकार करते कि स्त्रियोंके साथ जो व्यवहार किया जा रहा है वह उतना ही भीषण है जितना छुआछूत। राष्ट्रीय दलके नवयुवकोंका व्यवहार—जिनमें मेरा सम्पर्क हो सका है—सौ मेंसे अस्सी फी सदी पाशविक हुआ है। कितने असहयोगी ऐसे हैं जो स्त्रियोंको केवल मात्र अपने आनन्दका साधन नहीं समझते। क्या स्त्रियोंके प्रति इस भावमें परिवर्तन लाये बिना किसी भी तरह सफलता मिल सकती है ?"

मैं इस मतसे सहमत नहीं हू कि स्त्रियोंके प्रति जो व्यवहार किया जाता है वह उतना ही पापमय है जितना छुआछूत। श्रीमती सरला देवीने इस बुराईको बहुत कुछ बढ़ाकर लिखा है। उनका यह भी आक्षेप उचित नहीं है कि पुरुषोंकी दृष्टिमें स्त्रियां केवल मात्र विलासिताका साधन हैं। कोई भी प्रश्न क्यों न हो निमक मिर्च लगानेसे उसका प्रभाव घट जाता है। मैं इस बातको स्वीकार करता हू कि यदि हम अपनेको पूर्ण स्वराज्यके योग्य बनाना चाहते हैं तो हमें उचित है कि हम स्त्रियोंको अवस्था सुधारें, उनका अधिक आदर तथा सम्मान करें।

श्रीयुत एएडरूजने लिखा है कि 'पतित' बहनोंकी दुरवस्थापर हम लोग आंख बन्द करके नहीं रह सकते। इससे बढ़कर तो निन्दाकी कोई बात हो ही नहीं सकती कि कोई भी असहयोगी जोशके साथ इस बातको कहे कि कुछ पतित स्त्रियोंमें कुछ ऐसी हैं जो असहयोगियोंके लिये ही अपनेको 'रिजर्व' रखती हैं। सदाचारके प्रश्नपर सहयोगी और असहयोगीमें कोई भेदभावका प्रश्न नहीं हो सकता। जबतक एक भी ऐसी औरत हो जिसको हम लोग अपनी लिप्साको तृप्त करनेमें प्रयुक्त करते हों तब तक हममेंसे प्रत्येकको शर्मके मारे सिर नीचा कर लेना चाहिए। स्त्रियोंका प्रयोग इस तरह विलासिताकी पूर्तिमें प्रयुक्त होते देखनेसे तो उत्तम यही होगा कि मानव समाजका अन्त हो जाय। पर यह प्रश्न केवल इस देशके लिये ही नहीं है। यह प्रश्न विश्वव्यापी है। इसलिये यदि मैं वर्तमान विलासितापूर्ण जीवनका त्याग करके प्राचीन युगके चरखेके जीवनकी शिक्षा देता हूं तो इसका कारण यही है कि मैं भलीभांति समझता हूं कि इस तरह सादगीका जीवन स्वीकार किये बिना हम लोग अपनी अवस्था नहीं सुधार सकते। मैं स्त्रियोंकी अधिकसे अधिक स्वतन्त्रताका पक्षपाती हूं। मैं बाल विवाहसे घृणा करता हूं। बाल विधवा देखकर मेरी आत्मा कांप जाती है और यदि मैं कहीं पत्नीके मर जानेपर बिना किसी ख्यालके पुरुषोंको शादी करते देखता हूं तो मुझे हार्दिक घृणा होती है। मैं बालिकाओंको अशिक्षित तथा मूर्ख रखनेमें पिता माताओंकी

उदासीनताको पाप समझता हूं। पिता माता बालिकाओंको परायेकी सम्पत्ति समझकर केवल शादी कर देनेके लिये ही उन्हें पालते पोषते हैं, इससे बढ़कर निन्दाकी और क्या बात हो सकती है। पर इन अवस्थाओंपर खेद प्रगट करते हुए भी मैं इसकी कठिनाईको समझता हूं। स्त्रियोंको मत देने तथा कानूनी सत्ताका अधिकार मिलना चाहिए। पर इतनेसे ही समाप्ति नहीं है। इसका तो आरम्भ ही यहासे होता है जहा स्त्रिया राजनैतिक आन्दोलनमें भाग लेना आरम्भ करती हैं।

अपने अभिप्रायको स्पष्ट कर देनेके लिये मैं एक हवाला दे देना चाहता हू। मेरे एक मुसलमान मित्रके साथ किसी अंग्रेजसे बातचीत हुई थी जो स्त्रियोंके अधिकारोंका समर्थक था। उसी बातचीतका सार मैं यहापर दे देना चाहता हूं। औरतोंकी एक सभा हो रही थी। उसमें एक मुसलमान भी उपस्थित थे। उसने उस मुसलमानसे पूछा आप यहा कैसे आ पहुंचे। मेरे मुसलमान मित्रने उत्तर दिया, इसके दो प्रधान और दो गौण कारण हैं। मैं जो कुछ हो सका हू अपनी माकी कृपासे हो सका हू। मेरी पत्नी मेरी जीवनकी सच्ची साथी है। मेरे चार लडकिया हैं। पिताकी हैसियतसे मुझे उनकी पूरी तरहसे देख रेख करनी पडती है। ऐसी अवस्थामें यदि मैं स्त्रियोंके अधिकारोंका समर्थन करूं तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं। मुसलमानोंपर यह दोषारोपण किया जाता है कि वे औरतोंकी ओरसे उदासीन रहते हैं। इससे बढ़कर अपमान-

जनक दूसरी बात हो ही नहीं सकती। इस्लाम धर्मने स्त्रियों-को बराबरका हक दिया है। मेरी समझमें पुरुषने अपनी काम-वासना तृप्त करनेके लिये औरतोंका पतन कर डाला है। उसकी अन्तरात्माकी उपासना न कर उसके शरीरको सजाना आरम्भ कर दिया। अपने इस काममें उसे इतनी अधिक सफलता मिली कि इस समय औरतें इसको दासताकी निशानी न समझकर इसीकी उपासना करने लग गई हैं। उन्होंने आखोंमें आसू भरकर कहा कि यदि यह बात सची नहीं है तो आज पतित बहनें अपने शारीरिक सौन्दर्यको देखकर क्यों मुग्ध हो रही हैं। क्या हम लोगोंने उनकी अन्तरात्माको पीस नहीं डाला है? अपनेको सम्भालकर उन्होंने कहा कि मैं स्त्रियोंको केवल स्वतन्त्रता ही दिलानेका पक्षपाती नहीं हू। बल्कि मैं चाहता हू कि उन्हे स्वेच्छाचारका अधिकार दे दिया जाय। इसलिये मैंने निश्चय किया है कि मैं अपनी पुत्रियोंको किसी स्वतन्त्र पेशेमें लगाऊगा।

इस बात चीतको मै और आगे नहीं बढ़ाना चाहता। मै चाहता हू कि पत्रकी लेखिका मेरे मुसलमान मित्रकी बातोंपर ध्यान दें और तब स्त्रियोंके प्रश्नपर विचार करें। स्त्रियोंको अपने हृदयसे यह भाव निकाल देना चाहिये कि वे पुरुषोंकी विलासिताके साधन हैं। यदि वे पुरुषोंके साथ बराबरीका दावा रखती हैं तो उन्हें उचित है कि पुरुषोंके लिये—अपने पति तक—अपना शृंगार करना छोड दें। मै क्षण भरके लिये भी

यह नहीं सोच सकता कि रामको प्रसन्न रखनेके लिये सीता देवीने कभी भी अपना शरीर सजाया था।

—०:—

पतित बहनें

(सितम्बर १६. १९२१)

बरीसालमें कितनी ही उल्लेख करने योग्य स्मरणीय बातें हैं। परन्तु मुझे इतना समय नहीं कि उन सबका वर्णन कर सकूं। तो भी एक प्रसगका उल्लेख किये विना तो रहा नही सकता। वह है बरीसालकी पतित बहनोंका। इस दृश्यको मैं कभी नहीं भुला सकता। बरीसालके कितनी ही पतित बहनोंके नाम महासभाके सदस्योंमें दर्ज हैं। उन्होंने तिलक स्वराज्य फण्डमे भी चन्दा दिया है। उनकी सख्या ३५० के करीब होगी। उन्होंने मुझे पत्र लिखा था कि हम आपसे मिलना चाहती हैं। वे चाहती थीं कि हम महासभाका कुछ अधिक कार्य करे। वे क्यो न चुनावके लिये खडी हों और महासभाके किसी पदका कार्य क्यो न करे? ज्योंही मैं रातको सभासे आया, मैंने कोई सौ बहनोंको एक कोनेमें खडा देखा। मैं सचेत हुआ। बडे आदरके साथ उन्हें छतपर ले गया। एक दुभाषियेको साथमें रखा। दूसरे पुरुषोंको बिदा कर दिया। मैंने उनसे कहा कि तुम दिल खोलकर अपनी बात मुझसे कहो। उनमें

चार पांच दस वर्षकी लडकियां भी थीं। कितनी ही जवानी पार कर गई थी। बाकी जो थीं वे बीससे तीस वर्षके अन्दर होंगी। उनके साथ मेरी जो बात चीत हुई, उसका सार सवाल जवाबके रूपमें यहां देता हूं—

मैं—बहनों, अच्छा हुआ जो तुम आ गई। मैं तो तुम्हें अपनी बहन और लडकियोंके सामान समझता हूं। मैं चाहता हूं कि तुम्हारे दुःखमें शरीक होऊं। पर अगर तुम मुझसे कुछ छिपाव रखोगी तो मैं तुम्हें सहायता देनेमे असमर्थ हो जाऊंगा।

जवाब—आप जो कुछ पूछियेगा उसका जवाब हम सच सच देंगी।

सवाल—तुममेसे कितनी ही की उम्र ज्यादह मालूम होती हैं क्या वे भी अबतक तुम्हारे इस पेशेमे अटकी हुई रहती हैं?

ज०—नही तो, जिनकी उम्र ज्यादह हैं वे भीख मांगकर अपना पेट भरती हैं।

स०—ऐसा कहना तुम्हें जेबा देता है?

ज०—यह पेट सब कुछ कराता है।

स०—ये लडकियां तो छोटी छोटी हैं। इनका भी यही हाल है?

ज०—हम तो यह आशा करके आपके पास आई हैं कि आप कोई रास्ता बतायेंगे। हम तो कोई भी इस पेशेको करना नही चाहतीं।

स०—अच्छा जो जवान हैं उनका क्या हाल? इस पेशेकी

भोग-सामग्री पर उनका मन ललचाता तो नहीं ?

ज०—जी हां, कुछ ऐसी हैं तो।

स०—तुम लोगोंको बाल-बच्चे होते हैं ?

ज०—जी, किसी किसीको होते हैं।

स०—तुम्हारी कुल संख्या कितनी होगी ?

ज०—३५०।

स०—इसमें बाल बच्चे कितने हैं ?

ज०—कोई १० हैं।

स०—लड़के या लड़कियां ?

ज०—कोई छः लड़कियां और बाकी लड़के।

स०—लड़कोंका क्या करती हो ?

ज० एक लड़का बड़ा है। उसकी शादी हममें एकके साथ कर दी है।

स०—तुम अपनी लड़कियां मुझे दोगी ?

ज०—अगर आप परिवरिश करें तो हम दे देंगी।

स०—तुम कितनी बहनें इस पेशेको छोड़ना चाहती हो ?

ज०—सबकी सब !

स०—जो काम मैं बताऊं उसे करोगी ?

ज० हम जानती हैं आप क्या बतायेंगे। हममेंसे कितनी हीने सूता कातना शुरू भी कर दिया है।

स०—यह सुनकर तो मुझे बड़ा सन्तोष हुआ। पर जिन

बहनोंने कातना शुरू किया है उन्होंने अपना पेशा छोड़ दिया है या नहीं ?

ज०—वह तो हमारे लिये आवश्यक हो गया है। उतनेसे हम अपना पेट कैसे पाल सकती हैं !

स०—आजकल तुम कितना कमा लेती हो ?

तुम जवाब देते हुए शरमाती हो। तुम्हारी शर्मका मतलब मैं समझ सकता हू। मैं तुम्हारे साथ बात तो कर रहा हू पर मेरे दिलमें आग लग रही है। जो बात हो वह इस वक्त तो मुझसे कह दो।

ज०—बहुतसी साठ रुपया महीना पैदा कर लेती हैं। २) रोज पड़ते हैं।

स०—यह तो मैं जानता हू कि इतनी आमदनी सूत कातकर तुम नहीं कर सकती। परन्तु जो तुम ये अनेक प्रकारके मनोमोहक शृंगार विलास करती हो, इन्हें तो अब छोड़ ही देना होगा। मैं अकेले तुम्होंसे यह बात कहता हू, सो नहीं। मेरी धर्मपत्नीने भी सिंगारोंका त्याग कर दिया है। मेरे यहा कमसिन लड़कियां हैं। उनके मा बाप इस हैसियतके हैं कि उन्हें बढ़िया गहने पत्ते दे सकते हैं। तो भी वे खादीकी धोतियां पहनती हैं और गहना तो किसी तरहका भी नहीं पहनती। इस कारण तुमसे बनाव सिंगार छोड़ देनेका इसरार करते हुए मुझे जरा भी आघात नहीं पहुंचता।

ज०—हम अपना जीवन सादा बनानेके लिये कोशिश

करेंगी, कोई तुरन्त ही कोई धीरे धीरे। हममेंसे एकने तो अपना सबकुछ रामकृष्ण मठको अर्पण कर दिया है और खुद अब भिक्षा मांगकर रहती है।

स०—इस बहनको मैं वन्दना करता हू। अच्छा किया जो आपने सर्वस्व त्याग दिया। परन्तु मैं देखता हू कि (उसकी ओर रुख करके) तुम्हारे हाथ पैर अच्छे हैं। अगर तुम सूत कातती हुई सादगीसे रहो तो और भी पुण्य हो। मैं तो यह चाहता हू कि हिन्दुस्तानका ऐसा एक भी भाई या बहन, जिसके हाथ पैर दुरुस्त हों, भीख न मांगे। वह भीख मांगना एक शर्मकी बात समझे। ऐसा कहनेका समय अब आ गया है। चरखा एक कामधेनु है। यह हमारे हाथ लग गई है। तुम बहनोंके महज सूत कातने भरसे मुझे सन्तोष नहीं हो सकता। तुम्हें बुनना और धुनना भी सीखना चाहिये। तब तुम अपनी आजीविका पूरी तरह प्राप्त कर सकोगी।

ज०—आप हमें रास्ता बताइये। हम जरूर उस मुताबिक चलेंगी।

स०—तुम कितनी बहनें कलहीसेपेशा छोड़ देनेको तैयार हो।

इसके जवाबमें ११ बहनें उसी वक्त खड़ी हो गईं। मैंने उनसे कहा कि खूब विचार कर लेना। उन्होंने कहा कि हम अपने निश्चय पर कायम रहेंगी। उन्होंने तो पहलेहीसे विचार कर रखा था। अब उसके अनुसार काम किस तरह करें, इसी उलझनमें वे थीं। इसलिये मैं ने कहा—

"अब तुम शादीका ख्याल ही छोड दो। इसीसे भूतकालमें तुमने जो कुछ किया हो, पर अब अगर तुम सचमुच शुद्ध हो जाओगी तो संसार तुम्हारे पापोंको भूल जायगा। तुम गृहस्थाश्रमके व्यवसायसे पृथक् अर्थात् सन्यासिनी हो सकती हो। तुम भारतवर्षकी सेवा कर सकती हो। अगर तुममेंसे बहुत सी बहने रोज बारह घंटेतक ईश्वरका भजन करती हुई काता बुना करें तो प्राय सारे बरीसालको अकेली तुम ही कपडा दे सकती हो। तुम्हारी श्रेणीकी हिन्दुस्तानकी सारी बहने अगर यह गन्दा काम छोडकर कातनेका पुण्यकार्य करने लगें तो भारतवर्षका उद्धार सहजमें हो जाय। इसलिये मैं उम्मेद करता हू कि तुम ग्यारह बहनें अपने निश्चयपर दृढ रहोगी। मैं तो मुसाफिर हू। पर मैं यहाके अगुओको जोर देकर सिफारिश करता जाऊगा और मुझे यकीन है कि यहाकी महासभा समिति तुमको पूरी पूरी मदद देगी। ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे।

पाठको, तुम चाहे भाई हो या बहन हो, मैं नहीं कह सकता कि इसे पढकर आपके मनपर और हृदयपर क्या असर होगा। मैंने आपके सामने पूरा वर्णन पेश नही किया है। यह तो अपनी शक्तिके अनुसार उसका चित्र मात्र अंकित किया है। चीजकी असलियत तो आखों देखनेसे ही मालूम होती है। मैं तो बराबर मारे शरमके मर रहा था, स्त्रियोंके प्रति किये गये पुरुषोंके अपराधकी नाप जोख करता रहा था। ये बहने

आज बूझकर इस पापमें नहीं पड़ीं ! पुरुषोंने उन्हें इसमें गिराया है। अपने विषय-भोगके लिये उसने स्त्री जातिके ऊपर घोर अत्याचार किया है। जिनको इस बातपर दर्द होता हो उन्हें चाहिये कि वे प्रायश्चित्तके रूपमें इन पतित बहनोंको हाथ बढ़ाकर सहारा दें। जब जब इन बहनोंका चित्र मेरी आंखोंमें खिंचता है तब तब मुझे ख्याल होता है कि अगर ये मेरी ही बहनें या लड़कियां होतीं तो—? होती क्यों, हई हैं। उनको उठाना मेरा और प्रत्येक मर्दका काम है। इसीसे मुझे चरखेका सुर बड़ा प्यारा लगता है। यह स्त्रियोंकी रक्षा करनेवाला किला है। हिन्दुस्तानमें रहनेवाली ऐसी बहनोंको सहारा देनेवाली दूसरी कोई चीज मुझे नहीं दिखाई देती। परन्तु जबतक इस कामको हर एक शहरके रहनेवाले साधु-पुरुष न उठा ले तबतक वह नहीं हो सकता। बरीसालमें इन बहनों तक पहुंचनेवाले साधुचरित शरत कुमार घोष और उनके साथके एक असहयोगी वकील भूपति बाबू हैं। मैंने तो सिर्फ उनके तैयार किये हुए क्षेत्रसे लाभ उठा लिया है। बहनो, अब मालूम हो जानेके बाद तो तुमको भी इसपर विचार करना है। पतित बहनोंके हृदय मन्दिरमें तो तुम्हीं प्रवेश कर सकती हो। जबतक ऐसी पतित बहनोंके उद्धारके लिये कमर न कसोगी तबतक मुझ जैसे लोगोंके प्रयत्न भी निष्फल होंगे।

स्वराज्यका अर्थ है पतितोंका उद्धार।

नमककर

भारत सरकारने बजटमें कमी पड़नेके कारण नमक पर दूना तथा जीवनकी दूसरी आवश्यक चीजों पर भी कर बढ़ानेका प्रस्ताव किया है। इस पर चारों ओरसे एक स्वरसे निषेध और निन्दा की ध्वनिया उठ रही हैं। मैं कहता हूं, यह क्यों? और इस बात पर भी आश्चर्य प्रगट किया जा रहा है कि इधर तो साठ करोड़का भयंकर फौजी खर्च बढ़ाया गया और तिस पर भी अबकी बार खेद तक नहीं प्रगट किया गया! क्षमा याचनात्मक दो शब्द भी नहीं कहे गये!! पर बात यह है कि जिसके किये बिना कार्य चल ही नहीं सकता उसके लिए क्षमा मागना असम्भव है। राष्ट्रमें ज्यों ज्यों चैतन्य बढ़ता जायगा त्यों त्यों फौजोंका खर्च भी बढ़े बिना नहीं रह सकता। फौजकी जरूरत भारतकी रक्षाके लिए नहीं है। बल्कि उसकी आवश्यकता तो है अंग्रेज लोगोंको भारतके द्वारा जबरदस्ती आर्थिक तथा दूसरे लाभ करानेके लिए। साफ साफ सच बात तो यही है। श्री मॉंटेगूने बेढगे तरीकेसे लेकिन सचाईके साथ यह कह दिया है। बङ्गाल चेम्बर आव् कामर्सके उन सभापतिने भी यही बात कही है और बम्बईके लाट साहबने भी उसको दोहराया है। वे हमारे साथ व्यापार तो करना चाहते हैं। पर हमारी शर्तों पर नहीं, उनकी शर्तों पर।

बात तो वही है, चाहे हम खुले हाथों करें, चाहे मोजे डाल कर करें। ये कौंसिलें उनके हाथके मोजे हैं। हमें उन मोजों-के खर्चके लिए रुपया दिये बिना चारा नहीं। ये शासन सुधार हमारी छाती पर कालकी तरह लटकते हैं। यह खून चूसनेवाले नमकके कर की तरह कितने ही दोष उनके पेटमें समा जाते हैं।

वे हमें कहते हैं- 'तुम चाहो अथवा न चाहो' हम तो हिन्दुस्तानको छोडनेवाले नहीं।' हमारा यह विश्वास है कि यह सब हमारे भले ही के लिये है। हम समझते हैं कि अंग्रेजोंकी शस्त्र च्छायाके बिना हम आपसमे लडे-कटे बिना रही नहीं सकते। और इसलिये, अपने भाईके हाथों मर जानेके डरसे, हम गुलामों-की तरह रहने पर राजी हैं।

इन कौंसिलों और असेम्बलियोंकी धोखेकी टट्टियोंकी ओटमें छिपी सर्वतन्त्र-स्वतन्त्रताके बनिस्बत तो फौजी राज हजार गुना बेहतर है। उनसे एक तो दर्दकी उम्र बढती है और दूसरे खर्च भी बढता है। यदि हमें जीवित रहनेकी उत्कंठा ही है तो यह डींग हांकनेकी अपेक्षा कि हम धीरे धीरे आजाद हो रहे हैं यही अधिक इज्जतकी बात है कि हम सत्यका सामना करें और उन सूत्र-सञ्चालकोंके चरणों पर सिर रख दें, इससे हमारी विफलता दूर हो जायगी। धीरे धीरे आजादी? यह तो अद्भुत बात है! आजादी तो जन्म की तरह एक क्रिया है। जब तक हम पूरी तरह आजाद नहीं हो जाते तबतक हम गुलाम ही हैं। जन्म तो एक क्षणमात्रमें ही होता है।

महासभाका डर क्या चीज है? इसी आती हुई आजादीका डर। महासभा अब एक भीषण सत्य घटना हो गई है। और इसीलिये उसको जिस तरह बन पड़े उसी तरह, कानून कायदा भाड़में जाये, नष्ट भ्रष्ट कर देनेकी तैयारी हुई है। यदि लोगोंके दिल भयसे काफी अभिभूत कर दिये गये तो चाहे सौ पचास बरसों तक और यह लूट जारी रह सकेगी। हां, यह दूसरी बात है कि इस बढ़ते हुए भारसे दब कर भारत तबतक जीवित रह सकेगा या लोग इस बीच पतगों और भुनगोंकी तरह मर मिटेंगे? जब कोई आदमी नारियल खाने लगता है तब वह अन्दर की गिरीके साथ दया माया नहीं दिखलाता। जब वह उसका सारा अंश कुतर चुकता है तब उस नारियलकी खोपड़ीको फेंक देता है। हम इस कृतिको हृदयहीनता नहीं कहते। व्यापारी भी इस बातका अधिक विचार नहीं करता कि मैं इस निरीह खरीदारसे क्या ले रहा हूं। कैसी हृदय हीनता अरे, इसके तो हृदय हई नहीं। व्यापारी जो कुछ लेना होता है लेकर चल देता है। अरे यह तो सब सौदागिरी है।

कौन्सिलोंके सभासदोंको उनका किराया और भत्ता चाहिये, मन्त्रियोंको उनके वेतन चाहिये, वकीलोंको मिहनताना, मुकदमे बाजोंको डिग्रियां, मा-बापोंको अपने लड़कोंके लिए ऐसी शिक्षा चाहिये जिससे वे मौजूदा जीवनमें एक नामीगिरामी आदमी बन जाय, लखपतियों और करोड़ पतियोंको सब तरहकी सुविधायें चाहिए जिससे वे अपने लाखों और करोड़ोंको

अरबों-खरबों तक पहुंचा खर्च और बाकी लोगोंको निःसत्व शान्ति। ये सब मिल कर बडी उम्दगीके साथ उस मध्यवर्ती संस्थाके आस पास भटकते हैं। यह एक चक्करदार नाच है। कोई उससे अपनेको मुक्त करनेकी चिन्ता नहीं करता। और इसलिए ज्यों ज्यों उसका वेग बढता है त्यो त्यों हृदयको अधिक हर्षोन्माद मालूम होता है। मगर वे नहीं जानते कि यह तो कृतान्तका ताण्डव है और उनको जो हर्षोन्माद मालूम होता है वह उस मरीजके हृदयकी तेज धडकन की तरह है, जो अपनी जिन्दगीकी अन्तिम सांस खींच रहा है।

जबतक यह नृत्य जारी रहेगा तब तक यह खर्च बढ़े बिना रही नहीं सकता। ताज्जुब नहीं, यदि यह बढती असहयोगियोंके विशाल कंधों पर भी लाद दी जाय। उनके लिये तो बस एक ही पाठ है। यदि वे अपने धर्म पर आरूढ रहना चाहते हों तो उन्हें इस वृद्धिको निष्काम शान्तिकी दृष्टिसे देखना चाहिये। इसको रोकनेका सिर्फ एक ही मार्ग है,—'अहिंसा'। क्योंकि असहयोगका सबसे अधिक भाग तो यही है कि सरकारके इस सुसंगठित पशु बलसे, जिस पर कि उसकी सारी बुनियाद है, अपना सम्बन्ध हटा लेना। यदि हम सरकारके पशु-बलको हटानेके लिये पशु बलका ही संगठन करना चाहें तो हमें इससे भी अधिक खर्च उठानेके लिये तैयार रहना चाहिये। हम चाहे उन तमाम नर्तकोंके दिलोंमें इस भीषण भविष्यका इत्मीनान न करा सकें, पर हम सर्व साधारणको जो कि इस नाचमें

शामिल हैं और वराय नामको शान्तिको खरीदनेके लिये अपनी प्यारी आजादीको बेच डालते हैं, जरूर यकीन दिला सकते हैं। और ऐसा करनेका एक ही उपाय है- उन्हें यह दिखला देना कि आजादीका साधन अहिंसा ही है गुलामकी जबरदस्ती मंजूर कराई अहिंसा नहीं, बल्कि वीर और आजाद पुरुषकी राजी रजामन्दीके साथ स्वीकार की गई अहिंसा।

हड़तालें कब हों ?

(सितम्बर २३, १९२१)

आसाम बङ्गाल रेलवेमें और स्टीमरोंपर जो हड़तालें हुई हैं वे मामूली नहीं हैं। वे तो अपने ढङ्गकी निराली और पहली ही हैं। मुझे यह मालूम हुआ है कि चांदपुर आदिके चायके खेतोंपर काम करनेवाले कुली बुरी तरह सताये जाते हैं। उनके दुखोंसे उन रेलवे और स्टीमरोंके कर्मचारियोंके दिलोंमें हमदर्दी पैदा हुई और उससे जोशमें आकर उन्होंने हड़तालें कीं। इसलिये वे हड़तालें सहानुभूति मूलक, पारमार्थिक और राजनैतिक हैं। मैं तमाम रेलवे लाइनोंके विशेष कर गौहटी, चटगाव, और वरीसालके हड़तालियोंसे मिला हूं। उनसे दिल खोलकर बात-चीत भी की है। उससे मैं

इस नतीजेपर पहुचा कि लोग इस बातको पूरी तरह नहीं समझ पाये थे कि इस कामको उठानेमें कितनी जोखिम है। पर एक दफा हडताल शुरू कर देनेपर उसके नतीजेका सामना करनेसे भी वे पीछे नहीं हटे हैं। ऐसे मौकेपर बाहरी आदमियोंके लिये यह कहना तो दिक्कत तलब और बेजा है कि अगर ऐसी हालत मेरे सामने होती तो मैं इस तरह से यह काम यों करता। लेकिन ऐसी पेचीदा हालतमें भी, अगर कोई चाहे तो मेरे ख्यालमें यह राय दे सकता है कि वे मजदूर लोग पारमार्थिक अर्थात् दूसरेके भलेके लिये की जानेवाली हड़तालके लिये तैयार नहीं थे। मेरी रायमें तो हिन्दुस्तानके कुली और कारीगर अभी जातीय चैतन्य जागृति-की उस हदतक नहीं पहुचे हैं जो कि सहानुभूति मूलक हड-तालोंमे कामयावी हासिल करनेके लिये जरूरी है।

पर इसमें दोष हमारा ही है। हम लोगोंने, जो कि इन दिनों राष्ट्रीय सेवामें दिलचस्पी ले रहे हैं, अभीतक इस बात पर गौर नहीं किया था कि इस दर्जेके लोगोंकी जरूरतें और अरमानें क्या हैं। और न हमने उन्हें देशकी राजनैतिक अवस्था-की जानकारी करानेकी तकलीफ ही उठाई थी। अबतक हम लोग यही मानते आये हैं कि मुल्ककी खिदमत करनेके लायक तो सिर्फ वही लोग हैं जिन्होंने हाई स्कूल और कालिजोंसे इम्तिहान पास किये हैं। इस हालतमें मजदूरों और कारीगरोंसे यह उम्मेद करना कैसे मुनासिब है कि वे

एकदम ऐसे कामोंमें जिनसे उनके नफा नुकसानका ताल्लुक नहीं है, पडने और उनके लिए कुरबानी करने लग जाय ? हमें राजनैतिक कामोंके लिए अथवा किसी दूसरे मतलबके लिये भी उनको अपना औजार न बनाना चाहिये, बल्कि ऐसी अवस्थामें तो हम जो अच्छीसे अच्छी सेवा उनका कर सकते हैं और उनसे ले सकते हैं वह यह है कि हम उन्हें स्वावलम्बनकी—अपने पैरोंपर आप खडे रहनेकी शिक्षा दें, उन्हें अपने फरायज और हक्कूककी जानकारी करावें और उन्हें ऐसी हालतमें लाकर छोड दें जिसमें वे अपने दुखदर्दको मिटा और दूर करा सकें। तभी वे राजनैतिक, जातीय अथवा परोपकार मूलक कामोंके लिये तैयार हो सकते हैं; उसके पहले नहीं।

इस हालतमें अगर सहानुभूति मूलक हडतालोंके लिये उचित समयके पहले ही उद्योग किया जाय तो उससे हमारा उठाया काम बुरी तरह बिगडे बिना नहीं रह सकता। अहिंसाके कार्यक्रममें हमें इस खयालको पक्के तौरपर निकाल देना होगा कि सरकारको तङ्ग और हैरान करनेसे हमें कुछ भी हासिल हो सकता है। अगर हमारी हलचल निर्मूल पाक है और सरकारकी हलचल अशुद्ध गन्दी होगी और अगर सरकार खुद अपनेको शुद्ध न करेगी तो हमारी शुद्धताके बदौलत उसे अपने आप, कुदरती तौर पर ठिक होना पडेगा। इस तरह आत्म शुद्धिका आन्दोलन दोनों

ही पक्षवालोंका भला करता है। इसके खिलाफ अगर दूसरेको बरबाद करनेकी नीयतसे कोई हलचल उठाई जाय तो उससे न केवल बरबादी चाहनेवाला खुद अशुद्ध ही बना रहता है, बल्कि वह उतना ही नीचे भी गिर जाता है जितना कि वह आदमी जिसकी बरबादीके लिये कोशिश की जा रही है।

सहानुभूति मूलक हड़तालें भी आत्म शुद्धि मूलक अर्थात् असहयोग-मूलक होनी चाहिये, क्योंकि इस रीतिसे जब हम किसी जुल्मको मिटानेके लिये हड़तालकी तजवीज करते हैं, तब हम खुद-ब खुद अपनेको जुल्ममें शरीक होनेसे दरअसल अलहदा रखते हैं और इस तरह हम जालिमको महज उसीकी साधन सामग्रीके सहारे छोड़ देते हैं—दूसरे अल्फाजमें यों कहें कि हम जालिमको ऐसा मौका देते हैं जिसमें वह अपने आप यह देख सके कि बराबर जुल्म करते रहनेमें मैं कितनी बेवकूफी कर रहा हूँ। मगर ऐसी हड़तालमें तभी कामयाबी हो सकती है जब कि उसकी पीठ पर हड़तालियोंका यह पक्का कस्द हो कि हम बीचहीमें हरगिज कामपर न जायँगे।

मैंने आजतक कई हड़तालें कामयाबीके साथ की हैं। और यहां मैं एक हड़तालोंके तजरिबेकारकी हैसियतसे हड़तालोंके कुछ नियम लिखता हूं, जिनसे उम्मीद है कि हड़तालोंके अगुआ लोगोंको कुछ मदद मिलेगी—

(१) दर हकीकत किसी दुख दर्दके हुए बिना हड़ताल हरगिज न की जाय।

(२) अगर हड़तालिये लोग अपनी ही बचतके चन्देके जरिये या धुनकना, कातना, बुनना जैसे चन्दरोजा पेशा अख्यार करके अपनी गुजर न कर सके तो हड़ताल न की जाय। हड़तालियोंको आम लोगोंके चन्दों या दूसरी किस्मके दानोंके भरोसे हरगिज हड़ताल न करनी चाहिये।

(३) हड़तालियोंको अपनी माग पहलेसे तय कर रखना चाहिये। माग कमसे कम हो और ऐसी हो कि उसे फिर आगे चलकर तिल भर भी घटाना बढ़ाना न पड़े। और हड़ताल शुरू करनेके पहले ही उसे जाहिर भी कर देना चाहिये।

अगर हड़तालियोंकी जगह पर दूसरे काम करनेवाले लोग तैयार हों तो हड़ताल, सच्चे दुख दर्दके होते हुए भी और हड़तालियोंमें अपनी टेकपर पक्के डटे रहनेकी काबिलियत होते हुए भी ना कामयाब हो सकती है। इसलिये कोई भी समझदार आदमी अगर वह यह जानता होगा कि मेरी जगह दूसरा आदमी आसानीसे कामपर आ सकता है तो अपनी मजदूरी बढ़ानेके लिये अथवा दूसरे सुख-साधनके लिये कभी हड़ताल नहीं करेगा। परन्तु जो मनुष्य परोपकारशील या देशभक्त होगा वह अगर अपने भाइयोंकी मुसीबतको महसूस करता होगा और उसमें उसका साथ

दिये जानेपर भी जवांमर्दीके साथ अपनी टेक नहीं छोडी है? सो इस बारेमें मैने अपनी राय बङ्गालकी प्रान्तीय महासभा समितिके पास भेज दी है। और मैं उसीका पाबन्द रहना चाहता हूं। अगर हडतालियोंने केवल चांदपुरके अत्याचार पीडित कुलियोंके प्रति सहानुभूतिके वश होकर हडताल की है और सो भी अपने भाइयोंको बिना डराये धमकाये, तो नैतिक दृष्टिसे उन्हें ऐसा करनेका पूरा हक था, और ऐसा करके उन्होंने इस दर्जेकी देशभक्ति और भाई चारेका परिचय दिया है जिसकी उम्मेद उनसे नही की जा सकती थी।

मुझे आशा है कि अब, जबतक सरकार पूरी तरह और खुले तौर पर माफी न मांगे और जबतक कुलियोंको उनके घर पहुंचानेके लिये खर्चकी रकम न अदा कर दे, तबतक हडतालिये लोग बराबर कामपर जानेसे साफ इनकार करते रहें।



नेकी ख्वाहिश रखता होगा, तो जरूर हडताल करेगा फिर सकी माग चाहे कितनी ही ज्यादह क्यो न पूरी की जाती ी ? और यह कहनेकी तो जरूरत ही नहीं है कि बा-अदब इडतालोंका जो ढङ्ग मैंने बनाया है उसमें हिंसाके लिये तो गह ही नही है फिर वह चाहे दूसरोंको डराने धमकानेके भथवा आग लगानेके या दूसरे किसी रूपमें क्यों न हो। स हालतमे अगर मुझे यह मालूम हुआ कि चटगावमें ाल्हीमें जो रेलकी लाइने उखाड दी गई हैं, वह किसी हडतालियोंकी ही शरारत है, तो मुझे बडा ही अफसोस होगा।

मेरी सुझाई हुई इन कसौटियोंपर कसकर अगर देखा जाय तो यह साफ हो जाता है कि हडतालियोंके हित चिन्तकोंको यह न चाहिये था कि वे हडतालियोंको काग्रेस अथवा दूसरी आम सस्थाओंके खजानेसे उनकी गुजरके लिये दरख्वास्त देने या रुपया लेनेको सलाह देते। सच पूछिये तो हडतालियोंने आर्थिक सहायता पाकर अपनी हमदर्दीकी कीमतको घटा लिया! सहानुभूति मूलक हडतालोंका महत्व तो हमदर्दी रखनेवालोंके असुविधा उठाने और कष्ट सहनेमें ही है।

अब यह सवाल आता है कि उन हडतालियोंको, अथवा उनके लिये—और ये ५० फी सदीसे भी ज्यादह हैं—अब क्या करना चाहिये, जिन्होंने धमकाये जाने और लोभ-लालच

अष्टम खण्ड

स्वराज्य

होनी चाहिए कि किसीको भी उसके बिना भूखा और नगा न रहना पडे।

(४) ऐसी स्थिति हो जानेपर भी एक जाति और एक श्रेणीके लोग दूसरोंको दवा सकते हैं। अतएव स्वराज्यका अर्थ है—ऐसी स्थिति जिसमें एक बालिका भी घोर अन्धकारमें निर्भयताके साथ घूम फिर सके।

(५) पूर्वोक्त चार व्याख्याओंमें कितनी ही व्याख्याओंका समावेश दिखाई देगा। तथापि राष्ट्रीय स्वराज्यमें प्रत्येक अङ्ग सजीव और उन्नत होगा और होना चाहिए। इस दशामें स्वराज्यका अर्थ है अन्त्यजोंकी अस्पृश्यताका सर्वथा नाश।

(६) ब्राह्मण और अब्राह्मणके झगडेकी समाप्ति।

(७) हिन्दू मुसलमानके मनोमालिन्यका सर्वथा नाश। इसका यह अर्थ है कि हिन्दू मुसलमानकी मर्यादा रखें और उसके लिए जानतक दे दें। इसी तरह मुसलमान हिन्दुओंकी

स्वराज्यकी व्याख्या

(अगस्त १६, १६२१)

स्वराज्यकी व्याख्याओंके सम्बन्धमें मैं अपने मनमें तो विच किया ही करता हू। अब उन्हें पाठकोंके सामने भी उपस्थि करता हूं —

(१) स्वराज्यका अर्थ है—स्वय अपने ऊपर प्राप्त किया हुआ राज्य। इसे जो मनुष्य प्राप्त कर चुका है वह अपन व्यक्तिगत प्रतिज्ञाका पालन कर चुका।

(२) परन्तु हमने तो उसके कुछ लक्षण, और स्वरूपक कल्पना की है। अतएव स्वराज्यका अर्थ है—देशके आयात और निर्यातपर, सेनापर और अदालतोंपर जनताका पूरा नियन्त्रण। दिसम्बरकी प्रतिज्ञाका यह अर्थ है। इसमें अंग्रेज साम्राज्यके साथ सम्बन्ध रखनेके लिये जगह है भी और नह भी। यदि खिलाफत और पञ्जाब काण्डका निपटारा न हो ,तो जगह नहीं।

(३) परन्तु व्यक्तिगत स्वराज्यका तो उपभोग साधु लोग आज भी करते होंगे, और हमारी पार्लिमेंट स्थापित हो जानेप भी लोगोंकी दृष्टिमें सम्भव है, वह स्वराज्य न हो। इसलि

होनी चाहिए कि किसीको भी उसके बिना भूखा और नगा न रहना पड़े।

(४)ऐसी स्थिति हो जानेपर भी एक जाति और एक श्रेणी-के लोग दूसरोंको दबा सकते हैं। अतएव स्वराज्यका अर्थ है—ऐसी स्थिति जिसमें एक बालिका भी घोर अन्धकारमें निर्भ-यताके साथ घूम फिर सके।

(५) पूर्वोक्त चार व्याख्याओंमें कितनी ही व्याख्याओंका समावेश दिखाई देगा। तथापि राष्ट्रीय स्वराज्यमें प्रत्येक अङ्ग सजीव और उन्नत होगा और होना चाहिए। इस दशामें स्वरा-ज्यका अर्थ है अन्त्यजोंकी अस्पृश्यताका सर्वथा नाश।

(६) ब्राह्मण और अब्राह्मणके झगड़ेकी समाप्ति।

(७) हिन्दू मुसलमानके मनोमालिन्यका सर्वथा नाश। इसका यह अर्थ है कि हिन्दू मुसलमानकी मर्यादा रखें और इसके लिए जानतक दे दें। इसी तरह मुसलमान हिन्दुओंकी मर्यादा प्राणपणसे रखें। मुसलमान गो-हत्या करके हिन्दुओंका दिल न दुखावें, बल्कि आप तैयार होकर गो वध बन्द करें और अपने हिन्दू भाईके चित्तको चोट न पहुचने दें तथा हिन्दू बिना किसी तरहका बदला लिये, मसजिदोंके सामने बाजे न बजावें और मुसलमानोंका जी न दुखावें, बल्कि मसजिदोंके पाससे जाते हुए बाजे बन्द रखनेमें बड़प्पन समझें।

(८) स्वराज्यका अर्थ है—हिन्दू, मुसलमान,सिक्ख,पारसी ईसाई, यहूदी, सब धर्मोंके लोग अपने अपने धर्मका पालन करे

सकें और ऐसा करनेमें एक दूसरेकी रक्षा करें और एक दूसरेके धर्मका आदर करें।

(९) स्वराज्यका अर्थ यह है कि प्रत्येक ग्राम चोरों और डाकुओंके भयसे अपनी रक्षा करनेमें समर्थ हो जाय और प्रत्येक ग्राम अपने लिए आवश्यक अन्न-वस्त्र पैदा करे।

(१०) स्वराज्यका अर्थ है—देशी राज्यों, जमींदारों और प्रजामें मित्र भाव रहे, देशी राज्य अथवा जमींदार प्रजाको जेरबार न करें और रिआया राजा अथवा जमींदारको तङ्ग न करे।

(११) स्वराज्यका अर्थ है—धनवान् और श्रमजीवियोंमें परस्पर मित्रता। मजदूर उचित मजदूरी लेकर धनवानके यहां खुशीसे मजूरी करें।

(१२) स्वराज्य वह है जिसमें स्त्रियां माता और बहनें समझी जाय और उनका मान आदर हो तथा ऊंच नीचका भेद-भाव दूर होकर सब भाई बहनकी भावनासे वर्ताव करें।

इन व्याख्याओंसे यह सिद्ध होता है कि—

(१) स्वराज्यमें राज्यसत्ता शराब, अफीम इत्यादि (मादक पदार्थों) का व्यापार न करे।

(२) स्वराज्यमें अनाज और रूईके सट्टे न हों।

(३) स्वराज्यमें कोई कानूनका भङ्ग न करे।

(४) स्वराज्यमें स्वेच्छाचारके लिये बिलकुल स्थान न रहे, जिससे कोई अपने ही खिलाफ की गई शिकायतका फैसला,

खुद ही काजी बनकर, न करें, बल्कि देशकी बनाई अदालतमें अपने खिलाफ की गई फरियादका फैसला होने दे।

एक वर्षमें स्वराज्य

(सितम्बर २२, १९२०)

कलकत्तेकी कांग्रेसमें मैंने जो कहा कि यदि मेरे असहयोग कार्य-क्रमको लोगोंने पर्याप्त रूपसे स्वीकार किया तो एक वर्षमें स्वराज्य मिल जायगा, इसपर हँसने और उपहास करनेका कुछ लोगोंको मौका मिला है। कुछ लोगोंने तो इस बातका ही खयाल नहीं किया कि मैं क्या कहता हूं—किस हालतमें स्वराज्य मिलनेकी बात कहता हूं और इसी बातपर हंस पड़े कि एक वर्षमें किस उपायसे स्वराज्य मिल सकता है। कुछ लोगोंने "यदि" पर बड़ा जोर दिया है और कहा है कि "यदि और अगर" से कोई बात सिद्ध करनी हो तो कोई भी असम्भव बात सम्भव करके दिखलाई जा सकती है। परन्तु मैंने जो कुछ कहा है, सोच समझकर कहा है—हिसाब लगाकर कहा है। और मैं डंकेकी चोट यह बतलाता हूं कि जबतक वह काम नहीं होगा, जो मेरे हिसाबसे स्वराज्यके लिये होना आवश्यक है, तब तक सच्चा स्वराज्य बिलकुल असम्भव है। स्वराज्यका अर्थ वह अवस्था है जिसमें अङ्गरेज यहां न भी रहें तो हम लोग

अपना स्वतन्त्र अस्तित्व कायम रख सकें। यदि स्वराज्य साम्राज्यके अन्तर्गत हो तो वह भी हमारी इच्छासे हो। जबतक हम लोग अपनेको अंग्रेजोंके बराबर न समझेंगे और वैसे न होंगे तबतक स्वराज्य हो नहीं सकता। आज हम लोग यह समझते हैं कि अंग्रेज हमारी भीतर बाहरसे रक्षा कर रहे हैं, वे ही हिन्दू और मुसलमानोंको परस्पर मार काटसे बचाये हुए हैं, वे ही हमें शिक्षा दे रहे हैं और वे ही हमारी नित्यकी आवश्यकताओंकी पूर्ति कर रहे हैं, यही नहीं, बल्कि वे हमारे आपसके धार्मिक झगड़ोंको दबाये हुए हैं। राजाओंको जो अधिकार प्राप्त हैं वे अंग्रेजोंकी बदौलत हैं और धनवानोंका धन भी उन्हींपर निर्भर करता है, अंग्रेज हमारी असहाय अवस्थाको समझते हैं और सर टामस हालैण्ड असहयोगवादियोंकी ठीक ही दिल्लगी उड़ाते हैं। तात्पर्य यह कि स्वराज्य प्राप्त करना अपनी असहाय अवस्थासे छुटकारा पाना है। प्रश्न बड़ा ही विकट है, वैसा ही प्रश्न है जैसा उस सिंहके सामने उपस्थित था जो शृगालोंमें पला हुआ होनेके कारण अपने आपको सिंह नहीं समझ सकता था। टारस्टायने ठीक कहा है कि मनुष्य जाति प्राय वशीकरणके वशीभूत रहती है। इस जादूके कारण हम अपने आपको असहाय समझते हैं। स्वयं अंग्रेज भी इस दुर्गतिसे हमें बाहर निकाल नहीं सकते। इसके विपरीत वे हमारे कानोंमें यही मन्त्र फूंका करते हैं कि तुम लोग अपना शासन आप करनेकी विद्या धीरे धीरे ही सीख सकोगे। "टाइम्स" ने यह बतलाया

है कि यदि कौंसिलोंका बहिष्कार करोगे तो स्वराज्यकी शिक्षाका अवसर खो दोगे। मैं जानता हूं बहुतसे लोगोंकी ऐसी ही धारणा है। 'टाइम्स' झूठसे भी काम ले रहा है। वह ढिठाईके साथ कहता है कि लार्ड मिलनरके मिशनने मिश्रवासियोंकी बात तभी सुनी जब उन्होंने मिश्रकी कौंसिलका बहिष्कार उठा लिया। मेरे विचारमें तो स्वराज्यके लिये हमें यदि किसी शिक्षाकी आवश्यकता है तो वह यही है कि समस्त संसार भी हमारे विरुद्ध उठ खड़ा हो तो भी हम अपनी रक्षा आप कर सकें, इसकी योग्यता प्राप्त करें और अपना स्वाभाविक जीवन पूर्ण स्वतन्त्रताके साथ व्यतीत कर सकें, चाहे वह जीवन दोषपूर्ण ही क्यों न हो। सुराज्य स्वराज्यका काम नहीं दे सकता। पठानोंका राज्य सुराज्य नहीं है, पर स्वराज्य है। मैं उनसे ईर्ष्या करता हूं। जापानियोंने रक्तके समुद्रमें तैरकर यह विद्या सीखी। और यदि आज हम लोगोंमें यह ताकत होती कि हम अंग्रेजोंको उनसे भी अधिक पाशविक बलके द्वारा निकाल सकते तो हम उनके मुकाबले श्रेष्ठ गिने जाते और कौंसिलमें बैठकर वादविवाद करने या शासन कार्यका अनुभव चाहे हमें न भी होता तो भी हम लोग अपना शासन आप करनेके योग्य समझे जाते। कारण, पाशविक बलकी कसौटीको ही अबतक पश्चिमने माना है। जर्मन लोग हार गये, इस लिये नहीं कि वे अन्यायी थे, बल्कि इसलिये कि मित्रराष्ट्रोंका पाशविक बल उनसे अधिक था। इसलिये हिन्दुस्तानको या

तो युद्धकी विद्या सीखनी होगी जो अंग्रेज उसे न सिखलावेंगे या वह असहयोगके द्वारा आत्मनियमन और आत्मत्यागके अपने मार्ग पर चले। यह बड़े ही आश्चर्यकी और उतनी ही अपमानजनक बात है कि एक लाख गोरे आदमी इकतीस करोड़ भारतवासियोंपर राज कर सकें। इसमें सन्देह नहीं कि कुछ तो वे अपने बलसे राज करते हैं, पर अधिकतर उन्हें हमसे सहस्रों मार्गों द्वारा सहयोग प्राप्त करना पड़ता है और ऐसा उपाय करना पड़ता है जिससे हम लोग दिन दिन अधिकाधिक असहाय और परावलम्बी बने जाते हैं। रिफार्म कौंसिलोंको, अदालतोंकी वृद्धिको या लाटगिरीको सच्ची स्वतन्त्रता या अधिकार मत समझिये। ये रक्तशोषणके गुप्त उपाय हैं। अंग्रेज केवल पाशविक बलसे हमारे ऊपर राज नहीं कर सकते और इस लिये वे भले बुरे सभी उपाय करते हैं जिसमें हिन्दुस्तान उनके कब्जेमें बना रहे। वे अपने साम्राज्य-लोभके लिये हिन्दुस्तानका धन और जन बल चाहते हैं। यदि हम उन्हें धन और जन देनेसे इनकार करें तो हमारा साध्य—स्वराज्य, समानता और पुरुषार्थ—सिद्ध हो जाता है।

अपमानके विषका प्याला वाइसरायकी कौन्सिलका दृश्य समाप्त होते होते पूरा भरा जा चुका है। श्रीयुक्त शास्त्री पञ्जाब सम्बन्धी प्रस्ताव उपस्थित न कर सके। जलियांवाला बागके हिन्दुस्तानी हताहतोंको १२५० रुपया मिला और जनताकी उत्तेजनाके शिकारी अङ्गरेजोंको लाखों मिले। जिन अफसरोंने

ही मालिकोंका अपराध किया उन्हें कुछ कड़ी बातें सुनाई गईं। और कौंसिलर इतनेसे सन्तुष्ट हो गये। यदि हिन्दुस्तान बलवान् होता तो वह यह जलेपर नमक कभी चुपचाप न सह लेता।

मैं अंग्रेजोंको दोष नहीं देता। यदि हम लोग सख्यामें कम होते जैसे कि वे हैं तो हम लोग भी उन्हीं उपायोंका अवलम्बन करते जो वे इस समय कर रहे हैं। डर, दहशत पैदा करना और धोखा देना बलवानोंका नहीं, दुर्बलोंका काम है। अंग्रेज सख्यामें दुर्बल हैं, हम लोग बलवान् होकर भी दुर्बल हैं। इसलिये दोनों एक दूसरेको ऊपरसे नीचे खींच रहे हैं। यह सबके अनुभवकी बात है कि अंग्रेज हिन्दुस्तानमें रहकर अपना चरित्र बल खो देते हैं और हिन्दुस्तानी अंग्रेजोंकी संग सोहबतमें रहनेपर अपना साहस और पुरुषार्थ खो बैठते हैं। यह जीवन क्रम न हमारे, न अंग्रेजोंके लिये अच्छा है, न संसारके लिये ही।

परन्तु यदि हम हिन्दुस्तानी अपनी फिक्र आप करें तो इंग्लैण्ड और शेष ससार भी अपनी फिक्र करेगा। इसलिये संसारकी प्रगतिमें सहायता करनेके कामका हिस्सा हमारे जिम्मे यही आता है कि हम अपना घर ही सुधारें।

शास्त्र शिक्षाकी तो इस समय कोई बात ही नहीं है। मैं एक कदम और आगे बढ़ता हूं। मेरा यह विश्वास है कि संसारमें हिन्दुस्तानका एक खास मिशन है जो इससे अच्छा

है। वह संसारको यह दिखला सकता है कि हिन्दुस्तान केवल शुद्ध स्वार्थत्याग अर्थात् आत्मशुद्धिके द्वारा अपनी भवितव्यताको प्राप्त कर सकता है। यह असहयोग द्वारा हो सकता है। और असहयोग तभी हो सकता है जब वे लोग, जिन्होंने सहयोग आरम्भ किया, सहयोगसे हाथ खींचना आरम्भ करें। जब हम लोग सरकारी स्कूलों, सरकारी अदालतों और व्यवस्थापिका सभाओंकी त्रिगुणमयी मायासे मुक्त होंगे और अपनी शिक्षाका प्रबन्ध करेंगे, अपने झगड़े आप निपटा लेंगे और उनके कानून कायदोंसे उदासीन होंगे, तब यह कहा जायगा कि हम लोग अपना शासन आप कर सकते हैं और तब हम सरकारी मुल्की और फौजी नौकरोंसे यह कह सकेंगे कि अपनी नौकरियां छोड़ दो, और कर देनेवालोंको बतला सकेंगे कि कर देना अभी बन्द कर दो।

क्या यह आशा करना कि लड़कोंके मा-बाप अपने लड़कोंको स्कूल-कालेजोंसे निकालकर अपने विद्यालय आप स्थापित करेंगे, या वकीलोंसे यह आशा करना कि वे अदालत जाना छोड़ देंगे और केवल गुजारेके लिये कुछ लेकर राष्ट्र सेवा करेंगे, या कौंसिलोंके उम्मेदवारोंसे यह आशा करना कि वे कौंसिलोंमें न जायंगे और जिस कानूनकी मशीनरीसे शासनका सब काम होता है उसे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सहायता न देंगे क्या यह कहना और आशा करना—बिलकुल व्यर्थ है? असहयोगके आन्दोलनका अर्थ केवल यही है कि अंग्रेजोंका

पाशविक बल जिन आवरणोंके नीचे छिपा हुआ है उन आवरणोंको हटाकर उस पाशविक बलको अकेला छोड़ दो और यह दिखला दो कि अकेला पाशविक बल एक क्षण भी हिन्दुस्तानको अपने अधीन नहीं रख सकता।

पर मैं खुले दिलसे यह स्वीकार करता हूं जिन तीन बातोंका मैंने ऊपर उल्लेख किया है वे जबतक न होंगी तबतक स्वराज्य कोई चीज नहीं है। इस बातकी कोई जरूरत नहीं है कि हम कालेजकी डिग्री प्राप्त करें; उन मामलोंके लिये जो पांच मिनटमें निपटाये जा सकते हैं, अपने मुवक्किलोंसे हजारों रुपया वसूल करें और कौंसिलमें बैठकर राष्ट्रका समय नष्ट करनेमें बड़ा आनन्द समझें और फिर भी राष्ट्रके आत्म-गौरवकी आशा करें।

अब मायाके अन्तिम भागपर, जो महत्वमें किसीसे कम नहीं है, विचार करना बाकी है। यह स्वदेशी है। यदि हम लोगोंने स्वदेशी न छोड़ा होता तो आज हमारी यह गिरी हुई हालत न होती। यदि हम लोग आर्थिक दासत्वसे छुटकारा पाना चाहते हैं तो हम लोगोंको अपना कपड़ा आप तैयार करना चाहिए और इस समय यह काम केवल चरखों और करघोंसे ही लेना चाहिये।

इन सब कामोंके लिये आत्म नियमन, स्वार्थ त्याग, विषय-वैराग्य, योजना शक्ति, विश्वास और साहस चाहिए। यदि हम यह सब उन श्रेणियोंके लोगोंके अन्दर, जिनका आज

समाजमें कुछ प्रभाव है, एक वर्षके भीतर दिखला सके और लोकमत तैयार कर सके तो एक वर्षके अन्दर हमें निश्चय ही स्वराज्य प्राप्त हो जाय। यदि मुझसे कोई कहे कि हम नेताओंतकमें तो ये गुण नहीं हैं, हिन्दुस्तानको कभी स्वराज्य मिल नहीं सकता, पर उस हालतमें, अंगरेज जो कुछ कर रहे हैं उसके लिये हम उन्हें दोष नहीं दे सकते। हमारा स्वातंत्र्य और उसका काल केवल हमारे ही ऊपर निर्भर करता है।

नौ महीनेमें स्वराज्य

(दिसम्बर २६, १९२०)

'टाइम्स' पत्रके प्रतिनिधिने महात्माजीसे पूछा था कि इन तीन महीनोंके अनुभवसे आप क्या परिणाम निकालते हैं, इस पर महात्माजीने निम्नलिखित उत्तर दिया—

इन तीन महीनेमें मुझे जो कुछ अनुभव हुआ है उससे यही कह सकता हूं कि असहयोग 'आन्दोलनकी जड़ जम गयी और यह आन्दोलन पूर्णतया आत्म शुद्धिका आन्दोलन है यद्यपि इधर उधर इससे हो हुल्ला हो गया, जैसे बम्बईमें मिसेज बेसेण्ट-की सभामें, दिल्लीमें, बङ्गालमें और 'गुजरातमें यह अहिंसाका भाव प्रति दिन अपना प्रभाव फैलाता जा रहा है यद्यपि लोग अभीतक इसे आवश्यक नीति ही समझकर ग्रहण कर रहे हैं

न कि आदर्श सिद्धान्त मानकर। मुझे इससे विचित्र और आश्चर्यजनक परिणाम निकलनेकी आशा है। जिस दिन सरकारको यह निश्चय हो जायगा कि हम लोग किसी प्रकार हिंसा नहीं करते उसी दिन वह आपसे आप अपना मत बदल देगी।

आपने कहा है कि भारत सरकार अपनी नीति बदल देगी, क्या आप बतला सकेंगे कि वह अपनी नीति किस ओर बदलेगी।

हम लोगोंकी इच्छाके अनुसार जिस तरफ हम लोग इच्छा करेंगे, उसी ओर वह अपनी नीतिका प्रसार करेगी। इस तरह सरकारको प्रजाकी प्रत्येक बात सुननी पड़ेगी।

क्या आप अपना अभिप्राय स्पष्ट करनेकी कृपा करेंगे?

इस तरह यातना तथा तपस्या सहनेकी योग्यता दिखलाकर जनता सरकारको लाचार कर देगी कि वह खिलाफतकी समस्या, पञ्जाबके अत्याचारोंका प्रतीकार करा सकेगी और अपने मनके मुताबिक स्वराज्यकी स्थापना करवा सकेगी।

आपके स्वराज्यका क्या रूप है और आपके कहनेके अनुसार जो सरकार अपना रूप बदल देगी उस सरकारको आपके स्वराज्यमें क्या हैसियत होगी?

मेरे स्वराज्य शब्दका अभिप्राय है भारतके लिये पार्लिमेंटरी शासन। वह पार्लिमेंटरी शासन बिलकुल आधुनिक ढंगका

होगा। चाहे यह ब्रिटेनके साथ रहकर हो या विना साथसे।

आपने कहा है कि "विना साथसे" इसका क्या अभिप्राय है ?

यह आन्दोलन आत्मशुद्धिका आन्दोलन है। इसका अभिप्राय सरकारकी बदनीयती और बेईमानीको दूर करना है। इससे उसकी प्रत्येक कार्रवाई निर्धारित हो जाती है। इसलिये सोमालीलेण्डकी भांति यहां भी कदाचित वे रहना पसन्द न करें क्योंकि इस व्यवस्थासे उनकी आमदनी अवश्य घट जायगी और फिर भारतकी शासनव्यवस्था उनके लाभका जरिय नहीं रह जायगा।

क्या यह कार्यमें पूरी तरह चरितार्थ हो सकता है ?

जो कुछ मैंने कहा है वह अन्तिम सम्भावना है। यह मैं समझता हू कि वहा तक की नौबत नहीं आवेगी। मुझे पूरी आशा है कि सार्वजनिक मत जहा व्यक्त हो जायगा वहा ब्रिटिश जनता उसे स्वीकार करनेके लिये अवश्य तैयार हो जायगी और उस समय उन्हें विदित होगा कि उनके प्रतिनिधि और मन्त्रीगण भारतके साथ किस तरहका अन्याय कर रहे हैं। उस अवस्थामें वे लोग जनताकी इच्छाके अनुकूल इन दो अन्यायोंका प्रतीकार करेंगे और भारतीयोंके प्रतिनिधियोंके अनुसार भारतको शासन व्यवस्था देंगे।

मान लीजिये कि भारतके शासनसे लाभ होते न देखकर अंग्रेज लोग यहासे चले जायंगे तो भारतकी क्या अवस्था होगी ?

जिस समय यह अवस्था आ उपस्थित होगी उस समय तक भारत

या तो चारित्रिक योग्यता प्राप्त कर लेगा अथवा 'जीवका बदला जीव' से लेनेकी योग्यता प्राप्त कर लेगा। उच्चतम संगठनकी भी योग्यता उसमें आजायगी। उस अवस्थामें वह सभी बातों का प्रतीकार कर सकेगा।

आपका यह अभिप्राय है कि यदि वह समय उपस्थित हो गया कि ब्रिटनको भारतसे हट जाना पड़ा तो भारतकी अवस्था इस तरहकी हो गई है कि वह शासनका भार अपने ऊपर लेकर राष्ट्रकी उत्तरोत्तर उन्नति कर सकेगा।

हां, मेरा यही अभिप्राय है। अतीत महीनोंके अनुभवोंसे मेरे हृदयमें आशाका उदय हो गया है कि शेष नौ महीनोंमें—जिसके भीतर हमने भारतके लिये स्वराज्य दिलानेका वादा किया था—हम दोनों अत्याचारोंका प्रतीकार करा सकेंगे और भारतके लिये स्वराज्य प्राप्त कर सकेंगे।

नौ महीनेके बाद ब्रिटिश सरकारकी क्या अवस्था रहेगी?

इसपर महात्माजीने हंसकर उत्तर दिया—उस समय शेर मेमनेके साथ हाथ मिलाता रहेगा।



साल भरका वादा

(दिसम्बर ११, १९२१)

एक तरफ तो मैंने यह धमकी दी है कि यदि इस सालके अखीरमें स्वराज्य न मिला तो मैं हिमालयको चल दूंगा। इसपर मुझसे यह अनुरोध किया जा रहा है कि स्वराज्यके न मिलनेपर भी आप ऐसा न करें। दूसरी तरफसे मुझे यह कहा जाता है कि स्वराज्य न मिलनेपर आप लोगोंका क्या मुंह दिखावेंगे? लोग विचारे कितने निराश हो जायगे? वादा करके अब आपको हाथ मलाने पड़ेंगे।

मेरा ख्याल है कि हमारे पाठकोंके दिलमें ऐसे विचार न उठते होंगे। पर मैं यह भी जानता हूं कि कुछ कुछ लोग ऐसे विचार करते हैं। मेरा वादा शर्तोंपर है। मैंने ऐसी ही शर्तें पेश की थीं जिनका पालन किया जा सकता है, और क दिया था कि "इन शर्तोंका पालन करो और स्वराज्य लो।"

परन्तु इसपर मित्र लोग यह कह सकते हैं व्यवहार कुशल मनुष्य जब शर्तें पेश करे तब उसे पालन करनेवाले लोगोंकी शक्तिका अन्दाज करके बात करना चाहिये। यह बात सच है। मैं व्यवहार-कुशल होनेका दावा भी रखता हूं। यदि मुझसे यह दावा न बन पड़े तो मुझे सार्वजनिक जीवनसे अलग हो जाना चाहिये।

अतएव यदि वष के अन्तमें लोगोंको यह पूछना पड़े कि 'स्वराज्य कहा है ?' तो कहना होगा कि मेरी व्यवहारकुशलता सिद्ध नहीं हुई और मुझे हिमालयकी राह ले लेनी चाहिए। पर यदि उन्हें निश्चित रूपसे यह दिखाई दे कि स्वराज्यका रास्ता वही है जो मैंने लोगोंको बताया है और उन्हें यह मालूम हो कि उस रास्तेको तय करते हुए वे बहुत दूर लगभग अन्ततक आ पहुंचे हैं, तो उन्हें मुझे ताना मारनेकी जरूरत न रहे और न मुझे हिमालय भाग जानेकी ही आवश्यकता रहे। यह स्वराज्य मिलनेके बराबर है। जिसे मोक्षका मार्ग मिल गया है वह यम नियम आदिका पालन करता जाता है। जो हमेशा यह देख रहा है कि मेरे बन्धन तड़ातड टूटते जा रहे हैं वह मोक्षको प्राप्त करनेवाले पुरुषके समान ही है। वह अपने मार्गसे इधर उधर नहीं भटकता। वह दिनपर दिन बलवान् होता जाता है। उसे मार्ग दर्शककी आवश्यकता नहीं रहती। जिसे सन्देह है उसका कहीं ठिकाना नहीं। उसका नाश निश्चित है। वह रास्ते चलते हुए भी नहीं चलता है, क्योंकि वह जानता ही नहीं कि मैं कहा हू।

इसी प्रकार यदि दिसम्बरमे आनेवाले समस्त प्रतिनिधि विना दलीलके यह कबूल कर लें कि स्वराज्य प्राप्तिका मार्ग यही है, हम स्वराज्यकी झाकी बना रहे हैं, जितना काम इस वर्षमे हुआ है उतना पिछले किसी वर्षमें नहीं हुआ है और हम तो इसी मार्गसे जाना चाहते हैं तो मैं कहूंगा कि यह

स्वराज्य मिल जानेके बराबर हो गया है। जो कुछ काम अधूरा रह गया है उसका कारण है हमारे परिश्रमकी कमी। जहा जरा ज्यादा मिहनत की बस काम पूरा हुआ।

जो लोग यह मान बैठे हैं अथवा जिन्होंने लोगोंको ऐसा समझा दिया है कि स्वराज्य तो गाधी जिस तरह बन पडेगा उस तरह करके दिसम्बरके पहले दिला देगा, तो वे दोनों अनजानमें स्वयं अपने तथा देशके दुश्मन हैं। वे स्वराज्यका अर्थ ही नहीं समझे। स्वराज्यका अर्थ है स्वावलम्बन। मेरे द्वारा स्वराज्य प्राप्त करनेका अर्थ तो है केवल परावलम्बन। मैं तो उसके लेनेका रास्ता बतानेवाला हूं। लेना तो लोगोंके ही हाथमें है। मैं वैद्य हूं, दवा बताता हूं। खानेकी विधि, उसका अनुपान, तादाद इत्यादि बताता हूं। पर अन्तमें पुरुषार्थ तो रोगीको ही करना पडेगा।

यदि एक वर्षके अन्तमें लोगोंको यह प्रत्यक्ष अनुभव न हुआ हो कि स्वराज्य शान्तिके द्वारा, हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, पारसी, ईसाई, यहूदीकी एकताके द्वारा, स्वदेशी और अस्पृश्यताके नाशके द्वारा ही मिल सकता है तो मेरी व्यवहार कुशलतामें पूरी कमी रही और मुझे हिमालय भाग जाना चाहिये।

हा, यह सच है कि मेरी आशा तो इससे अधिक थी। हम इस वर्षमें केवल इतना ही नहीं थी कि मार्ग देख लेंगे, बल्कि स्वराज्यकी प्रतिमा भी हमारे सामने खडी हो जायगी, हम शासन कर्त्ताओंके साथ सुलह भी कर लेंगे और असहयोगका

शमन होकर शुद्ध सहयोग शुरू हो जायगा। पर अब मुझे डर है कि इन शेष दिनोंमें हम शायद इस स्थितिका अनुभव न कर सकें, बल्कि इसके विपरीत, हमारे असहयोगका वेग और भी तीव्र हो जायगा और ऐसा मालूम होगा कि मानों अब योग होनेकी सम्भावना ही नहीं रही। परन्तु यही अनुभव सहयोगको नजदीक लानेवाला होगा। प्रभातके पहलेका अन्धकार घोरसे घोर होता है। प्रसूतिके पहलेकी वेदनायें असह्य होती हैं और इसलिए स्वयं प्रसवके ही विषयमें माके मनमें सन्देह उत्पन्न होता है। उसी प्रकार हमारा प्रसूति काल भी कठिनसे कठिन होगा।

बम्बईने उसमें विघ्न डाल दिया। हमने खुद खड़ा होकर जो जोर लगाना चाहा था, हमने जो दुःख खुद प्राप्त कर लेना चाहा, उसे बम्बईने बन्द करा दिया। परन्तु सद्भाग्यसे सरकारने ही हमारे लिए जोर करनेका, दुःख भोगनेका दरवाजा खोल दिया है, क्योंकि उसने दमनका वेग बढ़ा दिया है। यदि हम निर्भय होकर इस दरवाजेमें प्रवेश करेंगे तो स्वराज्यकी प्रतिमाको खड़ा होनेमें जरा भी देर नहीं लगेगी।

पर अभी मैं निश्चय पूर्वक यह क्यों नहीं कह रहा हूं कि इस वर्षमें स्वराज्यकी प्रतिमा खड़ी हो ही जायगी? इसलिये कि मुझे ठीक ठीक बात मालूम नहीं है। मैं त्रिकालदर्शी नहीं। मैं देवता नहीं। मैं श्रद्धावान् हू। मैं ईश्वरको सर्वशक्तिमान् मानता हू। हमारे हृदयमें वह कब, बड़ा उथला पुथल कर

डालेगा, यह कौन कह सकता है? १७ नवम्बरको जिस समय मैं बड़े आशावादका उच्चार कर रहा था उसी समय निराशा-जनक कार्य हो रहे थे, इसकी खबर क्या मुझे थी? जब कि मुझे भी इतने दिनोंमे प्रतिमा खड़ी हो जानेमें सन्देह है तब यदि ईश्वर प्रतिमा तैयार कर रहा हो तो मैं क्या जानू? जिस प्रकार मैं वैद्य हूं, उसी प्रकार रोगी भी हूं। जो स्वराज्य मुझे लेना है उसे मैं ले नहीं पाया। मुझे रास्ता मिल गया है, उसे मै छोड़नेका नहीं। पर मेरा स्वराज्य तो नजदीक है। इसी महीनेमें मैं उसे पा जाऊ तो मुझे आश्चर्य नहीं हो सकता। हा, पाठकोंको यह विश्वास दिलाता हूं कि मैंने अपने प्रयत्नमें किसी बातकी कोर कसर नहीं रखी है। मेरी तो यही धारणा है कि भारतीय स्वराज्यको प्राप्त करनेके प्रयत्नमें ही मेरा मोक्ष है। यदि मुझे ऐसा मालूम होगा कि मोक्ष प्राप्ति करनेके बजाय मैं तो बन्धनमें जकड़ा जा रहा हू, तो फिर मैं किसीके रोकेसे रुकनेवाला नहीं। अभीतक तो मुझे ऐसा नहीं मालूम होता कि मैं अधिक बधता जा रहा हू। हा, यह मैं निश्चय पूर्वक कहता हू कि जनवरीकी पहली तारीखको मेरे मनकी दशा कैसी होगी, यह मैं नहीं जानता। इससे पाठकोंको मालूम हो जायगा कि स्वराज्य मेरी साधना है, मेरे मोक्षका द्वार है। मेरा आन्दोलन केवल स्वार्थमूलक है और ऐसा ही रहेगा।

इस दृष्टिसे मैं यह नहीं चाहता हू कि इस वर्षमें स्वराज्य-

की प्रतिमा खड़ी हो जाय। मैं तो अपने विषयके तमाम भ्रमसे बचना चाहता हूं। मैं लोगोंको यह समझाना चाहता हूं कि मैं तो एक अल्पजीव हूं। अपनेको महाप्राणी समझने देनेमें मैं लोगोंको तथा अपनी हानि ही देखता हूं। भले ही मेरा अनुमान गलत माना जाय, भले ही मैं बेवकूफ ठहरू, भले ही मैं अव्यवहारिक आदमी माना जाऊं, अभीष्ट तो यही है कि लोग यह माननेकी अपेक्षा कि मेरे बलके द्वारा कुछ मिला है, यह मानें कि जो कुछ मिला है वह उन्हींके बलके द्वारा, उन्हींकी तपश्चर्याके द्वारा, उन्हींकी आत्म शुद्धिके द्वारा मिला है। अपने सम्बन्धमें तो मैं बस इतनी ही श्रद्धाका भूखा हूं—'जिस समय उसे जो सच्चा दिखाई दिया वही उसने निर्भय होकर लोगोंके सामने उपस्थित किया।' इससे अधिक प्रमाण पत्र मुझे दरकार नहीं और न इससे अधिकके लायक मैं हूं।



गलत मार्ग

(दिसम्बर ८, १९२०)

लार्ड रोनाल्डशे मेरी 'हिन्द स्वराज्य' नामी पुस्तक पढ़ रहे हैं। उन्होंने किसी सभामें कहा है कि यदि भारतके लिये उसी तरहके स्वराज्यको व्यवस्था की गई जिसकी चर्चा महात्माजीने अपनी इस पुस्तकमें की है तो बङ्गालको उनकी कोई आवश्यकता नहीं। मुझे खेद है कि काग्रेसके प्रस्तावके अनुसार जिस स्वराज्यकी व्यवस्था हो सकती है उसकी उस पुस्तकमें योजना नहीं है। काग्रेसकी व्यवस्थाके अनुसार भारतके लिये वह स्वराज्य चाहिये जो कि उसकी प्रजा चाहती है न कि जो ब्रिटिश सरकार भारतीयोंको देना चाहती है। जहांतक मेरा अनुमान है भारतीय स्वराज्य पार्लिमेंटका एक रूप होगा, जिसमें प्रजाके प्रतिनिधि रहेंगे और आय, व्यय पुलिस, सेना, नौ सेना, अदालत, तथा शिक्षापर उनका पूरा राय रहेगा।

यदि भारतीयोंने मेरा पूरी तरह साथ दिया तो इस सालके भीतर मैं जो स्वराज्य स्थापित कर देनेकी आशा करता हूं। उसमें खिलाफतके प्रति अन्याय तथा जलियावाला बागके अत्याचार समान घटनायें असम्भव हो जायगी

और प्रजाको पूर्ण स्वतन्त्रता रहेगी कि वह अपनी इच्छाके अनुसार भलाई या बुराइकी ओर चले न कि किसी उच्छृङ्खल और जिम्मेदारी शून्य शासककी प्रेरणासे चले। उस स्वराज्यके अन्दर यहांकी प्रजा उन वस्तुओंपर अपनी इच्छाके अनुसार कड़ा महसूल बैठायेगी जिसे वह अपने देशमें पैदा कर लेगी और आस पासके राष्ट्रोंकी स्वतन्त्रताका अपहरण कर उन्हें दास बनानेके लिये एक भी सैनिक भेजना स्वीकार न करेगी। इस तरहका स्वराज्य—जिसका मैं स्वप्न देख रहा हूं—उसी अवस्थामें स्थापित हो सकता है, जब राष्ट्रमें यह योजना आ जाय कि वह अपना भला बुरा आप निश्चय कर सके।

जो कुछ मैंने 'हिन्द स्वराज्य' में लिखा है; वही अब भी कहता हूं और सदा कहा करूंगा। स्वायत्तशासन ही सच्चा स्वराज्य है, वह मोक्षके बराबर है और मुझे ऐसा कोई कारण नहीं दिखाई देता कि मैं अपना मत बदल दूं कि वकील, डाक्टर आदि किसी किसी अवस्थामें उनकी प्राप्तिके साधक न होकर बाधक हो जाते हैं। मुझे यह भी भलीभांति विदित है कि इस तरहकी शैतानी सरकारकी कार्यवाहियां सदा बाधक हुआ करती हैं और स्वराज्यके लिये हरत रहके प्रयासको असम्भव बना देती हैं। एक साथ ही देवता तथा शैतान दोनोंकी उपासना नहीं हो सकती।

वर्तमान सरकारकी शैतानियतका प्रत्यक्ष उदाहरण यह है कि लार्ड रोनाल्डशे सदृश सज्जन व्यक्ति भी हमलोगोंको

धोखेमें डालना चाहते हैं। वे आवश्यक बातकी कभी चर्चा नहीं करेंगे। पञ्जाबके संबन्धमें वे चुप क्यों हैं? खिलाफतके प्रश्नपर टालमटोल क्यों कर रहे हैं? जिस रोगीको भीषण क्षयी रोग हो गया है कहीं उसे मलहमसे शान्ति मिल सकती है? लार्ड रोनाल्डशेको यह बात समझनी चाहिये कि शासन सुधारोंकी अपूर्णतासे भारतवासी क्षुब्ध नहीं हैं बल्कि इसका कारण पञ्जाब और खिलाफतके अत्याचार और अन्याय हैं जिनके प्रतीकारकी कोई व्यवस्था नहीं की जाती उलटे हमें उन्हें भूल जानेके लिये कहा जाता है। क्या उन्हें यह बात नहीं समझमें आती कि भारतीयोंको शात करनेके लिये हृदयके पूर्ण परिवर्तनकी आवश्यकता है।

पर असहयोगियोंके प्रति घृणा दिखलाना तो वर्तमान समयमें फैशन हो गया है। मुझे इस बातसे अतिशय खेद है कि स्वयं कर्नल वेजवुड इसकी जड़में फंस गये हैं। मैं इस बातको जोर देकर कह सकता हू कि यदि घृणाके भावको दूर करना है तो उसका ठीक ठीक उपचार कीजिये। जबतक भारतीयोंके प्रति घृणाके भाव जागृत रहेंगे और उनका परिवर्तन हुआ करेगा तबतक कोई भी वह असम्भव काम नहीं कर सकता अर्थात् भारतीयोंके हृदयसे घृणाके भाव दूर कर दे। एक तरफ़ तो भारतीयोंके नाज़ुकसे नाज़ुक भावोंपर कुठाराघात किया जा रहा है और दूसरी तरफ उनसे कहा जा रहा है कि घृणाके भाव छोड़ दो। भला यह भी कभी

सभव है। भारत इस समय कमजोर और लाचार हो रहा है। इसीलिये अपनी लाचारीको वह इसी तरह उस जालिमके प्रति घृणा दिखला कर ही प्रगट कर रहा है जो उसे नफरतकी निगाहसे देखता है। असहयोगका बीजारोपण लोगोंको बलिष्ट और आत्मनिर्भर बनानेके लिये किया गया है। घृणाके स्थानपर दयाके भावको उगानेके लिये इसका प्रचार किया गया है।

बलिष्ठ तथा आत्मनिर्भर भारत बखर्ष, जानसन और स्मिथसे घृणा नहीं करेगा क्योंकि उस समय उसमें इन्हें दण्ड देनेकी शक्ति हो जायगी। इसलिये वह इन्हें क्षमा भी कर सकता है। आज न तो उसमें दण्ड देनेकी क्षमता है और न दया दिखलानेकी क्षमता है। निदान वह सबके स्थानपर घृणाके ही भाव जागृत कर रहा है। यदि आज मुसलमान काफी ताकतवर होते तो वे अंग्रेजोंसे घृणा नहीं करते बल्कि उनके हाथोंसे इस्लामके सभी अधिकृत प्रदेश छीन लेते। अलीबन्धु खिलाफतके लिये अपना प्राणतक गंवानेके लिये तैयार हैं। यदि उन्हें आज आशा हो जाय कि अंग्रेज जाति खिलाफतके साथ न्याय करनेके लिये तैयार है, तो वे उससे फौरन सुलह कर ले सकते हैं।

मैं यह बात स्पष्ट कह देना चाहता हूं कि इस युद्धमें व्यक्तिगत घृणाको कोई स्थान नहीं है। यदि आज अंग्रेज अपनी नेकनियती, ईमानदारीका परिचय दें तो हिन्दू और

मुसलमान दोनों उनकी हृदयसे प्रशंसा करें और असहयोग फल ही आपसे आप बन्द हो जाय। इससे भारत शुद्ध और मजबूत होगा। जिस तरह दुर्बल और दीन भारत आज संसारके लिये कलङ्क और विपत्ति हो रहा है, उसी तरह बलिष्ठ भारत संसारके लिये शक्ति होगा। भारतीय सैनिक तुर्कोंके नाशके लिये जबर्दस्ती लगाये गये और आज उनका प्रयोग अरबोंके नाशके लिये किया जा रहा है। मुझे एक भी ऐसी चढ़ाई नहीं याद आती जिसमें अंग्रेज सरकारने भारतीय सेनाका प्रयोग अच्छे और ईमानदारीके कामके लिये किया हो। इतने पर भी भारतीय नरेश अपनी राजभक्तिपर फूले नहीं समाते हैं। क्या इससे भी अधिक पतन हो सकता है॥



हिन्द स्वराज्य

(जनवरी २६ १६२१)

यह नि सन्देह मेरा अहोभाग्य है कि मेरी इस पुस्तिकाकी ओर लोगोंका दिन दिन विशेष ध्यान जा रहा है। मूल पुस्तक गुजरातीमें है। इसके जीवनमें बडी बडी विचित्र घटनाएं हुई हैं। सबसे पहले दक्षिण अफ्रिकाके "इ डियन ओपीनियन" पत्रमें यह छपकर प्रकाशित हुई। १६०८ में जब मैं लन्दनसे दक्षिण अफ्रिकाको लौट रहा था तब उस यात्रामें यह पुस्तक भारतके "मारो काटो" वाले सिद्धान्तोंको माननेवाले सम्प्रदाय तथा दक्षिण अफ्रिकामें उसी सम्प्रदायके जो लोग थे उन्हें उत्तर देनेके लिये लिखी गयी थी। लन्दनमें जितने भी प्रसिद्ध भारतीय अराजक थे उनसे मेरी भेंट हो चुकी थी। उनकी वीरताका मैं कायल था। पर मैं यह समझता हू कि उनकी वीरताका मार्ग ठीक न था। मैं यह समझता था कि हिन्दुस्तानकी बुराइयोंकी दवा "मारो काटो" का सिद्धान्त नहीं है, और उसको सभ्यताके लिये यह आवश्यक है कि वह आत्म रक्षाके लिये इससे भिन्न और इससे भारी कोई शस्त्र धारण करे। दक्षिण अफ्रिकाका सत्याग्रह अभी शैशवावस्थामें था— शायद उसे जन्मे दो वर्ष भी नहीं हुए थे। पर इस अवस्थामें भी उसकी इतनी प्रगति हो

चुका थी कि उसके सम्बन्धमें कुछ विश्वासके साथ लिख सकता था। इस लेख मालाको लोगोंने इतना पसन्द किया कि यह पुस्तकाकार छप गयी। हिन्दुस्थानमें भी इसकी कुछ कदर हुई। बम्बईकी सरकारने इसका प्रचार रोक दिया। मैंने इसका अनुवाद छापकर सरकारकी कार्रवाईका जवाब दिया। मैंने यह सोचा कि मेरे अंग्रेज मित्र भी जान जायं कि इस पुस्तकमें क्या लिखा है। मेरी रायमें यह ऐसी पुस्तक है कि एक बच्चेके हाथमें भी दी जा सकती है। यह पुस्तक तिरस्कारके बदले प्रेमधर्मकी शिक्षा देती है। यह "मारो काटो"का सिद्धान्त हटाकर आत्म त्यागका सिद्धान्त स्थापित करती है। इसके कई संस्करण हो चुके हैं (हिन्दी अनुवाद भी हुआ है। अ०) और मैं चाहता हू कि जो लोग इसे पढना चाहें वे अवश्य पढ़ें। उसमें जो कुछ लिखा है सब ठीक है, कुछ घटाना बढाना नहीं है, केवल एक शब्द एक स्त्री मित्रकी खातिरके लिये वापिस लेना है। भारतमें इस पुस्तकका जो संस्करण छपा है उसकी प्रस्तावना-में मैंने इस परिवर्तनका कारण बतला दिया है।

यह पुस्तक 'आधुनिक सभ्यताका बडा कठोर खण्डन है। यह १९०८ में लिखी गयी। उस समय जो कुछ लिखा उस पर आज पहलेसे भी अधिक विश्वास है। मेरी यह धारणा है कि यदि हिन्दुस्थान 'आधुनिक सभ्यता" को परित्याग कर देगा तो उससे उसका लाभ ही होगा।

परन्तु पाठकोंको मैं इस बातसे भी सावधान कर देना चाहता

हूं कि इस समय जिस स्वराज्यके लिये मैं आन्दोलन कर रहा हूं वह वह स्वराज्य नहीं है जो इस पुस्तकमें दिग्दर्शित हुआ है। मैं जानता हूं, हिन्दुस्तान अभी उस स्वराज्यके लिये तैयार नहीं है। ऐसा कहना धृष्टता मालूम हो सकती है। पर मेरी यही धारणा है। मैं स्वयं व्यक्तिश उस पुस्तकमें चित्रित आत्म राज्य पानेका प्रयत्न कर रहा हूं। परन्तु आज मेरा जो सहयोगयुक्त उद्योग हो रहा है वह भारतीय जनताकी इच्छाके अनुरूप पार्लिमेंटयुक्त स्वराज्यके लिये है। मैं रेलवे या अस्पतालोंका नाश करनेका उद्योग नहीं कर रहा हूं, यद्यपि इनके स्वाभाविक नाशसे मुझे निःसंशय सन्तोष लाभ होगा। श्रेष्ठ और शुद्ध सभ्यता का लक्षण न रेलवे है न अस्पताल। इनका अच्छेसे अच्छा रूप यदि कुछ हो सकता है तो वह यह है कि ये अनिष्ट हैं पर इनकी भी आवश्यकता हुई है। इनमें से कोई भी राष्ट्रकी नीतिमत्ताका जरा भी सहायक नहीं हैं। मैं अदालतोंका भी सदाके लिये सर्वनाश करनेका प्रयत्न नहीं कर रहा हूं, यद्यपि मैं यह चाहता हूं कि "धर्मपुर सर" इनकी यह गति हो। मशीनरी और मिलोंके नाशका उद्योग तो मैं कुछ भी नहीं कर रहा हूं। लोग आज जिस सादगी और त्यागके लिये तैयार हैं उससे अधिक सादगी और त्याग इन सब कामोंके लिये आवश्यक है।

उस कार्यक्रममें से इस समय केवल एक ही अंश अर्थात् अहिंसावाला अंश लेकर उसका पूर्ण उपयोग किया जा रहा है।

परन्तु मुझे दुःखके साथ यह कहना पडता है कि यह भी उस भावके साथ नहीं हो रहा है जो भाव पुस्तकमें है। यदि उस भावके साथ काम हो तो हिन्दुस्थान एक दिनमें स्वराज्य ले ले। यदि हिन्दुस्थान प्रेमके सिद्धान्तको अपने धर्मका क्रियात्मक अंश बना ले और राजनीतिमें उसे प्रविष्ट करे तो स्वराज्य हिन्दुस्तान पर आकाशसे बरस पडेगा। पर मैं जानता हूं और उससे मुझे क्लेश होता है कि वह बात अभी बहुत दूर है।

मैंने ये सब बातें इस तरह लिखी हैं कि बहुतसे लोग मेरी इस पुस्तकका हवाला देकर वर्तमान आन्दोलनको बदनाम करने का प्रयत्न करते हैं। मैंने ऐसे लेख देखे हैं जिनमें यह बतलाया गया है कि मैं बडा भारी जाल बिछा रहा हूं, वर्तमान उपप्लवसे लाभ उठाकर कपट पूर्वक मैं अपने ख्याल हिन्दुस्तान पर लाद रहा हूं, और हिन्दुस्तानको बलि देकर मैं धार्मिक प्रयोग कर रहा हूं। इन सब बातोंका केवल एक ही जवाब दे सकता हूं और वह यह है कि सत्याग्रह इतना दुर्बल नहीं है। इसमें कोई बात गूढ या गुप्त नहीं है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि "हिन्द स्वराज्य" में वर्णित जीवनकी सम्पूर्ण पद्धतिका ही एक अंश इस समय अमलमें लाया जा रहा है। यदि समस्त पद्धति अमलमें लायी जाय तो उससे भी कोई विपत्ति आने वाली नहीं है। पर मेरे लेखोंसे कुछ वाक्य लेकर, जिनका देशके सामने उपस्थित प्रश्नसे कोई सम्बन्ध नहीं है, लोगोंका बुद्धि भेद करना अनुचित है।

स्वराज्यकी शर्तें

(फरवरी २३, १९२१)

आगामी अक्तूबर मासके पहले ही स्वराज्य प्राप्त कर लेना कुछ कठिन नहीं है यदि कुछ सीधी सादी शर्तें पूरी की जांय। गत सितम्बर मासमें मैंने एक वर्ष कहा था क्योंकि मैं जानता था कि उसकी शर्तें बहुत मामूली हैं और मैं यह अनुभव करता था कि लोग उनका पालन करनेके लिये तैयार हैं। विगत ५ मासके अनुभवसे मेरी यह धारणा और भी दृढ़ है। मुझे यह पक्का भरोसा है कि देश इस समय स्वराज्यके लिये जैसा तैयार है वैसा पहले कभी न था।

परन्तु इस बातकी आवश्यकता है कि हम उन शर्तोंको यथासम्भव ठीक ठीक जान लें। एक बड़ी भारी और अनिवार्य शर्त यह है कि हम लोग शान्ति बनाये रखें। हालमें जो दङ्गा-फसाद ऊधम उत्पात और लूट मार हुए है उससे काम बिगड़ता है। ये अनिष्टके लक्षण हैं। इनकी गतिको रोकनेकी सामर्थ्य हममें होनी चाहिये। सरकार द्वारा हो या जनता-द्वारा डर और दहशतके बीचमें प्रजासत्ताकी प्राणप्रतिष्ठा नहीं हो सकती। कुछ बातोंमें सरकारी अत्याचारोंकी अपेक्षा जनता का अत्याचार ही प्रजासत्ताके प्राणकी वृद्धिमें विघातक होता

है। कारण सरकारी अत्याचारोंसे प्रजासत्ताकी प्राणशक्ति बढ़ती है और जनताके अत्याचारोंसे उस प्राणशक्तिका नाश होता है। डायरशाहीने स्वतन्त्रताकी वह उत्कण्ठा उत्पन्न कर दी है जो और किसी बातसे नहीं हुई। पर भीतरी डायरशाही, जिसे बहुजन-समाजका अत्याचार कहना चाहिये, एक ऐसा अल्पजनतन्त्र शासन स्थापित कर देगा कि जो स्वतन्त्रतापूर्वक बात और काम करनेका प्राण ही हर लेगा। इसलिये क्या सरकारके विरुद्ध और क्या आपसमें शान्तियोगकी रक्षा करना ही शीघ्र सफलता लाभ करनेके लिये नितान्त आवश्यक है और चाहे कैसा ही मौका आवे और कितना ही गुस्सा हो शान्तिका पालन करना होगा और इसके लिये हम लोगोंको वैसा प्रबन्ध करना होगा।

दूसरी शर्त यह है कि काग्रेसको जो जीवन सघटना बनी है उसके अनुसार प्रत्येक ग्राममें काग्रेस कमेटी और उसका निर्वाचकसंघ निर्माण करके काग्रेसका पूरा सगठन कर लें। काग्रेसकी नीतिको कार्यान्वित करना बहुत धन और योग्यताका काम है। बड़े भारी स्वार्थत्यागकी उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी संगठन करने और सबको मिलाकर काम करनेकी योग्यता की है। अभीतक हम लोग इतना भी नहीं कर सके कि हिन्दुस्तानके साढ़े सात लाख गावोंमें जाकर घर घरमें काग्रेसका सन्देशा सुना देते। इस कामके लिये २५० जिलों-में २५० सच्चे कार्यकर्त्ताओंके होनेकी जरूरत है जिनकी जिलेमें

प्रतिष्ठा हो और जिन्हें काग्रेसके कार्यक्रमका भरोसा हो। अपने अपने स्थानमें काग्रेस कमेटी स्थापित करनेके लिये किसी ग्राम या क्षेत्रको केन्द्रस्थानसे सूचना मिलनेकी राह न देखनी होगी।

कुछ बातें ऐसी हैं जो सबके कहनेकी हैं। सबसे प्रधान स्वदेशी है। घर घरमें चरखा होना चाहिये और ऐसा करनेसे प्रत्येक ग्राम एक महीनेसे भी कम समयमे अपना सगठन कर सकता और अपना कपडा आप तैयार कर सकता है। इस शान्त क्रान्तिका क्या मतलब है। जरा सोचिये, सोचनेसे मेरे समान सबको यह विश्वास हो जायगा कि स्वदेशीका अर्थ स्वराज्य और स्वधर्म है।

प्रत्येक स्त्री और पुरुष तिलक स्वराज्य फण्डमें कुछ न कुछ—एक पैसा ही सही—दे सकता है। इससे इस आन्दोलन-का खर्च कैसे चले इस बातको चिन्ता नहीं रहती। प्रत्येक स्त्री पुरुष कमसे कम एक मासके लिये अपने सब भोग विलास आभूषण अलङ्कार, मादक द्रव्यादि छोड सकता है। इससे रुपया तो हमें मिलेगा ही पर बहुतसी विदेशी वस्तुओंका बहिष्कार भी हो जायगा। हमारी सभ्यता, हमारी संस्कृति हमारा स्वराज्य हमारे प्रपञ्च और भोगकी वृद्धिमें नहीं, बल्कि अपनी आवश्यकताओंको कम करनेमें त्याग है।

हिन्दू मुसलमानोंकी एकताके बिना उसी प्रकार अस्पृ-श्यताके सापको मार डाले बिना हम कुछ नहीं कर सकते। अस्पृश्यता भारात्मक विष है जो हिन्दू समाजकी जीवनी

शक्तिको नष्ट कर रहा है। वर्णाश्रम धर्म श्रेष्ठता और कनिष्ठताका धर्म नहीं है। ईश्वरको माननेवाला कोई मनुष्य किसी दूसरे मनुष्यको अपनेसे कनिष्ठ नहीं मान सकता। उसे हरेक मनुष्यको अपने सगे भाईके समान मानना चाहिये। यह प्रत्येक धर्मका मूल सिद्धान्त है।

यदि यह धर्म युद्ध है तो आत्मत्याग ही इसकी सबसे श्रेष्ठ कसौटी है। इस बातका विश्वास दिलानेके लिये किसी दलीलकी जरूरत नहीं है। देवत्वके विना खिलाफतकी रक्षा हो नहीं सकती, पञ्जावका जखम भर नहीं सकता। देवत्वका अर्थ है, हृदयका परिवर्तन राजनीतिकी भाषामें, दृष्टिकोणका बदलना। यह परिवर्तन एक क्षणमें हो सकता है। मेरा विश्वास है कि हिन्दुस्तान उस परिवर्तनके लिये तैयार है।

इसलिये, अब इन बातोंपर अपना ध्यान लगाइये—

१—शांतियोगका साधन।

२—प्रत्येक ग्राममें काग्रेस कमिटी स्थापित करना।

३—प्रत्येक घरमें चरखा रखवाना और अपने लिये जितना कपडा चाहिये उतना सब गावके जुलाहेसे बुनवाना।

४—जितना धन सञ्चय (तिलक स्मारक स्वराज्यके लिये) करते बने उतना करना।

५—हिन्दू-मुसलमानकी एकता बढ़ाना और

६—हिन्दू धर्मको अस्पृश्यताकी बलासे छुडाना तथा मादक पेय और द्रव्योंका त्यागकर अपनी शुद्धि करना।

इस सीधेसादे कार्यक्रमके लिये हमारे यहा सच्चे, सहृदय, उपयोगी, देशभक्त सेवक हैं? यदि हैं तो आगामी अक्तूबर माससे पहले ही हिन्दुस्थानमें स्वराज्यकी स्थापना हो जायगी।

स्वेच्छापूर्वक नियम-पालन

(अक्तूबर २१, १९२१)

एक मित्रने मुझसे कुछ सवाल पूछे। उत्तर सहित उनको नीचे देता हू—

सवाल—क्या स्वराज्यमें हमें कुछ कानूनोंकी जरूरत पडेगी?

जवाब—हा, पडेगी तो।

सवाल—तब तो लोगोंको वे कानून मानने भी पडेंगे?

जवाब—जरूर ही, लेकिन उनकी मरजीसे। अगर वे कानून कायदे लोगोंकी सलाहसे बनाये गये होंगे तो वे उन्हें खुशीसे मानने लगेंगे। क्या इसमें आपको कोई अचरज मालूम पडता है?

सवाल—जी हा, इसमें मुझे कुछ शक होता है।

मैंने पूछा—किस तरह।

जवाब—अपने अनुभवसे!

मैं चौंका, और मैंने फिर पूछा —

सवाल—मुझे समझाओ। मैं जरा उलझनमें पड़ गया हू।

जवाब—देखिये, नागपुरमे २०,००० मनुष्योंने असहयोगका प्रस्ताव पास किया था। जिन जिन लोगोंने उस प्रस्तावको मजूर किया, उनके लिए तो वह बन्धन-कारक था ही। लेकिन फिर भी क्या उन सब अर्थात् बीसों हजार मनुष्योंने उसका पालन किया है? यहां हाजिर रहनेवाले वकीलोंने वकालत छोडी है? वहा मौजूद रहनेवाले विद्यार्थियोंने स्कूल या कालेज छोड दिया है? सबने स्वदेशी व्रतका पालन किया है? सभीने चरखा खरीदा है? इन बातोंको भी जाने दीजिए। कार्यकारिणी समितिने जो जो प्रस्ताव पास किये हैं क्या उनका अमल सब जगह हुआ है? जैसा महासभाका हाल है वैसा ही छोटी छोटी सस्थाओंके लोगोंका भी है। हमारी जितनी सस्थाएं हैं उनमें अपने ही बनाये हुए कायदोंका पालन कितने लोग करते हैं। मुझे सार्वजनिक जीवनका तजरिबा है और मैंने देखा है कि अपने ही बनाये हुए कायदोंका पालन हम खुद बहुत थोडा करते हैं। भला जबतक यह कुटेव नहीं छूट जाती तबतक क्या हम स्वराज्यका उपभोग कर सकते हैं। क्या आप यह नहीं मानते कि हमारी इस छुलके समय बनाये हुए नियमोंके पालन करनेकी शक्तिमें ही स्वराज्य है? और आज अगर हममें वह शक्ति नहीं है, तो फिर स्वराज्यके मिल जानेपर भी वह हममें नहीं आ सकती। अर्थात् उस शक्तिके

विना स्वराज्य असम्भव है। फिर, अपने ही बनाये हुए कायदोंका पालन करना तो बडी ही आसान बात है, क्योंकि इसके लिये हमें किसी दूसरेसे जाकर कहनेकी जरूरत नहीं रहती। वह बात तो सिर्फ हम हाथ ऊंचा उठाने वालोंपर ही घट सकती है। और मैं भी सिर्फ हाथ ऊंचा उठानेवाले महासभावादी असहयोगियोंकी ही बात कह रहा हूं। और जब मैं उनकी स्थितिपर विचार करने लगता हूं तब व्याकुल हो उठता हूं और इसी साल स्वराज्य प्राप्त कर लेनेकी बातमें मुझे सन्देह होने लगता है।

इस जवाबके प्रत्युत्तरमें मैंने कहा —हां, आप जो कुछ कह रहे हैं उसमें सत्यांश जरूर है। हम सब अपने ही बनाये हुए नियमोंका पूरी तरह पालन नहीं करते। फिर भी आपको यह तो कुबूल करना ही पडेगा कि बारह महीने पहले हम जितने लापरवा थे उतने आज नहीं हैं। हम कह सकते हैं कि नागपुरके प्रस्तावपर लोगोंने अच्छी तरह अमल किया है। जिस बातमें लोग उसका अमल नहीं कर पाये उसके लिये वे अपनी कमजोरी कुबूल करते हैं और सबल बननेकी कोशिश करते हैं।

इस तरह जवाब देकर मैंने प्रश्नकर्ताका कुछ समाधान किया तो, लेकिन खुद मेरा समाधान न हो सका। उनके सवालोंमें मुझे गम्भीरता दिखाई दी। मैं विचारमें पड गया। उनसे तो मैंने यही कहा कि इस बारेमें मैं 'नवजीवन' में लिखूंगा, लेकिन उस मित्रके प्रश्नोंका असर यह टिप्पणी लिखते

समय मुझपर बहुत ज्यादा हुआ है। यद्यपि मैं समझता हूं कि मैंने लोगोंकी तरफसे जो वकालत की वह वाजिब थी, तो भी मुझे यह तो दिखाई दे सकता है कि जिन नियमों और कायदोंको खुद हमीं बनाते हैं उनको अमलमें लानेकी शक्ति तो हममें बहुत ज्यादा होनी चाहिए। 'नहीं रूख तहं रेड़ प्रधान' वाली कहावतके अनुसार हम संतोष नहीं मान सकते। हम तो स्वराज्यकी कसौटीपर कसे जा रहे हैं, उसमें हम चौकस नहीं उतर रहे हैं। हमारे सोनेमें जरूरतसे ज्यादा मिलावट है। सोनेके कसको तो परखैया ही परख सकता है। और हमें तो उस कसौटीपर स्वराज्यके लायक सिद्ध होना है। इस लिये जबतक हम उतने टंच न उतरेंगे तबतक हम स्वराज्य प्राप्त करनेकी शक्ति ही किस तरह प्राप्त कर सकते हैं ? प्रश्नकर्ताकी यह दलील भी वाजिब है कि हम महासभाके सेवकोंको तो विना दिक्कतके ही पूरे सौ टंच उतरना चाहिए। यह बात तो स्वत सिद्ध है कि हम सब कार्य कारिणी समिति या प्रान्तिक समितिके पास किये हुए प्रस्तावोंका अमल यन्त्र या मशीनकी तरह नियमित होकर नहीं करते।

इस लापरवाहीका एक कारण भी है। वह यह कि आज तक हमने विना विचारे हाथ ऊंचे किये हैं, डर या शर्म अथवा लालचसे हाथ ऊंचे उठाये है। लेकिन स्वतन्त्रता चाहनेवालोंको ऐसी बातें शोभा नहीं देतीं। ऐसा मनुष्य तो अपने नापसन्द प्रस्तावके खिलाफ, अकेला होनेपर भी हाथ

ऊंचा उठाता है और स्वतन्त्र तन्त्रमें दूसरे लोग उसे धन्यवाद देकर आदरकी दृष्टिसे देखते हैं। इसलिये हमें जो प्रस्ताव मंजूर न हो उसके खिलाफ चाहे हम अपनी आवाज भले ही उठावें, भले हो उसपर वादविवाद करें, और जब उसमें 'नवनीत' दिखाई दे तभी उसे मजूर करे। लेकिन एक बार स्वीकार कर लेनेपर तो हमें मन, वचन और कायासे उस पर दृढ रहना ही चाहिए। इस तरहके आदमी अगर हमें फी हजार एक भी मिल जायँ तो हम जरूर ही स्वराज्य स्थापित करनेमें समर्थ हो सकते हैं। इस हिसाबसे हमें सारे हिन्दुस्तानमें तीन लाख आदमियोंकी जरूरत है। और वे ऐसे हों कि जो महासभाके ठहरावोंका खुद पूरी तरह अमल करके दूसरोंसे भी उनके पालन करानेका प्रयत्न करें। हां, इस श्रेणीके आदमी हों तो बहुत गये हैं, लेकिन फिर भी मैं अच्छी तरह जानता हूं कि वे तीन लाख तो किसी हालतमें नहीं हैं।

हां, आजतक तो हम सरकारसे ही आशा रखते आये थे। हमारे प्रस्ताव उसके लिये होते थे, इसलिये उन प्रस्तावोंके पास कर देनेपर हमारे लिये करनेका काम बहुत कम रह जाता था। लेकिन गये बारह महीनोंमें हमने एक ही उद्योग किया है, और वह यह कि खुद हमी कुछ काम करें।

अब भी वक्त चला नहीं गया है। अगर हम खूब मिहनत करें और जो जो प्रस्ताव पास हुए हैं उनका अमल करते चले जायं तो मैं मानता हूं कि हम बहुत कुछ आगे बढ जायंगे।

हमारा बहुतसा काम तो विचार, कार्य दक्षता और उद्यमके अभावसे रह जाता है। आलसको छोडना, कार्यशक्तिको बढाना और विचारमय बनना तो हमारा एक आवश्यक कर्तव्य है। ये गुण तो प्रत्येक स्वराज्य-वादीमें होना ही चाहिए।

— ० —

पुरानी बात

(मार्च १६, १९२१)

जब कोई बडा आन्दोलन आरम्भ किया जाता है तो उसके सम्बन्धमें हर तरहकी बातें उठने लगती हैं। पता लगा है कि लाहोरके किसी समाचार पत्रमें छपा था कि मैंने नवजीवनमें लिखा है कि एक वर्षमें स्वराज्य नहीं मिल सकता क्योंकि जनताने मिस्टर शास्त्री तथा मि० पराञ्जपेका घोर अपमान किया। मैंने नवजीवनके पुराने अङ्कोंको पढा उसमें मुझे ऐसी कोई बात नजराई नहीं दी। "स्वराज्यके मार्गमें बाधायें" शीर्षक देकर मैंने बम्बईकी सभामें जनताके व्यवहारकी पूर्ण निन्दा की है और कहा है कि इस तरहके व्यवहारसे उन्नतिकी गति उलटी हो सकती है। उसी लेखमें मैंने यह भी कहा है कि यदि हम लोग इस तरहका हो हुला न मचायें तो स्वराज्य प्राप्त करने में हमें एक वर्ष भी न लगे। मुझे पूरी आशा है कि जनता मेरे ही विश्वासपर निर्भर न करके अपना भी कुछ मत स्थिर करेगी।

यदि मैं आज अपना पूरा विश्वास भारतमें चरितार्थ कर सकूं तो कल ही भारतको स्वराज्य मिल जाय क्योंकि ३३ करोड़ नर नारियोंके एक मतकी कहीं भी अवहेलना नहीं हो सकती।

उस दिन सर विलियम विंसेण्टने व्यवस्थापक सभामें यह बात कही थी कि भारतको औपनिवेशिक स्वराज्य भी नहीं मिल सकता क्योंकि उस दशामें सम्भावना है कि विदेशी शक्तियां इसपर आक्रमण कर बैठें और यदि इसकी सम्भावना नहीं हो तो अन्तः कलहसे ही कहीं यह अपना नाश न कर डाले। यदि सर विलियमकी ये बातें सच हैं तो ब्रिटिश शासनके लिये इससे हीनताकी दूसरी बात हो ही नहीं सकती। इससे पहलेही मैंने अनेक बार लिखा है कि मुझे बाहरी आक्रमण या अन्त कलहका भय नहीं करना चाहिये। ब्रिटिश शासनने हमें नपुंसक बना दिया है। हथियार छीन लेनेसे साम्रामिक शक्तिका ह्रास हो हो गया, भेदनीतिके कारण हिन्दू मुसलमानोंमें वैमनस्य भी सफल रहा। पर इस समय दोनों पर एक ही तरहको विपत्तिका पहाड़ गिरा है और इनसे हममें मेल हो गया है। यदि हम लोग विदेशी वस्त्र पहनना छोड़ देते हैं और विदेशियोंके साथ उन्हीं वस्तुओंका व्यापारिक सम्बन्ध रखना चाहते हैं जिसे हम पसन्द करते हैं तो इसके लिये हमें कि ी बाहरी आक्रमणका भय नहीं खाना चाहिये। दक्षिण अफ्रीकाके पास साधारण सेना थी; नौ सेनाका सर्वथा अभाव था। हां, यह माननीय है कि प्रत्येक बोअर लड़ सकता था। पर उस साम्रामिक गुणको बदौलत दक्षिण

अफ्रीकाकी सफेद जातियां एक राष्ट्रमें नहीं बंध गई हैं। एकताके भाव तथा देशके लिये प्राण गंवानेकी योग्यताने उन्हें एक किया है। एकताका भाव हम लोगोंमें भी बढ़ता जा रहा है और उसीके साथ धीरे धीरे देशपर प्राण निछावर करनेकी योग्यता भी प्राप्त हो जायगी। इसकी शिक्षा न तो स्कूलोंमें मिल सकती है और न सभा भवनोंमें। मेरी समझमें इस बातकी योग्यता भारतमें बड़ी शीघ्रताके साथ आ रही है। मुझे पूरी आशा है कि हममें शीघ्रही यह योग्यता आजायगी, जिसके द्वारा हम लोग इसी सालके भीतर स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे। हमें अराजकताकी सम्भावनासे नहीं डर जाना चाहिये। बम्बईमें पठानोंके उपद्रव होते हुए भी, नानकानामें महन्तोंको शैतानी लीलाके होते हुए भी हम लोग शान्त और निर्दोष हैं। और जब सिक्ख, गुरखे राजपूत, और पठान एक हो जायगे उस समय हममें लड़नेकी भी योग्यता आ जायगी और जो लोग विना किसी कारण हमारे ऊपर धावा मारेंगे या आक्रमण करेंगे हम उन्हे पूरी तरहसे दण्ड दे सकेंगे। हमारे शासकोंने अपने जहरीले प्रभावसे हममें यह भाव भरना चाहा है कि हममें योग्यता नहीं है और यही कारण है कि आज शासनके प्रति हममें घृणाके भाव भर गये हैं, जिसका प्रचार उन्होंने बलात् किया है। अपनी लाचारीके इसी विश्वासके कारण हमारी उन्नतिकी गति मन्द पड़ गई है। आश्चर्य तो इस बातका है कि हम आज भी शासके

दास बने हैं। यदि आज हम स्वतन्त्र हो जाय तो यह हमारे लिये परम स्वाभाविक होगा।

कठिनाइयोंकी भरमार

(दिसम्बर १५, १९२१)

बिहारसे एक सवाददाताने लिखा है —

"देशको उन्नतिके लिये काम करनेका मुझमें अतिशय उत्साह था। मैंने असहयोग आन्दोलनमें इसलिये योगदान किया कि मेरा पक्का विश्वास था कि प्रत्येक मुसलमानके लिये यह नितान्त आवश्यक है। मुझे कभी भी आशा नहीं थी कि भारतका उद्धार असहयोगकेद्वारा हो सकता है और न मुझे आज भी यह विश्वास है। मुझे सदा यही विश्वास था कि ब्रिटिश भारतके साथ इस तरह असहयोगकर हम अपने सबसे बड़े स्वार्थको धक्का पहुचा रहे हैं। इससे मेरा यह भाव नहीं था कि असहयोगमें उस बातकी क्षमता नहीं है बल्कि मैं देख रहा था कि हमारे देशवासी उसे पूरी तरह अपना नहीं सकेंगे। मुझे बार बार इस बातके उदाहरण मिले हैं कि आपके सहकारी अपने नामकी जितनी परवा करते हैं कामकी उतनी परवा नहीं करते। देशका चारित्रिक पतन इतना अधिक हो गया है कि मुझे लेशमात्रभी आशा नहीं है कि लोग पूर्ण शांति

तथा अहिंसाके साथ इस आन्दोलनको चला सकेंगे। आपसा समझदार नेताभी यदि इन बातोंकी ओरसे आंखें बन्द कर लेता है तो क्या यह आश्चर्य और खेदकी बात नहीं है?

मैंने इस प्रश्नपर अतिदीर्घ कालतक विचार किया है कि हम लोग स्वराज्यके लिये इतने आतुर क्यों हो रहे हैं। यदि स्वराज्य हमारी पहुंचके भीतर हो तो सुस्ती करना पाप है। पर असफलता-के इस तरहके उदाहरणोंके देखते हुए भी आप स्वराज्यकी बुनियाद चन्द महीनों पर क्यों रखते हैं। यदि इसके द्वारा आप करोड़ों भारतीयोंको केवल जगाना चाहते हैं तोभी यह ठीक नहीं होरहा है क्योंकि उसका परिणाम प्रत्यक्ष है। व्यर्थकी आशामें फस जाना जनताको और भी उत्तेजित करना है।

भारत तथा भारतीयोंके लाभकी दृष्टि से मैं आपसे विनीत प्रार्थना करूंगा कि आप रुक जाइये। पहले जनताको तैयार कर लीजिये तब आगे बढ़िये। सेनाको सुसज्जित और सुसगठित किये विनाही हम लोगोंने सग्राम छेड़ दिया है। इस बार हार मानकर आगे सुसज्जित होनेकी तयारी करना उचित है न कि खराब अवस्थामें रहकर रक्षा करते रहना। मुझे पूरा विश्वास है कि ईश्वरके घरमें पूरा न्याय है और इस्लाम धर्मकी यही शिक्षा है कि काम करनेके पहले योग्यता प्राप्त कर लो। इस्लाम धर्मके पांच नत्रोंमें मक्काकी यात्रा भी एक है। पर यह खिलवाड़ नहीं है। देशोद्धारका कार्य परम कर्तव्य है। पर क्या योग्यताके बाहर काम करना क्रूरता नहीं है। मेरी समझमें यह जल्दीबाजी

हमारे अनेक बुराइयोंका कारण है। मैं चाहता हूं कि यङ्ग इ-ण्डियामें आप इस विषयमें अपना मत प्रकाशित करें।"

इस पत्रका लेखक विहारका प्रसिद्ध नेता है। उनकी इमानदारीमें कोई अन्देशा नहीं है। इसलिये मैं उनके पत्रका उत्तर यङ्ग इण्डियामें ही देना उचित समझता हूं। यद्यपि असहयोगकी योजना पहले पहल खिलाफतके लियेही की गई पर उस समय न तो मैं और न मेरे साथियोंनेही यह सोचा था कि इसके लिये देशको अपना स्वार्थ गवाना पडेगा। इसके प्रतिकूल लोगोंका यही विश्वास था कि यदि इसके द्वारा हम लोग भारतके मुसलमानोंकी खिलाफत सम्बन्धी मांगोंको पूरा करा सके तो हम लोग इसके साथही पञ्जाबके अत्याचार तथा स्वराज्यके प्रश्नको भी हल कर सकेंगे। प्रारम्भ से ही अहिंसा इस असहयोग का प्रथम अंग माना गया है और यदि अहिंसा असफल हुआ तो असहयोगका भी नाश हो जायगा। असहयोगकी प्रगतिने अहिंसात्मक भावका पर्याप्त उदाहरण दिया है। बम्बईकी घटनायें देशकी अवस्थाका पूर्ण द्योतक नहीं हो सकतीं। एक वर्ष पहले क्या यह कभी भी सम्भव था कि विविध प्रान्तोंके चुने नेता इस तरह गिरफ्तार कर लिये जाते और जनता शान्ति भङ्ग न करती। यह सोचना कि मशीन गनोंकी बदौलत ऐसा हुआ है और भी मूर्खता पूर्ण है। इस बातको मैं अस्वीकार नहीं करता कि मशीन गनोंका प्रभाव नहीं पड़ा है। पर जो लोग भारतकी असली दशासे विज्ञ हैं वे भली भांति देख सकते हैं

कि इस समय भारतमें हजारों आदमी ऐसे हैं जिनपर मशीन गनोंका कोई प्रभाव नहीं पड सकता। मैं इस बातकोभी नहीं स्वीकार कर सकता कि देशका पतन हो रहा है। इसके प्रतिकूल इस आन्दोलनके द्वारा हजारों आदमियोंकी अवस्थामे जो परिवर्तन हुआ है उसका प्रमाण प्रत्येक गावमें मिल सकता है। अभी हालमेंही एक प्रसिद्ध मुसलमानने मुझसे कहा है कि भविष्य सन्तति आलसी और विलासी न होकर धार्मिक, सादी और मिहनती हो रही है।

हमलोग स्वराज्यके लिये वास्तवमें उतावले हो रहे हैं। पर इसमें आश्चर्यकी क्या बात है। जब कि मोपलोंको एक वैगनमें ठूसकर उन्हें जानसे मार दिया गया तो क्या वे जल्दीबाजीमें थे और क्या विदेशी शासनका यह गला घोंटकर मारना उससे भी बुरा नहीं है? आश्चर्य तो इस बातसे है कि इतने दिनोंतक परतन्त्रताको वायु द्वारा घुटते रहने पर भी हमने स्वतन्त्रताकी वायुकी आवश्यकता नही समझी। पर सच्ची अवस्थाका ज्ञान मिल जानेपर क्या यह उचित नहीं है कि हम स्वतन्त्रताकी हवाके लिये शोर गुल मचावें? मैने जो समयको अवधि लगाई है उसके लिये किसी तरहका दोषारोपण मै स्वीकार नहीं कर सकता। इतना मानते हुए कि यदि जनताने शर्तें पूरी की तो बारह महीनेके भीतर स्वराज्य मिल सकता है। यदि मैं इसकी घोषणा न करूं तो मै भूल करता हू। अबभी मैं उसी दृढ़ताके साथ कह रहा हू कि हमलोगोंने अहिंसाका पूर्ण पालन किया तो

निश्चित समयके भीतरही हमें स्वराज्य मिल जायगा यद्यपि उसके रूपके लिये हमें कुछ दिन और ठहरना पड़े। भारतीयोंको उत्तेजित करनेके लिये समयकी घोषणा नहीं की गई है बल्कि इसका उद्देश्य यह था कि भारतीय कांग्रेसमैन तथा महिलायें इस कर्तव्यको अच्छी तरह समझलें और अपना ध्यान उसी ओर आकृष्ट करें। अवधिके बिना न तो हमलोग एक करोड़ रुपयेका चन्दा ही कर सके होते, न तो इतनी संख्यामें चरखोंका प्रचार ही किये होते, न इतना सुन्दर और इस परिणाममें खादी ही थार किया होता और गरीबोंमें इतने रुपये ही बांटा होता। प्रत्येक प्रान्त से अगणित व्यक्ति जेलके लिये तैयार हो रहे हैं और जा रहे हैं। इसे बुरी अवस्था नहीं कह सकते। जिस समय भीषण दशा आरम्भ होगी उस समयभी मुझे पूरी आशा है लोग इसी तरहकी दृढता दिखलावेंगे।



स्वतन्त्रताकी पुकार

मौलाना हसरत मोहानीने महासभामें तथा सभापतिकी हैसियतसे मुसलिम लीगमें बड़ी हिम्मतके साथ आजादीके लिये लड़ाई ठानी, लेकिन दोनों बार उन्होंने बड़े मजेमें मुंहकी खाई। मौलाना साहब क्या चाहते थे। इसके विषयमें किसीका ख्याल गलत नहीं हो सकता। बराबरकी और जिम्मेदारकी हैसियतसे भी तथा खिलाफतका निपटारा अच्छी तरह हो जानेपर भी वे अंग्रेज लोगोंके साथ किसी किस्मका ताल्लुक रखना नहीं चाहते। यह कहना ठीक नहीं होगा कि कामिल आजादीके बिना खिलाफतके मसलेका निपटारा कभी हो ही नहीं सकता। हम यहां सिद्धान्तकी चर्चा कर रहे हैं। यदि कामिल आजादीके बिना खिलाफतका सवाल हल नहीं हो सकता। यथार्थ यदि अंग्रेज लोग मुसलमानी दुनियाकी उच्च आकाक्षाओंके प्रति विरोध भाव ही रखते रहें तो हमारे लिये पूर्ण स्वतन्त्रताका आग्रह किये बिना दूसरा उपाय ही नहीं है। यदि मुसलमानी दुनियाके साथ बरतानियाका दोस्ताना ताल्लुक करानेमें सफलता भी नहीं दे सकता और खुद उसे भी बरतनियाको नैतिक और भौतिक सहायता भी नहीं दे सकता और खुद उसे भी बरत-

नियाकी नैतिक और भौतिक सहायताके बिना अपना काम चलाना होगा।

परन्तु फर्ज कीजिये कि ग्रेट ब्रिटेनने अपने रुखको बदल दिया जैसा कि मैं जानता हूं वह हिन्दुस्तानको बलवान पाकर बदलेगी तब भी पूरी आजादीके लिये जोर देते रहना धार्मिक दृष्टिसे नाजायज होगा, क्योंकि वह प्रतिहिंसा और भय होगो। ऐसा करना खुदाको न मानना होगा, क्योंकि उस अवस्थामें उनसे किनाराकशी करनेका आधार इस ख्याल पर होगा कि अंग्रेज लोग मनुष्यके भेद भावको पहचानने और उसे अपनानेकी क्षमता नहीं रखते। ऐसी स्थितिको न तो श्रद्धावान हिन्दू ही और न श्रद्धावान मुसल्मान ही कुबूल कर सकता है। भारतवर्षकी कीर्ति इस बातमें नहीं है कि वह अंग्रेज भाइयोंको अपने खूनका प्यासा दुश्मन माने, जिसे कि मौका मिलते ही सबसे पहले हिन्दुस्तानसे निकाल बाहर कर दे, बल्कि इस बातमें है कि उन्हें उस साम्राज्य पदसे हटा कर, जिसकी भित्ति पृथ्वीके कमजोर अनुन्नत राष्ट्रों तथा जातियोंकी आर्थिक लूटपर और इसलिये आखिरकार पशुबल पर है; एक ऐसे साधारण तन्त्रमें बदल दे जिसमें वे और हम मित्रकी और हिस्सेदारकी हैसियतसे रहें।

जरा हम इस बातपर विचार करें कि ऐसे स्वराज्यका, जिसमें अंग्रेजोंके साथ सम्बन्ध रहे, अर्थ क्या है? इसका निस्सन्देह यही अर्थ है कि भारत यदि चाहे तो स्वतन्त्रताकी

स्वराज्य कहां है

(ता० २२, जनवरी १९२२)

भगवान् जाने क्या हुआ, जबसे लालाजी, दास, नेहरू, मौलाना अबुल कलाम आजाद गिरफ्तार हुए, तबसे लोगोंने मुझसे यह पूछना ही बन्द कर दिया कि स्वराज्य कहा है ? मेरे मनमें जो चिन्ता रहा करती थी वह दूनी हो गयी और मैं तो यही समझता हूं कि अब मुझसे कोई पूछनेवाला रहा ही नहीं। लोगोंने तो मुझे तारतक भेज दिये कि अब 'स्वराज्य प्राप्तिके लिये बधाई है। " महाशय पाल रिशारने यहां आकर २१ दिसम्बरको व्याख्यान दिया कि नवीन युग तो आरम्भ हो गया है। पियर्सन साहबने शान्तिनिकेतन पत्र भेजा कि 'मैं तो पांच वर्ष बाद आकर क्या देखता हूं कि भारत तो स्वतन्त्र हो गया है।'

स्वराज्य तो मनोदशा है। जब इस मनोदशाकी प्रतिष्ठा हमारे हृदयमें होगी तभी उसकी प्रतिमा स्थापित होगी। पर जबसे हमारी मनोदशा बदल गई, बस, तभीसे स्वराज्य तो मिलही चुका है।

मैं समझौतेके एक भी अवसरको खोनेवाला आदमी नहीं हूं, पर हिन्दुस्तानकी शक्तिको मैं पहचान चुका हूं। इसलिये

समझौता करते हुए डरता हू । पूरे पूरे संस्कार होनेके पहिले ही यदि समझौता हो जाय तो फिर हमारी कैसी गित हो ? नव मास गर्भमें रहनेके पहले ही पैदा होकर थोडे ही दिनोंमें मर जानेवाले बालककी तरह हालत हो सकती है। पुर्तगालमें थोड़े ही समयमें विप्लव हुआ तथा राज्यक्रांति हो गई। इससे अब वहा विप्लव ही विप्लव हुआ करते हैं। किसी भी राज्यप्रणाली-की जड वहा जमने ही नहीं पाती। तुर्किस्तानमें जब १६०६ में अचानक राज्यक्रान्ति हुई तब सब लोगोंने उसे बधाइया दीं पर वह तो चार दिनोंकी चादनी होकर रह गई। वह परिवर्तन स्वप्नवत् हो गया। उसके बाद तो तुर्किस्तानको बहुत दुख उठाना पडा है और कौन कह सकता है, उस बहादुर राष्ट्रको अभी और कितना सङ्कट उठाना पडेगा ?

इन घटनाओंको देखते हुए मैं कई बार असमजसमें पड जाता हू और समझ नहीं पडता कि कौनसी बात ठीक है। इस समय तो अवश्य ही मेरा कलेजा काप रहा है। यदि समझौता हो जाय तो फिर हम कहा जायगे ?

अभी लोगोंकी समझमें यह बात साफ साफ नहीं आ रही है कि स्वराज्य प्राप्ति तो ऐसे यत्नके द्वारा हो सकती है जिसे एक अपढ़—कुपढ देहातका बढई भी बना सकता है और जिसे एक अबोध कुमार कुमारिका आसानीके साथ चला सकते हैं। ऐसा होते हुए भी मुझे दिन पर दिन यह विश्वास होता

जाता है कि उसी यन्त्रके बदौलत स्वराज्य प्राप्त होगा, उसके बिना हरगिज नहीं।

अभी हमें इस बातका यकीन कहा हुआ है कि सच्ची सार्वजनिक शिक्षा अक्षर ज्ञानमें नहीं, बल्कि शीलमें और शारीरिक परिश्रममें है। हिन्दुस्तानके मा बापके दिलसे अभी अक्षर ज्ञानका मोह दूर नहीं हुआ है। वे अभी अक्षरज्ञानके स्थानको नहीं पहचान पाये हैं। वे अभी इस बातको स्वीकार नहीं करते कि बालकोंको पहिले नीतिकी शिक्षा देनी चाहिये, फिर उनके शरीरको मजबूत बनाना चाहिये और आजीविकाके साधनके तौर पर कुछ उद्योग धन्धा या कला सिखाना चाहिये और इसके बाद उनको मनः शक्तिका विकास करना चाहिये और अलङ्कारके तौर पर उन्हें अक्षर ज्ञानसे आभूषित करना चाहिये। मुझे मालूम हुआ है कि अभी बहुतसे मा बाप सरकारी स्कूलोंसे अपने लडकोंको उठा लेनेके लिए तैयार नहीं हैं। अभी भारतके समस्त मा बाप अपने लडकोंको उन राष्ट्रीय पाठशालाओंमें भेजनेके लिए, जहां विद्यार्थियोंकी मनोदशाका सुधार होता है, अथवा उनमें मिलने वाली स्वतन्त्रताकी तालीमकी महिमा जाननेके लिए तैयार नहीं है।

वकीलोंका तो पूछना ही क्या ? अदालतोंका मोह उनसे अभी कहा छूटा है ? घरमें ही अपने लड़ाई-झगड़ोंका निपटारा हम कहा करने लगे हैं ? अभी हमने यह कहा जाना है कि न्याय महगा न होना चाहिए। अभी तो बड़े धर्मस्तम्भ रूप माने जाने

वाले साम्प्रदायिक नेता धार्मिक झगड़ोंका फैसला प्रिवी कौंसिल· में करानेकी आशा रखते हैं। वकीलोंके दिलसे बड़ी बड़ी फीस ऐंठनेका मोह अभी दूर नहीं हुआ है। इससे न्याय अभी सोने और अशर्फियोंसे तौला जाता । ऐसी अवस्थामें यदि आज सुलह हो जाय तो अदालतोंमें प्राण सञ्चार करना बाकी ही रह जाय और सुलह हो जानेके बाद तो कौन किसकी बात पूछने लगा? अदालतोंका हाल जो आज है वही आगे भी रह जायगा। तो फिर यह राम राज्य कहा रहा? राम-राज्यमें न्यायकी बिक्री नहीं हो सकती।

क्या हिन्दुओं और मुसल्मानोंमें अभी पूरी एकता हो गई है? एक दूसरेके दिलका शक दूर हो गया है? एक दूसरेके देश विषयक आदर्श भी एक हो गये हैं? दोनोंको मित्रता करनेकी आवश्यकता मालूम होती है; पर दोनोंके दिल अभी एक नहीं हुए। हा, होते जरूर जा रहे हैं। समझौता हो जाने पर यह क्रिया बन्द हो सकती है। अतएव जहातक दोनोंमें एकता उपस्थित नहीं हो गई है तहातक स्वराज्यकी बातमें कुछ दम नहीं। एक वचन है कि जबतक आत्मतत्वको नहीं चीन्हा तबतक सब साधनायें व्यर्थ हैं।" यह स्वराज्य पर सर्वांशमें चरितार्थ होता है। आत्माकी जगह स्वराज्य शब्द रख दीजिये,बस अर्थ ठीक ठीक व्यक्त हो जायगा। अभी हमें स्वराज्यका तत्व जानना बाकी है। हिन्दू मुसलमानकी मित्रताका अर्थ यदि पारसी, ईसाई और यहूदीकी दुश्मनी हो तो वह सारे संसारके लिए नाश कारिणी

हो जाय। इसलिए जहातक हम हिन्दू मुसलमानकी मित्रताका अर्थ अच्छी तरह नहीं समझ पाये हैं तहातक समझौतेकी इच्छा करना ही भूल कही जा सकती है।

और इस साधनाकी औषधि है शान्ति। उसे अभी हमने कहां प्राप्त किया है? अभी हम यह कहा मजूर करते हैं कि असहयोग शान्तिमय है और वह हमारे बलका सूचक है? हम तो शान्तिको दुर्बलका शस्त्र समझकर इस शस्त्रकी महिमाको पहचानते ही नहीं और उसे लज्जित कर रहे हैं। यह तो अशर्फी-को धेला समझकर चलानेके बराबर मूर्खता है। शान्ति बलिष्ठ-का शस्त्र है और उसीके हाथमें इसकी शोभा होती है। शान्तिका अर्थ है क्षमा और क्षमा वीरका भूषण ह। जिस मनुष्यके पास खानेके लिए कुछ न हो वह यदि भोजन न करे तो उसे कहीं उपवासका पुण्य मिल सकता है? जिसे मारनेकी शक्ति नहीं है वह यदि किसीको न मारता हो तो कोई पुण्य नहीं करता। मजबूरीसे जो काम करना पडता है उससे पुण्य मिल ही नहीं सकता। बारडोली और आणदके जो योद्धा संग्रामकी तैयारी कर रहे हैं वे जब एक भी पारसी, एक भी अंगरेज और एक भी सहयोगी भाईको न सतावें, उनके प्रति वैर-भाव न रखें, तब वे 'शान्तिके युद्धकी सेनाके योग्य हुए' कहे जा सकते हैं। जो [illegible] काम करते हैं वे [illegible] पर [illegible] भी द्रोही हो रहे हैं, [illegible]

को तृषातुरकी तरह एकटक हो कर देख रहा है। जबतक हिन्दुस्तान शान्तिका उपयोग बलवान्के शस्त्रको तरह करना न सीखेगा तबतक सुलहको अस्पृश्य समझ कर उससे सौ कोस दूर रहना चाहिए।

और हिन्दू पाठकोंसे मैं क्या कहूं? हिन्दू लोग जबतक भङ्गी-चमारोंको अपने सगे भाईकी तरह न मानेंगे तबतक, मैं यह कहनेकी धृष्टता करता हूं, कि वे हिन्दू ही नहीं हैं। और यह बात मैं अपनेको एक कट्टर हिन्दू समझ कर कहता हूं। जिस दिन हिन्दू भङ्गी चमारोंसे प्रेमके साथ गले मिलेंगे उस दिन आकाशसे सुमन वृष्टि होगी और उसी दिन सच्ची गो रक्षा होगी। मनुष्यका तिरस्कार और दया ये बातें एक साथ रहती ही नहीं। भङ्गी चमारोंके दूषणोंको हम प्रेमके बल पर जीत सकते हैं। अध्यापक ध्रुवके शब्द मेरे कानोंमें हमेशा गूंजते रहते हैं। हमारे हृदयमे जो भङ्गी-चमार भरे हुए हैं वे हमारे शत्रु हैं और वे अस्पृश्य हैं। जिन देहधारियोंको अस्पृश्य माननेका पाप हम कमा रहे हैं वे तो हमारे प्रिय जन हैं। उनके स्पर्शसे, उनकी सेवासे तो हमे पुण्य प्राप्त होगा। जब कोई वैष्णव किसी भङ्गी चमारके सांपके काटे जहरको चूसकर विना स्नान किये अपनी कोठीमें जायगा तब वह कोठी पवित्र मानी जायगी। यह तो मानों कृष्णके घर सुदामा या विदुर पहुंच गये। जबतक छुआछूत रूपी अश्वत्थको हम जड़मूल से न उखाड डालेंगे या अध्यापक ध्रुवकी तरह अस्पृश्यताका

हो जाय। इसलिए जहांतक हम हिन्दू मुसलमानकी मित्रताका अर्थ अच्छी तरह नहीं समझ पाये हैं तहांतक समझौतेकी इच्छा करना ही भूल कही जा सकती है।

और इस साधनाकी औषधि है शान्ति। उसे अभी हमने कहां प्राप्त किया है? अभी हम यह कहा मजूर करते हैं कि असहयोग शान्तिमय है और वह हमारे बलका सूचक है? हम तो शान्तिको दुर्बलका शस्त्र समझकर इस शस्त्रकी महिमाको पहचानते ही नहीं और उसे लज्जित कर रहे हैं। यह तो अशर्फीको धेला समझकर चलानेके बराबर मूर्खता है। शान्ति बलिष्ठका शस्त्र है और उसीके हाथमें उसकी शोभा होती है। शान्तिका अर्थ है क्षमा और क्षमा वीरका भूषण है। जिस मनुष्यके पास खानेके लिए कुछ न हो वह यदि भोजन न करे तो उसे कहीं उपवासका पुण्य मिल सकता है? जिसे मारनेकी शक्ति नहीं है वह यदि किसीको न मारता हो तो कोई पुण्य नहीं करता। मजबूरीसे जो काम करना पडता है उससे पुण्य मिल ही नहीं सकता। बारडोली और आणंदके जो योद्धा संग्रामकी तैयारी कर रहे हैं वे जब एक भी पारसी, एक भी अंगरेज और एक भी सहयोगी भाईको न सतावें, उनके प्रति वैर-भाव न रखें, तब वे 'शान्तिके युद्धकी सेनाके योग्य हुए' कहे जा सकते हैं। जो लोग शान्तिके नाम पर अशान्तिके काम करते हैं वे देशद्रोही तो हुई हैं पर सारे संसारके भी द्रोही हो रहे हैं, क्योंकि संसार आज हमारे शान्ति शस्त्रके उपयोग-

को तृषातुरकी तरह एकटक हो कर देख रहा है। जबतक हिन्दुस्तान शान्तिका उपयोग बलवान्के शस्त्रको तरह करना न सीखेगा तबतक सुलहको अस्पृश्य समझ कर उससे सौ कोस दूर रहना चाहिए।

और हिन्दू पाठकोंसे मैं क्या कहूं? हिन्दू लोग जबतक भङ्गी चमारोंको अपने सगे भाईकी तरह न मानेंगे तबतक, मैं यह कहनेकी धृष्टता करता हूं, कि वे हिन्दू ही नहीं है। और यह बात मैं अपनेको एक कट्टर हिन्दू समझ कर कहता हू। जिस दिन हिन्दू भङ्गी चमारोंसे प्रेमके साथ गले मिलेंगे उस दिन आकाशसे सुमन वृष्टि होगी और उसी दिन सच्ची गो रक्षा होगी। मनुष्यका तिरस्कार और दया ये बातें एक साथ रहती ही नहीं। भङ्गी चमारोंके दूषणोंको हम प्रेमके बल पर जीत सकते हैं। अध्यापक ध्रुवके शब्द मेरे कानोंमें हमेशा गूंजते रहते हैं। हमारे हृदयमे जो भङ्गी-चमार भरे हुए हैं वे हमारे शत्रु हैं और वे अस्पृश्य हैं। जिन देह धारियोंको अस्पृश्य माननेका पाप हम कमा रहे हैं वे तो हमारे प्रिय जन हैं। उनके स्पर्शसे, उनकी सेवासे तो हमें पुण्य प्राप्त होगा। जब कोई वैष्णव किसी भङ्गी-चमारके सापके काटे जहरको चूसकर बिना स्नान किये अपनी कोठीमें जायगा तब वह कोठी पवित्र मानी जायगी। यह तो मानों कृष्णके घर सुदामा या विदुर पहुंच गये। जबतक छुआछूत रूपी अश्वत्थको हम जड़मूल से न उखाड़ डालेंगे या अध्यापक ध्रुवकी तरह अस्पृश्यताका

सच्चा अर्थ न करेंगे तबतक सुलहका ख्याल तक न करना चाहिये।

ऐसे महान् कार्य्य, ऐसी आत्मशुद्धि तो हम कष्ट सहनके ही द्वारा कर सकेंगे। जो अपने मोक्षके लिए मरना जानता है वही मोक्ष प्राप्त करता है। बिना इच्छाके मरनेवालोंको अवगति प्राप्त होती है। इच्छा-पूर्वक मरनेवाला आज मोक्षके योग्य हो गया है। इसी प्रकार हम जब पूर्वोक्त साधनों पर दृढ़ रहते हुए मरने तकका भय छोड देंगे तभी स्वतन्त्रता-स्वराज्य प्राप्त करेंगे। देशबन्धु दास, लालाजी, मोतीलालजी, मौलाना अबुल कलाम इत्यादि हमें मरनेका मन्त्र सिखा रहे हैं। ऐसा मालूम होता है कि हम उसे सीख भी गये हैं। इसीसे कोई यह नहीं पूछता कि स्वराज्य कहा है? सब यही कहते हैं कि जहा हममें स्वेच्छा-पूर्वक मरनेका बल आया कि बस स्वराज्य हुई है। और सब तो मृगजलकी तरह है।



नवम खण्ड

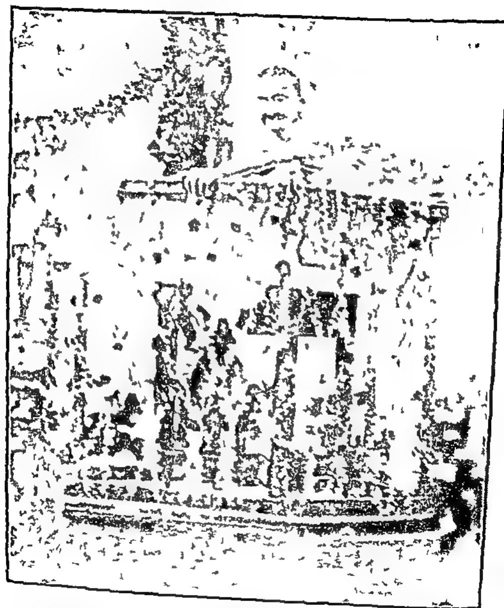
कांग्रेस

राष्ट्रीय सप्ताह

(जनवरी ७, १६२०)

कांग्रेसकी बैठक बड़ी लम्बी चौड़ी थी। बैठक २६ को आरम्भ हुई और नये वर्षके प्रथम दिन तक होती रही। बीचमें एक दिन बैठक स्थगित रही क्योंकि पानी बर्षे जानेके कारण पण्डाल बुरी तरह भीग गया था और उसे सुखाना आवश्यक था। पर जिन आवश्यक विषयोंपर विचार करना था उनका अनुमान करके यही कहना पड़ता था कि कांग्रेसकी बैठक अधिक कालतक नहीं हुई, विषय निर्धारिणी समितिके विचारमें सब से अधिक समय लगा। यह ठीक ही था, क्योंकि यदि कांग्रेसके प्रस्तावोंका कोई मूल्य हो सकता है तो पूर्णरूपसे विचार करके ही उन्हें पास करना चाहिये।

कांग्रेसके साथ ही साथ अखिल भारतवर्षीय मुस्लिम लीग, खिलाफत कांफरेन्स, आदि अनेक कांफरेन्से हुई। समस्त राष्ट्रीय कामको एक ही सप्ताहमें कर डालनेकी योजना कहां तक बुद्धिमतापूर्ण है, मेरी समझमें नहीं आता। जो कांफरेन्सें किसी विशेषताके कारण लोगोंको आकर्षित नहीं कर सकतीं उन्हें करना व्यर्थ है। सोशल कांफरेन्स दूसरे अवसर पर भी हो सकती है। मेरी समझमें यह नहीं आता कि राष्ट्रीय महा-



महात्मा गांधी
अहमदाबाद कांग्रेसमें असहयोगका मुख्य प्रस्ताव उपस्थित कर रहे हैं।

राष्ट्रीय सप्ताह

(जनवरी ७, १९२०)

कांग्रेसकी बैठक बड़ी लम्बी चौड़ी थी। बैठक २६ को आरम्भ हुई और नये वर्षके प्रथम दिन तक होती रही। बीचमें एक दिन बैठक स्थगित रही क्योंकि पानी बर्ष जानेके कारण पण्डाल बुरी तरह भीग गया था और उसे सुखाना आवश्यक था। पर जिन आवश्यक विषयोंपर विचार करना था उनका अनुमान करके यही कहना पड़ता था कि कांग्रेसकी बैठक अधिक कालतक नहीं हुई, विषय निर्धारिणी समितिके विचारमें सब से अधिक समय लगा। यह ठीक ही था, क्योंकि यदि कांग्रेसके प्रस्तावोंका कोई मूल्य हो सकता है तो पूर्णरूपसे विचार करके ही उन्हें पास करना चाहिये।

कांग्रेसके साथ ही साथ अखिल भारतवर्षीय मुस्लिम लीग, खिलाफत कांफरेन्स, आदि अनेक कांफरेन्सें हुई। समस्त राष्ट्रीय कामको एक ही सप्ताहमें कर डालनेकी योजना कहां तक बुद्धिमतापूर्ण है, मेरी समझमें नहीं आता। जो कांफरेन्सें किसी विशेषताके कारण लोगोंको आकर्षित नहीं कर सकतीं उन्हें करना व्यर्थ है। सोशल कांफरेन्स दूसरे अवसर पर भी हो सकती है। मेरी समझमें यह नहीं आता कि राष्ट्रीय महा-

सभा (काग्रेस) ही समाजकी प्रधान प्रधान बुराइयोंपर क्यों नहीं ध्यान देती। पर इस विषयमें कुछ कहना सङ्कटापन्न हो सकता है। इस विषयमें इतना ही कह देना काफी है कि इन अवसरोंपर इस तरहके समारोहोंसे प्रधान कार्यसे ही लोग उस तरफ खिच जाते हैं और प्रधान कार्यमें बाधा पडती है। सालमें तीन या चार दिन राजनीति जैसे महत्वपूर्ण विषयपर बहस करनेके लिये काफी नहीं है।

ऊपर जिस व्यवस्थाकी हमने चर्चा की है वह अखिल भारतवर्षीय मुस्लिम लीगके लिये लागू नहीं है। राष्ट्रीय महासभा और लीगकी बैठकोंका साथ ही साथ होना इस बातका सबूत होगा कि दोनों दल एकता तथा मैत्रीकी अधिकाधिक सदाकांक्षा रखते हैं। दोनों जातियोंकी घनिष्ठता प्राप्त करनेका अच्छा अवसर मिलता है और दोनोंमें मत परिवर्तन होता है। जब तक मैत्री और एकताकी आवश्यकता प्रतीत होती है, जब तक परस्पर अविश्वास है और झगड़ेका भय बना है, तब तक इन दोनों संस्थाओंका होना अनिवार्य है। हम लोग हृदयसे उस दिनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं जब कि हिन्दुओंकी भांति मुसलमान भी काग्रेसकी कार्यवाहीसे सन्तुष्ट होंगे। जब तक ऐसा नहीं होता तब तक यही आवश्यक है कि परस्पर प्रेम और मैत्री बढानेके लिये दोनों संस्थाओंकी बैठक साथ ही साथ एक ही स्थान पर हो।

हिन्दुओंकी दृष्टिसे मुस्लीम लीगका सबसे प्रधान प्रस्ताव

यह था कि बकरीद्के अवसर पर गोवध नहीं किया जाय। इस कांफरेन्सके सञ्चालकों तथा हकीम अजमल खां साहबको इसके लिये जितनी प्रशंसा की जाय थोडी है क्योंकि उन्होंने इस प्रस्तावको सर्वसम्मतिसे स्वीकृत करवा लिया। दोनों जातियोंका परस्पर प्रेम जितना इस प्रश्नपर अवलम्बित है उतना और किसी प्रश्नपर नहीं। गोवध रोकनेका प्रस्ताव जितना महत्वपूर्ण है उसके सामने हिन्दुओंका खिलाफतमें भाग लेना कुछ भी नहीं है। इस तरह गोवध छोडकर मुसलमान लोग अवश्य ही त्याग कर रहे हैं। किसी न किसी कारणसे—इस स्थान पर उस पर विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है—बकरीद्के अवसर पर गोवध करना मुसलमान अपना परम धर्म समझते थे और आज भी चन्द मौलवी ऐसे हैं जो कहते हैं कि इस तरहके प्रस्तावसे हम लोग (मुसलमान) पीछे कदम हटा रहे हैं। इसलिये यह आवश्यक था कि कांग्रेस उपयुक्त शब्दों में अपनी कृतज्ञता प्रगट करती। जिस समय इस प्रस्तावका सम्भाव्य विषय निर्धारिणी समितिमें पहुंचा, सदस्य लोग इतने उत्सुक हो गये थे कि उन्होंने उस प्रस्तावको खड़े होकर सुना।

जिन प्रस्तावों पर हमने कुछ लिखा है उनके अतिरिक्त अनेक ऐसे प्रस्ताव थे जिनपर विचार करना आवश्यक और उचित है। उदाहरणार्थ लार्ड चेम्सफोर्डके वापिस बुलाये जानेका प्रस्ताव भी महत्वपूर्ण था। जो लोग सब बातोंकी जानकारी रखते हैं वे भली भांति समझ सकते हैं कि इस तरहका प्रस्ताव अनि-

धार्य था। लार्ड चेम्सफोर्डके विरुद्ध लोगोंमें इतनी उत्तेजना फैल रही थी कि लोग इस बातके लिये तैयार नहीं थे कि इस प्रस्तावको तबतकके लिये रोक दिया जाय जबतक पंजाबकी रिपोर्ट न प्रकाशित हो जाय। जो लोग इस प्रस्तावका समर्थन कर रहे थे उनका कहना था कि लार्ड चेम्सफोर्डने स्वयं इस रिपोर्टकी प्रतीक्षा नहीं की और शासनमें अपनी अयोग्यता दिखलाई। उन्होंने भारत मन्त्रीके नाम खरीता भेजा जिसे, यदि उन १६ व्यक्तियोंके हस्ताक्षरसे भेजी रिपोर्ट द्वारा अयुक्त न प्रमाणित किया गया हो तो, इससे राष्ट्रकी सारी आकांक्षायें पददलित कर दी गयी होतीं, उसने इस प्रधान डेपुटेशनका अनादर किया, उसने लार्ड पेण्टलैण्डके शासन-व्यवस्थाका समर्थन किया, उसने सर माइकल ओडायरकी पीठ ठोकी, और अन्तमें समस्त राष्ट्रके विरोधका ख्याल न कर उसने रौलट ऐक्ट पास किया।

उस प्रस्तावके समर्थकोंका यही मत था। माननीय मिस्टर शर्माने इसका विरोध अवश्य किया पर उनके विरोधमें सार नहीं था। हमारी समझमें यदि यह प्रस्ताव कुछ दिनके लिये स्थगित कर दिया गया होता तो अच्छा था। हां, यह बात ठीक है कि बड़े लाटने जितने अनाचार किये हैं उनके बदलेमें एक भी अच्छा काम नहीं किया है जिससे राष्ट्रको सन्तोष हो। इस अवस्थामें अयोग्य शासकको वापिस बुलानेके लिये यदि राष्ट्र प्रार्थना करे तो इसके लिये उसे उद्धत या

उच्छृंखल नहीं कह सकते। पर हमें खेदके साथ लिखना पडता है कि राष्ट्रके प्रतिनिधि अवश्य ही उद्दण्ड थे। इस प्रस्ताव पर जो भाषण किये गये वे उद्दण्ड और हानिकर थे। वक्ता लोग यदि सयमसे बोले होते तो इससे उस प्रस्तावकी मर्यादा और भी बढ जाती। भारतमें जो राजाका प्रतिनिधि स्वरुप है उसके लिये इस तरहके शब्दोंका प्रयोग करना, जैसे "तीसरे दर्जेका आदमी, तुच्छ और नीच," किसी भी अवस्थामें उचित नहीं प्रतीत होता। साथ ही उन्हें अत्याचारी और पापी कहना न उन्हें ही शोभा देता है और न मुझे ही।

बेसमझपूर्ण और असभ्य बातोंके कहनेसे हमारी राष्ट्रीय मर्यादा नहीं बढ सकती। समय बडा ही नाजुक है। जिनको उत्तम भाषण करनेकी योग्यता है और जो राष्ट्रका कल्याण चाहते हैं उन्हें उचित है कि वे उद्दण्ड या उच्छृखल भाषण नहीं करें।

बडे लाटके कलङ्कका वर्णन करनेमें वक्ताओंने मर्यादा छोड दी। हम लोग इस बातको स्वीकार करते हैं कि लार्ड चेम्स-फोर्डकी जिम्मेदारी सबसे अधिक थी, क्योंकि वे सिरमौर थे। उपनिवेशोंके गवर्नरमें—जिनका अधिकार नियन्त्रित है—और भारतके बडे लाटमें—जिन्हें पूरी स्वतन्त्रता है—क्या भेद है, वे इस बातको नहीं समझ सके। जिन भूलोंको वे भलीभाति समझते थे उनके उपचारका भी उन्होने प्रयत्न नहीं किया। राष्ट्रकी जागृति पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। कितनी ही

अवस्थायें ऐसी होती हैं जहा बिना किसी अपराधके लोग असफल हो जाते हैं। यद्यपि हम जानते हैं कि लार्ड चेम्सफोर्ड भले मानुष अंग्रेज हैं, शिक्षित हैं, फिर भी हम उन्हें वापिस बुलाये जानेके लिये कह सकते हैं। पर हम यहा पर लार्ड चेम्सफोर्डकी अच्छाई साबित करनेके लिये नहीं बैठे हैं। हमारा तो केवलमात्र यही कहना है कि वक्ताओंने लार्ड चेम्सफोर्डके सम्बन्धमें जिस भाषाका प्रयोग किया वह सङ्गत या युक्तियुक्त नहीं था। हमें इस बातका अत्यन्त खेद है कि राष्ट्रीय रङ्गमञ्च पर जिम्मेदार प्रतिनिधियोंने राज्यके सबसे बड़े प्रतिनिधिके लिये इस तरह अनुचित भाषाका प्रयोग किया।

सर माइकल ओडायर तथा जेनरल डायरके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव पास किये गये वे उचित ही थे। सर माइकल ओडायरको भारतमें किसी जिम्मेदारीके पदपर भेजना भारतका सरासर अपमान करना था। इस तरह उन्हें पुनः भारत भेजकर जनताको उत्तेजित करना कभी भी उचित नहीं था। मिस्टर माण्टेगूने मिलिटरी मिशनके पदपर सर माइकल ओडायरको नियुक्तकर अपनी अदूरदर्शिताका परिचय दिया है।

जेनरल डायरके सम्बन्धमें जितना ही कम कहा जाय उतना ही उचित है। वह वीर सैनिक भले ही हो। पर मिस्टर वर्डस्वर्थके शब्दोंमें तो उसने अपनी सैनिक योग्यता नहीं साबित की है। यदि और कुछ नहीं तो मनुष्यत्व तो यह बात अवश्य चाहता है कि अपने अनाचारको चरितार्थ करनेके लिये उसे पुन अव-

सर नहीं मिलना चाहिये। सीमान्त प्रदेशकी – जहां सैनिकोंको पूर्ण स्वतन्त्रता है—क्या गति होती होगी सोचकर भय होता है।

कांग्रेस

(जनवरी ७, १९२०)

इस वर्षकी कांग्रेस अमृतसरमें हुई थी। इसलिये यह कांग्रेस हममेंसे बहुतोंके लिये तीर्थ यात्रा थी। जलियांवाला बागमें जो हजारों और लाखों प्रतिनिधि गये उनका उद्देश्य दर्शनही था। कहा जाता है कि खूनसे सनी वहांकी मिट्टीपर कितनोंने शीश नवाया, कितने मिट्टियां खोदकर लेगये और परम पवित्र समझकर उसे सुरक्षित रखा है। कितनोंने उसे विभूति मानकर अपने माथोंपर चढ़ाया। प्राय सभी लोग अपना परम कर्तव्य समझकर बागके दर्शनके लिये गये। यह निर्विवाद है कि इस वर्ष अनेक लोग कांग्रेसमें केवल इस लिये गये थे कि वे उन निर्दोषोंकी हत्याके प्रति सम्मान दिखलाना चाहते थे। स्वागत कारिणी समितिके अध्यक्ष स्वामी श्रद्धानन्दजी तथा कांग्रेसके सभापति पण्डित मोतीलालजी नेहरूके भाषण बड़ेही शान्त थे और सच्चे भावसे भरे थे। प्रत्येक भाषणमें वक्ताओंकी विशेषता स्पष्ट थी। स्वामीजीके भाषणमें धार्मिक भाव स्पष्ट थे। नीचके प्रति दया उनके भाषणमें प्रत्यक्ष था। उन्होंने कहा था, "यदि हमारे

हृदयमें अण्डरूज, वेडरवर्न, ह्यूम, हार्डिञ्ज तथा अन्य अँग्रेजोंके प्रति प्रेमका भाव भरे हैं तो हम यह कैसे कह सकते हैं कि हम अगरेजोंसे घृणा करते हैं। हमें अंगरेजोंको प्रेमसे जीतना चाहिये।" पण्डित मोतीलालजीकी भाषा उदार और संयमित होनेपर भी तीखी है। जिस समय उन्होंने पञ्जावकी वेदनाओंके भिन्न भिन्न अवस्थाओंका वर्णन किया, उस समय प्रत्येक दर्शकको आखोंसे आसू निकलने लगा। उन्होंने पञ्जाबकी दुर्घटनाकी समीक्षा परीक्षा कानूनकी दृष्टिसे की। उनकी आत्मा कठोर हो गई है। वे गुनहगारोंके लिये कडीसे कडी सजा चाहते हैं।

सभापतिका भाषण अग्रेजीमें हुआ था इससे उसमें त्रुटि रह गई। १५,००० प्रतिनिधियोंमें से सातवां हिस्साहो अग्रेजी समझ सकता था, बाकी अग्रेजीसे अनभिज्ञ थे। इससे यह स्पष्ट हो गया है कि काग्रेसकी कार्यवाही विशेषकर हिन्दीमें ही हो। यदि हम लोग जनसमूहको अपने साथ करना चाहते हैं और उनकी सहायता प्राप्त करना चाहते हैं तो हम लोगोंके लिये यही एक मार्ग हैं। सयुक्तप्रान्त, पञ्जाब, मध्यप्रान्त, बिहार तथा दिल्लीमें हिन्दी बोली जाती है और मद्रास प्रान्तको छोडकर अन्य सभी प्रान्तोंके लोग हिन्दी सहजमें समझ सकते हैं। हिन्दी भाषा अन्य प्रान्तीय भाषाओंसे बहुत कुछ मिलती जुलती है। यदि कुछ कठिनाई है तो मद्रासमें है। पर चन्द सौ प्रतिनिधियोंके लिये हजारों अन्य प्रतिनिधियोंपर इस तरह अन्याय करना किसी भी अवस्थामें उचित नहीं है। इसलिये मेरी समझमें

सबसे उत्तम बात यही होगी कि कांग्रेसकी कार्रवाई तो हिन्दी में हो और द्राविडके प्रतिनिधि अपनी इच्छाके अनुसार अंग्रेजी या तामिल भाषाका प्रयोग करें। विषय निर्धारिणी समिति कुछ वर्षतक अपना काम अंग्रेजीमें करती रहे पर यदि कांग्रेस द्वारा हम लोग जनताको राजनैतिक शिक्षा देना चाहते हैं तो यह केवल हिन्दीकी सहायतासे ही साध्य है। इसलिये मुझे पूरी आशा है कि मद्रास प्रान्तके वे लोग जो देशका काम करना चाहते हैं और अपने प्रान्तके बाहर भी लोगोंकी सहायता करना चाहते हैं तथा कांग्रेसकी कार्यवाहीमें भाग लेना चाहते हैं, उन्हें शीघ्रातिशीघ्र हिन्दी सीख लेना चाहिये। मद्रास प्रान्तमें उन्हें हिन्दी सीखनेके सुभीते हैं। यदि वे लोग आजसे ही आरम्भ कर दें और एक घण्टा प्रति दिन काम करें तो सालके अन्ततक वे इतनी हिन्दी सीख लेंगे कि अपना काम हिन्दीमें कर लेंगे और हिन्दी समझ लेंगे। लोगोंको यह बात भलीभांति समझ लेना चाहिये कि प्रति वर्ष कांग्रेसके प्रतिनिधि अधिकाधिक हिन्दीके प्रयोगके लिये चिल्ला रहे हैं, इसे अधिक दिनतक नहीं टाला जा सकता।

एक और बेवकूफी बढ रही है। उसको भी हटाना आवश्यक है। जिस समय सभापति अपना भाषण पढ रहे थे, बहुत कम लोग ऐसे थे जो उन्हें अच्छी तरह सुन सकते थे। कितना भी अच्छा पढ़नेवाला क्यों न हो श्रोता एक घण्टेसे अधिक उसे नहीं सुन सकते। सभापतिका भाषण लम्बा था। फुलिस्केप

कागजके ३८ छपे पृष्ठोंमें समाप्त था। पण्डित मोतीलालजीने पढ़ते समय अनेक पन्नोंको छोड़ दिया, नहीं तो पूरे भाषणमें तीन घण्टेसे कम न लगे होते। इसलिये स्वागत कारिणी समितिके अध्यक्ष तथा सभापतिका भाषण हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी तथा जिस प्रान्तमें कांग्रेस हो वहांकी प्रान्तीय भाषामें छपना चाहिये। तथा प्रतिनिधियोंको केवलमात्र लागत मूल्य पर मिलनी चाहिये। पण्डालके भीतर न बांटकर दरवाजेपर इसे बांटना चाहिये, क्योंकि इससे बडी असुविधा होती है। स्वागत कारिणी समितिके अध्यक्ष तथा सभापति दोनोंको अपने अपने भाषणोंका साराश सुना देना चाहिये और इसके लिये आधा घण्टासे अधिक समय नहीं लेना चाहिये।

तीसरी बेवकूफी सुविस्तृत पण्डाल बनाकर रुपया फेंकनेमें है। भारतकी जल वायु इस तरह की है कि खुले मैदानमें जलसोंका करना अधिक सुविधाकर होता है। इस सम्बन्धमें अधिक कहनेको आवश्यकता नहीं है क्योंकि अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीने कांग्रेस विधान पर पुन विचार करनेके लिये एक कमेटी नियुक्त की है।

प्रस्तावोंसे स्पष्ट है कि लोगोंमें घोर मतभेद है और ज्यों २ समय बीतता जायगा मतभेद बढ़ता जायगा और इससे दलबन्दीकी भी सम्भावना है। आजतक तो कांग्रेस केवल एक दलकी प्रतिनिधि रही है। पर यदि इससे अलग होकर रहनेवालोंकी सख्या अपरिमित रूपसे प्रति वर्ष बढ़ाना नहीं है तो उसे

अब उसी अवस्थामें नहीं रहना होगा। ऐसे उपाय करने होंगे जिसमें प्रत्येक दलका समावेश हो सके और राष्ट्रीय महासभा अपनी राष्ट्रीयताकी सच्ची मूर्ति बनी रहे।

अब प्रस्तावोंपर विचार करना चाहिये। पहला प्रस्ताव ज्यादतियोंकी निन्दा करनेके लिये था। यह निर्विवाद है कि यदि हम लोगोंने जनताकी ज्यादतियोंकी निन्दा न की होती तो कितने प्रस्तावोंका महत्व घट गया होता। यदि हम लोग अपनी ज्यादतियोंकी निन्दा करनेके लिये तैयार नहीं हैं तो भला हम सरकारी कर्मचारियोंकी निन्दा कैसे कर सकते हैं और डायर तथा ओडायरको दण्ड कैसे दिला सकते हैं? गत अप्रैल मास में जनताने जो ज्यादतियां की थीं उनके लिये यह प्रस्ताव सच्चा प्रायश्चित्त था। यदि हम लोग स्थिर विकास चाहते हैं तो हमें जनताकी हर तरहकी ज्यादतियोंकी निन्दा करनी चाहिये। मैं इस बातको स्वीकार करता हूं कि पश्चिमी देशोंमें कभी कभी जानबूझकर ज्यादतियां की जाती हैं पर यहां भारतमें हमें जन समाजको इसके विरुद्ध शिक्षित करके इसे देखना चाहिये। इस बातको सभी स्वीकार करेंगे कि ६ठी अप्रैलको भारतने एक नई शक्तिका लाभ किया—वह शक्ति प्रत्येक अवस्थामें अक्षय और दुर्धर्ष है। यदि सत्य हमारे पक्षमें है, तो मुझे पका विश्वास है कि यदि जनताने अपनी भूलसे सत्याग्रहका मार्ग इस तरह अवरुद्ध न किया होता तो केवल रौलट ऐक्ट ही नहीं उठा दिया गया होता बल्कि इस तरहके अपमान जनक दृश्यके देखनेका मौकाही

नहीं आया होता जिसे उस मतवाले सेना नायकने उपस्थित किया। जिस समय हमारा शासन प्रबन्ध हमारे हाथमे आजायगा उस समय यदि हम आत्मसंयमसे काम न लेंगे तो हमारा काम एक तरहसे असम्भव हो जायगा। भारतमे जहा लोग स्वभावतः शान्त प्रकृतिके हैं उत्तेजित भीड़का शासन नहीं चलाया जा सकता। इसलिये इसे रोकनेके लिये जन समूहका मत पशुबलके प्रयोगसे कहीं लाभदायक होगा। इसलिये इस प्रस्तावपर मैं सबसे अधिक जोर देता हूं, क्योंकि इससे हम अपने आचरणको सफाई देते हैं और देशको शिक्षा देते हैं। कांग्रेसके प्रस्ताव, विशेषकर वे जिनके द्वारा जनताको कुछ करनेके लिये कहा गया है, जनसमूहके मतको स्थिर करनेके लिये बहुत ही लाभकारी हैं। मुझे पूरी आशा है कि इस प्रस्तावके आन्तरिक अभिप्रायको समझ कर कार्यकर्त्ता लोगोंको समझावेंगे कि हिंसासे दूर रहना नितान्त आवश्यक है।

शासन सुधार सम्बन्धी प्रस्तावका दूसरा स्थान था। यद्यपि मेरा दृढ़ मत है कि भारत पूर्ण स्वाधीनताके योग्य हो गया है तथापि मैं यह बातभी जोर देकर कह सकता हूं कि जबतक हम लोग उसके लिये यत्न नहीं करेंगे वह हमें प्राप्त नहीं हो सकती। इसके दोही उपाय हैं। या तो हम शासनमें बाधा डालनेका उपाय स्थिर करके चले या सरकारके साथ सहयोग करे, यदि निषेधात्मक प्रणाली बलवती है तो हमारा उद्धार हो सकता है। हमें

झुठाई, अन्याय तथा बुराईके मार्गमें सदा बाधा उपस्थित करना चाहिये। चूंकि शासनसुधारोंमें कोई बुराई नहीं देखता, उसे बुरा नहीं समझता और न उसे अनुचित ही समझता हूं, मैं उसे उन्नतिशील और जिम्मेदार शासनका प्रतिरूप मानता हूं इसलिये अपर्याप्त होते हुए भी मैं उसे निराशापूर्ण नहीं समझता। मैं विपिनचन्द्रपालसे पूर्णतया सहमत हूं कि यदि मैं शासनसुधारोंको अस्वीकार करूं तो इसके माने यह हुआ कि मैं उनकी आशा ही नहीं करता था। मुझे अतिशय भय था कि शासन सुधार कानूनका रूप नहीं धारण कर सकेंगे। उनका जो रूप पहले पहल प्रकाशित हुआ था उसमें मैं किसी भी तरहके सुधारके लिये तैयार नहीं था। संशोधनोंके समर्थकोंका कहना था कि जबतक हम सहयोग कर सकेंगे करेंगे नहीं तो प्रत्यक्ष बाधा उपस्थित करेंगे। जो संशोधन लेकर मैं उठा था उसका यही अभिप्राय था। पर विरोधियोंने संशोधनका विरोध पूरी तरहसे किया क्योंकि आज भी नौकरशाहीमें उनका उतना ही विश्वास है। मेरी समझमें उनका यह मत सही नहीं है। सम्राटकी घोषणा उदारता और आशा पूर्ण है। यदि सम्राट्के निमन्त्रणको स्वीकार करके कांग्रेस सहयोगके लिये तैयार न हो तो वह बड़ीभारी भूल कर रही है। मनुष्य चरित्रमें मेरा अटल विश्वास रहा है और मैंने देखा है कि समझानेपर अंग्रेज सच्ची बातको सदा स्वीकार

कर लेते हैं। चूंकि वे बेईमान होकर भी ईमानद
भरते हैं इससे उन्हें लज्जित करके ठीक मार्ग
कहीं सहज है। चाहे जो कुछ हो यदि हमलोग
नहीं करते तो हम अपने सदाचार और सभ्य
समझे जाते हैं यदि हममें शक्ति है तो इस सहय
किसी तरहको हानि नहीं हो सकती।

शासनसुधारोंके सबन्धमें मिस्टर माटेगूने
किया है उसके लिये उन्हें धन्यवाद देना नि
श्यक था। इसलिये पण्डित मदनमोहनजी माल
जिन्ना तथा मैंने यही स्थिर किया कि कांग्रे
होनेपर भी हमलोगोंको यह प्रस्ताव उपस्थित कर
इस प्रस्तावपर समझौता हो गया, इससे लोक
श्रीयुत दासकी सदिच्छाका प्रमाण मिलता है।
महानुभाव अपने मतके दृढ थे तोभी वे कांग्रेस
नहीं चाहते थे। इसलिये कितने ही लोग सम
कर रहे थे ।

कांग्रेस विधान



(नवम्बर १३, १६२०)

कांग्रेसके विधानपर विचार करनेके लिये जिस कमेटीका निर्माण किया गया था उसने इतने दिनोंके बाद अपना निर्णय प्रकाशित किया है और अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीके निर्णयमें सहायता पहुंचानेके लिये हर तरफसे सहायता मागी गई है। खेदके साथ लिखना पड़ता है कि विधान कमेटीके सदस्योंकी संख्या अल्पतम होनेपर भी सबलोग एक बार भी एकत्रित नहीं हो सके। पर शायद इसमें किसीका दोष नहीं है। जो हो, जो रिपोर्ट तैयार की गई है उसपर पांचमेंसे चार सदस्योंने पूर्ण विचार कर लिया है और इस तरह यह रिपोर्ट सदस्योंका दृढ निश्चय है। इतना अवश्य लिख देना चाहिये कि चारों सदस्य एकमत नहीं रहे हैं। अलग नोट न लिखकर प्रत्येक सदस्योंने पूर्ण स्वाधीनताके साथ अपना अपना स्वतन्त्र मत उन प्रश्नोंपर उपस्थित किया है जहां वे एकमत नहीं हैं। विधानकी सबसे प्रधान बात कांग्रेसका ध्येय बदलना है। जहांतक मुझे अवगत है इस सम्बन्धमें सदस्योंमें अधिक मतभेद नहीं है। मेरी समझमें

तो ध्येयमें जो परिवर्तन किया गया है वही इस समय देशका सच्चा भाव है।

मुझे मालूम है कि परिवर्तित ध्येयपर अनेक प्रसिद्ध समाचार पत्रोंने कड़ी टीकायें की हैं। पर इस समय यह असाधारण स्थिति उत्पन्न हो गई है कि जिन पत्रोंने जन समाजके मतको शिक्षित किया और जिनका आज अधिक लोगोंके हृदयमें आदर है उनसे जनसमूहका मत कहीं आगे बढ़ गया है। असल बात यह है कि मत कायम करना इस समय केवलमात्र शिक्षित वर्गके हाथमें ही नहीं रह गया है, बल्कि जनसमूहने मत स्थिर करने तथा उसके प्रचारका भार अपने ऊपर ले लिया है। इनकी अवज्ञा करनी या इनके प्रति उदासीनता दिखलाना या इसका कारण क्षणिक जोश बतलाना सम्भव नहीं है। यह समझ बैठना कि जनसाधारणकी यह जागृति मेरे या अली भाइयोंके प्रयासका फल है भूलसे खाली नहीं है। इस समय जनसाधारण हमें चावसे सुनते हैं इसका कारण यही है कि हम उनके हृदयकी सच्ची बातें कहते हैं। जनसाधारण इतने मूर्ख या बेवकूफ नहीं हैं, जैसा कि हम समझते हैं। कभी कभी अपने पर्यवेक्षण द्वारा वे उन बातोंको देख लेते हैं जिनका हम अनुमान तक नहीं कर सकते। इसलिये यद्यपि अपनी आवश्यकताको समझते हैं फिर भी वे यह नहीं जानते कि उन्हें किस तरह प्रगट करें और किस तरह प्राप्त करें। यहीं नेताकी आवश्य-

कना पड़ती है। इसलिये यदि नेता बुरा, जल्दीबाज, और स्वार्थी हुआ तो इसका बुरा परिणाम होगा।

ध्येयका प्रथम भाग तो जनसाधारणके हृदयका भाव प्रगट करता है और दूसरा भाग उसकी पूर्तिका उपाय बतलाता है। मेरी रायमें तो यह परिवर्तन केवल पुराने ध्येयका विस्तृत रूप है। जबतक ब्रिटनके साथ सबन्ध विच्छेदकी चर्चा न चलाई जाय यह उस विधानके अन्दर पूरी तरहसे आ जाती है जिसमें काग्रेसकी विधानकी परिभाषा की गई है पर आशका इस बातकी है कि ब्रिटनके साथ सबन्ध त्याग पर भी जोर दिया जायगा। मेरी समझमें यदि भारत निर्विघ्न उन्नति करना चाहता है तो उसे उचित है कि वह ब्रिटिश जनताको समझा दे कि यद्यपि वह ब्रिटनके साथ सबन्ध रखना चाहता है, यदि उसके द्वारा उसका पूर्ण विकास सभव है, पर यदि उससे किसी तरहकी आपत्ति या बाधा पड़नेकी आशका हो तो वह उसका त्याग कर देगा। यदि हम यह मान बैठते हैं कि ब्रिटनके सबन्ध बिना हमलोग अपने ध्येय तक पहुंच ही नहीं सकते तो यह न केवल यह राष्ट्रके मानके लिये अहितकर है बल्कि इससे हमारी वास्तविक उन्नति रुक जाती है। इसी अन्ध विश्वासका फल है कि हममेंसे चन्द सबसे उत्तम लोग भी खिलाफतके अन्याय तथा पञ्जाबके अत्याचारोंको बरदाश्त करनेके लिये तैयार हैं। इस अन्ध विश्वासने हमारी अवस्था लाचार कर दी

है। ध्येयमें जिस परिवर्तनकी चर्चा है उससे यह लाचारी दूर हो सकती है। जबतक स्वराज्य प्राप्त करनेके मार्गों और उपायोंमें किसी तरहका मतभेद न हो तबतक स्वाधीनताके लिये खुली प्रेरणा विधान विहित हैं और यही कारण है कि हमलोगोंने "विधान" शब्दको निकाल दिया है। इतना ही पर्याप्त है कि जिन उपायोंका हमलोग अवलम्बन कर रहे हैं वे युक्तियुक्त, जायज, उत्तम, मर्यादित तथा शांत हैं। इन्हीं भावोंसे प्रेरित होकर मेरे साथियोंने ध्येयमें इस परिवर्तनको स्वीकार किया। कमसे कम मैंने तो इसी भावसे प्रेरित होकर परिवर्तनके पक्षमें मत दिया। मैं गैरकानूनी अथवा अशान्तिमय किसी भी तरीकेका प्रयोग नहीं करना चाहता। मैं यह जानता हूं कि "कानून और अमन" शब्दका प्रयोग कर मैं विचित्र विरोध उत्पन्न कर रहा हूं, क्योंकि मेरे कतिपय देशवासी मेरे वर्तमान आचरणको ही गैर कानूनी बतलाते हैं और कहते हैं कि इससे आशंका उत्पन्न होगी। पर इस बातको तो वे भले ही स्वीकार कर सकते हैं कि जिस तरीकेसे मैं चल रहा हूं उसमें केवल "विधान युक्त" शब्दके रखनेसे ही रक्षा नहीं हो सकती। इसपर कानूनी बहस हो सकती है। पर जब हम स्थूल कामके लिये तैयार हैं तो बहसमें समय नष्ट करना फजूल है। दूसरा आवश्यक परिवर्तन प्रतिनिधियोंकी संख्या का है। हम लोगोंको पक्का विश्वास है कि इस तरहके परिवर्तनका फल बहुत ही अच्छा होगा। हम

लोग जिस तरह आगे बढ रहे हैं उससे निश्चय है कि इस तरहके प्रतिबन्ध बिना कांग्रेस हुल्लडबाजी हो जायगी। केवल दर्शकोंकी अपरिमित सख्या असमव है। फिर यदि प्रतिनिधियोंकी सख्या अपरिमित हो जाय तो हमलोग काम ही नहीं कर सकेंगे।

तीसरा आवश्यक परिवर्तन अखिल भारतवर्षीय काम्रेस कमेटीका चुनाव है। यह चुनाव इस तरहसे किया गया है कि वे ही सदस्य विषय निर्धारिणी समितिके भी सदस्य हो गये हैं। और अन्तमें भारतके विभाजनका प्रश्न है जो कि भाषाके आधारपर किया गया है। इसके विषयमें कुछ अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं। पर यहा पर इतना लिख देना आवश्यक है कि यदि काग्रेसने प्रतिनिधियोंकी सख्याका नियन्त्रण स्वीकार कर लिया तो उसे जन सख्याके अनुसार प्रतिनिधि निर्वाचनकी व्यवस्था करनी होगी। इससे सब लोगोंको सुविधा होगी।

टाइम्स आफ इण्डिया पत्रने लिखा है कि इस विधानमें हमलोगोंने ब्रिटिश काग्रेस कमेटीको जो रूप दिया है तथा यङ्ग इण्डियाके अपने लेखमें उसके तथा इण्डिया पत्रके सबन्धमे जो कुछ लिखा है उसमें मतभेद है। पर यह सबको विदित है कि इस संबन्धमें हमारा यह मत बहुत दिनोंसे रहा है। अपने साथियोंसे उसके खर्च कर देनेके सबन्धमें अपनी ओरसे कुछ कहना अनुचित ही होगा। उस कमेटीकी उप-

योगितापर लिखना हमारा काम नहीं था। हमलोगोंपर सिर्फ विधान बनानेका भार दिया गया था। इसके अतिरिक्त मेरे अन्य साथी इस कमेटीसे इतने उदासीन नही थे जितना मैं था। विधान निर्माणमें मैंने प्रत्यक्ष दिखला दिया था कि जहा कहीं सिद्धान्तका सवाल नही था मैं सदा अपने साथियोंके मतको स्वीकारकर लेता था। पर ब्रिटिश काग्रेस कमेटीकी जो अवस्था है उसके अनुसार मेरा मत यही है कि वह तोडी जाय और उसका मुखपत्र 'इण्डिया' बन्द कर दिया जाय।

विगत काग्रेसने जिस विधानकी घोषणा की है उसके अनुसार कार्य करना ही स्वराज्य दिला देगा। इसके अनुसार स्थान स्थानपर काग्रेसकी प्रतिनिधि सभायें होंगी और वे सब अखिल भारतवर्षीय काग्रेस कमेटीके अधीन होंगी। इनमे सभी बालिग स्त्री पुरुषोंके लिये स्थान है जो काग्रेसका ध्येय स्वीकार कर चार आना पैसा देकर सदस्य बन सकते हैं। इसमें सब दलोंको बराबर स्थान होगा। इस तरह यदि उसका ठीकसे प्रयोग किया गया तो बिना किसी कठिनाईके यह वर्तमान सरकारका अन्त कर देगी क्योंकि बिना प्रजाके सहयोगके उसके हाथमें कोई अधिकार नही रह जाता। उसकी शक्ति हमीं लोगोंपर निर्भर करती है। हम लोगोंकी सहायता बिना एक लाख अग्रेज यदि हम पर शासन करना चाहेंगे तो हमारे ग्रामोंके सातवे भागपर भी अधिकार नहीं रख सकेंगे क्योंकि एक आदमी कितना भी बली क्यों न हो वह ४०० आ-

दमियोंका शासन अकेला नहीं कर सकता और हमारे प्रत्येक ग्रामोंकी औसत जन सख्या यही है।

इसलिये हम लोगोंके सामने प्रश्न है सरकारके मतका विरोध तथा उसके साथसे सहयोग हटा लेना। यदि हम लोग एक मत हो जाय तो सरकार या तो हमारी बात सुनेगी या हमसे अलग हो जायगी। हम लोगोंके परस्पर मतभेदसे लाभ उठाकर वह अपना बल बढाती है। जब हम लोग दङ्गा फसाद करते हैं तो जुल्म आरम्भ कर देती है। हम लोगोंमे मतभेद देखकर वह घूस देकर हमसे फुटमत कराना चाहती है। हम लोगोंमें एका देखकर वह हमें प्रलोभन और लालचमें फसाना चाहती है। जहा हम लोग अपना हक मागते हैं वह लोगोंके सामने कुछ टुकडे फेक देती है जिसे वह बहुत ही उत्सुक देखती है। इसलिये हमें आवश्यकता इस बातकी है कि हम सदा अहिसात्मक बने रहें, सङ्गठित रहें घूस आदि न ले और प्रलोभनमें न फसे।

शिक्षित समुदायमें इस बातके प्रचारकी कठिनाई नहीं है। उन्हें एकमें मिला लेना कोई कठिन बात नही है। पर यह सब केवल बतोलेबाजीसे नहीं हो जायगा। इसके लिये काम और सगठनकी आवश्यता है। इसलिये सबसे पहिली आवश्यकता इस बातकी है कि हमें ३० जूनके पहले पहले एक करोड सदस्य बना लेना चाहिये। इसके लिये दो बाते आवश्यक हैं। प्रत्येक सदस्यको कमसे कम चार आना फीस देना

होगा और काग्रेसके ध्येयको स्वीकार करना होगा। हमें प्रत्येक घरके बालिग सदस्योंको मेम्बर बनाना चाहिये। यदि हमने उतने सदस्य औरतोंमेंसे बनाये जितने मर्दोंमेंसे तो यह मेरे लिये अभिमानकी बात होगी। प्रत्येक जाति, प्रत्येक दल तथा प्रत्येक फिरकेके लोगोंको हमें काग्रेसका सदस्य बनाना चाहिये। यदि हम लोग इतना कर सके तो हमारी काग्रेस निश्चयही प्रतिनिधि सस्था कहलाने योग्य हो जायगी। यदि मेरी बात स्वीकार की जाने योग्य हो तो ३० जून तक हमें निम्नलिखित बातें करनी होंगी।

(१) तिलक स्वराज्य कोषके लिये एक करोड़ धन संग्रह करना होगा।

(२) काग्रेसके लिये एक करोड़ सदस्य बनाना होगा।

(३) कमसे कम बीस लाख घरोंमें चरखेका प्रचार करना होगा।

एक करोड़ सदस्य बनानेके लिये केवल बीस लाख घरोंसे प्रतिघर ५ सदस्य बनाकर काम चला सकते हैं। प्रत्येक काग्रेस सदस्यके घरमें कमसेकम एक चरखा चलवा सकते हैं। २१ प्रान्तोंमें २० लाख चरखेका प्रचार कोई बड़ी बात नहीं है।

अनेक राष्ट्रीय प्रश्नोंपर विचार करने तथा उनके निर्णयका समय नहीं है। यदि रोगी एक साथ ही अनेक दवायें खाता है तो वह अवश्य ही मर जाता है। जो वैद्य, अपनी दवाके असरका

अनुभव करना चाहता है, अपनी प्रतिष्ठा गंवा देता है और लोग उसे बेवकूफ समझते हैं। कामकी पवित्रताकी उतनी ही आवश्यकता है जितनी जीवनकी आवश्यकता की हर तरहका बनावटीपन बुरा है। आजतक हम अपने मनसे चलते रहे। इस तरह हमने राष्ट्रके बलका बहुत ह्रास किया। इस वर्षके भीतर विदेशी वस्त्रोंका बहिष्कार आसान बात है। कांग्रसके लिये काम करनेवाली संस्थाका स्थान स्थानपर सङ्गठन करना आसान बात है। यदि उचित तरीकेसे एक करोड़ रुपया इकट्ठा किया गया तो लोगोंमें विश्वास भी उत्पन्न हो जायगा और इससे हमारी दृढ़ता और सरलता साबित होगी।

पर इसका र्क्रमका यह अभिप्राय नहीं है कि असहयोगके अन्य कार्य बन्द कर दिये जाय। शराबखोरी और छुआछूतको मिटानेका अनवरत यत्न होना चाहिये। शिक्षा सम्बन्धी आन्दोलन प्रगति पर है। जिन राष्ट्रीय शिक्षालयोंकी स्थापना हो गई है, यदि उनका समुचित प्रबन्ध होता रहा तो वे बराबर आगे बढ़ेंगे, और जो छात्र अभीतक आगा पीछा कर रहे हैं वे भी आकृष्ट होंगे। वकील लोग सदासे सतर्क रहते हैं, आन्दोलनको बढ़ते देखकर वे भी देशका साथ देंगे। अदालतोंका बहिष्कार उत्साहके साथ चल रहा है। इन बातोंके लिये ही अब सारे प्रयासकी आवश्यकता नहीं है इन्हें अब विशेष विशेष लोगही उठा लें। पर जिन तीन बातोंकी मैंने ऊपर चर्चा की है वह बड़ी जरूरी हैं। इन्हें इसी समय समाप्त करना जरूरी है।

इसके विना इस आन्दोलनको सार्वजनिकरूप नहीं दे सकते।

ब्रिटिश कांग्रेस कमेटी

(अक्तूबर २०, १९२०)

मिस नार्मण्टनने मेरे नाम एक खुली चिट्ठी भेजी है। मेरा इनसे परिचय नहीं है। मैं इन्हें केवल "इण्डिया" के सम्पादककी हैसियतसे जानता हू। असहयोगके पक्षमें उनके मत वडे ही दृढ हैं और नई कौंसिलोंके वहिष्कारका तो उन्होंने जोरदार शब्दोंमें प्रतिपादन किया है। इससे उनकी आखें खुल जानी चाहिये जो अभीतक आगापीछा कर रहे हैं। पर मैं अपने पाठकोंसे प्रार्थना करूगा कि राष्ट्रसंघके वहिष्कारसे ब्रिटिश जनतापर जो प्रभाव पड सकता है उसका अत्युक्तिपूर्ण अनुमान न कर ले। बाहरवालोंके मतका ख्याल न कर हमें उचित है कि हम स्वय अपना काम करे। हमारे आचरणका ब्रिटिश जनतापर जो असर पड़ सकता है इसका अनुमान हमने सदा गलत लगाया है और इस तरह हमने राष्ट्रके स्वार्थपर

धका पहुंचाया है। इसपर मिस्र नार्मण्टनकी बातें सर्वथा उचित प्रतीत होती हैं।

ब्रिटिश कमेटीपर उन्होंने जो मत स्थिर किया है उसको जान लेना आवश्यक प्रतीत होता है। जिन बातोंपर उन्होंने विवाद खड़ा किया है उनके सम्बन्धमें हम कुछ नहीं जानते। पर कमेटीके सङ्गठनपर उनके विचार सर्वथा मौलिक हैं। उन्होंने लिखा है कि ब्रिटिश कमेटीमें केवल अंग्रेज ही सदस्य होने चाहिये और उसका व्यय भी उन्हींको बर्दाश्त करना चाहिये। मेरी समझमें उनका मत ठीक है। पहलेकी अपेक्षा ब्रिटिश जनतापर प्रभाव डालना सबसे सहज है।

उस अवस्थामें हम निश्चयरूपसे कह सकेंगे कि ब्रिटनके लोग हमारे स्वार्थमें दिलचस्पी रखते हैं। "इण्डिया पत्र" के सम्बन्धमें उनके मतसे भी मैं सहमत हूं। उस पत्रसे जो लाभ होता है उससे उसपर कहीं अधिक खर्च है। ब्रिटिश जनतापर इसके मतका कोई प्रभाव नहीं है और इससे भारतीयोंको यह भी नहीं मालूम होता कि ब्रिटिश जनताका क्या मत है। इससे एकमात्र लाभ यही होता है कि पार्लिमेण्टकी रिपोर्ट मिलती जाती है। पर इसको छपवाकर बटवानेमें अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीको अधिक व्यय नहीं पड़ सकता। कोई भी भारतीय समाचार पत्र इस कामको उठा सकता है और लाभ उठा सकता है। जब हमलोगोंने असहयोग आन्दोलन जारी कर आत्मनिर्भर रहनेका निश्चय किया है तो हमें

ब्रिटिश कांग्रेस कमेटी और 'इण्डिया' पत्रको अवश्य ही बन्द कर देना चाहिये। इससे दो लाभ होंगे, एक तो सार्वजनिक रुपया बचेगा और हम अपनी शक्तिका घरके काममें अधिक प्रयोग कर सकेंगे।

आगे चलकर मिस नार्मेण्टनने लिखा है कि राष्ट्रीय दलको ब्रिटनमें एक सलाह देनेवाली कमेटी या सलाहकार रख लेना चाहिये जो लण्डनमें रहकर कमेटीको समय समयपर सलाह दिया करे। पर मैं इस मतका विरोधी हूं। मैं अपने समस्त कार्यकर्ताओंका ध्यान भारतमें ही जो काम हो रहा है उसीकी ओर आकृष्ट करना चाहता हूं। यहां ही काम बहुत है और काम करनेवाले कम। ऐसी अवस्थामें भला यहांसे विदेशोंके लिये हम आदमी कहांसे भेज सकते हैं। कुछ काम करके जब हमलोग भारतमें ही अपना काफी प्रभाव जमा लेंगे तब हम विदेशोंमें प्रभाव जमानेके लिये लोगोंको भेजनेका विचार करेंगे।

"इण्डिया" पत्रकी असन्तोष जनक अवस्थाके बारेमें एक दूसरे सवाददाताने भी हमारे पास लिखा है। उन्होंने लिखा है कि "इण्डिया" पत्रके कुल ५०० ग्राहक हैं अर्थात् २२० ब्रिटनमें और शेष भारतमें। गत वर्ष आय तो हुई ७३) रु० पर इस वर्षका अनुमानित व्यय प्राय ४६५००) रु० है।

"इण्डिया पत्रके चलानेके लिये भारतकी जनताको जेबसे २७०००) रु० प्रति वर्ष दिया जाता है। उसमेंसे सम्पादकको

हैसियतसे मिस्टर सैय्यद हुसेनको ८२७०) रु० मिलते हैं। सहकारी सम्पादक मिस्टर फेनर ब्रोकवेको भी ८२७०) मिलते हैं। मेनेजर मिस्टर जी० पी० ब्लिजाएडको ६०००) मिलता है। २२५०) क्लर्कका वेतन है और उतना ही टाइप करनेवालेको मिलते हैं।

कसी न किसी तरह पत्र जीता है पर प्रचारका उद्देश्य उससे लेशमात्र भी सिद्ध नहीं हुआ है। उसकी नीति भी रचनात्मक नहीं रही है। ऐसी अवस्थामें केवल ५०० सख्यामें पत्रके प्रचारके लिये ४१५००) रुपया प्रति वर्ष खर्च करना फजूल खर्ची नहीं तो और क्या है।

ब्रिटिश कांग्रेस कमेटी

(जनवरी १९ १९२१)

ब्रिटिश कांग्रेस कमेटी तथा "इण्डिया" पत्रको तोड देनेके निर्णयको बम्बईका 'बाम्बे क्रानिकल' असंबद्ध और कुसमय बतलाता है। 'बाम्बे क्रानिकिल' का कहना है कि "कांग्रेस विधानपर विचार करनेके लिये जो कमेटी बैठाई गई थी उसने इनके तोड देनेके पक्षमें कोई बात नहीं कही है और इससे उपयोगी काम हो रहा था। किसी कमेटीने इसके तोडनेका परामर्श नहीं दिया है।" पर यह स्मरण रखना

चाहिये कि उपरोक्त कमेटीको नियुक्ति अमृतसर कांग्रेसके अवसर पर हुई थी और इसने अपनी रिपोर्ट असहयोग प्रस्तावके स्वीकृत होनेके बहुत दिन बाद प्रकाशित की। उस समयसे आजतक अनेक घटनायें हो गयी हैं जिससे विदेशोंमें प्रचारके सम्बन्धमें देशका मत बदल गया है। इनका तोड़ना सिद्धान्तके अनुसार है। लोगोंने यह बात महसूस की कि जिस कांग्रेसने असहयोगका व्रत स्वीकार कर लिया है वह अपनी सहायता अब विदेशोंसे नहीं चाहती। कांग्रेसने जानबूझ कर अपने घरमें आग लगाई है। उसने जानबूझ कर आत्मनिर्भर रहना तै किया है। ऐसी अवस्थामें कमेटीके सङ्गठनकी पूर्णताका प्रश्न अनर्गल हो जाता है। इस परिवर्तनकी अवस्थामें प्रचारके कामके लिये विदेशोंमें संस्था रखना भी कांग्रेसके लिये अनुचित है।

चाहे तुम कहो या न कहो पर यदि भूखेको अन्न न दिया जाय तो वह अवश्य मर जाता है। चाहे हमलोग कुछ कहें या न कहें पर जिस समय हम सरकारकी सहायता करना बन्द कर देंगे उस समय वह अवश्य मर जायगी। मैं तो उस प्रस्तावका भी विरोधी हूं जिसमें अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीको यह स्वतन्त्रता दे दी गई है कि वह अपनी जिम्मेदारी और निर्णयपर विदेशोंमें प्रचार करनेके लिये व्यय करे। हमें तो यहीं अधिकसे अधिक समयकी जरूरत है। ४५०००) रुपया यदि हमलोग केवल अपने विज्ञापन देनेमें व्यय

न कर चरखे और करघेमें लगावें तो कितना अधिक लाभ हो सकता है। अच्छे कामका विज्ञापन आपसे आप ही हो जाता है। मुझे पूरी आशा है कि उस रुपयेका सदुपयोग होगा। "इण्डिया" पत्रका बन्द हो जाना ही अच्छा है। उसके द्वारा हमलोगोंके हृदयोंमें गलत आशायें उत्पन्न हो गई थीं। ब्रिटन मर्यादाकी उसी तरह परीक्षा हो रही है जिस तरह हमारी। यदि स्वार्थी और बुराई चाहनेवाले समाचार पत्र हमारी शिकायत और निन्दा छापते हैं और वे लोग (ब्रिटिश जनता) उसीको स्वीकार करते हैं तो लाचारी है। क्या हमलोगोंने कांग्रेसकी ओरसे पञ्जाबकी रिपोर्ट नहीं निकाली है? पर उसपर कौन विश्वास करता है। मि० माण्टेगूने उसे अविश्वसनीय बतलाया है और ब्रिटिश जनताने उनके ही रागमें राग मिलाया है। वाहियात बातोंके प्रचारसे ब्रिटन अमरीकाका मुकाबला कर रहा है। मैं इस मार्गका अवलम्बन कर असफल नहीं होना चाहता।

झूठे समाचार पत्रों तथा कपटपूर्ण सार्वजनिक जीवनकी नीतिको उखाड़नेके लिये हमें दूसरे उपायसे काम लेना चाहिये। ब्रिटिश कांग्रेस कमेटी तथा "इण्डिया" पत्रको बन्द कर कांग्रेसने उसका आरम्भ किया है।



कार्यकारिणी समिति

—:※:—

(जून २९, १९२१)

कार्यकारिणी समितिके प्रस्तावोंपर घोर विरोध प्रगट किया जा रहा है। उसने प्रस्ताव पास किया है कि असहयोगी वकीलोंको अदालतोंमें नही जाना चाहिये और असहयोगी अभियुक्तोंको अपने मुकदमेकी पैरवी नही करनी चाहिये। इसपर लोगोंने बडा रौला मचाया है कि कार्यकारिणी समितिको इस बातका अधिकार नही है और इसको स्वीकार नही करना चाहिये। इसलिये कार्यकारिणी समितिके अधिकारको निश्चय करना आवश्यक है। पर इसको समझनेके पूर्व हमे काग्रेसके विधानको समझ लेना उचित है।

काग्रेसका लक्ष्य है शान्तिमय तथा उचित उपायों द्वारा भारतमें स्वराज्य स्थापित करना। इसके अनुसार काग्रेसका कर्तव्य यह है कि वह इस तरीकेसे काम करे जिससे भारतका उद्धार शीघ्र हो जाय। काग्रेस विधानकी रचना इस प्रकार की गई है कि उसके द्वारा राष्ट्रको स्वराज्यकी अपनी योग्यता साबित करनी होगी। वह जिस शासन प्रणालीकी व्यवस्था करती है उसकी शक्ति सार्वजनिक मत तथा लोगोंके सद्भावमें है और यह देखकर कि काग्रेस इस समय वर्तमान

शासन प्रणालीमें विनाशका प्रयत्न कर रही है, इससे यह प्रत्यक्ष हुआ कि कांग्रेसका दल जितना प्रबल होता जायगा सरकारका बल उतना ही क्षीण होता जायगा। जिस दिन लोग एकमत होकर कांग्रेसके निर्णयोंको स्वीकार करने लगेंगे उसी दिन पूरा स्वराज्य हो जायगा। उस दिन या तो सरकारका अन्त हो जायगा या उसे कांग्रेसके मतको स्वीकार करना पड़ेगा। इसलिये कांग्रेसको दृढ़, सुसंगठित और बलिष्ठ संस्था बनानेकी आवश्यकता है। इसके लिये कांग्रेसके निर्णयोंको स्वीकार कर लेना आवश्यक है।

कांग्रेसका अधिवेशन वर्ष भरमें सिर्फ एक बार ही होता है। उसी अधिवेशनमें वह अपनी वर्ष भरकी नीति स्थिर करती है। कांग्रेस कमेटीका संगठन इसीलिये हुआ है कि वह प्रस्तावों द्वारा कांग्रेसकी स्थिर नीतिको चरितार्थ करे। इसलिये प्रस्तावोंकी व्याख्या करना तथा उनके कारण उत्पन्न नयी स्थितिके विवेचन करनेका उसे उतनाही अधिकार है जितना स्वयं कांग्रेसको। अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीके सदस्य लोग भिन्न भिन्न प्रस्तावों पर और उनके अर्थो या टीकाओं पर मतभेद भले ही प्रगट करें पर इस हालतमें यदि कोई महत्त्वके सिद्धान्तका प्रश्न न हो तो—अधिक मतको स्वीकार करें। कमेटी की बैठकमें जिन विषयोंपर विवाद हो चुका हो उनपर खुला विवाद नहीं होना चाहिये। अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीकी योग्यता निस्पादित करनेके लिये विधान द्वारा पन्द्रह प्रधान कार्यकर्त्ता-

ओंका कार्यकारिणी समिति बनाई गई है जिसका अधिवेशन जल्दी ही जल्दी हुआ करेगा और अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक नहीं हो रही है तो कार्यकारिणी समितिको उसके सभी अधिकार प्राप्त हैं। इसलिये वह समस्त आवश्यक कार्योंको करती रहेगी और यदि आवश्यकता प्रतीत हुई तो अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीका अधिवेशन भी करेगी। पार्लिमेंट और केबिनेटका जो सम्बन्ध है, वही सम्बन्ध कांग्रेस कमेटी और कार्यकारिणी समितिका है। यदि इस वर्षके भीतर ही हम जिम्मेदार शासनकी स्थापना कर लेना चाहते हैं तो हमें उचित है कि हम कार्यकारिणीके निर्णयोंका सम्मान करें। इसलिये उसके सदस्य वे ही हो सकते हैं जो अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी और राष्ट्रके सबसे बड़े विश्वासपात्र हों। उसे जल्दीबाजीमें कोई निर्णय नहीं करना चाहिये। पर साथ ही उसे एकमतका होना चाहिये। उसके अन्दर दलबन्दी नहीं हो सकती। कांग्रेस राष्ट्रकी प्रतिनिधि संस्था है इससे उसमें हर तरहके लोगोंका समावेश है। पर कार्यकारिणी समितिमें वे ही लोग हों जिनपर अधिकसे अधिक प्रतिनिधियोंका विश्वास हो। उनका निर्णय अधिकांश अवस्थामें सर्वसम्मत होना चाहिये। यदि कोई सदस्य कमेटीके सदस्योंकी अधिकांश संख्यासे सहमत नहीं होता तो उसे उचित है कि वह कार्यकारिणी समितिसे अपना सम्बन्ध त्याग दे। पर उसे उचित नहीं है कि भीतरकी बातों पर बाहर विवाद खड़ाकर समितिके

काममें बाधा डाले। इसलिये प्रत्येक कांग्रेसमैनको कार्यकारिणी समितिके निर्णयको स्वीकार करना चाहिये। पर इसके माने यह नहीं है कि यह उच्छृंखल संस्था है। यदि इस पर विश्वास नहीं रह जाता तो अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी इसे तोड़ सकती है। अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी इसके निर्णयोंमें भी परिवर्तन कर सकती है। मेरी समझमें तो यदि जनता कार्यकारिणी समितिके निर्णयोंको स्वीकार नहीं करती रहेगी तो इस वर्षके भीतर स्वराज्य प्राप्त करना कठिन है। इसलिये उचित है कि कांग्रेसके प्रत्येक निर्णयका पूर्णतया पालन करके उसे सुदृढ बनावें। सरकार जिस कार्यको पशुबलके द्वारा कराती है कांग्रेस उसी कामको प्रेमबलके द्वारा कराना चाहती है। सरकारने लोगोंके दिलोंमें भय उत्पन्न कर अपनी जड़ जमायी है, कांग्रेसको अपनी नीतिको स्वीकार करवा कर अपनी जड़ जमानी होगी। इसीलिये जनताके हर एक काममें अहिंसाका समावेश है। पर जबतक प्रजा पूर्णतया सहयोग नहीं करेगी तबतक कांग्रेसकी सफलता नहीं हो सकती। नागपुर कांग्रेसके निर्णयके अनुसार यदि इसी वर्ष स्वराज्य प्राप्त करना हो तो कांग्रेसकी बातको पूरी तरह स्वीकार करते जाना चाहिये।

मुसलमान प्रतिनिधित्व

लखनऊके सुलहके सम्बन्धमें कार्यकारिणी समितिने सलाहके तौरपर जो प्रस्ताव पास किया है उसपर भी मतभेद है।

र्थोंकी कार्यकारिणी समिति बनाई गई है जिसका अधिवेशन जल्दी ही जल्दी हुआ करेगा और अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटीकी बैठक नहीं हो रही है तो कार्यकारिणी समितिको उसके सभी अधिकार प्राप्त हैं। इसलिये वह समस्त आवश्यक कार्यों को करती रहेगी और यदि आवश्यकता प्रतीत हुई तो अखिल भारतवर्षीय काग्रेस कमेटीका अधिवेशन भी करेगी। पार्लिमेंट और केबिनेटका जो सम्बन्ध है, वही सम्बन्ध कांग्रेस कमेटी और कार्यकारिणी समितिका है। यदि इस वर्षके भीतर ही हम जिम्मेदार शासनकी स्थापना कर लेना चाहते हैं तो हमें उचित है कि हम कार्यकारिणीके निर्णयोंका सम्मान करें। इसलिये उसके सदस्य वे ही हो सकते हैं जो अखिल भारतवर्षीय काग्रेस कमेटी और राष्ट्रके सबसे बड़े विश्वासपात्र हों। उसे जल्दीबाजीमें कोई निर्णय नहीं करना चाहिये। पर साथ ही उसे एकमतका होना चाहिये। उसके अन्दर दलबन्दी नहीं हो सकती। काग्रेस राष्ट्रकी प्रतिनिधि संस्था है इससे उसमे हर तरहके लोगोंका समावेश है। पर कार्यकारिणी समितिमें वे ही लोग हों जिनपर अधिकसे अधिक प्रतिनिधियोंका विश्वास हो। उनका निर्णय अधिकाश अवस्थामें सर्वसम्मत होना चाहिये। यदि कोई सदस्य कमेटीके सदस्योंको अधिकाश संख्यासे सहमत नहीं होता तो उसे उचित है कि वह कार्यकारिणी समितिसे अपना सम्बन्ध त्याग दे। पर उसे उचित नहीं है कि भीतरकी बातों पर बाहर विवाद खडाकर समितिके

विदेशोंमें प्रचार

(मार्च ६, १९२२)

कार्य्य समितिने विदेशोंमें प्रचार करनेका जो काम अपने सिरपर उठाया है, मैं देखता हूं कि उसके कार्य्य क्षेत्रके सम्बन्धमें बहुत कुछ गलत फहमी फैल रही है। इस विषयमें कार्य समितिकी जो रिपोर्ट पेश की गयी है वह प्रकाशित नहीं की गई। मैं देखता हूं कि यह गलती हुई। खैर। गत ३१ जनवरीको सूरतमें कार्य समितिकी जो बैठक हुई उसमें इस आशयका प्रस्ताव स्वीकृत हुआ था कि विदेशोंमें महासभाके कार्यका प्रचार करनेके लिये मैं कोई तजवीज तैयार करू। उनके अनुसार इस विषयके तमाम कागज पत्रोंको देखकर मैंने अपनी रिपोर्ट कार्य समितिको पेश की। उसमें मैंने लिखा था कि "वर्तमान अवस्थामें भारतकी राजनैतिक स्थितिको प्रगट करनेके लिये किसी भी बाहरी देशमें कोई समाचार एजेन्सी स्थापित करना मेरी रायमें आवश्यक है और शायद हानिकर भी सिद्ध हो, क्योंकि इससे एक तो भारतको जनताका ध्यान बट जायगा और केवल अपने ही बलपर खड़े होनेके बदले बाहरी देशोंके कार्यों के फलाफलकी तथा सहायताकी ओर उसका ध्यान दौड़ने लगेगा। इसका यह अर्थ नहीं है कि हमें दुनियाकी सहायता

नये विधानमें मुस्लिम प्रतिनिधित्वका प्रश्न अल्प संख्याके अधिकारोंकी रक्षाके वचन द्वारा उठता है। कार्यकारिणी समितिको विदित हुआ है कि अपने प्रतिनिधित्वके सम्बन्धमें मुसलमानोंकी चिन्ता बढ़ रही है और वे चाहते हैं कि लखनऊके निर्णयोंका पालन किया जाय। इसलिये उसके अनुसार कार्य करना उचित ही था।

चारों तरफसे यत्न किया जा रहा है कि हिन्दू और मुसलमानोंमें मतभेद उपस्थित हो जाय। मुसलमान अभी हालमें ही साथ देने लगे हैं। इसलिये प्रत्येक हिन्दूका धर्म है कि वह प्रत्येक उचित प्रलोभनों द्वारा मुसलमानोंको काग्रेसमें लानेका यत्न करे। काग्रेस सभी जाति और सभी धर्मवालोंके मिलनेका एक स्थान होना चाहिये। यदि चेष्टा करने पर भी मुसलमान लोग आना नहीं चाहते तो उन पदोंको खाली रखना चाहिये अथवा उनपर ऐसे लोगोंको नियुक्त कर देना चाहिये जो मुसलमानोंके आने पर उन पदोंको खाली कर दें। कुछ लोगोंका कहना है कि इस समय हमें योग्यताकी जितनी परवा करनी चाहिये उनको इककी परवा नहीं करनी चाहिये। योग्यता अवश्य वाञ्छनीय है पर हमलोग भी उसका उसी तरह दुरुपयोग कर सकते हैं जैसा अंग्रेजोंने किया है। योग्यतासे मेल आवश्यक है। मेलसे अधिक महत्व यदि कोई वस्तु रखती है तो आत्मा और सिद्धान्त। इसीका दूसरा नाम सचाई है।

कामका होगा। 'यङ्ग इण्डिया' सम्बन्धी चिट्ठी पत्रियोंसे जो दुनियाके तमाम हिस्सोंसे मेरे पास आती जाती रहती हैं, मैं देखता हूं कि दुनिया भरमें भारतके मामलोंपर आज जितना ध्यान दिया जा रहा है उतना पहले कभी नहीं दिया जाता था, इससे यह सिद्ध होता है कि जितना हमारा कष्ट सहन अधिक होगा उतना ही उनका ध्यान इस ओर अधिक जायगा। इस लिए यहांकी राजनैतिक स्थितिके सम्बन्धमें सच्ची खबरें भेजनेका सबसे बढ़िया तरीका तो यही है कि महासभाका काम अधिक शुद्ध, अधिक सुसंगठित रूपसे चलाया जाय और कष्ट-सहनकी तैयारी अधिक की जाय। इससे केवल बाहरी लोगोंकी जिज्ञासा ही नहीं बढ़ती, परन्तु स्थितिकी असलियतको तथा उसकी भीतरी बातोंको समझ लेनेकी भी उत्कंठा बढ़ती है।"

इस सम्बन्धमें जो कागजपत्र मुझे दिये गये थे, तथा जो जो दलीलें उसके पक्ष और विपक्षमें पेश की गई थीं मैंने उन सबको ध्यानसे पढ़ा और सुना, पर फिर भी मेरी तो यही निश्चित राय हुई कि कमसे कम आज तो भारतके बाहर कोई समाचार एजेन्सी स्थापित करनेकी आवश्यकता नहीं है। हां, हम यह तो जरूर चाहते हैं कि इस युद्धमें संसार हमारे साथ हो, पर हम विदेशोंमें एजेन्सी खड़ी करके इस कामको नहीं कर सकते। हम तो सिर्फ उन्हीं लोगोंको सच्ची सच्ची खबरें भेज दिया करें, जो उन्हें सुनना चाहते हों। यदि कोई बाहरी देश किसी विशेष देशकी किसी खास हलचलके हालात जाननेके

दरकार नहीं है, बल्कि उस सहायता प्राप्त करनेका मार्ग यह है कि हम खुद अपने ही कार्योंकी शुद्धतापर अधिक जोर दें और इस बातपर भरोसा रक्खें कि सत्यका प्रचार अपने आप होता है।

दूसरे यह मेरे तजरबेकी बात है कि जब कोई एजेन्सी किसी खास उद्देशसे स्थापित की जाती है तब कुछ हद तक उसका निष्पक्ष भाव कम हो जाता है और लोग यह खयाल करते हैं कि यह बात तो हेतु विशेष रखनेवाले लोगोंकी तरफसे आई है। अतएव वे उसको उतना महत्व नहीं देते।

तीसरे महासभा ऐसी एजेन्सियोंपर आवश्यक निगरानी न रख सकेगी और इस बातका डर है कि इस आन्दोलनके सम्बन्धमें कहीं गलत खबरें और गलत खयालात अधिकारी रूपसे न पहुंचा करें।

चौथे, देशकी वर्तमान अवस्थाको देखते हुए यह मुमकिन नहीं है कि कोई गण्यमान्य पुरुष यहासे विदेशोंमें भेजा जा सके जो वहा जाकर केवल खबरें भेजनेका ही काम करें; क्योंकि यहा काम करनेके लिये बहुत थोड़े लोग हैं।

अतएव मेरी यह राय है कि यदि आवश्यक हो तो 'काग्रेस बुलेटिन' के कामका सगठन अच्छी तरह कर लिया जाय। मेरा तो यह अनुभव है कि महासभा जितना ही अधिक पक्का काम करेगी और देशके लोग जितना ही अधिक कष्ट सहन करेंगे उतना ही अधिक प्रचार, विना कोई खास प्रयत्न किये, हमारे

इसके अलावा यह असहयोग आन्दोलन स्वावलम्बनकी नींव पर खडा किया गया है। इसका तो मूलमन्त्र है—जितना बल हममें होगा उतनी ही सफलता हमें मिलेगी, अधिक नहीं। हमारी योग्यताके सम्बन्धमें संसारके दिये प्रमाण पत्रसे हमें सफलता नहीं मिलनेकी। उसे तो हमें अपनी एडी-चोटीका पसीना बहाकर प्राप्त करना होगा। चाहे कितनी ही निन्दा और निषेध इस आन्दोलनका क्यों न किया जाय, इससे इसका अन्त नहीं हो सकता। वह तो तभी मुमकिन है जब हम खुद ही उस निन्दासे भडक कर अस्थिर चित्त हो उठें और उसे छोड बैठें। इसलिए हमें अपने स्वीकृत कार्यसे कदापि मुंह न मोडना चाहिए। हम तो बस सिर्फ अपने उसी कामपर अटल होकर डटे रहें और विश्वास रखें कि हमारे बिना कोशिश किये, ही संसार अपने आप उसकी ओर झुकेगा। मुझे तो यह बात भी दर असल अखर रही है कि कुछ नवयुवकोंको अपने कामोंसे छुडाकर 'कांग्रेस बुलेटिन' के काममें लगाया जाय। पर हमारे पास तो इस बातका भी कोई लिखित और अधिकारी साधन नहीं है कि प्रति सप्ताह हमारा काम कितना आगे बढा है। इस दशामें यह "कांग्रेस'बुलेटिन" क्या भारतमें हमारे कार्यकर्त्ताओंके लिये तथा क्या हमारे विदेशी मित्रोंके लिए बडे कामकी चीज होगी।

कार्यसमिति इस कार्यके आरम्भके लिए प्राय अधीर हो रही है। इसलिये उसने इस 'बुलेटिन' का काम सब तरहसे

लिए खुद ही अपनी कोई एजेन्सी नहीं रखता तो मेरी दृष्टिमें यह इस बातका सबूत है कि उसे इससे कोई वास्ता नहीं है। कोई १५ महीनोंसे हम काम कर रहे हैं, लन्दनमें हमारी कोई समाचार एजेन्सी नहीं। पर मैं कहनेका साहस करता हू कि १५ महीनेके पहलेसे आज इस विषयमें हमारी हालत खराब नहीं हैं। हमारी हालत इसीलिये और उतने ही दरजे तक अच्छी है जितने दरजेतक हमने खुद भारतमें ही असली काम किया है। ससारमें आज जितने आदमी भारतकी बातोंमें दिलचस्पी लेनेवाले हो गए हैं उतने इससे पहले कभी नही थे। इसलिये उनके प्रति हमारा इतना कर्त्तव्य अवश्य है कि हम सच्ची सच्ची खबरें उनतक पहुचा दें, बस हम अपना फर्ज अदा कर चुके। मेरे सामने इटलीके एक इटालियन पत्रके सम्पादकका पत्र रखा हुआ है जिसमें वे लिखते हैं कि इटलीके लोग भारतके इस आन्दोलनमें कितना गहरा रस लेते हैं और इसलिए इटलीके अखबार भारतकी बातोंका ज्ञान इटली वालोंको करा रहे हैं। इसे मैं कहता हू स्वाभाविक और अपने आप विकास पानेवाली हलचल। पर अगर इस खबरके बलपर हम इटलीमें कोई एजेन्सी खोलकर वहाके लोगोंका चाव अधिक बढाना चाहें तो इससे काम बनानेके बजाय अति करके हम बिगाड ही बैठेंगे। इसलिये बेहतर है कि हम अपनी ही शक्ति और सामर्थ्य पर अपना आधार रखते हुए अपने हिताहितका विचार करें। हमारा बल अपनी कथा खुद ही कह लेगा।

चाहता हू कि वे अपने अपने प्रान्तोंके सदस्योंकी सख्या, राष्ट्रीय मतके अखबारोंके नाम और पते, राष्ट्रीय शिक्षा सस्थाओंकी संख्या और पिछले छ महीनोमें उनकी औसत हाजिरी, प चायतोंकी तादाद तथा असहयोग आन्दोलन सम्बन्धी तमाम बाते लिखकर भेजे ।

कांग्रेसका मजाक

(मार्च २, १६२१)

हमें काग्रेसको मजाक नहीं बना देना चाहिये । म हृदयसे चाहता हू कि प्रत्येक व्यक्ति काग्रेसमैन हो जाय और काग्रेसके प्रस्तावोंको स्वीकार करे । पर मैं यह कभी भी नहीं चाहता कि कोई भी व्यक्ति काग्रेसमैन इसलिये बने कि यह सबसे पुरानी या मर्यादित सस्था है और उसके निर्णयोको जी चाहे माने या न माने । कार्यत प्रत्येक व्यक्तिको अधिक मतके निर्णयोंको स्वीकार करना चाहिये । पर यदि बहुमतका भी निर्णय ठीक न हो तो उसे स्वीकार करना दासताकी निशानी है । इसके अनुसार काग्रेसके निर्णयोंका ख्याल न कर भी मेरी समझमें यदि किसीका विश्वास है कि कौंसिल आशाप्रद सस्था है तो उसे उसमें न जाना पाप है । इसी तरह यदि वकील हृदयसे यह समझता है कि अदालतोंमें न्याय होता है तो केवल काग्रेसकी आज्ञा मान

मुझपर छोड़ दिया है। मैं आशा करता हूं कि पहला 'बुलेटिन अगले सप्ताहमें प्रकाशित हो जायगा और प्रति सप्ताह प्रकाशित हुआ करेगा। बुलेटिन "यङ्ग इण्डिया"के प्रत्येक ग्राहकके पास भेजा जायगा और बराय नामके उसका लागतमात्र मूल्य उनसे लिया जायगा। 'यङ्ग इण्डिया की ग्राहक संख्या पचीस हजारसे अधिक है और दुनियाके प्राय सभी भागोंमें वह जाता हैं। कितने ही अखबारोंके परिवर्त्तनमें वह देश विदेश जाता है। बुलेटिनकी कीमत पीछे बताई जायगी। इस उपायसे महासभाका खर्च भी बच जायगा और बुलेटिनका प्रचार भी खूब होगा। "यङ्ग इण्डिया"में तो मेरे निजी तथा मेरे साथियोंके विचार रहते हैं, पर बुलेटिनमें किसी व्यक्ति विशेषके खयालात न रहेंगे। उसमें खास करके महासभाके कार्यों का ब्यौरा तथा दोनों पक्षोंके अखबारोंकी रायें रहा करेंगी। उसमें खिलाफतका भाग अलग रहेगा जिसमें खिलाफतके कार्यों का विवरण रहा करेगा। इस काममें तभी सफलता मिल सकती है जब महासभा तथा खिलाफतके तमाम कार्यकर्ता इसमें सहायता दें। अतएव जो सज्जन इस कार्यमें दिलचस्पी लेते हों वे अपनी सूचनायें और खबरें 'सम्पादक कांग्रेस बुलेटिन C/o यङ्ग-इण्डिया' को भेजनेकी कृपा करें। इस विषयकी तमाम चिट्ठी पत्रियोंपर 'कांग्रेस बुलेटिनके लिए' ये शब्द जरूर लिखे जाय ताकि 'यङ्ग इण्डिया" की और बुलेटिनकी चिट्ठियोंमें गड़बड़ न हुआ करे। सबसे पहले मैं हर एक प्रान्तीय समितियोंसे

करनी चाहिये। उसीको हम सच्ची स्वतन्त्रता कहते हैं। यही स्वच्छन्द सविनय अवज्ञाका सूत्र है। इसी तरह हम अपनी रक्षा भ्रममूलक उपासनासे कर सकते हैं।

लोकमान्य

(अगस्त ४, १९२०)

लोकमान्य बाल गङ्गाधर तिलक अब संसारमें नहीं हैं। यह विश्वास करना कठिन मालूम होता है कि वे संसारसे उठ गये। हम लोगोंके समयमें ऐसा दूसरा कोई नहीं जिसका जनता पर लोकमान्यके जैसा प्रभाव हो। हजारों देशवासियोंकी उन पर जो भक्ति और श्रद्धा थी वह अपूर्व थी। यह अक्षरशः सत्य है कि वे जनताके आराध्य देव थे, प्रतिमा थे, उनके वचन हजारों आदमियोंके लिये नियम और कानून से थे। पुरुषोंमें पुरुषसिंह संसारसे उठ गया। केसरीकी घोर गर्जना विलीन हो गई।

देशवासियों पर उनका इतना प्रभाव होनेका क्या कारण था? मैं समझता हूं इस प्रश्नका उत्तर बड़ा ही सहज है। उनकी स्वदेश भक्ति ही उनकी इन्द्रियवृत्ति थी। वे स्वदेश प्रेमके सिवा दूसरा धर्म नहीं जानते थे।

जन्मसे ही वे प्रजासत्तावादी थे। बहुमतकी आज्ञा पर इतना अधिक विश्वास करते थे कि मुझे उससे भयभीत होना पड़ता

कर उसे अदालतोंका त्याग करना पाप है। भेडिया धसानके माने स्वतन्त्रता नहीं है। स्वतन्त्रतामें व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और मत प्रकाश पर बडा जोर दिया जाता है। इसलिये मेरा विश्वास है कि अल्पमत स्वतन्त्र प्रेरणाके अनुसार काम कर सकता है यदि वह काग्रेसके नाम पर काम नहीं करता। वकालत करते हुए वकील काग्रेसमैन हो सकते हैं पर उन्हें असहयोगी नहीं कह सकते और न वे अखिल भारतवर्षीय काग्रेस कमेटीके सदस्य ही हो सकते हैं। उसी तरह जो लोग खद्दर धारण नहीं करते, जिन्होंने उपाधियोंका त्याग नहीं किया है और जो कौंसिलोंके पक्षपाती हैं, वे भी कांग्रेसमैन हो सकते हैं पर असहयोगी नहीं कहे जा सकते।

काग्रेसमैन काग्रेसके प्रस्तावोंसे वाध्य नही है। साथ ही यदि वह काग्रेस विधानके प्रतिकूल काम नही करता तथा काग्रेसके नाम पर काम नहीं करता तो वह और भी आगे बढ़ सकता है। मान लीजिये कि काग्रेसने जो नियन्त्रण रखा है वह किसी एक प्रान्तके अनुकूल नहीं है तो यदि वह प्रान्त अपनी देखभाल स्वय कर सकता है तो वह अपनी जिम्मेदारी पर आगे बढ़ सकता है। काग्रेस सबके अनुकूल बातकी अधिकाधिक चेष्टा रखती है पर इसमें संभावना है कि कोई बात किसी प्रान्तके अनुकूल न हो। वह प्रान्त अपने भरोसे पर काग्रेसके कार्यमें किसी तरहकी बाधा पहुंचाये बिना अपनी जिम्मेदारीपर अपना कार्यक्रम चला सकता है, इसके लिये उसे काग्रेसकी निन्दाकी परवा नहीं

हुआ था। वे काग्रेस पण्डालसे तुरन्त ही लौटे थे। हिन्दीके सम्बन्धमें उन्होंने अपने शान्त भाषणमें जो कहा उससे बडी तृप्ति हुई। भाषणमें आपने देशी भाषाओंपर खयाल रखनेके कारण अङ्गरेजोंकी बडी प्रशंसा की थी। विलायत जाने पर, यद्यपि आपको अङ्गरेज जूररोंके विषयमें बुरा ही अनुभव हुआ तथापि आपका ब्रिटिश प्रजासत्तामें बडा ही दृढ विश्वास हो गया। आपने यहा तक कहा था कि पञ्जाबके अत्याचारोंका चित्र "सिनामेटोग्राफ" यन्त्र द्वारा ब्रिटिश प्रजासत्ता-वादियोंको दिखाना चाहिये। मैं ने यहा इस बातका उल्लेख इसलिये नहीं किया कि मैं भी ब्रिटिश प्रजासत्ता पर विश्वास रखता हू (जो मैं नहीं रखता, पर यहा दिखानेके लिये कि वे अङ्गरेज जातिके जातिके प्रति घृणाका भाव नहीं रखते थे। पर वे भारत और साम्राज्यकी अवस्थाको इस पिछडी अवस्थामें न तो रखना ही चाहते थे और न रख सकते थे।

वे चाहते थे कि शीघ्र ही भारतसे समानताका भाव रखा जाय और इसे वे देशका जन्म-सिद्ध अधिकार समझते थे। भारतको स्वतन्त्रताके लिये उन्होंने जो लडाई की उसमें सरकारको छोड नहीं दिया। स्वतन्त्रताके इस युद्धमें उन्होंने न तो किसीकी मुरौव्वत की और न किसीकी प्रतीक्षा ही की। मुझे आशा है अङ्गरेज लोग उस महापुरुषको पहचानेंगे जिनकी भारत पूजा करता था।

भारतकी भावी सन्ततिके हृदयमें भी यही भाव बना रहेगा

था। पर यही वह बात है जिससे जनता पर उनका इतना अधिक प्रभाव था। स्वदेशके लिये वे जिस इच्छा-शक्तिसे काम लेते थे वह बड़ी ही प्रबल थी। उनका जीवन वह ग्रन्थ है जिसे खोलनेकी भी जरूरत नहीं—वह खुला हुआ ग्रन्थ है। उनका खाना-पीना और पहनावा बिलकुल साधारण था। उनका व्यक्तिगत जीवन बड़ा ही निर्मल और बेदाग है। उन्होंने अपनी आश्चर्य जनक बुद्धि शक्तिको स्वदेशको अर्पण कर दिया था। जितनी स्थिरता और दृढ़ताके साथ लोकमान्यने स्वराज्यकी शुभ वार्ताका उपदेश किया उतना और किसने नहीं किया। इसी कारण स्वदेशवासी उन पर अटूट विश्वास रखते थे। साहसने कभी उनका साथ नहीं छोड़ा। उनकी आशावादिता अदम्य थी। उनको आशा थी कि जीवन कालमें ही मै सम्पूर्ण रूपसे स्वराज्य स्थापित हुआ देख सकूंगा। यदि वे इसे नहीं देख सके तो उनका दोष नहीं है। उन्होंने निस्सन्देह स्वराज्य-प्राप्तिकी अवधि बहुत कम कर दी है। यह अब हम लोगोंके लिये है जो अभी तक जी रहे हैं कि अपने द्विगुणित उद्योगसे उसको जहा तक शीघ्र हो सत्य कर दिखावें।

लोकमान्य अधिकारी वर्ग या अंग्रेजी राज्यसे घृणा नहीं करते थे। मैं अङ्गरेजोंको ऐसी भूल धारण करनेसे मना करता हू कि लोकमान्य अङ्गरेजोंके शत्रु थे।

कलकत्ता कांग्रेसके समय हिन्दीके राष्ट्रभाषा होनेके सम्बन्धमें उन्होंने जो कहा था उसे सुननेका अवसर मुझे भी प्राप्त

हुआ था। वे काग्रेस-पण्डालसे तुरन्त ही लौटे थे। हिन्दीके सम्बन्धमें उन्होंने अपने शान्त भाषणमें जो कहा उससे बडी तृप्ति हुई। भाषणमें आपने देशी भाषाओंपर खयाल रखनेके कारण अङ्गरेजोंकी बडी प्रशंसा की थी। विलायत जाने पर, यद्यपि आपको अङ्गरेज जूररोंके विषयमें बुरा ही अनुभव हुआ तथापि आपका ब्रिटिश प्रजासत्तामें बडा ही दृढ विश्वास हो गया। आपने यहा तक कहा था कि पञ्जाबके अत्याचारोंका चित्र "सिनामेटोग्राफ" यन्त्र द्वारा ब्रिटिश प्रजासत्ता वादियोंको दिखाना चाहिये। मैं ने यहा इस बातका उल्लेख इसलिये नहीं किया कि मैं भी ब्रिटिश प्रजासत्ता पर विश्वास रखता हू (जो मैं नहीं रखता, पर यहा दिखानेके लिये कि वे अङ्गरेज जातिके जातिके प्रति घृणाका भाव नहीं रखते थे। पर वे भारत और साम्राज्यकी अवस्थाको इस पिछडी अवस्थामें न तो रखना ही चाहते थे और न रख सकते थे।

वे चाहते थे कि शीघ्र ही भारतसे समानताका भाव रखा जाय और इसे वे देशका जन्म सिद्ध अधिकार समझते थे। भारतको स्वतन्त्रताके लिये उन्होंने जो लडाई की उसमें सरकारको छोड नहीं दिया। स्वतन्त्रताके इस युद्धमें उन्होंने न तो किसीकी मुरौव्वत की और न किसीकी प्रतीक्षा ही की। मुझे आशा है अङ्गरेज लोग उस महापुरुषको पहचानेंगे जिनकी भारत पूजा करता था।

भारतकी भावी सन्ततिके हृदयमें भी यही भाव बना रहेगा

कि लोकमान्य नवीन भारतके बनानेवाले थे। ये तिलक महाराजका सम्मान यह कह कर स्मरण करेंगे कि एक पुरुष था जो हमारे लिये ही जन्मा और हमारे लिये ही मरा। ऐसे महापुरुषको मरा कहना ईश्वरकी निन्दा करना है। उनका स्थायी तत्त्व सदाके लिये हम लोगोंमें व्याप्त हो गया। आओ हम भारतके एक मात्र लोकमान्यका अविनाशी स्मारक अपने जीवनमें उनके साहस, उनकी सरलता उनके आश्चर्य-जनक उद्योग और उनकी स्वदेश-भक्तिको सीखकर बनावें। ईश्वर उनकी आत्माको शान्ति प्रदान करे।

पूजाका अधिकार

विना अधिकार जो काम किया जाता है वह सफल नहीं होता। यदि धोबी बाल बनाने बैठे तो सिरको लहू-लुहान कर डाले। यदि वकील वैद्यक करने लगे तो रोगी यमराजके घर पहुंच जाय। नङ्गा मन्दिरमें जा भगवानका प्रसाद नहीं पा सकता। विना उजूके पढ़ी हुई नमाजको खुदा कुबूल नहीं करता।

इसी प्रकार यदि तिलक महाराजकी पूजा हम विना योग्यता प्राप्त किये करें तो वह उन्हें कभी नहीं पहुंच सकती। जिसे भारत देश पसन्द नहीं जो भारतकी हवासे घबराता है, जिसे भारतके रस्मरिवाज जङ्गली दिखाई देते हैं जो हिन्दुस्तानी खान पान-

को देखकर मुंह बनाता है हिन्दुस्तानी पहनावा जिसे काटने लिये दौडता हो, वह तिलक महाराजकी पूजा कैसे करे ? इसक पूजाको क्या तिलक महाराजकी आत्मा कुबूल करेगी ? भग वान तो उसी पर पसन्द होते हैं जो भक्तिपूर्वक, पत्रफल, पुष्प पानी जो हो सके, चढाता है, और भक्तिका अर्थ है भावपूर्व अनुकरण।

पुजारीकी परीक्षाका समय आ पहुचा है। आज लोकमान्यक 'पुण्यतिथि' का उत्सव हम किस तरह मनायेंगे ? ब्रिटिश माल सामानको उतार फेंके गे ?

मालवीय परिवार

(जनवरी १२, १६२२)

यह असहयोग सग्राम अपने ढङ्गका निरालाही है। कितनेही परिवारोंमें इसके बदौलत मत भेद और क्रांतिभेद उत्पन्न हो गया है। यह इसका सबसे अद्भुत प्रभाव है। और तिसमें भी मालवीय परिवारमें इसने जो द्विधा-भाव उत्पन्न कर दिया है वह तो विशेष रूपसे उल्लेख योग्य है। मेरी रायमें तो यह भारत वासियोंके लिये सहिष्णुता और सविनय कानून भङ्गका खासा-वस्तु पाठ ही है। श्रीमालवीयजीकी सहिष्णुता तो वास्तवमें अनुपम है। मैं इस बातको जानता हू कि वे जेलको निमन्त्रण

देनेके खिलाफ हैं। मैं यह भी जानता हूं कि यदि वे उसके कायल होते तो वे ऐसे आदमी नहीं हैं जो उससे दुम दबाते और जब उनके दुःखकी मात्रा हद दर्जेतक पहुंच जायगी और जब कि मेरी तरह उनका भी विश्वास ब्रिटिश न्यायसे पूरा पूरा उठ जायगा तब यदि वे जेलको निमन्त्रण देनेमें सबसे आगे बढ़ जायँ तो मुझे जरा भी आश्चर्य न होगा। परन्तु यद्यपि वे आज स्वयं सविनय कानून भंगके खिलाफ हैं तथापि उन्होंने कभी उन लोगोंके भी संकल्पोंमें हस्तक्षेप नहीं किया जो उनके आत्मीय हैं और जिनपर अपने प्रेम अथवा बड़े बूढ़े होनेके कारण उनकी अदम्य सत्ता है, बल्कि इसके विपरीत उन्होंने अपने पुत्रोंको अपनी अपनी इच्छाके अनुसार बरतनेकी पूरी आजादी दे दी है। गोविन्दके सविनय कानून-भंगका उदाहरण मेरी दृष्टिमें एक संग्रहणीय रत्नके सदृश है। पण्डितजीने मृदुल मधुर ढंगसे अपने उस वीर पुत्रको इस मार्गसे हटाने का बहुत-कुछ प्रयत्न किया। गोविन्दने भी अन्ततक अपने पूज्य पिताकी इच्छाके अनुसार चलनेका भरसक प्रयत्न किया। उसने ईश्वरसे प्रार्थना की कि मुझे मार्ग बता। वह परस्पर विरुद्ध कर्तव्योंकी कैंचीमें फँस गया। नेहरू परिवारकी गिरफ्तारीका गोविन्द पर बड़ा असर हुआ और अपने विशालहृदय पिताजीकी आशीष प्राप्त करके उसने इस रणक्षेत्रमें कूद पड़नेका निश्चय किया। जेलोंने भी गोविन्दसे बढ़कर हर्ष शायद होगा। यह साहसके है सविनय

कानून भंगकी कृतिके द्वारा गोविन्दने अपने देशकी तरह अपने पू० पिताजीके प्रति भी अपनी कर्तव्य परायणता सिद्ध की है। बालकोंके कर्तव्य परायण सविनय कानून भंगमें गोविन्दकी यह कृति हमारे समयके लिये एक नमूना है। मुझे यकीन है कि इससे पिता पुत्रके बीच किसी तरहकी अनबन नहीं है। बल्कि शायद मालवीयजी, गोविन्दके जेलको स्वीकार करनेके पहलेकी अपेक्षा, अब उसके विषयमें अधिक अभिमान रखते होंगे। ऐसे ही सत्ययुक्त कार्योंके द्वारा मुझे इस युद्धको धार्मिक प्रकृतिका प्रमाण मिलता है। गोविन्दने अदालतमें जो साहस पूर्ण बयान पेश किया है उसे पाठकोंके सामने उपस्थित करनेके मोहको मैं नहीं रोक सकता—

"आप पहले ही फैसलेका निश्चय करके यहां बैठे हैं। यह कहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है कि आपका उद्देश अपराधीको दण्ड देना नहीं है, किन्तु अपने क्षय मुख बलसे आप एक राष्ट्र की कानूनी आकाक्षाओंको कुचलना चाहते हैं। इसलिये मैं आपके कानूनको नहीं मानता हूं और आपसे एक शब्द भी कहनेकी मेरी इच्छा नहीं है। जैसे आप हमें कुचलने पर तुले हुए हैं, वैसे हम भी आप लोगोंको, संसारको तथा अपनेको यह दिखा देना चाहते हैं कि, ३२ करोड भारतवासियोंके आत्मिक-बलरूपी शस्त्रसे आपके सरकारका शस्त्र, पाशविक बल जरा भी मजबूत नहीं है। इस विश्वासके आधारपर मैं आपसे तथा आपकी सरकारसे यह कह देना चाहता हूं कि, मेरे ऐसे साधा-

देनेके खिलाफ हैं। मैं यह भी जानता हूं कि यदि वे उसके कायल होते तो वे ऐसे आदमी नहीं हैं जो उससे दुम दबाते और जब उनके दु:खकी मात्रा हद दर्जेतक पहुंच जायगी और जब कि मेरी तरह उनका भी विश्वास ब्रिटिश न्यायसे पूरा पूरा उठ जायगा तब यदि वे जेलको निमन्त्रण देनेमें सबसे आगे बढ़ जायँ तो मुझे जरा भी आश्चर्य न होगा। परन्तु यद्यपि वे आज स्वयं सविनय कानून-भंगके खिलाफ हैं तथापि उन्होंने कभी उन लोगोंके भी सकल्पोंमें हस्तक्षेप नहीं किया जो उनके आत्मीय हैं और जिनपर अपने प्रेम अथवा बड़े बूढ़े होनेके कारण उनकी अदम्य सत्ता है, बल्कि इसके विपरीत उन्होंने अपने पुत्रोंको अपनी अपनी इच्छाके अनुसार बरतनेकी पूरी आजादी दे दी है। गोविन्दके सविनय कानून भगका उदाहरण मेरी दृष्टिमें एक स्पृहणीय रत्नके सदृश है। पण्डितजीने मृदुल मधुर ढंगसे अपने उस वीर पुत्रको इस मार्गसेहटाने का बहुत-कुछ प्रयत्न किया। गोविन्दने भी अन्ततक अपने पूज्य पिताकी इच्छाके अनुसार चलनेका भरसक प्रयत्न किया। उसने ईश्वरसे प्रार्थना की कि मुझे मार्ग बता। वह परस्पर विरुद्ध कर्तव्योंकी कैंचीमें फँस गया। नेहरू परिवारको गिरफ्तारीका गोविन्द पर बड़ा असर हुआ और अपने विशालहृदय पिताजीकी आशीष प्राप्त करके उसने इस रणक्षेत्रमें कूद पड़नेका निश्चय किया। जेलोंने भी गोविन्दसे बढ़कर हर्ष पूर्ण हृदय शायद किसीका न देखा होगा। यह साहसके साथ कहा जा सकता है कि अपनी इस सविनय

कानून भंगकी कृतिके द्वारा गोविन्दने अपने देशकी तरह अपने पू० पिताजीके प्रति भी अपनी कर्तव्य परायणता सिद्ध की है। बालकोंके कर्तव्य परायण सविनय कानून भंगमें गोविन्दकी यह कृति हमारे समयके लिये एक नमूना है। मुझे यकीन है कि इससे पिता-पुत्रके बीच किसी तरहकी अनबन नहीं है। बल्कि शायद मालवीयजी, गोविन्दके जेलको स्वीकार करनेके पहलेकी अपेक्षा, अब उसके विषयमें अधिक अभिमान रखते होंगे। ऐसे ही सत्ययुक्त कार्योंके द्वारा मुझे इस युद्धको धार्मिक प्रकृतिका प्रमाण मिलता है। गोविन्दने अदालतमें जो साहस पूर्ण बयान पेश किया है उसे पाठकोंके सामने उपस्थित करनेके मोहको मैं नहीं रोक सकता—

"आप पहले ही फैसलेका निश्चय करके यहा बैठे हैं। यह कहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है कि आपका उद्देश अपराधीको दण्ड देना नहीं है, किन्तु अपने क्षय मुख बलसे आप एक राष्ट्र की कानूनी आकांक्षाओंको कुचलना चाहते हैं। इसलिये मैं आपके कानूनको नहीं मानता हूं और आपसे एक शब्द भी कहनेकी मेरी इच्छा नहीं है। जैसे आप हमें कुचलने पर तुले हुए हैं, वैसे हम भी आप लोगोंको, संसारको तथा अपनेको यह दिखा देना चाहते हैं कि, ३२ करोड भारतवासियोंके आत्मिक-बलरूपी शस्त्रसे आपके सरकारका शस्त्र, पाशविक बल जरा भी मजबूत नहीं है। इस विश्वासके आधारपर मैं आपसे तथा आपकी सरकारसे यह कह देना चाहता हूं कि, मेरे ऐसे साधा-

रण कार्य-कर्त्ता तथा बड़से बड़े नेताओंको पकड़नेसे हमारा कार्य बन्द नहीं हो सकता। आप हमारे पार्थिव शरीरपर अवश्य अपना अधिकार जमा सकते हैं, लेकिन हमारी आत्मा और हमारी दृढ़ प्रतिज्ञा, जो हमें दिन प्रति दिन स्वराज्यके समीप पहुंचा रही है, उसे पकड़ना आपके अधिकारके बाहर है। जिन भावोंसे प्रेरित होकर आज हम खुशी खुशी यहां आ रहे हैं, वह केवल हमारा ही नहीं है वरन् वह समस्त देशका है। हमारे पार्थिव शरीरको कैद कर आप मुझे और मेरे देश-भाइयोंको अधिक नैतिक बल सञ्चय करनेमें सहायता कर रहे हैं। यदि अपनी अधोमुख नीतिको कुछ कालके लिए आपने और जारी रखनेकी कृपा की तो, मैं आपको तथा और लोगों-को यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि, हम लोग वर्तमान शासन प्रणालीका नाश करेंगे और अपने देशमें स्वतन्त्र और सुखी होकर रहेंगे। इस आशा पर कि, आप ऐसा ही करेंगे और हमारी अमूल्य सहायता करेंगे, मैं अपनी तथा अपने देश-भाइयोंकी ओरसे आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूं।"

मैं पिता पुत्र दोनोंको बधाई देता हूं। मैं पाठकों को भी निमन्त्रण देता हूं कि वे इसमें मेरा साथ दें, देशको दोनोंका अभिमान होना चाहिए। और जहांके युवा लोग गोविन्दकी तरह साहस दिखाते हैं वहां युद्धका वाञ्छित फल मिले बिना रही नहीं सकता।

स्वीकारोक्ति

(जुलाई १३, १९२२)

मेरे पास एक गुमनाम पत्र आया है। उसमें मेरी प्रशंसा करते हुए लेखकने लिखा है—"आपने जिस कामको उठाया है वह लोकमान्यको अतिशय प्रिय था। मालूम होता है उनकी आत्मा आपमें विराजती है। आपको साहस नहीं छोड़ना चाहिये। काम करते जाइये स्वराज्य आपका है। पर आपने अपनेको गोखलेका शिष्य किस तरह माना है? यह लिखकर आपने अपनी अप्रतिष्ठा की है।

अच्छा हो यदि लेखक गुमनाम पत्र लिखनेकी बुरी आदत छोड़ दें। यदि हमलोग स्वराज्यके लिये वाकई तत्पर हैं तो हमें उचित ही है कि भीरुता त्यागकर साहसीकी भांति अपना मत प्रगट करें। चूंकि पत्र सार्वजनिक दृष्टिसे महत्व पूर्ण है इसलिये इसका उत्तर दे देना आवश्यक प्रतीत होता है। मैं लोकमान्यका अनुयायी नहीं हूं। उनके करोड़ों देशवासियोंकी तरह मैं उनके दृढ़ साहस, असीम पाण्डित्य, और अगाध देशप्रेमकी हृदयसे प्रशंसा करता हूं। सबसे अधिक आदर मैं उनके पवित्र और निःस्वार्थ जीवनकी करता हूं। वर्तमान समाजके मनुष्योंमें उन्होंने जनताकी दृष्टि अपनी

ओर सबसे अधिक आकृष्ट की है। उन्होंने हमलोगोंके हृदयोंमें स्वराज्यका वोजारोपण किया। वर्तमान शासनकी बुराइयोंको जितना अधिक लोकमान्यने समझा था उतना अधिक और किसीने नहीं। और मैं उनके सन्देशको भारतकी झोपड़ियोंतक उसी तर ाना चाहता हूं और फैलानेका यत्न कर रहा हू जिस तरह कि उनका अच्छेसे अच्छा शागिर्द। पर मेरे और उनके तरीकेमें भेद है। यही कारण है कि अभीतक चन्द महाराष्ट्रके नेता मेरे साथ एक मत नहीं हो सके हैं। पर मेरा यह भी दृढ़ मत है कि लोकमान्यको मेरे तरीकेपर अविश्वास नहीं था। मेरे ऊपर उनका दृढ विश्वास था। अपनी मृत्युके कोई दस दिन पहले अपने अनेक मित्रोंके सामने उन्होंने कहा था कि आपका तरीका सबसे अच्छा है, यदि जनताको समझाकर आप अपने साथ कर सकें। लेकिन उन्हें इस बातका सन्देह था कि जनता मेरे तरीकेको समझ सकेगी। पर मैं दुसरा तरीका जानता ही नहीं। मैं यही चाहता हू कि परीक्षाके समय देश अपनी योग्यता दिखलावे कि उसने अहिंसात्मक असहयोगके तत्वको समझ लिया है। मैं अपनी अन्य अयोग्यताओंको भी जानता हू। मैं पाण्डित्यका दावा नहीं करता। मेरेमें उनके समान संगठन शक्ति भी नहीं है। मेरे कार्य सचालनके लिये शागिर्द भी नहीं हैं और साथ ही बीस वर्षतक विदेशोंमें रहनेके कारण भारतका मुझे अनुभव भी उतना नहीं है जितना

लोकमान्यको था । हमलोगोंमें दो बातोंमें समता थी,—देश प्रेम तथा स्वराज्य—यह दोनोंके हृदयमें एक भावसे विद्यमान था। इसलिये मैं इस गुमनाम पत्रके लेखकको बतला देना चाहता हूं यद्यपि लोकमान्यकी स्मृतिके लिये मेरे हृदयमें किसीसे कम आदर या मान नहीं है और स्वराज्यके प्रतिपादनमें मैं उनके उत्तमसे उत्तम शिष्यके साथ आगे बढ़ता रहूंगा। मैं जानता हूं कि उनकी सबसे सच्ची उपासना यही है कि भारतको जल्दीसे जल्दी स्वराज्य मिल जाय। केवलमात्र इसीसे उनकी आत्माको शान्ति मिल सकती है।

शिष्य होना परम पवित्र पर व्यक्तिगत भाव है। मैंने १८८८ में दादाभाईके चरणोंमें अपनेको समर्पित किया पर मेरे आदर्शसे वे बहुत दूर थे। मैं उनके पुत्र स्थानीय हो सकता था, उनका शागिर्द नहीं हो सकता था। शिष्यका दर्जा पुत्रसे ऊंचा है। शिष्य पुत्र रूपसे दूसरा जन्म ग्रहण करता है। शिष्य होना अपनी स्वकीय प्रेरणासे समर्पित करना है। १८९६ में दक्षिण अफ्रीकाके सबन्धमें भारतके सभी प्रधान नेताओंसे मिला। जस्टिस रानाडेसे मुझे भय लगता था। उनके सामने मुझे ध्यान करनेका भी साहस नहीं होता था। बद्रुद्दीन तैयबजी पिताकी तरह प्रतीत हुए। उन्होंने मुझे सलाह दी कि फिरोजशाह मेहता और रानाडेके परामर्शसे काम करो। सर फिरोजशाह तो हमारे सरक्षक बन गये। इसलिये उनकी आज्ञा मुझे शिरोधार्य थी। जो कुछ वे

और सबसे अधिक आकृष्ट की है। उन्होंने हमलोगोंके हृद-योंमें स्वराज्यका बीजारोपर्ण किया। वर्तमान शासनकी बुराइ-योंको जितना अधिक लोकमान्यने समझा था उतना अधिक और किसीने नहीं। और मैं उनके सन्देशको भारतकी झोप-डियोंतक उसी तर ना चाहता हूं और फैलानेका यत्न कर रहा हू जिस तरह कि उनका अच्छेसे अच्छा शागिर्द। पर मेरे और उनके तरीकेमें भेद है। यही कारण है कि अभी-तक चन्द महाराष्ट्रके नेता मेरे साथ एक मत नहीं हो सके हैं। पर मेरा यह भी दृढ मत है कि लोकमान्यको मेरे तरीकेपर अविश्वास नहीं था। मेरे ऊपर उनका दृढ़ विश्वास था। अपनी मृत्युके कोई दस दिन पहले अपने अनेक मित्रोंके सामने उन्होंने कहा था कि आपका तरीका सबसे अच्छा है, यदि जनताको समझाकर आप अपने साथ कर सकें। लेकिन उन्हें इस बातका सन्देह था कि जनता मेरे तरीकेको समझ सकेगी। पर मैं दूसरा तरीका जानता ही नहीं। मैं यही चाहता हूं कि परीक्षाके समय देश अपनी योग्यता दिखलाये कि उसने अहिंसात्मक असहयोगके तत्वको समझ लिया है। मैं अपनी अन्य अयोग्यताओंको भी जानता हूं। मैं पाण्डित्यका दावा नहीं करता। मेरेमें उनके समान संगठन शक्ति भी नहीं है। मेरे कार्य संचालनके लिये शागिर्द भी नहीं हैं और साथ ही बीस वर्षतक विदेशोंमें रहनेके कारण भारतका मुझे अनुभव भी उतना नहीं है जितना

आप जानते हैं कि यहा दलबन्दी है। इसलिये ऐसा सभापति चाहिये जो किसी दल विशेषका न हो। यदि इसके लिये आप डाक्टर भण्डारकरसे मिलें तो उत्तम हो।" मैंने उनकी सलाह स्वीकार की और लौट आया। सिवा इसके कि स्नेहमय मिलापके भावका प्रदर्शन करके उन्होंने मेरी घबराहट दूर की, नहीं तो लोकमान्यका उस समय मुझपर कोई अच्छा प्रभाव नही पडा। वहासे मैं श्रीयुत गोखलेके पास गया और तब डाक्टर भण्डारकरके पास गया। डाक्टर भण्डारकरने मेरा उसी तरह स्वागत किया जिस तरह गुरु शिष्यका करता है।

मिलते ही उन्होंने मुझसे कहा, "आप बडे उत्साही और तत्पर कार्यकर्ता प्रतीत होते हैं, नहीं तो इतनी गर्मीमें मुझसे कोई भी मिलने नहीं आता। मैंने सार्वजनिक सभाओंमें इधर जाना छोड दिया है। पर आपने जिन दयनीय शब्दोंमें अफ्रीकाकी दशाका वर्णन किया है, उससे मुझे लाचार होकर यह पद स्वीकार करना पडता है।

उनके चेहरेसे विद्वत्ता टपक रही थी। मेरे हृदयमें श्रद्धाका ज्वार उमड आया। पर गुरुभक्तिका भाव मेरे हृदयमें फिर भी न भरा। वह हृदय सिहासन उस समय भी खाली रह गया। मुझे अनेक धीर वीर मिले। पर राजाकी पदवीतक कोई न पहुच सका।

पर जिस समय मैं श्रीयुत गोखलेसे मिलने गया, बातें

कहते मैं चुपचाप स्वीकार करता। उन्होंने मुझसे कहा:— "२६ सितम्बरको सार्वजनिक सभामें तुम्हें भाषण करना होगा।" मैंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। २५ सितम्बरको मुझे उनसे मिलना था । मैं उनके पास गया। उन्होंने मुझसे पूछा —"क्या तुमने अपना भाषण लिखकर तैयार कर डाला है?" मैंने उत्तर दिया, "जी, नहीं।"

उन्होंने कहा, "इस तरह काम नहीं चलेगा। क्या आज रातभरमें लिखकर तैयार कर सकते हो।" इतना कहकर उन्होंने अपने मुंशीसे कहा "तुम मिस्टर गांधीके साथ जाओ और व्याख्यान लिखवाकर ले आओ और इसे तुरन्त छपवा डालो और फौरन एक प्रति मेरे पास भेज दो।" इतना कहनेके बाद उन्होंने मुझसे कहा, "लम्बी चौड़ी स्पीच मत लिखना। बम्बईके नागरिक देरतक नहीं ठहर सकते।" मैंने चुपचाप स्वीकार कर लिया।

बम्बईके उस शेरने मुझे आज्ञा पालनका मर्म सिखाया। उन्होंने मुझे अपना शागिर्द नहीं बनाया। उन्होंने आजमाइश भी नहीं की।

वहांसे मैं पूना गया। मैं एकदम अजनबी था। जिनके यहा मैं टिका था वे मुझे पहले पहल, लोकमान्य तिलकके पास ले गये। जिस समय मैं उनसे मिला वे अपने साथियोंसे घिरे बैठे थे। उन्होंने मेरी बातें सुनीं और कहा, "आपका भाषण सार्वजनिक सभामें होना जरूरी है। पर

आप जानते हैं कि यहा दलबन्दी है। इससे ऐसा सभापति चाहिये जो किसी दल विशेषका न हो। यदि इसके लिये आप डाक्टर भण्डारकरसे मिलें तो उत्तम हो।" मैंने उनकी सलाह स्वीकार की और लौट आया। सिवा इसके कि स्नेहमय मिलापके भावका प्रदर्शन करके उन्होंने मेरी घबराहट दूर की, नहीं तो लोकमान्यका उस समय मुझपर कोई अच्छा प्रभाव नही पडा। यहासे मैं श्रीयुत गोखलेके पास गया और तब डाक्टर भण्डारकरके पास गया। डाक्टर भण्डारकरने मेरा उसी तरह स्वागत किया जिस तरह गुरु शिष्यका करता है।

मिलते ही उन्होंने मुझसे कहा, "आप बडे उत्साही और तत्पर कार्यकर्ता प्रतीत होते हैं, नहीं तो इतनी गर्मीमें मुझसे कोई भी मिलने नहीं आता। मैंने सार्वजनिक सभाओंमें इधर जाना छोड दिया है। पर आपने जिन दयनीय शब्दोंमें अफ्रीकाकी दशाका वर्णन किया है, उससे मुझे लाचार होकर यह पद स्वीकार करना पडता है।

उनके चेहरेसे विद्वत्ता टपक रही थी। मेरे हृदयमें श्रद्धाका ज्वार उमड आया। पर गुरुभक्तिका भाव मेरे हृदयमें फिर भी न भरा। वह हृदय सिंहासन उस समय भी खाली रह गया। मुझे अनेक धीर वीर मिले। पर राजाकी पदवीतक कोई न पहुच सका।

पर जिस समय मैं श्रीयुत गोखलेसे मिलने गया, बातें

पश्चात बदल गई। मैं नहीं कह सकता कि इसका क्या कारण था। मैं उनके घरपर मिलने गया। यह मिलन ठीक उसी प्रकार था जैसा, दो चिर विछुड़े मित्रों या माता और पुत्रका होता है। उनकी नम्र आकृति देखकर मेरा हृदय शान्त हुआ। दक्षिण अफ्रिका तथा मेरे सम्बन्धमें उन्होंने जिस तरह पूंछताछ की उससे मेरा हृदय श्रद्धासे भर गया। उनसे विदा होते समय मैंने अपने दिलमें कहा "वस मेरे मनका आदमी मिल गया।" उसी समयसे श्रीयुत गोखले मेरे हृदयसे अलग न हो सके। १९०१ में दूसरी बार दक्षिण अफ्रिकासे लौटा। इस बार मेरी घनिष्टता और भी प्रगाढ़ हो गई। उन्होंने अपने हाथमें मेरा हाथ लेकर पूछना शुरू किया, "किस तरह रहते हो, क्या कपड़ा पहनते हो, भोजन कैसा होता है।" मेरी माता भी इतनी तत्पर नही थी। मेरे और उनके बीच कोई अन्तर नहीं था। यह चक्षुराग था अर्थात् प्रथम दर्शनसे ही हृदयमें प्रगाढ़ प्रेमका अङ्कुर जम गया था। १९१३में इसे कड़ी परीक्षामें उतरना पड़ा। उस समय मुझे मालूम हुआ कि उनमें सभी गुण वर्तमान हैं। चाहे इसके पहले उनमें वे सब गुण न रहे हों, पर इसकी मुझे कोई परवा नहीं। मेरे लिये उतना ही काफी था कि मुझे उनमें कोई दोष नहीं दिखलाई दिये। राजनैतिक क्षेत्रमें वे मुझे सबसे उत्तम व्यक्ति प्रतीत हुए। पर इससे यह न समझना चाहिये कि उनमें और मुझमें मतभेद नहीं था। सामाजिक नियमोंमें मेरा उनका

१६०१ तक मतभेद रहा। पश्चिमी सभ्यताके प्रभावपर भी हमलोगोंका मतभेद था। अहिंसापर मेरा जो अटल विश्वास था उनसे भी उनका मतभेद था। पर इससे हमलोगोंमें किसी तरहका अन्तर नहीं आ सका। ये सब बातें किसी तरहका मतभेद नहीं उपस्थित कर सकीं। यदि आज वे जीते रहते तो क्या होता, यह कहना व्यर्थ है। मैं जानता हूं कि मैं उनकी आज्ञाका पालन करता होता। मैंने इसे इसलिये लिखा है कि उस गुमनाम पत्रमें शागिर्दी सम्बन्धी बातोंसे मुझे हार्दिक पीड़ा हुई। क्या मुझपर इस बातका दोषारोपण किया जा सकता है कि मैंने इस सम्बन्धको स्वीकार करनेमें देर की। इस समय जब कि लोग यह कह रहे हैं कि मैं स्वर्गीय गोखलेके दलसे एकदम विरुद्ध हो गया हूं तो मुझे उस पवित्र सम्बन्धको व्यक्त कर देना नितान्त आवश्यक था।



आशावाद

(अक्तूबर २८, १९२१

आशावाद आस्तिकता है। सिर्फ नास्तिक ही निराशावादी हो सकता है। आशावादी ईश्वरका डर मानता है, विनयपूर्वक अपना अन्तर नाद सुनता है, उसके अनुसार बरतता है और मानता है कि 'ईश्वर जो करता है वह अच्छेके ही लिए करता है।'

निराशावादी कहता है कि 'मैं करता हूं,' अगर सफलता न मिले तो अपनेको बचाकर दूसरे सब लोगोंके मत्थे दोष मढता है, भ्रमवश कहता है कि 'किसे पता, ईश्वर है या नहीं' और खुद अपनेको भला और दुनियाको बुरा मानकर कहता है कि मेरी किसीने कद्र नहीं की। एवं अन्तको आत्मघात कर लेता है। और यदि न करे तो भी मुर्देकी तरह जीवन बिताता है।

आशावादी प्रेममें मगन रहता है। किसीको अपना दुश्मन नहीं मानता। इससे वह निडर होकर जङ्गलोंमें और गावोंमें सैर करता है। भयानक जानवरों तथा ऐसे जानवरों जैसे मनुष्योंसे भी वह नहीं डरता, क्योंकि उसकी आत्माको न तो साप काट सकता है और न पापी खजर ही छेद सकता है।

शरीरको तो वह चिन्ता ही नहीं करता, क्योंकि वह सं
कायाको काचकी बोतल समझता है। वह जानता है कि
एक न एक दिन तो यह फूटने ही वाली है। इसलिए वह
उसकी रक्षाके निमित्त संसारको पीड़ित नहीं करता, वह न
किसीको रिक्त ही करता है, न किसीकी जानपर ही हाथ
उठाता है। वह तो अपने हृदयमें वीणाका मधुर गान निरन्तर
सुनता है और आनन्दसागरमें डूबा रहता है।

निराशावादी स्वयं रागद्वेषसे भरपूर होता है। इसलिये वह हरएकको अपना दुश्मन मानता है और हरएकसे डरता है। अन्तर-नाद तो उसके होता ही नहीं। वह तो मधु-मक्खियोंकी तरह इधर उधर भिन भिनाता हुआ बाहरी भोगोंको भोग भोगकर रोज थकता है और रोज नया भोग खोजता है और इस तरह प्रेम रहित तथा अमित्र होकर इस दुनियासे कूच कर देता है और उसके नामकी यादतक किसीको नहीं आती।

मेरे विचार तो ऐसे हैं। अतएव यह बात किसीको न मानना चाहिए कि मैंने किसीसे यह कहा होगा कि इस वर्ष स्वराज्य यदि न मिलेगा तो मैं आत्महत्या कर डालूंगा। विषय-प्रसङ्गसे बचनेके समयको छोड़कर किसी भी मौकेपर आत्महत्या करनेको मैं महापाप और कायरता मानता हूं। और यदि भारतवर्ष स्वराज्य न प्राप्त करे तो भला मैं क्यों आत्महत्या करने लगा? हिन्दुस्तानको गरज हो तो स्वराज्य ले।

स्वराज्यकी कीमत हिन्दुस्तानको मालूम हो चुका है, उसने स्वराज्यका स्वाद भी चख लिया है। अब उसे गरज हो तो उसकी कीमत दे और स्वराज्य ले। दे या न दे, ले या न ले, इससे मुझे खुदकुशी करनेकी क्या जरूरत?

पर, हां, मैंने एक बात अपने मित्रोंसे जरूर कही है। मुझसे यह पूछा गया था कि यदि जनवरीमें स्वराज्य न मिला तो आप क्या करेंगे? मैंने उत्तर दिया—'हिन्दुस्तानपर मेरा बहुत बड़ा भरोसा है। इतना कि मैं तो ३१ दिसम्बरतक यह माने बिना रही नहीं सकता कि भारत हर हालतमें स्वराज्य प्राप्त कर लेगा। इस कारण मैं यह नहीं कह सकता कि जनवरीमें मैं क्या करूंगा। मुझे यह अच्छा मालूम होता है है कि, जनवरीमें मैं जनतासे रुखसत लेकर किसी शान्त जगहमें जा कर रहूं या जनताके स्वराज्य तन्त्रके सङ्गठनमें यथाशक्ति हाथ बटाऊं। अगर इस वर्ष किसी तरह स्वराज्य न प्राप्त हो सका तो अगले वर्षमें जीवित रहना मुझे अच्छा नहीं लगता। मेरी आत्माको इतना क्लेश होनेकी सम्भावना है कि जिससे मेरा शरीर ही छूट जा सकता है—छूट जाय, यही मैं चाहूंगा।

हिन्दुस्तानके दुःखों—आर्थिक और नैतिक दोनोंको मैंने इतना अनुभव किया है कि उसकी लपटोंसे अगर मैं जलकर भस्म नहीं हो गया हूं तो उसका कारण केवल यही है कि मैं जनताकी दिलाई आशाके बलपर जी रहा हूं। मैं इसी

आशा, और केवल आशाके ही भरोसे घूमता फिरता हूं कि आज हम आत्मशुद्ध होंगे, आज हमारे करोड़ों भाई बहनोंकी हड्डियोंमें मांस दिखाई देगा। मेरा खयाल है कि इस आशाको पूर्ण करनेके लिए एक साल काफी है। सितम्बरमें एक वर्षकी बातको माननेवाला अकेला मैं ही था।

दिसम्बरमें तो सब लोगोंने उस वचनको ग्रहण कर लिया। अब अगर महासभा अपनी प्रतिज्ञाको पूरी न करे तो फिर मुझ जैसेकी क्या हालत होगी? अगर महासभा दिवाला निकाल दे तो मेरा भी दिवाला निकला कहा जा सकता है। महासभाकी आशापर मैंने तो हुण्डी कर दी है और अगर वह न सिकरे, तो फिर? मैं तो यह चाहता हूं कि स्वराज्य न मिलनेसे जो दुःख जनवरीकी पहली तारीखको मुझे हो सकता है वही सबको हो। सब लोगोंको धर्म्म और अनाजके अभावका दर्द जरूर ही होना चाहिये।'

दूसरे एक मित्रने मुझसे पूछा—इसका अर्थ क्या कायरता नहीं है? पर मुझे तो इसमें कायरता नहीं दिखाई देती, बल्कि करुणा प्रतिबिम्बित दिखाई देती है। इसमें मुझे व्यवहारदृष्टि नजर आती है। जहां सेवाकी कद्र नहीं वहां सेवा क्या करना? जिस जीवनसे लाभ नहीं वहां जीना किस कामका? जीर्ण और जर्जर शरीरको बसन्त मालती आदि मात्रायें खिलाकर आकृति मात्रको जबरदस्ती रख छोड़नेकी अपेक्षा अगर यह शरीर गङ्गाजलपर रहता हुआ क्षीण हो जाय

तो इसमें क्या बुराई है ? आजकल जहांतक मैं देखता हूं तहांतक मेरे मुंहसे दूसरी कोई बात ही नहीं निकलती— स्वदेशीका पालन करो और स्वराज्य लो। इसके सिवा मुझे दूसरा कुछ दिखाई ही न देता हो तो मेरा क्या बस ?

अब हम आखिरी सीढ़ीतक आ पहुंचे हैं। यहां खूब अच्छी तरह पैर जमाये विना—शक्ति प्राप्त किये विना आगे पैर उठाना मानों पीछे हटना है। मुझे याद है कि जब मैं सिंहगढके पहाडपर चढ रहा था तब एक मुकाम ऐसा आया कि जहासे मेरा कदम आगे बढ़ता ही नहीं था। वहा दम लेकर जोर आनेपर ही मैं आगे बढ़ सका।

यही दशा हमारी है। स्वदेशीका पालन किये विना हमें आगे बढनेके लिये बल प्राप्त हो नहीं सकता। अतएव, मेरा जीवित रहना, मेरा समाजमें रहना, स्वदेशीके ही ऊपर अवलम्बित है।

यह है मेरी चिकित्सा, यह है मेरी आजकी मनोदशा। कलकी बात तो परमात्मा जानता है।

जिसे अपने कर्तव्यका ज्ञान नहीं उसे अपना हक नहीं मिल सकता। जो अपना कर्ज अदा नहीं करता वह मुक्ति पत्र कैसे माग सकता है ? जिस प्रकार स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है उसी प्रकार स्वदेशी हमारा जन्मनिर्मित कर्तव्य है। स्वदेशी के विना स्वराज्य नहीं हो सकता। 'स्वराज्य हमारा

'जन्मसिद्ध अधिकार है' यह तिलक गीताका पूर्वार्ध है, 'स्वदेशी हमारा जन्मनिर्मित कर्तव्य है' यह उत्तरार्ध है।

अतएव यदि हम लोकमान्यका श्राद्ध अच्छी तरह करना चाहते हों तो स्वदेशी का व्रत धारण करके ही कर सकते हैं। विदेशी कपड़े का सर्वथा त्याग किये बिना स्वदेशी मन्त्रका जप नहीं किया जा सकता। विदेशी कपड़ा एक प्रकारका मैल है। इस मैलको जबतक हम धो नहीं डालते तबतक हम शुद्ध नहीं हो सकते। बिना शुद्ध हुये स्वराज्य मन्दिरमें प्रवेश करनेका अधिकार हमें नहीं हो सकता। जैसा कि मौलाना मुहम्मद अलीने कहा है, हमें शान्तिके साथ स्वराज्य प्राप्त करना है। इसका अर्थ स्वच्छन्दता नहीं, मनमानी नहीं। यदि हम त्याग तो कुछ भी न करें पर शान्तिका पाठ बराबर पढ़ा करें तो यह आलस्य या मन्दताके सिवा और क्या हो सकता है? बिना त्याग और उद्यमकी शान्ति तो मृत्युकी दशा है। सबकी शान्तिको कौन चाह सकता है? कायर मनुष्य भयको आता देखकर घरमें छिप जाता है। ऐसी शान्तिसे घरका नाश हुये बिना नहीं रह सकता। हमने जिस शान्तिकी प्रतिज्ञा की है वह वीरता सूचक शान्ति है यदि विदेशी कपड़ोंका त्याग करने योग्य शक्ति भी हम में न हो, बहादुरी न हो, इच्छा न हो, तो फिर हमारी यह शान्ति ढकोसलामात्र है। ढकोसला तो नाटक है। नाटकमें बहाये आंसूसे कहीं ज्ञानकी प्राप्ति हो सकती है?

अतएव जो लोग तिलक महाराजकी पूजा करना चाहते हों

उन्हें स्वदेशाकी प्रतिज्ञा अवश्य करनी चाहिये। स्वदेशी वस्त्र
धारण किये विना जो लोकमान्यका श्राद्ध करेंगे, उन्हें व साही
फल मिलेगा जैसा तोतेको भागवतका पाठ करनेसे मिलता है।



दशम खण्ड

परिशिष्ट

परिशिष्ट

महात्मा गांधीकी गिरफ्तारी

भारतवर्षमें जबसे असहयोग आन्दोलनका जन्म हुआ और म० गांधीने जबसे भारतीय जनतासे इस सरकारके अत्याचार और अन्यायपूर्ण नीतिकी आलोचना करके प्रजाशक्तिको प्रबल बनानेका कार्य प्रारम्भ किया, तभीसे महात्माजी सरकारकी आखोंमें खटकने लगे। विलायतके समाचारपत्र और पार्लियामेण्टके अनेक सदस्य एक स्वरसे भारत सरकारको यह सलाह दे रहे थे कि वह ऐसे मनुष्यको क्यों नहीं गिरफ्तार करती जो खुल्लमखुल्ला अराजकताका प्रचार करके भारतसे अंग्रेजी शासनको नष्टकर देना चाहता है, किन्तु भारत सचिव और भारत सरकारने इसका उपयुक्त समय न समझ कर इस विचार को स्थगित कर दिया। जब भारत सचिव मिस्टर माटेगूको वहाके मन्त्रीमण्डलने टर्कीसे सम्बन्ध रखनेवाले एक तारको प्रकाशित कर देनेके कारण अपने पदसे अलग कर दिया तो उनके अपने पदसे अलग होते ही यहाकी जनतामें महात्मा गांधीकी गिरफ्तारीकी अफवाह जोरोंसे फैलने लगी और यह निश्चय ही प्रतीत होने लगा कि महात्माजी गिरफ्तार हो गये। अन्तमें शनिवारको प्रातःकाल यह समाचार मिल ही गया कि सरकार अब

अधिक धैर्य न धर सकी और उसने इस पवित्रात्माके लिये अपना कारावास ही उपयुक्त स्थान निर्धारित किया।

गिरफ्तारी किस प्रकार हुई

गिरफ्तारीकी अफवाह सारे देशमें फैल रही थी। बस यही एक चर्चा लोगोंकी जबानपर थी। ६ तारीखको पकड़े जानेकी खबरें इधर उधर जोरोंपर थी। म० गांधी ८ तारीखको ही उलमा परिषद्के लिये अहमदाबादसे अजमेरको रवाना हो चुके थे। ६ तारीखको शहरमें यह खबर फैल गई थी कि बम्बईसे म० गांधीकी गिरफ्तारीका हुक्म तार द्वारा आया है और वह अजमेर रवाना किया गया है। ता० ६ मार्चको प्रातःकाल म० गांधी अजमेर पहुचे और श्री गौरीशङ्कर भार्गवके मकान पर ठहरे, और २ बजे तक मौलाना अबदुल बारीके फतवेके सम्बन्ध में विचार करते रहे। २ बजे मोटरमें बैठकर बीअम्मा साहबा ('अली बन्धुओंकी माता) से मिलनेके लिये दरगाहमें पधारे। उधर अजमेर सरकारकी ओरसे खजाना, तारघर आदि सरकारी मकानोंपर पहरेका प्रबन्ध कर दिया और सुननेमें आया कि २०० गोरोंकी एक स्पेशल उस दिन ब्यावरकी तरफ गयी है।

यहासे महात्माजी उसी रातको फास्ट पैसेन्जरसे अहमदाबादके लिये रवाना हुए। उस समय पुलिसका बहुत कड़ा प्रबन्ध

था। अजमेरके कमिश्नर तथा पुलिसके इन्सपेक्टर आदि स्टेशन पर उपस्थित थे। महात्माजीके गाडीके पीछे पुलिसकी गाडी लगाई गई थी। इसी प्रकार एक गाडी आगेकी ओर भी थी। शहरमें भी स्थान स्थानपर पुलिसके सिपाही नियुक्त थे। म० जीको कई दिन पहलेसे ज्ञात था कि सरकार उनको गिरफ्तार करनेकी ताकमें है, और ६ या १० मार्चको वे गिरफ्तार होंगे। परन्तु प्रत्येक समय उनके चेहरे पर मन्द हसी और प्रसन्नता झलक रही थी और बहुत शान्ति पूर्वक खिलाफत, पञ्जाब और स्वराज्यके पेचीदा मामलोंपर नोट लिखवा रहे थे। अहमदाबादको रवाना होनेके लिये स्टेशन पर पहुंचनेके समय आगे बडी भीड लग रही थी। नौकरशाहीके अधिकारी भीडमें धक्के खा रहे थे। पुलिसके प्रबन्धके कारण गाडीको बहुत लेट होना पडा। अन्तमें करीब पौन बजे गाडी रवाना हुई, और १० ता० को तीसरे पहर महात्मा गांधी अहमदाबाद स्टेशनपर पहुंच गये। स्टेशनसे आप सीधे सत्याग्रह आश्रम गये। शाम ही से आश्रममें खबर आने लगी कि आज रातको अवश्य गिरफ्तारी होनेवाली है। महात्मा गांधी अपनी स्वाभाविक शान्तिके साथ रातको दस बजे तक, रोजकी तरह पत्रों के उत्तर लिखाते रहे। कुछ ही देर पहले श्रीमती अनसूया बहन तथा श्रीशंकरलाल बेंकर म० गांधीसे मिलने आये थे। मौलाना हसरत मोहानी भी जो कि अजमेरसे म० गांधीके साथ ही साथ आये थे आ पहुंचे और उन्होंने महात्मा गांधीको 'अभिवचन

दिया कि "मैं अहिंसाका ही अवलम्बन करते हुए महासभाके कार्यक्रमका समर्थन करूंगा।" श्रीबैंकर लौटकर आश्रमसे कुछ ही दूर गये थे कि शहरसे पुलिस सुपरिन्टेंडेंट मि० हेली की मोटर उन्हें मिली। पुलिस सुपरिन्टेंडेंटने अपनी मोटर खडी करके श्री० शङ्करलाल बैंकरसे पूछा—क्या आप शङ्करलाल जी हैं? उत्तर मिला हां,। तब पुलिस सुपरिन्टेंडेंटने कहा—मुझे आपको ही गिरफ्तार करना है। बस, दोनों मोटरे आश्रमकी ओर रवाना हुई। पहुंचते ही मि० हेलीने म० गाधीको वारण्टकी खबर भिजवा दी और कहलाया कि वे तैयारीके लिये जितना चाहें समय ले सकते हैं। पर खुद आश्रमके बाहर ही खडे रहे। म० गाधी सोनेके इरादेमें थे, आश्रमवासी अपने अपने स्थानोंमें पुलिसकी आनेकी बाट जोह रहे थे। तुरन्त सब लोग एकत्र हो गये। म० गांधी तो तयार ही थे। दो ही मिनटमें वे हंसते हुए कुटीरसे बाहर हो गये। मुक्ति मायाके घर जानेके लिये निकली! उस समय आश्रम वासिनी महिलाओंने गुजरातके आदि भक्त कवि नरसी मेहता—रचित महात्मा गाधीका यह प्यारा भजन एक स्वरसे गाया—

वैष्णव जन तो तेने कहिये जो पीर पराई जाणे रे।
पर दु खे उपकार करे तो ये मन अभिमान न आणेरे॥
सकल लोकमा सहुने वन्दे निन्दा न करे केनी रे।
वच, कार्या, मन निश्चय राखे धन धन जननी तेरी रे॥
सम दृष्टिने तृष्णा त्यागी पर स्त्रीजेणे मात रे।

जिह्वा थाको असत्य न बोले पर धन नव झाले हाथ रे।
मोह माया व्यापे नहि जेने दृढ वैराग्य जेना मनमा रे।
रात मानसु ताली लगी सकल तीरथ तेना मनमा रे॥
वण लोभी पारहिते छे काम क्रोध निवार्‍या रे।
नरसैया तेनु' दरशन करता कुल एकोतर तार्‍या रे॥

उनके स्वरमें करुणा और निश्चय था। आश्रममें मानो शान्त बिजली फैल गई थी। सबके चेहरे प्रफुल्लित थे। एक मोटरमें म० गान्धी, और श्री बेंकर तथा उनके साथ श्री मती गाधी और श्रीमती अनसूया बहन और दूसरीमें कुछ आश्रमवासी बैठकर साबरमती जेलकी ओर रवाना हुए। यह जेल आश्रमके बिलकुल निकट ही हैं। लोकमान्य तिलक महाराज भी १९०६ में गिरफ्तार होकर पहले पहल इसी जेलमें लाये गये थे। आश्रमवासियोंने हर्षपूर्वक स्वरमें "वन्दे मातरम्" का घोष किया। सबके हृदयोंने कहा—आज भारतका भाग्य जाग उठा सरकारने बुरी तरह मु हकी खाई। चलते समय म० गाधीने आश्रमवासियोंको यह सन्देशा कहा "कि खूब काम करो और आलस्यको पास तक न फटकने दो।

— ० —

महात्माजीका सन्देश

देशवासियोंके प्रति ।

मुझे आशा है कि जनता मेरी गिरफ्तारीसे देशमें पूर्ण शान्ति कायम रखेगी और देशका मेरे प्रति यह सबसे बडा सम्मान होगा। मुझे देशवासियोंसे केवल यही कहना है कि वे अपने सब विदेशी वस्त्र जला दें और केवल खद्दरही पहनें, पूर्ण शान्ति बनायें रक्खे, हिन्दूमुस्लिम ऐक्य, स्वदेशी तथा अहिंसाके सिद्धान्तोंका पूर्णरूपसे पालन करें और प्रत्येक स्त्री, पुरुष अपना सारा समय सूत कातने और चर्खा चलानेमें लगा दें। जब तक कि भारतवर्षके प्रत्येक स्त्री पुरुषके हृदयमें अहिंसाका भाव पूरा पूरा न भर जाय तबतक सामुदायिक सत्याग्रह न आरम्भ करना चाहिये।

जितनी ही ज्यादा सजा मुझे मिलेगी, असहयोगकी उतनी ही जल्द उन्नति होगी। हम लोगोंको धडाधड खद्दर तैयार करनेमें लगा रहना चाहिये। जब विदेशी कपडेका बहिष्कार पूरा हो जायगा और सब लोग खद्दर पहनने लगेंगे, स्वराज्य स्थापित हो जायगा और लोग अपने हाथोंसे कैदियोंको जेलोंसे रिहा करेंगे। यदि मेरा [illegible] पर्यक निबाहा गया तो भारतवर्ष केवल [illegible] ना[illegible] । भी राजनीतिक परिस्थिति पर

बम्बई निवासियोंके प्रति।

(श्रीमती सरोजनी नायडू जिन्होंने शनिवारको जेलमें महात्मा गाधीसे भेंटकी उनसे बम्बईके लिये निम्नलिखित सन्देशा लायी हैं।)

मैं यह नहीं चाहता कि बम्बई अपने एक शान्त मन्त्रीकी तथा स्वयं मेरी गिरफ्तारी पर शोक मनाये, पर मैं यह चाहता हूं कि वह हमारे विश्रामके लिये प्रसन्नता प्रकट करे। यद्यपि मैं असहयोगकी सभी कार्रवाइयोंका पूरा किया जाना चाहता हूं तथापि मैं बम्बईके सम्बन्धमें यह चाहता हूं कि वह अपनी चेष्टाओंको एकत्रित कर चरखे तथा खद्दरके प्रचारमें लग जाये। बम्बईके धनी लोग हाथके काते हुए सूत तथा हाथके बुने हुए खद्दर खरीद सकते हैं जो सारे भारतवर्षमें निर्माण हो सकता हैं। यदि बम्बईकी स्त्रियां वास्तवमें अपने भागका काम पूरा करना चाहती हैं तो उन्हें अपने देशके खातिर धार्मिकतासे प्रति दिन चरखा चलाना चाहिये। मैं चाहता हूं कि कोई व्यक्ति जेलमें आकर हमारा साथ देनेकी इच्छा न करे। जब तक पूर्णतया अहिंसात्मक स्थिति उत्पन्न नहीं हो जाती तब तक जेलमें जानेकी चेष्टा करना गर्हणीय हैं। इस प्रकारकी स्थितिकी पडताल यह है कि हम अङ्गरेज तथा माडरेट लोगोंको आराममे रख छोड़े। यदि तभी किया जा सकता है जब हमारे अनैक्यके होते हुए भी हम उनके प्रिय प्रभावकी घोषणा करें।

पार्सियोंके प्रति।

(महात्मा गांधीने साबरमती जेलसे श्रीयुत बरजोरजी फ्रामजी भड़ूचाके द्वारा पार्सियोंके लिये निम्नलिखित सन्देश भेजा है)

मैं आपके पास लिखना कैसे भूल सकता हूं ? कृपाकर मेरे पार्सी भाई और बहनोंको कह दीजिये कि वे इस आन्दोलनमें कभी अविश्वास न करें। उनपर मेरा दृढ़ और अटल विश्वास है, खद्दी और चर्खा, चर्खा और खद्दी इसके सिवा इस समय मेरे सामने और कोई कार्यक्रम नहीं है। जैसे छोटे २ सिक्कोंका घर घर प्रचार है उसी प्रकार हमारे सभी घरोंमें हाथसे कते सूत अवश्य रहने चाहिये। इस उद्देश्यकी प्राप्तिके लिये हमें हाथसे कते सूत और हाथसे बुने कपड़ेके सिवा और कोई कपडा नहीं पहनना चाहिये। जब तक भारतवर्ष ऐसा करनेमें असमर्थ रहेगा तब तक सत्याग्रह करना व्यर्थ है और खिलाफत तथा पञ्जाबके अन्यायोंका प्रतिकार करना असम्भव है। यदि आपका ऐसा विश्वास हो तो आप सूत कातना और खद्दर पहनना जारी रक्खें। आप सूत कातनेमें दक्षता प्राप्त करें।

करेलवासियोंके प्रति

मैं चाहता हूं कि आपकी चेष्टाएं सफलीभूत हों। कार्यों का भीषण भार रहनेपर भी मैं हिन्दुओं और मोपलोंके लिये

केवल एक ही सन्देश भेज सकता हूं और वह यह है
भविष्यमें अपना उत्तरदायित्व समझें और जो बीत गय
भूल जायें। हिन्दुओंको चाहिये कि वे कायरताका परि
करें और मोपलोंको चाहिये कि वे नि यी होना छो
अर्थात् प्रत्येकको शास्त्रोंके अनुसार सच्चा धर्मनिष्ठ बन
चाहिये। हिन्दू धर्म कायरोंका धर्म नहीं है और अवः
इस्लाम धर्म भी क्रूर और निर्दयी मनुष्योंके लिये नहं
आपके सामने जो यह विकट समस्या उपस्थित है उसे
करनेका एक मात्र उपाय है कि कुछ चुने हिन्दू और मुसल
पूर्ण ऐक्य और विश्वासके साथ इसके लिये काम व
आरम्भ कर दें। यदि शुरूमें उन्हें कामयाबी न हो तो भी
हतोत्साह न होना चाहिये।

श्रीमती उर्मिला देवीके प्रति



(कलकत्तेके नारी कर्ममन्दिरकी श्रीमती उर्मिला देवी
महात्माजीने १३ ता० को साबरमती जेलसे
निम्नलिखित पत्र भेजा है)

मेरी प्यारी बहन,

आपने मेरी तरफ बिलकुल ही ध्यान नहीं दिया। मैं जानता हूं कि मेरा समय बचानेके लिये ही आपने ऐ किया है।

मैं चाहता हूं आप अपना सब समय चरखे तथा खद्दरके प्रचारके सिवा और किसी बातमें भी न लगायें, शान्ति समस्त भारतको एकता तथा निम्नश्रेणीके लोगोंसे, जिनमें 'अस्पृश्य' एकमात्र जातिके लोग भी शामिल हैं, एकता सूत्रमें बांधनेके लिये यह चिन्ह है।

कृपापूर्वक इसे वासन्ती देवी तथा देशबन्धुको भी दिखला दीजियेगा। मैं आशा करता हूं वे कुशलपूर्वक तथा स्वस्थ हैं। कैदियोंमें बीमार होनेकी शक्ति नहीं है।

"आप सब लोगोंसे प्यार।"

हकीम अजमलखांके प्रति।



साबरमती जेल,
१२ मार्च १९२२।

प्रिय हकीमजी,

अपनी गिरफ्तारीके बाद मैं यह मालूम करके कि विचाराधीन कैदीकी हैसियतसे जेलके कायदोंके अनुसार जितने पत्र मैं चाहूं लिख सकता हूं यह पहला ही पत्र मैं आपके पास लिख रहा हूं। आप जानते हैं कि श्रीयुक्त शङ्करलाल बङ्कर भी मेरे साथ हैं। मुझे इस बातपर प्रसन्नता मालूम होती है कि वे मेरे साथ हैं। सब कोई इस बातको जानता है कि वे मेरे कितने निकट पहुंच गये हैं। इसलिये स्वभावत. हम दोनों इस बातसे प्रसन्न हैं कि हम दोनों साथही गिरफ्तार किये गये।

मैं यह पत्र आपको वर्किङ्ग कमेटीके चेयरमैन और फलतः हिन्दू तथा मुसलमान—दोनोंके अथवा यह कहना ठीक होगा कि, सारे भारतके नेताकी हैसियतसे लिखता हूं। मैं आपको मुसलमानोंके सब नेताओंके अग्रणीकी हैसियतसे भी यह पत्र लिखता हूं। पर सबसे बढ़कर मैं आपको अपने मित्रकी हैसियतसे ही लिखता हूं। मैं आपको १९१५ ई०से जानता हूं। हमारी नित्य बढ़ती हुई सङ्गतिके कारण मैं आपकी मित्रताको अमूल्य रत्नके समान समझनेके योग्य हुआ हूं। कट्टर मुसलमान होते हुए भी आपने अपनी जिन्दगीमें यह बात दिखला दी है कि हिन्दू-मुस्लिम एकताका उद्देश्य क्या है।

अब हम सब यह समझते हैं जैसा कि पहले हम कभी नहीं समझते थे, कि बिना इस एकताके हम स्वाधीनता प्राप्त नहीं कर सकते और मैं यह साहसके साथ कहता हूं कि बिना एकताके भारतके मुसलमान खिलाफतको पूर्ण रूपसे सहायता नहीं पहुंचा सकते। अनैक्यतासे हम सदा गुलाम बने रहेंगे। इसलिये यह एकता केवल एक ऐसी नीति नहीं हो सकती जिसे जब हमें यह अनुपयुक्त मालूम दे तब हम इसे त्याग दें। हम इसे केवल तभी त्याग सकते हैं जब हम स्वराज्यसे तंग आ जायंगे। हिन्दू-मुस्लिम एकता हर हालतमें तथा सब समयके लिये हमारा ध्येय होना चाहिये।

यह एकता अल्पसंख्यक लोगोंके लिये—पारसी, ईसाई,

यहूदी अथवा बलशाली सिक्ख लोगोंके लिये आशङ्काजनक भी नहीं होनी चाहिये। यदि हम उन्हें पददलित करनेकी चेष्टा करेंगे तो हम परस्पर लड़नेको तैयार होंगे।

मैं आपके इतने निकट तक विशेषकर इसीलिये आकर्षित हुआ हूं कि आप सम्पूर्णरूपसे हिन्दू मुस्लिम एकतामें विश्वास रखते हैं।

मेरी रायमें यह एकता तबतक प्राप्त नहीं की जा सकेगी जबतक हम अहिंसाको दृढ नीतिके बतौर न ग्रहण कर लेंगे। मैं इसे नीति इसलिये कहता हूं कि यह उस एकताको कायम रखने तक सीमाबद्ध हुई। पर इससे यही बात सिद्ध होती है कि ३० करोड़ हिन्दू मुसलमान थोड़े समयके लिये नहीं पर चिरकालके लिये एकता पाशमें बद्ध होकर संसारकी सब शक्तियोंकी अवहेलना कर सकते हैं और उन्हें अंग्रेजी शासनकर्त्ताके प्रति व्यवहारमें हिंसा काममें लानेको कायरतापूर्ण कारवाई समझना चाहिये। अबतक हम अपने सीधेपनके कारण उनसे तथा उनकी तोपोंसे डरते आये हैं। पर अब जब हम अपनी शक्तिको समझ गये हैं तो हमें उनसे डरने और फलतः उन्हें चोट पहुंचानेका विचार करनेको भी कायरताका चिह्न न समझना चाहिये। इसलिये मैं अपने देशवासियोंको यह बात समझा सकनेके लिये चिन्तित हूं कि उन्हें अहिंसात्मक दुर्बलताके कारण नहीं पर हमारी सबलताके कारण रहनेका विचार मनमें लाना चाहिये। मैं और आप जानते हैं कि हमने

अभी शक्तिमानोंकी अहिंसाका उद्रेक नहीं किया है। हम इसलिये नहीं कर सके हैं कि हिन्दू मुसलमान एकता अभी की स्थितिसे ऊपर नहीं गयी है। अब भी पारस्परिक श्वास तथा शंका मौजूद है। मैं निराश नहीं हुआ हूं। इस सम्बन्धमें आशाजनक उन्नति की है। ऐसा मालूम पड़ कि हमने १८ महीनोंमें पीढियोंका काम कर डाला है, पर बहुत कुछ और चाहिए। न तो निर्धन श्रेणीके लोग ही समझते हैं कि हमारी एकता इतनी आवश्यक है जितना ह श्वासउपश्वास, और न पूंजीवाले ही ऐसा समझते हैं।

इस एकताके समापनके लिये हमें नायवादकी अपेक्षा गु अधिक निर्भर करना चाहिए। यदि हिन्दू तथा मुसलमा काफी लोगोंमें चिरकाल रहनेवाले हिन्दू मुस्लिम ऐक्यपर पू तया विश्वास हो जायगा तो शीघ्र ही अशिक्षित लोगोंमें ऐक्यभाव भर जायगा। हममेंसे कुछ लोगोंके बीच अवश्य यह धारणा दृढ होनी चाहिये कि हम अपने राजनैतिक उद्दे की पूर्ण प्राप्ति में बिना मनसा वाचा कर्मणा अहि स्वीकार किये हुए कुछ भी उन्नति नहीं कर सकते। इसलि मैं आपसे तथा वर्किङ्ग कमिटीके सदस्योंसे यह अनुरोध कर हूं कि हमारी श्रेणियोंमें कोई ऐसे कार्यकर्त्ता न रहने दिये ज चाहिये जो इस परमावश्यक सत्यको पूर्णतया नहीं समझते जि मैंने आपके सम्मुख रखनेकी चेष्टा की है। अधिकांश लोगों आशाके शासनसे स्थायी विश्वास उत्पन्न नहीं किया जा सकत

मेरे लिये अखिल भारतीय एकताका चिह्न तथा हमारे राजनैतिक उद्देश्योंकी धारणाके लिये आवश्यक उपायके बतौर अहिंसाकी स्वीकृति निस्सन्देह चरखा, अर्थात् खद्दर है। उनको जो हिन्दू तथा मुसलमानोंके बीच चिरकाल तक स्थायी रहनेवाली मित्रता तथा अहिंसात्मक वृत्ति उत्पन्न करनेमें विश्वास रखते हैं, नित्य चरखा कातना चाहिये। सामूहिक रूपसे चरखा कातने तथा हाथके कते हुए सूत तथा हाथके बुने हुए खद्दरका निर्माण तथा इस्तमाल वास्तविक एकता तथा अहिंसाका महत्वपूर्ण प्रमाण होगा। इससे अकर्मण्य तथा अशिक्षित लोगोंके साथ हमारा सम्बन्ध मालूम होने लगेगा। तमाम भारतके चरखेको दैनिक क्रिया तथा खद्दरको पहननेको अपना कर्त्तव्य समझनेकी अपेक्षा और कोई भी उपाय भारतको एकता पाशमें नहीं बांधेगा न उसे जागरित ही करेगा।

इसलिये यद्यपि इस बातके लिये मैं चिन्तित हूं कि और अधिक उपाधिधारियोंको उपाधियां, वकीलोंको अदालत, छात्रोंको सरकारी विद्यालय तथा कालिज, कौंसिलके सदस्योंको कौंसिल तथा सिपाही व सिविलियनोंको अपनी नौकरियां छोड़ देनी चाहियें, मैं राष्ट्रको इस बातपर जोर देता हूं कि वह अपनी कार्रवाइयोंको इस ओर केवल प्राप्त परिणामोंको दृढीभूत बनानेमें सीमाबद्ध करे और उन संस्थाओंसे आगेको भी अलग रहनेके लिये आज्ञा चलानेके सम्बन्धमें अपनी शक्तियों-

पर विश्वास रक्खें जिन्हें हम या तो समूल उखाड़ देना चाहते हैं या सुधारना चाहते हैं।

एक बात यह भी है कि कार्यकर्त्ता बहुत ही कम हैं। आज मैं एक भी कार्यकर्त्ता विनाशक कार्यक्रममें लगाना नहीं चाहता जब कि हमारे पास इतना अधिक रचनात्मक कार्य पड़ा हुआ है। ध्वंसात्मक कार्यक्रममें अधिक समय खर्च न करनेके सम्बन्धमें सबसे अधिक उपयुक्त दलील यह है कि असहनशीलताकी वृत्ति, जो हिंसाका एक रूप है, इस समयसे अधिक कभी नहीं बढ़ी थी। सहयोगी हमसे अलग हुए हैं वे हमसे डरते हैं। वे कहते हैं कि हम वर्तमान नौकरशाहीसे भी बुरी नौकरशाही स्थापित कर रहे हैं। हमें इस प्रकारकी आशंकाके प्रत्येक कारणको अलग हटाना होगा। हमें उन्हें अपनी ओर लानेकी चेष्टा करनी चाहिये। हमें अङ्गरेज लोगोंको अपनी तरफकी सब हानियोंसे बचाना चाहिये। मैं इस विषयमें इतना जोर न देता यदि सब आदमियोंको इतनी ही अच्छी तरहसे मालूम होता जितना मुझे तथा आपको मालूम है कि हमारी अहिंसाकी प्रतिज्ञा हमारे सबसे कट्टर शत्रुके प्रति भी शुभेच्छा तथा नम्रताका भाव प्रगट करनेको कहती है। यह आवश्यक वृत्ति सब समझमें आ जायगी यदि भारत अपना सब ध्यान मेरे प्रस्तावित कार्यक्रमकी ओर लगा देगा।

मैं ऐसी आशा कर रहा हूं कि मेरी कैद बहुत समय तक जारी रहेगी। मैं नम्रतापूर्वक यह विश्वास करता हूं कि किसीके

मेरे लिये अखिल भारतीय एकताका चिह्न तथा हमारे राज
तिक उद्देश्योंकी धारणाके लिये आवश्यक उपायके बतौर
हिंसाकी स्वीकृति निस्सन्देह चरखा, अर्थात् खद्दर है।
को जो हिन्दू तथा मुसलमानोंके बीच चिरकाल तक
यी रहनेवाली मित्रता तथा अहिंसात्मक वृत्ति उत्पन्न
नेमें विश्वास रखते हैं, नित्य चरखा कातना चाहिये। सामू-
क रूपसे चरखा कातने तथा हाथके कते हुए सूत तथा हाथके
हुए खद्दरका निर्माण तथा इस्तमाल वास्तविक एकता तथा
हिंसाका महत्वपूर्ण प्रमाण होगा। इससे अकर्मण्य तथा अशिक्षित
ोंके साथ हमारा सम्बन्ध मालूम होने लगेगा। तमाम
तके चरखेको दैनिक क्रिया तथा खद्दरको पहननेको अपना
व्य समझनेकी अपेक्षा और कोई भी उपाय भारतको एकता
में नहीं बांधेगा न उसे जागरित ही करेगा।

इसलिये यद्यपि इस बातके लिये मैं चिन्तित हूं कि और
अक उपाधिधारियोंको उपाधियां, वकीलोंको अदालत,
त्रोंको सरकारी विद्यालय तथा कालिज, कौंसिलके सदस्योंको
सिल तथा सिपाही व सिविलियनोंको अपनी नौकरियां
ड देनी चाहियें, मैं राष्ट्रको इस बातपर जोर देता हूं कि
अपनी कार्रवाइयोंको इस ओर केवल प्राप्त परिणामोंको
भूत बनानेमें सीमाबद्ध करे और उन संस्थाओंसे आगेको
अलग रहनेके लिये आज्ञा चलानेके सम्बन्धमें अपनी शक्तियों-

पर विश्वास रखते जिन्हें हम या तो समूल उखाड देना चाहते हैं या सुधारना चाहते हैं।

एक बात यह भी है कि कार्यकर्त्ता बहुत ही कम हैं। आज मैं एक भी कार्यकर्त्ता विनाशक कार्यक्रममें लगाना नहीं चाहता जब कि हमारे पास इतना अधिक रचनात्मक कार्य पडा हुआ है। ध्वसात्मक कार्यक्रममें अधिक समय खर्च न करनेके सम्बन्धमें सबसे अधिक उपयुक्त दलील यह है कि असहनशीलताकी वृत्ति, जो हिंसाका एक रूप है, इस समयसे अधिक कभी नहीं बढी थी। सहयोगी हमसे अलग हुए हैं वे हमसे डरते हैं। वे कहते हैं कि हम वर्तमान नौकरशाहीसे भी बुरी नौकरशाही स्थापित कर रहे हैं। हमे इस प्रकारकी आशंकाके प्रत्येक कारणको अलग हटाना होगा। हमें उन्हें अपनी ओर लानेकी चेष्टा करनी चाहिये। हमें अङ्गरेज लोगोंको अपनी तरफकी सब हानियोंसे बचाना चाहिये। मैं इस विषयमें इतना जोर न देता यदि सब आदमियोंको इतनी ही अच्छी तरहसे मालूम होता जितना मुझे तथा आपको मालूम है कि हमारी अहिंसाकी प्रतिज्ञा हमारे सबसे कट्टर शत्रुके प्रति भी शुभेच्छा तथा नम्रताका भाव प्रगट करनेको कहती है। यह आवश्यक वृत्ति स्वय समझमें आ जायगी यदि भारत अपना सब ध्यान मेरे प्रस्तावित कार्यक्रमकी ओर लगा देगा।

मैं ऐसी आशा कर रहा हू कि मेरी कैद बहुत समय तक जारी रहेगी। मैं नम्रतापूर्वक यह विश्वास करता हू कि किसीके

विरुद्ध भी मेरी दुरेच्छा नहीं है। मेरे कई मित्र शायद मेरे बराबर अहिंसात्मक न भी हों। पर हमने सबसे अधिक निरपराधीको भी कैद होनेकी बात सोच रखी थी। यदि मैं ऐसा दावा कर सकता हूं तो यह बात स्पष्ट है कि किसी व्यक्तिको कैद होकर मेरा अनुसरण नहीं करना चाहिए। हम सरकारको पशु करना चाहते हैं, धमकीसे नहीं पर अपनी निरपराधिताके अदृश्य दबावसे। मेरी रायमें आगे जेलखानोंको भरते जाना धमकी दिखलाना समझा जा सकता है। और निरपराध लोगोंको क्यों जेलखाना जानेकी चेष्टा करनी चाहिये जब तक उसके लिये सबसे अधिक निरपराध व्यक्ति काफी नहीं समझा जाता ?

आगेको जेलखाना जानेके लिये खबरदार रहनेसे यह मतलब नहीं है कि हम कैदसे हिचक रहे हैं। यदि सरकार प्रत्येक अहिंसात्मक असहयोगीको गिरफ्तार कर ले तो मैं इसका स्वागत करूंगा। केवल हमारी गिरफ्तारी कानूनकी अवज्ञाके कारण फिर चाहे वह रक्षणात्मक हो चाहे आक्रमणात्मक, नहीं होनी चाहिए। मैं आशा करता हूं कि देश उन लोगोंके लिये चिन्तित न होगा जो कैदखानोंमें हैं। उन्हें तथा देशको उनके पूर्णतया कैद भोगनेसे लाभ ही पहुंचेगा। वे अपनी अवधिके पहिले केवल योग्यता पूर्वक स्वराज्य पार्लिमेण्टके द्वारा ही छूट सकते हैं, और मैं इस पूर्ण विश्वासकी निश्चयता दिखलाता हूं कि खद्दरका देशव्यापी उपयोग ही स्वराज्य है।

मैंने अस्पृश्यताके विषयमें नहीं लिखा है। मुझे निश्चय है कि प्रत्येक सच्चा हिन्दू यह विश्वास करता है कि यह दूर होनी चाहिये। इसका बहिष्करण उतना ही आवश्यक है जितनी हिन्दू मुस्लिम एकता है।

मैंने आपके सामने ऐसा कार्यक्रम रखा है जो मेरी रायमें सबसे उत्तम तथा शीघ्रतासे पूरा होनेवाला है। कोई भी अधीर खिलाफतका कार्यकर्त्ता इससे उत्तम कार्यक्रम नहीं विचार सकता। परमात्मा आपको तथा देशको अपने लक्ष्यके पास पहुचनेके लिये बुद्धि तथा बल दे।



राजद्रोह का अभियोग

पहिली पेशी।

शनिवार ११ मार्च १९२२ को दो पहरके समय महात्मा गान्धी और श्रीयुत बैंकर असिस्टेंट मैजिस्ट्रेट मि० ब्राउनके सामने उपस्थित किये गये। शाहबागके डिविजनल कमिश्नरके आफिसमें अदालत बैठी थी। सरकारकी ओरसे पब्लिक प्रोजीक्यूटर राव बहादुर गिरधारी लाल पैरवी कर रहे थे।

सबसे पहले अहमदाबादके पुलिस सुपरिंटेण्डेण्टका बयान हुआ। उन्होंने बाम्बई सरकारकी चिट्ठी पेशकी जिसमें उन्हें

"यंग इण्डिया" में प्रकाशित निम्नलिखित लेखोंके लिये मामला चलानेका अधिकार दिया गया था।

"राजभक्तिमें दस्तन्दाजी" पृ० ४१८

"बड़े लाटकी उलझन" पृ० ५३१

"गर्जन तर्जन" पृ० ६४१

गवाहने कहा कि अहमदाबादके जिला मजिस्ट्रेटने ६ मार्चको वारण्ट निकाला था और वह सुरत और अजमेरके पुलिस सुपरिटेण्डेण्टके पासभी भेज दिया गया था क्योंकि मि० गान्धी वहां जाने वाले थे।

बाद बम्बई हाईकोर्टके अपील विभागके रजिस्ट्रार मि० घरडाकी गवाही हुई। उन्होंने अहमदाबादके जिला मजिस्ट्रेट मि० केनेडी और "यङ्ग इण्डिया"के सम्पादक मि० गान्धीके बीच जो लिखा पढी हुई थी उसे पेश किया।

इसके बाद अहमदाबादके मजिस्ट्रेट मि० चेटफील्डकी गवाही हुई। उन्होंने कहा कि (यङ्ग इण्डियाके लिये) अमानत दी थी और मि० ए
मुद्रक हुए थे। तत्पश्चात् पुलिसके

मि० जिरह

मि० उम्र ५३

पेशेसे

कहना

अप्रीति फैलानेके सम्बन्धमें अपनेको अपराधी बताऊंगा। यह बात बिलकुल ठीक है कि मैं "यङ्ग इण्डिया"का सम्पादक हूं। मेरे सामने जो लेख पढ़े गये हैं उन्हें मैंने लिखा था और इस पत्रके मालिकों तथा प्रकाशकोंने मुझे इस पत्रकी नीतिके सम्बन्धमें पूरा अधिकार दे दिया था। धारा १२४ ए० के अनुसार अभियोग पत्र तैयार किया गया और मामला दौरा सुपुर्द किया गया।

दूसरी पेशी।

१८ मार्च १९२२ को भारतके हृदय सम्राट महात्मा गान्धीपर राजद्रोहका जो अभियोग लगाया है उसकी जाच शुरू हुई।

मुकदमेंकी जाच होनेके पहलेही कचहरी खद्दरधारी जनतासे ठसाठस भर गई थी। जनसाधारणके बैठनेके लिये कचहरीके बाहर तथा भीतर अच्छा प्रबन्ध किया गया था। भीतर श्रीयुत वी० जे० पटेल, श्रीमती सरोजिनी नायडू, श्रीमती सरलादेवी चौधरानी, पण्डित जवाहरलाल नेहरू, मिस्टर टी० प्रकाशम, श्रीयुक्त अम्बालाल साराभाई और श्रीमती अनुसूयाबाई प्रभृति अन्यान्य नेता उपस्थित थे। पुलिसके पहरेका पूर्ण प्रबन्ध था। भारतीय पुलिस सेना भीतर पर्यटन कर रही थी।

महात्माजीका आगमन।

महात्मा गान्धी और श्रीयुत बैंकर पण्डित मदनमोहन माल-

वीयजीके साथ ठीक ग्यारह बजकर चालीस मिनिटपर अदालतमें पहुचे। आपके पहुचते ही सबके सब खड़े हो गये। महात्माजीके कुछ देरतक खड़े रहनेके पश्चात् जजकी बाईं ओरकी कुरसीपर बैठनेके लिये संकेत किया गया। महात्माजीके दाहिने ओर श्रीयुक्त बैंकर और पण्डित मदनमोहन मालवीय विराजमान थे और आपके वाम भागमें आपकी सहधर्मिणी, व श्रीमती सरोजिनी नायडू प्रभृति महिलाओंके साथ अपूर्व शोभा दे रही थीं।

न्यायाधीशका आगमन।

ग्यारह बजकर पचास मिनिट होनेके उपरान्त न्यायाधीश सर ब्रूम्स्फील्ड स्टेङ्गमैनने कचहरीके भीतर प्रवेश किया। आपने महात्मा जीके सामने मस्तिष्क झुकाकर शिष्टाचार करनेके उपरान्त ठीक बारह बजे अपना आसन ग्रहण किया। प्रारम्भ ही में जजने कहा कि सरकारी वकीलके कथनानुसार महात्माजीके ऊपर तीन अभियोग लगाये गये हैं, जो प्राय एक ही किस्मके हैं और एकही सालके भीतर किये गये हैं। सरकारी वकील भी जजकी रायसे सहमत हुए। जजने दफा १२४ (अ) का अभिप्राय पढ़ सुनाया और कहा, कि घृणाका अर्थ राजद्रोह तथा शत्रुताका भाव उत्पादन करना है। इसके बाद जजने महात्माजीसे पूछा, -"क्या आप अपनेको अपराधी स्वीकार करते हैं अथवा आप अपनी सफाईके लिये पैरवी करेंगे।" महात्मा गांधीने उत्तर

दिया,—"मैं अपनेको अपराधी स्वीकार करता हूं" और अभियोगमें राजद्रोहका उल्लेख नहीं किया गया है, यह बहुत ही उचित किया गया है।"

सरकारी वकीलका वक्तव्य।

सरकारी वकीलने कहा कि दण्डविधिकी २७१ वीं धाराके अनुसार जज या तो अपराधीको अपराध स्वीकार करने ही पर सजा दे सकता है या चाहे तो मुकदमेकी पूरी जांच कर सकता है। आपने वर्तमान मुकदमेकी जांच करनेके लिये जजको सलाह दी। इस सलाहका पहला कारण आपने यह बतलाया, कि यह मुकदमा बहुत ही जटिल तथा गम्भीर है और दूसरा कारण यह है, कि इ . सर्वसाधारणको इसका पूरा पूरा पता लग जायगा। इसके अतिरिक्त असामी द्वारा अपराध स्वीकार कर लेने ही के आधारपर कोई जज ऐसे मुकदमेमें अच्छी तरह फैसला नहीं दे सकता, जबतक मुकदमेकी सभी बातें उसके सामने स्पष्ट न कर दी जायं। "जजने कहा, कि" मैं इस रायसे सहमत नहीं हूं। मुझे पूर्ण अधिकार है, कि अभियुक्त द्वारा अपराध स्वीकार करनेपर मैं उसे दण्ड दे सकूं, और विशेषकर इस मुकदमेमें मैं नहीं समझता कि जो गवाही मजिस्ट्रटके सामने ली गई है, उसको फिरसे यहां दुहरानेमें क्या लाभ है? अभियोगको प्रमाणित करनेके सम्बन्धमें मेरा विचार है, कि जो गवाही

मजिस्ट्रेटके सामने दी गई है, वह इस बातको प्रमाणित करनेके लिये काफी है, कि उक्त लेखोंका उत्तरदायित्व महात्मा गाधीके ऊपर है। इसलिये इस विषयमें अधिक जांच करना व्यर्थ है। सजाके सम्बन्धमें जजने कहा, मैं जानना चाहता हूं, कि इस सम्बन्धमे महात्माजीकी क्या इच्छा है? आपने महात्माजीकी स्वीकृतिको ही यथेष्ट समझकर सरकारी वकीलसे सजाके सम्बन्धमें राय देनेकी इच्छा की। सरकारी वकीलने 'यङ्ग इण्डिया' के लेखोंको दिखलाया और कहा, कि इन लेखोंका अभिप्राय स्पष्ट तौरसे राजविद्रोहका प्रचार करना तथा वर्त्तमान सरकारको नष्ट करना है। इसके बाद सरकारी वकीलने उन लेखोंका कुछ अंश पढ़ सुनाया जिसका अभिप्राय यही था, कि असहयोग, कांग्रेस तथा खिलाफत कमेटीका प्रधान मन्तव्य वर्त्तमान सरकारके प्रति अप्रीति फैलानेके अतिरिक्त और कुछ नहीं। आपने यह भी बतलाया, कि यह लेख किसी अशिक्षित व्यक्तिका लिखा हुआ नहीं। अतएव कोर्ट स्वयं विचार कर सकती है, कि इन लेखोंका उद्देश्य क्या है? गत कुछ महीनोंकी ओर दृष्टिपात करनेसे इसका प्रमाण भी मिल सकता है। उदाहरणके लिये आपने बम्बई, मद्रास और चौरीचौराकी घटनाओंका उल्लेख किया, जिसमें कितने मनुष्य मारे तथा लूट लिये गये। यद्यपि इन लेखोंमें अहिंसाका उपदेश बारबार दिया गया है, किन्तु मैं नहीं समझता कि इससे क्या परिणाम निकल सकता है, जब कि अभियुक्त सरकारके विरुद्ध घृणा, अप्रीति फैलानेका यत्न

कर रहा है तथा इसको उखाड़ फेंकनेके लिये सर्वसाधारणको उत्तेजित करना है।

महात्माजीका बयान।

महात्माजीने पहले जबानी और उसके बाद जजके आज्ञानुसार अपना लिखा हुआ बयान पढ़ सुनाया। आपने कहा कि सरकारी वकीलने मेरे ऊपर जो दोषारोपण किया है, वह निश्चयत ही यथेष्ट तथा उचित है। मैं कोर्टसे छिपाना नहीं चाहता, कि सरकारके प्रति घृणाका उपदेश करना मेरा स्वाभाविक कर्त्तव्य हो गया है। वकीलने ठीक कहा है कि सरकारकी वर्त्तमान प्रणालीके विरुद्ध घृणाका उपदेश देना "यङ्ग इण्डिया"के साथ मेरा सम्बन्ध होनेके बहुत पहले से ही जारी है। इस दु खमय कर्त्तव्य का पालन करनेके समय मैंने अच्छी तरहसे जान लिया था कि इसका सारा उत्तरदायित्व मेरे ही ऊपर अवलम्बित है। सरकारी वकीलने बम्बई मद्रास तथा चौरीचौराकी घटनाके सम्बन्धमें मेरे ऊपर जो दोषारोपण लगाया है, उसे मैं सहर्ष स्वीकार करता हूं। यदि मैं इस समय भी मुक्त कर दिया जाऊं तो फिर सरकारके प्रति अग्नि उगलना आरम्भ कर दूं। यद्यपि जनता कभी पागल हो उठती थी, तथापि मेरा प्राथमिक तथा अन्तिम लेखका भाव अहिंसात्मक था। इसी कारणसे कठिनसे कठिन दण्ड स्वीकार करता हूं आप ... करनेमें कानूनका उचित व्यवहार

र्त्तमान सरकारकी प्रणाली तथा कानूनको बुरा समझते हैं, तो आपका कर्त्तव्य है, कि आप अपना पद त्यागकर सरकारके विरुद्ध मेरा प्रचार करनेका उपदेश दें और यदि आप वर्त्तमान प्रणालीको अच्छा समझते हों, तो मुझे कडीसे कडी सजा देनेकी कृपा करें।"

जजका उत्तर

जजने महात्मा गांधीको सम्बोधन करते हुए कहा कि, "आपने अपनेको अपराधी स्वीकार कर मेरा काम बहुत ही हलका कर दिया है। मुझे अब यही विचार करना है, कि सजाकी मियाद कितनी और कैसी होनी चाहिये। यह बात स्पष्ट है, कि कानून किसी व्यक्तिकी प्रतिष्ठा नहीं करता। मैं इस बातको अस्वीकार नहीं कर सकता, कि अबतक मुझे जितने मुकदमे देखने पडे हैं या आगे देखने पडेंगे उन सबोंसे आपके मुकदमेकी अवस्था बिलकुलही भिन्न है। इस बातको अस्वीकार करना असभव है, कि आपके करोड देशवासी आपको एक बडे देशभक्त तथा महान् नेताकी दृष्टिसे देखते हैं। यहांतक कि जितने लोग राजनीतिक विचारमें आपसे, मतभेद रखते हैं वे भी आपकी महत्ता तथा साधुतामें अटल विश्वास रखते हैं। यहांपर मैं आपके प्रति कानूनके अनुसार एक साधारण मनुष्यके ऐसा व्यवहार करनेको बाधित हूं, अतएव आपने जिस अपराधको स्वीकार किया है उसके अनुसार आपको दण्ड देना ही पडे-

कीजिये अन्यथा आप भी अपना पद त्यागकर मेरेही जैसे सरकारकेप्रति घृणा तथा असहयोगकी शिक्षा दीजिये।"बयान समाप्त करते समय महात्माजीने कई कारणोंका उल्लेख किया, जिन्होंने उन्हें असहयोग व्रत धारण करनेके लिये विवश किया था। आपने कहा "भारतकी क्षतिपूर्ति करानेके लिये असहयोग एकमात्र यथेष्ट साधन है। नागरिकोंको स्वतन्त्रताके लिये ताजीरात हिन्दकी अन्यान्य राजनीतिक धाराओंमें धारा १२४ (अ) सर्व्वश्रेष्ठ है, जिसके अनुसार भाग्यवशात् मैं अभियुक्त किया गया हूं। कानूनद्वारा प्रेम उत्पन्न नहीं किया जा सकता। यदि किसी मनुष्यके हृदयमें किसीके प्रति घृणा मालूम हो तो उसे पूरी स्वतन्त्रता है कि वह उस घृणाको सर्व साधारणमें स्पष्ट तौरसे प्रगट करे किन्तु जिस धाराके अन्तर्गत मैं और श्रीयुक्त बैंकर अभियुक्त किये गये हैं, उसके अनुसार घृणा प्रकट करना अपराध समझा जाता है। मैंने उक्त धाराके अन्तर्गत बहुत मुकदमेंकी जाच होते पढ़ा है और यह भी जानता हूं, कि इसी धाराके अनुसार देशके बहुतसे भक्त कैद किये जा चुके हैं। मैंने अपनी धारणाका पूर्ण व्योरा सुना दिया है। मुझे व्यक्तिगत किसी कर्म्मचारी तथा विशेषकर सम्राट्के व्यक्तित्वके प्रति किसी प्रकारकी घृणा नहीं। जिस कार्यको मैं प्रत्येक नागरिकोंका मुख्य कर्त्तव्य समझता हूं, वही कार्य कानूनकी दृष्टिसे अपराध समझा जाता है। इसलिये मैं प्रसन्नता पूर्वक कठिनसे कठिन दण्ड आमन्त्रित करना चाहता हूं। यदि

वर्तमान सरकारकी प्रणाली तथा कानूनको बुरा समझते हैं, तो आपका कर्तव्य है, कि आप अपना पद त्यागकर सरकारके विरुद्ध अश्रद्धा प्रचार करनेका उपदेश दें और यदि आप वर्तमान प्रणालीको अच्छा समझते हों, तो मुझे कडीसे कडी सजा देनेकी कृपा करें।"

जजका उत्तर

जजने महात्मा गांधीको सम्बोधन करते हुए कहा कि, "आपने अपनेको अपराधी स्वीकार कर मेरा काम बहुत ही हलका कर दिया है। मुझे अब यही विचार करना है, कि सजाकी मियाद कितनी और कैसी होनी चाहिये। यह बात स्पष्ट है, कि कानून किसी व्यक्तिकी प्रतिष्ठा नहीं करता। मैं इस बातको अस्वीकार नहीं कर सकता, कि अबतक मुझे जितने मुकदमे देखने पड़े हैं या आगे देखने पड़ेंगे उन सबोंसे आपके मुकदमेकी अवस्था बिलकुलही भिन्न है। इस बातको अस्वीकार करना असम्भव है, कि आपके करोड़ देशवासी आपको एक बड़े देशभक्त तथा महान् नेताकी दृष्टिसे देखते हैं। यहांतक कि जितने लोग राजनीतिक विचारमें आपसे मतभेद रखते हैं वे भी आपकी महत्ता तथा साधुतामें अटल विश्वास रखते हैं। यहांपर मैं आपके प्रति कानूनके अनुसार एक साधारण मनुष्यके ऐसा व्यवहार करनेको बाधित हूं, अतएव आपने जिस अपराधको स्वीकार किया है उसके अनुसार आपको दण्ड देना ही पड़े-

गा। मैं विश्वास करता हूं कि आपने सर्वथा शांतिका उपदेश दिया है और कितने अवसरोंपर आपने अपने उपदेशद्वारा हिंसाको रोक दिया है। पर आपके उपदेशोंको पढ़कर मुझे विश्वास नहीं होता कि आपने इसकेद्वारा किस प्रकार शांति स्थापित करनेकी कल्पना की है।

महात्माजीका लिखित बयान

मेरे ऊपर जो यह मुकदमा चलाया गया है उसके संबंधमें विशेषकर भारत तथा इङ्गलैण्डकी जनताके संतोषके लिये मैं यह स्पष्ट कह देना चाहता हूं कि मैं कट्टर राजभक्त होकर क्यों अवमननीय असहयोगी बन गया। मैं अदालतको भी बतला देना उचित समझता हूं, कि मैंने अपनेको भारतमें न्यायद्वारा स्थापित सरकारके विरुद्ध अश्रद्धा तथा अविश्वास प्रचार करनेका अपराधी क्यों प्रमाणित किया है? मेरा सार्वजनिक जीवन गत सन् १८९३ ई० में अफ्रिकाके अशान्तिमय वायुमण्डलमें आरम्भ हुआ। बृटिश अधिकारियोंसे मेरा प्रथम-सम्बन्ध आनन्द-प्रद नहीं हुआ। मुझे जांचकरनेपर पता लगा, कि भारतीय होनेके कारण मुझे मनुष्योचित स्वत्वका हक प्राप्त नहीं। इससे मैं हताश नहीं हुआ। मैंने विचार किया, कि भारतीयोंके प्रति यह व्यवहार उस प्रणालीकी ज्यादती प्रगट करता है, जो अनिवार्य्य रूपसे अच्छी है। मैं स्वेच्छापूर्वक सरकारको हार्दिक सहायता देता था और जहां कहीं त्रुटि देखता,

यहां ही उसकी कड़ी आलोचना करता था। किन्तु कभी भी सरकारका नाश करना मेरा ध्येय नहीं रहा।

गत सन् १८९९ ई० में जब कि बोअरोंके द्वारा साम्राज्य पर बड़ी आपत्तिकी आशङ्का हो रही थी, उस समय मैंने सहायक स्वयंसेवक सघ सङ्गठित कर सरकारकी सहायता की। इसके अतिरिक्त मैंने लेडी स्मिथ स्थानके कष्ट निवारक सम्बन्धी बहुतसे कामोंमें हाथ बटाया था। सन् १९०६ ई० में जुलू विद्रोहमें मृत सैनिकोंकी सेवा करनेके लिये मैं ने विद्रोहके अन्ततक सेवा की थी। दोनों अवसरोंपर मुझे पुरस्कार स्वरूप तमगे दिये गये और खरातेमें भी मेरा उल्लेख किया गया। दक्षिण अफ्रिकामें मैंने जो काम किया था, उसके लिये लार्ड हार्डिंजने मुझे कैसरे हिन्दका स्वर्णपदक प्रदान किया था। सन् १९१४ में जब कि इङ्गलैण्ड और जर्मनीके बीच युद्ध छिड़ा, उस समय मैंने इङ्गलैण्ड स्थित भारतीय विद्यार्थियोंका एक सहायक सङ्घ सङ्गठित किया, जिसकी कार्य्यवाही प्राय सब अधिकारियोंकी दृष्टिमें अत्यन्त लाभदायक प्रतीत हुई थी। अन्तमें भारतवर्षमें जब लार्ड चेम्सफोर्डने सन् १९१७ ई० में दिल्लीकी युद्ध परिषद्में रंगरूट भरती होनेके लिये विशेष अपील की थी, उस समय मैंने अपने स्वास्थ्यकी कुछ भी परवा न कर दिन रात रङ्गरूट भरती करनेके लिये अटूट परिश्रम किया था। इस कार्यमें मुझे अच्छी सफलता भी हुई थी, किन्तु उस समय युद्धका अन्त हो गया था, और अधिक रङ्गरूट भरती करनेकी मनाही कर दी गई।

सरकारकी इतनी सेवा करनेका मेरा मुख्य उद्देश्य यही था, कि इसके द्वारा हमारे देशभाइयोंको साम्राज्यके अन्तर्गत अन्य औपनिवेशोंके समान आसन मिले। लेकिन इसके विपरीत ही पहला धक्का मुझे रौलट ऐक्ट द्वारा दिया गया, जिसने भारत-वासियोंकी सारी स्वतन्त्रता छीन ली। मैंने इसके विरुद्ध विस्तृत रूपसे आन्दोलन करना आरम्भ किया। इसके बाद जलियांवाला बागका हृदयविदारक दृश्य तथा जनताको पेटके बल रेंगने और कोड़ेबाजी आदि अनेकों तरहका अप्रतिष्ठित, अमानुषिक व्यवहार भद्र नागरिकोंको भट किये गये। मैंने यह भी देखा कि प्रधान मन्त्रीने तुर्की तथा अन्य इस्लामिक धार्मिक स्थानोंके सम्बन्धमें जो आश्वासन दिया था वह भी कार्यरूपमें परिणत नहीं किया गया। गत सन् १९१९ ई० में अमृतसर कांग्रेसके पण्डालमें अपने कई एक मित्रके मना करनेपर भी मैंने माण्टेगू चेम्सफोर्ड-सुधार-बिलमें यथाशक्ति साहाय्य देता रहा। इससे मेरा अन्तिम अभिप्राय यही था, कि यद्यपि सुधार असन्तोषप्रद तथा निराशाजनक है, तथापि प्रधान मन्त्री खिलाफत तथा पञ्जाबके सम्बन्धमें कुछ अपनी नीति बदलनेकी कृपा करेंगे। किन्तु मेरी आशा पर पानी फिर गया। पञ्जाब हत्याकाण्डके सम्बन्धमें कुछ भी न्याय नहीं किया गया। बरन् उलटे ही हत्यारोंमें किसीकी वेतन वृद्धि हुई, किसीको भारतीय खजानेसे पेन्शन मिली और किसीको पुरस्कार दिया गया।

मैंने यह भी देखा कि सुधार स्कीमसे कोई विशेष लाभ नहीं

हुआ है। इसके द्वारा केवल भारतीय धनको और अधिक मात्रामें पानीकी भांति बहाने तथा भारतवासियोंको चिरकालके लिये गुलामीकी जञ्जीरमें जकड देनेहीके लिये सुधारका रूप खडा किया गया है। उपरोक्त बातोंसे मैंने यही साराश निकाला कि वृटिश सम्बन्धके कारण भारतकी आर्थिक तथा राजनीतिक दशा पहलेकी अपेक्षा कहीं अधिक असहाय हो गई है। मैंने यह भी देखा कि शस्त्रविहीन भारत इच्छा होनेपर भी किसी आक्रमणकारीका सामना करनेमें बिलकुल ही असमर्थ तथा शक्तिहीन हो गया है, यहा तक कि देशके सर्वश्रेष्ठ शिक्षित मनुष्योंको यह धारणा होने लगी, कि भारतको औपनिवेशिक समानता प्राप्त करनेमें एक पीढीका समय लगेगा। वृटिश साम्राज्यके पूर्व भारतके करोडों झोपडियोंमें सूत कातने तथा वस्त्र बुननेकी प्रथा जारी थी। गृहका यह औद्योगिक व्यवसाय भारतके लिये अत्यावश्यक था, किन्तु इसका सर्वनाश किस निर्दयता तथा निन्दित उपायों द्वारा किया गया, उसका इतिहास अङ्गरेज दर्शकों द्वारा वर्णित किया गया है शहरमें रहनेवाले नहीं जानते कि भारतीय जनता किस सख्यामें भूखसे पीडित हो प्राय नित्य प्रति निर्जीव सी हो रही है। उन्हें इस बातका बहुत ही कम ज्ञान है कि उनकी घृणास्पद आनन्द सामग्री उस दलाली पर अवलम्बित है, जिससे वह विदेशी व्यवसायियोंका कार्य्य कर नेके बदलेमें प्राप्त करते हैं। यह दलाली तथा लाभ भारतीय जनताके क्षुद्र आयसे ही शोषित किया जाता है। ये लोग

यह बात भी बहुत कम जानते हैं कि कानूनद्वारा स्थापित बृटिश सरकारका कर्तव्य जनताको उद्योगी तथा साहसी बनाना है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि संसारमें परमात्माकी स्थिति है तो इङ्गलैण्ड निवासी तथा भारतवर्षके शहरोंमें रहनेवाले, दोनों को उस परमात्माके सामने भारतीय अज्ञान जनताके प्रति इस अमानुषिक तथा हृदयशून्य आचरणके लिये उत्तरदायी होना पडेगा, जिसकी तुलना करनेके लिये ससारके इतिहासमें कोई दृष्टान्त नहीं मिल सकता। इस देशमें कानून भी विदेशी व्यवसायियोंके स्वार्थके अनुकूल ही बनाया गया है। मैंने पञ्जाबके फौजी कानूनके अन्तर्गत जितने मुकदमोंकी जांच की है, उनमें सैकडे पीछे पञ्चानबेको अनुचित सजा दी गई है, जितने राजनैतिक सम्बन्धमें कैद किये गये हैं,उनमें प्रत्येक देशमें नव मनुष्यको बिना किसी अपराधके सजा दी गई है। उनका अपराध केवल देशभक्ति अथवा देशप्रेम ही है। भारतीय न्यायालयोंमें अङ्गरेजों और हिन्दुस्थानियोंके बीच जितने मुकदमे दायर किये जाते हैं उनमें सैकडे पीछे निन्नानवे मुकदमोंमें अन्याय ही किया जाता है। मैंने इसमें कोई बात बढाकर नहीं कही है। प्राय प्रत्येक भारतीय इस बातको जानता है, जिसे कभी ऐसे मुकदमेमें उलझनेकी सम्भावना हुई है कि चाहे जानते हुए अथवा अनजानमें कानून विदेशी साहसी औद्योगिकोंकी भलाईके लिये वेश्याकी तरह कार्य्यमें परिणत किया जा रहा है।

भयभीत करनेकी प्रणाली

सबसे अभाग्यकी बात यह है, कि अंगरेज तथा उनके सहयोगी भारतीय शासक यह नहीं जानते कि वह शासनकी आड़में पाप कर रहे हैं, जैसा कि मैंने ऊपर दिखाया है। मुझे सन्तोष है कि बहुतसे अङ्गरेज तथा उनके हिन्दुस्तानी शासकोंका हार्दिक विश्वास है कि वह भारतमें जिस प्रणालीके अनुसार शासन करते हैं उसकी गिनती संसारकी उत्तमोत्तम प्रणालियोंमें है और उनकी रायमें भारत धीरे धीरे उन्नतिके मार्गपर अग्रसर हो रहा है, किन्तु उन्हें यह मालूम नहीं कि एक ओर तो भयभीत दूसरी ओर बदला लेने तथा आत्मरक्षा करनेकी असमर्थताने भारतीय जनताको बिलकुल ही निर्जीव बना दिया है। इस भयंकर प्रथाने शासकोंकी अज्ञानता तथा अक्षमताको और भी बढ़ा दिया है।

१२४ वी (अ)

१२४ वीं (अ) धारा अन्यान्य राजनैतिक धाराओंमें सर्वोच्च है, भाग्यवश मैं भी इसीका शिकार बना हुआ हूं। इस धाराका मुख्य अभिप्राय जनताकी बढ़ती स्वतन्त्रताको कुचलना है। मेरी रायमें प्रेम कानून द्वारा नहीं उत्पादित किया जाता। जिसे जिसके प्रति घृणा हो, उसे वह प्रगट करनेमें पूर्णतः स्वतन्त्र है। इस धाराके अन्दर मैं और श्रीयुक्त बैङ्कर अभियुक्त किये

गये हैं। इसी धाराके अनुसार भारतके सर्व्वश्रेष्ठ कितने देशभक्त जेलकी हवा खा रहे हैं।

घृणा एक धर्म्म है

मैंने अपने घृणाका सबब स्पष्ट करनेका प्रयत्न किया है। मैं सम्राट् तथा किसी व्यक्तिके सम्बन्धमें घृणा नहीं करता परन्तु समझता हूं, कि ऐसे सरकारके प्रति घृणा करना धर्म्म है, जिसने भारतके प्रति ऐसी बुराई की है जैसी पहले कभी नहीं की गई थी। मुझे विश्वास है कि असहयोगद्वारा मैंने इङ्गलैण्ड तथा भारतवर्षको उनकी अस्वाभाविक दशाका ज्ञान कराकर बहुत लाभ पहुंचाया है।

असहयोग एक कर्त्तव्य है

मेरी रायमें बुराईके साथ असहयोगका उतना ही कर्तव्य है, जितना भलाईके साथ। सहयोगपर भूतकालमें हानिकर्त्ताके ऊपर जोर जुलुम करके असहयोग प्रकाश किया गया है। मैं अपने देशवासियोंको यह दिखाना चाहता हूं, कि "हिंसात्मक असहयोग बुराइयोंको केवल वृद्धि करता है और बुराइयोंका समर्थन न करनेके लिये हिंसासे बिलकुल अलग रहना पड़ेगा। अहिंसा स्वीकार करनेसे बुराईके साथ असहयोग करनेके लिये जो दण्ड दिया जाता है, उसे स्वेच्छापूर्वक ग्रहण करना पड़ता है। मैं यहां कड़ीसे कड़ी सजा लेने और भुगतनेके लिये तैयार हूं, क्योंकि जो कानून सुविवेचित अपराध है, वह मुझे एक

नागरिकका प्रधान कर्तव्य ज्ञात होता है। आपके लिये एक ही मार्ग है। आप इस पदसे इस्तीफा देकर इस बुराईसे अलग हो जाय यदि आप समझते हो, कि जिस कानूनका आप प्रयोग करने बैठे हैं, वह एक बुराई है और मैं वस्तुत निर्दोष हूं। अगर आपका विश्वास है, कि जिस कानूनमें आप सहायता दे रहे हैं या जो कानून इस देशके निवासियोंके लिये हितकर है और मेरी कार्यवाही सार्वजनिक भलाईके लिये हानिकर है, तो वह कानून जहातक आपकी सहायता कर सके वहातक आप मुझे कडी सजा दें।"



मुकदमेका फैसला।



म० गान्धीका बयान सुनकर जजने कहा कि "शायद प्रत्येक मनुष्य इस बातमें विश्वास करेगा—कि कोई सरकार महात्मा गान्धी जैसे व्यक्तिको स्वतन्त्र नहीं छोड सकती। मैं समझता हूं कि आजसे बारह वर्ष पहले जिस धाराके अनुसार लोकमान्य बालगङ्गाधर तिलक अभियुक्त हुए थे, उसी स्थितिमें महात्मा गान्धी भी अभियुक्त हुए हैं। अतएव मैं श्रीयुक्त लोकमान्य जैसा महात्मा गांधीको भी छ वर्षको सादी कैदकी सजा देता हूं। आपपर तीन अभियोग लगाये गये थे और प्रत्येक अभियोगके लिये दोही वर्षकी कैदकी सजा देता हूं। तीनों सजा लगातार

भुगतनी पड़ेगी। यदि भारतकी स्थितिका प्रवाह ऐसा हो जाय कि आपकी सजा कम कर दी जाय अथवा आप मुक्त कर दिये जाय, तो मुझसे बढ़कर किसीको अधिक प्रसन्नता नहीं होगी।" तदुपरान्त महात्मा गांधीने अपने स्थानसे उठकर कहा, "आपने लोकमान्य तिलकके मुकदमेके साथ मेरे मुकदमेकी समता देकर मुझे बहुत ही गौरवान्वित किया है। आपने जो सजा दी है, उससे कम सजा कोई दूसरा जज दे ही नहीं सकता। अदालतने जितना सद्भाव प्रदर्शित किया है, उससे बढ़कर अन्य किसी अदालतसे आशा ही नहीं की जा सकती।"

ॐ शान्तिः। शान्तिः!! शान्तिः!!!



स्थायी ग्राहकोंकी आवश्यकता

इतनी सस्ती पुस्तक प्रकाशित करनेपर भी हमें स्थायी ग्राहकोंकी खोज है, इससे कदाचित् लोग चकित होंगे। इसलिये हम यहापर यह लिख देना चाहते हैं कि हम स्थायी ग्राहक क्यों चाहते हैं। मूल लागतपर पुस्तक निकालकर भी हमको सन्तोष नहीं हो रहा है, क्योंकि पुस्तक बेचनेवाले विना भरपूर कमीशनके किताब बेचना नही चाहते। इच्छा न रहनेपर भी हमें बाध्य होकर कमीशनका यह भार पाठकोंके सिरपर मढना पडता है। यदि उचित संख्यामें हमारी सीरीजके स्थायी ग्राहक हो जाय तो हम मूल्यमें और सुविधा कर सकेंगे।

१) स्थायी ग्राहक श्रेणीमें नाम लिखानेके लिये ॥) प्रवेश फीस देना पडेगा।

२) स्थायी ग्राहकको मालाकी पूर्व प्रकाशित पुस्तकोंके लेने न लेनेका पूर्ण अधिकार रहेगा पर ग्राहक होनेके बादकी प्रकाशित सभी पुस्तकें लेना पडेगा।

(३) सालमें प्राय. ६ पुस्तकें प्रकाशित की जायगी। इससे अधिक पुस्तकें भी प्रकाशित हो सकती हैं।

(४) प्रकाशित होनेपर पुस्तकोंकी सूचना मात्र दे दी जायगी सूचनाके १५ दिन बाद वी० पी० रवाना कर दी जायगी।

(५)जो लोग वी० पी० वापिस करेंगे उनका नाम स्थायी ग्राहकोंकी श्रेणीसे निकाल दिया जायगा। फिर ग्राहक होनेके लिये उन्हें लौटाई हुई वी० पी० का खर्च देना पडेगा और उसे स्वीकार करना होगा।

(६) स्थायी ग्राहकोंको पुस्तकी कीमत पर ≠) रुपये कमीशन दिया जायेगा।

सुलभ साहित्य सीरीजका उद्देश्य



(१) हिन्दीमे सभी उपयोगी विषयोंपर पुस्तकें लिखवाना तथा अनुवाद करवाना और उन्हें प्रकाशित करना।

(२) तत्कालीनोपयोगी तथा क्षणिक लाभकी पुस्तकोंपर ध्यान न देकर स्थायी साहित्यका ही प्रकाशन करना।

(३) व्यवसाय आदि जिन विषयोंपर अभी पुस्तकें नहीं निकली हैं उनके लिये यत्न करना और पुस्तके लिखवाना।

(४) पुस्तकोंका मूल्य इतना सुलभ रखना जिससे साधारण हैसियतका आदमी भी उनसे लाभ उठा सके।

(५) प्रकाशनमे हिन्दी भाषा, देश तथा समाजके कल्याण पर विशेष ध्यान रखना।

बडाबाजार कुमार सभाका उद्देश्य

१—परस्पर सद्भाव व मैत्री स्थापित करना।

२—शारीरिक तथा मानसिक उन्नति करते हुए देश व समाजकी सेवा करना। विशेषकर स्वदेशी वस्तुओंके प्रचारकी चेष्टा करना।

३—समाजमें शिक्षा प्रचारके लिये पुस्तकालय खोलना, व्याख्यान आदि दिलवाना तथा ज्ञानवर्धक विभाग खोलना, जिसमें प्रकाशन आदि रहेंगे।